ॐ

श्रीमद् जिनसेनाचार्य विरचित संस्कृत ग्रंथ की
पण्डित प्रवर दौलतरामजी कृत हिन्दी

श्री हरिवंशपुराण

भाषावचनिका

प्रकाशक

श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट

302, कृष्ण कुंज, प्लॉट नं. 30, नवयुग सी. एच. एस. लिमिटेड, वी. एल. मेहता मार्ग,
विले पार्ले (वेस्ट), मुम्बई-400056, फोन - 022 26130820

www.vitragvani.com

प्रथम आवृत्ति : 1000
नवम्बर, 2012

लागत मूल्य : 175/-

न्यौछावर राशि : 50/- रुपये

ISBN : 978-93-81057-09-4

प्रकाशन सहयोग
1,00,000/- प्रो. श्रीमान एस. सी. जैन, ग्वालियर

प्राप्ति स्थान

1. **श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट**
   302, कृष्ण कुंज, प्लॉट नं. 30, नवयुग सी. एच. एस. लिमिटेड,
   वी.एल. मेहता मार्ग, विले पार्ले (वेस्ट),
   मुम्बई-400056, (महाराष्ट्र) फोन (022) 26130820, 26104912
   Website : www.vitragvani.com, E-mail : info@vitragvani.com
2. **श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट**
   सोनगढ़-364250, जिला-भावनगर (गुजरात), फोन (02846) 244334
3. **श्री कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन विद्यार्थी गृह**
   राजकोट रोड, पेट्रोल पंप के सामने,
   सोनगढ़-364250, जिला-भावनगर (गुजरात), फोन (02846) 244510
4. **श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (मंगलायतन)**
   अलीगढ़-आगरा रोड, सासनी-202001,जिला-हाथरस (उत्तर प्रदेश)
5. **पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट**
   ए-4, बापू नगर, जयपुर-302015 (राजस्थान), फोन (0141) 2707458
6. **पूज्य श्री कानजी स्वामी स्मारक ट्रस्ट**
   कहान नगर, लाम रोड,
   देवलाली-422401, जिला-नासिक (महाराष्ट्र), फोन (0253) 2491044

मुद्रक : प्री एलविल सन, जयपुर मो. 095092 32733

प्रकाशकीय

जैन तत्त्व मनीषा को समृद्धिशाली बनाने हेतु समय-समय पर अनेकानेक पुराण ग्रन्थों का प्रणयन हमारे पूज्य आचार्य भगवन्तों द्वारा किया गया है। उस तत्त्व को उन्होंने प्राय: चार अनुयोगों के माध्यम से हमारे कल्याण के लिए प्रस्तुत किया है। प्रथमानुयोग की शैली दृष्टान्त रूप होती है, जिसमें पुराणपुरुषों के जीवन की घटनाओं का उल्लेख करते हुए हमें वीतरागता के पथ में लगने की प्रेरणा दी जाती है।

आचार्य जिनसेन विरचित संस्कृत ग्रन्थ श्री हरिवंशपुराण के आधार से पण्डित दौलतरामजी ने श्री हरिवंशपुराण भाषावचनिका की रचना की, जिसका वाचन गाँव-गाँव की सभाओं में या व्यक्तिगत रूप से माताओं-बहनों द्वारा किया जाता है। ग्रंथ की भाषा ढूंढारी होने पर भी अत्यन्त मिष्ट है और हिन्दी जैसी ही है। इस ग्रन्थ में बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ, श्री कृष्ण एवं बलराम आदि का चरित्र वर्णित है।

आध्यात्मिक सत्पुरुष पूज्य गुरुदेव श्री कानजी स्वामी के पुण्य प्रभावना योग में स्थापित श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई वीतरागी जिनेन्द्रदेव की वाणी को देश-विदेश में जन-जन तक पहुँचाने हेतु प्रतिबद्ध है। इसी शृंखला में प्रस्तुत ग्रन्थ का प्रकाशन करते हुए हमें हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन की मूल भावना प्रोफेसर श्रीमान एस.सी. जैन, ग्वालियर वालों की थी। उन्होंने इसके प्रकाशन हेतु जो आर्थिक सहयोग प्रदान किया है, उसके लिए वे धन्यवाद के पात्र हैं।

ग्रन्थ के सुन्दर और समय पर मुद्रण कार्य के लिए प्री एलविल सन प्रिंटर्स, जयपुर के संजय शास्त्री को हम हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

आशा है, सभी स्वानुभवरसिक जीव प्रस्तुत कृति का स्वाध्याय करते हुए पुराण-पुरुषों के जीवन के दृष्टान्तों से शिक्षा लेते हुए, वीतरागता के पथ पर चलकर मानव-जीवन के अत्यंत आवश्यक कार्य आत्मानुभूति के प्रति अग्रसर होंगे।

– शुभेच्छु

अनंतराय ए. शेठ

श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई

श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा संचालित गतिविधियाँ

1. सोनगढ़ में श्री कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन विद्यार्थी गृह का संचालन।
2. आत्मार्थी बन्धुओं को शिक्षा एवं चिकित्सा हेतु सहायता प्रदान करना।
3. मुमुक्षु समाज में निर्मित होने वाले जिनमन्दिरों एवं स्वाध्याय भवनों के निर्माण हेतु सहायता प्रदान करना।
4. मुमुक्षु मण्डलों द्वारा संचालित जिनमन्दिरों के पुजारियों को स्वास्थ्य बीमा योजना की सुविधा उपलब्ध कराना।
5. विद्वानों में परस्पर तत्त्वचर्चा एवं वात्सल्य वृद्धि हेतु विद्वत् गोष्ठियों का आयोजन करना।
6. तीर्थक्षेत्रों के जीर्णोद्धार हेतु आर्थिक सहयोग।
7. आध्यात्मिक सत्साहित्य का प्रकाशन।
8. आध्यात्मिक शिक्षण शिविरों एवं बाल संस्कार शिविरों को आर्थिक सहयोग।

वीतराग वाणी

पूज्य गुरुदेव श्री कानजी स्वामी के समस्त ऑडियो-वीडियो प्रवचन, साहित्य एवं फोटो एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिए अवश्य देखें

website - www.vitragvani.com

संपर्क सूत्र - श्री कुन्दकुन्द-कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई

फोन (022) 26130820, 26104912

E-mail : info@vitragvani.com

कवि दौलतरामजी

कवि दौलतरामजी कासलीवाल का जन्म जयपुर राज्य के बसवा नामक ग्राम में आषाढ़ कृष्णा चतुर्दशी वि. सं.1749 में हुआ था। आपके पिता का नाम आनन्दराम और पितामह का नाम घासीराम था। दौलतरामजी का जन्म नाम बेगराज था। दौलतरामजी के बड़े भाई निर्भयराम थे और छोटे बख्तावरलाल। इनके 6 पुत्र थे। युवावस्था में आगरा गये। वहां कवि भूधरदासजी के सम्पर्क में आये। वहां अध्यात्मशैली चलती थी, उसमें आप भी जाते आते थे। सर्व प्रथम इनने 1777 में पुण्यास्रव कथा कोश की रचना समाप्त की।

आगरा से ये जयपुर निर्माण के साथ-साथ जयपुर आ गये। जयपुर निर्माता महाराजा सवाई जयसिंहजी की सेवा में रहे। ये महाराज कुमार माधोसिंह के दीवान रूप में उदयपुर गये। अपनी सेवाओं के कारण राज्य द्वारा कई बार पुरस्कृत हुए। उदयपुर में भी इनकी विद्वत्ता की छाप समाज पर पड़ी और वहां भी इनने अध्यात्म प्रचार की शैली बनाई और प्रतिदिन शास्त्र प्रवचन करने लगे। वहां इनने कई ग्रन्थों की रचना की। इसके पश्चात् सं. 1807 के आस-पास ये जयपुर आ गये। जयपुर उस समय विद्या का प्रमुख केन्द्र था। महाकवि पंडित टोडरमलजी और उनकी शैली का प्रभाव चारों ओर फैला हुआ था। ये पंडित टोडरमलजी के सम्पर्क में आये और गद्य साहित्य रचना प्रारम्भ किया।

पुण्यास्रव कथा-कोष के बाद पद्मपुराण ग्रन्थ की रचना इनने प्रारम्भ की, जो सं.1823 में समाप्त हुई। कवि की यह एक ऐसी महान कृति है, जो समाज में सर्वाधिक लोकप्रिय है। विद्वान और साधारण गृहस्थ तक पद्मपुराण का स्वाध्याय बड़े चाव से करते हैं। कवि की अन्तिम कृति हरिवंश पुराण है, जो 1829 में समाप्त हुई और इसी वर्ष भाद्रपद शुक्ला द्वितीया को कवि का स्वर्गवास हो गया। कवि ने अपने जीवन में 18 ग्रन्थों की रचनाएँ की हैं। हो सकता है इसमें ज्यादा हों, पर अभी तक 18 निम्न ग्रन्थों की ही जानकारी है -

1.	पुण्यास्रव कथा कोष	भाद्रपद शुक्ला पंचमी, शुक्रवार सं. 1777 में
2.	श्रेणिक चरित्र	चैत्र शुक्ला 5, सं. 1782 में
3.	त्रेपन क्रिया कोष	उदयपुर में भाद्रपद शुक्ला 12, मंगलवार सं. 1795
4.	अध्यात्म बारह खड़ी	उदयपुर में फाल्गुन शुक्ला 2, गुरुवार सं. 1798 में
5.	जीवन्धर चरित	उदयपुर में आषाढ़ शुक्ला 2, सं. 1805 में
6.	वसुनन्दि श्रावकाचार	उदयपुर में सं.1808 में

7.	विवेक विलास	उदयपुर में
8.	श्रीपाल चरित्र	जयपुर में फाल्गुण शुक्ला 11, सं. 1822
9.	पद्मपुराण	जयपुर में माघ शुक्ला 9, शनिवार सं. 1823 में
10.	आदिपुराण	जयपुर में चैत्र शुक्ला 15, सं. 1826 में
11.	स्वामि कार्तिकेयानुप्रेक्षा	ज्येष्ठ कृष्णा 12 सं. 1826 में
12.	पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय	जयपुर में मंगसर शुक्ला 2, शनिवार सं.1827 में
13.	हरिवंश पुराण	जयपुर में चैत्र शुक्ला पूर्णिमा, शुक्रवार सं.1829 में

उक्त 13 ग्रन्थों के अतिरिक्त 14 चौबीस दण्डक, 15 सिद्ध पूजाष्टक, 16 परमात्मा प्रकाश, 17 सार समुच्चय, 18 तत्त्वार्थ सूत्र टीका और हैं, जिनकी रचना काल की खोज होना अपेक्षित है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि दौलतरामजी गद्य और पद्य दोनों के विद्वान थे और उन्होंने कथा साहित्य की वचनिकाएँ बना कर धर्म और समाज की महान सेवा की है।

प्रथमानुयोग का लक्षण श्री 108 समन्तभद्राचार्य ने इसप्रकार कहा है –

प्रथमानुयोगमर्थाख्यानं चरितं पुराणमपि पुण्यम्।
बोधिसमाधिनिधानं बोधति बोधः समीचीनः।।43।। – रत्नकरण्ड श्रावकाचार

जो शास्त्र अर्थ (धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष पुरुषार्थ का या परमार्थ) का उपदेशक है, महान पुरुष के चरित्र या त्रेसठ शलाका पुरुषों के पुराण का कथन करने वाला है तथा बोधि व समाधि (रत्नत्रय की प्राप्ति व पूर्णता) का खजाना है – सम्यग्ज्ञानी ऐसे शास्त्र को प्रथमानुयोग कहता है।

श्री 108 गुणभद्राचार्य ने आत्मानुशासन के श्लोक 11 में सम्यग्दर्शन के दश भेदों का कथन किया है। उनमें चौथे नम्बर पर 'उपदेशसमुद्भवसम्यग्दर्शन' का नामोल्लेख किया गया है।

श्लोक 12 में इस उपदेश समुद्भव सम्यग्दर्शन का स्वरूप निम्नप्रकार कहा गया है –

'पुरुषवरपुराणोपदेशोपजाता या सज्ज्ञानागमाब्धिप्रसूतिभिरुपदेशादिरादेशि दृष्टिः।'

त्रेसठ शलाका पुरुषों के पुराण के उपदेश से जो सम्यग्दर्शन उत्पन्न होता है, सम्यग्ज्ञान को उत्पन्न करने वाले आगम समुद्र में प्रवीण गणधर देवों ने उस सम्यग्दर्शन को उपदेश सम्यग्दर्शन कहा है।

इसप्रकार प्रथमानुयोग का पठन–पाठन व उपदेश सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति तथा रत्नत्रय की प्राप्ति व पूर्णता में मुख्य हेतु है। बाल–गोपाल सभी प्रथमानुयोग को सरलता से समझ लेते हैं। अतः मुमुक्षुओं को सर्वप्रथम प्रथमानुयोग का स्वाध्याय व अध्ययन करना चाहिए।

श्री हरिवंशपुराण भाषावचनिका

विषय-सूची

विषय-वस्तु	पृष्ठ संख्या
मंगलाचरण (श्लोक)	1
ग्रन्थ की उत्पत्ति	7
अनुक्रमणिका	8
प्रथम अधिकार	12

तीन लोक का कथन, बारह सभाओं का वर्णन, श्रेणिक प्रश्न वर्णन, अधोलोक वर्णन, मध्यलोक का वर्णन, द्वीप सागर वर्णन, ज्योतिष चक्र वर्णन, ऊर्ध्व लोक वर्णन, ऋषभनाथ, बाहुबली, भरत चक्रवर्ती वर्णन आदि।

द्वितीय अधिकार	170

राजाओं के वंश की उत्पत्ति

तृतीय अधिकार	172

हरिवंश की उत्पत्ति, सुमुख वनमाला वर्णन, मुनिसुव्रत नाथ का वर्णन, समुद्रविजय राज्य वर्णन आदि।

चतुर्थ अधिकार	213

वसुदेव का चरित्र, विष्णुकुमार माहात्म्य, चारुदत्त चरित्र, सोमश्री वनमाला कपिला, पद्मावति चारुहासिनी, रत्नवती, सोमश्री, वेगवती, मदनवेगा वर्णन, परशुराम, चक्रवर्ती जन्म, मेघनाद पुत्री सोमश्री विवाह, त्रिशिखर वध, मेघनाथ वर्णन।

विद्याधरों की जाति वर्णन, बालचंद्रा दर्शन वर्णन, विद्युद्दंष्ट्र विद्याधर वर्णन सुमित्रदत्त वणिक वर्णन, पुरोहित सत्यघोष वर्णन, संजयन्त पुराण वर्णन, मृगध्वज महिष व्याख्यान वर्णन।

बन्धुमती प्रियंग सुन्दरी वर्णन, प्रभावती लाभ वर्णन, रोहणी स्वयंवर व वसुदेव भ्रातृमिलन बांधव वधू मिलन वर्णन, बलदेव, वसुदेव, कंस व मुनि वशिष्ट वर्णन, महोपवास वर्णन, कृष्ण बाललीला व कंस वध आदि।

www.vitragvani.com

पंचम अधिकार 322

नेमिनाथ स्वामी चरित्र, सोलह स्वप्न वर्णन, जन्माभिषेक वर्णन, जन्माभिषेक वर्णन, जरासिंध प्रकोप व यादव प्रस्थान वर्णन आदि।

षष्ठ अधिकार 342

यादवों का द्वारिका में निवास, द्वारावती निवेश वर्णन, नारद आगमन, नारद वर्णन व रुकमणी-कृष्ण वर्णन, संबु प्रद्युम्न पूर्व भव वर्णन, जांववत्यादि महादेवी लाभ वर्णन, कुरुवंशोत्पत्ति वर्णन, पांडव धृतराष्ट्र मिलन, अर्जुन-द्रौपदी संबंध, पांडव वनवास, कीचक निर्वाण गमन, कुरुवंश निरूपण, प्रद्युम्न माता-पिता समागम, संबुकुमार सुभानुकुमार उत्पत्ति वर्णन, यशोदा पुत्री मधु सूदन वर्णन, दुर्गोत्पत्ति वर्णन, कृष्ण वीरता प्रसिद्धि वर्णन, राजा समुद्र विजय वर्णन, चक्रव्यूह गरुड व्यूह वर्णन आदि।

सप्तम अधिकार 409

नारायण और प्रतिनारायण युद्ध, जरासिन्ध वध कृष्ण विजय, द्रोपदी हरण, पांडवों का दक्षिण गमन, मथुरा प्रवेश, कृष्ण की रानियों से भगवान का जलक्रीडा वर्णन, जामवन्ती को वस्त्र धोने का संकेत करना।

नेमि विवाह व वैराग्य, केवलज्ञान का वर्णन, भगवान का समोशरण, धर्मोपदेश, विहार वर्णन, कृष्ण की 8 पटरानियों का भव भवान्तर वर्णन त्रेषठ सलाका महापुरुषों का भव भवान्तर वर्णन, हरि परलोक गमन, बलदेव तप वर्णन, पांडवों का पूर्व भव वर्णन, मुनि धर्म वर्णन।

अष्टम अधिकार 548

नेमनाथ का भगवान का निर्वाण गमन

प्रशस्ति और आशीर्वाद 555

अनुयोगों का प्रयोजन

(आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी द्वारा रचित श्री मोक्षमार्ग प्रकाशक ग्रन्थ के आठवें अधिकार में उपदेश का स्वरूप विशद रूप से वर्णित है। पाठकों को प्रथमानुयोग का स्वरूप ज्ञात हो एवं वे प्रथमानुयोग की कथन पद्धति को हृदयंगम कर सकें, अत: यहाँ प्रथमानुयोग का प्रयोजन, प्रथमानुयोग के व्याख्यान का विधान, अनुयोगों के व्याख्यान की पद्धति, प्रथमानुयोग में दोष-कल्पना का निराकरण एवं अनुयोगों का अभ्यास क्रम आदि विषय दिये जा रहे हैं।

चारों अनुयोगों का सम्पूर्ण स्वरूप जानने के लिए उक्त ग्रन्थ का आठवाँ अधिकार मूलत: पठनीय है।)

प्रथमानुयोग का प्रयोजन

प्रथमानुयोग में तो संसार की विचित्रता, पुण्य-पाप का फल, महन्त पुरुषों की प्रवृत्ति इत्यादि निरूपण से जीवों को धर्म में लगाया है। जो जीव तुच्छबुद्धि हों, वे भी उससे धर्मसम्मुख होते हैं, क्योंकि वे जीव सूक्ष्म निरूपण को नहीं पहचानते, लौकिक कथाओं को जानते हैं, वहाँ उनका उपयोग लगता है। तथा प्रथमानुयोग में लौकिक प्रवृत्तिरूप ही निरूपण होने से उसे वे भली-भाँति समझ जाते हैं। तथा लोक में तो राजादिक की कथाओं में पाप का पोषण होता है। यहाँ महन्तपुरुष राजादिक की कथाएँ तो हैं, परन्तु प्रयोजन जहाँ-तहाँ पाप को छुड़ाकर धर्म में लगाने का प्रकट करते हैं; इसलिए वे जीव कथाओं के लालच से उन्हें पढ़ते-सुनते हैं और फिर पाप को बुरा, धर्म को भला जानकर धर्म में रुचिवंत होते हैं।

इसप्रकार तुच्छबुद्धियों को समझाने के लिये यह अनुयोग है। 'प्रथम' अर्थात् 'अव्युत्पन्न मिथ्यादृष्टि', उनके अर्थ जो अनुयोग सो प्रथमानुयोग है। ऐसा अर्थ गोम्मटसार की टीका में किया है।

तथा जिन जीवों के तत्त्वज्ञान हुआ हो, पश्चात् इस प्रथमानुयोग को पढ़ें-सुनें तो उन्हें यह उसके उदाहरणरूप भासित होता है। जैसे - जीव अनादिनिधन है, शरीरादिक संयोगी पदार्थ हैं, ऐसा यह जानता था। तथा पुराणों में जीवों के भवान्तर निरूपित किये हैं, वे उस जानने के उदाहरण हुए तथा शुभ-अशुभ शुद्धोपयोग को जानता था, व उसके फल को जानता था। पुराणों में उन उपयोगों की प्रवृत्ति और उनका फल जीव के हुआ सो निरूपण किया है, वही उस जानने का उदाहरण हुआ। इसी प्रकार अन्य जानना।

यहाँ उदाहरण का अर्थ यह है कि जिसप्रकार जानता था, उसीप्रकार वहाँ किसी जीव के अवस्था हुई - इसलिए यह उस जानने की साक्षी हुई।

तथा जैसे कोई सुभट है – वह सुभटों की प्रशंसा और कायरों की निन्दा जिसमें हो, ऐसी किन्हीं पुराण–पुष्पों की कथा सुनने से सुभटपने में अति उत्साहवान होता है; उसीप्रकार धर्मात्मा है – वह धर्मात्माओं की प्रशंसा और पापियों की निन्दा जिसमें हो ऐसे किन्हीं पुराण–पुरुषों की कथा सुनने में धर्म में अति उत्साहवान होता है।

इसप्रकार यह प्रथमानुयोग का प्रयोजन जानना।

प्रथमानुयोग के व्याख्यान का विधान

प्रथमानुयोग में जो मूल कथाएँ हैं; वे तो जैसी हैं, वैसी ही निरूपित करते हैं। तथा उनमें प्रसंगोपात्त व्याख्यान होता है; वह कोई तो ज्यों का त्यों होता है, कोई ग्रन्थकर्त्ता के विचारानुसार होता है; परन्तु प्रयोजन अन्यथा नहीं होता।

उदाहरण : जैसे – तीर्थंकर देवों के कल्याणकों में इन्द्र आये, यह कथा तो सत्य है तथा इन्द्र ने स्तुति की, उसका व्याख्यान किया; सो इन्द्र ने तो अन्य प्रकार से ही स्तुति की थी और यहाँ ग्रन्थकर्ता ने अन्य ही प्रकार से स्तुति करना लिखा है; परन्तु स्तुतिरूप प्रयोजन अन्यथा नहीं हुआ तथा परस्पर किन्हीं के वचनालाप हुआ; वहाँ उनके तो अन्य प्रकार अक्षर निकले थे, यहाँ ग्रन्थकर्ता ने अन्य प्रकार कहे; परन्तु प्रयोजन एक ही दिखलाते हैं तथा नगर, वन, संग्रामादिक के नामादिक तो यथावत् ही लिखते हैं और वर्णन हीनाधिक भी प्रयोजन का पोषण करता हुआ निरूपित करते हैं। इत्यादि इसी प्रकार जानना।

तथा प्रसंगरूप कथा भी ग्रन्थकर्ता अपने विचारानुसार कहते हैं। जैसे – धर्मपरीक्षा में मूर्खों की कथा लिखी; सो वही कथा मनोवेग ने कही थी, ऐसा नियम नहीं है; परन्तु मूर्खपने का पोषण करने वाली कोई कथा कही थी, ऐसे अभिप्राय का पोषण करते हैं। इसीप्रकार अन्यत्र जानना।

यहाँ कोई कहे – अयथार्थ कहना जो जैन शास्त्र में सम्भव नहीं है?

उत्तर – अन्यथा तो उसका नाम है जो प्रयोजन अन्य का अन्य प्रकट करे। जैसे – किसी से कहा कि तू ऐसा कहना, उसने वे ही अक्षर तो नहीं कहे, परन्तु उसी प्रयोजन सहित कहे तो उसे मिथ्यावादी नहीं कहते – ऐसा जानना। यदि जैसे का तैसा लिखने का सम्प्रदाय हो तो किसी ने बहुत प्रकार से वैराग्य चिन्तवन किया था, उसका सर्व वर्णन लिखने से ग्रन्थ बढ़ जायेगा, तथा कुछ न लिखने से उसका भाव भासित नहीं होगा, इसलिए वैराग्य के ठिकाने थोड़ा–बहुत अपने विचार के अनुसार वैराग्य पोषक ही कथन करेंगे, सराग पोषक कथन नहीं करेंगे। वहाँ प्रयोजन अन्यथा नहीं हुआ, इसलिए अयथार्थ नहीं कहते। इसीप्रकार अन्यत्र जानना।

www.vitragvani.com

तथा प्रथमानुयोग में जिसकी मुख्यता हो उसी का पोषण करते हैं। जैसे – किसी ने उपवास किया, उसका तो फल अल्प था, परन्तु उसे अन्य धर्मपरिणति की विशेषता हुई, इसलिए विशेष उच्च पद की प्राप्ति हुई, वहाँ उसको उपवास ही का फल निरूपित करते हैं। इसीप्रकार अन्य जानना।

तथा जिसप्रकार किसी ने शीलादि की प्रतिज्ञा दृढ़ रखी व नमस्कार मंत्र का स्मरण किया व अन्य धर्म-साधन किया, उसके कष्ट दूर हुए, अतिशय प्रकट हुए; वहाँ उन्हीं का वैसा फल नहीं हुआ है, परन्तु अन्य किसी कर्म के उदय से वैसे कार्य हुए हैं; तथापि उनको उन शीलादिक का ही फल निरूपित करते हैं। उसीप्रकार कोई पाप कार्य किया, उसको उसी का तो वैसा फल नहीं हुआ है, परन्तु अन्य कर्म के उदय से नीचगति को प्राप्त हुआ अथवा कष्टादिक हुए; उसे उसी पापकार्य का फल निरूपित करते हैं। – इत्यादि इसीप्रकार जानना।

यहाँ कोई कहे – ऐसा झूठा फल दिखलाना तो योग्य नहीं है; ऐसे कथन को प्रमाण कैसे करें?

समाधान – जो अज्ञानी जीव बहुत फल दिखाये बिना धर्म में न लगें व पाप से न डरें, उनका भला करने के अर्थ ऐसा वर्णन करते हैं। झूठ तो तब हो, जब धर्म के फल को पाप का फल बतलायें, पाप के फल को धर्म का फल बतलायें, परन्तु ऐसा तो है नहीं। जैसे – दस पुरुष मिलकर कोई कार्य करें, वहाँ उपचार से एक पुरुष का भी किया कहा जाये तो दोष नहीं है। अथवा जिसके पितादिक ने कोई कार्य किया हो, उसे एक जाति अपेक्षा उपचार से पुत्रादिक का किया कहा जाये तो दोष नहीं है। उसीप्रकार बहुत शुभ व अशुभकार्यों का एक फल हुआ, उसे उपचार से एक शुभ व अशुभकार्य का फल कहा जाये तो दोष नहीं है। अथवा अन्य शुभ व अशुभकार्य का फल जो हुआ हो, उसे एक जाति अपेक्षा उपचार से किसी अन्य ही शुभ व अशुभकार्य का फल कहें तो दोष नहीं है।

उपदेश में कहीं व्यवहारवर्णन है, कहीं निश्चयवर्णन है। यहाँ उपचाररूप व्यवहार वर्णन किया है, इसप्रकार इसे प्रमाण करते हैं। इसको तारतम्य नहीं मान लेना; तारतम्य का तो करणानुयोग में निरूपण किया है, सो जानना।

तथा प्रथमानुयोग में उपचाररूप किसी धर्म का अंग होने पर सम्पूर्ण धर्म हुआ कहते हैं। जैसे – जिन जीवों के शंका-कांक्षादिक नहीं हुए, उनको सम्यक्त्व हुआ कहते हैं; परन्तु किसी एक कार्य में शंका-कांक्षा न करने से ही तो सम्यक्त्व नहीं होता, सम्यक्त्व तो तत्त्वश्रद्धान होने पर होता है; परन्तु निश्चय सम्यक्त्व का तो व्यवहार सम्यक्त्व में उपचार किया और व्यवहार सम्यक्त्व के किसी एक अंग में सम्पूर्ण व्यवहार सम्यक्त्व का उपचार किया – इसप्रकार उपचार द्वारा सम्यक्त्व हुआ कहते हैं।

तथा किसी जैनशास्त्र का एक अंग जानने पर सम्यग्ज्ञान हुआ कहते हैं। सो संशयादि रहित तत्त्वज्ञान होने पर सम्यग्ज्ञान होता है; परन्तु यहाँ पूर्ववत् उपचार से सम्यग्ज्ञान कहते हैं।

तथा कोई भला आचरण होने पर सम्यक्चारित्र हुआ कहते हैं। वहाँ जिसने जैनधर्म अंगीकार किया हो व कोई छोटी-मोटी प्रतिज्ञा ग्रहण की हो, उसे श्रावक कहते हैं। सो श्रावक तो पंचम गुणस्थानवर्ती होने पर होता है; परन्तु पूर्ववत् उपचार से इसे श्रावक कहा है। उत्तरपुराण में श्रेणिक को श्रावकोत्तम कहा है सो वह तो असंयत था; परन्तु जैन था इसलिए कहा है। इसीप्रकार अन्यत्र जानना।

तथा जो सम्यक्त्वरहित मुनिलिंग धारण करे, व द्रव्य से भी कोई अतिचार लगाता हो, उसे मुनि कहते हैं। सो मुनि तो षष्ठादि गुणस्थानवर्ती होने पर होता है; परन्तु पूर्ववत् उपचार से उसे मुनि कहा है। समवसरण सभा में मुनियों की संख्या कही, वहाँ सर्व ही शुद्ध भावलिंगी मुनि नहीं थे; परन्तु मुनिलिंग धारण करने से सभी को मुनि कहा। इसीप्रकार अन्यत्र जानना।

तथा प्रथमानुयोग में कोई धर्मबुद्धि से अनुचित कार्य करे, उसकी भी प्रशंसा करते हैं। जैसे - विष्णुकुमार ने मुनियों का उपसर्ग दूर किया सो धर्मानुराग से किया; परन्तु मुनिपद छोड़कर यह कार्य करना योग्य नहीं था; क्योंकि ऐसा कार्य तो गृहस्थ धर्म में सम्भव है, और गृहस्थ धर्म से मुनिधर्म ऊँचा है; सो ऊँचा धर्म छोड़कर नीचा धर्म अंगीकार किया, वह अयोग्य है; परन्तु वात्सल्य अंग की प्रधानता से विष्णुकुमारजी की प्रशंसा की है। इस छल से औरों को ऊँचा धर्म छोड़कर नीचा धर्म अंगीकार करना योग्य नहीं है।

तथा जिसप्रकार ग्वाले ने मुनि को अग्नि से तपाया, सो करुणा से यह कार्य किया; परन्तु आये हुए उपसर्ग को तो दूर करे, सहज अवस्था में जो शीतादिक परीषह होता है, उसे दूर करने पर रति मानने का कारण होता है, और उन्हें रति करना नहीं है, तब उल्टा उपसर्ग होता है। इसी से विवेकी उनके शीतादिक का उपचार नहीं करते। ग्वाला अविवेकी था, करुणा से यह कार्य किया, इसलिए उसकी प्रशंसा की है, परन्तु इस छल से औरों को धर्मपद्धति में जो विरुद्ध हो, वह कार्य करना योग्य नहीं है।

तथा जैसे - वज्रकरण राजा ने सिंहोदर राजा को नमन नहीं किया, मुद्रिका में प्रतिमा रखी; सो बड़े-बड़े सम्यग्दृष्टि राजादिक को नमन करते हैं, उसमें दोष नहीं है; तथा मुद्रिका में प्रतिमा रखने में अविनय होती है, यथावत् विधि से ऐसी प्रतिमा नहीं होती, इसलिये इस कार्य में दोष है; परन्तु उसे ऐसा ज्ञान नहीं था, उसे तो धर्मानुराग से 'मैं और को नमन नहीं करूँगा' ऐसी बुद्धि हुई; इसलिए उसकी प्रशंसा की है। परन्तु इस छल से औरों को ऐसे कार्य करना योग्य नहीं है।

तथा कितने ही पुरुषों ने पुत्रादिक की प्राप्ति के अर्थ अथवा रोग-कष्टादि दूर करने के अर्थ चैत्यालय पूजनादि कार्य किये, स्तोत्रादि किये, नमस्कार मन्त्र स्मरण किया; परन्तु ऐसा करने से तो निःकांक्षितगुण का अभाव होता है, निदानबन्ध नामक आर्तध्यान होता है, पाप ही का प्रयोजन

अन्तरंग में है, इसलिये पाप ही का बन्ध होता है; परन्तु मोहित होकर भी बहुत पापबन्ध का कारण कुदेवादि का तो पूजनादि नहीं किया, इतना उसका गुण ग्रहण करके उसकी प्रशंसा करते हैं। इस छल से औरों को लौकिक कार्यों के अर्थ धर्म साधन करना युक्त नहीं है। इसी प्रकार अन्यत्र जानना।

इसीप्रकार प्रथमानुयोग में अन्य कथन भी हों, उन्हें यथासम्भव जानकर भ्रमरूप नहीं होना।

अनुयोगों के व्याख्यान की पद्धति

अब, इन अनुयोगों में कैसी पद्धति की मुख्यता पायी जाती है, सो कहते हैं:-

प्रथमानुयोग में तो अलंकार शास्त्र की व काव्यादि शास्त्रों की पद्धति मुख्य है; क्योंकि अलंकारादिक से मन रंजायमान होता है, सीधी बात कहने से ऐसा उपयोग नहीं लगता - जैसा अलंकारादि युक्ति सहित कथन से उपयोग लगता है। तथा परोक्ष बात को कुछ अधिकतापूर्वक निरूपण किया जाये तो उसका स्वरूप भली-भाँति भासित होता है।

प्रथमानुयोग में दोष-कल्पना का निराकरण

कितने ही जीव कहते हैं - प्रथमानुयोग में श्रृंगारादिक व संग्रामादिक का बहुत कथन करते हैं, उनके निमित्त से रागादिक बढ़ जाते हैं, इसलिये ऐसा कथन नहीं करना था व ऐसा कथन सुनना नहीं।

उनसे कहते हैं - कथा कहना हो, तब तो सभी अवस्थाओं का कथन करना चाहिए; तथा यदि अलंकारादि द्वारा बढ़ाकर कथन करते हैं, सो पण्डितों के वचन तो युक्तिसहित ही निकलते हैं।

और यदि तुम कहोगे कि सम्बन्ध मिलाने को सामान्य कथन किया होता, बढ़ाकर कथन किसलिये किया?

उसका उत्तर यह है कि परोक्ष कथन को बढ़ाकर कहे बिना उसका स्वरूप भासित नहीं होता। तथा पहले तो भोग-संग्रामादि इसप्रकार किये, पश्चात् सबका त्याग करके मुनि हुए; इत्यादि चमत्कार तभी भासित होंगे, जब बढ़ाकर कथन किया जाये।

तथा तुम कहते हो - उसके निमित्त से रागादिक बढ़ जाते हैं; सो जैसे कोई चैत्यालय बनवाये, उसका प्रयोजन तो वहाँ धर्मकार्य कराने का है; और कोई पापी वहाँ पापकार्य करे तो चैत्यालय बनवाने वाले का तो दोष नहीं है। उसीप्रकार श्रीगुरु ने पुराणादि में श्रृंगारादि का वर्णन किया; वहाँ उनका प्रयोजन रागादिक कराने का तो है नहीं, धर्म में लगाने का प्रयोजन है; परन्तु कोई पापी धर्म न करे और रागादिक ही बढ़ाये तो श्रीगुरु का क्या दोष है?

यदि तू कहे कि रागादिक का निमित्त हो ऐसा कथन ही नहीं करना था।

उसका उत्तर यह है - सरागी जीवों का मन केवल वैराग्य कथन में नहीं लगता। इसलिये जिस

प्रकार बालक को बताशे के आश्रय से औषधि देते हैं; उसीप्रकार सरागी को भोगादि कथन के आश्रय से धर्म में रुचि कराते हैं।

यदि तू कहेगा – ऐसा है तो विरागी पुरुषों को तो ऐसे ग्रन्थों का अभ्यास करना योग्य नहीं है?

उसका उत्तर यह है – जिनके अन्तरंग में रागभाव नहीं है, उनको शृंगारादि कथन सुनने पर रागादि उत्पन्न ही नहीं होते। वे जानते हैं कि यहाँ इसीप्रकार कथन करने की पद्धति है।

फिर तू कहेगा – जिनको शृंगारादि का कथन सुनने पर रागादि हो आयें, उन्हें तो वैसा कथन सुनना योग्य नहीं है?

उसका उत्तर यह है – जहाँ धर्म ही का प्रयोजन है और जहाँ-तहाँ धर्म का पोषण करते हैं – ऐसे जैन पुराणादिक में प्रसंगवश शृंगारादिक का कथन किया है। उसे सुनकर भी जो बहुत रागी हुआ तो वह अन्यत्र कहाँ विरागी होगा? वह तो पुराण सुनना छोड़कर अन्य कार्य भी ऐसे ही करेगा, जहाँ बहुत रागादि हों; इसलिये उसको भी पुराण सुनने से थोड़ी-बहुत धर्मबुद्धि हो तो हो। अन्य कार्यों से तो यह कार्य भला ही है।

तथा कोई कहे – प्रथमानुयोग में अन्य जीवों की कहानियाँ हैं, उनसे अपना क्या प्रयोजन सधता है?

उससे कहते हैं – जैसे कामी पुरुषों की कथा सुनने पर अपने को भी काम का प्रेम बढ़ता है; उसी प्रकार धर्मात्मा पुरुषों की कथा सुनने पर अपने को धर्म की प्रीति विशेष होती है। इसलिये प्रथमानुयोग का अभ्यास करना योग्य है।

अनुयोगों का अभ्यास क्रम

वहाँ प्रथमानुयोगादिक का अभ्यास करना। पहले इसका अभ्यास करना, फिर इसका करना ऐसा नियम नहीं है, परन्तु अपने परिणामों की अवस्था देखकर जिसके अभ्यास से अपनी धर्म में प्रवृत्ति हो उसी का अभ्यास करना। अथवा कभी किसी शास्त्र का अभ्यास करे, कभी किसी शास्त्र का अभ्यास करे। तथा जैसे – रोजनामचे में तो अनेक रकमें जहाँ-तहाँ लिखी हैं, उनकी खाते में ठीक खतौनी करे तो लेन-देन का निश्चय हो; उसीप्रकार शास्त्रों में तो अनेक प्रकार का उपदेश जहाँ-तहाँ दिया है, उसे सम्यग्ज्ञान में यथार्थ प्रयोजनसहित पहचाने तो हित-अहित का निश्चय हो।

इसलिये स्यात्पद की सापेक्षता सहित सम्यग्ज्ञान द्वारा जो जीव जिनवचनों में रमते हैं, वे शीघ्र ही शुद्धात्मस्वरूप को प्राप्त होते हैं। मोक्षमार्ग में पहला उपाय आगमज्ञान कहा है, आगमज्ञान बिना धर्म का साधन नहीं हो सकता, इसलिए तुम्हें भी यथार्थ बुद्धि द्वारा आगम का अभ्यास करना। तुम्हारा कल्याण होगा। **– मोक्षमार्ग प्रकाशक, आठवाँ अधिकार**

श्री पद्मपुराण भाषावचनिका में समागत आध्यात्मिक दृष्टान्तों की झलक

जब पवनंजय ने हनुमान को युद्ध के लिए जाने से रोका –

● तदि हनुमान बोले – अनादिकालतैं जीव चतुर्गतिविषै भ्रमण करै हैं, पंचमगति जो मुक्ति सो जब तक अज्ञान का उदय है तब तक जीव ने पाई नाहीं, परन्तु भव्यजीव पावैं ही हैं। तैसैं हमने अब तक युद्ध किया नाहीं, परन्तु अब युद्धकर वरुण को जीतैंहींगे

● वरुण का समस्त कटक हनुमानतैं हास्या, जैसैं जिनमार्गी के अनेकांतनयकरि मिथ्यादृष्टि हारैं।

● लोकनिकूं भयरूप देख आप धनुष की पिणच उतार महाविनय संयुक्त राम के निकट आए। जैसैं ज्ञान के निकट वैराग्य आवै।

● चालते अंजनगिरि समान दशोंदिशाविषै श्यामता होय रही है। विजुरी चमकै है, बगुलानि की पंक्ति विचरै है अर निरन्तर बादलनि के जल बरसै है जैसैं भगवान के जन्मकल्याणक विषै देव रत्नधारा बरसावैं।

● जैसे यौवन अवस्थाविषै असंयमियों का मन विषय वासनाविषै भ्रमै। अर यह मेघ नाज के खेत छोड़ वृथा पर्वत के विषै बरषै है, जैसे कोई द्रव्यवान पात्रदान अर करुणादान तज वेश्यादिक कुमार्गविषै धन खोजै।

● सो दोऊ पुरुष सीता बिना न शोभते भए, जैसैं सम्यक्दृष्टि बिना ज्ञान–चारित्र न सोहै।

● गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहै हैं – हे राजन्! अकेला लक्ष्मण विद्याधरनि की सेनाकूं बाणनिकरि ऐसा रोकता भया जैसैं संयमी साधु आत्मज्ञानकर विषयावासनाकूं रोकें।

● तब आप दृष्टि धर देखा कोटविषै प्रवेश कठिन जाना, मानो यह कोट विरक्त स्त्री के मन समान दु:प्रवेश है।

● तब वे रावण की आज्ञाप्रमाण कुवचन बोलते ले निकसे। सो यह बन्धन तुड़ाय ऊंचा चल्या जैसैं यति मोहफांस तोड़ मोक्षपुरीकूं जांय।

● सो आप नरसिंहरूप तीक्ष्ण नखनिकर बिदारी अर गदा के घातकरि कोट चूरण किया, जैसे शुक्लध्यानरूपी मुनि निर्मल भावनिकरि घातिया कर्म की स्थिति चूरण करैं।

● अथानन्तर यह विद्या महा भयंकर भंगकूं प्राप्त भई। तब मेघ की ध्वनि समान ध्वनि भई, विद्या भाग गई, कोट विघट गया। जैसे जिनेन्द्र के स्तोत्रकरि पापकर्म विघट जाय।

● स्वामी के कार्य ऐसा युद्ध भया जैसा मान के मार्दव के युद्ध होय।

● सांझ के समय सांझ फूली, सूर्य अस्त समय किरण संकोचने लगा, जैसैं संयमी कषायों को संकोचै।

● जैसैं जिनराज के निकट चढ़ाया द्रव्य निर्माल्य होय है, ताहि देखिए है, परन्तु दोष नाहीं। अयोग्य अभक्ष्य वस्तु आंखिनिसूं देखिये हैं परन्तु देखे दोष नाहीं, अंगीकार कीये दोष है।

● जैसैं दर्शनावरणीय कर्म दर्शन के प्रकाशकूं रोकै तैसैं कुम्भकरण की विद्या वानरवंशीनि के नेत्रनि के प्रकाशकूं रोकती भई।

www.vitragvani.com

ॐ

।।शास्त्र-स्वाध्याय का प्रारम्भिक मंगलाचरण।।

ओंकारं बिन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव ॐकाराय नमो नमः।।

अविरलशब्दघनौघप्रक्षालितसकलभूतलमलकलङ्का।
मुनिभिरुपासिततीर्था सरस्वती! हरतु नो दुरितान्।।

अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

श्री परमगुरवे नमः, परम्पराचार्यगुरवे नमः

सकलकलुषविध्वंसकं, श्रेयसां परिवर्धकं, धर्मसम्बन्धकं, भव्यजीवमनः-प्रतिबोधकारकं, पुण्यप्रकाशकं, पापप्रणाशकमिदं शास्त्रं श्रीहरिवंशपुराण-भाषावचनिका नामधेयं अस्य मूलग्रन्थकर्तारः श्रीसर्वज्ञदेवास्तदुत्तरग्रन्थकर्तारः श्रीगणधरदेवाः प्रतिगणधरदेवास्तेषां वचनानुसारमासाद्य आचार्यश्रीकुन्दकुन्दाम्नाये आचार्यजिनसेनविरचितं हरिवंशपुराणं तदाधारेण पण्डितदौलतरामेण विरचितम्।

श्रोतारः सावधानतया शृण्वन्तु

मङ्गलं भगवान् वीरो मङ्गलं गौतमो गणी।
मङ्गलं कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोऽस्तु मङ्गलम्।।
सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वकल्याणकारकम्।
प्रधानं सर्वधर्माणां जैनं जयतु शासनम्।।

।। ॐ नमः सिद्धेभ्यः।।

हरिवंशपुराण भाषा

।।श्लोकः।।

सिद्धं ध्रौव्यव्ययोत्पादलक्षणं द्रव्यसाधनम्।
जैनं द्रव्याद्यपेक्षातः साद्यनाद्यथ शासनम्।।1।।

अथ – प्रथम ही जैनशासन कहिये जैनसिद्धान्त सो जयवंत होवे। कैसा है जिनशासन, उत्पाद व्यय ध्रौव्य रूप जो सत्ता सो है लक्षण जिसका। ऐसा जो द्रव्य कहिये षट् द्रव्यों का समूह उसका साधन कहिये कथन करणहारा है। और कैसा है जिनसूत्र – सिद्धं कहिये स्वतः सिद्ध है। किसी कर किया नहीं और द्रव्यार्थिक नय कर अनादि है और पर्यायार्थिक नय कर आदि सहित है।

भावार्थ – प्रवाह रूप अनादि काल से प्रवर्ते है और सदा प्रवर्तेगा, इससे अनादि अनन्त है। और जब प्रगट होय है तब केवली के मुख से प्रगटे है इससे आदि सहित है और जे षट् द्रव्य हैं वे स्वद्रव्य स्वक्षेत्र स्वकाल स्वभाव की अपेक्षा अस्ति रूप हैं और परद्रव्य परक्षेत्र परकाल परभाव की अपेक्षा नास्तिरूप हैं। इस भांति सब ही द्रव्य अस्ति नास्तिरूप हैं और जिनशासन अस्ति नास्ति का प्रगट करने वाला है।।1।। और श्री वर्द्धमान तीर्थंकर जिनेश्वर के ताई नमस्कार होवे। कैसे हैं श्री वर्द्धमान, श्री कहिये अनन्त चतुष्टय विभूति सो जिनके वृद्धि को प्राप्त भई है। और कैसे हैं, शुद्ध ज्ञान के प्रकाशक हैं रागादिक रहित जो शुद्ध ज्ञान सोई है प्रकाश जिनका और लोकालोक के एक अद्वितीय सूर्य हैं।।2।। श्री ऋषभनाथ स्वामी के ताई नमस्कार होवे। कैसे हैं वृषभ, सबके ज्ञायक हैं सर्वज्ञदेव हैं और सर्व व्यवस्था कहिये सकल कर्मभूमि की रीति ताके उपदेशक हैं असि, मसि, कृषि, वाणिज आदि सर्व रीतियों के निरूपण कारणहारे हैं और किया है आदि ही धर्म तीर्थ का प्रवर्त्तन जिन्होंने।

भावार्थ ह्न श्रावक के अणुव्रत और यति के महाव्रत तिन सबों का मार्ग निरूपणहारे हैं और स्वयंभू कहिये आप ही अपनी शक्ति कर प्रगट भये हैं और तीर्थंकर पद को प्राप्त भये हैं।।3।। और अजितनाथ स्वामी के ताईं नमस्कार होवे। कैसे हैं अजितनाथ, जिन्होंने दूजा तीर्थ प्रगट किया। प्रथम ही तीर्थ तो ऋषभ का समय और दूजा तीर्थ इनका समय। कैसे हैं अजितनाथ, गणधरादि समस्त मुनियों के ईश्वर हैं और जीते हैं कर्म शत्रु जिन्होंने और अजित ने धर्मरूप तीर्थ को अजितता के भाव को प्राप्त किया है। जिनका भाष्या धर्म कोई खण्डित न कर सके वीतराग का धर्म अपराजित है।। 4।। और तीजे तीर्थंकर श्री सम्भवनाथ के ताईं नमस्कार होवे। जिन संभवनाथजी के होते सन्ते भगवान के

भक्त जे भव्य जीव वे ऐसा विचारते भये कि सुख संसार विषे है वा मुक्ति विषे है।

भावार्थ ह्र अविवेकी जीवन के यह विचार नहीं कि सुख कहां है? सम्भवनाथ के उपदेश से भव्य जीव ऐसा विचार करते भये जो संसार तो चतुर्गति दु:खरूप ही है इसमें सुख नहीं। सुखरूप एक निर्वाण ही है ऐसा विवेक जिनके उपदेश से भव्यों के होता भया। ऐसे श्री सम्भवनाथ के ताईं सुख की प्राप्ति के अर्थ बारम्बार नमस्कार होवे।।5।। और अभिनन्दन स्वामी के ताईं हमारा मन वच काय कर नमस्कार होवे। कैसे हैं अभिनन्दन, समस्त लोक को आनन्द उपजावनहारे हैं और जिनेन्द्र हैं, गणधरादि मुनियों के इन्द्र हैं सो अभिनन्दन स्वामी चौथा तीर्थ प्रगट करते भये।

भावार्थ ह्र अभिनन्दन का समय चौथा तीर्थ कहिये जिसकर भव्य जीव भवसागर तिरें। कैसा है भगवान् का अन्वर्थ कहिये सत्यार्थ है।।6।। तीर्थ और पाँचवें तीर्थंकर श्री सुमतिनाथ के ताईं सुबुद्धि की प्राप्ति के अर्थ सदा नमस्कार होवे। सो भगवान सुमतिनाथ पाँचवाँ तीर्थ प्रवर्तावते भए। कैसा है उनका तीर्थ, विस्तार सहित धर्म का अर्थ जिस विषे।।7।। और छठे श्रीपद्मप्रभ तीर्थंकर के ताईं नमस्कार होवे। जिनकी प्रभा कहिये दीप्ति दशों दिशा को उद्योत करती भई। कैसी है पद्मप्रभ की प्रभा, जीती है कमल की प्रभा जिसने।

भावार्थ ह्र कमल की प्रभा भी आरक्त है और पद्मप्रभ की प्रभा भी आरक्त है परन्तु पद्मप्रभ की प्रभा समान कमल की प्रभा नहीं।।8।। और सप्तम तीर्थंकर श्री सुपार्श्वनाथ के ताईं नमस्कार होवे। कैसे हैं सुपार्श्वनाथ, कृतार्थ है आत्मा जिनका सो सुपार्श्वनाथ सातवें तीर्थ को भव्य जीवन के कल्याण निमित्त प्रवर्तावते भये। कैसे हैं भगवान् सुपार्श्वनाथ, कहिये केवल आत्मार्थताकर पूर्ण हैं।।9।। और अष्टम तीर्थंकर श्री चन्द्रप्रभ जो अष्टम तीर्थ के कर्त्ता हैं तिनके ताईं नमस्कार होवे। चंद्रमा समान है उज्ज्वल कीर्ति जिनकी भगवान की कीर्ति के तुल्य चन्द्रमा कहाँ, परन्तु दृष्टान्त देखी वस्तु ही का देखने में आवे है। कैसा है भगवान का तीर्थ, इन्द्रादिक देवों कर पूज्य है। और कैसे हैं भगवान, सकल के रक्षक हैं चतुर्विध संघ के स्वामी हैं।।10।। और श्री पुष्पदन्त नवमें तीर्थंकर के ताईं नमस्कार होवे। कैसे हैं पुष्पदंत, अपनी देह की और दाँतन की असंख्य प्रभाकर जीती है कुन्द के पुष्प की प्रभा जिन्होंने।

भावार्थ ह्र दाँत तो सब ही के उज्ज्वल हैं, परन्तु पुष्पदन्त की देह भी कुन्द के पुष्प समान उज्ज्वल है चंद्रप्रभ और पुष्पदन्त ये दोनों श्वेत वर्ण हैं। यद्यपि कुन्द का पुष्प उज्ज्वल है तथापि कुन्द के पुष्प की प्रभा जिनेश्वर की प्रभा समान उज्ज्वल नहीं।।11।। और दशम तीर्थंकर श्री शीतलनाथ कुमार्ग के नाश करणहारे धर्म तीर्थ के कर्त्ता तिनके ताईं नमस्कार होवे। कैसा है जिनका तीर्थ कहिये प्राणी तिनके संताप का निवारणहारा है और शुचि कहिये पवित्र है और भव-आताप का मेटनहारा

महा शीतल है।।12।। और ग्यारहवें तीर्थंकर श्री श्रेयांसनाथ अरहन्त देव विछेद हो गया जो धर्म तीर्थ तिसको प्रगट कर भव्य जीवन की भव फांसी को शीघ्र ही छेदते भये तिनके ताईं नमस्कार होवे।

भावार्थ ह्न शीतलनाथ स्वामी के मुक्ति गए पीछे धर्म की विछित्ति भई, धर्म का लोप हो गया सो श्रेयांसनाथ स्वामी धर्म का उद्योत कर भव्यजीवों को पार करते भए।।13।। और बारवें वासुपूज्य स्वामी त्रैलोक्य के सूर्य तिनके ताई नमस्कार होवे। कैसे हैं वासुपूज्य, कुतीर्थ कहिये कुमार्ग सोई भया अन्धकार तिसको मेट कर बारहवाँ तीर्थ महा उज्ज्वल तिसको प्रगट करते भये। कैसे हैं वासुपूज्य, सूर्य तीन लोक के स्वामी हैं जगत् पति हैं।।14।। और तेरहवें तीर्थंकरजी श्री विमलनाथ तिनके ताईं नमस्कार होवे। जो श्री विमलनाथ कुमार्ग रूपी मैल कर मलिन जो जगत उसे धर्मरूप तीर्थंकर निर्मल करते भये।।15।। और चौदहवें तीर्थंकर श्री अनंतनाथ तीर्थ कहिये धर्म ताके कर्त्ता जिनराज तिनके ताईं नमस्कार होवे। कुसिद्धान्त कहिये मिथ्या शास्त्र सोई भया तम कहिये अंधकार ताके भेदने को सूर्य समान है उपदेश जिनका।।16।। और पन्द्रहवें तीर्थंकर श्री धर्मनाथ महामुनि के ताईं नमस्कार होवे। कैसे हैं धर्मनाथ, धर्म तीर्थ के कर्त्ता हैं। कैसे हैं धर्मतीर्थ, अधर्म का जो मार्ग सोई भया पाताल उस विषे पडते जे प्राणी तिनके उद्धार करने को समर्थ हैं।

भावार्थ ह्न पुष्पदन्त को मुक्ति गये पीछे शीतलनाथ के अन्तराल विषे पाव पल्य धर्म की विछित्ति भई और शीतलनाथ के मुक्ति गये पीछे श्रेयांसनाथ के अन्तराल विषें आध पल्य धर्म की विछित्ति भई और वासुपूज्य के अन्तराल विषे पौण पल्य विछित्ति भई और विमलनाथ के अन्तराल विषे एक पल्य की विछित्ति भई और अनन्तनाथ के अन्तराल विषे पौन पल्य और धर्मनाथ के अन्तराल विषे आध पल्य और शान्तिनाथ के अन्तराल विषे पाव पल्य इस भाँति सात तीर्थंकरों के अन्तराल विषे धर्म की विछित्ति चार पल्य भई, जब तीर्थंकर उपजे तब धर्म का उद्योत भया।।17।। और उपजाया है धर्मतीर्थ जिन्होंने ऐसे जो सोलहवें तीर्थंकर पाँचवें चक्रवर्ती श्री शान्तिनाथ तिनको भव दुःख की शांति के अर्थ नमस्कार होवे। कैसे हैं शान्तिनाथ, करी है नाना प्रकार की शान्ति जिन्होंने और परम शान्त है स्वरूप जिनका।

भावार्थ ह्न संसार विषे सात प्रकार की ईति है – अतिवृष्टि 1, अनावृष्टि 2, मूसक 3, टिड्डी 4, सूवा 5, आपका कटक 6, पर का कटक 7 ये सप्त ईति हैं, तिनके भगवान निवारक हैं।।18।। और सतरहवें श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्र छठे चक्रवर्ती तिनके ताईं नमस्कार होवे। तीन लोक विषैं विस्तार रही है कीर्ति जिनकी ऐसे भगवान कुन्थुनाथ तिनकर सतरहवाँ तीर्थ प्रवर्ता।।19।। और अठारहवें भगवान सातवें चक्रवर्ती पाप रूप बैरी के नाश करणहारे श्री अरनाथ तिनके ताईं नमस्कार होवे। कैसे हैं अरनाथ, संसार के जो थावर जंगम सकल प्राणी तिनको धर्म तीर्थंकर कल्याण के करणहारे हैं।।20।।

और उन्नीसवें तीर्थंकर श्री मल्लिनाथ मोह रूप महामल्ल के मलवे को बड़े मल्ल तिनके ताईं नमस्कार होवे। धर्मतीर्थ के प्रवर्तन कर थापी है संसार विषे अचलकीर्ति जिन्होंने।।21।। और बीसवें तीर्थंकर श्री मुनिसुव्रत ईश्वर तिनके ताईं नमस्कार निरंतर होवे। जो भगवान अपना बीसवां तीर्थ प्रगटकर भवसमुद्रथकी भव्य जीवों को तारते भए।।22।। और इक्कीसवें तीर्थंकर धर्म तीर्थ के कर्ता श्री नमिनाथ मुनियों में मुख्य तिनके ताईं नमस्कार होवे। कैसे हैं नमिनाथ, नवाये हैं वश किये हैं अन्तरंग बहिरंग के शत्रु जिन्होंने।

भावार्थ ह्न अंतरंग के शत्रु तो रागादिक और वहिरंग शत्रु आरम्भ परिग्रहादिक ते सब ही शत्रु वश किये हैं। ऐसे इक्कीसवें तीर्थंकर तिनके ताईं सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्ररूप जो तीर्थता की सिद्धि के अर्थ सेऊं हूं वे तीर्थ के कर्त्ता हैं।।23।। और हरिवंश रूप उदयाचल पर्वत के शोभायमान शिखामणि सकल जगत् के सूर्य श्री अरिष्टनेमी बाईसवें तीर्थंकर तिनके ताईं नमस्कार होवे। कैसे हैं अरिष्टनेमि, तीर्थ कहिये तिरवे का उपाय जो परम धर्मरूप रथ ताके चक्र कहिये पहिये तिनकी नेमि कहिये धुरा हैं। अथवा तीर्थं कहिये परव्यान सोई भाषा चक्ररूप आयुध उसकी धारा हैं।।24।।

और तेईसवें तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ के समय विषे धर्म तीर्थ के कर्ता जो श्री पार्श्वनाथ जिनेश्वर सो जयवन्त होवें। कैसे हैं श्री पार्श्वनाथ, जिनके पूर्व भव कर शत्रु जो कमठ का जीव असुर महा प्रबल पर्वतों का उठावनहारा सो तप कल्याण के समय पूर्व भव का वैर चितार उपसर्ग करता भया, उसे धरणेन्द्र कहिये नागों का इन्द्र पाताल लोक का स्वामी भगवान् का भक्त सो निवारता भया, उसके प्रतापकर सो वह भाग गया ऐसे श्री पार्श्वनाथ जगत् विषे जयवन्त होवें।।25।।

और वीरनाथ अन्तिम तीर्थंकर तिनके ताईं नमस्कार होवे। इस भाँति अवसर्पिणी काल के तीजे चौथे काल विषे किया है धर्मतीर्थ का प्रवर्तन जिन्होंने वे जिनेश्वर देव हमको निर्वाण की सिद्धि के अर्थ होवें।।26।। जो भगवान अतीत काल की अपेक्षा अनन्त और वर्तमान काल की अपेक्षा संख्यात और अनागत काल की अपेक्षा अनन्तानन्त वे अरहन्त सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधु पंच परमगुरु सर्व ही सदा सर्वत्र हमको मंगलरूप होवें।

अथानन्तर ह्न कई एक आचार्यों के नाम कहे हैं। समन्तभद्र आचार्य के वचन श्री महावीर स्वामी के वचन की न्याईं प्रमाण करने योग्य हैं। कैसे हैं महावीर के वचन, उस लोक विषे जीव की सिद्धि के करणहारे हैं और किये हैं नय प्रमाण की युक्तिकर अनेक शास्त्र जिन्होंने। और कैसे हैं समन्तभद्र के वचन, जीव सिद्धि नामा ग्रन्थ के कर्ता हैं नय प्रमाण की युक्तिकर किया है जिनशासन का व्याख्यान जिन्होंने।।29।। और जगत् के विषे प्रसिद्ध है ज्ञान जिनका ऐसे श्री वर्द्धमान तिनकी निर्दोष वाणी सत्पुरुषों की बुद्धि का बोध करे हैं तैसे श्री सिद्धसेन आचार्य की वाणी निर्दोष भले पुरुषों को

बुद्धि का बोध करे है। सम्यक् दर्शन (ज्ञान) उपजावे है। और देवसंघनामा जो आचार्य तिनकी वाणी क्यों न वन्दने योग्य होय सदा वन्दने योग्य ही है। कैसे हैं देवसंघ, पूज्यपाद हैं वन्दनीक हैं चरण जिनके और जिनेन्द्र इन्द्र चन्द्र अर्क इत्यादि व्याकरण तिनका है अवलोकन जिनके।।30।। ऐसे श्री वज्रसूरि आचार्य तिनकी वाणी धर्म शास्त्र के वक्ता जे गणधरदेव तिनकी वाणी की न्याईं प्रमाण है। कैसी है तिनकी वाणी, कम कहिये कर्मों का बन्ध और बन्ध के कारण रागादि और मोक्ष कहिये कर्मों से रहित होना। और मोक्ष के कारण रत्नत्रय तिनका है विचार जिस विषे।।32।। और महासेन आचार्य की कथा कौन वर्णे सबही वर्णवे हैं। जैसे सुन्दर हैं लोचन जिसके ऐसी बनिता कहिये स्त्री उसका वर्णन सब ही करें। कैसी है सुन्दर स्त्री और कैसी है महासेन की कथा, मधुरा कहिये माधुर्य उसको धरे है और सीता कहिये स्त्री तो शीलवन्ती है और कथा सीता कहिये सत्स्वभाव को धरे है। अथवा शीलवन्त पुरुषों का है कथन जिस विषे और अलंकार धारणी कहिये कथा तो नाना प्रकार के अलंकारों को धरे है और स्त्री अनेक आभूषणों को धरे है।।33।।

और जो श्री रविषेणाचार्य तिनकी काव्यमयी मूर्ति इस लोक विषे रवि कहिये सूर्य उसकी कान्ति की न्याईं निरंतर प्रकाश को करे है। कैसी सूर्य की कांति, उद्योत रूप है और किया है पद्म कहिये कमल का प्रकाश जिसने। और कैसी है, रविषेण की काव्यमई मूर्त्ति, किया है पद्मपुराण का प्रकाश जिसने सबों के अत्यंत अनुराग उपजावे है, जैसे बारांगना कहिये सुन्दर स्त्री अपने अंगन कर कौन के अनुराग न उपजावे। अर्थात् सबों के अनुराग उपजावे।।34-35।। और वन नामा आचार्य महाशांत है तो भी तिनकी महारमणीक उत्प्रेक्षा अलंकार के लिये वक्रोत्ति महारमणीक अर्थ को प्रकाशति थकी कौन के मन को अनुरागी न करे सबही के मन को अनुरागी करे। जैसे सुन्दर स्त्री के मुख की वक्रोक्ति रमणीक महा उत्प्रेक्षा के लिए कौन के चित्त को मोहित न करे। रमणीक अर्थ के विकाश ते शांत पुरुषन के मन को भी अनुरागी करे।।36।। और श्री कुमारसेन गुरु की यश निर्मल जिसे कोई जीत न सके, सो इस लोक विषे समुद्र पर्यन्त विचरे है प्रभाचंद नामा ग्रन्थ का किया है प्रकाश जिन्होंने।

कैसा है कुमारसेन का यश, चन्द्रमा के उदय को प्रभा समान उज्ज्वल है। और कैसा है यश, समस्त जो उक्ति तिनके विषे तिलक समान है। पद्य कहिये छंदोबद्ध और गद्य कहिये छंद रहित संस्कृत तिन दोऊण की जो उक्ति वाणी तिनके विशेष विषे तिनका यश तिलक समान है। शब्दागम 1 युक्तागम 2 परमागम तीनों का ही है विशेष ज्ञान जिनको, ऐसे जो कुमारसेन तिनकी विशेष ज्ञाता सबन के शिरोभाग बर्ते हैं और कवियन के चक्रवर्ती हैं जीत्या है परलोक जिन्होंने ऐसे जो वीरसेन गुरु तिनकी कीर्ति कलंक रहित ही है और जिनसेनाचार्य ने श्री पार्श्वनाथ जिनेंद्र के अपार गुणों की स्तुति करी, सो वह स्तुति ही जिनसेन स्वामी की कीर्ति को कहे है।

भावार्थ ह्न जिनसेन कृत पार्श्वनाथ स्तवन जिसके पढ़ने से जिनसेन के गुण विस्तरे हैं, पृथ्वी विषे कीर्ति विख्यात होय रही है।।40।। और जो वर्द्धमान पुराण सोइ भया ऊगता सूर्य ताका जो कथन वेई भई किरण सो पंडितों के मन वेई भये स्फटिक मणि की भान्ति उस विषे देदीप्यमान भासे हैं।।41।। सत्पुरुष कर भाषी जो वाणी सो निर्गुण कहिये बन्धन से रहित है तथापि दया क्षमा सत्य संतोषादिक अनेक गुणन को धारे है। जैसे आम की मंजरी (कोहर) निर्गुण कहिये तागान से रहित है तथापि स्त्री के मुख विषे कर्नफूल के आकार कर सन्ती गुणन को धरे है, महाशोभायमान दीखे है। जैसे अग्नि स्वर्ण की कालिमा को दूर करे है तैसे मेरे काव्य विषे कोई दोष होय तो साधु जन सोधिवे समर्थ हैं वे शुद्ध कर लेवें।।43।।

सत्पुरुषों की सभा कवि के काव्य विषे कदाचित् कोई दोष होय तो उस दोष को काढ नाखें। काव्य में कोई दोष होने न देवें जैसे समुद्र के मध्य कोई मल आय पड़ा होय तो लहर मल को बाहर काढ डारे।।46।। जैसे समुद्र विषे निर्मल जो सीपी तिन विषे जल की बून्द भी मोती होय जाय तैसे जड़ात्मा कहिये मूर्ख भी निर्मल पुरुष कर प्रतिबोध्या सन्ता प्रतिषिद्ध (ज्ञानी) होय जैसे जल से मोती होय जाय तैसे जड़ बुद्धि पण्डित होय जाय।। 45।। खल कहिये दुष्ट वेइ भये व्याल कहिये सर्प उनका जे विवेकी राजा हैं, वे अपनी शक्तिकर निग्रह करें तिनका अधिकार न होने देवें। कैसे हैं वे, सर्प समान दुष्ट पुरुष दुर्वचनरूप जो विद्या विषता से भरा जो मुख उस विषे स्फुरायमान है जीभ तिनकी।।46।।

जैसे मेघ दाह का उपजावनहारा है, जो ग्रीष्म समय उसे शान्त करे। कैसा है ग्रीष्म समय, बहुत उड़े है रज जिस विषे अर निपट रूपा है सरदी से रहित है आतपकारी है ऐसी ग्रीष्म को वर्षाकाल विषे मेघ शीतकाल करे है। कैसे हैं मेघ, मिष्ट हैं, शब्द जिनके तैसे सत्पुरुष दुष्टों को समय पाय शान्त करे हैं। कैसे हैं सन्त, सुंदर हैं शब्द जिनके। और कैसे हैं खल, पापरूप रज कर पूर्ण हैं और महा रूखे हैं जिनमें सज्जनता नहीं और लोक को आताप उपजावे हैं, ऐसे विलोको शांतिता को प्राप्त करे हैं। इस श्लोक में दुष्टन को शान्तिता की उपमा दई और संतन को वर्षा कर वर्णन किया।।74।।

जैसे अंधकार को चाँद सूर्य की किरण निवारे तैसे अज्ञानी को ज्ञानी प्रतिबोधे। कैसा है अंधकार, जिस विषे भला बुरा-दृष्टि नहीं पड़े है। और कैसा है मूढ़ों का अज्ञानभाव, जिस विषे दुराचार और शुभाचार सब सम भासे है, हेयोपादेय की सुध भासे नाहीं।।48।। इस भांति सत्पुरुषों का सहाय मेरे ऐसा जो मैं सो काव्यमय अपनी देह को इस लोक विषे थिर करूं हूँ। कैसा है काव्यमय देह, समस्त रोग और समस्त जो भाव तिनसे रहित है, और उद्धतपने से रहित है और महाशांत है।

भावार्थ ह्न यह काया तो क्षणभंगुर है सो राखी न रहे और कवितारूप काया बहुत काल तक रहे है।।49।।

पहला सर्ग

अथ की ग्रन्थ की उत्पत्ति

अथानन्तर ह्न मैं हरिवंश नाम जो पुराण महा मनोहर उसे प्रकट करता हूँ। कैसा है यह पुराण, संसार विषे कल्पवृक्ष समान उत्कृष्ट है। कैसा है कल्पवृक्ष, औंडी है जड़ जिसकी और कैसा है यह पुराण, अति अगाध है जड़ जिसकी महादृढ़ है जिसकी जड़ जिनशासन है। और कल्पवृक्ष और पुराण दोनों पृथ्वी विषे प्रसिद्ध हैं और कल्पवृक्ष तो बहुशाखा कहिये अनेक शाखा उनकर शोभित है और यह पुराण बहुशाखा कहिये अनेक कथा उन कर शोभित है। और कल्पवृक्ष विस्तीर्ण फल का दाता है और यह पुराण महापवित्र पुण्य फल का दाता है और आप पवित्र है और कल्पवृक्ष भी पवित्र है। यह हरिवंश पुराण श्री नेमिनाथ के चरित कर महा निर्मल है।।51।।

जैसे द्युमणि कहिये सूर्य उसकी ज्योति कर प्रकाशे पदार्थ तिनको दीपक तथा मणि तथा खद्योत कहिये (पटवीजना) तथा विजुली यह लघु वस्तु भी अपनी शक्ति प्रमाण यथायोग्य प्रकाश करे हैं।।52।। तैसे बड़े पुरुष केवली श्रुतकेवली उनकर प्रकाशित जो यह पुराण उसके प्रकाशि विषे अपनी शक्ति प्रमाण हम सारिखे अल्प बुद्धि भी प्रवर्ते है, जैसे सूर्य के प्रकाशे पदार्थों को कहा दीपादिक न प्रकाशें तैसे केवली श्रुतकेवली के भाषे पुराण को कहा हम सारिखे न प्ररूपें अपनी शक्ति अनुसार निरूपण करें।।53।।

द्रव्यप्रछन्न 1, क्षेत्रप्रछन्न 2, कालप्रछन्न 3, भावप्रछन्न 4 । द्रव्यप्रछन्न कहिये कालाणु।।1।। और क्षेत्रप्रछन्न कहिये अलोकाकाश 2, और कालप्रछन्न कहिये अनागत काल 3 और भावप्रछन्न कहिये, अर्थ पर्यायरूप षट्गुणी हानिवृद्धि 4 ऐसे जे अगम्य पदार्थ आचार्यरूप जो सूर्य उन्होंने किया है प्रकाश जिनका उनको सकुमारता कर युक्त जो यह मन सो स्थूल पदार्थों को जैसे लोक बाह्यदृष्टि करने से देखे तैसे देखे हैं। द्रव्य क्षेत्रादिक के भेदों से पाँच प्रकार के भेद हैं जिसका ऐसा यह आगम पुराण पुरुषों का भाषा होने से प्रमाण है।।55।।

इस ग्रंथ के मूल कर्ता आप श्री तीर्थंकरदेव और उत्तर ग्रन्थ कर्ता गौतम नामा गणधरदेव और उत्तरोत्तर ग्रंथकर्ता अनेक आचार्य वे सब ही सर्वज्ञदेव के अनुसार कथन करणहारे हमको प्रमाण हैं।।57।। उन केवली और पाँच चतुर्दश पूर्व के धारी श्रुतकेवली और ग्यारह अंग दश पूर्व के पाठी, ग्यारह और एकादश अंग के धारक पाँच और एक आचारांग के धारक चार और यह पांच प्रकार के मुनि पंचमकाल के आदि विषे होते भए तिनमें श्री वर्द्धमान के पीछे तीन केवली भए।

इन्द्रभूत कहिये गौतम और सुधर्माचार्य और जम्बूस्वामी अंतिम केवली भए। यह तीन तो केवली भए और विष्णु 1, नन्दिमित्र 2, अपराजित 3, गोवर्द्धन 4, भद्रबाहु 5, ये पाँच चतुर्दश पूर्व के धारक श्रुतकेवली भए। और विशाखाचार्य 1, घोष्टलक्ष 2, त्रिय 3, जय 4, नाग 5, सिद्धार्थ 6, धृतिषेण 7, विजय 8, बुद्धिल 9, गंगदेव 10, धर्मसेन 11, ये ग्यारह अंग और दश पूर्व के पाठी भए।।63।। और नक्षत्र 1, यश:पाल 2, पाण्डु 3, ध्रुवसेन 4, और कम्पाचार्य्य 5 ये पाँच मुनि ग्यारह अंग के पाठी भए।।64।। और समुद्र 1, यशोभद्र 2, यशोबाहु 3, लोहाचार्य 4, ये चार मुनि एक आचारांग के धारक भये।।65।। ये पूर्वाचार्य और भी जो आचार्य उनकर विस्तार यह एक देश आगम उसका एक देश व्याख्यान करिये है।।66।।

यह हरिवंश पुराण अपूर्व कहिये आश्चर्यकारी अर्थथकी तो बहुत है, शब्दथकी अल्प है। इससे शास्त्र के विस्तार के भय कर अल्परूप सारवस्तु का संग्रह करिए है।।67।। मन वचन काय की शुद्धता को धारें जे भव्य जीव सदा जैन सूत्र का अभ्यास करें उनको वक्तापने कर और श्रोतापने कर यह पुराण का अर्थ कल्याण का कर्ता होय है। बाह्य और आभ्यन्तर के भेद कर जो तप की विधि है सो दो प्रकार की है उस विषे स्वाध्याय नामा परम तप है क्योंकि जो यह स्वाध्याय नामा तप है सो अज्ञानता को निवारे है।।69।। इससे परम पुरुषार्थ का करणहारा यह पुराण का अर्थ इस देश काल के जाननहारे जे पण्डित उन कर व्याख्यान करणे योग्य है। और जो मत्सर भाव रहित श्रद्धावान पुरुष हैं उन कर सुनने योग्य है। मत्सर कहिये द्वेषक व्याख्यान करणे योग्य जो भाव सो सत्पुरुषों को त्याज्य है।।70।।

अथ अनुक्रमणिका (कथनों की सूची)

आगे इस पुराण विषे आठ बड़े अधिकार हैं सो अनुक्रम से कहेंगे। इन विषे प्रथम ही त्रैलोक्य का कथन।।1।। और राजाओं के वंश की उत्पत्ति।।2।। और हरिवंश का निरूपण।।3।। और वसुदेव का चरित्र।।4।। और नेमीनाथ का चरित्र।।5।। और यादवों का द्वारिका विषे निवास।।6।। और नारायण प्रतिनारायण के युद्ध का वर्णन।।7।। और नेमीनाथ के निर्वाण का निरूपण।।8।। यह आठ महा अधिकार पूर्वाचार्यों ने सूत्रों के अनुसार प्ररूपै सो यह अवांतर अधिकारों कर शोभित है।।73।। संग्रह कर विभाग कर वस्तु के विस्तार कर इस जिनशासन विषे उपदेश होय है इसलिये अधिकारों के विभाग कहिए हैं।।74।। प्रथम ही वर्द्धमान जिनेश्वर का धर्म तीर्थ प्रवर्तन। फिर गणधरादिक गणों की संख्या। फिर राजगृह विषे आगमन। और गौतम स्वामी से राजा श्रेणिक का प्रश्न।

और क्षेत्र कहिए त्रैलोक्य। और काल कहिए षट्काल तिनका निरूपण। फिर कुलकरों की उत्पत्ति और ऋषभजी की उत्पत्ति। और क्षत्रियादिक के वंश का वर्णन। फिर हरिवंश की उत्पत्ति। और हरिवंश विषे मुनिसुव्रतनाथ की उत्पत्ति।।77।। फिर दक्ष प्रजापति का चरित्र। फिर राजा वसु का

वृत्तांत। फिर अंधकवृष्टिका और उसके दशपुत्रों का कथन। फिर सुप्रतिष्ठत मुनि को केवलज्ञान की उत्पत्ति। फिर अंधकवृष्टि की दीक्षा और समुद्रविजय का राज। और वसुदेव का सौभाग्य वर्णन। और उपाय कर वसुदेव का घर से विदेश को निकसना।।79।। और वसुदेव के राणी सोमा और विजयसेना का लाभ फिर वनगज का वश करणा और विद्याधर की पुत्री स्यामा का संयोग।।80।। फिर वसुदेव को अंगारक विद्याधर का ले उड़ना और चंपापुरी विषे डारना और गंधर्वसेना का लाभ, विष्णु कुमार मुनि का चरित्र, फिर चारुदत्त सेठ की कथा और उसको मुनि का दर्शन और वसुदेव के नीलयशाराणी का लाभ और सोमश्री का लाभ।।82।। और देवकी की उत्पत्ति का कथन, और राजा सौदास का कथन और वसुदेव के कपिला राजकन्या का लाभ और पद्मावती का लाभ और राणी चारुहासिनी और रत्नवती की प्राप्ति और राजा सोमदत्त की पुत्री वेगवती का संगम और मदनवेगा का लाभ, बालचंद्र का अवलोकन तथा प्रियंगुसुंदरी का लाभ, और बंधमती का समागम, प्रभावती की प्राप्ति और रोहिणी का स्वयंवर, उसके स्वयंवर विषे संग्राम और संग्राम विषे वसुदेव की जीत, और समुद्रविजयादिक बड़े भाइयों से मिलाप।।86।। और बलभद्र की उत्पत्ति कंस का व्याख्यान और जरासिंध की आज्ञा से राजा सिंहरथ का बंधन।।87।।

और कंस को जरासिंध की पुत्री जीवंद्यशा का लाभ और राज्य की प्राप्ति, उग्रसेन पिता का बंधन फिर वसुदेव से देवकी का विवाह।।88।। फिर कंस का बड़ा भाई जो अतिमुक्त उसके आदेश कर कंस को आकुलता का होना जो देवकी के पुत्र कर मेरा मरण है फिर वसुदेव सो प्रार्थना करना जो देवकी की प्रसूति हमारे घर होय।। 89।। सो वसुदेव प्रमाण करी फिर वसुदेव का अतिमुक्त मुनि से प्रश्न, और देवकी के अष्ट पुत्रों के पूर्वभव का श्रवन और पाप का नाश करणहारा श्री नेमीनाथ के चरित्र का श्रवण।।90।। फिर श्रीकृष्ण की उत्पत्ति और गोकुल विषे बाललीला और बलदेव के उपदेश से सभी शास्त्रों का ग्रहण।।91।।

फिर वसुदेव के धनुष रत्न का आरोपण और यमुना विषे नागकुमार का जीतना फिर हाथी को जीतना और चाणूरमल्ल का निपात, और कंस का विध्वंस।।92।। और उग्रसेन को राज और हरि का सत्यभामा सों पाणिग्रहण और तासे अधिक प्रीति।।93।। और जीवंद्यशा का जरासंध पै जाना और विलाप करना। जरासंध का यादवों पर रोष होना और बड़ी सेना भेजना, रणविषे कालयवन का पराभव अपराजित का हरि के हाथ कर रण विषें मरण। और यादवों को परम हर्ष का उपजना और किसी का भय नहीं।।95।। फिर शिवदेवी के नेमिनाथ की उत्पत्ति जब गर्भ में आये तब षोडश स्वप्न का देखना और पति से स्वप्न का फल पूछना, पति कही तुम्हारे श्री नेमिनाथ पुत्र होवेंगे।।96।। फिर भगवान का जन्म और सुमेरु विषे जन्माभिषेक फिर बालक्रीडा और जिनराज का प्रताप और जरासंध का यादवों पर आक्रमण, और यादवों का समुद्र की ओर गमन।।97।।

और मार्ग में देवतावों ने जो माया दिखाई उसकर जरासन्ध का पीछे फिरना फिर श्रीकृष्ण का समुद्र के तीर दाभ की सेज पर तिष्ठ तेला करना।।98।। और इन्द्र के वचन से गौतम नामा देवकर समुद्र का संकोचना और कुवेरकर के द्वारिकापुरी का क्षणमात्र में रचना, फिर रुक्मणि का विवाह और सत्यभामा के देदीप्यमान भानुकुमार का जन्म और रुक्मणी के प्रद्युम्न का जन्म और पूर्बला वैरी जो धूमकेतु उसकर प्रद्युम्न का हरण।।100।। विजयार्द्ध विषे प्रद्युम्न की स्थितिकाल संवर विद्याधर के मंदिर में और कृष्ण और रुक्मणी को प्रद्युम्न का खेद और नारद विदेहक्षेत्र में जाकर सीमंधर को पूछकर आया उसकर खेद का निवारण प्रद्युम्न को षोडश लाभ की प्राप्ति और प्रज्ञप्ती और विद्या की प्राप्ति।।1। और प्रद्युम्न का काल संवर से संग्राम, और नारद के आग्रह कर माता पिता के निकट आगमन और संबूकुमार की उत्पत्ति और प्रद्युम्न की बालक्रीड़ा और पिता का पिता जो वसुदेव उसने प्रद्युम्न से प्रश्न किया।।2।।

और प्रद्युम्न ने अपने परिभ्रमण का सकल व्याख्यान किया। फिर यादवों के सकल कुमारों का वर्णन, फिर यादवों की वार्ता के सुनने से जरासन्ध का कोप और यादवों के निकट दूत पठावना, उसके आगमन से यादवों की सभा विषे क्षोभ और दोनों सेनावों का निकसना। और विजयार्द्ध विषे वसुदेव का आगमन, विद्याधरों का क्षोभ, वसुदेव का पराक्रम।।4।। और अक्षोहिणी का प्रमाण और रथी अतिरथी अर्द्धरथी जे राजा महासमर्थ तिनका कथन।।5।। और जरासंध ने चक्रव्यूह रची, उसके भेदिवे अर्थ कृष्ण के कटक विषे गरुड़व्यूह की रचना और कृष्ण के गरुड़वाहनी विद्या की प्राप्ति और बलिदेव को सिंहवाहनी विद्या की प्राप्ति और नेमिनाथ के द्विमात भाई रथनेमि और कृष्ण के भाई अनावृष्टि और अर्जुन इन चक्रव्यूह भेद्या, और कृष्ण की सेना विषे मुख्य पांडव और जरासंध की सेना विषे मुख्य धृतराष्ट के पुत्र जो कौरव उनमें परस्पर महायुद्ध, फिर कृष्ण जरासन्ध का महायुद्ध।।8।। उस समय कृष्ण के हाथ में चक्र का आवना और जरासन्ध का वध, वसुदेव की विजय सो वसुदेव को विजयार्द्ध विषे विद्याधरी प्रगट भई और कृष्ण का कोटि शिला का उठावना और वसुदेव का विजयार्द्ध से आगमन और बलदेव वसुदेव की दिग्विजय और देवोपुनीत रत्न की प्राप्ति।।10।।

और दोनों भाइयों को राज्याभिषेक और द्रौपदी का हरण फिर धातकी खंड में कृष्ण सहित पांडव जाय द्रौपदी ल्याये।। 11।। फिर नेमिनाथ के शरीर के बल का वर्णन वा नेमिनाथ की जल क्रीड़ा और पंचायन शंख का पूरना और नेमिनाथ के विवाह का हर्ष।।12।। फिर जीवों को बन्ध से छुड़ावना और नेमिनाथ की दीक्षा, और केवलज्ञान का उपजना, देवों का आगमन, समवसरण की विभूति का वर्णन, राजमती को प्राप्ति तप की। और यति श्रावक के धर्म का उपदेश और भगवान का तीर्थ विहार और देवकी के षट् पुत्रों का संयम।।14।। फिर भगवान का गिरनार गिरि विषे आगमन और देवकी के प्रश्न का उत्तर रुक्मणी सत्यभामा आदि आठों पटराणिणों के भवांतर का कथन।।15।।

फिर गजकुमार का जन्म और उसकर दीक्षा ग्रहण और वसुदेव टार नव भाइयों का वैराग्य और त्रिषष्टि शलाका के पुरुषों की उत्पत्ति का वर्णन और जिनराज के अंतराल का कथन और बलभद्र का प्रश्न। प्रद्युम्न की दीक्षा और रुक्मणी आदि कृष्ण की स्त्रियों का और पुत्रों का संयम और द्वीपायन मुनि के क्रोध से द्वारावती का नाश।।18।। और बलभद्र नारायण का द्वारिका से निकसना और कुटुंब का भस्म होना और दोनों भाइयों का शोक सहित कौशांबी नगरी के वन विषे प्रवेश।।19।। और बलभद्र का जल के अर्थ जाना और कृष्ण का अकेला रहना और बिना जाने जरद्कुमार के हाथ से छूटा जो बाण उसकर दैवयोग से हरि का परभव गमन करना।।20।। उसकर जरद्कुमार को शोक उपजना और बलभद्र के अति दुस्तर दु:ख का उपजना फिर सिद्धार्थदेव के उपदेश से बलभद्र को वैराग्य उपजना तप धरना और पाँचवें स्वर्ग में जाना और पांडवों को वैराग्य होना और गिरनार विषे नेमिनाथ का मुक्त होना।।22।।

और पाँचों पांडव महापुरुषों को उपसर्ग का जीतना और जरद्कुमार को दीक्षा लेना और जरद्कुमार की सन्तान से हरिवंश का रहना और उनके वंश के दीपक जे राजा जितशत्रु उनको केवलज्ञान की प्राप्ति और जो राजा श्रेणिक हरिवंश के शिरोमणि उनका राजगृह विषे राज।।24।। और वर्द्धमान भगवान का दीपमालिका के दिन निर्वाण गमन, उससे देवों का वह दिन उत्सवरूप मानना। तब दीप्यमान दीपमालिका प्रसिद्ध भई और गणधरों का निर्वाण गमन। यह हरिवंश पुराण का विभाग संक्षेप कर कहा है।

अथानन्तर ह्व भव्य जीव प्रसिद्धि के अर्थ विस्तार सहित व्याख्यान सुनें।।26।। एक ही पुरुष का चरित्र सुना हुआ पाप का नाश करे और जो सर्व तीर्थेश्वर चक्रेश्वर हलधर उनका चरित्र भव्य जीव जे सुनें उनका क्या पूछना, वह तो जन्म जन्म के पाप निवारे हैं। जैसे महामेघ की बूंद ही महाताप का विच्छेद करे तो समस्त लोक विषे व्याप रहे जे मेघ उनकी जो माला के समूह उनकी जो सहस्र धारा झरे, उनकर आताप क्यों न दूर होय, सर्वथा दूर होय।।27।। जो विवेकी जन हैं सो जिनमें वक्रमार्ग ऐसे लौकिक पुराण भ्रांतिरूप उनको तज कर जैन पुराण की पदवी महासरल कल्याण की करणहारी हितकारी उसे गहो, मोह की है बाहुल्यता जिसमें ऐसी दिग्मूढ़ता कहिये दिशा भूलपना उसे तजकर भव्य जीव शुद्ध मार्ग लेवो। जिन कहिये भगवान् वेई भये भास्कर कहिये सूर्य तिन कर प्रगट किया जो शुद्ध मार्ग महा विस्तीर्ण उसके होते सन्ते शुद्ध है दृष्टि जिसकी ऐसा सम्यक् दृष्टि सो खाडे विषे काहे को परै।

भावार्थ ह्व सूर्य के प्रकाश बिना अन्ध पुरुष संकीर्णमार्ग विषे खाडे में पड़े और सूर्य के उदय कर प्रगट भया मार्ग विस्तीर्ण उस विषे दिव्य नेत्रों का धारक काहे को खाडे में पड़े।।28।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ संग्रहविभागवर्णनं नाम प्रथम: सर्ग:।।1।।

प्रथम अधिकार

तीन लोक का कथन

दूसरा सर्ग

अथानन्तर ह्व जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र विषे बड़ी विभूति का भरा विदेह नामा देश है सो देश लक्ष्मी कर स्वर्गलोक के समान है।।1।। सो वह देश सर्व उपसर्ग के रहित जहां प्रजा बहुत सुख से वसे सो देश महासुन्दर जहां प्रतिवर्ष सर्व धान्य की भले प्रकार उत्पत्ति और गाय भैंस वृषभादि गोधन से भरा।

भावार्थ ह्व जहां धान्य अति सस्ता और गोरस की बाहुल्यता। सो देश खेट, कर्वटमंटव पुरभेदन द्रोण मुख, और अनेक धातुवों तिनकी खान और क्षेत्र ग्राम और घोष कहिये गायन के खरक उन कर शोभित है। उस देश का कहा वर्णन करें जहां सुख का निवास और धर्म का प्रकाश सो बड़े-बड़े राजा इक्ष्वाकु वंश आदि क्षत्रियों के वंश विषे स्वर्ग से चय कर उपजे हैं। उस देश विषे कुण्डलपुर नाम नगर मानो सुख रूप जल का कुण्ड ही है। सब सुखों का समूह है। और अखण्ड कहिये इन्द्र उसके नेत्र की जो पंक्ति सोई भये भ्रमरों के समूह उनको कमलों का वन जो महा सरोवर उस समान मनोज्ञ भासे है।।5।।

जिस नगर विषे अति उज्ज्वल जे महलों के समूह उनकर आकाश अति धवल होय रहा है। कैसे हैं महलों के समूह, शरद ऋतु के मेघ समान अति उन्नत और महानिर्मल हैं।।6।। जिस नगर विषे रात्रि के समय चंद्रमा की किरणों के स्पर्श से घरों के लगी जे चंद्रकांतमणि की शिला उनसे अमृत झरे है सो कैसी सोहे हैं जैसे रतिसमय स्नेह की भरी स्त्री सोहे।।7।। और जिस पुर विषे घरों के लगी सूर्य की कांतिमणि वे सूर्य की किरणों के स्पर्श से दिन विषे महाप्रज्वलित दीखे हैं सो कैसी भासे हैं जैसे धनी से कुपित भई स्त्री प्रज्वलित भासे है। और जिस नगर विषे मन्दिरों के शिखर विषे पद्मरागमणि देदीप्यमान लगी है सो सूर्य की किरण के स्पर्श से राग की भरी रमणी की नाई शोभे है। देखनहारे के मन को अनुराग उपजावे है।।9।।

और वह नगर मुक्ता कहिये मोती और मरकत कहिये हरित मणि वज्र कहिये हीरा और मोर के कण्ठ समान रंग को धारे वैडूर्यमणि और विद्रुम कहिये मूंगा इन सबके प्रकाश कर कैसा सोहे है मानो समस्त रत्नों की खान की शोभा एकत्र भेली भई है।।10।। और वह नगर कोट रूप पर्वत और खाई और पड़कोटा उनकर वेढ्या अति शोभायमान भासे है जिसके ऊपर सूर्य का मण्डल ही जाय है और

शत्रु मण्डल न जाय सके हैं।।11।। तिस नगर के गुणों का वर्णन पहिले ही कथन कर पूर्ण होवे अधिक क्या करे हैं जो नगर स्वर्गावतरण विषे महावीर का आधार के भाव को प्राप्त भया।

भावार्थ ह्न जहां अन्तिम तीर्थंकर ऊर्ध्वलोक से चय कर माता के गर्भ विषे आए, उसका कहां तक वर्णन करें।।12।। उस नगर विषे सूर्य की-सी प्रभा का धारणहारा राजा सिद्धार्थ होता भया। कैसा है राजा, सिद्ध भए हैं पुरुषार्थ जाके और जो सर्व अर्थ का देखनहारा है। और पिता सर्वार्थ और माता श्रीमती कर पाया है जन्म जिसने।।13।। जिसको धरती की रक्षा करते सन्ते धरती के सर्व दोष मिट गए, एक ही दोष दीखे है जो उस राजा की प्रजा धर्मार्थनी है तो भी परलोक के भय से रहित है।

भावार्थ ह्न जो प्रजा धर्म-अर्थनी होय है ताहि परलोक का भय होय है सो इस राजा के राज में परलोक कहिए शत्रुजन तिनका भय नाहीं।।14।। जहां कदे ही शत्रु की बाधा नहीं, ता राजा के प्रशंसा योग्य गुण तिनको कौन नर तोल सके। राजा के गुण अतुल हैं जिन गुणों कर वह नराधिपति त्रैलोक्य के गुरु जे वर्द्धमान तिनका गुरु कहिए पिता होता भया उसके गुणों का कहां लग वर्णन कर सकें।।15।। उस राजा के प्रियकारिणी नाम पटराणी पति-सा अकृत्रिम स्नेह की धरणहारी मानो साक्षात् समुद्र की पटराणी जो गंगा उसके समान निर्मल है। कैसी है गंगा और कैसी है प्रियकारिणी, गंगा तो ऊंचा कुलाचल हिमवान् पर्वत ताते उपजी है। और यह राणी ऊंचा जो कुल सोई भया पर्वत तातें उपजी। और गंगा तो जल की भरी और यह धनी सूं स्नेह की भरी।।16।।

पृथिवी विषे महाराजा चेटक ताके चित्त को अति हर्ष की उपजावनहारी, सप्त पुत्री तिनमें आदि यह प्रियकारिणी जिसका दूजा नाम त्रिशला उसके गुण वर्णन कर कौन प्रशंसा कर सके जो माता अपने पुण्य कर महावीर के जन्म का कारण होती भई, शुभ नाम कर्म ने जाको जिनेश्वर की जननी करी।।18।। सर्व दिशा से नमस्कार करती सन्ती सर्व देवन की सेना जिसके प्रभाव से आकाशतें वर्षती भई रत्न की धारा।।19।। अच्युत कहिए सोलहमां स्वर्ग उसका पुष्पोत्तर विमान तहां से प्रभु को अवतरते सन्ते वह माता प्रियकारिणी षोडश जो स्वप्न महा उत्सव रूप तिनको पहले देख कर अपने गर्भ विषे जगत् के ईश्वर को धारती भई।।21।। भगवान धरती की रक्षा निमित्त अनेक जीवन के पालिवे अर्थ ऊर्द्ध लोक से मध्यलोक में आए, पिचत्तर वर्ष और साढ़े आठ महिने चतुर्थकाल के बाकी रहे थे तब भगवान गर्भ विषे आए। चौथे काल का नाम दुखमा सुखमा है सो दुखमा के अन्त अन्तिम तीर्थंकर उपजे।।22।।

आसाढ शुदि छठ उत्तरा फाल्गुणी नामा नक्षत्र विषे वर्द्धमान माता के गर्भ में आए।।23।। दिक्कुमारादि कहिए छप्पनकुमारिका तिनकर करी है सेवा जिसकी ऐसी माता सुन्दर है स्तन जाके

www.vitragvani.com

ताके गर्भ विषे आया वह जोति रूप जिनराज जगत् का सूर्य प्रछन्न है तौ भी गर्भ को देदीप्यमान करता भया जैसे रवि मेघमाला विषे आच्छादित है तो भी मेघमाला को प्रकाश रूप करे है। मेघमण्डल में प्रकट दीखे है।।24।। और नौ महीना और आठ दिन व्यतीत भए चैत्र शुदि चौदस उत्तरा फाल्गुणी नक्षत्र विषे प्रभु जन्मे।।25।। तब प्रभु के महात्म से इन्द्रादिक देवों के आसन कम्पायमान भए और मुकट चलायमान भए, तब इन्द्रादिक देव अवधिज्ञान से अन्तिम जिनेश्वर का जन्म जान कर सिंहासन से उतर प्रणाम करते भए।।26।। भवनवासी देवन के शंख और व्यन्तरन के भेरी और ज्योतिषी देवन के सिंहनाद और स्वर्गवासी देवन के घंटों का शब्द महामनोहर होता भया। ये वादित्र विना बजाए स्वत: स्वभाव सुन्दर शब्द करते भए तिनको सुनकर चतुर्निकाय के देव अति हर्षित होय महा मंगलीक ध्वनि करते भये। जैसी समुद्र की गर्जना होय तैसी देवन की ध्वनि भई।।27।।

गज 1 तुरंग 2 रथ 3 पयादे 4 वृषभ 5 गंधर्व 6 नृत्यकारिणी 7 – ये सप्त जो सेना उन सहित और अपनी अपनी स्त्रियों सहित चतुर्निकाय के देव आभूषणों कर मंडित इन्द्र की लार कुण्डलपुर नगर में आय प्राप्त भए।। 28।। इन्द्र है मुख्य जिनमें ऐसे समस्त देव नगर की तीन प्रदक्षिणा देकर राजा के आंगन विषे आए, अनेक कोटि चन्द्रमा की कांति को जीते हैं मुख जिनका ऐसे जो जिनराज तिन को नमस्कार करके माता पिता की वंदना को गए। सब इन्द्र तो आंगन विषे खड़े रहे और इन्द्राणी प्रसूती गृह में पठाई सो माता को मायामई निद्रा लाय और माता के निकट मायामई बालक पधराय प्रभु को उठाय शची नामा इंद्राणी ल्याई सो अपना पति जो सौधर्म इंद्र उसके हाथ विषे प्रभु पधराये।।30।। सो इन्द्र प्रभु को कर कमलों से ग्रह कर पूज चिरकाल अनुराग की दृष्टि कर देखे हजार नेत्ररूप जो कमलों के समूह ताकर अरचे।

भावार्थ ह्न सहस्र नेत्र कर सहस्राक्ष जो इन्द्र सो देखता तृप्त न भया।।31।। फिर चन्द्रमा से अति निर्मल अति उतंग अंग के धरणहारे जो प्रभु उनको इन्द्र ऐरावत हस्ती के ऊपर आरोपण करता भया, सो कैसा है ऐरावत हस्ती। हिमाचल के शिखरन के समूह समान ऊंचा है। गिरि के तो अधोभागनी ह्न झरने झरे हैं और गज के अधोभाग मद की धारा झरे हैं।।32।। कुंभस्थल से झरता जो मद उसके सुगन्ध कर भ्रमण करे हैं भ्रमरन के समूह जिस पर सो कैसा सोहे है। जैसी हेमाचल की तलहटी की भूमि विषे तहां ताल वृक्षों के बन कर मंडित सोहै, यहाँ गज तो गिरि भया और मद धारा नीझरना भए और भ्रमरों का मंडल ताल वृक्ष उनके वन समान श्याम।।33।। और कानन के निकट लग रही रक्त चामरों की पंक्ति सो कैसी सोहे है, जैसे हिमाचल तट की भूमि रक्त अशोक वृक्षों के महा वन कर सोहे है।

भावार्थ – हिमाचल तो महारक्त अशोक वन को धरे है सो महा आरक्त है और हस्ती रक्त चमरन की पंक्ति को धरे है।।34।। और वह हस्ती महा मनोग्य स्वर्ण की सांकल क्षुद्र घंटाओं की पंक्ति कर मंडित है शरीर जिसका सो कैसा सोहे है मानो देदीप्यमान स्वर्ण मई कटि मेखलावों कर मंडित हिमाचल ही है।।35।। और अनेक हैं रद कहिये दांत जिसके तिन पर देवांगना नृत्य करे हैं, गान करे हैं, संगीत शास्त्र के अनुसार, तिनकर वह हस्ती सो हिमवत समान सोहे है जैसे हिमवन् पर्वत के ऊंचे शिखरों पर देवांगना नाचे हैं, गावे हैं, तैसे इसके दंतन पर गान करे हैं नृत्य करे हैं।।36।। सुव्रत कहिये गोल और दीर्घ कहिए लांबी ऐसी हालती जो सूंड उस कर रोकी हैं दसूं दिशा जाने मानो वह सूंड अति दीर्घ और स्थूल स्फुरायमान सर्प के फण ही हैं।।37।।

उस गजराज पर जिनराज को सौधर्म इन्द्र लेकर तिष्ठा और दूजे स्वर्ग का ईशान इन्द्र महा मनोज्ञ उज्ज्वल छत्र प्रभु के सिर पर धारता भया मानो प्रभु को ऊंचे चढ़े जान पूर्णमासी का पूर्ण चंद्र मंडल ही निकट आय तिष्ठ्या है। और असुर कुमारों का इन्द्र चमरेन्द्र ताकी भुजावों कर हलाए जे चमर तिनकर हाथी मनोहर भासे है जैसे चमरी कहिये सुरह गाय सो हालते केसन के चमरों कर शोभायमान दीखे है।।39।। ऐसे ऐरावत गज पर जिनेंद्र को चढायकर देवों सहित सौधर्म इन्द्र सुमेरु पर्वत पर जाय प्राप्त भया। कैसा है जिनेंद्र, ऐरावत का मंडन कहिये आभूषण हैं जिनकर ऐरावत सोहे है।।40।। उस जिनराज को सुरराज गजराजते उतारकर गिरिराज के शिखर जो पांडुक वन उस विषे प्रसिद्ध जो पाण्डुकशिला उस पर जो सिंहासन उस विषे पधराय कर स्वर्ण के कलशन कर देवों कर आया जो क्षीर सागर का जल उसकर देवन सहित इन्द्र प्रभु को नहलाकर वस्त्र आभूषण पुष्प मालादि कर श्रृंगारकर अति स्तुति करता भया, फिर सुमेरु से ल्याय माता की गोद विषे पधराय कर करी है जन्म कल्याण की उचित क्रिया जिसने।।43।।

फिर राजा सिद्धार्थ और राणी प्रियकारिणी के समीप आनंद के दायक जो जिननाथ तिनका वर्द्धमान नाम कह बहुत स्तुतिकर देवन सहित देवेश्वर देवलोक को गया।।44।। गर्भ के पहिले छह महीनों से लेकर जन्म पर्यंत पंद्रह मास कर जो रतन धारा बरसी उसकर समस्त याचक जन राजा ने तृप्त किये।।45।। वे भगवान् वर्द्धमान देवन कर सेव्य ज्यों ज्यों वृद्धि को प्राप्त भये त्यूं त्यूं माता पिता बंधु तीन लोक के जीव उनसे आनंद और अनुराग बढावते भये।।46।। वे भगवान सुर असुरन के इन्द्र तिनके मुकुटन पर कल्पवृक्षन के पुष्पों की जो माला उसकर अर्चित हैं चरण कमल जिनके और महा धीर सो देवोपुनीत भोगनकर मंडित तीस वर्ष के होते भए।।47।। इन भगवान का चित्त शुद्धवृत्त और व्रत रूप अथवा शुद्ध आचार है जिनका और चिर कहिए क्षणवर्ती नहीं और स्थिर कहिये दृढ़ है सो

भोगों विषे आसक्त न भया। कैसे हैं भोग, महा कुटिलता रूप हैं जैसे महा कुटिल सिंह के नखरंध्रों विषे मोती न पिरोए जांय।

भावार्थ – मोती तो शुद्ध कहिये निर्मल और वृत कहिये गोल और स्थिर कहिये अचल और चिर कहिये जल के बुदबुदा की न्याईं क्षणभंगुर नहीं सो सिंह के नखरंध्र कुटिल महावक्र उन विषे कैसे पिरोये जांय। जैसे भगवान वर्द्धमान का चित्त शुद्ध कहिये रागादि रहित और वृत कहिये संयमरूप और स्थिर कहिये अचल और चिर कहिये क्षण वरती नहीं सो भोगों विषे कैसे आसक्त होय। कैसे हैं भोग, महा अशुद्ध हैं और अव्रतरूप हैं और क्षणभंगुर हैं और चपल हैं और कुटिल कहिये वक्र हैं।।48।। सो एक दिन वे जो भगवान शांत चित्त स्वयं बुद्ध उनको संसार शरीर भोग से वैराग्य उपजा। तब सारस्वत आदित्य प्रमुख अष्ट प्रकार के लौकांतिक देव नमस्कार कर प्रभु की स्तुति करते भये।।49।। और सौधर्मादिक इन्द्र देवों सहित आयकर अभिषेक करते भये। और पूजा कर पालकी में चढ़ाये फिर वह पालकी इंद्रों ने उठाई।।50।।

मार्गशिर बदी दशमी के दिन उत्तरा फाल्गुण नक्षत्र विषे भगवान वन को गये।।51।। शरीर के सकल वस्त्र आभूषण माला उतार पंच मुष्टीन कर शिर के केशलौंच कर मुनि भये।।52।। भगवान के केशों के समूह जो भ्रमर सारखे श्याम उनको इन्द्र ने उठायकर क्षीरसागर विषे पधराये सो क्षीरसागर जिनेन्द्र के केशों के पुंजकर मण्डित अति शोभता भया मानो इन्द्र ने इन्द्रनील मणियों के समूह समुद्र विषे डारे हैं।।53।। जिनराज का तप कल्याणक देख कर सकल सुर नर हर्षित भये, तीसरे कल्याणक की पूजा कर अपने अपने स्थान को गये।।55।। तप धरते ही जिनेश्वर को चौथा मनःपर्यय ज्ञान उपजा। चार ज्ञान ही हैं नेत्र जिसके सो धीर बारह वर्ष द्वादश प्रकार का तप करता भया।।56।।

जिननाथ के गुणों के समूह का है ग्रहण जिसके सो विहार करता हुआ ऋजुकूला नदी के तीर ज्रंभिक नामा जो ग्राम तिसके वन विषे आवता भया।।57।। तहां शाल का जो वृक्ष उसके समीप शिला उस पर आतापन योग धर तिष्ठा। उस दिन दूजा उपवास थाप्या, सो वैशाख सुदी दशमी के दिन उत्तरा फाल्गुणी नक्षत्र विषे वह शुक्लध्यानी घातिया कर्मन के समूह को घातकर केवलज्ञान को प्राप्त होता भया।।59।। तब समस्त सुरासुर केवलज्ञान के प्रभाव कर तत्काल चलायमान भया है आसन जिनका सो आय कर उस प्रभु की सेवा महिमा करते भये।।60।। सो गणधर बिना, वाणी न खिरी छियासठ दिन तक प्रभु मौन कर विहार किया, फिर राजगृह नगर के समीप महा विस्तीर्ण विपुलाचल पर्वत पर आय विराजे। जैसे लोकों के उद्योत करवे अर्थ सूर्य उदयाचल पर तिष्ठे।।61।।

तब सुर असुर सब ही प्रभु को विपुलाचल पर्वत पर विराजते जानकर इत उततैं आये जैसे जिनेंद्र

के गुण सकल एकत्र भेले होय ही हैं। तैसे सुरासुर सकल ही गिरि पर भेले भये।।62।। सो पर्वत सौधर्मादिक इन्द्रन कर और देवों कर वेष्टित भया वर्द्धमान के विराजने पर विपुलाचल ऐसा शोभायमान भया जैसा कर्मभूमि की रीति आदि ऋषभ के विराजवेकर कैलाश पर्वत शोभित भया था।।63।।

वहां देवों ने तीन कोट रचे – एक एक कोट के चारों ओर चार दरवाजे सो तीन कोट के द्वादश दरवाजे शोभते भये।।64।। एक योजन के विस्तार महावीर का समवसरण होता भया। उस विषे बारह सभा आकाश तुल्य स्फटिक मणि की है भित्ति जाके।।65।। उस समवसरण विषे चौंतीस अतिशय और अष्ट प्रातिहार्य उनकर युक्त जिन चन्द्र इन्द्रादिक कर वेष्टित ऐसे शोभते भये जैसे नक्षत्रों में निशाकर सोहै।।66।। वहां भगवान के समवसरण में इन्द्र की प्रेरणा कर इन्द्रभूति कहिये गौतम और अग्निभूति वायुभूति हैं नाम जिनके ऐसे पंडित ब्राह्मण आये।।67।। ये तीनों भाई तिनके प्रत्येक के पांच पांच सौ शिष्य सो सब ही वस्त्रादिक परिग्रह तज कर संयम अंगीकार करते भये।।68।। राजा चेटक की पुत्री चन्दनबाला ब्रह्मचारणी सो सकल परिग्रह तज कर एक श्वेत वस्त्र धार सकल आर्यानि में मुख्य भई।।70।।

और श्रेणिक महाराज चतुरंग सेना कर संयुक्त विपुलाचल पर्वत के निकट आय प्राप्त भये, गिरि पर चढ़ कर सिंहासन पर तिष्ठते जो जिनेश्वर तिनको प्रणाम करते भये।।71।। कैसे हैं प्रभु, छत्र चमर झारी कलश ध्वजा दर्पण वीजना और धारा प्रसिद्ध अष्ट मंगल द्रव्य तिनकर संयुक्त हैं।।72।। और अष्ट प्रकार की जो महाध्वजा तिनकर संयुक्त है समवसरण जिनका। अष्ट प्रकार ध्वजाओं में पुष्पमाला चक्र वस्त्र कमल गज सिंह वृषभ गरुड़ अष्ट प्रकार के आकार हैं।।73।। और मानस्तंभ तथा रत्नन के तूप कहिये पुंज और चार प्रकार के महावन और वापी और सरोवरी और वल्ली वनलता मण्डप।।74।। इत्यादि और भी अनेक रचनाओं कर मंडित जिनराज का समवसरण होता भया। जिस ठौर जे जे वस्तु चाहिए, ये सकल समवसरण में पूर्ण हैं। ऐसा रमणीक त्रैलोक्य में और स्थान नाहीं।।75।।

बारह सभाओं का वर्णन

अथानन्तर – जिनराज के समीप प्रथम सभा में मुनिराज तिष्ठते हुए सुवर्ण समान सुन्दर हैं शरीर जिनके ऐसे शोभते भये, जैसे चन्द्रमा के समीप शुक्रादिक ग्रह वृहस्पति सहित तिष्ठते सोहे हैं।।76।। और दूजी सभा में कल्पवासिनी देवी शोभती भईं। कल्पवेल समान सुन्दर हैं भुजा जिनकी जैसी सुमेरु के समीप भोगभूमि सोहे, तैसी जिनवर के समीप स्वर्गवासी देवी शोभती भईं।।77।। और तीजी सभा

में आर्यकावों की पंक्ति राजावों की राणी आदि सकल स्त्रियों सहित शोभती भई, जैसी देदीप्यमान बिजुरीयों कर संयुक्त शरद के बादरों की पंक्ति सोहे।

भावार्थ – आर्यकावों की पंक्ति तो श्वेत वस्त्र को धरे शरद ऋतु के बादरों की पंक्ति भई और राणी आदि और स्त्री आभर्णादिक कर मंडित विजुरीयों की शोभा धरती भई।।78।। और चौथी सभा विषे ज्योतिषी देवों की स्त्री शोभती भई सुन्दर है मूर्ति जिनकी मानो समवसरणरूप समुद्र विषे वे तारों के प्रतिबिम्ब ही हैं।।79।। और पांचवीं सभा विषे व्यन्तर देवन की देवांगना सोहती भईं मानो वे साक्षात् वनलक्ष्मी ही हैं जिनके करकमलों की शोभा को हरे हैं और छठी सभा विषे नागकुमारादि भवनवासीन की देवांगना नागन के फणों कर शोभित नागवेल समान शोभती भई।।81।। और सातवीं सभा विषे असुर कुमारादि दश प्रकार के भवनवासी देव शोभते भये। मनोहर हैं सुन्दर भेष जिनके।।82।।

और आठवीं सभा विषे किन्नर किंपुरुष महोरग गंधर्व यक्ष राक्षस भूत पिशाच अष्ट प्रकार के व्यंतरदेव शोभते भये।।83।। और नवमी सभा विषे चंद्र सूर्य तारागृह नक्षत्र ये पांच प्रकार के जोतिषीदेव विस्तीर्ण है शरीर विषे ज्योति जिनकी वे शोभते भये।।84।। और दशवीं सभा विषे कल्पवासी देव कल्प वृक्ष समान मन के हरणहारे सब देवन में श्रेष्ठ शोभते भये। मुकुट कुण्डल हार केयूर कटि मेखलावों के धरणहारे। और ग्यारहवीं सभा विषे मनुष्य विद्याधर और भूमिगोचरी अपने पुत्र पौत्रादि सहित तिष्ठे शोभते भये नाना प्रकार की भाषा के भाषणहारे और नाना प्रकार के भेष के धरणहारे भगवान् को नमस्कार करते देवन से दीखे हैं और अनेक भूमिगोचरी विद्याधर जिनको सेवें ऐसे बड़े-बड़े राजा नम्रीभूत भये भगवान के सन्मुख तिष्ठे हैं।।86।। और बारहवीं सभा विषे सिंह गज अश्व महिष वृषभ सर्प नकुल इत्यादि अनेक तिर्यंच शांत भये तिष्ठे हैं जिनराज के प्रभाव कर उपजा है विश्वास जिनके।।87।। ये बारह सभा प्रदक्षिणा दिये प्रथम ही विनय रूप नमस्कार कर चौगिरदा तिष्ठे हैं।।88।।

वहां गौतम गणधर जिनेन्द्र को तीर्थ कहिये जो धर्म उसके अर्थ पाप के नाश करणहारे प्रश्न पूछता भया। कैसे हैं जिनेन्द्र, प्रत्यक्ष देखे हैं समस्त पदार्थन का स्वरूप जिन्होंने सर्व के ज्ञाता द्रष्टा हैं और जन्म जरा मरण अथवा राग द्वेष मोह ये जो दोष हैं तिनके क्षय करणहारे हैं।।89।। सो भगवान सर्व संदेह की दूर करणहारी जो दिव्य ध्वनि उसकर श्रावण वदी 1 पूर्वाह्न समय अभिजित नक्षत्र विषे द्वादशांग का निरूपण करते भये।

कैसी है जिनकी दिव्यध्वनि, दुन्दुभी बाजों की जैसी गम्भीर ध्वनि होय तैसी गम्भीर है और एक योजन तक श्रवण में आवे है।।91।। भगवान वर्द्धमान पहिला जो आचारांग और दूजा सूत्रकृतांग, तीजा संस्थानांग, चौथा समवायांग, तिनका अर्थरूप व्याख्यान करते भये, फिर पांचवां व्याख्यान

प्रज्ञप्ति, छठां ज्ञातृ धर्म कथा, सातवां उपासकाध्ययन, आठवां अंतकृत दशांग तिनका अर्थ कहते भए।।93।। नवमां अनुत्तर और दशवां प्रश्न व्याकरण, ग्यारहवां विपाक सूत्र, इनका परम पवित्र अर्थ श्रोताओं को कहते भए।।94।। फिर बारहवां दृष्टिवाद, उसके भेद पांच तिनका अर्थ सर्वज्ञ देव सकल सभा को सुनावते भए। कैसा है दृष्टिवाद, तीन सौ त्रैसठ पाखण्डियों का है खण्डन जिस विषे।।95।।

जगत् के नाथ जिनेंद्र बारहवें अंग के पांच भेदों में प्रथम भेद परिक्रम कहते भये।।1।। दूजा सूत्र।।2।। तीसरा प्रथमानुयोग।।3।। चौथा पूर्वगत।।4।। पांचवां चूलिका।।5।। ये सकल भेद भाषते भये।।96।। चौथा पूर्वगत उसके भेद चौदह उनमें पहिला उत्पाद पूर्व परम तत्त्व का है निरूपण जिसमें।।1।। दूजा अग्रायणी नामा पूर्व मुख्य है अध्यात्म चरचा जिसमें।।97।। तीजा वीर्य प्रवाद पूर्व।3। चौथा अस्ति नास्ति प्रवाद।4। पांचवां ज्ञान प्रवाद।5। छठा सत्य प्रवाद, तिनका अर्थ प्रभु प्ररूपते भये।6। सातवां आत्म प्रवाद।7। आठवां कर्म प्रवाद।8। नवमां प्रत्याख्यान।9। दसवां विद्यानुवाद।10। ग्यारहवां कल्याण पूर्व।11। बारहवां प्राणवाद पूर्व।।12।। और तत्त्व का कथन है जिस विषे।।99।। तेरहवां क्रियाविशाल विस्तीर्ण है अर्थ जिसमें।13। चौदहवां धर्मलोक विंदुसार।14। यह चौदह पूर्व उनका व्याख्यान भगवान समस्त के वेत्ता गौतमादि मुनियों को कहते भये फिर चूलिका के पांच जो भेद तिनका कथन करते भये, अनेक हैं वस्तु जिनमें।।100।।

इस भांति अंग प्रविष्ट जे पूर्व तिनका निर्णय कर जिनेश्वर देव अंग बाह्य जे चौदह प्रकीर्णक उनका व्याख्यान करते भये, पहिला प्रकीर्णक सामायिक यथार्थ है नाम जिसका, जामें सामायिक का व्याख्यान है।1। दूजा प्रकीर्णक चतुर्विंशति स्तवन।2। तीजा वंदना नाम महा पवित्र।3। चौथा प्रतिक्रमण।4। पांचवां विनय।5। छठा कृतिकर्म तिनका स्वरूप भगवान भव्यन को कहते भये।6। सातवां दसवैकालिक।7। आठवां उत्तराध्ययन।8। नवमां कल्पव्यवहार।9। दसवां कल्याणकल्प।10। ग्यारहवां महाकल्प।11। बारहवां पुण्डरीक।12। तेरहवां महापुण्डरीक।13। चौदहवां निषद्यक।14। बाहुल्यता कर प्रायश्चित का है वर्णन जिसमें सो जगत्त्रय का गुरु सब जीवन के हित विषे उद्यमी कहता भया। कैसा है अंग प्रकीर्णक का व्याख्यान, प्रतिपाद्य कहिये कथन करने योग्य है।5। और मतिज्ञानादि केवल पर्यंत पांचों ज्ञानों का स्वरूप और इनका जानपना तथा फल सब कहते भये। और इन ज्ञानन में मति, श्रुत, परोक्ष और अवधि, मनःपर्यय ये एकदेश प्रत्यक्ष और केवल सकल प्रत्यक्ष, सो सब भेद कहते भये, और ज्ञान की संख्या कहिये गणना सो सकल प्रकाशी।।6।।

और चौदह मार्गणा के भेद और चौदह गुणस्थानों के भेद और चौदह जीव समास तिनके भेदकर जीव द्रव्य का व्याख्यान करते भये।।7।। फिर सत्, संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अंतर, भाव, अल्प बहुत्व कहिये आठ तिनकर नाम स्थापना द्रव्य भाव इनकर द्रव्य का लक्षण कहते भये सो जीव

पुद्गलादि षट्द्रव्य हैं। वे अपने-अपने लक्षणों कर सब ही भिन्न-भिन्न हैं। द्रव्यों का सत्ता लक्षण है सो उत्पाद व्यय ध्रौव्यता कर संयुक्त है।।8।। और कर्म का बन्ध दो प्रकार का है एक शुभ एक अशुभ। उनके कारण भी दो प्रकार के हैं – एक शुभोपयोग एक अशुभोपयोग। उनमें शुभ तो सुख का दाता और अशुभ दुःख का दाता और बन्धतें छूटना सो मोक्ष और मोक्ष का कारण शुद्धोपयोग रूप शुक्ल ध्यान और अष्ट गुणरूप फल उन अष्ट गुणों के नाम क्षायक सम्यक्त्व 1 केवलज्ञान 2 केवलदर्शन 3 अनंतवीर्य 4 सूक्ष्मत्व 5 अवगाहन 6 अगुरुलघु 7 अव्याबाध 8 ये आठ। और बन्ध का फल दुख मोक्ष फल आनन्द। जो लोक विषैं भोगे हैं सो तीन लोक विषैं अनेक अलोक के मध्य तिष्ठे हैं सो लोक और अलोक का स्वरूप त्रैलोक्य नाथ कहते भए।

अथानन्तर – गौतम गणधर सप्तऋषि कर संपन्न जो द्वादशांग और उपांग जो चौदह प्रकीर्णक तिन सहित जिन भाषित अर्थ को ग्रन्थ रूप प्रकट करता भया।।11।। बारह सभा विषे त्रैलोक्य के जीव तिष्ठते जिन सूर्य की वाणी रूप किरणों कर मानो सोते जागे, तजी है महामोह की निद्रा जिन्होंने।12।। जिनेश्वर की वाणी होठ न हाले और अधरों के स्पर्श बिना विस्तरी देव मनुष्य तिर्यंचों के मिथ्यात्व का नाश करती भई और जिनेश्वर का भाष्या तत्त्वार्थ का मार्ग श्रद्धान है लक्षण जिसका शंका, कांक्षा, भोगाभिलाषादि कलंक से रहित महा निर्मल है।।14।। सम्यग्दर्शन रूप समीचीनवृत ज्ञान रूप आभूषणों का नायक अनेक भव्य जीवों ने अपने कर्ण और हृदय विषे थाप्या।।15।। षट्काय पंचइन्द्रियें गुण स्थान जीव समास कुल जाति आयुः इनके भेद भव्य जीव ने मार्गणाओं के ऊपर गुण और गुणस्थान पर मार्गणा परस्पर सकल भेद आगम की दृष्टि से भव्यजीवों ने अवलोक कर निश्चय किये।।16।।

गुणस्थान पूर्वक जे क्रिया उन विषे षट्कायों के जीवों की हिंसादिक का त्याग सो पहिला अहिंसा नाम महाव्रत कहिये।।17।। और जो राग द्वेष मोह थकी पर जीवन को आतापकारी वचन तजना सो दूजा सत्य महाव्रत कहिये।।18।। और अल्प अथवा बहुत पराया द्रव्य बिन दिया उसको अंगीकार न करना सो तीजा अदत्ता त्याग महाव्रत है।।19।। और मन वचन कायकर तथा कृत कारित अनुमोदनाकर स्त्री का और स्त्री की संगति का त्याग सो चौथा ब्रह्मचर्य महाव्रत कहिये।।20।। और बाह्य आभ्यंतर के सकल परिग्रह दोष रूप उनका त्याग करना सो परिग्रह त्याग नामा पांचवां महाव्रत कहिये।।21।। और निरखकर चलना रात्रि को गमन न करना जीवन के समूह को टार पग धरना जूडा प्रमाण धरती सोध कर चलना सो पहिला ईर्या समिति कहिये। यह ईर्या समिति सर्व व्रतों की शुद्धता करणहारी है।।22।। और कर्कश वचन कठोर वचन निर्दय वचन तजकर मोक्षमार्ग का है यत्न जाके ऐसा जो यति उसको सदा धर्मकार्य विषे हित निमित्त वचन बोलना सो दूजी भाषा समिति कहिये।।23।।

और यति के शरीर की थिरता के अर्थ अन्न जल की शुद्धता देख विधि पूर्वक आहार का ग्रहण सो तीजी एषणा समिति कहिये।।24।। और योग वस्तु देख ग्रहण करना और धरना सो चौथी आदान निक्षेपण नाम समिति कहिये।।25।। और जंतु रहित प्रासुक भूमि विषे शरीर के मलों का त्याग सो पंचमी प्रतिष्ठापना समिति कहिये।।26।। इस भांति यह पांच समिति जे कहीं, वे पालनी और मनोगुप्ति वचनगुप्ति कायगुप्ति ये तीन गुप्ति मुनियों को धारणी। कैसी हैं ये गुप्ति, मन वचन काय के योगन की शुद्ध रूप है प्रवृत्ति जिनमें।।27।। और मन की सेना पांच इन्द्रियों का निरोध और समता, वंदन स्तुतिकरण, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय, कायोत्सर्ग ये षट् आवश्यक क्रिया और केशों का लौचन और स्नान का त्याग और एक बार भोजन और बैठकर भोजन न करना, खड़ा ही करना, और वस्त्र का त्याग।।28।।

और भूमि शय्या और दंत धावन न करना, ये साधु के मूलगुण हैं और बारह तप, बारह संयम, सराग, वीतराग, चारित्र और बाईस परीषह का जीतना।।29।। और द्वादशानुप्रेक्षा तथा उत्तम क्षमादि दश लक्षण धर्म, और ज्ञान दर्शन तप चारित्र का विनय।।30।। यह यति का धर्म कर्म बंध के काटने का कारण भगवान कहते भये। जिस समय जिनराज ने व्याख्यान किया, उस समय समवसरण में सुर असुर नर तिरयंच सब ही थे, सो सबके समीप सर्वज्ञ ने मुनि धर्म का व्याख्यान किया, सो मुनि होने को समर्थ जो मनुष्य तिनमें केईक नर संसार से भयभीत परिग्रह का त्याग कर मुनि भये। शुद्ध है जाति कहिये मातृपक्ष कुल कहिये पितृपक्ष जिनके ऐसे ब्राह्मण क्षत्री वैश्य सैकड़ों साधु भये।।32।। और शुद्ध वंश की उपजो सम्यक् दर्शन कर शुद्ध कहिये निर्मल श्वेत वस्त्र की धरणहारी हजारां राणी आर्यका भई और कै एक मनुष्य चारों ही वर्ण के पंच अणुव्रत तीन गुणव्रत चार शिक्षाव्रत धार श्रावक भये। और चारों वर्ण की कई एक स्त्री श्राविका भई।।35।। और सिंहादिक तिर्यंच बहुत श्रावक के व्रत धारते भये यथा शक्ति नेम विषे तिष्ठे। और देव सम्यक् दर्शन के धारक अव्रत सम्यग्दृष्टि होय जिन पूजा विषे अनुरागी भये।।36।।

और राजा श्रेणिक ने बहुत आरंभ-परिग्रह के योग से पहिली दशा में नरक की उत्कृष्ट आयु के बन्ध किये थे, सो नरक की उत्कृष्ट आयु तेतीस सागर नरक विषे है।।37।। तो तीर्थेश्वर के निकट क्षायक सम्यक्त्व के प्रभाव से नरक की उत्कृष्ट आयु छेदी। प्रथम नरक के प्रथम पाथडे में चौरासी हजार वर्ष की आयु धार उपजेंगे।।38।। कहां तेतीस सागर सातवें नरक की आयु, कहां प्रथम नरक की अल्प आयु, अहो क्षायक सम्यक्त्व का प्रभाव सर्वोत्कृष्ट है।।39।। और राजा श्रेणिक के पुत्र अक्रूर, वारिषेण, अभयकुमार और भी सम्यक्त्व व्रत के धारक भये। और इनकी माता राजलोक की धनी स्त्री।।40।। सम्यक्त्व व्रत शील दान प्रोषधोपवास जिन पूजा को अंगीकार कर जगत्त्रय का गुरु

जो जिनेंद्र उसे प्रणाम करती भई।।41।। और देवेन्द्र जिनेन्द्र को स्तोत्र पूर्वक प्रणाम कर अपने-अपने वर्गों सहित अपने-अपने स्थान को गये और राजा श्रेणिक भी उच्च गुणरूप श्रेणी चढ़ा भगवान को नमस्कार कर स्तुतिकर हर्षित होय नगर में गया।।43।।

भगवान का समवसरण रूप समुद्र उससे निकसे प्राणी भये चंचल लहर उनकर शोभता भया। जैसे समुद्र नदियों के प्रवाहकर सदा भर्‌या ही रहे है।।44।। तैसे भगवान का समवसरण देव मनुष्य तिर्यंच जो आते और जाते उन कर पूर्ण ही रहै, कदे घटे नाहीं। जैसे सूर्य का मंडल किरणों के समूहकर पूर्ण ही दीखे है कब हूं किरणन की कमी न दीखे एक निकसे एक पैठे।।45।। भगवान के समवसरण का सूर्य मंडल का उदय अस्त धर्म चक्र और भामंडल की कांतिकर न जाना पड़े।।46।। उस समवसरण विषे वर्द्धमान तीर्थंकर धर्म का उपदेश करे हैं, निरन्तर सेवा योग्य जो सर्वज्ञ उनके उपदेश कर श्रेणिक के ऐसी रुची बढ़ी जो जिनवाणी सदा सुनवोई करूं। धर्म अर्थ काम ये तीन पदार्थ राजा के परस्पर अविरोध के भाव को प्राप्त भये।।47।। उस समय गौतम गणधर को पायकर सर्वज्ञ के उपदेश से राजा सर्व अनुयोगों के मार्ग विषे प्रवीण भया।

भावार्थ – प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग द्रव्यानुयोग ये चार अनुयोग जिन विषे राजा को परिपूर्ण ज्ञान भया।।49।। राजा महा विवेकी ने राजगृही नगरी के भीतर और बाहर ऊंचे-ऊंचे जिन मंदिर बनाये, निरंतर जिन धर्म की महिमा और उत्सव हैं जिन विषे ऐसे जो जिन चैत्यालय तिनकर नगर शोभित किया।।50।। और समस्त मगध देश में चैत्यालय कराये सामंतों के समूह और महा मंत्री पुरोहित सेनापति उन्होंने भी कराये और प्रजा के लोकन ने भी कराये। सकल देश जिन देवालयकर महा मनोहर भासता भया।।51।।

श्रेणिक के राज में नगर ग्राम और घोष कहिये अहीरों की पल्ली जहां गाय भैंस महिषी बहुत गोरस की प्रचुरता, उन स्थानों के विषे और पर्वतों के अग्रभाग विषे नदियों के तट और वन के मध्य, सब ठौर जिनमंदिरों की पंक्ति महिमा लोक देखते भये।।52।। वे भगवान वर्द्धमान जगत् के सूर्य ज्ञान रूपी प्रभामंडल की दीप्ति कर मिथ्या ज्ञान रूप हिम कहिये शीत उसका अंतकरण हारे मध्याह्न के सूर्य कैसी कांति को धरते हुए मगध देश की प्रजा को प्रतिबुद्ध कर मध्य देश की ओर विहार करते भए। क्या करते संते, अज्ञान रूप शीत का अंतकर महा कहिये मोटा उदय कहिये प्रताप उसकर पूर्ण प्रकाश रूप तिष्ठते संते मोह रूप अंधकार जो विस्तीर्ण उसको निवारते हुए पूर्व देश की प्रजा को प्रतिबोध मध्य देश की ओर आये।।53।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ धर्मतीर्थप्रवर्तनो नाम द्वितीयसर्गः।।2।।

तीसरा सर्ग

अथानन्तर – जिनेश्वर के प्रभावकर मध्य देश विषे धर्म तीर्थ की प्रवृत्ति होते संते सर्व ही देशों विषे धर्मतीर्थ प्रवर्ता दर्शन मोह कहिये मिथ्यात्व उसकी निवृत्ति भई।।1।। जीवन के चित्त जिनेंद्र के उदय से निर्मल होय गये जैसे इस लोक विषे अगस्त के उदय से जल के निवाण निर्मल होय जायं, कालुष्यता न रहे। काशी 1 कौशल 2 कुसंधि 3 अखष्ट 4 सालवर्त 5 गर्तपंचाल 6 भद्रकार 7 पट्टच्चर 8 मौक 9 मत्तसरकिनीयु 10 शूरसेन 11 वृकार्थक 12 मध्यदेश 13 और कलिंग 14 कुरुजांगल 15 कैकेय 16 आत्रेय 17 कांबोज 18 बाल्हीक 19 प्रवण 20 श्रुतस्यंधु 21 गांधार 22 सौवीर 23 सूर 24 भील 25 दसरुक 26 पांडवीन 27 भरद्वाज 28 उत्तर 29 तार्ण 30 करण 31 प्रछाल 32 इत्यादि अनेक देशों विषे विहार करते वीतराग लोकन को धर्मरूप करते भये।

कैसे हैं भगवान, विभव कहिये अंतर बाह्यविभूति उसकर मंडित हैं। और भव्य वत्सल कहिये भव्यन के तारक हैं, जैसे भगवान् ऋषभ ने चतुर्थकाल के आदि जीवन को उपदेश दिया, वैसा ही महावीर देते भये केवलज्ञान का है उद्योत जिनके ऐसे जो जिन सूर्य तिनके प्रकाशक होते संते मिथ्यात्व रूप अग्नि का चमत्कार कहां जाता रह्या सो हम न जाने।।8।। जिस समय सर्वज्ञ वीतराग के शरीर का दर्शन और वचन का पाया है श्रवण जिन जीवों ने उस समय तिनके पर शास्त्र के श्रवण विषे अभिलाषा न होती भई।।9।। दश अतिशय तो प्रभु लिये ही उपजे नित्य कहिये सदा निर्मलता जिनके शरीर विषे मल मूत्रादि सर्वमल नहीं।।1।। और पसेव मल नाहीं।।2।। और दूध समान उज्जल रुधिर।।3।। और वज्र वृषभनाराच संहनन।।4।। सम चतुरस्रसंस्थान।।5।। और अद्भुत रूप।।6।। महा सुगंध।।7।। और शुभलक्षण कहिये शरीर में एक हजार आठ लक्षण।।8।। और अतुल बल जा समान त्रैलोक्य में नहीं।।9।।

और महा मिष्ट वचन सबन को हितकारी।।10।। स्वतः स्वभाव पवित्र है शरीर जिनका सो दश अतिशय कर शोभते भये और केवल उपजे दश अतिशय तिनका वर्णन। निमेष कहिये नेत्रन का मुद्रित न होना और उन्मेष कहिये उघड़ना, तिनसे रहित शांत हैं सुन्दर लोचन जिनके।।11।। और नख केश बधैं नांही।।12।। और भोजन का अभाव।।13।। और जरा का अभाव।।14।। छाया का अभाव ।।15।। और अपार कांति।।16।। और एक ही मुख महा मनोहर चतुर्मुख भासे।।17।। और सन्मुख दो दिशावों की तरफ दोय सै योजन दुर्भिक्ष का अभाव और उपसर्ग का अभाव और कोई जीव किसी जीव को उपसर्ग पीड़ा न कर सके।।8।। और गगन गमन।।9।। 14।। सब ही विद्या विषे प्रवीणता।।10।। घातिया कर्मन के क्षय से ये दश अद्भुत अतिशय प्रकट भये, सो जिनराज का शरीर देखे और यश सुने जगत् को सुख उपजे।।15।।

अथानन्तर – देवकृत चतुर्दश अतिशय तिनका कथन करे हैं जिनराज की सर्वार्थ मागधी भाषा अमृत की धारा की नाईं कर्ण पुटकर पीवते जे तीन जगत् के प्राणी उनको तृप्ति करे है।।16।। और पृथ्वी विषे सर्व प्राणियों के मित्रता होय है जे जाति विरोधी प्राणी हैं, वे परस्पर वासना न सूंघ सके हैं ऐसे सिंह, गजादिक और गरुड़ सर्पादि का तिनका दोष मिट जाय।।17।। और छै ऋतु के फल फूल एकैलार फले फूले सर्व ऋतु एकैलार भेली भई थकी भगवन् को सेवे हैं। सो कैसी हैं षट्ऋतु, फल फूलों कर नम्रीभूत भये जे वृक्ष तिनकर मानो प्रभु को नमस्कार करे हैं।18।। जिन विषे वह जाने मैं आगे जाऊं वह जाने मैं आगे जाऊ ऐसी श्रद्धाकर मानो सर्वऋतु एक ही काल आयकर प्रभु को सेवे हैं। प्रभु की सेवा आराधना को आई हैं, और पृथ्वी रूप स्त्री मानो अपने अन्तःकरण की शुद्धता जिनेश्वर को दिखावती संती शुद्ध आरसी समान उज्ज्वल भासे है। कैसी है पृथ्वी रूप वधू, सर्व रत्न मई शोभे है अंग जिसका।।4।। 19।।

और जो पवन है सो प्रभु के अनुगामिनी भई विचरे है सन्मुख नहीं आवे है। जैसे सेवक स्वामी के पीछे ही चले है तैसे पवन, पीछे लगी आवे है। कैसी है पवन, स्पर्शकर उपजाया है जीवन के अंग को सुख जिसने।।5।। 20।। और जब भगवान जगत् के बांधव जीवन के उपकार निमित्त विहार करें तब सब जगत् को आनंद होय, किसी के दुःख न रहे।।6।। 21।। और पवनकुमार देव एक योजन तक पृथ्वी को पाषाण कंटकादि रहित करें।।7।। 22।। और सनत्कुमार कहिये मेघ कुमार देव शब्द करते हुए शुभ सुगन्ध जल की वर्षा करें।।8।। 23।।

पादपद्मजिनेन्द्रस्य सप्तपद्मैः पदे पदे।
भुवेव नभसागच्छदिन्द्वादिभिः सुपूजितम्।।1।।

अर्थ – और जिनेन्द्र के चरण कमल को देव पद पद विषे सप्त सप्त कमलों कर पूजे हैं जिनेन्द्र आकाश विषे गमन करे है सो मानो पृथ्वी ही कमलों कर प्रभु की पूजा करे है। कमल आकाश विषे फूल रहे हैं मानो चरण कमलन का संग पाय विकास को प्राप्त भये हैं।।9।। 24।।और मेदिनी कहिये पृथ्वी वह शाली आदि समस्त अन्न के समूह स्वतः सुभाव फले तिनकर शोभती भई मानो ये धान नहीं हैं, जिनेश्वर के दर्शन के आनंद से पृथ्वी के रोमांच भए हैं।।19।। 25।। और आकाश मेघादिक के आवरण कर रहित भया शोभता भया मानो आकाश जिनराज के केवलज्ञान की विमलता की शिक्षा ही आचरे है।।11।।26।।

और सर्व दिशा निर्मलता को धरती भई सो मानो निर्मल होय भगवान को सेवे है सो जिनदेव निर्मल जीवन ही पाकर सेवने योग्य हैं। कैसे निर्मल भई दिशा, नीरज कहिये रज रहित है। यहां एक व्यंग है – नीरज नाम कमल का है सो कमल रात्री विषे नहीं प्रफुल्लित होय है और ये दिशा अहोरात्र

सदा ही नीरज हैं समवसरण में रात्री दिन का भेद नहीं है।।12।।27।। और देवेन्द्र की आज्ञा से देवियों का आवने का शब्द करते भये जो आवो जिनेन्द्र धर्म का दान करे हैं सो लेवो, इस भांति सर्व और देवों के शब्द होय रहे हैं, देव आवे हैं।।13।।28।। और जिनेन्द्र के आगे धर्म चक्र चला जाय है, हजार हैं आरा जिसके सो अपनी दीप्ति कर सूर्य की दीप्ति को जीते हैं।।14।।29।। ये देवकृत चौदह अतिशय अद्भुत तिन कर संयुक्त जिनपति पृथ्वी विषैं विहार करते भये अष्ट मंगल द्रव्यों कर मंडित और ध्वजों कर शोभित।।30।। ये चौंतीस अतिशय कहे हैं। अब अष्ट प्रातिहार्य कहे हैं।।32।।

अशोक-नगमाभासोदशोकान्नोकुहश्रया।
नमद्भुवनमाकाशं महत्त्वं किमतः परं।।31।।

अर्थ – अशोक नाम वृक्ष शोक को हरे है। अपनी पत्र पुष्पादिक जो विभूति उस कर शोभता भया आकाश को उद्योत रूप करता भया उपरांत और महत्त्व क्या। अशोक वृक्ष अपनी उच्चता कर मानो आकाश को स्पर्शे है आकाश मानो नय गया है।।31।। फिर नम्रीभूत भये हैं सिर के केश जिनके ऐसे जो देव उनके हाथों कर बरसाई आकाश से पुष्पों की वृष्टि उन पुष्पों कर आशा कहिये दिशा और विश्वंभरा कहिये पृथ्वी सो शोभती भई।।32।। और चहुं दिशा चौंसठ चमर देवों ने ढारे उनकर जिनवर ऐसा शोभता भया जैसे उठती गंगा की तरंगों से हिमवान् गिरि पर्वत शोभे है।।33।। और सब जगत् के ईश्वर जिनेश्वर उनका प्रभा मण्डल अपने तेजकर सूर्य के तेज को आच्छादित करता शोभता भया। दूर किया है रात्रि दिन का भेद जिसने।।34।। और देवन के बजाय जे दुन्दुभी तिनकी धीर ध्वनि आकाश विषे विस्तरी मानो लोक विषे जिनराज के कर्म शत्रु के जीतने का यश ही गावे हैं।।65।। और इस पृथ्वी विषे जीवन मुक्त जो श्री अरहंतदेव तिनके तीन छत्र शोभते भये मानो तीन भुवन से भगवान का इक छत्र राज्य ही प्रकट दिखावे हैं।

भावार्थ – तीन छत्र त्रैलोक्य नाथ ही पर फिरें।।36।। और जिन पति का सिंहासन सुरेंद्रों कर वेष्टित शोभता भया। कैसे हैं जिनपति, तज्या है राजावों कर वेष्टित सर्वोत्कृष्ट सिंहासन जिन्होंने।

भावार्थ – जिन जब राजाओं कर वेष्टित सिंहासन तज्या तब इन्द्रनकर वेष्टित सर्वोत्कृष्ट सिंहासन विराजे।।37।। फिर जिनेन्द्र की दिव्यध्वनि, धर्म के व्याख्यान विषे जगत्त्रय को पवित्र करती भई। कैसी है दिव्यध्वनि, एक योजन तक सुनवे में आवे है श्रवण करणहारों के चित्त और कानों को अमृत तुल्य हैं।।38।। भगवान देवन कर अर्चित मानो अष्ट प्रातिहार्य विभव कर मंडित अनेक देशों में विहार कर मगध देश विषैं आये।।39।। पाई है सप्त ऋद्धिरूप संपदा जिन्होंने ऐसे ग्यारह गणधर समस्त श्रुत के पारगामी इन्द्रभूत्यादिक उनकर मंडित महावीर, जीवों को जगत् से पार करते भये। ग्यारह गणधरों के नाम इन्द्रभूत 1 अग्निभूप 2 वायुभूत 3 शुचिदत्त 4 पांचवां सुधर्म 5 छट्ठा मांडव

6 सातवां मौर्य पुत्र 7 आठमां अकम्पन 8 नवमा अचल 9 दशमा मेदार्यक 10 ग्यारमा प्रभास 11 यह ग्यारह सकल मुनियों के गुरु होते भये।।43।।

उनकी सप्त ऋद्धियों के नाम प्रथम तप ऋद्धि 1 जिसके तप्त दीप्तादि सात भेद हैं और 2 बुद्धि ऋद्धि 3 विक्रिया ऋद्धि 4 और अक्षीण ऋद्धि 5 बलऋद्धि 6 औषधऋद्धि 7 रस ऋद्धि। ये सात ऋद्धि 7 तीन गणधरों के शिष्य मुनि चौदह हजार तिनकी विगति पांचों के दश हजार साढ़े छ शतक उनमें एक एक के 21 सौ तीस और दो के साढ़े आठ सौ तीन एक एक के सवा चार सै और चार के पच्चीस सै तिनमें एक एक के सवा छ सै।।46।। इनमें चौदह पूर्व के पाठी तीन सै 300 और विक्रिया ऋद्धि के धारी 900 और अवधिज्ञान के तेरासै 1300 और केवलज्ञानी के सात सै 700 श्री वर्द्धमान केवल कल्याणक से लेकर निर्वाण पर्यंत सब सात सौ होवें। और विपुल मनपर्यय के धारी पांच सै 500 और परवादियों के जीतनहारे वादित्र ऋद्धि के धारक चार सै 400 और सामान्य मुनि कर नव हजार नव सै 9900 ये सकल गणधरों सहित चौदह हजार ऊपर ग्यारह होहिं। यह जिनेश्वर मुनीश्वर के संघ कर जिनेश्वर का समवसरण ऐसा शोभता भया, जैसा नदियों के समूह कर समुद्र सोहै।।50।। सब संघ कर युक्त तीर्थेश्वर राजगृह नगर के निकट आये।

कैसा है नगर, लक्ष्मी का गृह कहिये भण्डार है। सोहै है स्वर्णमय रत्नगृह जिस विषे।।51।। और राजगृह नगर का दूसरा नाम पांच शैलपुर है। यह नगर मुनिसुव्रतनाथ के जन्म कर परम पवित्र है और पांच पर्वतों कर वेष्टित है और पर सेनाकर जीता न जाय महा विषम है।।52।। पंच पर्वतों के नाम – पहिला ऋषिगिरि पूर्व दिशा की ओर चौकोर जिनके बहु ओर नीझरने झरे हैं मानो यह गिरि इन्द्र के दिग्गजों की न्याई अतिशय कर सब दिशावों को शोभित करे है।।53।। दूजा दक्षिण दिशा की ओर वैभार नामा पर्वत त्रिकोणाकार सोहे है और तीजा दक्षिण पश्चिम के मध्य विपुलाचल सो त्रिकोणाकार ही सोहै है।।54।। चौथा बलाहक नामा पर्वत चढ़े धनुष के आकार तीनों दिशाओं को व्याप्त कर सोहै है। और पांचमा पांडुक पर्वत गोलाकार पूर्व उत्तर के मध्य शोभता भया। यह पांचों पर्वत फल पुष्पों के समूह कर नम्रीभूत जो लता और वृक्ष उनकर शोभित हैं और झरते नीझरनों के समूह कर मनोहर हैं।।56।। इन पर्वतोंते वन एक वासुपूज्य के समवसरण टार सर्व तीर्थंकरों के समवसरण के आयवे कर महा पवित्र हैं।

भावार्थ – सबों के समवसरण यहां आये हैं, वासुपूज्य स्वामी का न आया।।57।। वे वन सिद्ध क्षेत्रों कर शोभित हैं। कैसे हैं सिद्धक्षेत्र, तीर्थ यात्रा को आवते जो भव्यों के अनेक समूह उनकर सेवित हैं, और नाना प्रकार के अतिशय कर संयुक्त हैं।।58।। वहां भगवान विपुलाचल विषे विराजे इन्द्र ने करी है प्रभु के समवसरण की समस्त रचना जहां।।59।। समवसरण विषे तो सौधर्म इंद्रादिक समस्त

देव और श्रेणिकादिक मनुष्य आये, उनकर उस समय विपुलाचल देव मनुष्यों कर पूज्य भया।।60।। मुनियों के चार संघ उनमें पाई है ऋद्धि जिन्होंने ऐसे जे ऋषि सो भगवान के समीप तिष्ठे हैं और यति कहिये कषाय के अंतकरणहारे श्रेणि धारक और मुनि कहिये प्रत्यक्षज्ञानी और अनागार और मुनि ये गणधरों सहित ग्यारह अधिक चौदह सहस्र होते भये, और आर्यकावों के संघ विषे चंदना आदि पैंतीस हजार आर्यिका और श्रावक एक लक्ष 1 और श्राविका तीन लक्ष।।63।।

ये चतुरविधि संघ अपने अपने स्थानक विषें तिष्ठते भये और देव देवा चतुर्निकाय के असंख्यात और अनेक जो तिर्यंच उन कर मंडित वह धीर महावीर बारह सभा कर शोभता भया।।64।। वहां समवसरण विषे देव मनुष्य तिर्यंच तीन भुवन के प्राणी धर्म श्रवण की इच्छाकर तिष्ठते भये, तब गौतम गणधर के प्रश्न से भगवान व्याख्यान करते भये।।65।। जीव के भेद दोय – एक सिद्ध एक संसारी और जीव का लक्षण उपयोग। जीवन में सिद्ध अनंत और संसारी अनंतानंत।।66।। तिन दोनों भेदों में सिद्ध क्षेत्र विषे विराजे सम्यक्दर्शन ज्ञान चारित्र के उपाय कर करी है आत्मा की सिद्धि जिन्होंने वे सिद्ध कहिये।।67।। वे सिद्धि अष्ट कर्मों के क्षय से होय हैं सो विशेषता कर कहै हैं ज्ञानावरणी के पांच भेद तिनके क्षय से 1 और दर्शनावरणी के नव भेद तिनके क्षय से।।96।। वेदनी के दोय भेद साता असाता उनके उडावने से मोहनी के अठाईस भेद उनके हनने से और आयु कर्म चार प्रकार ताके भस्म करने से 1 और बयालीस प्रकार नाम कर्म तथा त्रानवें प्रकार उसके नाश से और दोय भेद गोत्र कर्म ताके नाशवे से 2 और पंच भेद अंतराय कर्म उसके विध्वंस से 3 और वेदनी कर्म दोय प्रकार के नाश से साधु महा पुरुष सिद्ध होय है, त्रैलोक्य के शिखर सिद्ध तिष्ठे हैं, एक एक सिद्धक्षेत्र विषे अनंत सिद्ध विराजे हैं।

वे सिद्ध क्षायक सम्यक्त्व 1 अनंतज्ञान 2 अनंतदर्शन 3 अनंतवीर्य 4 परम सूक्ष्मता कर संयुक्त हैं और महा गहन अवगाहन गुणकर मंडित हैं। और अव्याबाध कहिए बाधा रहित अनन्त सुख उसकर संयुक्त हैं और अगुरुलघु हैं।।73।। गुरुता अरु लघुता जिनमें नहीं, ये प्रसिद्ध जे अष्ट गुण तिनको आदि दे सिद्धों के अनंत गुण हैं, वे सिद्ध अनंतप्रदेशी हैं और वर्णादि पुद्गल के बीस गुण तिनके नाश से अमूर्तता कर संयुक्त तिष्ठे है।।74।। और जो शरीर से मुक्त भये हैं तासे किंचित्मात्र ऊन पुरुषाकार विराजे हैं, जैसा मूसि में मैन गलि जाय और आकाश तथा पुरुषाकार रह जाय तैसे पुरुषाकार विराजे हैं।।75।।

और मृत्यु जन्म जरा अनिष्ट संयोग क्षुधा तृषा इत्यादि जे आधि व्याधि उन कर उपजे जे समस्त दुःख उनकर वे सिद्ध अबाधित हैं जिनके कोऊ बाधा नहीं।।76।। और वे सिद्ध द्रव्य क्षेत्र काल भव भाव ये पांच भेद के परावर्तन कर रहित परम आनन्द रूप हैं।।77।। और जे ज्ञानी परम मोक्ष के उद्यमी

जे अंतर आत्मा तिनके भेद तीन। चौथा अव्रत सम्यक्त्व गुणस्थान उसके धारक अव्रत सम्यक् दृष्टि सो प्रथम भेद और दूजा भेद देशव्रत पंचम गुणस्थान उसकर युक्त ग्यारह प्रतिमा के धारक अणुव्रती श्रावक 1 और तीजा भेद महामुनि छठे गुणस्थानक से लेय चौदहमें गुणस्थानक लग नव प्रकार का है।।78।। यह जीव पारिणामिक भाव धारक मोह के उदय से तथा क्षयोपशम से गुणस्थान विषे प्रवर्ते हैं ।।79।। वहां चौदह गुणस्थानों के नाम पहिला मिथ्यादृष्टि 1 दूजा सासादन 2 तीजा सम्यक् मिथ्या कहिये मिश्र 3 चौथा अव्रत सम्यक् दृष्टि 4।।80।।

पांचवां संयतासंयत कहिये देशव्रत सत्यार्थ है नाम जिसका।।5।। छठा प्रमत्तसंयमी 7 सातवां अप्रमत्तसंयमी आठमां अपूर्वकरण 8 नवमां अनिव्रतकरण 9 दशमां सूक्ष्म सांपराय 10 सो आठवें नवमें दशमें विषे उपशमश्रेणी क्षायकश्रेणी दोय और ग्यारहवें क्षपक श्रेणी वाला न जाय, उपशम वाला ही जाय, ग्यारमें का नाम उपशांत कषाय 11 बारमें का क्षीण कषाय 12 तेरमें का संयोगकेवली 13 चौदमा अयोगकेवली 14। ये चौदह गुणस्थान कहे हैं तिनमें चौथे गुण के स्थानक ताईं सम्यक्ति और पंचम गुणस्थान के गृहस्थ और छठे से चौदवें तक मुनि, सो सारे निर्ग्रंथ बाह्यरूप में तो मुनि में भेद नहीं, सब ही दिगंबर और अध्यात्म कहिये भाव तिनमें नाना भेद है। सब मुनों में उतरते भाव छठे गुणस्थानक वालों के हैं और ऊपर के गुणस्थानों में चढ़ते-चढ़ते भाव बारहमें गुणस्थान उत्कृष्ट अंतरात्मा और तेरह चौदह गुणस्थान वालों के परमात्मा भये।। 84।।

संयतासंयत पांचमां गुणस्थान वहां तक गृहस्थ तिनमें बाह्यरूप का भी भेद और भावों का भी भेद और ऊपरले नव गुणस्थान निर्ग्रंथों के हैं, तिनमें बाह्यरूप भेद नहीं और अंतरंग भेद हैं।।85।। मुनियों में सर्व उत्कृष्ट केवली तेरमें चौदहमें गुणस्थान हैं तिनके अतेंद्री सुख अनंतानन्त है। कैसे हैं केवली, पाई है नव क्षायकलब्धि जिन्होंने और केवली से उतरता सुख बार में क्षीणकषाय गुणस्थान मुनि के होय है और ग्यारमा उपशांत कषाय वहां भी यथायोग्य यथाख्यात चारित्र है सो बारमें से उतरता सुख कहिये और आठवें नवमें दशमें क्षायक श्रेणी वालों के ऊपर ले गुणस्थानक से उतरता सुख कहिये।।87।।

दशमें से उतरता नवमें में नवमें से उतरता आठवें में, और आठवें से उतरता सातवें में अप्रमत्त संयमी के सुख है। जहां चार कषाय, चार विकथा, पांच इन्द्रीय, निद्रा और स्नेह ये पंद्रह प्रमाद नाहीं सो प्रमाद के अभाव से परम शांतता रूप अप्रमत्त संयमी के सुख है।।88।। अर सातवें से उतरता छठे गुणस्थान प्रमत्त संयमी मुनि के यद्यपि प्रमाद है तथापि हिंसा, मृषा, अदत्तादान, कुशील, परिग्रह इन पांचों पापों के त्याग से पंच महाव्रत की सिद्धि है उससे प्रमत्त मुनि के भी शांतता रूप सुख है।।89।।

और मुनि से उतरता पंचम गुणस्थान वरती श्रावक के महा तृष्णा के जीतवे से सुख है। कैसे हैं श्रावक, हिंसादिक पंच जो पाप उनका यथाशक्ति अणुव्रत रूप किया है त्याग जिन्होंने।।90।।

और अणुव्रती श्रावक से उतरता अव्रत सम्यग्दृष्टि चतुर्गुणस्थान वाला तत्त्व श्रद्धान कर उपज्या सुख अनुभवे है। यद्यपि अव्रत सम्यग्दृष्टि अणुव्रती श्रावक की अपेक्षा आरंभी है परिग्रही है और हिंसा आदि तृष्णा पर्यंत पांच पापों का त्यागकर व्रत नहीं धरे है तथापि विषय-कषाय से महाविरक्त है और सप्त व्यसन का त्यागी है और जिनके विश्वासघातादि मोटे पाप नहीं, किंचित् कदाचित् युद्धादिक का योग बने तो न्यायरूप हिंसा है और निज स्त्री का सेवन है मिथ्यादृष्टियों सारखे विषयासक्त नहीं मोक्षाभिलाषी हैं, इससे इनको ही ज्ञानरूप सुख है।।91।। ये चतुर्थ गुणस्थानादिक के धारक सम्यग्दृष्टि तो सुखी ही हैं और तीजे गुणस्थानक नाम मिश्र जहां सम्यक्त्व और मिथ्यात्व दोनों हैं, ये दोनों परस्पर विरुद्ध रूप है। तातें तीजे गुणस्थान वालों के सुख-दुख दोनों मिश्रित हैं सम्यक्त्व की धारणाकर तो सुख है और मिथ्यात्वकर दुख है।

जैसे शी (फि) रणी का स्वाद मिष्ट और अमूल दोनों रूप है ऐसे तीजे गुणस्थान वाले के भाव मिश्र धारा रूप हैं। यहां सुख-दुख दोनों कहिये।।92।। और सम्यक्त्व को नाशकर भाव नीचे पडे सो जबलग मिथ्यात्व भूमिका नहीं स्पर्शे है तबलग अंतराल वर्ती सासादन गुणस्थान कहिये। जैसे फल वृक्ष को शाखा से टूटे और भूमि नहीं छूही अंतराल वर्ती है। परन्तु भूमि स्पर्शेगा, सो सम्यक्त्वरूप शाखा से भावरूप फल टूटा जबलग मिथ्यात्व रूप भूमिका नाहीं स्पर्शे, तबलग सासादन कहिये सो यह दूजा गुणस्थान सासादन ताके धारक प्राणियों के सुख तो नृप कहिये परन्तु जैसे कोई दूध, मिश्री इत्यादि जो रस तिनका भोजन होय चुका और भोजन पीछे जैसी वस्तु भषी (खाई) होय वैसी डकार आवे सो डकार मात्र लगार सुख सासादन सुख है।।93।।

और मोह की अठाइस प्रकृति हैं तिनमें सात महा प्रबल तिनके उदय कर विदारी गई है बुद्धि जिनकी ऐसा कुबुद्धि मिथ्यादृष्टि मूढ़ जगत् का जीव विषयासक्त कषायों की है तीव्रता जिसके ताके सुख कहां से होय। जैसे बुद्धिहीन राजा के सुख न होय तैसे संसारी जीव बहिरात्मा जीव सदा दुखी ही हैं। इस संसार में ये प्राणी मिथ्यात्व गुणस्थान विषे अष्ट कर्मों से बंधे हैं अष्ट कर्मों की प्रकृति कहिये स्वभाव से विशेषता कर कहिये है। ज्ञानावरणी का स्वभाव पड़दे समान है, सो सम्यग्ज्ञान को आछादित करे 1 और दर्शनावरणी का स्वभाव दरवान समान है जो निज स्वरूप का दर्शन न होने 2 और वेदनी का स्वभाव शहद लपेटी षड्ग की धारा समान है जो किंचित् मिष्ट लगे परन्तु जीभ को काटे तैसे किंचित् साता उपजाय सदा दुःख ही देवे है 3 और मोह स्वभाव मदिरा समान सो भरम ही उपजावे 4।।96।।

और आयु कर्म का स्वभाव महादृढ़ निगड़ कहिये बेड़ी उसके समान है सो भवरूप बंदी विषे राखे है 5 और नाम कर्म का स्वभाव चितेरा समान जो गति जात्यादि अनेक चित्राम करे 6 और गोत्रकर्म का स्वभाव कुम्हार समान है सो जैसे कुम्हार छोटे बड़े बासन बनावे तैसे गोत्रकर्म ऊंचे नीचे कुल उपजावे 7 और अंतराय का स्वभाव भंडारी समान है सो आत्मा के लाभ में अंतराय करे 8। ये आठों कर्मों के स्वभाव कहे हैं, सो यह आठों अपने-अपने स्वभाव को धरे संसारी जीव को दृढ़ बांधे हैं, अनादि काल से जीवों के कर्मों का संबंध है सो कर्म नाना प्रकार के फल दे हैं, तिनकर पहिले मिथ्यात्व गुणस्थान में संसार विषे ये जीव बाधा को पावे हैं।।99।। ये चौदह गुणस्थान हैं तिनमें प्रथम गुणस्थान विषे तो जीव भव्य और अभव्य भी है दो भेद हैं और ऊपर ले गुणस्थान दूजे से ले चौदह तक सकल भव्य ही हैं।

भावार्थ – भव्य बिना सम्यक्त्व न पावे और सम्यक्त्व बिना ऊपर ले गुणस्थान न चढ़े। इससे यह निश्चय भया अभव्य को एक पहिला और भव्य को चौदह।।100।। जे सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र की शुद्धताकर मोक्ष पाने को समर्थ हैं वे भव्य हैं और मोक्ष से विमुख अभव्य हैं, सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र की निर्मलता से निकट भव्य जाना जाय, रत्नत्रय की प्राप्ति योग्य भव्य ही है और इनके प्राप्त भए निकट भव्य कहिये सो यह भव्यता केवल पद का कारण है जो लग केवल उपजे तौं लग जीव परोक्ष ज्ञानी है और प्रत्यक्ष ज्ञानी भगवान ही है सो निकट भव्य के तो परोक्ष ज्ञानी ही जाने और प्रत्यक्ष ज्ञानी तो सर्वज्ञ ही है तासों कोई छिपा नहीं। सर्व ही जाने और निकट भव्य तो सबकर जाना जाय।।2।। और जीवों के अभव्यता तथा दूरभव्यता केवलज्ञानगम्य ही है ताते केवली के वचन ही से अभव्य, दूरभव्य जाना पड़े परोक्ष ज्ञानियों कर अभव्य और दूरभव्य न जाना पड़े।।3।।

अभव्य को और दूरभव्य को न जान सके काहे से जो अनंत काल का ज्ञान केवली बिना न होय। जीव का यह भव्यत्व अभव्य लक्षण स्वतः स्वभाव हैं किसी का किया अभव्य न होय और भव्य न होय। जैसे एक भाजन विषें उड़द रांधवे को चढ़ावे तिनमें जो घोरडू होय सो अनेक यत्न करे तो भी न गले तैसे अभव्य कदाचित् भी न सीझे और दूरभव्य न सीझे काल पाय सीझेगा और निकट भव्य शीघ्र ही सीझे।।4।। भव्य के तो भवसागर अनादि शान्त कहिये आदि नाहीं पर अन्त है भ्रमे तो अनादि के हैं, परन्तु समय पाय सीझेगा और अनन्त भव्य ऐसे भी हैं जिनके संसार का अन्त कदे ही नाहीं। जो सब ही भव्य सीझेंगे तो भव्य राशि का अभाव हो जाय सो अनन्ते भव्य संसार विषें सदा रहेंगे और तिनमें से सदा सीझवो करेंगे, सो भव्यों के तो भवसागर अनादि शांत कहिये और अनादि अनन्त भी कहिये और अभव्यों के सर्वथा प्रकार संसार अनादि अनन्त ही है। अभव्य राशि में सों कदे भी कोई भी न सीझे, सदा भवसागर में कष्ट भोगता रुलवो ही करे।।6।। संसार विषे दो राशि एक

www.vitragvani.com

भव्य राशि दूसरी अभव्य राशि सो अभव्य अनन्त और तिनसे अनन्त गुणे सिद्ध और सिद्धन से अनन्त गुणे भव्य सो भव्य अभव्य मिथ्यात्व के योग से संसार के दुख भोगे हैं। ये सकल जीव द्रव्य की न्याईं अविनाशी हैं। जैसे काल का नाश नहीं ऐसे सकल द्रव्यार्थिक नय कर नित्य हैं और पर्यायार्थिक नयकर अनित्य हैं और अनादि के मिथ्यात्व प्रवृत कषायों से मलिन हैं।।8।।

ये प्राणी निरन्तर पाप कर्म को बांधे हैं उसकर चतुर्गति विषें दुखी भये भ्रमे हैं। कैसे हैं पापकर्म, दुःख से छूटे हैं बन्धन जिनके।।9।। कई एक पापी जैसे पापोंकर नरक आयु बान्धे हैं। उनका कथन सुनो, जो रौद्र ध्यान कर दुष्ट परणामी आरम्भी परिग्रह के धारी महा मिथ्यादृष्टि अनन्तानुबन्धी के धारक जिनको जड़ और चेतन का विवेक नहीं अष्ट मद कर उन्मत्त अनिष्ट कहिए खोटी है दृष्टि जिनकी जिनके विचार नहीं।।10।। परनिंदा के करनेहारे और निंदा के श्रवणहारे परदोष को सुनकर हर्ष पावें और अपनी प्रशंसा के करणेहारे महानिंद्य जो पराया धन उसके लोभी अधिक हैं भोगों की तृष्णा जिनकी।।11।। मद्य, मांस और शहद के आहारी दुराचारी कर्म भूमि के दुष्ट मनुष्य और सिंह व्याघ्र मगरमच्छादि दुष्ट तिर्यंच नरकायु बांधे हैं।।12।। सो नरक गति महा उष्ण और महा शीतता कर पीड़ित है शरीर जिनका ऐसा नारकी जीव नपुंसक वेदी नरक के महा विषम विलायों विषें उपजे हैं।।13।। यहां ऐसी कोई वस्तु नहीं और ऐसा कोई क्षेत्र नहीं और ऐसी कोई काल की कला नहीं और ऐसा कोई स्वभाव नहीं जिसकर नारकियों को दुःख का विश्राम हो!

भावार्थ – सब सामग्री सर्व क्षेत्र सब समय सब समय दुःखमई है, सब नारकियों को सदा दुःख का भोगना और बिना आयु पूर्ण भए मरण नहीं। सदा मार खाया ही करे, परन्तु प्राण न निकसें, बहुत जीवना सबको बल्लभ और नारकियों को बल्लभ नहीं।।15।।

नारकी मरण चाहें, पहिले नरक का नाम 1 रत्नप्रभा 2 शर्कराप्रभा 3 बालुकाप्रभा 4 पंकप्रभा 5 धूमप्रभा 6 तमप्रभा 7 महातमप्रभा, सो सातों ही पृथ्वी विषें आयु का प्रमाण सुन, पहिले नरक में उत्कृष्ट आयु सागर 1, दूजे 3, तीजे 7, चौथे 10, पांचवें 17, छठे बाईस 22 सातवें तेतीस सागर 33 यह उत्कृष्ट आयु स्थिति कही, और पहिला नरक में उत्कृष्ट आयु सो दूजा एक समय अधिक जघन्य और जो उत्कृष्ट सो तीजा एक समय अधिक जघन्य इस भांति सर्वत्र जानो और पहिले नरक के पाथड़े में एक समय अधिक दस हजार वर्ष जघन्य आयु है जिस समान अल्प आयु नरक विषें और नहीं। नरक विषे कर्मभूमि का मनुष्य और तिर्यंच ही जाय और नरक से आया कर्म भूमि का मनुष्य और तिर्यंच ही पंचेन्द्रिय ही होय और प्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ इनके जो वश हैं और महा चिंतावान् आर्त्त ध्यानरूप भवन विषे निरंतर भ्रमे है मन जिनका।।19।। ऐसे तिर्यंग मनुष्य देव नारकी यह चारों ही गति के मिथ्यादृष्टि मरकर तिर्यंच गति पावें, त्रस थावर अनेक भेद हैं जिसमें।।20।।

पृथ्वीकाय 1 अपकाय 2, तेजकाय 3, वायुकाय 4, वनस्पतिकाय 5, इन विषे बारम्बार जन्म धरे हैं और दुःख भोगे हैं।।21।। और कृमि आदि वेइन्द्री 2 और जूं आदि तेइन्द्री 3, और भ्रमरादि चौइन्द्री 4, उन विषे भ्रमे हैं ।।22।। और पंचेन्द्री के अनेक भेद पक्षी मच्छी मृगादि अनेक प्रकार उन विषे ये प्राणी चिरकाल तिर्यंच गति के दुःख भोगे हैं।।23।। तिर्यंच की अल्प आयु अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट आयु भोग भूमि विषे तीन पल्य 3 और कर्म भूमि विषे कोटि पूर्व और नरक तिर्यंच गति का स्वरूप कहा। तिर्यंच चारों ही गति विषें जाय और चारों ही गति का आया तिर्यंच होय ये भेद हैं। जो नरक का आया नर होय अथवा पंचेन्द्री तिर्यंच ही होय और स्थावर विकलत्रय न होय। और देवगति का आया मनुष्य होय अथवा पंचेंद्री तिर्यंच ही होय अथवा पृथ्वीकाय, जलकाय, वनस्पतिकाय में आय उपजे।।24।। नरक तिर्यंच दोय गति तो दुःख रूप ही हैं और ऐसे जीव ऐसे कर्म कर उत्तम मनुष्य होंय। जे स्वभाव ही कर निःकपट होंय और स्वभाव ही से कोमल हों और भद्र परिणामी होवें और स्वभाव कर पापों से डरे हैं और सहज ही मद्य मांस मधु उदंबरादि अयोग वस्तु ही के सहज ही त्यागी होवें, ऐसे जीव मनुष्यायु बांधे। कुभावों कर कुमानुष होय।।26।।

भले भावों कर भले मनुष्य होवें, राग से कैयेक तिर्यंच भी मनुष्य गति पावें और कैयेक नारकी भी शुभ परिणामों से मनुष्य गति पावें और देव भी शुभ कर्मों कर मनुष्य गति पावें और मनुष्य शुभ परिणामों कर मनुष्य गति पावें।।27।। सो मनुष्य भव विषें भी ये प्राणी इष्ट के अलाभ से और अनिष्ट के संयोग से दुःख ही भोगे हैं। आर्य म्लेच्छखण्ड और नीच-ऊंच कुल तिन विषें ये जीव उपजे हैं और मरे हैं। नरक तिर्यंच गति तो प्रत्यक्ष दुख रूप ही है और मनुष्य गति विषें भी अनेक दुःखों के दुःख ही है।।28।। और जिनका अनिष्ट का संयोग नहीं और इष्ट का वियोग नहीं, ऐसे भी मनुष्य हैं तिनों के भी विषय रूपी ईंधन कर प्रज्वलित है इच्छा रूप अग्नि जिनकी, उनके सुख कहां से होय।।29।। कोई एक मनुष्य के अधिकारों कर संसारी तिनके सम्यक् दर्शन सम्यग्ज्ञान चारित्र के सेवने से सुख होय, संतोष का ही नाम सुख है सो सुख सम्यग्दृष्टियों के होय, उन सम्यग्दृष्टि जीवों का मनुष्य भव सफल है। और अज्ञानी जीवों का मनुष्य भव दीर्घ संसार का ही कारण है। कैसे हैं अज्ञानी, मूढ़ है चित्त जिनका सो उनको मनुष्य भव दीर्घ संसार ही का कारण है। अभव्य और दूरभव्य ये तो अज्ञानी ही हैं और ज्ञानभाव निकट भव्य ही के आवे, निकट भव्यता ही निर्वाण का कारण है।।31।।

कर्मभूमि विषें और सर्व ही भोगभूमि विषें तिर्यंच की न्याईं मनुष्यों का आयु जानो। कर्मभूमि विषें उत्कृष्ट कोटि पूर्व और जघन्य अन्तरमुहूर्त और भोगभूमि विषें जघन्य नहीं, एक समय अधिक कोटि पूर्व भरत ऐरावत की अपेक्षा उत्कृष्ट तीन पल्य ही है, और मध्य भोगभूमि विषें पल्य दोय और जघन्य भोगभूमि विषें एक पल्य है।।33।। परमती बालतप के धारक कायक्लेश विषें तत्पर मिथ्यादृष्टि

तिनमें कैएक निराहारी, कैएक पवनाहारी, कैएक कंदमूल भक्षी, कैएक पत्र फूल के आहारी, शांत हो गई है बुद्धि जिनकी, और जीती है कषाय और किया है इन्द्रियों का निग्रह जिन्होंने ऐसे परिव्राजक अकाम निर्जराकर युक्त अथवा तिर्यंच व्रत नेम के धारक मिथ्यादृष्टि।।34।। मिथ्यात्व कर मलिन है चित्त जिनका, सो भवनवासी व्यन्तर जोतिषी इन देवों में उपजें अथवा अल्प ऋद्धि के धारक स्वर्गवासी भी होय हैं। कैसे हैं वे देव, कंदर्प कहिये काम की है तीव्रता जिनके, ऐसे गवैया बजैया नचैया, अभियोग कहिये दास कर्म के करणहारे और किल्विषादि कहिये सबसे उतरते हैं महा नीच निकृष्ट देव होवें।।36।।

वे बड़े देवों की ऋद्धि का ऐश्वर्य और महा उदय देखकर मानसिक दुःखकर पीडे सदा क्लेश रूप ही रहें, देव दुर्गति कहिये देवों में भी नीच दशा उसके दुःख कर सदा पीडित हैं।।37।। सम्यग्दर्शन के अलाभ से अभव्यों की न्याईं भव्य भी भवसागर विषें डूबे हैं सदा दुःख ही है।।38।। देवों में भवनवासी देव जो असुरकुमार उनका उत्कृष्ट आयु एक सागर किंचित् अधिक और व्यन्तरों का उत्कृष्ट एक पल्य और जघन्य आयु दश हजार वर्ष और भवनवासियों का भी जघन्य दश हजार वर्ष, अब ज्योतिषी देवों का उत्कृष्ट एक पल्य कछु इक अधिक और जघन्य आयु जोतिषियों का पल्य के आठवां भाग। और स्वर्गवासियों का उत्कृष्ट तेतीस सागर और जघन्य एक पल्य कछु इक अधिक 40 और जीवों कै लब्धि पांच क्षयोपशम 1 विशुद्धि 2, देशना 3, प्रायोग्य 4 और करण 5 तिनमें चार तो बहुत वेर भईं और पांचवीं करण लब्धि निकट भव्य ही के होय। यह क्षयोपशमादि सकल लब्धि करण कर सफल है करण लब्धि के भेद 3, अधोकरण 1, अपूर्वकरण 2, अनिवृतिकरण 3।।42।।

जब इस कारण लब्धि कर दर्शन मोह का उपशम करें, तब उपशम सम्यक्त्व होय फिर दर्शन मोह का क्षयोपशम करें और भावों की शुद्धता से दर्शन मोह का क्षय होय।।43।। सम्यक्त्व के तीन भेद हैं – प्रथम उपशम 1 फिर क्षयोपशम 2 और क्षायक 3 ये त्रेधा सम्यक्त्व सो जब करण लब्धि कर सम्यक्त्व उपजे तब भव्य जीव आनंद भोगे हैं।।44।।और चारित्र मोह के क्षयोपशम की लब्धि से ये भव्य जीव चारित्र को पायकर कर्मों का क्षय करे हैं, उस कर अनंत दर्शन 1, अनंतज्ञान 2, अनंत सुख 3, अनंतवीर्य को पावे 4 संसार से निवृति भये निर्वाण विषे तिष्ठे हैं।।46।। और जिनके चारित्र मोह का उदय है। उसकी अत्यंत प्रबलता है उनके सम्यक्त्व ही का बल है। वे अव्रत सम्यग्दृष्टि सम्यक्त्व के प्रभाव से देवायु का बंध करें।।47।।

और जे अणुव्रती पंचम गुणस्थान वरती हैं वे सौधर्मादि अच्युत स्वर्ग पर्यंत सोलह स्वर्गों के विषें उत्कृष्ट ऋद्धि के धारक देव होवें।।48।। और सराग संयम के धारक जे प्रमत्त संयमी तथा अप्रमत्त संयमी निःपाय मुनिराज वे प्रथम स्वर्ग से लेय सोलह स्वर्ग और कल्पातीत कहिये नव ग्रैवेयक और नव अणुत्तर पंच पंचोत्तर ये तेईस सोलह स्वर्गों के ऊपर अहमिंद्र लोक है वहां मुनि जाय स्वर्ग विषें

तो इन्द्रादिक स्वर्गवासी देव और परै अहमिंद्र सो भावों कर किया जो तप उसका फल देवगति का सुख साधु सो मुनि पावे हैं, और परंपराय मोक्ष जावे हैं।।49।।

पहिला स्वर्ग सौधर्म 1 और दूजा ईशान 2 उन विषे उत्कृष्ट आयु दोय सागर किंचित् अधिक तीजा सनत्कुमार 3 चौथा महेंद्र 4 उन विषें उत्कृष्ट आयु सागर सात, और पांचवां ब्रह्म 5, छठा ब्रह्मोत्तर 6 वहां आयु दश सागर है, और सातवां लांतव और आठवां कापिष्ट उन विषें आयु चौदह सागर। और शुक्र कहिये नवमां 9 महाशुक्र कहिये दशमां 10 उन विषें आयु सोलह सागर, ग्यारहमां सतार 11 बारमां सहस्रार 12 उन विषें अठारा सागर, और तेरमां आनत 13 चौदमां प्राणत 14 उन विषें सागर बीस। और आरण पंद्रमां 15 सोलमां अच्युत स्वर्ग 16 उन विषे उत्कृष्ट आयु सागर बाईस 22।।55।। और नवग्रैवेयकों विषे एक एक सागर बढ़ा सो पहिले नवग्रैवेयक विषे तेईस और नवमें ग्रैवेयक विषे उत्कृष्ट इकतीस। और अणुत्तर विषें उत्कृष्ट आयु सागर बत्तीस और जघन्य सागर इकतीस और पंच पंचोत्तरों में सर्वार्थसिद्धि में तो सागर तेतीस, और विजयादिक चार में उत्कृष्ट तेतीस, और जघन्य सागर बत्तीस और सर्व ही देव लोक में नीचले स्वर्ग का आयु उत्कृष्ट सो ऊपरले की जघन्य एक समय अधिक है, यह रीति सर्वत्र जानों।।58।।

और देवियों की उत्कृष्ट आयु सौधर्म स्वर्ग विषें पल्य पांच और बारमें स्वर्ग पर्यंत दोय दोय पल्य बढ़ती जाय तब बारमें स्वर्ग पल्य सत्ताईस और तेरमें स्वर्ग चौंतीस चौदमें इकतालीस पंद्रमें अड़तालीस सोलमें पचपन यह देवियों की उत्कृष्ट आयु स्वर्गों में कही।।59।। और अहमिंद्र लोक में देवी नहीं केवल पुरुष वेद ही हैं।।60।। और कर्मों की शक्ति के योग से सकल कल्पवासिनी देवियों की उत्पत्ति पहिले दूजे स्वर्ग में होय है। ऊपरले देव अपनी नियोगिनी सौधर्म ईशान विषें उपजी जान ले जाय हैं।।61।। और ज्योतिषी भवनवासी व्यन्तर तथा पहिले दूजे स्वर्ग के जो देव हैं उनके मनुष्य तिर्यंच की न्याईं तीव्रमोह के उदय से काया कर भोग है।।62।। और तीजे चौथे स्वर्ग देवों के मध्य मोह के उदय से स्पर्श का संभोग है।।63।।

और पांचवें छठे सातवें आठवें स्वर्गवासियों के रूप ही का विषय है और नवमें दशमें ग्यारमें बारमें स्वर्ग में देवों के शब्द ही का संभोग है और तेरमें चौदहमें पंद्रमें सोलमें स्वर्ग में मन ही का संभोग है।।64।। इनके मोह का उदय मन्द है और अहमिन्द्रों के पहिली ग्रैवेयक से लेय सर्वार्थसिद्धि पर्यंत शांतभावों की प्रधानता है, सुख कर पूर्ण है जिनके मोह का उदय प्रगट नहीं, इससे संभोग से रहित हैं जहां देवांगना नहीं।।65।। पहिले स्वर्ग से लेय सोलहमें स्वर्ग पर्यंत इतनी बातों कर देव चढ़ते हैं, स्थिति कहिये आयु प्रभाव कहिये अतिशय सुख कहिये निर्विकल्पता और विशुद्ध कहिये निर्मलता और लेश्या कहिये शुभलेश्या और इन्द्रियों का क्षयोपशम और अवधिज्ञान।।67।।

इतनी बातों कर ऊपरले देव चढ़ते-चढ़ते हैं, सोलहमें स्वर्ग पर्यंत देवों के पर क्षेत्र गमन है और अहमिन्द्रों के पर क्षेत्र गमन नहीं, निज क्षेत्र विषें ही विहार है।।68।। और मोक्ष का मूल महा अमोलक अद्‌भुत रत्नत्रय रूप रत्नों कर उत्कृष्ट देवों के उत्कृष्ट सुख भोगकर।।69।। स्वर्ग से चय विदेह क्षेत्र तथा भरत ऐरावत विषें कर्म भूमि में बड़े मनुष्य होंय। कै एक तो चक्रवर्ति होंय।।70।। जिनके षट् खंड पृथ्वी का राज्य नव निधि चौदह रत्न हैं सो चक्रवर्तियों में कैएक तो चरम शरीरी राज तजकर निर्वाण सुख के साधन विषें समर्थ होंय।।71।। और कैएक अल्प भव लेय सिद्धि होंवे। और कैएक बड़े पुरुष बलभद्र होंय वे तद्‌भव मुक्ति जावें अथवा इनमें कोई स्वर्ग जाय फिर अल्पभव में मुक्ति पावे और कैएक निदान के योग से नारायण होवें।।72।।

और कैएक पूर्व भव विषें अभ्यास किया है सोलह कारण का जिसने सो तीर्थंकर होयकर तीन लोक के गुरु होवें, ये सुर असुर नर सब ही तिनकी कीर्ति करे हैं, यह शासन मोटा वृक्ष है सम्यक्त्व रूप है थिर है जड़ जिसकी और ज्ञानरूप है पेड़ जिसके और चारित्र रूप है डाली जिसकी और नय उपनय वह ही हैं शाखा और उपशाखा जिसके।।74।। और राजविभूति सोई है पुष्प जिसके ऐसे जो शासन रूप वृक्ष को जो निकट भव्य सेवें सो निर्वाण फल पावें।।75।। निर्वाण फलकर उपजा जो सारभूत आनंद रस उसे पानकर महापुरुष चारों गति से निवृत भए संते सिद्धलोक विषे सदा तिष्ठे हैं।।76।।

इस भांति श्री वर्द्धमान भगवान् के चरण रूप किरणों के प्रकाश से तीन भवनरूप कमलिनी धर्म श्रवणकर अति विकाश को प्राप्त भई शोभती भई। कैसे हैं जिनसूर्य, मोक्षमार्ग के प्रकाशक हैं। प्रथम ही प्रशंसा योग्य जो धर्मानुराग उसके भरे जो भव्यजीव वे धर्म श्रवण करते भए, त्रैलोक्य के जीव सुर असुर नर तिर्यंचों की सभा जैसा जातिवंत रत्न अग्नि में शुद्ध भया शोभा के समूह को पावे, तैसे सकल सभा शोभती भई, जिनराज की वाणी धर्मोपदेश रूप तीनों लोकों के जीवों की समस्त भ्रांति दूर करती भई, जैसे मेघमाला समस्त रज को दबावे।।78।।

अथानन्तर – भगवान की दिव्यध्वनि के पीछे देव दुंदुभी नाद करते भये।।79।। और देव हर्षित भये पुष्पवृष्टि करते हुए सर्वज्ञ की स्तुति करते भये, वहां विपुलाचल के वन विषें एक महामुनि दिव्य ध्वनि और दुन्दुभी नाद सुन कर ध्यान विषें मग्न होय, केवलज्ञान को प्राप्त भया, उसकी वार्ता सुनकर राजा श्रेणिक ने गौतम स्वामी को नमस्कार कर पूछा – कैसे हैं गौतम स्वामी, सर्व मुनियों में श्रेष्ठ हैं और इन्द्रोंकर पूज्य हैं और कैसा है राजा, महा भक्तिकर उपजा है आश्चर्य इसको।।80।।

राजा पूछे है – हे भगवन्! उस मुनि का क्या नाम है? यह देवों के समूहकर पूज्य है, इसका वंश कौन है और तत्काल ऐसे अद्‌भुत अतिशय को कैसे प्राप्त भया है।।82।।

तब गौतम स्वामी श्रुतकेवली महानिगर्व आगम ज्ञान के वेत्ता राजा के ताईं सकल वार्ता कहते भये। कैसा है राजा, उपजा है आश्चर्य जिसको।।83।। गणधर कहे हैं – हे राजन्! भली है बुद्धि तेरी सो मैं तैरे ताईं इस मुनि का नाम और वंश माहात्म्य कहता हूं सो तू सुन। इस श्री मुनि का नाम जितशत्रु है। पृथ्वी विषें प्रसिद्ध महाराज हुआ सो तेरे श्रवण में आया ही होवेगा।।85।। हरिवंशरूप आकाश विषें भानु समान सब राजाओं की विभूति को जीते ऐसी थी विभूति जिसकी सो राजलक्ष्मी तजकर श्री वर्द्धमान के निकट मुनि भया।।86।। यहां दुर्द्धर तप माहिले और बाहिरले सकल बारह प्रकार, जैसे औरों से न वने तैसे तपकर और आज घातिया कर्मों का नाशकर अद्भुत केवलज्ञान को प्राप्त भया।।87।। इस कारण कर जिनमार्ग की प्रभावना के करणेवाले देवों ने केवल कल्याणक किया है। भक्ति से पूजे सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति के अर्थ।।88।।

फिर राजा श्रेणिक उपजा है कौतूहल जिसको, सो गौतम स्वामी को प्रणाम कर इस भांति पूछता भया – हे गणधराधीश! यह हरिवंश जो आपने कहा है, सो यह वंश कब प्रवर्ता और जिन कर उपजा सो वे पुरुष कौन थे।।90।। और इस वंश विषे केतेक राजा प्रजा के रक्षक महा प्रवीण धर्म अर्थ काम मोक्ष के साधक भये सो कहो।।91।। और जिस भरत क्षेत्र विषें जे जिनेश्वर, चक्रेश्वर, हरि, प्रतिहरि हलधर भये उनके सकल चरित्र और सकल वंशों की उत्पत्ति होय और लोकालोक का विभाग मैं सुना चाहूं हूं, सो कहो। यह सर्व कथा मुझे कहो।।93।।

तब गौतम स्वामी समवसरण विषें कहते भये – हे श्रेणिक! तूने जो प्रश्न किया सो आगम प्रमाण तुझे कहता हूं, तू सुन।।94।। प्रथम तो तुझको त्रैलोक्य का कथन कहता हूं। सो त्रैलोक्य सुख-दुख के भोगने का स्थानक है। और प्रवाहरूप सदा स्थिर है जिसके सकल आकार जिसका विस्तार सुनने योग्य है, सो कहकर नाना प्रकार के वंश का उपजना और हरिवंश की उत्पत्ति और इस वंश विषें बड़े बड़े जे राजा भये, उनके चरित्र तुझे कहूंगा। हे श्रेणिक! तेरी सुनने की इच्छा है, सो तू सुन।।95।। जबतक इस वंश विषे जिनरूप रवि के ज्ञानरूप अति विस्तीर्ण दैदीप्यमान किरणों से उद्योत न करे तबलग ही इस जगत् विषें पदार्थों के श्रद्धान विषें विवेकियों के मोह कर भ्रम होय है।

भावार्थ – जब लग जिनवाणी का श्रद्धान न हो, तब लग विवेकियों का संदेह न जाय, जैसे सूर्य के उदय बिना नेत्र वाला भी न देख सके। ये जीव भव्यों के योग से वीतराग के उपदेश से द्रव्य क्षेत्र काल भाव को जान कर विधिपूर्वक पदार्थों का निश्चय करे हैं। कैसे हैं पदार्थ अति सूक्ष्म हैं। और अति दूरवर्ती हैं चेतन अचेतन मूर्ति सूक्ष्म स्थूल सब का निश्चय भव्यों को भगवान के वचन से होय है। कैसा है भगवान का वचन, निश्चय है सकल पदार्थों का जिस विषें।।96।।

इति अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ श्रेणिकप्रश्नवर्णनं नाम तृतीयः सर्गः समाप्तः।।3।।

चौथा सर्ग

अथानन्तर – अनन्त अलोकाकाश विषे लोक का वर्णन करे हैं। कैसा है अलोकाकाश, सर्व ओर अनन्त है विस्तार जिसका। अरूप अनन्त है प्रदेश जिसके और अकेला है जिस विषें द्रव्य नहीं ऐसे शून्यरूप अनन्त अलोकाकाश है।।1।। जिस विषें जीव अजीव और पदार्थ नहीं देखिये हैं उसे अलोकाकाश कहिये।।2।। जिस विषें जीव और पुद्गल की दोनों गति और स्थिति नहीं अर्थात् गति स्थिति के कारण धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के अभाव से अलोक विषें जीव पुद्गल को गति स्थिति नहीं।।3।। और अलोक के अनन्त विभाग मध्य प्रदेश विषें अनादि, निधन लोकाकाश तिष्ठा है सो असंख्यात प्रदेशरूप है, सब द्रव्यों कर भरया है।।4।। पंचास्तिकाय कहिये – जीव 1 पुद्गल 2 धर्म 3 अधर्म 4 आकाश 5 ये पांच बहु प्रदेशी पंचास्तिकाय कहिये और छठा काल द्रव्य एक प्रदेश सो पंचास्तिकाय में नहीं जहां ये षट् द्रव्य सकल विलोकिये, सो लोकाकाश कहिये, सो लोक पाताल विषें तो वेतके आसन समान है और मध्य विषें झालरी के आकार है और ऊर्ध्व विषें मृदंग के आकार है। ये तीन प्रकार तीन लोक के आकार हैं।।7।। आधे ढोल पर सारा ढोल धरिये, जैसा वह आकार होय वैसा लोक का आकार है।।8।।

कटि पर धरे हैं कर युगल जिसने और पसारी हैं दोनों जंघा जिसने ऐसा पुरुष का जैसा आकार होय है तैसा आकार लोक का है। कैसा लोक है, अचल है स्थिति जिसकी। दक्षिण उत्तर तो यह लोक सर्वत्र सात राजू है और पूर्व पश्चिम अधोलोक भी सात राजू है।।9।। और ऊपर प्रदेशों की हानिकर मध्य लोक में पंचम छठा स्वर्ग जो ब्रह्मोत्तर उसके निकट विषे पांच राजू है और प्रदेशों की हानिकर लोक के अन्त विषे एक राजू उसका विस्तार है।।10।। और तीन लोक की ऊंचाई जो चौदह राजू है। सो सुमेरु से सात राजू नीचे और सात ही ऊपर, इस प्रकार चौदह राजू है।।11।।

चित्रा पृथ्वी के अधोभाग से दूजे नरक के अंत तक एक राजू है, और तीसरे तक दो राजू है। और चौथे तक तीन राजू है पांचवें तक चार राजू हैं और छठे के अंत तक पांच राजू हैं और सातवें के अंत तक छ राजू हैं और पाताल लोक के अंत तक सात राजू हैं, यह तो चित्रा पृथ्वी से अधोभाग विषें पाताल लोक की प्ररूपणा करी है। और चित्रा पृथ्वी से ऊपर दूजें ईशान स्वर्ग के अंत तक डेढ़ राजू। और चौथा महेन्द्र स्वर्ग उसके अंत तक डेढ़ राजू और है कापिष्ट कहिये आठवां स्वर्ग वहां लग एक राजू और सहस्रार कहिये बारहवां स्वर्ग उसके अन्त तक एक राजू और आरण 15 अच्युत 16 सोलहवां उसके अंत तक एक राजू और लोक के अंत तक 1 राजू। इस भांति चौदह राजू उच्च हैं और दक्षिण उत्तर सर्वत्र सात राजू के विस्तार है और पूर्व पश्चिम की विस्तीर्णता इस भांति है सो

अधोलोक को विस्तार लोक के ज्ञाता भगवान ने इस भांति कहा।।16।।

दूजे नरक का अंत चित्रा पृथ्वी से एक राजू नीचा है वहां लोक का पूर्व पश्चिम विस्तार राजू एक और एक राजू के सात भाग करिये तिनमें भाग छै हैं। और तीजे नरक का अंत चित्रा पृथ्वी के अधोभाग से दो राजू नीचा है। वहां लोक का विस्तार राजू दो हैं और एक राजू के सात भागों के भाग पांच और चौथे नरक का अंत चित्रा पृथ्वी से तीन राजू है, वह लोक का विस्तार राजू तीन है और एक राजू के सात भाग में भाग चार और पंचम नरक का अंत चित्रा से चार राजू नीचा है। वहाँ लोक का विस्तार राजू चार और राजू के सात भागों में भाग तीन हैं और छठे नरक का अंत चित्रा से राजू पांच नीचा है, वहां लोक का विस्तार राजू पांच एक राजू के सात भागों में भाग दो हैं।।18।।

और सातवें नरक का अन्त चित्रा से छै राजू नीचा है, वहां लोक का विस्तार राजू छै और एक राजू के सात भाग करिये उनमें भाग एक और पाताल लोक का अन्त चित्रा पृथ्वी से सात राजू नीचा है, वहां लोक का विस्तार राजू सात और ऊर्ध्व लोक विषें चित्रा के अधो भाग से दूजा ईशान स्वर्ग उसका शिखर डेढ़ राजू है, वहां लोक का विस्तार राजू दो है और एक राजू के सात भाग में भाग पांच है।।20।। और ईशान स्वर्ग के शिखर से डेढ़ राजू ऊंचा चौथा माहेंद्र स्वर्ग का जो शिखर है वहां लोक का विस्तार चार और एक राजू के सात भागों में तीन भाग।।21।। और चौथे स्वर्ग के शिखर से ब्रह्मोत्तर छठा स्वर्ग उसका शिखर राजू आध ऊंचा है वहां विस्तार लोक का विस्तार राजू पांच।।22।।

और छठे शिखर से आठवें कापिष्ठ स्वर्ग का शिखर राजू आध ऊंचा है, वहां लोक का विस्तार राजू चार और एक के सात भागों में भाग तीन है।।23।। और आठवें के शिखिर से दशमां स्वर्ग महाशुक्र उसका शिखर राजू आध ऊंचा है वहां लोक का विस्तार राजू तीन है और एक राजू के सात भागों में भाग छै हैं।।24।। और दशवें के शिखर से बारहवें सहस्रार का शिखर आध राजू ऊंचा है वहां लोक का विस्तार राजू तीन है और एक राजू के सात भागों में भाग दोय हैं।।25।। और सहस्रार के शिखर से चौदहवें प्राणत का शिखर आध राजू ऊंचा है, वहा लोक का विस्तार राजू दोय और राजू के सात भागों में पांच भाग। ऐसा कथन श्री वीतराग देव ने प्रकाश्या।।26।। और चौदहमें शिखर से सोलमें अच्युत स्वर्ग का शिखर आध राजू ऊंचा है वहां लोक का विस्तार राजू दोय और एक राजू के सात भागों में भाग एक और अच्युत स्वर्ग के लोक का शिखर सिद्धक्षेत्र सो एक राजू ऊंचा है, वहां लोक का विस्तार राजू एक। इस भांति सकल लोक का पूर्व पश्चिम विस्तार कहा है और दक्षिण उत्तर तो सर्वत्र सात राजू है।।27।।

यह लोक पुरुषाकार है, उसका स्वरूप सुनो। अधोलोक तो इस लोक पुरुष के नितंब और जंघा

चरण इन समान है और मध्य लोक कटि समान है। और चौथे स्वर्ग के अन्त नाभि समान है। और पांचवें छठे देवलोक हृदय समान हैं और तेरहवां चौदहवां स्वर्ग भुजा समान हैं और पंद्रवां सोलवां स्वर्ग दोऊ कांधे समान हैं। नवग्रैवेयक ग्रीवा समान है और नव अणुत्तर ठोडी समान हैं।

और सिद्धक्षेत्र कहिये सिद्धशिला सो ललाट समान है। और जहां सिद्ध विराजे, सो वे आकाश के प्रदेश लोक का शिखर कहिये मस्तक है।।30।। कैसा है परलोक, अपने उदर विषे धरे हैं समस्त जीवादि पदार्थ जिसने और यह लोक पुरुषाकार है परन्तु अकृत्रिम है, किसी पुरुष कर किया नहीं। सो यह लोक तीन बात कर वेढ्या है पहिले वातवले का नाम घनोदधि सो इस लोक को बेढ़े है और घनोदधि को सब ओर घन वातवले वेढ़े है और घनवात को तनवात बेढ़े है, इस भाँति वेढ़ कर तीनों वातवले तिष्ठे हैं।।32।। तिनमें पहिला घनोदधि सो तो गोमूत्र सारिखा पीत वर्ण है। और दूजा घनवात मूंग के वर्ण है और तीजा तनवात वले का पंच वर्ण कहा है।।33।।

ये बातवले दण्डाकार हैं और घनीभूत कहिये पुष्ट हैं और दण्डाकार कहिये लम्बाई रूप हैं और ऊर्द्ध भाग अधोभाग विषे सर्वत्र लोक को वेढे है पाताल विषे तो अति जड़े हैं और उर्द्ध विषे लोक पर्यंत पवन मंडल चढ़ रहे हैं और चंचल हैं लोक के अन्तलग हैं। अधोलोक के अंत विषें तो इन तीनों बातवलावों का विस्तार प्रत्येक प्रत्येक बीस हजार योजन है और लोक के शिखर तीनों बातवलावों का विस्तार किंचित् ऊन एक योजन का है।।35।। और दण्डाकार के परित्याग विषे अनुक्रम से ये तीनों इस भांति हैं घनोदधि योजन सात 7 घनवात योजन पांच 5 और तनवात योजन चार 4 - इस भांति अधोलोक का विस्तार है। और प्रदेशों की हानि से मध्य लोक की बाहुल्यता योजन पांच घनवात की योजन चार तनवात की योजन तीन।।37।। और प्रदेशों की वृद्धि से ब्रह्म से ब्रह्मोत्तर के अंत घनोदधि का विस्तार योजन सात है और घनवात का पांच, तनवात का चार।।38।। फिर ब्रह्मोत्तर के ऊपर प्रदेशों की हानि कर घनोदधि का विस्तार योजन पांच घनवात का योजन चार तनवात का योजन तीन है। इस भांति वातवलावों का विस्तार है।।39।। यह लोक के शिखर विषे घनोदधि की बाहुल्यता कहिये मुटाई योजन आध घनवात की मुटाई योजन पांच और तनवात की मुटाई घनवात से कछु ऊन है।।9।।

यह लोक सब ओर तीन वातवलावों कर वेढ्या ऐसा सोहे है जैसा वख्तरों कर सामन्त सोहे है मानो यह लोक रूप योधा तीन वातवलय रूप वख्तरों कर वेढा। अलोक को जीता चाहे है।।40।। और नरकों विषे पहिली पृथ्वी रत्नप्रभा 1 दूजी शर्करा प्रभा 2 तीजी बालुका प्रभा 3 चौथी पंकप्रभा 4 पांचवी धूमप्रभा 5 छठी तमप्रभा 6, सातमी महातमप्रभा 7 ये सातों पृथ्वी घनोदधि वातवले के मध्य तिष्ठे हैं। और पहिली पृथ्वी से लेकर सातवीं तक नीचे-नीचे तिष्ठे हैं। वे पहिली तो नरकों की

पृथ्वी की प्रभा के नाम कहे हैं, फिर नरकों के नाम कहे हैं – पहिला धम्मा 1 दूजा वंशा 2 तीजा मेघा 3 चौथा अंजना 4 पांचमां अरिष्ट 5 छटा मघवी 6 सातवां माघवी 7।।44।।

पहिली रत्नप्रभा पृथ्वी उसके तीन भागों के नाम खरभाग 1 पंकभाग 2 बहुलभाग 3 ये तीनों भाग एक लाख अस्सी हजार योजन प्रमाण हैं। तिनमें पहिला खर भाग सोलह हजार योजन है और दूजा पंकभाग चौरासी हजार योजन है और तीजा बहुल भाग अस्सी हजार योजन है, इस भांति तीनों की मुटाई कही है। उनमें पहिला खर भाग सोलह हजार योजन है उसमें नव प्रकार भवनवासी हैं एक असुरकुमार भवनवासी नहीं। नीचले सातवें भाग में सात जाति के व्यन्तरों के निवास और आठ जाति में एक राक्षस जाति इनमें नहीं और सब हैं और दूजा पंक भाग उसमें दो भाग हैं – एक भाग में राक्षस जाति एक में असुर। इनमें निवासी रत्नों कर देदीप्यमान हैं।।48।।

खरभाग विषे सोलह भाग कहिये तिनके नाम – पहिला चित्रानाम पटल 1 दूजा वज्रा 2 तीजा वैडूर्य 3 चौथा लोहितांक 4 पांचवां मणारगल्व 5 छटा गोमेघ 6 सातवां प्रवालपटल 7 आठवां ज्योति 8 नवमां रसपटल 9 दसमां अंजन 10 ग्यारहवां अंजन मूल 11 बारहवां अंग 12 तेरहवां स्फटिक 13 चौदहवां चंद्रभाष्य 14 पंद्रवां वर्चक 15 सोलवां बहुशिलामय 16 – यह सब ही पटल नव प्रकार भवनवासियों के और सप्त प्रकार के व्यंतरों के निवास रत्नमई महा प्रभारूप को धरे हैं। एक पटल की मुटाई हजार–हजार योजन है। रत्नप्रभा विषे पहिला खर भाग और दूजा पंक भाग ये तो कहे हैं और बहुल भाग विषे पहिला नरक और नीचे छै नरक और सोलह नरकों की भूमि की अपनी–अपनी जितनी–जितनी मुटाई है सो तो मुटाई को टारकर एक–एक राजू का लम्बा नरकों में अन्तर है।

भावार्थ – चित्रा पृथ्वी के अधोभाग में एक राजू तो दूजा नरक है और दूजे के एक राजू के परे तीजा है 3 और तीजे से एक राजू चौथा है 4 चौथा से एक राजू पांचवां 5 ताते एक राजू छठा 6 और छठे से एक राजू सातवां 7 इस भांति छै राजू में सात नरक हैं और सातवें से नीचे एक राजू नीचा पाताल का अन्त और छै भूमियों की मुटाई टार सो मुटाई के तीजे दूजे नरक की मुटाई बत्तीस हजार योजन है और तीजी पृथ्वी की मुटाई अट्ठाईस हजार योजन है, और चौथी की चौबीस हजार योजन और पांचवें की मुटाई बीस हजार योजन और छठे की मुटाई सोलह हजार योजन और सातवें की मुटाई आठ हजार योजन सो जेती जेती मुटाई कही तेती घाट नरकों विषे एक–एक राजू का अन्तर जानो।।57।।

दस प्रकार के भवनवासी जे असुर कुमारादिक उनके विमानों की संख्या कही और असुर कुमारों के चौंसठ लाख विमान 1 और नागकुमारों के चौरासी लाख विमान 1 और गरुड कुमारों के बहत्तर लाख। और द्वीप कुमारों के 7600000 उदधि कुमारों के 7600000 मेघकुमारों के 7600000

दिक्कुमारों के 7600000 अग्निकुमारों के 7600000 विद्युतकुमारों के 7600000। इनके विमान प्रत्येक 7600000 छहत्तर लाख हैं।।58।। और वायुकुमारों के विमान छयानवें लाख हैं। ये भवनवासियों के विमान सात कोटि बहत्तर लाख हैं एक-एक में चैत्यालय।।59।।

और अधोलोक विषें भूतों के विमान चौदह हजार और राक्षसों के सोलह हजार। ये पाताल लोक सम्बन्धी कहे हैं। पाताल लोक विषे भवनवासी तथा व्यन्तर दोय ही जाति हैं। और असुरकुमारों की उत्कृष्ट आयु एक सागर कछुयक अधिक और नागकुमारों की आयु तीन पल्य। और गुरुड कुमारों की अढ़ाई पल्य। और द्वीपकुमारों की दोय पल्य, दधि और उदधिकुमार, मेघकुमार, विद्युत्कुमार, अग्निकुमार, दिक्कुमार, वायुकुमार, इन सबका उत्कृष्ट आयु डेढ़ पल्य। और जघन्य आयु वर्ष दस हजार पहिले कहा ही था और मध्य के भेद जघन्य से लेकर उत्कृष्ट पर्यंत नाना प्रकार के हैं।।65।।

और असुरों का शरीर ऊंचा पच्चीस धनुष है और नव जाति भवनवासी और आठ जाति व्यन्तरों का शरीर दश धनुष ऊंचा 1 और ज्योतिषी देवों का सात धनुष, यह शरीर की ऊंचाई कही। और पहिले दूजे देवलोक का शरीर सात हाथ ऊंचा और तीजे चौथे स्वर्ग में छै हाथ 6 और पांचवें छठे सातवें आठवें में हाथ पांच 5 और नवमें से बारहवें तक हाथ चार 4 और तेरमें चौदमें हाथ साढ़े तीन।।3।। अर पंद्रमें सोलहमें हाथ तीन 3 और नव ग्रैवेयक में पहिली त्रिक में हाथ अढाई।।2।। दूजी त्रिक में हाथ दोय 2 तीजी त्रिक में हाथ डेढ ।।1।। और नव अणुत्तर विषें हाथ सवा 1 । और पंच अणुत्तर विषें हाथ एक।।67।।

अथानन्तर – हे श्रेणिक! सात ही नरकों में अनुक्रम कर संक्षेप से विला कहूं हूँ, सो तू सुन। पहिले नरक विषे विला तीस लाख 30, दूजे में पच्चीस लाख 25, तीजे में पंद्रा लाख 15, चौथे में दस लाख 10, पांचवें में तीन लाख 3, छठे में पाँच घाट एक लाख 99995, सातवें नरक में पांच 5 – ये सब जोड़िये तब सब चौरासी लाख होय।।68।।

और सातों नरकों के पाथड़े कहे हैं, उनमें पहिले तेरह 13 दूजे ग्यारा 11 तीजे नव 9 चौथे सात पांचवें पांच 5, छठे तीन 3 सातवें एक 1 पहिले नरक के तेरह पाथड़े तिनके नाम – पहिला सीमंतक 1 नारक 2 रौरव 3 भ्रांति 4 उद्भ्रांति 5 संभ्रांति 6 असंभ्रांति 7 विभ्रांति 8 त्रस 9 त्रसितां 10 वक्रत 11 अवक्रांत 12 विक्रांत 13 । ये पहिले नरक धम्मा विषें तेरा हैं। दूजे नरक विषे तर्क 1 तनक 2 मनक 3 वनक 4 घाट 5 संघाट 6 जिह्वक 7 जिह्वाक 8 लोल 9 लोलुप 10 और स्तन लोलुप 11 ये ग्यारह दूजे नरक वंशा विषे हैं, और तप्त 1 तापित 2 अनस्तपन 3 तापन 4 निदाघ 5 प्रज्वलित 6 उज्वलित 7 संज्वलित 8 संप्रज्वलित 9 ये नव पाथडे तीजा मेघा नरक ता विषै है ।।79।। आर 1 तार 2 चमार 3 वर्चक 4 स्तमक 5 खड 6 खड खड 7 ये सात पाथडे चौथे अंजना नरक के हैं।।81।।

और हिम 1 मद्र्दल 2 लल्लक 3 ये तीन पाथडे छठे माधवी नरक के हैं और अप्रतिष्टनांत माराक पाथडा सातमे महातम का है।।83।। ये सब गुणवास पाथडे सात नरकनि के कहे, सातमें ते पहिले तक दोय दोय पाथडे बंधे। पहिले ते एक है तिनमें पहिला सीमंतक पाथडा ता विषें एक एक दिस मैं श्रेणी बद्ध विले गुणचास बड़ा है अन्तर जिन विषें।।85।। और च्यारि विदिसा तिनि में अडतालीस अडतालीस विले सो च्यारि विदिसा के एक सौ बानवे और दिशा के एक सौ छिनवे दिशा विदिसा के सब मिलि तीन सौ अठ्यासी श्रेणी बद्ध विला भये।।88।। और दूजा पाथडा नारक तामें चारों दिशान के एक सौ वाणवे और च्यारि विदिशा के एक सौ अठासी दिसा विदिसा के सब मिलि श्रेणी बद्ध तीन सै अस्सी भये। और तीजा पाथडा रौरकता विषैं दिशान के एक सौ अठ्यासी और विदिसानि के एक सौ चौरासी सब मिलि तीन सै बहित्तरि।।90।।

और चौथा पाथडा भ्रांत ता विषैं दिशानि के एक सौ चौरासी और विदिशानि के एक सौ अस्सी सब मिलि तिन सौ चौसठि। और पांचवां उद्भ्रांत ता विषैं दिसानि के एक सौ अस्सी विदिसान के एक सौ छिहंत्तरि सब मिलि तीन सै छपन।।92।। और छठा संभ्रांत ता विषैं दिसानि के एक सौ छिहत्तरि और विदिसानि के एक सौ बहत्तरि सब मिलि तीन सै अडतालीस और सातवां असंभ्रांत ता विषैं दिशानि के एक सौ बहत्तरि अर विदिसानि के एक सौ अडसठ सब मिलि 340 ।।94।। और आठवां विभ्रांत ता विषैं दिशानि के एक सौ अडसठि और विदिशानि के एक सौ चौसठि सब मिलि तीन सै बत्तीस।।95।।

बहुरि नवमां त्रस ता विषैं दिशानि के एक सौ चौसठि और विदिसानि के एक सौ आठ सब मिलि 324 ।।96।। और दसमां त्रिंसित ता विषैं दिशानि के एक सौ आठ विदिशान के 156 सब मिलि 316 ।।97।। और ग्यारहवां वक्रांत ता विषैं दिशानि के 156 विदिशानि के 152 सब मिल 308 ।।98।। और बारमां अवक्रांत ता विषैं दिशानि के 152 और विदिशानि के 148 सब मिलि 300 ।।99।। और तेरवां विक्रांत ता विषैं दिशानि के 148 और विदिशानि के 144 सब मिल दोय से वाणवे। ए सब तेरा पाथडेनि मैं इन्द्रक विला तेरा एक एक पाथडे पै एक एक इन्द्रक और श्रेणी वद्ध चवालीस सै बीस सो इन्द्रक और गर्मति चवालीस सै तेतीस भये।।2।। इन्द्रक विला तौ पाथडानि के मध्य है और श्रेणी बद्ध दिशानि में तथा विदिशानि में पंकति रूप है और प्रकीर्णक विखरवां सर्वत्र है। ते सकल गुनत्तीस लाख पिच्याणवे हजार पांच सै सडसठि सब मिलि पहले नर्क तेरा पाथडानि विषैं तीस लाख विले है।।3।।

अथानन्तर – दूजे नरक के पाथडे ग्यारा तिनके विलां कहे हैं। दूजे का पहिला पाथडा तक ता विषें दिशानि के एक सौ चवालीस और विदिशानि के 140 सब मिल 284 अर दूजा तनक ता विषें दिशानि के 140 अर विदिशानि के 132 सब मिलि 272 ।।5।। अर तीजा मनक ता विषै दिशानि के

एक सौ छत्तीस अर विदिशानि के 132 सब मिल 268 ।।6।। अर चौथा वनक ता विषें दिशानि के 132 अर विदिशानि के 128 सब मिल 260 ।।7।। अर पांचवां घाट ता विषें दिशानि के एक सौ अठाईस अर विदिशानि के 124 सब मिल 252 ।।8।। अर छठा संघाट ता विषें दिशानि के 124 अर विदिशान के 120 सब मिल 244 ।।9।।

सातवां जिह्वाता विषें दिशान के 120 अर विदिशानि के 116 सब मिल 236 ।।10।। अर आठवां जिह्विक ता विषैं दिशान के 116 अर विदिशान के 112 सब मिल 228 ।।12।। अर दशमां लोलप ता विषें दिशान के 108 विदिशान के 104 । सब मिल 212 ।।13।। अर ग्यारवां तनलोलप ता विषें दिशान के 104 विदिशान के 100 सब मिल 204 ।।14।। दूज नरक के ग्यारह पाथड़े तिन सहित श्रेणी बद्ध 2693 ।।15।। अर प्रकीर्णक चौवीस लाख सित्याणवे हजार तीन सौ पांच सब मिल 1 लाख पचीस ।।16।। अर तीजे नरक के नव पाथड़े तिनमें पहला तप्त ता विषें दिशानि के सौ विदिशानि के छियानवे सब मिल 196 ।। 17।। अर दूजा तपित ता विषें दिशानि के छियानवे अर विदिशानि के 92 सब मिल 188 ।।18।।

अर तीजा तपन ता विषैं दिशानि के वाणवे अर विदिशान के 88 सब मिल 180 ।।19।। अर चौथा तापन ता विषें दिशान के 88 विदिशानि के 84 सब मिल 172 ।।20।। अर पांचवां निदाघ ता विषें दिशान के 84 विदिशान के 80 सब मिल 164 ।।21।। अर छठा प्रज्वलित ता विषें दिशानि के अस्सी विदिशानि के 72 सब मिल 152 ।।22।। अर सातवां उज्वलित ता विषें दिशानि के छिहत्तरि विदिशानि के बहत्तरि सब मिल 148 ।।23।। अर आठवां संज्वलित ता विषें दिशान के 72 विदिशान के 68 सब मिल 140 ।।24।। अर नवमां सप्रज्वलित ता विषें दिशानि के 68 अर विदिशान के 64 सब मिल 132 ।।25।। या भांति तीजे नरक के पाथड़े नव तिनि में नव इन्द्रक विलानि सहित श्रेणी वद्ध 1485 अर प्रकीर्णक 1498516 ।।27।।

चौथे नरक के पाथड़े सात तिनि में पहला अर ता विषें दिशानि के 64 विदिशानि के 60 सब मिल 124 ।।28।। दूजा तार ता विषें दिशानि के साठ अर विदिशानि के 56 सब मिल 116 ।।29।। अर तीजा मार ता विषें दिशानि के 56 विदिशानि के 52 सब मिल 108 ।।30।। चौथा चर्चक ता विषें दिशान के 52 विदिशान के 48 सब मिल 100 ।।31।। अर पांचवां तमक ता विषें दिशान के 48 विदिशान के 44 सब मिल 92 ।।32।। अर छठा खड़ ता विषें दिशान के 44 अर विदिशान के 40 सब मिल 84 ।।33।। सातवां खड खड ता विषें दिशानि के 40 अर विदिशानि के 36 कुल 76।।34।। या भांति चौथे नरक के सात पाथडे तिनमें सात इन्द्रक विले तिन सहित श्रेणी बद्ध सात सै सात अर प्रकीर्णक नव लाख 99293 सब मिल दश लाख।

अर पांचवें नरक के पाथड़े पांच तिनमें पहिला नम ता विषें दिशान के 36 अर विदिशान के 32 सब मिल 68 अर दूजा भूम तिस विषें दिशान के 32 अर विदिशान के 28 सब मिल 60।।38।। तीजा रिख ता विषें दिशान के 28 विदिशान के 24 सब मिल 52।।39।। अर चौथा अन्ध ता विषें दिशान के 24 विदिशान के 20 सब मिल 44।।40।। अर पांचवां मिश्र ता विषें दिशान के 20 विदशानि के 16 सब मिल छत्तीस।।41।। या भांति पांचवें नर्क के पांच पाथडनि में इन्द्रकविला पांच तिन सहित श्रेणी बद्ध दोय से पैंसठि।।42।। अर प्रकीर्णक 299735 सब मिल तीन लाख।।43।।

अर छठे नरक के पाथड़े तीन तिनमें पहिला हिम ता विषें दिशान के 12 अर विदिशान के 8 सब मिल 20।।45।। अर तीजा लल्लक ता विषें दिशान के आठ अर विदिशान के चार सब मिल बारह।।46।। या भांति तीन पाथड़ानि में 3 इन्द्रक विला तिन सहित श्रेणी बद्ध 63 अर प्रकीर्णक 99932 सब मिल 5 घाट 1 लाख।।47।।

अर सातवें नरक विषें पाथड़ा एक जाका नाम अप्रतिष्ठान। ता विषें विला पांच तिनमें इन्द्रक एक अर चारों दिशानि में चार श्रेणी बद्ध अर विदिशानि विषें नाहीं।।49।। अर पहले नरक का पहला पाथड़ा सीमंतक ता विषैं इन्द्रक हूं का नाम सीमंतक ताकों च्यारि दिशानि के जे श्रेणी बद्ध तिनके नाम पूरव दिशा की उर कास पच्छिम की उर महाकाश दक्षिण की उर पिपास उत्तर की और अतिपिपास ए चार प्रथम नरक के प्रथम पाथड़े के समीपवर्त्ती दिशान के श्रेणी बद्ध कहे। ये नर्कन के विले महा कुरूप नारकीनि करि भरे हैं अर प्रसिद्ध है।।50।। अर दूजे नरक का पहिला पाथड़ा नर्क ताके इन्द्रक हूं का नाम नर्क ताकि समीपवर्ती दिशानि विषें च्यारि श्रेणी बद्धनि के नाम पूरब दिशा का अनि पश्चिम का महा अनि दक्षिण का विध्य उत्तर का महाविध्य।।52।। अर तीजे नरक का पहला इन्द्रक तप्त ताके चारि श्रेणी बद्ध के नाम पूरब दिशा का दुःख पश्चिम का महादुःख दक्षिण का वेदना उत्तर का महा वेदना।।53।।

अर चौथे नरक का पहला पाथड़ा और ताके इन्द्रक का भी नाम पाथड़ा और ताके श्रेणीबद्धन च्यारि पूरब दिशा का निस्रष्ट पश्चिम का अति निश्रिष्ट दक्षिन का निरोध उत्तर का महा निरोध।।54।। अर पांचवें नरक का पहिला पाथडा तम ताके इन्द्रक का भी नाम तम ताके समीपवर्ती च्यारि श्रेणी बद्ध तिनमैं पूरब दिशा का निरुद्ध पश्चिम का प्रतिनिरुद्ध दक्षिण का विमर्दन उत्तर का महा विमर्दन और छठे नरक का पहला पाथडा हिम ताके इंद्रक का भी नाम हिम ताके श्रेणीबद्ध चारि पूरब दिशा का काल पश्चिम का महाकाल दक्षिण का रौक्ष उत्तर का महारौक्ष।।57।। सब चौरासी लाख विले तिनमें तिरासी लाख नब्बे हजार तीन सै तेतालीस प्रकीर्णक और गुणचास इंद्रक तिन सहित छिनवै से तरेपन श्रेणीबद्ध ए सब मिलि चौरासी लाख है।

तिनमैं पहले नरक विषै विले तीस लाख तिनमें 6 लाख तौ संख्यात योजन का विस्तार और चौबीस लाख असंख्यात योजन कै विस्तारि। और दूजे नरक पांच लाख संख्यात योजन कै विस्तारि और बीस लाख असंख्यात योजन कै विस्तारि और दूजे नरक पांच लाख संख्यात योजन के विस्तारि और बीस लाख असंख्यात योजन के विस्तारि तीजे नरक तीन लाख संख्यात योजन के विस्तारि और बारा लाख असंख्यात योजन कै विस्तारि।। और चौथे नर्क दोय लाख संख्यात योजन विस्तारि और आठ असंख्यात योजन कै विस्तारि।।63।। और पांचवें नर्क साठि हजार संख्यात योजन के विस्तारि और दोय लाख चालीस हजार असंख्यात योजन के विस्तारि और छठे नर्क उगणीस हजार नौ सै निन्याणवै संख्यात योजन कै विस्तारि।।65।। और गुण्यासी हजार नौ सै छियानवै असंख्यात योजन कै विस्तार।।66।। और सातमें नरक एक संख्यात योजन कै विस्तारि। और चारि असंख्यात योजन कै विस्तार।।67।। विलानि के तीन भेद इंद्रक श्रेणीबद्ध।2। प्रकीर्णक।3। और तीन मैं गुणचास इन्द्रक संख्यात योजन कै विस्तार और श्रेणीबद्ध सकल असंख्यात योजन के विस्तार और प्रकीर्णकनि में केवल संख्यात योजन के विस्तार और कैयक असंख्यात योजन कै विस्तार ए दोय रूप।।69।।

अथानन्तर गुणवास इन्द्रक तिनका विस्तार कहे हैं –

पहला सीमन्तक ताका विस्तार पैंतालीस लाख योजन 1 और दूजा नरक ताका विस्तार चवालीस लाख आठ हजार तीन सै तेतीस योजन और एक योजन के तीन भाग करिए बांका एक भाग और तीजा रौरव ताका विस्तार छियालीस लाख सोलह हजार छै सौ छियासठि योजन। और एक योजन के तीन भाग करिये तामै दोय भाग।।72।। और चौथा भ्रांत ताका विस्तार वैयालीस लाख पचीस हजार योजन।।73।। और पांचवां उद्भ्रान्त ताका विस्तार इकतालीस लाख तेतीस हजार तीन सै तेतीस योजन, एक योजन के तीन भागनि में दोय भाग।।75।। अर सातवां असंभ्रांत ताका विस्तार गुणतालीस लाख पचास हजार योजन।।76।। और आठवां विभ्रांत ताका विस्तार अड़तालीस लाख अठावन हजार तीन सै तेतीस योजन और एक योजन का तीजा भाग।।77।।

और नवमां त्रष्त ताका विस्तार तैतीस लाख छियासठि हजार छः सौ छियासठि योजन और एक योजन के तीन भाग तिनि में दोय भाग।।78।। और दशवां त्रसित ताका विस्तार छत्तीस लाख पिचोत्तर हजार योजन।।79।। और ग्यारमां वक्रान्त ताका विस्तार पैंतालीस लाख तियासी हजार तीन सै तेतीस योजन और एक योजन का तीजा भाग। और बारवां अतकान्त ताका विस्तार चौंतीस लाख इक्याणवें हजार छ सै छयासठि योजन। और एक योजन के तीन भागों में से दो भाग।।81।। और तेरवां विक्रांत उसका विस्तार तेतीस लाख छयासठ हजार योजन एक योजन के तीन भागों में भाग एक।।82।। ये प्रथम नरक के तेरह इन्द्रक कहे।।83।।

अब दूजे नरक का पहला पाथड़ा इन्द्रक नर्क, सो उनंचास की गिणती में चौदवां गिणिये उसका विस्तार तेतीस लाख आठ हजार तीन सै तेतीस योजन और एक योजन का तीजा भाग।।84।। और पन्द्रहवा तनक उसका विस्तार बत्तीस लाख सोले हजार छः सौ छयासठ योजन एक योजन के तीन भागों में भाग दो।।85।। और सोलवां मनक उसका विस्तार इकतीस लाख पच्चीस हजार योजन।।85।। सत्रहवां वनक उसका विस्तार तीस लाख तेतीस हजार तीन सै तेतीस योजन और एक योजन का तीसरा भाग।। 86।। अठारवां घाट, उसका विस्तार गुणतीस लाख इकतालीस हजार छै सौ छयासठ योजन और एक के तीन भागों में भाग दो।।87।। और उन्नीसवां संघाट, उसका विस्तार अठाईस लाख पचास हजार योजन।।88।। और बीसवां जिह्व उसका विस्तार सत्ताईस लाख अठावन हजार तीन सौ तेतीस योजन एक योजन का तीजा भाग।।89।। और इक्कीसवां जिह्वक उसका विस्तार छब्बीस लाख छयासठ हजार छै सौ छयासठ योजन और योजन के तीन भागों में दो भाग।।90।। और बाईसवां लोल उसका विस्तार पच्चीस लाख पिचहत्तर हजार योजन और तेईसवां लोलुप उसका विस्तार चौबीस लाख तिरासी हजार तीन सौ तेतीस योजन और योजन का तीजा भाग।।91।। और चौबीसवां तनुलोलुप, उसका विस्तार तेईस लाख इक्यानवें हजार छै सौ छयासठ योजन और योजन के तीन भागों में भाग दो।।92।। ये दूजे नरक के ग्यारह इन्द्रक कहे।

तीजे नरक का पहिला पाथड़ा इन्द्रक तप्त सो उनचास की गिणती में पच्चीसवां उसका विस्तार तेईस लाख योजन।।93।। छब्बीसवां, तापन उसका विस्तार बाईस लाख आठ हजार तीन सै तेतीस योजन, और योजन का तीजा भाग।।94।। और सत्ताईसमा तपन उसका विस्तार इक्कीस लाख छै हजार योजन एक योजन के तीन भागों में भाग दो।।95।। और अट्ठाईसवां तापन उसका विस्तार बीस लाख पच्चीस हजार योजन एक योजन का तीजा भाग।।96।। और उनतीसवां निदाघ उसका विस्तार उन्नीस लाख तेतीस हजार तीन सौ तेतीस योजन और योजन का तीजा भाग।।97।। तीसवां प्रज्वलित उसका विस्तार अठारह लाख इकतालीस हजार छै सो छयासठ योजन और योजन एक के तीन भागों में दो भाग।।98।। इकतीसवां उज्वलित उसका विस्तार सतरह लाख पचास हजार योजन।।99।। बत्तीसवां संज्वलित का उसका विस्तार सोलह लाख अठावन हजार तीन सौ तेतीस योजन, और योजन का तीजा भाग।।100।। और तेतीसवां संप्रज्वलित उसका विस्तार पन्द्रह लाख छियासठ हजार छै सौ छयासठ योजन और योजन के तीन भागों में भाग दो।।1।। ये तीजे नरक के नव पाथडे कहे। यहां लग उनंचास में तेतीस भये।।2।।

और चौथे नरक का पहिला इन्द्रक आर सो उनंचास में चौतीसवां उसका विस्तार चौदह लाख पिचहत्तर हजार योजन और योजन के तीन भागों में भाग दो।।3।। पैंतीसवां तार उसका विस्तार तेरह

लाख त्रियासी हजार तीन सौ तैतीस योजन, योजन के तीन भागों में एक भाग।।4।। छत्तीसवां मार उसका विस्तार बारह लाख इक्यानवें हजार छै सौ छयासठ योजन एक योजन के तीन भागों में एक दो।।5।। और सैंतीसवां वर्चस उसका विस्तार ग्यारह लाख योजन और अठतीसवां तनक उसका विस्तार ग्यारह लाख आठ हजार तीन सै तेतीस योजन, एक योजन के तीन भागों में दो भाग। और उणतालीसवां खड उसका विस्तार दश लाख सोलह हजार छै सौ छयासठ योजन और तीन भागों में भाग दो।।6।। चालीसवां खडखड उसका विस्तार नव लाख पच्चीस हजार। ये चौथे नरक के सात इन्द्रक कहे।।7।।

और पांचवें नरक का पहिला इंद्रक तम सो उनचास में इकतालीसवां उसका विस्तार आठ लाख तेतीस हजार तीन सौ तेतीस योजन, एक योजन का तीजा भाग।।8।। और बयालीसवां भ्रम उसका विस्तार सात लाख इकतालीस हजार छै सौ छयासठ योजन और एक योजन के तीन भागों में भाग दो।।9।। और तियालीसवां रिष उसका विस्तार छै लाख, पचास हजार योजन।।10।। और चवालीसवां अन्ध उसका विस्तार पांच लाख अठानवे हजार तीन सौ तेतीस योजन एक योजन का तीजा भाग।।11।। और पैंतालीसवां तमिस्र उसका विस्तार चार लाख छयासठ हजार छै सौ छयासठ योजन, योजन के तीन भागों में दो भाग ये पंचम नरक के पंच इन्द्रक कहे।।12।।

और छठे नरक का पहिला इन्द्रक हिम, सो उनंचास में, छयालीसवां उसका विस्तार तीन लाख पिचहत्तर हजार योजन केवलदर्शि ने दिखाया।।13।। सैंतालीसवां वर्दल उसका विस्तार दो लाख तियालीस हजार तीन सौ तेतीस योजन, योजन का तीजा भाग।।14।। अड़तालीसवां लल्लक उसका विस्तार एक लाख इक्यावन हजार छै सौ छयासठ योजन और योजन के तीन भाग में भाग दो।।15।। ये छठे नरक के तीन इन्द्रक कहे।

और सातवें नरक का अप्रतिष्ठान नामा इन्द्रक उसका विस्तार एक लाख योजन वह समस्त तत्त्ववेत्ता जो सर्वज्ञ देव तिस ने कहा।।16।। ये सात नरकों के उनंचास पाथडे हैं। सो एक एक पाथडे में एक एक इन्द्रक विला जो पाथडे का नाम सो इन्द्रक विले का नाम यह तो समस्त इन्द्रक के विस्तार का वर्णन किया।।17।।

अब इन्द्रकों की भूमि की मुटाई कहिये जडपना, सो सुनो –

धम्मा कहिये पहिला नरक उस विषें इन्द्रकों की मुटाई एक कोस की है और श्रेणीबद्ध विले उनकी भूमि की मुटाई एक कोस और कोस का तीजा भाग, और जो प्रकीर्णक विले उनकी मुटाई भूमि विषें कोस एक और कोस के तीन भागों में एक भाग।।18।। और वंशा कहिये दूजा नरक उस

विषे इन्द्रक की भूमि की मुटाई कोस एक। और श्रेणीबद्धों की भूमि की मुटाई कोस दो। और प्रकीर्णकों की भूमि मुटाई साढ़े तीन और तीजा नरक मेघा उस विषे इन्द्रक की भूमि की मुटाई कोस दो और श्रेणीबद्धों की भूमि की मुटाई कोस दो, और एक कोस के तीन भागों में भाग दो, और प्रकीर्णकों की भूमि मुटाई कोस 4, एक कोस के तीन भागों में भाग दो।।19।। और चौथा नरक अंजना उस विषे इन्द्रकों की भूमि की मुटाई कोस ढाई और श्रेणीबद्ध भूमि की मुटाई कोस 3, और एक तीजा भाग और प्रकीर्णकों की भूमि की मुटाई कोस पांच। और एक कोस के छै भाग करिये तिनमें भाग पांच।।20।।

और अरिष्टा पांचवां नरक उस विषैं इंद्रक की भूमि की मुटाई कोस 3 और श्रेणीबद्धों की कोस 4 अर प्रकीर्णकों की कोस सात।।21।। अर छठा नरक मघवा उस विषे इन्द्रक भूमि की मुटाई कोस साढ़े तीन और श्रेणीबद्धों की भूमि की मुटाई कोस 4 और एक कोस के तीन भागों में भाग दो और प्रकीर्णकों की भूमि की मुटाई कोस आठ, एक कोस का छठा भाग।।22।। सातवां नरक माघवी उस विषे इन्द्रक भूमि की मुटाई कोस 4 श्रेणीबद्ध चार तिनकी भूमि की मुटाई कोस पांच, एक कोस का तीजा भाग। इस भांति सब विलाओं का विस्तार और भूमि की मुटाई का वर्णन कहा है।।23।।

अथानन्तर – विलावों का अंतर कहे हैं –

प्रथम नरक विषें इन्द्रक विलावों में परस्पर अंतर 6499 योजन और कोस दोय, अर एक कोस के भाग बारह करिये उनमें ग्यारह भाग लीजे।।25।। अर श्रेणीबद्धों का अंतर 6499 योजन अर दो कोस अर कोस के नव भागों विषे भाग पांच लीजे।।26।। अर प्रकीर्ण का अंतर 6499 योजन कोस एक अर कोस के छत्तीस भाग करिये उनमें सतरह भाग लीजे।।27।। अर दूजे नरक विषे इन्द्रक विला 2999 योजन अर धनुष 4700 सौ 28 अर श्रेणीबद्धों का अंतर 2999 योजन धनुष छत्तीस सौ।।29।। अर प्रकीर्ण का अंतर 2999 योजन, अर धनुष तीन सौ।।31।। अर तीजे नरक विषे इन्द्रक विलावों का अंतर 3249 योजन अर धनुष 3500 सौ।।33।। अर श्रेणीबद्धों का अंतर 3249 योजन अर धनुष 2000 दो हजार।।34।। ऐसे भेद सर्वज्ञ देव ने कहे हैं। अर प्रकीर्णकों का अंतर 3248 योजन अर धनुष 5500 सौ।।34।। अर चौथे नरक विषे इन्द्रक का अंतर 3665 योजन अर धनुष 7500 सौ।।35।।

अर श्रेणीबद्धों का अंतर 3665 योजन अर धनुष 5555 अर एक धनुष के नव भाग करिये उनमें भाग पांच लीजे।।36।। अर प्रकीर्णकों का अंतर 3664 योजन, अर धनुष 7722 अर एक धनुष के नव भाग करिये उनमें भाग दोय लीजे।।37।। अर पांचवें नरक विषे इन्द्रक विलाओं का अंतर 4499 योजन अर 500 धनुष।।38।। और श्रेणीबद्धों का अंतर 4498 योजन अर धनुष 6000 अर प्रकीर्णकों

का अंतर 4497 योजन अर धनुष 6500।।42।। अर छठे नरक विषे इन्द्रकों का अंतर 5998 योजन अर धनुष 5500 सौ।।43।। अर श्रेणीबद्धों का अंतर 6998 योजन अर धनुष 2000 अर प्रकीर्णकों का अंतर 6996 योजन अर धनुष 7500 सौ।।45।। अर सप्तम नरक विषें इन्द्रक एक ही है अर श्रेणीबद्ध चार, प्रकीर्णक कहे नहीं सो इन्द्रकों का श्रेणीबद्ध से अंतर 3999 योजन। अर कोस 2, अर श्रेणीबद्धों में परस्पर अंतर तीन हजार नौ से निन्यानवै योजन, अर एक कोस का तीजा भाग।।47।।

अथानन्तर – उनंचास पाथड़ों में आयु का कथन करे हैं –

प्रथम नरक विषे पहिला पाथड़ा सीमंतक वहां जघन्य नारकीन की आयु दश हजार वर्ष अर उत्कृष्ट आयु नब्बे हजार वर्ष।।48।। अर दूजा पाथडा तारक उस विषे जघन्य आयु 9000 वर्ष किंचित् अधिक अर उत्कृष्ट आयु नब्बे लाख वर्ष।।49।। अर तीजा पाथडा रौख उस विषै जघन्य आयु नब्बे लाख वर्ष अर एक समय अधिक। अर उत्कृष्ट आयु असंख्यात कोड़ि पूर्व।।50।। अर चौथा पाथड़ा भ्रांत उस विषें जघन्य आयु असंख्यात कोडि पूर्व एक समय अधिक अर उत्कृष्ट आयु सागर का दसवां भाग।।51।। अर पांचवां उद्भ्रांत उस विषें जघन्य आयु सागर का दसवां भाग एक समय अधिक और उत्कृष्ट आयु सागर का पांचवां भाग।।52।। और छठा संभ्रांत उस विषे जघन्य आयु सागर का पांचवां भाग एक समय अधिक उत्कृष्ट आयु सागर के दश भागों में तीन भाग।।53।। अर सातवां असंभ्रांत उस विषे जघन्य आयु सागर के दश भागों में भाग तीन एक समय अधिक। उत्कृष्ट आयु सागर के दश भागों में भाग चार।।54।।

अर आठवां विभ्रांत उस विषे जघन्य आयु सागर के दस भागों में भाग 4 और उत्कृष्ट आयु आध सागर और नवमां त्रस्त विषें जघन्य आयु सागर आध और उत्कृष्ट आयु सागर के दश भागों में भाग सात।।55।। और दसमां त्रसित उस विषे जघन्य आयु सागर के दस भागों में भाग छै उत्कृष्ट आयु सागर के दश भागों में भाग सात।।56।। अर ग्यारवां विक्रांत उस विषे जघन्य आयु सागर के दश भागों में सात भाग और उत्कृष्ट आयु सागर के दस भागों में भाग आठ।।57।। और बारमां अविक्रांत उस विषे जघन्य आयु सागर के दस भागों में भाग आठ और उत्कृष्ट आयु सागर के दस भागों में भाग नव।।58।। और तेरवां विक्रांत उस विषे जघन्य आयु सागर के ग्यारह भागों में भाग दस और उत्कृष्ट आयु सागर एक। यह प्रथम नरक के नारकीन की आयु कही।1।

और दूजे नरक का पाथडा पहिला तर्क उस विषे जघन्य आयु सागर 1 किंचित् अधिक अर उत्कृष्ट आयु सागर 1 अर एक सागर के ग्यारह भागों में भाग दोय।।59।। और दूजा पाथडा तनक उस विषे जघन्य आयु सागर 1 एक सागर के ग्यारह भागों में भाग दो अर उत्कृष्ट आयु सागर 1 ग्यारह भागों में भाग चार अर तीजा पाथडा मनक उस विषे जघन्य आयु सागर 1 सागर के ग्यारह

भागों में भाग 4 उत्कृष्ट सागर 1 ग्यारह भागों में भाग छै।।60।। चौथा पाथडा वनक उस विषे जघन्य आयु सागर 1, अर सागर के ग्यारह भागों में भाग 6 अर उत्कृष्ट आयु 1 और ग्यारह भागों में भाग आठ।।61।। और पांचवां पाथडा विघात उस विषे जघन्य आयु सागर 1 और एक सागर के ग्यारह भागों में भाग 8 और उत्कृष्ट आयु सागर 1 ग्यारह भागों में भाग दस।।62।। और छठा पाथडा संघात उस विषे जघन्य आयु सागर 1 ग्यारह भागों में भाग 10 और उत्कृष्ट आयु सागर दो, ग्यारह भागों में भाग एक।।63।। और सातवां जिह्वक उस विषे जघन्य आयु सागर 2 भाग 1, उत्कृष्ट आयु सागर 2 और भाग तीन।।64।। और आठवां जिह्वाक उस विषे जघन्य आयु सागर 2 और सागर के ग्यारह भागों में भाग तीन अर उत्कृष्ट आयु सागर 2 और भाग पाँच।।65।। अर नवमां लोल उस विषे जघन्य आयु सागर 2 और 11 भागों में भाग पांच, उत्कृष्ट आयु सागर 2 और एक के ग्यारह भागों में भाग सात।।66।। और दसवां लोलप उस विषे जघन्य आयु सागर दो और ग्यारह भागों में भाग सात, और उत्कृष्ट सागर 2 और भाग नव।।67।। ग्यारहवां तन लोलप उस विषे जघन्य आयु सागर 2 भाग नव और उत्कृष्ट सागर तीन।।68।। यह दूजा नरक जो वंशा उसके ग्यारह पाथडों की प्ररूपणा करी है।।69।।

और तीजे नरक का पहिला पाथडा तप्त उस विषे जघन्य आयु सागर तीन और उत्कृष्ट आयु सागर तीन एक सागर के नव भाग करिये उन में भाग 4, और तीजे का दूजा पाथडा तपित उस विषे जघन्य आयु सागर 3 और नव भागों में भाग 4 और उत्कृष्ट आयु सागर 3 और एक के नव भागों में भाग आठ।।70। और तीजा पाथडा तपन उस विषे जघन्य आयु सागर 3 अर भाग 8 उत्कृष्ट सागर 4 अर नव भागों में भाग तीन।।71।। अर चौथा तापन उस विषे जघन्य आयु सागर 4 अर नव भागों में भाग 3, अर उत्कृष्ट सागर 4 भाग सात।।72।। अर पांचवां निदाघ उस विषे जघन्य आयु सागर 4 अर नव भागों में भाग 7 अर उत्कृष्ट आयु सागर 5 अर भाग दो।।73।। अर छठा प्रज्वलित उस विषें जघन्य आयु सागर 5 अर एक सागर के नव भागों में भाग 2, अर उत्कृष्ट सागर 5 अर भाग छह।।74।। अर सातवां उज्वलित उस विषे जघन्य आयु सागर 5 अर भाग 6 उत्कृष्ट सागर 6 नव भागों में भाग एक।।75।। अर आठवां संज्वलित उस विषे जघन्य आयु सागर 6 अर एक सागर के नव भागों में भाग 1 उत्कृष्ट सागर 6 अर भाग पांच।।76।। अर नवमां संप्रज्वलित उस विषे जघन्य आयु सागर 6 अर भाग 5 अर उत्कृष्ट आयु सागर 7 यह तीजे नरक के नव पाथड़ी का निर्णय किया।।77।।

चौथा नरक अंजना उसका पहिला पाथड़ा अर उस विषे जघन्य आयु 7 सागर अर उत्कृष्ट आयु सागर 7 अर एक सागर के सात भागों में भाग तीन।।78।। अर दूजा पाथडा तार उस विषे जघन्य

आयु सागर 7 भाग 3 अर उत्कृष्ट आयु सागर 7 अर भाग छह।।79।। अर तीजा पाथडा मार उस विषे जघन्य आयु सागर 7 भाग 6 अर उत्कृष्ट आयु सागर 8 अर भाग दो।।80।। चौथा वर्चस उस विषे जघन्य आयु सागर 8 सात भागों में भाग 2 उत्कृष्ट सागर 8 अर भाग पांच।।81।। अर पांचवां पाथड़ा तमक उस विषे जघन्य आयु सागर 8 अर एक सागर के सात भागों में भाग 5 उत्कृष्ट सागर 9 अर एक सागर का सातवां भाग।।82।। अर छठा पाथड़ा खडा उस विषे जघन्य आयु सागर 9 अर भाग 1 उत्कृष्ट आयु सागर 9 भाग चार।।83।। अर सातवां खड़खड़ उस विषे जघन्य आयु सागर 9 अर भाग 4 अर उत्कृष्ट सागर दस, यह चौथे नरक के सात पाथड़ों का वर्णन किया।।84।।

अर पांचवां नरक अरिष्ट उसका पहिला पाथड़ा तम उस विषे जघन्य आयु सागर 10 अर उत्कृष्ट आयु सागर 10 अर एक सागर के पांच भागों में भाग दोय।।85।। अर दूजा पाथडा भ्रम उस विषे जघन्य आयु सागर दश अर पांच भागों में भाग दो अर उत्कृष्ट आयु सागर बारह अर भाग चार।।86।। अर तीजा पाथडा रिख उस विषे जघन्य आयु सागर बारह अर भाग चार उत्कृष्ट आयु सागर चौदह अर भाग एक।।87।। अर चौथा पाथड़ा अंध विषे जघन्य आयु सागर चौदह अर भाग एक उत्कृष्ट आयु सागर पन्द्रह अर भाग तीन।।88।। अर पांचवां पाथडा तमिस्र उस विषे जघन्य आयु सागर पंद्रह अर भाग तीन अर उत्कृष्ट आयु सागर सतरह, ऐसा कथन श्री वीतराग देव ने किया। यह पंचम नरक के पाथड़ों का व्याख्यान किया।।89।।

अर छठा नरक मघवी उसका पहिला पाथड़ा हिम विषे जघन्य आयु सागर सतरह अर उत्कृष्ट आयु सागर अठारह अर एक सागर के तीन भागों में भाग दो।।90।। अर दूजा पाथड़ा वर्दल उस विषे जघन्य आयु सागर अठारह अर भाग दो अर उत्कृष्ट आयु बीस अर तीजा भाग।।91।। अर तीजा लल्लक उस विषे जघन्य आयु सागर बीस अर एक का तीजा भाग अर उत्कृष्ट सागर बाईस। यह छठे नरक के तीन पाथड़ों का कथन किया है।

अर सातवां नरक माघवी उस विषे पाथड़ा एक अप्रतिष्ठान उस विषै जघन्य आयु सागर 22 अर उत्कृष्ट आयु सागर तेतीस।।92।।

इस भांति सातों नरक की आयु का वर्णन किया है, जो पहिले उत्कृष्ट सो दूजे एक समय अधिक जघन्य आयु इसी भांति सब पाथड़ों में जानो - ऐसे नारकियों की आयु कही।

अथानन्तर - नारकियों के शरीर की ऊंचाई कहे हैं -

पहिले नरक के पहले पाथडे में नारकियों का शरीर हाथ तीन दूजे पाथडे में धनुष 1 हाथ 1 अर साढ़े आठ अंगुल। इस भांति तेरह पाथडे तक पाथड़े पाथड़े विषै दो दो हाथ अर साढा आठ 2 अंगुल

बढ़ता गया अर तीजे में धनुष 1 हाथ 3 अंगुल 10।।93।। अर चौथे पाथडे में धनुष 2 हाथ 2 अंगुल 1।। अर पांचवें पाथडे में धनुष 3 अंगुल दस।।94।। अर छठे पाथडे में धनुष 3 हाथ 2 अंगुल 18।।95।। अर सातवें पाथडे में धनुष 4 हाथ हाथ 1 अंगुल 3 । यह कथन भ्रम रहित केवली ने कहा।।96।। अर आठवें पाथडे में धनुष 4 हाथ 3 अंगुल 11 ।।97।। अर नवमें पाथडे में धनुष 5 हाथ 1 अंगुल बीस।।98।। अर दशमें पाथडे में धनुष 6 अर अंगुल 4 ।।99।। अर ग्यारवें पाथड़े में धनुष 6 हाथ 2 अंगुल 13।।100।। ऐसा कथन सर्वज्ञ देव ने किया जिनके भ्रम नहीं वे महाप्रवीण हैं। अर बारहवें पाथड़े में धनुष 7 अंगुल 21 ।।1।। तेरहवें पाथड़े में धनुष 7 हाथ 3 अंगुल 6 । इस भांति पहिला नरक धम्मा उसके तेरा पाथडों विषें पुराण पुरुषों ने नारकियों के शरीर की ऊंचाई कही।।2।।

अर दूजे नरक के पहिले पाथड़े विषें धनुष 8 हाथ 2 अंगुल 2 अंगुल के ग्यारह भाग करिए उन में भाग दोय।।3।। दूजे पाथडे में धनुष 9 अंगुल 22 एक अंगुल के ग्यारह भागों में भाग चार।।3।। तीजे पाथडे में धनुष नौ हाथ तीन अंगुल अठारह ग्यारह भागों में भाग छः।।5।। अर चौथे पाथड़े में धनुष दश हाथ दो अंगुल चौदह अर एक अंगुल के ग्यारह भागों में भाग आठ।।6।। अर पांचवें पाथड़े में धनुष ग्यारह हाथ 1 अंगुल दश अर भाग दश।।7।। छठे पाथडे में धनुष बारह अर अंगुल सात अर भाग1 ।।8।। अर सातवें पाथड़े में धनुष बारह हाथ तीन अंगुल तीन अर ग्यारह भागों में भाग तीन।।9।। अर आठवें पाथडे में धनुष तेरह हाथ 1 अंगुल तेईस अर भाग पांच।।10।। अर नवमें पाथडे में धनुष चौदह अंगुल उनीस अर भाग 7 ।।11।। अर दशवें पाथडे विषें धनुष चौदह हाथ तीन अंगुल पन्द्रह अर भाग नव।।12।। अर ग्यारहवें पाथड़े में धनुष पंद्रह हाथ दो अंगुल बारह यह दूजे नरक के पाथड़े ग्यारह का कथन किया। यहां से एक धनुष हाथ दोय बाईस अंगुल एक अंगुल के तीन भागों में भाग दोय ये अनुक्रम कर वृद्धि भई।

तीजे नरक के पहिले पाथडे में धनुष सतरह हाथ 1 अंगुल दश अर एक अंगुल के तीन भागों में भाग दोय इतना ऊंचा शरीर नारकीयों का है।।15।। अर तीजे के दूजे पाथडे में धनुष उनीस नव अंगुल अर 1 अंगुल का तीजा भाग सर्वदर्शी ने दिखाया।।16।। अर तीज के तीजे पाथडे विषैं धनुष बीस हाथ तीन अंगुल आठ शरीर ऊंचा है अर चौथे पाथडे विषैं धनुष बाईस हाथ दो अंगुल छह अर एक अंगुल के तीन भागों में भाग दो।।17।। अर पांचवें पाथडे विषे धनुष चौबीस हाथ 1 अंगुल पांच भाग 1।।18।। अर छठे विषैं धनुष छबीस अंगुल 4 शरीर ऊंचा है।।19।। अर सातमें पाथडे विषैं धनुष सत्ताईस हाथ तीन अंगुल दो अर भाग 2 ।।20।। अर आठवें पाथडे विषैं धनुष उन्तीस हाथ 2 अर अंगुल दो अर भाग 1।।20।। अर नवमें पाथडे विषैं धनुष एकतीस हाथ 1 अंगुल 20 ।।21।। यह तीजे नरक के नव पाथडों के नारकीयों की ऊंचाई कही है।।22।।

अर चौथे नरक के पहिले पाथडे विषें धनुष पैंतीस हाथ दो अंगुल के बीस अर एक अंगुल के सात भाग करिये उन में भाग चार।।23।। दूजे पाथडे में धनुष 40 अंगुल सत्रह अर एक अंगुल का सातवां भाग।।24।। अर तीजे पाथडे विषैं धनुष चवालीस हाथ दो अंगुल तेरह अर सात भागों में भाग पांच।।25।। अर चौथे पाथडे विषें धनुष 49 अंगुल दश अर अंगुल एक के सात भागों में भाग दो।।26।। अर पांच के विषें धनुष तिरपन हाथ दो अंगुल छः भाग छः।।27।। अर छठे विषें धनुष 58 अंगुल तीन अंगुल के सात भागों में भाग तीन।।28।।अर सातवें विषें धनुष बासठ अर हाथ 2 की ऊंचाई है। इस भांति चौथे नरक के सात पाथडों के नारकीयों के शरीर की ऊंचाई कही।।29।।

अर पांचवें नरक के पहिले पाथडे विषें धनुष पचहत्तर अर दूजे पाथडे विषें धनुष सत्तासी हाथ 2 ।।30।। अर तीजे पाथडे में धनुष 100 अर चौथे पाथडे में धनुष 112 हाथ दो।।31।। अर पांचवें विषें धनुष 125 ऊंचाई नारकीयों की गणधर देव ने कही।।32।। ये पंचम नरक के पांच पाथडे उन विषें शरीर की ऊंचाई जानो।।33।।

अर छठे नरक के पहिले पाथडे विषें धनुष 166 हाथ 2 अंगुल सोलह।।33।। अर दूजे में धनुष 208 हाथ 1 अंगुल 8 अर तीजे पाथडे में धनुष 250 ।।34।। इस भांति छठे के तीन पाथडों के नारकीयों के शरीर की ऊंचाई ज्ञान नेत्र के धारकों ने कही।।35।।

अर सातवें नरक विषें एक पाथडा उस विषें धनुष 500 नारकीयों के देह की ऊंचाई कही। यह सब निश्चय केवलियों के उपदेश कर भव्य जीवों के भया।

अथानन्तर - प्रथम नरकादि सातों ही नरकों की पृथ्वी विषें अवधि प्रमाण कहे हैं -

पहिले नरक कोस 4 दूज नरक के कोस 3।। तीजे नरक कोस तीन चौथे नरक कोस 2।। पांचवें नरक कोस दो छठे नरक कोस 1।। सातवें नरक कोस 1 इस भांति अवधि का प्रचार जानना।।38।। अर पहिले नरक दूजे नरक लेश्या कापोत अर तीजे नरक विषें ऊपले पाथडे में कापोत अर नीचले पाथडे में नील।।39।। अर चौथे नरक विषैं सब पाथडों में नीललेश्या ही है अर पांचवें नरक ऊपरले पाथडों में नील लेश्या है अर नीचले पाथडों में कृष्णलेश्या है अर छठै नरक विषैं सब पाथडों में कृष्णलेश्या ही है अर सातवें नरक विषें परम कृष्णलेश्या है। अति दुष्ट भावों कर तहां जाय है, वहां दुष्टभाव ही हैं। अर वहां के निकसे मनुष्य न होवें, दुष्ट तिर्यंच ही होंय। एक बार फिर नरक में जाय।।41।। अर चौथे नरक तक तो अति उष्णता की बाधा है। अर पांचवें नरक विषें ऊपरले विलावों में तो उष्णता की बाधा है। अर नीचले विलावों में शीतता की बाधा है।

अर छठे नरक विषें सर्वत्र शीत है, अर सातवें नरक विषैं महाशीत है।।42।। अर नारकीयों के उत्पत्ति के स्थानक तीजे नरक तक तो कड़ाहा के आकार है। अर कै एक कुम्भी के आकार हैं। अर कै एक मुरज (मुदगर) के आकार हैं, कई एक कुस्थली के आकार हैं, कई एक मृदंग के आकार अर कई एक नारी के आकार।।43।। अर चौथे नरक विषें तथा पांचवें नरक विषें नारकीयों के उत्पत्ति के स्थानक कई एक गाय के आकार कई एक गज के आकार हैं, कई एक अश्वादिक के आकार कई एक भैंसों के आकार कई एक द्रोणी के आकार कई एक कमल के पुट के आकार।।44।। अर छठे नरक विषें तथा सातवें विषें नारकीन के उत्पत्ति के स्थानक कई एक खेत के आकार, कई एक झाल के आकार कई एक मल्लिका के आकार कई एक मयूरिका के आकार हैं।।45।। ये उत्पत्ति स्थानक एक कोस चौड़े कई एक दो कोस के चौड़े कई एक तीन कोस चौड़े कई एक वा दोय वा तीन योजन चौड़े हैं। अर उनमें सौ योजन चौड़े हैं यह उत्कृष्ट वर्णन किया, सौ योजन सिवाय उनकी चौड़ाई नहीं।

अथानन्तर – क्रम तौ सातों नरक विषैं एक दो वा तीन कोस एक दो तीन सौ योजन चौड़ाई सब स्थान कहे हैं। अर जो जहां चौड़ाई वर्णन करी वहां पांच गुनी ऊंचाई जानो, नारकीयों के समस्त उत्पत्ति स्थानकों की ऊंचाई चौड़ाई समस्त वस्तु श्री वीतरागदेव ने बताई।।47।। जे इन्द्रक विले हैं वे सब तिखूटे हैं, तीन द्वारों को धरे हैं। अर इन्द्र के तो दूजे श्रेणीबद्ध अर प्रकीर्णक से कई एक दो द्वार अर दोय कोण अर कई एक तीन द्वार अर त्रिकोण अर कई एक द्वार एक कोण कई एक पंच द्वार पंच कोण अर कई एक सप्त द्वार सप्त कोण।।48।। वे संख्यात योजन के विस्तार कर युक्त हैं। उनमें तो अल्प अन्तर छह कोस अर उत्कृष्ट अन्तर कोस बारह, अर संख्यात योजनरूप है प्रमाण जिनका उनका अन्तर उत्कृष्ट तो असंख्यात योजन अर जघन्य अन्तर सात हजार योजन।।50।।

अर नरक के विषें नारकी उपज कर भूमि में पड़े हैं वहां पड़ कर उछले हैं, सो पहिले नरक तो योजन सात अर कोस सवा तीन ऊंचे उछले ही हैं, अर नीचले नरक विषें पहिले से दूना जानो।।51।। दूजे नरक विषें योजन 15 अर कोस।।2।। नारकी ऊंचे उछले हैं। अर तीजे नरक विषें योजन 31 अर कोस 1 उपजते ही पृथ्वी में पड़ कर आकाश को उछले हैं अर उछल कर पीछे पड़े हैं।।53।। अर चौथे नरक के नारकी योजन 62 अर कोस दो उछले हैं। अर पांचवें नरक के नारकी योजन 125 महा दुःख के पीड़े ऊंचे उछले हैं। अर छठें नरक विषें नारकी योजन 250 ऊंचे उछले पाछे पड़े हैं। अर सातवें नरक विषें योजन 500 ऊंचे उछले पृथ्वी विषें पड़े हैं।।57।।

तीजे नरक तक तो अपना अपना पूर्वला वैर विचार नारकी परस्पर लड़े हैं। अर असुरकुमार देव भी इनको पूर्वला बैर चितराय परस्पर लड़ावें हैं अर चौथे नरक से लेकर सातवें पर्यन्त असुरकुमारों

का गमन नहीं, नारकी ही वैर चितार कर परस्पर लड़े हैं।।58।। अपने शरीर कर उपजे नाना प्रकार के शस्त्र कुन्त कहिए सेल अर क्रकच कहिए करौंत अर शूल कहिए त्रिशूल इनको आदि दे खड्ग कुठारी कुहाड़ियों कर परस्पर खंड-खंड करे हैं, महा पीड़ा उपजावे हैं।।59।। जैसे पारे को खंड-खंड करिए अर तत्काल मिल जाय, तैसे नारकीयों का शरीर खंड-खंड होय मिल जाय है। जहां तक उनका आयु कर्म है वहां तक मारने कर मरें नहीं। शरीर सम्बन्धी अर मन संबंधी आधि व्याधि का दुःख पूर्व पाप के विपाक से सदा सहे हैं, वह उसको दुखी करे है। परस्पर मारना ताडना हुवा ही करे है। वे नारकी महाक्षार महाउष्ण महा दुर्गन्ध वैतरनी नदी के जल से अर महा दुर्गन्ध मृत्तिका से महा दुस्सह दुख भोगे हैं।।62।। एक आंख के निमित्र मात्र भी नारकीयों को सुख नहीं। वे नारकी निरन्तर नरक विषे दुख भौगे हैं, नरक विषें जीवन के महा अशुभ परिणाम हैं। अर नपुंसक सब ही हैं, अर हुण्डक संस्थान है।।63।।

छठे नरक तक के निकसे तो मनुष्य अर पंचेन्द्री तिर्यंच दो गति में आवें। अर सातमें से निकसे तिर्यंच ही होवें। अर कई एक जीवों ने पहिले मिथ्यात्व विषे नरक का बंध किया था। फिर सम्यक् को पाय कर तीर्थंकर पद का बंध कीया, सो च्युत होय तीजे नरक तक जाय, वहां का निकसा तीर्थंकर होय तो होय। अर चौथे का निकसा तीर्थंकर न होय कदाचित् चरम शरीरी होय तो होय। अर पांचवें से निकषा कदाचित् साधु होय तो होय। जे जीव पहिले दूजे तीजे से निकसे तीर्थंकर होवें उन जीवों का मरण सै छै महीने पहिले उपसर्ग दूर होय।।65।। पहिले नरक विषे नारकी मूवा अर उसकी जगह दूजा तब ही उपजे अर अंतर पड़े तो पहिले नरक विषे अड़तालीश घड़ी का अन्तर पडे, यह अंतर कथन अन्तर्यामी ने कहा।।66।। अर दूजे नरक अन्तर पड़े तो दिन सात, तीजे नरक दिन पंद्रह चौथे नरक मास 1 पांचवें नरक मास 2 छठे नरक मास 4 सातवें नरक मास छह।।67।।

भावार्थ – नरक में जे नारकी हैं, उन में घटे-बढ़े नहीं। एक मरे एक उपजे जो अंतर पडे तो इतना पडे, यह मिथ्याती महापापी बहुत आरम्भ-परिग्रह के धारक, निर्दय, मृषावादी, परधन, परदारा के हरणहारे महालोभी, अनंतानुबंधी, चौकड़ी का है उदय जिसके मांस आहारी मद्यपानी मधु भक्षक सात व्यसनों के सेवनेहारे अन्याय मार्गी अर लुटेरे विष देनेहारे नरक जांय सो नरक दुष्ट मनुष्य तथा दुष्ट तिर्यंच गति पावे एकेन्द्री से ले चौइन्द्री पर्यंत तो नरक में न जाय पंचेन्द्री ही जांय उन में असैनी तो पहिले तक ही जावे आगे न जावें। अर जल के सर्प दूजे नरक तक जावें।

अर पक्षी तीजे नरक तक जावें। अर भुजंग चौथे नरक तक जावें। अर सिंह पांचवें तक जावें अर स्त्री छठे नरक तक जावे। अर मनुष्यों में पुरुष तथा महामछ सातवें तक जावें।।70।। सातवें का

www.vitragvani.com

निकसा लगता ही सात में जाय तो दुष्ट से दुष्ट तिर्यंच होय, दूजी वार सातमें नरक एक बार जाय ही है, अर नरक में जावे तो जावे। अर छठे का निकसा लगता ही जाय तो दुष्ट मनुष्य तिर्यंच होय दोय बार अर लगता। अर पांचवें का निकसा लगता ही पांचमें जाय तो दुष्ट नर तथा पशु होय अर तीन बार अर लगता जाय, अर चौथे का निकसा लगता वहां ही जाय तो चार बार फेर जाय अर तीसरे का निकसा नर तिर्यंच होय तीजे ही जाया करे तो पांच वार वहीं फेर जाय, अर दूजे नरक से निकलता जाय तो दुष्ट मनुष्य पशु होय तो छै बार दूजे में ही फेर जाय। अर पहिले नरक का निकसा वहां ही जाय दुष्ट मनुष्य तिर्यंच होय सात वार फेर लगता ही जाय तो इस भान्ति जाय अर नरकों विषे जीव अनन्ती बार गये अर जायेंगे।।73।।

अर यह नियम है कि सातवें से निकसा दुष्ट तिर्यंच होय एक बार नरक ही जाय अर छठे का निकसा मनुष्य होय तो होवे। परन्तु संयमी न होय। अर पांचवें से निकसा तद्भव मोक्ष न जावे मुनिव्रत धरे तो धरे। चौथे के निकसे चरम शरीरी होवें तो होवें।।73।। अर पहिले दूजे तीजे से निकसे तीर्थंकर होवें तो होवें। यह तीर्थेश्वर की आज्ञा है।।74।। नरक से निकसे पंचेन्द्री तिर्यंच अर मनुष्य होंय, परन्तु बलदेव वासुदेव चक्रवर्ती न होंय ये स्वर्ग ही के आए होंय। अर मिथ्यादृष्टि तो नरक के निकसे तिर्यंच ही होवें अर मनुष्य होंय तो भी होंय अर सम्यक् दृष्टि पूर्वले पाप से नरक विषे गये नरक से निकस उत्तम मनुष्य होंय।।75।।

गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहे हैं – हे श्रेणिक! अधोलोक का विस्तार मैंने संक्षेप कर तुझे कहा है। अब मध्यलोक का विस्तार संक्षेप कर सुनो।।76।। बुधा कहिये विवेकी भगवान के जे वचन वेई भये सर्व प्रकाशी दीप गतियों की कांति की ज्योति कर सदा काल तप्त रूप होय है। कहा कर कैसे होय हैं चाँद–सूर्य से अगोचर जो अधोलोक का अन्धकार उसे जिस वचन रूप दीपक के प्रकाश से दूर कर पदार्थ को देखे हैं।

भावार्थ – अधोलोक विषे चाँद–सूर्य का प्रकाश नहीं महा अन्धकार है सो जिस वचन दीपक के बिना ऐसा अन्धकार विषे वस्तु कैसे भासे। जिनेश्वर रूप सूर्य के प्रकाश कर लोकालोक सब ही भासे तो अधोलोक पदार्थों के अवलोकन कर आश्चर्य है कि जिन–सूर्य के उद्योग विषे अज्ञान अन्धकार कहां रहे है।।77।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ अधोलोकसंस्थाननाम चतुर्थः सर्गः समाप्तः।।4।।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

पाँचवाँ सर्ग
मध्यलोक का वर्णन

अथानन्तर – मध्यलोक का वर्णन करे हैं –

यह मध्यलोक भी मध्य तनु वातवलय के अन्त पर्यन्त तिष्ठा है। सुमेरु पर्वत लक्ष योजन है सो उसकी हजार योजन तो पृथ्वी में जड़ है। अर निन्यानवे हजार योजन ऊंचा है सो जितना सुमेरु ऊंचा है उतनी मध्यलोक की ऊंचाई अर जितनी सुमेरु की जड़ है उतनी मध्यलोक की निचाई।।1।। अर मध्यलोक विषे असंख्यात द्वीप अर समुद्र हैं उनके मध्य में जम्बूद्वीप है अर गोल है आकार जिसका सब ही द्वीप समुद्र गोल वर्तुलाकार हैं द्वीप को बैढे है समुद्र, समुद्र को बैढे अगला द्वीप उसे बैढे अलग समुद्र इस भांति असंख्यात द्वीप समुद्र हैं अर जम्बू नामा द्वीप सबमें आदि सो जम्बू नामा वृक्ष कर शोभायमान है।।2।।

यह जम्बूद्वीप बज्र के कोट कर वेष्टित अपने विस्तार कर लवण समुद्र को स्पर्शे है। इस भांति जम्बूद्वीप का विस्तार लक्ष योजन का है।।1।। अर सुमेरु गिरि इस जम्बूद्वीप के नाभि समान मध्य विषै है।।1।। जम्बूद्वीप की परिक्षेप कहिये प्रदक्षिणा सो योजन तीन लाख सोलह हजार दो सौ सताईस अर कोस तीन धनुष एक सौ अठाइस अंगुल साढ़े तेरह है, अर जम्बूद्वीप को एकत्र घनाकार करिए तो योजन सात सौ कोडि छप्पन लाख चौरानवे हजार एक सौ पचास होय अर इस जम्बूद्वीप विषे क्षेत्र सातों के नाम अर विस्तार आगे कहेंगे।

सुमेरु एक 1 देवकुरु, उत्तरकुरु दो अर जम्बू तथा शाल्मली दो वृक्ष दो अर कुलाचल छौ, उन विषे द्रह छौ अर उन द्रहों विषे चौदह महानदी 14 अर बिभंगा नदी बारह अर बक्षारगिरि सौलह अर राजधानी चौंतीस अर वैताड्य चौंतीस अर वृषभाचल चौंतीस अर 34 वैताड्यों को गुफा अडसठ अर नाभि गिरि चार अर एक एक वैताड्य विषे विद्याधरों की पुरी प्रत्येक प्रत्येक 110 सो चौतीसों की पुरी 3740 ।।11।। इन सबों कर यह जम्बूद्वीप शोभे है। यह जितने कहे इनसे दूने धातकी खण्ड दूजे द्वीप में सोहे हैं, अर जितने धातकी खण्ड में उतने ही पुष्करार्ध में जानो।।12।। यह अढाई द्वीपों का संक्षेप व्याख्यान किया।

अब जम्बूद्वीप के सात क्षेत्रों के नाम सुनो – पहिला भरत एक 1 दूजा हेमवत दो 2 तीजा हरि तीन 3 चौथा विदेह चार 4 पांचमा रम्यक 5 छठा हैरण्यवत 6 सातमां ऐरावत 7, सो ऐरावत तो सुमेरु की उत्तर की ओर है। अर भरत क्षेत्र सुमेरु की दक्षिण ओर है अर जो ये सात क्षेत्र कहे हैं सो इनमें

भरतक्षेत्र के विस्तार से चौगुणा विस्तार हेमबत का है एक अर हेमवत से चौगुणा हरिक्षेत्र का एक अर हरिक्षेत्र से चौगुणा विदेह का एक अर विदेह से चौथा भाग रम्यक का एक अर रम्यक से चौथा भाग हेरण्यवत का 1 अर हेरण्यवत से चौथा भाग ऐरावत का 1 भरत का ऐरावत का विस्तार बरोबर है।।14।।

अर छह कुलाचलों के नाम – हिमवन् 1 महाहिमवन् 2 निषध 3 नील 4 रुक्मी 5 शिखरिणी 6। सो हिमवन् से चौगुणा महाहिमवन् का है 1 अर महाहिमवन् से चौगुणा निषध 1 अर निषध नील बरोबर हैं 1 अर नील से चौथा भाग रुक्मी 1 अर रुक्मी से चौथे भाग शिखरणी 1 हिमवन् अर शिखरणी का विस्तार बराबर है 1 दक्षिण के अर उत्तरकेयों का बराबर है ।।16।। अर भरत क्षेत्र का विस्तार 526 योजन अर भाग छह अर योजन का जो उगनीसमा भाग, सो कला कहिए, सो यह क्षेत्र जम्बूद्वीप के विस्तार को 190 भाग करिए उसमें एक भाग है अर भरत क्षेत्र से दूना हिमवन् पर्वत सो 1052 योजन 12 कला अर हिमवन् से दूना हेमवत क्षेत्र सोन 2105 योजन अर कला 5 अर महाहिमवन् पर्वत 4210 योजन अर कला 10 अर हरिमक्षेत्र 8481 योजन अर कला 21 अर निषधाचल 16842 योजन अर कला 2 अर विदेह क्षेत्र 33684 योजन अर कला 4 अर नीलाचल 16842 योजन अर कला 2 अर रम्यकक्षेत्र सो 8421 योजन अर कला।।1।।

अर रुक्मी पर्वत 4210 योजन कर कला 10 अर हेमवत क्षेत्र 2105 योजन कर कला 5 अर शिखरी पर्वत 1052 योजन कला 12 अर ऐरावत 526 योजन कर कला 6 क्षेत्र से दूना पर्वत अर पर्वत से दूना क्षेत्र सो यह गिनती तो विदेह क्षेत्र तक है अर विदेह से आधा नील अर नील से आधा रम्यक उससे आधा रुक्मी उससे आधा हैरण्यवत् उससे आधा शिखरी। अर शिखरी से आधा ऐरावत।।19।।

अब सप्त क्षेत्रों का विस्तार लिखते हैं।

इस भरत क्षेत्र के मध्य एक विजयार्द्ध गिरि है, सो उसकी लंबाई एक ओर तो पूर्व के समुद्र तक है अर एक ओर पश्चिम के समुद्र तक है सो विद्याधरों के निवास कर शोभे है।।20।। विजयार्द्ध पृथ्वी से पच्चीस योजन ऊंचा है। अर सवा छै योजन इसकी पृथ्वी विषैं जड़ है। अर यह पर्वत रूपा के वर्ण सुफेद है योजन 50 चौड़ा है अर पृथ्वी से दस योजन ऊंचे चढ़िये तब दो विद्याधरों की श्रेणी हैं सो दो श्रेणी का विस्तार दस दस योजन चौड़ा है अर लंबाई तो समुद्र पर्यन्त है।।21।। श्रेणी दोय हैं उन विषैं एक दक्षिण श्रेणी एक उत्तर श्रेणी सो दक्षिण विषैं नगर 50 अर उत्तर श्रेणी विषैं नगर 60 ये सब ही नगर सुरपुर समान है अर इन दोनों श्रेणी से फिर दस योजन ऊंचे चढ़िये तहां अभियोग जाति के देवों के क्रीड़ा योग्य दस दस योजन दो श्रेणी हैं उन विषैं अनेक नगर हैं। फिर पांच योजन ऊंचे चढ़िये

वहां दस योजन के विस्तार विजयार्द्ध देव की पूर्णभद्रा नाम श्रेणी है।।25।।

अर विजयार्द्ध के ऊपर नव शिखर हैं, उनके नाम कहे हैं – सिद्धायतन 1 दक्षिणार्धक 2 खण्डप्रताप 3 पूर्णचन्द्र 4 विजयार्द्ध कुमार 5 मणिभद्र 6 तमिस्रगुहक 7 उत्तरार्द्ध के 8 अर नवमां वैश्रवण 9 ये नवकूट गिरि के शिखर सोहे हैं। शिखरों की ऊंचाई योजन 6 । अर चौड़ाई मूल विषैं तो योजन 6। अर मध्य विषैं चौड़ाई योजन 5 किंचित् ऊन अर ऊपर की चौड़ाई योजन 3 कछु इक अधिक।।29।। पहिला सिद्धायतन कूट उसमें पूर्व सन्मुख जिनेश्वर का अकृत्रिम चैत्यालय है, सो चैत्यालय पौन कोस ऊंचा है, अर आधा कोस चौड़ा है, अर एक कोस लम्बा अविनाशी है।।31।। भरत क्षेत्र के अर्द्धभाग विषैं विजयार्द्ध गिरि उनकी प्रत्यंचा कहिए फिर उसका विस्तार बीच का 9738 योजन अर कला 12 अर इस फिडच का लघु धनु पृष्ठ 9766 योजन अर कला 1 अर विजयार्द्ध का माहिला बाण 238 योजन अर कला 3 अर बारिला धनुपृष्ठ 10720 योजन अर कला।।11।।

भावार्थ – बीच की जीवा तो 49766 योजन कर कला 1, अर बारली जीवा 1743 योजन अर कला 15 अर विजयार्द्ध का बारला बाण योजन 288 अर कला 3 अर विजयार्द्ध की चूलिका का घनकार योजन 486 किंचित् ऊन अर विजयार्द्ध पूर्व पश्चिम दोनों तरफ की भुजा का प्रमाण योजन 488 अर कला 16 ।। अर हिमवन् पर्वत की दक्षिण दिशा विषैं लघु जीवा 10471 योजन अर कला 6 अर हिमवान् लघु धनुपृष्ठ 14528 योजन, अर कला 11 ।।41।।

अर इसका बाण 526 योजन कला 6। 42 अर हिमवन् की चूलिका का विस्तार 1875 योजन अर कला 6 ।।43।। अर हिमवन् की पूर्व पश्चिम भुजा का प्रमाण 1892 योजन अर कला।।7।। अर हिमवन् पर्वत ऊंचा योजन 100 अर पृथ्वी विषैं जड़ योजन 25 अर चौड़ाई 1052 योजन अर कला 12 हिमवन् की जीवा योजन 24000 अर कला 1 अर बृहदनु पृष्ठ 250230 योजन अर 4 कला अर इसका बाण 1578 योजन अर कला 18 अर इस गिरि की चूलिका का भाग 5230 योजन अर 7 कला इसकी भुजा 5350 योजन अर।।12।। कला।।51।। अर इस हेममयी गिरि के ग्यारह शिखर उनमें पहिला शिखर सिद्धायतन उस विषैं एक भगवान् का अकृत्रिम चैत्यालय है।

ग्यारह शिखरों के नाम – सिद्धायतनकूट 1 हिमवान् 2 भरतकूट 3 इलाकूट 4 गंगाकूट 5 श्रियकूट 6 रोहित 7 सिन्धु 8 सुरादेवी 9 हैमवत 10 वैश्रवण 11 ।।54।। ये सब ही कूट पच्चीस योजन तो ऊंचे हैं अर मूल विषैं चौड़े योजन 25 अर मध्य विषैं चौड़े योजन।18। अर अंत विषे चौड़े योजन12।।56।। अर हिमवान् पर्वत से परे दूजा क्षेत्र हैमवत सो चौडा 2105 योजन अर कला 5 उसकी जीवा 37674 योजन अर 16 कला।।58।। अर इसका धनुपृष्ठ 38740 योजन अर 10 कला अर इस धनुष का बाण 3684 योजन अर 4 कला।।59।। अर हैमवत् क्षेत्र की चूलिका 6371 योजन अर 7 कला।।60।। अर

इस क्षेत्र की भुजा 6795 योजन अर 3 कला।।61।। इस क्षेत्र से परे दूजा पर्वत महाहिमवन् सो 4210 योजन अर 10 कला चौड़ा।।62।। अर ऊंचा योजन 200 अर पृथ्वी विषैं जड़ योजन 50 अर इसका जवा 5393 योजन अर 6 कला।।63।। अर इसकी जीवी लघु धनुपृष्ठ 57293 योजन अर 10 कला।।65।। अर इसका बाण 7894 योजन अर 14 कला, अर इस पर्वत की चूलिका 8128 योजन अर 4।। कला अर इसकी भुजा 9276 योजन और 9।। कला, ओर इस पर्वत के शिखर आठ रूपा मय रत्नों कर मण्डित सदा सोहे हैं। अर अकृत्रिम हैं, अविनश्वर हैं।

कूटों के नाम सिद्धायतन – 1 महा हिमवत् 2 (हिमवत् 3) रोहित 4 रोहिता कूट 5 ह्रीकूट 6 हरिकांत 7 हरिवर्ष 8 वैडूर्य रत्नमय ये अष्ट शिखर 50 योजन ऊंचे अर शिखरों की चौड़ाई मूल विषैं योजन 50 अर मध्य विषै 37।। अर ऊर्द्ध विषे योजन 25।।72।। अर इस पर्वत से परे तीजा क्षेत्र हरि उसका विस्तार योजन 8421 अर 1 कला ।।73।। अर इसकी जीवा योजन 73901 अर कला 17 अर इस जीवा का धनुपृष्ठ 84016 योजन अर कला 4 अर इसका बाण 16315 योजन अर कला 15 अर इसकी चूलिका 9995 योजन अर 5।। कला अर इसकी भुजा 13361 योजन अर 6।। कला।।75।।

अर या क्षेत्र के परे तीजा निषधाचल सो ऊंचा 400 योजन अर पृथ्वी विषे जड़ 100 योजन अर इस पर्वत की जीवा 94156 योजन अर 2 कला अर इसका धनुपृष्ठ 124346 योजन अर कला 9 अर बाण 23157 योजन कला 17 अर चूलिका इसकी 10127 योजन 2 कला भुजा 20165 योजन अर 28 ।। कला।।85।। अर यह निषधाचल तत्काल के गाले स्वर्ण के वर्ण हैं। उसके शिखर नव सर्व रंगरूप रत्नमय किरणों कर देदीप्यमान हैं।।86।। शिखरों के नाम – सिद्धायतन 1 निथिकूट 2 हरिवर्षकूट 3 विदेहकूट 4 ह्रीकूट 5 घृतिकूट 6 शीतोदाकूट 7 विदेहकूट 8 रुचककूट 9। ये नव शिखर सब ही सौ सौ योजन ऊंचे अर शिखरों की मूल विषें चौड़ाई योजन 100 अर मध्य विषें 75 योजन अर ऊर्द्ध विषैं शिखरों की चौड़ाई 50 योजन।।89।। अर निषधाचल के परे विदेह नामा क्षेत्र उसका विस्तार तेतीस हजार छः सौ चौरासी योजन अर 4 कला।।90।। अर इसकी जीवा लाख योजन अर धनुपृष्ठ 158113 योजन अर 16 कला अर इसका बाण 50000 योजन अर इस विदेहक्षेत्र की चूलिका 2921 योजन अर 18 कला अर इसके भुजा दो 16883 योजन अर सवा तेरह कला।

सो यह जो जम्बूद्वीप के दक्षिणार्द्ध का वर्णन कीया, सो ही उत्तरार्द्ध का वर्णन जानना। जो वर्णन भरत का सो ऐरावत का अर जो वर्णन हिमवन का सो शिखरी का अर जो वर्णन हेमवत् क्षेत्र का सो ही हैरण्यवत् का अर जो वर्णन महा हिमवन का सो ही रुक्मी का है, और जो वर्णन निषध का सो ही नील का विदेह तक तो दूने दूने अर विदेह से आधा नील, नील से आधा रम्यक् अर रम्यक् से

आधा रुक्मी अर रुक्मी से आधा हैरण्यवत् अर हैरण्यवत् से आधा शिखरी, शिखरी से आधा ऐरावत इस भान्ति आधे आधे घटते आए जीवा धनुपृष्ठ पार्श्वभुजा अर चूलिका – ये सब विस्तार विदेह तक तो दूने-दूने बढ़ते गए अर विदेह आधे आधे घटते गए।।97।।

नीलाचल वैडूर्य मणिमय के शिखर नव, उसके नाम – सिद्धायतन 1 नीलकूट 2 पूर्व विदेहकूट 3 सीताकूट 4 कीर्तिकूट 5 नरकान्तकूट 6 पश्चिम विदेहकूट 7 रम्यककूट 8 अपदर्शन कूट 9 ये नव शिखर नीलाचल के निषधाचल के शिखर समान ऊंचे अर मूल मध्य ऊर्ध्व विषे शिखरों की चौड़ाई निषधाचल के शिखरों के समान जानो।।98।। अर रूपामई रुक्मी पर्वत उसके शिखर आठ हैं, उनके नाम – सिद्धायतनकूट 1 रुक्मीकूट 2 रम्यकूट 3 नारीकूट 4 बुद्धिकूट 5 रूपकूट 6 हैरण्यवत् कूट 7 मणि कांचन कूट 8 । इस पर्वत की ऊंचाई और विस्तार कूटों का मूल मध्य ऊर्द्ध विषे महाहिमवन् समान जानो।।99।। अर शिखर पर्वत के शिखर ग्यारह उनके नाम – सिद्धायतन 1 शिखरीकूट 2 हैरण्यवत् कूट 3 सुरदेवी कूट 4 रक्ताकूट 5 लक्ष्मीकूट 6 सुवर्णकूट 7 रक्तवतीकूट 8 गंगदेव्याकूट 9 ऐरावत कूट 10 मणिकांचन कूट 11 । ये ग्यारह कूट हिमवन् के शिखर समान शोभा कर संयुक्त जानो अर आदि मध्य अन्त विषें विस्तार शिखरों का अर ऊंचाई शिखरों की अर सुन्दरता हिमवन् समान जानो।

जैसा वर्णन विजयार्द्ध भरत क्षेत्र का कहा, तैसा ही ऐरावत का है। उसके शिखर नव पंच प्रकार रत्नमई महादेदीप्यमान शोभे हैं। 9 शिखिरों के नाम – सिद्धायतन कूट 1 उत्तरार्द्ध कूट 2 तमिस्रगुहकूट 3 मणिभद्र कूट 4 विजयार्द्ध कुमार कूट 5 पूर्णभद्र कूट 6 खण्ड प्रयात 7 दक्षिणार्द्ध 8 वैश्रवणकूट 9 यह नव शिखर विजयार्द्ध के भरत क्षेत्र के विजयार्द्ध समान जानो।।12।। अर जे षट् कुलाचल कहे हैं, वे सातों क्षेत्रों को धरे हैं उससे इनको वर्षधर कहिए वर्ष नाम क्षेत्र का है 1 षट् कुलाचलों के दोनों ओर अनादि सिद्ध अकृत्रिम वन हैं। वे वन छह ऋतु के फल फूलों कर भरे, जे नम्रीभूत जे वृक्ष उनकर भरे महा मनोहर हैं अर पक्षियों के समूह अर भ्रमरों के जे समूह उनके मधुर शब्द कर महा रमणीक है। एक एक कुलाचल के दो दो वन हैं सो लम्बे तो पर्वत की लंबाई समान पूर्व पश्चिम के समुद्र पर्यंत हैं अर चौड़े योजन आध, नानाप्रकार की मणि के कोट जिनके एक एक पर्वत के दोनों तीर वन खण्ड सोहे हैं, अर वनों का कोट आधा योजन ऊंचा अर पांच सौ धनुष चौड़ा।।16।। अर नानावर्ण के भले भले जे रत्न उनके कोट की भित्ति सो कोट की भित्ति के उचित रत्नों के तोरण सोहे हैं अर पहाड़ों के ऊपर सर्व ओर मणिमई महामनोज्ञ दो कोस ऊंची पदमवेदी है।।18।।

इस मध्यलोक विषैं द्वीप समुद्र अर पृथ्वी नदी द्रह पर्वत नगर अर उनके कोटों की ऊंचाई अर चौड़ाई का यह ही प्रमाण जानों। ऊंचाई योजन आधा, चौड़ाई धनुष पांच सौ।।19।। अर इन छहों

कुलाचलों मध्य छह द्रह हैं पूर्व पश्चिम समान है लम्बाई जिनकी।।20।। द्रहों के नाम – पद्म 1 महापद्म 2 तिगिंछ 3 केसरी 4 महा पुण्डरीक 5 पुण्डरीक 6 ।।21।। इन छहों द्रहों के मध्य से चौदह नदी निकसी उनमें सात तो पूर्व दिशा की ओर के समुद्र में गई, अर सात पश्चिम के ओर से समुद्र में गई। नदियों के नाम – गंगा 1 सिन्धु 2 रोहित 3 रोहितास्या 4 हरित 5 हरिकांता 6 सीता 7 शीतोदा 8 नारी 9 नरकांता 10 सुवर्णकूला 11 रूप्यकूला 12 रक्ता 13 रक्तोदा 14 । ये चौदह महानदियां हजारों नदियों सहित समुद्र में मिलीं।

पहिला पद्मद्रह तो हजार योजन लम्बा अर पांच सौ योजन चौड़ा अर दश योजन औंडा उसकी चौगिरद वेदी कहिए कोट की भित्ति है, सो जितनी हिमवन् की भित्ति है, उतनी ही उसकी है। महाशुभ शीतल सुगन्ध जल कर यह द्रह सर्वत्र भरा है अर इस पद्मद्रह विषे जल से ऊंचा एक योजन के विस्तार कमल है, सो आकाश विषे सोहे है, अर जिसके मध्य एक कोस की कर्णिका है सो आध योजन निकस कर सोहे है। सो पद्मद्रह से तीजे तिगिंछद्रह तक तो दूनी दूनी लम्बाई चौड़ाई जानो। अर तिगिंछ से केसरी विषे सब विस्तार आधा अर केसरी से महा पुण्डरीक का आधा अर उससे पुण्डरीक का आधा सो इनमें देवियों के निवास के मन्दिर हैं।

देवियों के नाम – श्रीः 1 ह्रीः 2 धृति 3 कीर्ति 4 बुद्धि 5 लक्ष्मी 6 सो इनमें देवियों की आयु एक पल्य 1 अर इनमें श्री 1 ह्री 2 धृति 3 तो सौधर्म इन्द्र की नियोगिनी, 1 अर कीर्ति 4 बुद्धि 5 लक्ष्मी 6 ईशान इन्द्र की योगिनी हैं। इन देवियों के तीन तीन सभा अर सामानिक देव इनके सेवक 31 अर पद्मद्रह के पूर्व दिशा के द्वार गंगा निकसी अर सिन्धु, पश्चिम के द्वार निकसी 2 रोहित उत्तर के द्वार निकसी।।32।। अर दूजा द्रह महापद्म उससे रोहितास्या 4 अर हरित निकसी 5, तिगिंछ से हरिकांता 6 शीतोदा निकसी 7 अर केसरीद्रह से शीता 8 नरकांता निकसी 9 अर महापुण्डरीक से नारी 10 अर रूप्यकूला निकसी 11 अर पुण्डरीक से सुवर्णकला 12 रक्ता रक्तोदा निकसी 13 निज द्वारों कर ये नदी निकसी वे द्वार रत्नों के तोरणों कर दैदीप्यमान हैं।।35।।

अर सबा छै योजन गंगा का प्रवाह का पाट अर ऊण्डा कोस आध यह तो निकास विषें विस्तार जानों। अर द्वारों के तोरण नानाप्रकार की मणियों कर मनोहर ऊँचे नव योजन के आठ भाग करिए उनमें भाग तीन लीजे 1 जब गंगा पद्मद्रह से निकसी तब हिमवन् पर्वत पै 500 योजन तो पूर्व की ओर गई पीछे उछल कर गंगाकूट से दक्षिण दिशा की ओर भरत क्षेत्र विषें आई कछु एक अधिक 100 योजन तो आकाश को उलंघ कर पर्वत से पूर्व के द्वार पड़ी वहां पूर्व का द्वार सवा छह योजन के विस्तार गोमुखाकार है उस विषें अर्द्ध योजन प्रमाण जिव्हा सो गोमुखी होय गंगागिरि सो गाय के सींग के आकार गिरि 40 श्री देवी के मन्दिर के आगे होय निकसी सो भूमि विषें दस योजन के विस्तार

होती भई पृथ्वी विषे 60 योजन चौड़ा अर 10 योजन ऊंचा एक वज्रमुख नाम कुण्ड है उसके मध्य आठ योजन चौड़ा अर जल से दो कोस ऊंचा, ऐसा एक द्वीप कहिए टापू है। अर उस द्वीप के मध्य एक वज्रमई पर्वत है सो पर्वत 10 योजन ऊंचा है अर मूल विषें 4 योजन अर मध्य विषें 2 योजन अर अन्त विषें एक योजन चौड़ा है फिर उस पर्वत के शिखर विषें एक वज्र मय मन्दिर सोहे है। सो वह मन्दिर मूल विषैं तो 3000 धनुष चौड़ा है मध्य विषैं 2000 धनुष चौड़ा है अर शिखिर विषें 1000 धनुष चौड़ा है। उसके ऊपर रत्नमई महाकांति संयुक्त एक गंगा नाम कूट है उसका विस्तार श्लोक में कहे हैं –

अंते पंचशतायामं तदर्द्धचापि विस्तरम्।
द्विसहस्रधनुस्तुंगं भितिवज्रमयं गृहम्।।57।।

अर शिखर विषें पांच सौ धनुष लम्बा है अर अढ़ाई सौ धनुष के विस्तार है अर दो हजार धनुष ऊंचा है सो ऐसा वज्रमई मन्दिर सोहे है।।47।। फिर उस मन्दिर के वज्र कपाट नामा वज्रमई द्वार सोहे है। वह द्वार 80 धनुष ऊंचा है अर 40 धनुष चौड़ा है।।48।। अर वह गंगा नदी उस कुण्ड की दक्षिण ओर जाय कर विजयार्द्ध की गुफा विषें अष्ट योजन के विस्तार होती भई, सो विजयार्द्ध गिरि की गुफा से निकस चौदह हजार नदियों सहित साढ़े बासठ योजन के पाट को धरे लबण समुद्र की पूर्व दिशा की ओर प्रवेश करती भई सो प्रवेश करणे का द्वार पौना चौरानवे योजन ऊंचा है अर आधा योजन ओंड़ा है अर साढा बासठ योजन चौड़ा है अर तोरणों कर संयुक्त है।।50।।

इस भाँति सर्व प्रकार गंगा की रचना समान सिंधु नदी की रचना जाननी, अर विदेह पर्यन्त सब नदियों की चौड़ाई बा नीव तोरण से दूने दूने जाननी अर चौड़ाई भी सब नदियों की दूनी जाननी। अर उन नदियों के स्थानक विषे दिक्कुमारी देवी हैं वे यथा स्थानक विषें बसे है।।52।। फिर जो रोहितास्या नामा नदी है सो पर्वत पर दो सौ छिहत्तर योजन जायकर पर्वत से श्रीदेवी के मन्दिर विषें प्राप्त होती भई।।53।। वहां से निकस 1605 योजन सूधी जायकर नाभिगिरि की प्रदक्षणा देकर पश्चिम के समुद्र में प्रवेश करती भई।।54।। फिर रोहिता नामा जो नदी है, सो भी रोहितास्या समान प्रमाण को लिये पूर्व के समुद्र में प्रवेश करती भई। जे छहूं उत्तर दिशा की नदी हैं उनकी रचना दक्षिण की नदियों के समान जानो। यथायोग्य परिवारादि रचना समान जाननी।।56।। वहाँ गंगा, रोहिता, हरि, सीता, नारी, सुवर्णकूला, रक्ता ये सप्त नदी तो पूर्वगामिनी हैं अर सिंधु, रोहितास्या, हरिकांता, सीता, नरकांता, रूप्यकूला, रक्तोदा यह सप्त नदी पश्चिम दिशा के समुद्र की ओर प्रवेश करे हैं।।57।।

सकल विदेहक्षेत्र का विस्तार 33684 योजन अर 4 कला है। सुमेरु पर्वत की पूर्वोत्तर दिशा अर सीता नदी की पूर्व दिशा अर नीलाचल के समीप जंबू वृक्ष का स्थल है।।58।। सो जंबू वृक्ष के स्थल के ऊपर चौगिरद रत्नों का कोट है सो कोट दो कोस ऊंचा है, अर 500 धनुष चौड़ा है, अर वृक्ष का

स्थल मूल विषें विस्तार कोस 500 अर मध्य विषें कोस 8 अर ऊर्द्ध विषैं कोस दो।।59।। जांबूनद कहिये स्वर्णमयी यह वृक्ष उसकी पीठिका ऊंची कोस आठ अर मूल विषें विस्तार कोस 12 अर मध्य विषे कोस 8 अर ऊर्द्ध विषे कोस 4 अर वृक्ष का विस्तार मूल विषें कोस एक। अर पेड़ की ऊंचाई योजन दो अर पृथ्वी विषें जड़ कोस दो अर शाखा का विस्तार योजन आठ।।60।। यह वृक्ष रत्नमयी पृथ्वीकाय है। महा कहिये मोटा है पेट जिसका अर वज्रमयी शाखा है जिसकी अर सोहे है रूपामई पत्र जिसके अर मणिमई पुष्प अर फल उसकी किरणों कर अकूरे फैल रहे हैं।।61।। अर अत्यंत आरक्त जे पल्लव कहिये कौंपल उनका संतान कहिये समूह उस कर अति शोभायमान करी हैं सब दिशा जिसने पहिली जो पीठिका का वर्णन किया उस विषें जंबूवृक्ष का प्रकाश रूप सोहे है। पृथ्वी कायरूप स्वरूप जिसका अर नाना प्रकार की जे शाखा उन कर शोभित है। उस वृक्ष की चारों दिशा की तरफ चार बड़े डाले हैं, उनमें उत्तर की ओर के डाहले के विषें भगवान का मंदिर है अर तीन डाहलों पर देवियों के निवास हैं।।61।।

यह वृक्ष पृथ्वीकाय है रत्नमयी जड़ है अर हरित मणिमई पेड़ है आरक्त कोंपल या वृक्ष का रत्नमई ही विस्तार है। अर जंबू वृक्ष के नीचे तीस योजन चौड़े अर पचास योजन ऊंचे आदर अर अनादर नामा दोय देवों के मन्दिर हैं। वे देव इस वृक्ष के अधिष्ठाता हैं।।62।। फिर हैमवत हरिरम्यक हैरण्यवत इन चार क्षेत्रों के मध्य चार पर्वत श्रद्धावान् 1 विजयवान् 2 पद्मवान् 3 गंधवान् 4 ये चार पर्वत हैं।।63।। सो एक हजार योजन तो ऊंचे हैं। अर मूल विषें 1000 योजन चौड़े हैं अर मध्य विषे 750 योजन अर शिखर विषे 500 योजन चौड़े हैं।।64।। सो रोहिता रोहितास्या आदि देकर जो दो नदी हैं, वे पूर्व-पश्चिम की तरफ पर्वत से आध योजन उरे प्रदक्षिणा देकर समुद्र में प्राप्त होय हैं जैसे सीता सीतोदा नदी मेरु गिरि की प्रदक्षिणा देकर समुद्र को प्राप्त होय हैं तैसे इन पर्वतों की प्रदक्षिणा देकर नदी समुद्र में प्रवेश करे है। फिर इन पर्वतों के शिखर पर मन्दिर हैं, उन विषें स्वाती 1 अरुण 1 पद्म 1 प्रभास 1 ये व्यंतर देव बसे हैं।।65।।

फिर जंबूद्वीप विषे क्षेत्र पर्वत नदी आदि रचना पाइए है उनसे दूनी घातकी खंड वा पुष्करार्द्ध विषे रचना पाइए है।।66।। अर संख्यात द्वीप जावें तब एक अर जंबू नामा द्वीप है सो उस द्वीप विषे भी पूर्वे कहे जो व्यंतर उनके नगर पाइये हैं।।67।। फिर मेरु अर नील पर्वत के बीच तो उत्तरकुरु भोगभूमि है फिर मेरु अर निषध पर्वत के मध्य देवकुरु भोगभूमि है सो उन भोग भूमियों की चौड़ाई का प्रमाण 11842 योजन अर 2 कला, फिर उनकी जीवा 53000 धनुष अर तिनका धनुपृष्ठ 46018 योजन अर 12 कला।।69।। अर भोग भूमि की वृत्ती कहिये चौड़ाई 71043 योजन अर 4 कला।।70।। यहां एक योजन की नव कला लीनी उनमें चार कला अर विदेह क्षेत्र का विस्तार 33684 योजन अर 4 कला।।71।।

अर सुमेरु की पूर्व अर उत्तर दिशा के मध्य भाग विषे अर सीता नदी के पूर्व की ओर नीलाचल के समीप जंबूवृक्ष का स्थल है।।72।। सो स्थल के ऊपर चौगिर्द महा सुन्दर रत्नों की वेदी है, सो 500 धनुष चौड़ी अर दो कोस ऊंची।।73।। उस स्थल का विस्तार अधो भाग विषें 500 कोस अर मध्य विषे कोस 8 अर अन्त विषे कोस दो यह स्थल की चौड़ाई कही।।74।। सुवर्णमय वह स्थल उसकी पीठिका कोस ऊंची आठ अर चौड़ी मूल विषे 12 कोस अर मध्य विषे आठ अर अग्रभाग विषे कोस 4 ।।75।। अर उसकी चौगिर्द अधो अधो कहिए नीचे नीचे छह मणि वेदी हैं अर उनके ऊपर प्रत्येक प्रत्येक पद्मवेदी है।।76।। सो जम्बूवृक्ष मूल विषें एक कोस के विस्तार है अर पेड़ विषें ऊंचाई दो योजन है। अर पृथ्वी विषे ऊंडा दो कोस है अर इसकी शाखा का विस्तार 8 योजन है।।77।। अर पाषाणमई है पेड़ जिसका अर वज्र कहिये हीरा उन मई तो शाखा उन कर शोभित है अर सोहे हैं रूपामई पत्र जिसके उन कर शोभित है अर मणिमई हैं पुष्प अर फल जिसके।।78।। अर रक्त मणि मई पल्लवों का जो समूह उस कर आरक्त करी हैं दिशा जिसने, सो पहिली पीठिका का वर्णन किया है उस विषें यह जंबू वृक्ष का प्रकाश रूप सोहे है।।79।।

सो यह वृक्ष पृथ्वीकाय है वनस्पतिकाय नहीं। नाना प्रकार शाखाओं कर शोभित यह वृक्ष है उसकेचारों बड़े डाहले हैं।।80।। उनमें उत्तर के डाहले विषें भगवान् का अकृत्रिम अद्भुत चैत्यालय है अर उसके तीन डाहलों में आदर अर अनादर नामा जो देव उनके निवास है। जंबूवृक्ष के अधोभाग तीस योजन के विस्तार अर पचास योजन ऊंचे इन दोनों के दो मन्दिर हैं।।82।। अर वेदिका के भीतर सात दिशाओं के विषें सात प्रधान वृक्ष हैं उनके परिवार के रत्न वृक्ष जानों। चार फिर एक सौ आठ फिर चार हजार फिर सोलह हजार फिर बत्तीस हजार फिर चालीस हजार फिर अडतालीस हजार जो सात प्रधान वृक्ष उनका परिवार इस अनुक्रम से।।84।।4।।,108।। 4000।।16000,32000।। 40000।। 48000 इतने वृक्ष भए। सर्व वृक्ष एकत्र करिये तो एक लाख 40 हजार एक सौ उनीस भए 140119 इनमें सात प्रधान वृक्ष भी आ गए हैं।।86।।

फिर सुमेरु के दक्षिण अर पश्चिम के भाग विषे अर शीतोदा नदी के पहले पट विषें निषधाचल के समीप शाल्मली वृक्ष का स्थल सोहे है।।87।। जैसा जंबूवृक्ष का स्थल, वैसा ही शाल्मली वृक्ष का स्थल जानों। ये दोनों पृथ्वीकाय हैं। अर इनके परिवार के वृक्ष सर्व ही पृथ्वीकाय हैं। जैसा वर्णन जम्बूवृक्ष का किया, वैसा ही शाल्मली वृक्ष का जानना।।88।। शाल्मली वृक्ष की दक्षिण दिशा की शाखा विषे भगवान का अकृत्रिम चैत्यालय है। अर उसको तीन शाखा विषे बेणु अर वेणुधारी नामा देवों के निवास हैं।

जैसा वर्णन आगे आदर अर अनादर का किया है वैसा ही इन दोनों का जानों।।89।। जैसे

उत्तरकुरु के अधिष्ठाता आदर अनादर हैं, वैसे देवकुरु के अधिष्ठाता वेणु अर वेणुधारी जानों।।89।। जैसे उत्तरकुरु के अधिष्ठाता आदर अनादर हैं वैसे देवकुरु के अधिष्ठाता वेणु अर वेणुधारी जानों।।90।। अर नीलाचल से दक्षिण दिशा विषे एक हजार योजन सीता नदी के पूर्व तट विषे चित्रकूट अर विचित्रकूट नामा पर्वत हैं।। 91।। अर निषधाचल के उत्तर दिशा विषें सीतोदा नदी के दोनों तटों में यमकूट अर मेघकूट दो पर्वत हैं।।92।। ये नाभगिरि के समान हैं। अर इनके शिखरों विषे देवों के मन्दिर हैं जो कूटों का नाम सो ही देवों का नाम नीलाचल से पांच सौ योजन नीलवान् दह है एक उत्तरकुरु कूट, दूजा चन्द्रकूट, तीजा ऐरावत कूट, चौथा माल्यवान् कूट, ये दह नदियों के मध्य हैं। एक से दूसरे का अन्तर 500 योजन है।।93।। वे दक्षिण के समुद्र से उत्तर के समुद्र तक लम्बे हैं पद्म दह समान इनकी दीर्घता है।।94।। अर निषधाचल की उत्तर की ओर नदी विषे निषध नाम दह है एक दूजा देवकुरु तीजा सूर्य चौथा खलस्य अर पांचवां तड़ितप्रभ।।96।। ये दस दह रत्नों कर चित्रित हैं तट जिनके अर ये सब ही वज्रमूल कहिए हीरों की हैं जड़ जिनके ये महादह उन विषे नागकुमार बसे हैं कमलों के मन्दिर जिनके।।97।।

कैसे हैं कमल, जल से दो कोस ऊंचे हैं अर एक योजन का है विस्तार जिनके अर एक एक दह विषैं एक एक कमल उसकी कर्णिका एक कोस विस्तार में है, अर एक एक कमल मल के समीप प्रत्येक प्रत्येक एक लाख चालीस हजार एक सौ सतरह कमल अर एक एक दह के सन्मुख दस दस पर्वत सोहे हैं कांवन कूट है नाम जिनके सीता सीतोदा नदियों के तट विषे हैं।।100।। ये सब ही कंचनगिरि समान हैं। सौ योजन ऊंचे चौड़ाई में अर मूल विषें तो सौ योजन अर मध्य विषें पचहत्तर योजन चौड़े हैं अर शिखर विषें पचास योजन चौड़े हैं। उनके ऊपर एक एक भगवान की अकृत्रिम प्रतिमा है देवल नांही। एक एक कंचनगिरि पर एक एक प्रतिमा निरालम्ब तिष्ठे है वे प्रतिमा मोक्ष मार्ग की दीपिका हैं। पांच सौ धनुष ऊंची मणिमई सो एक एक मेरु सम्बन्धी दो दो सौ कंचनगिरि सो पांच मेरु सम्बन्धी हजार कंचनगिरि भए, उनमें हजार प्रतिमा हैं।।3।। अर इनके शिखर विषें देवों के क्रीड़ा गृह हैं, उनमें कांचन नामा देव क्रीड़ा करे हैं।।4।। यह तो सीता नदी के उत्तर तट के कूट कहे।

अब दक्षिण दिशा के कूट सुनो – उनके नाम पद्मोत्तर कूट एक, नीलवन् कूट दो। यह तो सुमेरु पर्वत से पूर्व दिशा की अर शीतोदा के दक्षिण तट विषें स्वस्तिक नामा कूट अंजनगिरि नामा कूट फिर सुमेरु के दक्षिण तट विषें अंजन नामा कूट एक, अर शीतोदा के दक्षिण तट विषे कुमद नामा कूट अर सुमेरु से पश्चिम दिशा विषें पलाश कूट फिर सीता के पश्चिम तट विषें अवतंस नामा कूट अर सुमेरु से उत्तर दिशा विषें रोचन नामा कूट अर एक कंचनगिरि एक सुमेरु सम्बन्धी 205 दो सौ पांच मेरु सम्बन्धी 1000 जानो इन विषे देव दिग्गजेन्द्र बसे हैं।।9।। अर सुमेरु पर्वत से पश्चिम अर उत्तर के

भाग विषें गन्धमादन नामा पर्वत है सो सुवर्ण मई सब ओर सुन्दर है अर मेरु के पूर्व अर उत्तर दिशा विषें माल्यवान पर्वत है सो वैडूर्यमणिमई महाज्योतिरूप अति सुन्दर सोहे है।।11।। अर सुमेरु की पूर्व की अर दक्षिण की ओर सौमनस नामा पर्वत है अर पहिला कोण विषें तायेसोनामय विद्युतप्रभ नामा पर्वत है अर जो गजदन्त लम्बाई चौड़ाई में कंचनगिरि के समान हैं।।12।। वे नीलाचल अर निषधाचल के निकट तो 400 योजन ऊंचे हैं अर सुमेरु के समीप पांच सौ योजन ऊंचे हैं। यह जितने ऊंचे हैं, उससे चौथा भाग इनकी जड़ जानो।

अर देवकुरु उत्तर कुरु विषे यह पांच सौ योजन चौड़े हैं अर चारों ही गजदन्तों की दीर्घता योजन तीस हजार दोय सौ नव योजन अर 6 कला अर चारों समान हैं।।14।। अर एक के शिखर सात दूजे के नव, तीजे के सात, चौथे के नव, उनमें पहिला गन्धमादन उनके शिखर उनके नाम कहे हैं – सिद्धायतन, गन्धमादन, उत्तरकुरु, गन्धमालिनी, लोहित, स्फटिक, आनन्द, ये सात कूट गन्धमादन के कहे। अर सिद्धायतन, माल्यवान्, उत्तरकुरु, कक्षा, सागरक, रजत, पूर्णभद्र सीताकूट, हरिसभा नामा कूट, यह नव शिखर माल्यवान् के जानो।।18।। फिर सिद्धायतन, सौमनस, देवकुरु, मांगल, विमल, कांचन, वसिष्ट यह सात शिखर तीजे सौमनस गजदन्तों के जानो। अर चौथा विद्युतप्रभ उसके शिखर नव सिद्धायतन, विद्युतप्रभ, देवकुरु, पद्मक, तपन, स्वस्तिक, सतोज्ज्वल, सीतोदाकूट, 20 हरिशब्द कूट ये नवकूट विद्युतप्रभ के कहे। इन नव कूटों की ऊंचाई गिरि की जड़ समान जानों सो यदि पांच सौ योजन गिरि ऊंचा तो सवा सौ योजन की जड़ जानो। अर इतना ही ऊंचा शिखर यह निश्चय जानो।।22।।

यह चार गजदन्तों के बत्तीस शिखर कहे। उनमें चारों के चारों सिद्धायतन उनमें तो भगवान के चार अकृत्रिम चैत्यालय हैं अर कूटों विषें देव क्रीडा करे हैं। अर चारों ही गजदन्तों के मध्य के दो कूट सो चारों के आठ भये। उनमें आठ दिक्कुमारी बसे हैं। उनके नाम भोगकरा, भोगवती, सुभोगा, भोगमालिनी, वसुमित्रा, सुमित्रा, वारिषेणा, अचलावन्ती, यह आठ दिक्कुमारी हैं।।26।।

अथानन्तर – एक मेरु संबंधी सोला वक्षारगिरि उनके नाम कहे हैं। चित्रकूट, पद्मकूट, नलिनकूट, एकशैल ये चार नीलाचल अर सीता नदी के अंत तक लम्बे हैं। ये तो पूर्व विदेह के कहे हैं।।28।। अर त्रिकूट, वैश्रवण, अंजन अर आत्माजन, ये चार सीता अर निषधाचल को जैसे स्पर्शे ऐसे लम्बे हैं।।29।। अर श्रद्धावान्, विजयवान्, आशीविष, सुखावह।।30।। ये चार पश्चिम विदेह विषे अपनी लंबाई कर शीतोदा अर निषधाचल को स्पर्शे हैं।।31।। चन्द्रमाल, सूर्यमाल, नाममाल, अर मेघमाल – ये चार शीतोदा अर नीलाचल के मध्य तिष्ठे हैं।।32।। नदी के तट विषे इन वक्षारगिरियों की ऊंचाई योजन पांच सौ अर सर्वत्र इनकी ऊंचाई चार सौ योजन जानों।।33।। एक मेरु

संबंधी सोलह वक्षार जानो सो पांच मेरु संबंधी अस्सी जानो सो इन वक्षारों के मस्तक विषे शिखर हैं। उनमें कुलाचलों के नाम से जो कूट हैं उन विषे दिक्कुमारी देवी बसे हैं।

अर नदियों के समीप शिखर विषे भगवान् के अकृत्रिम चैत्यालय हैं अर मध्य के कूटों विषें व्यंतरों के क्रीडा करने के निवास हैं अर भद्रशाल नामा वन सुमेरु की पूर्व दिशा से पश्चिम दिशा तक लंबा है अर नाना प्रकार के वृक्ष अर वेलों कर भर्‍या नीलवर्ण सोहे है दोनों भागों विषे लंबाई बाईस हजार योजन है पूर्व पश्चिम तो एता लंबा है। अर दक्षिण उत्तर भद्रशाल का विस्तार कहिये चौड़ाई ढाई सौ योजन।।37।। भद्रशाल के पूर्व पश्चिम में लम्बी वेदिका कहिये भिती सो एक योजन ऊंची है। अर दो कोस चौड़ी है अर एक कोस ओंडी हैं अर नीलाचल से गृहवती नामा विभंगा नदी सीता विषे जाय मिली अर ह्रदयवती अर पंकवती भी, ये वक्षारगिरि के अंतर विषे तिष्ठी हैं। अर तप्तजला नदी निषधाचल से निकसी सो भी सीता में जाय मिली अर मत्तजला अर उन्मत्तजला ये भी सीता विषे जाय मिली क्षीरोदा स्रोतावाहिनी ये तीन विभंगा निषधाचल से निकसीं अर शीतोदा में मिलीं।।41।। अर उत्तर विदेह विषे पश्चिमी गंधमादिनी एक फेनमालिनी एक उर्णमालिनी ये नीलाचल से निकसी। ये विभंगा नदी के प्रमाण कर रोहिता नदी समान ये विभंगा महानदी से मिली।

भावार्थ – ये बारह विभंगा नदी नीलाचल अर निषधाचल के जड़ विषे जे कुण्ड हैं उनमें से निकसी अर सीता अर शीतोदा महानदियों विषे जाय मिली हैं वहां रत्नों के तोरण हैं उन विषे दिक्कुमारी देवी बसे हैं अर 12 विभंगा नदी प्रत्येक-प्रत्येक 250 सौ नदी का परिवार है सबका योग 336000 होवे अर वक्षारगिरि पर्वतों के मध्य सीता अर शीतोदा दोनों नदियों के तट विषे पूर्व अर पश्चिम के मध्यवर्ती सविदेह हैं ।।44।। उनके नाम कक्षा, सुकक्षा, महाकक्षा, कक्षकावती, आवर्ता, मंगलावती पुष्कला, पुष्कलावती, यह आठ विदेह सीता नदी अर नीलाचल के अन्तराय विषे दक्षिण उत्तर लंबे हैं अर वक्षा, सुवक्षा, महावक्षा, वक्षकावती, रम्य, सुरम्या, रमणी, मंगलावती, यह आठ पूर्व विदेह सीता नदी निषधाचल के मध्य हैं दक्षिण उत्तर लंबे हैं एक एक क्षेत्र छह खण्डों कर युक्त हैं जो चक्रवर्ती का देश है। अर पद्मा, सुपद्मा, महापद्म, पद्मकावती, संख्या, नलिना, कुमदा, सरिता।।49।। यह आठ पूर्व विदेह शीतोदा अर निषधाचल के मध्य हैं दक्षिण अर उत्तर लंबे हैं अर वप्रा, सुवप्रा, महावप्रा, वप्रकावती, गन्धा, सुगन्धा, गन्धला, गन्धमालिनी यह आठ पश्चिम विदेह नीलाचल शीतोदा के मध्य तिष्ठे हैं नीलाचल से शीतोदा पर्यन्त लंबे हैं अर एक एक विदेह के छह छह खण्ड सो छह खण्ड का राज्य चक्रवर्ती करे अर वासुदेव तीन खण्ड का राज्य करे अर एक एक क्षेत्र का 2213 योजन, योजन के अष्ट भाग घाट यह पूर्वा पर विस्तार चौड़ा है।

अर सकल विदेह का विस्तार 33684 योजन अर 4 कला है उसमें से सीता नदी का विस्तार

www.vitragvani.com

योजन 500 घटाया तब विदेह का विस्तार 33184 योजन अर चार कला रहा उसका आधा 16592 योजन अर दोय कला सो क्षेत्र की लंबाई सो जो वक्षार पर्वत अर विभंगा नदी उनकी लंबाई जानो। अर बत्तीस विदेहों में बत्तीस विजयार्द्ध से एक विदेह जितनी चौड़ाई उतनी ही विजयार्द्ध गिरि की लंबाई सो जैसा भरतक्षेत्र अर ऐरावत क्षेत्र के विजयार्द्ध का वर्णन किया वैसा ही बत्तीस विजयार्द्ध का वर्णन जानो, सबके वन वा शिखर पच्चीस-पच्चीस योजन ऊंचे वही सकल वर्णन है इतना विशेष जो भरत ऐरावत के विजयार्द्ध की दो श्रेणी उनमें दक्षिणश्रेणी की नगरी पचास अर उत्तर श्रेणी की साठ अर विदेह के विजयार्द्ध की श्रेणियों में पचपन नगरी हैं एक तो यह विशेष अर दूजा यह विशेष सो विदेह की विजयार्द्धों विषे तो सदा चौथे काल की आदि की रीति अर इन दो क्षेत्रों के विजयार्द्ध विषे ऋषभदेव के समय तो चौथे काल की रीति अर वर्द्धमान स्वामी के समय चौथे काल के अन्त की रीति इसमें घटे वधे नहीं अर विदेहों में सदा एक रीति है सो ही एक रीति वहां के विजयार्द्धों में है।

अर यहां के विजयार्द्ध में महावीर स्वामी से ले महापद्म स्वामी के समय तक आयु वर्ष 120 अर शरीर हाथ 7 ऊंचा, अर महापद्म स्वामी के समय से वधेगा सो चौबीसमें तीर्थंकर के समय कोटि पूर्व आयु अर शरीर पांच सौ धनुष ऊंचा इसके सिवाय विद्याधरों में घाट वाढ़ नहीं, सो विदेह के विजयार्द्धों में प्रत्येक-प्रत्येक एक सौ दस नगरी हैं अर वत्तीस जो विदेह कहे हैं उनमें कक्षादि आठ यहां त्रेसठ शलाका पुरुष उपजे हैं। उनकी राजधानियों के नाम, क्षेमा, क्षमपुरी, अरिष्टा, अरिष्टापुरी खड्गा, मंजूषा, मोषधी, पुण्डरीकनी इन पुरियों में शलाका पुरुष उपजे हैं। यह इन्द्रपुरी के समान पुरी है। यह तो आठ कक्षादिक विदेहों की कही अर सुसीमा, कुण्डला, अपराजिता, प्रभंकरा, अंकावती, पद्मावती, शुभा, रत्नसंचया, यह आठ राजधानियें वक्षादिक आठ विदेहों में अनुक्रम से कही हैं।।61।। ये अर अश्वपुरी, सिंहपुरी, महापुरी, विजयापुरी अरजा विरजा, अशोका, वीतशोका यह आठ राजधानियें पद्मादिक विदेहों की हैं ।।63।। अर विजया, वैजयन्ती, जयन्ती, अपराजिता चक्र, खर्गा, वप्रा अयोध्या यह आठ वप्रादिक आठ विदेहों की कही हैं।।64।।

यह सब ही पुरियें दक्षिण उत्तर की ओर लंबी बारह योजन अर पूर्व पश्चिम लंबी नौ योजन सुवर्ण मई हैं कोट अर तोरण जिनके अर इन पुरियों के हजार हजार बड़े दरवाजे अर पांच सौ छोटे दरवाजे अर 700 सौ खिड़की अर नानाप्रकार रत्न जड़ित महा मनोहर हैं कपाट जिनके अर हजार चौहटे अर 12000 गली, ऐसा इन पुरियों का विस्तार है।।67।। यह नगर अनादि निधन हैं विदेह क्षेत्र विषे प्रलयकाल नाहीं। अपना अपना आयु पूर्ण कर प्राणी मरे हैं परन्तु क्षेत्र की सदा एक रीति है क्षेत्र की रीति पलटे नाहीं, अर नीलाचल के जड़, निकट कुण्ड हैं उनमें से निकसी कछादिक देशों में गंगा अर सिन्धक्षेत्र प्रति दो दो नदी हैं, विजयार्द्ध गिरि को गुफा को उलंघ सीता नदी में प्रवेश करे हैं, पर्वत की

चौड़ाई समान गुफा की लंबाई है अर आठ योजन ऊंची हैं अर बारह योजन चौड़ी हैं अर पचास योजन लंबी है। अर एक एक गिरि प्रति दो दो गुफा हैं।।68।।

अर गंगा को आदि ले सोलह नदी भरत क्षेत्र की गंगा समान हैं अर रक्ता रक्तवती आदि ये सोलह नदी निषधाचल से निकसी अर सीता में प्रवेश करती भई। यह भी गंगादि सोलह प्रमाण हैं सो यह बत्तीस सौ नदी पूर्वविदेह विषे हैं। अर पश्चिम विदेह विषे भी वैसी ही उसी प्रमाण वे ही नाम ये बत्तीस नदी निषधाचल वा नीलाचल से निकसीं, अर शीतोदा नदी में प्रवेश करती भई। यह चौंसठ ही नदियें प्रत्येक प्रत्येक चौदह चौदह हजार नदियों के परिवार कर मण्डित हैं अर देव-कुरु उत्तरकुरु दो भोगभूमि विषे सीता अर शीतोदा महानदी हैं सो प्रत्येक प्रत्येक चौरासी हजार नदियों कर संयुक्त हैं सो दोनों नदियों के तट विषे वियालीस वियालीस हजार नदी प्रवेश करे हैं।

अर सीता शीतोदा जो नदी उन दोनों का समुद्र पर्यन्त एक एक प्रति पांच पांच लाख बत्तीस हजार उनतालीस नदियों का सब परिवार है, पूर्व पश्चिम विदेहों का प्रमाण चौदह लाख चौसठ हजार अठत्तर हैं अर भरतक्षेत्र विषें गंगा अर सिन्धु यह दोनों नदी अर इनका परिवार चौदह चौदह हजार नदी हैं अर ऐरावत क्षेत्र विषें रक्ता रक्तोदा नदी हैं उनका परिवार इन ही के प्रमाण है अर रोहिता अर रोहितास्या सुवर्णकूला अर रूप्यकूला यह चारों नदी प्रत्येक प्रत्येक 2800 परिवार संयुक्त नदी हैं। अर हरित हरिकांता और नारी नारीकांता इन चारों नदियों का परिवार एक एक प्रति छप्पन छप्पन हजार नदी हैं। गंगा सिंधु आदि यह बारह नदियें उनका परिवार सर्व, तीन लाख बानवें हजार 12 नदी हैं। सब जंबूद्वीप की नदियें एकत्र करिये तो सत्रह लाख बानवे हजार नव्वे होय हैं। सो लवण समुद्र में इनका प्रवेश है, अर इस जम्बूद्वीप विषे बत्तीस महा विदेह अर एक ऐरावत एक भरत यह चौतीस क्षेत्र हैं उन विषें चौंतीस वृषभाचल पर्वत हैं।।77।।

अर शीतोदा दोनों नदियों के तट पूर्व पश्चिम विदेह पर्यन्त लंबे वे समुद्र के तट से मिले ऐसे चार वन हैं।।78।। दो देवारण्य दो भूतारण्य यह चार वन हैं अर इन वनों की वेदी का विस्तार भद्रशाल वन की वेदी की न्याई 22209 ।।29।। अर विदेहक्षेत्र के बीच 99000 योजन ऊंचा मेरु है, दोनों भोगभूमि हैं मर्यादा जिसकी।।80।। तीन कटनीकर संयुक्त 99000 योजन सुमेरु सो पृथ्वी विषे प्रसिद्ध है। अर मेरु ऊपर चूलिका 40 योजन ऊंची है उस कर मेरु अति शोभायमान है, अर मेरु की नींव 1000 योजन की है अर मूल विषे चौड़ाई 10000 योजन अर 11 भाग एक योजन के उनमें से 10 भाग लेवें।।83।। अर इसकी परिधि कहिये तो 31910 योजन है अर एक योजन के ग्यारह भागों में अढ़ाई भाग अर पृथ्वी तल से 1000 योजन ऊंचे चढ़िये तो वहां सुमेरु की चौड़ाई दश हजार 10000 योजन हैं अर वहां की परिधि 31622 योजन है तीन कोस दो सौ बारह धनुष तीन हाथ तेरह अंगुल कछुयक

अधिक यह परिधि सुमेरु की जहां भद्रशाल बन है वहां हैं।।88।। फिर भद्रशाल वन से ऊंचा 500 योजन ऊंचे चढिये वहां 500 योजन का चौड़ा नंदन वन है।।89।। तहां सुमेरु की विस्तीर्णता 9954 योजन अर 6 कला सो यह तो व्यास कहा।।90।। अर वहां की प्रदक्षिणा 31479 योजन है।।93।। सो यह तो बाह्य प्रदक्षिणा है अर नंदनवन का भीतर का विस्तार 8954 योजन का है अर वहां की प्रदक्षिणा 28316 योजन अर आठ कला का है।

अर नंदन वन से 62500 ऊपर चढ़िये वहां तीजो सौमनसनामा वन है।।96।। वहां 4272 योजन अर आठ कला का बाह्य विस्तार है। अर वहां की बाह्य प्रदक्षिणा 13511 योजन अर छै कला की है अर जो बारहला विस्तार इससे हजार योजन घाट माहिला विस्तार मुनि कहे हैं सो 3272 योजन अर आठ कला जानो 99 अर सोमनसवन की बीच की परिधि 10349 योजन अर तीन कला यहां सुमेरु के विस्तार विषें एक योजन की 11 कला लेनी, कला कहो अथवा भाग कहो।।100।। अर सौमनस वन से 36000 योजन ऊंचा चढिये वहां चौथा पाण्डुक नामा वन है सो पांडुकवन का विस्तार 494 योजन का है, वहां मेरु की परिधि 3162 योजन अर एक कोस की है।।2।। अर 40 योजन ऊंची सुमेरु की चूलिका वैडूर्य मणिमई सो मूल विषे 12 योजन चौडी अर मध्य विषें 8 योजन चौडी अर शिखर विषें 4 योजन चौडी है।।3।। अर चूलिका की प्रदक्षिणा मूल विषें 37 योजन मध्य विषें 25 योजन अर अंत विषें 12 योजन कछुयक अधिक जाननी। अर लोहिताक्षमय आदि सुमेरु के चूलिका पर्यन्त छै विभाग हैं अर सातमां भाग वनकृत सो 11 प्रकार का है।

पहिला विभाग लोहताक्षमय अर दूजा पद्म रागमय तीजा वज्रमय चौथा सर्वरत्न मय पांचवां वैडूर्य मय छठा हरिताल मय 6 सो ये छै भाग सो एक एक भाग 16500 योजन का है उसके छै भागों के 99000 योजन भये अर सातवां वनकृत भाग उसके ग्यारह भाग भूमि विषें पहिला भद्रशाल वन 1 दूजा मानुषोत्तर 2 तीजा देवरमण 3 चौथा नागरमण 4 पांचवां भूतारमण 5 छठा नंदन 6 सातवां उपनंदन 7 आठवां सौमनस 8 नवमां उपसोमनस 9 दसवां पांडुक 10 ग्यारहवां उपपांडुक 11 ।

यह गणधर देव ने ग्यारह भाग कहे। यह ग्यारह स्थानक कहे उन विषें ऊंचा चढ़े तो पर्वत की चौडाई घटे है, मेरु की जड से ग्यारह योजन चढ़े तो ऊंचा एक योजन चौडाई घटे है अर ग्यारह हाथ ऊंचा चढ़िये तो एक हाथ चौडाई घटे है। अर नन्दन वन से ऊंचा ग्याहर हजार योजन है अर उसी समान चौडाई है, ऐसी ही सौमनस वन की है। अर पांचवां प्रदेश चूलिका विषे पांच योजन ऊंचा चढ़िए तब एक योजन चौडाई घटे अर पांच हाथ ऊंचा चढ़िये, तब एक हाथ चौडाई घटे ऐसे चूलिका विषे चौडाई घटे ।।14।। अर सुमेरु की दोनों तरफ पार्श्व भुजा प्रत्येक प्रत्येक एक लाख अर सौ योजन अर एक योजन के ग्यारह भाग उनमें दो भाग हैं अर नन्दन वन की पूर्व दिशा विषें पण्यव नामा भवन है 1।

अर दक्षिण दिशा विषें वारुण नामा भुवन है 2 अर पश्चिम दिशा विषे गन्धर्व नामा भुवन है 3 उत्तर दिशा विषें विचित्रक नामा भुवन है 4 सो यह नन्दन वन के चार भुवन से 50 योजन ऊंचे हैं अर 30 योजन चौड़े हैं अर 90 योजन की प्रदक्षिणा है।।17।। यह चार भुवन कहे उनमें पण्यव विषे तो सौमनस नामा लोकपाल रमे है। अर वारुण विषें यम नामा लोकपाल रमे है। अर गन्धर्व विषें वारुण नामा लोकपाल रमे है अर विचित्रक विषे कुवेर नामा लोकपाल रहे है यह चारों लोकपाल चारों भुवनों विषें जुदे जुदे रमे हैं। अर साढा तीन कोट देवांगना सहित क्रीड़ा करे हैं अर सौमनस वन विषे वज्र, वज्रप्रभ, सुवर्ण, सुवर्णप्रभ यह चार भुवन चारों दिशा में है इनकी चौड़ाई ऊंचाई इनकी परिधि नन्दन वन के भवन समान है। वहां यम आदिक लोकपाल क्रीडा करे हैं। साढ़े तीन तीन कोटि देवांगना सहित यह क्रीडा करे हैं।

अर पांडुक वन विषें लोहित 1 अंजन 2 हरिद्र 3 अर पाण्डु 4 यह चार भवन हैं उन विषें उसी विधि वे ही लोकपाल क्रीडा करे हैं। सोमनामा लोकपाल तो स्वयंप्रभ नामा विमान का स्वामी पूर्व दिशा का पति है। उसके अरुण ही आभूषण अरुण ही वाहन अर अढ़ाई पल्य का आयु।।24।। अर छै लाख छयासठ हजार छह सौ छयासठ प्रभावान विमान का भोक्ता है।।25।। अर अरिष्ट विमान का स्वामी यमनामा लोकपाल दक्षिण दिशा का पात श्याम है आभरण अर वाहन जिसके अर अढ़ाई पल्य की है आयु जिसकी।।26।। अर जलप्रभ नामा विमान का स्वामी वरुण नामा लोकपाल पश्चिम दिशा का पति पीतवर्ण है अर पीतवर्ण है वाहन अर आभरण जिसके अर पौने तीन पल्य की है आयु जिसकी।।27।। अबल्गुप्रभ विमान का अधिपति उत्तर दिशा का स्वामी कुवेर है। शुक्लवर्ण हैं आभूषण जिसके अर तीन पल्य की है आयु जिसकी।।28।। अर मेरु की उत्तर पूर्व दिशा विषे नन्दन वन में सुवर्ण के तुल्य बलिभद्र नामा कूट उस विषें कट नामा देव बसे हैं।।29।।

नन्दन 1 मन्दिर 2 निषध 3 हिमवत् 4 रजत 5 रजक 6 सागर चित्र 7 वज्रकट 8 यह आठ कूट एक एक दिशा में प्रत्येक दो दो रहे हैं।।31।। सो कूटों की ऊंचाई योजन 500 अर चौडाई मूल विषें योजन 500 अर मध्य विषें योजन 375 अर शिखर विषें योजन 250 अर इन कूटों में आठ दिक्कुमारी देवी बसे हैं पूर्व दिशा में तिनके नाम मेघंकरी 1 मेघवती 2 सुमेघा 3 मेघ मालिनी 4 तोयधारा 5 विचित्रा 6 पुष्पमाला 7 आनन्दिता 8 ।।34।। अर सुमेरु पर्वत से पूर्व दक्षिणादि दिशा विषें चार वापिका हैं उनके नाम उत्पलगुल्मा 1 नलिना 2 उत्पला 3 उत्पलोज्ज्वला। वे लंबी योजन 50 अर चौडी योजन पच्चीस अर औंडी योजन दस।।36।। इन वापिकाओं के मध्य इन्द्र के क्रीडा करने का मन्दिर है सो मन्दिर 31 योजन अर 1 कोस के विस्तार चौड़ा है अर साढ़े बासठ योजन ऊंचा है अर मन्दिर की आध योजन की नींव है।।38।। उस मन्दिर के मध्य इन्द्र के बैठने का सिंहासन है। अर

चारों दिशाओं की तरफ चारों लोकपालों के आसन हैं। अर मन्दिर की ईशानकोण विषें अर वायु कोण विषें सामानिक लोकपालों के आसन हैं।।40।। अर मन्दिर के आगे आठ पटराणियों के सिंहासन हैं अर पूर्व दक्षिण दिशा में मुख्य जो सभा के नायक देव उनके सिंहासन हैं, अर पश्चिम दक्षि के मध्य त्रयस्त्रिंशत् देवों के आसन हैं अर उनके पीछे सेना के महोत्तर उनके आसन हैं अर चारों दिशों विषें इन्द्र के अंगरक्षकों के आसन हैं इन्द्र सिंहासन पर पूर्व की ओर मुख कर बैठे हैं अर यह सब देव सेवा करे हैं।

अर पश्चिम दक्षिण दिशा के बीच चार वापिका हैं, उनके नाम – भृंगार 1 भृंगनिभा 2 कज्जला 3 कज्जलप्रभा 4 यह चार वापिका सौधर्म इन्द्र की क्रीड़ा करने के स्थान हैं। अर पश्चिम उत्तर दिशा के बीच ईशान इन्द्र के क्रीडा करने के ठौर वापिका चार हैं उनके नाम श्री कांता 1 श्रीचन्द्रा 2 श्रीमहता 3 श्रीनिलया 4 अर उत्तर पूर्व दिशा के बीच वापिका चार उनके नाम नलिना 1 नलिनगुल्मा 2 कुमुदा 3 कुमुदप्रभा 4 इन विषें भी मन्दिर सिंहासनादि पूर्ववत् जानने जैसी नन्दन वन की चार वापिका कहीं। उनके ही समान सौमनस्य वन की जानो।।41।। अर पांडुक वन की उत्तर पूर्व दक्षिण पश्चिम दिशाओं के मध्य पांडुक शिला 1 पांडु कंवला 2 रक्ता 3 रक्तकंवला 4 यह तो चार दिशाओं में कही और विदिशाओं में हैमी 1 राजती 2 तापनीय का 3 लोहिताक्षमयी 4 यह चार पांडुक शिला अर्द्ध चन्द्राकार आठ योजन ऊंची सौ योजन लंबी पचास योजन चौड़ी जानो। तिन पर जम्बूद्वीप के तीर्थंकरों का कलशाभिषेक होय है।।50।।

अर पांडु अर पांडु कंवला इनकी तो दीर्घता दक्षिण उत्तर दिशा ताईं है अर रक्ता अर रक्तकंवला इन दोनों की दीर्घता पूर्व पश्चिम दिशा ताईं है, उन शिलाओं पर तीन तीन सिंहासन हैं उनके मध्य का सिंहासन प्रभु के विराजने का पूर्व की ओर है मुख जिसका सो 500 धनुष ऊंचा है अर मूल विषे 500 चौड़ा है अर रत्नमई है अर इसके दोनों तरफ दो सिंहासन हैं सो जो दक्षिण की ओर सिंहासन है उस पर सौधर्म इन्द्र खड़ा रहे है। प्रभु का अभिषेक करे है अर उत्तर की ओर का सिंहासन पर ईशान इन्द्र दूजे स्वर्ग का खड़ा रहे प्रभु का अभिषेक करे है। तीनों सिंहासनों के मुख पूर्व की ओर हैं उन पर भरतक्षेत्र अर ऐरावत क्षेत्र अर पूर्व पश्चिम विदेह जम्बूद्वीप के तीर्थंकरों का जन्म कल्याणक विषे जन्माभिषेक होय है।

भावार्थ – चारों दिशा की चार पांडुक शिला उन पर चार सिंहासन उन पर जंबूद्वीप के तीर्थंकरों का अभिषेक होय है अर पांडुक वन विषे चारों दिशा विषें चार जिन मन्दिर हैं वे सब रत्नमई महा मनोहर शाश्वते अकृत्रिम हैं।।55।। वे पांडुक वन के मन्दिर चारों पच्चीस योजन लंबे अर पौनां उन्नीस योजन ऊंचे। अर साढ़े बारह योजन चौडे हैं अर उनकी आध कोस ऊंडी नींव है।।56।। अर उन

चैत्यालयों के द्वार की ऊंचाई चार योजन की है अर चौडाई दो योजन की हैं अर दो छोटे दरवाजे हैं वे दो योजन ऊंचे अर एक योजन चौडे हैं।।57।। यह तो पांडुक वन के चैत्यालयों का विस्तार कहा है, अर पांडुकवन के नीचे जो सौमनस्य वन उस विषे चार जिन मंदिर हैं उन की ऊंचाई साढ़े सैंतीस योजन अर लम्बाई पचास योजन अर चौडाई पच्चीस योजन है अर नींब एक कोस ऊंडी जानो, जो वर्णन सौमनस्य वन के चैत्यालय का किया उसी प्रमाण कुलाचल अर वक्षार गिरि के चैत्यालयों का जानो 1 अर नन्दन वन भद्रशाल वन इन विषें चार चैत्यालय हैं उनकी लंबाई 100 योजन अर चौडाई 50 योजन अर ऊंचा 75 योजन जानो अर उनकी नींव दोय कोस ऊंडी है। अर सकल विजयार्द्ध पर्वतों विषें सिद्धायतन चैत्यालय हैं उनका वर्णन पांडुक वन के चैत्यालयों के प्रमाण जानो अर सकल विजयार्द्ध का प्रमाण भरत क्षेत्र के विजयार्द्ध प्रमाण जानो अर विजयार्द्ध विषे देवछन्द नामा गर्भ गृह है सो आठ योजन लंबा अर चार योजन ऊंचा अर दो योजन चौड़ा अर नींव कोस एक ऊंडी।।61।।

अर भगवान् का अकृत्रिम चैत्यालय देदीप्मान स्तन मय स्तंभों कर शोभित है अर सुवर्ण मई है भीति जिनकी उन भीतियों विषे चन्द्र सूर्य उड़ते पक्षी अर मृगों के युगल इत्यादि चित्रामों कर मण्डित हैं।।62।। अर उनके चैत्यालयों में रत्न मई पांच सौ धनुष ऊंची एक सौ आठ प्रतिमा हैं।।63।। अर नागकुमार देवों के युगल अर यक्षों के युगल उनकी मूर्ति हैं उनके हाथों में चमर है अर सनत्कुमार माहेन्द्र की मूर्ति हैं उनके हाथों में चमर हैं।।64।। अर झारी कलश दर्पण ध्वजा शंख ताड़वीजना आरती धूपदान, यह अष्ट मंगल द्रव्य प्रत्येक प्रत्येक एक सौ आठ एक सौ आठ प्रतिमा संबंधी है अर झालरि, झांझ मंजीरा, नगारा, ढोल आदि वादित्र एक एक प्रतिमा सम्बंधी एक सौ आठ हैं अर अकृत्रिम चैत्यालयों के झरोखा गृह जाली, शोभायमान हैं और मूंगा मोतियों की झालरी नानाप्रकार के रत्न और स्वर्ण के कलश और क्षुद्र घण्टिका अद्भुत सोहे हैं और चैत्यालयों के रत्न स्वर्ण मई कोट सोहे हैं सो चार योजन ऊंचा और मूल विषे छै योजन चौड़ा और मध्य विषे चार योजन चौडा और ऊर्द्ध विषे दो योजन चौडा और जिसकी दो कोस की नींव है और आठ योजन ऊंचे और 4 योजन चौड़े चार दिशाओं में चार तोरण हैं और चैत्यालयों के कोट का द्वार पचास योजन ऊंचा है और उन अकृत्रिम चैत्यालयों में दस प्रकार की ध्वजा हैं।।66।।

उनमें सिंह, हंस, गज, कमल, वस्त्र, वृषभ, मयूर, गरुड, चक्र और माला इनके चिह्न हैं एक एक जाति की ध्वजा, सो दस जाति की 1080 ध्वजा एक एक दिशा में हैं। जहां भगवान की अकृत्रिम प्रतिमा विराजे है सो गन्ध कुटी है अर गन्धकुटी के आगे सभा मंडप है और उनके आगे नृत्य मंडप है आगे रत्नों के स्तूप हैं अर रत्न स्तूपों के आगे चैत्यवृक्ष हैं और चैत्यवृक्षों के नीचे एक एक

जिन प्रतिमा है यह सुमेरु के चैत्यालयों का वर्णन किया, सो जिनगृह से पूर्व दिशा विषें नन्दी नाम द्रह है जिसका जल अति उज्ज्वल निर्मल है जिसमें मच्छ कक्षादिक जलचर जीव नहीं।।73।। अर यह सुमेरु नानाप्रकार के आश्चर्य कर भरा है। मूल विषे तो वज्र मणिमई है अर चूलिका विषै वैडूर्यमणि मई है। अर मध्य विषे स्वर्णमणि मई हैं अर देवों का निवास है इस मेरु की शोभा कहिने में न आवे।।74।। इस मेरु को एते नामों कर ग्रन्थों में ज्ञानवान् वर्णन करें है, मेरु, महामेरु, सुदर्शन, मन्दिर, शैलराज, वसंतप्रिय, दर्शन।।75।। रत्नोच्चय। दशांग आदि लोकनाभि, मनोरम लोकमध्य दिशांग अति दिशमुत्तर, सूर्याचरण, सूर्यावत्त, स्वयंप्रभ - इस भांति विवेकी वर्णवे हैं।।76।।

इस सुमेरु कर शोभित जो जंबूद्वीप उसकी चौगिरद जगती कहिए कोट की भीति सोहे है सो जगती आठ योजन ऊंची। अर मूल विषे बारह योजन चौडी मध्य विषे आठ योजन चौड़ी है ऊर्द्ध विषे चार योजन चौड़ी है। अर आठ योजन की है ऊण्डी नींव जिसकी।।79।। सो जम्बूद्वीप की जगती मूल विषे तो सर्वरत्नमई है अर मध्य विषे वैडूर्यमणि मई है अर मूल विषे वज्र मणिमई है सो सब दिशा विषे उद्योत करती सोहे है अर उस जगती के आगे दूजी कोट की भीति जिसे वेदिका कहिए सो वह वेदिका जगती को बेढे सोहे है सो दो कोस ऊंची अर 500 धनुष आद्योपान्त चौड़ी सोहे है।।81।।

सो जगती के बाहर अर वेदिका के अभ्यन्तर देवारण्यनामा वन है सो सुन्दर सुवर्ण की शिला अर वापिका अर जो महल उन कर अति सोहे है जिस विषे न्यून वापिका तो 100 योजन चौड़ी है अर 10 धनुष ऊंडा है अर मध्य वापिका 150 धनुष चौड़ी है अर 15 धनुष ऊंडी अर उत्कृष्ट वापिका 200 धनुष चौडी अर 20 धनुष ऊण्डी है अर उस वन विषे छोटे मन्दिर 50 धनुष चौड़े अर सौ धनुष लम्बे अर 75 धनुष ऊंचे हैं।।84।। अर तिन छोटे मन्दिरों के दरवाजे 6 धनुष चौडे अर 12 धनुष ऊंचे हैं अर जिनकी नींव 4 धनुष ऊंडी है।।85।। यह लघु मन्दिर कहे उनसे द्विगुण वा त्रिगुण मध्य मंदिरों की लंबाई ऊंचाई जानों अर मध्य मंदिरों से उत्कृष्ट मंदिरों की द्विगुणी ही जानों अर दरवाजों का विस्तार भी इसी ही रीति से है अर दरवाजों की नींव ऊंडाई दूनी ही जानो।

इन गृहों में मालावों की पंती अर कदली आदि वृक्ष अर प्रेक्षागृह 1 भोजनगृह 2 सभागृह 3 वीणागृह 4 गर्भगृह 5 लतागृह 6 चित्रगृह 7 आभरणगृह 8 यह महारमणीय गृह हैं।।87।। अर मोहन स्थान नामा महारमणीक रत्नमई गृह सोहे है, इन मंदिरों में किन्नर किंपुरुष आदि व्यन्तर देव क्रीड़ा करें हैं अर मन्दिरों में स्फटिक मणि मई अर मूंगा मणिमई अर नानाप्रकार मणि मई अनेक प्रकार के मनोहर आसन हैं सो देवों के विराजने को सोहे हैं उन आसनों के नाम हंसासन 1 क्रौंचासन 2 मुण्डासन 3 मकराशन 4 सिंहासन 5 गरुडासन 6 दीर्घासन 7 इत्यादि देवों के मन हरणहारे रत्नमई रमणीक सिंहासन सोहे हैं।।90।।

अर जंबूद्वीप की जगती के चारों दिशा चार दरवाजे हैं, उनके नाम – विजय 1 वैजयन्त 2 जयन्त 3 अपराजित 4।।91।। सो एक एक दरवाजा आठ आठ योजन ऊंचा अर चार योजन चौड़ा नाना प्रकार के रत्नों कर देदीप्यमान सोहे है जिनके देदीप्यमान वज्र मई युगल कपाट हैं।।92।। इन विजयादि दरवाजों की माहिला फिडच प्रत्येक-प्रत्येक इतनी जानों 70710 योजन कर तीन कोस 1424 धनुष तीन हाथ इकतीस अंगुल है, अर इस फिडच का धनुष पृष्ठ 79056 योजन तीन कोस 1532 धनुष अर सात अंगुल।।96।। अर चारों दरवाजों में परस्पर अन्तर जितना धनुपृष्ट का कहा उसी प्रमाण चार योजन घाट जानो। यह दरवाजों का अन्त अन्तर्यामी ने कहा।।97।।

अर इस विजय नाम द्वार का द्वारपाल विजय नामा देव उसका नगर इस जंबूद्वीप से संख्यात द्वीप समुद्रों के परे दूजा जंबूद्वीप है उसकी पूर्व दिशा विषे सोहे है वह पुरुषवेदिका कहिए कोट की भीति उस कर मंडित बारह हजार योजन के विस्तार सोहे है, नगर महा मनोहर अति अद्‌भुत सर्व ओर सुन्दर चार तोरणों कर संयुक्त है, उस नगर के कोट की भीति आठ योजन का तीजा भाग अग्र विषे चौड़ी है अर उससे चौगुणी मूल विषे चौडी है ऊंची साढ़े सैंतीस योजन है। अर उसकी नींव आधे योजन ऊंड़ी है अर उस नगर के एक एक दिशा प्रति पचास दरवाजे हैं सो दरवाजे सवा इकतीस योजन चौडे हैं अर साढ़े बासठ योजन ऊंचे हैं अर दरवाजे के ऊपर सतरह खणा महल हैं सो महल सुवर्णमय है, सर्व रत्नमय है अर दरवाजों के मध्य देवों के उपजने का स्थान है सो स्थानक 1200 योजन का चौडा है अर एक कोस का मोटा है उसके चौगिरद भीति दो कोस की ऊंची अर पांच सौ धनुष चौड़ी है चार तोरणादि कर संयुक्त है 103 अर दरवाजे प्रमाण नगर के मध्य महल हैं उसका द्वार आठ योजन ऊंचा अर चार योजन चौडा है उसका स्वामी विजयनामा देव है सो दरवाजा वज्रमणि मई है अर उसके मणि स्वर्ण के कपाट हैं चारों दिशा विषें उस समान मन्दिर हैं फिर उसके आगे चारों तरफ दूसरे मंडल में वैसे रत्न मई महल हैं उसके आगे तीसरे मंडल में पूर्व प्रमाण मन्दिर हैं अर चौथे मंडल में चारों दिशा विषें तीसरे मंडल प्रमाण मन्दिर हैं।।7।।

अर पांचवें मंडल में चौथे मंडल के प्रमाण से अर्द्ध प्रमाण मन्दिर हैं। अर छठे मंडल विषें पांचवें मंडल प्रमाण हैं अर उपजने के मन्दिर की वेदिका तुल्य दोय मंडल विषे वेदी है अर तीसरे चौथे मंडल की वेदी उनसे आधी है अर पांचवें छठे मंडल विषें उनसे आधी है अर विजयदेव के मन्दिर विषे उज्ज्वल चमर छत्र सहित तीन सिंहासन हैं अर मन्दिर का पूर्व की ओर मुख है।।10।। अर उत्तर दिशा में छह हजार सामान्यक देव हैं अर विदिशावों में छह पटरानियों के आसन हैं।।11।। अर पूर्व दिशा में अर दक्षिण दिशा में आठ हजार माहिली सभा के देव बसे मध्य की दक्षिण दिशा की सभा

के दस हजार देव बसे हैं अर बारली सभा के बारह हजार देव उनके निवास पश्चिम अर दक्षिण में हैं अर पश्चिम दिशा में सातों सेना के महत्तर बसे हैं।

अर चारों दिशा में अठारह हजार अंग रक्षक जाति के देव बसे हैं अर उनके अठारह हजार आसन हैं अर अठारह हजार देवी विजयदेव के छह पटराणी सिवाय हैं अर विजय देव का एक पल्य कछुयक अधिक आयु है।।17।। अर विजय देव के मंदिर से उत्तर दिशा विषें सुधर्मा नामा सभा है वह छह योजन लम्बी अर तीन योजन चौड़ी अर नव योजन ऊंची अर उसकी एक योजन की औंडी नींव है। फिर उत्तर दिशा विषें सुधर्मा सभा समान जिन मंदिर है अर पश्चिम उत्तर विषे उत्पाद सभा है।।19।। अर अभिषेक सभा है अर अलंकार सभा है अर व्यवसाय सभा है यह सब सभा सुधर्मा सभा के समान जानों।।20।। अर विजयदेव के मन्दिर विषें पाँच हजार चार सौ साठ मन्दिर हैं अर विजय के पुर से चारों दिशा विषे पच्चीस योजन गए चार वन हैं।।22।।

उनमें पहिला अशोक वन दूजा सप्तपर्ण तीजा चम्पक चौथा आम्रवन।।23।। सो यह वन बारह बारह हजार योजन लम्बे अर पांच पांच सौ योजन चौडे हैं।।24।। तिनके मध्य मूल वृक्ष अशोक सप्तपर्ण अर चम्पक अर आम्र यह चार प्रधान तरु हैं इनके नायक यह चार वन हैं अर जम्बू वृक्ष के पीठ से इनका आधा पीठ है उनकी चारों दिशा में रत्नमई जिनप्रतिमा हैं सो अशोकादि देवों कर पूज्य हैं।।25।। अशोक वन की उत्तर पूर्व दिशा में अशोकपुर नगर है वहां अशोकदेव का मन्दिर है सो विजयदेव के मन्दिर प्रमाण है अर सप्तपर्ण वन से पूर्व की ओर सप्तपर्ण नामा पुर है वहां का स्वामी सप्तपर्णनामा देव है उसका मन्दिर अशोक के मन्दिर समान है।

अर चंपकवन से दक्षिण पश्चिम दिशा विषें चंपकपुर है उसका स्वामी चंपकनामा देव है उसका मन्दिर उनकी प्रमाण जानों अर आम्रवन से पश्चिम उत्तर विषें आम्रपुर है उसका अधिपति आम्रनामा देव है, उसका मन्दिर उनके प्रमाण जानो।।30।। यह जंबूद्वीप के पूर्व दिशा के विजयनामा द्वारपाल का वर्णन किया, उसी भांति वैजयंत जयंत अपराजित तीनों देवों का वर्णन जानो आयु, काय, नगर विभूति, परिवार चारों द्वारपालों का समान जानो।।31।।

यह जंबूद्वीप का संक्षेप से वर्णन किया। इस जंबूद्वीप को वेंढ कर जो लवण समुद्र तिष्ठा है सो दो लाख योजन चौड़ा है जंबूद्वीप के कोट खाई समान लवण समुद्र है सो वेदिका संयुक्त है।।32।। उस लवण समुद्र की प्रदक्षिणा पंद्रह लाख इक्यासी हजार एक सौ उनतालीस योजन कछु ऊन है अर अठारह हजार नौ सौ तिहत्तर कोटि छयासठ लाख उनसठ हजार छै सौ योजन प्रमाण लणव समुद्र विषे प्रकीर्णक जानने।।34।। अर दश हजार योजन नीचे ऊपर विस्तार चौड़ा है। अर हजार योजन औंडा

है अर ग्यारह हजार योजन शाश्वता पृथ्वी से ऊंचा रहे है।।35।। अर तट से पचानवें हाथ गये एक हाथ ऊंचा है अर पचानवें योजन गये एक योजन ऊंडा है अर आगे पचानवें स्थानक जाय वहां सोलह योजन सोलह हाथ अर सोलह अंगुल ऊंचा है।।37।।

शुक्लपक्ष के पंद्रह दिनों में पांच हजार योजन समुद्र का जल वधे है अर कृष्णपक्ष में घटे है तब ग्यारह हजार योजन रह जाय है।।38।। तीन सौ तैतीस योजन अर एक योजन का तीसरा भाग शुक्लपक्ष में प्रति दिन बधे है अर कृष्णपक्ष में प्रति दिन इतना ही घटे है अर वेदिका के निकट अंत विषे मक्खी के पंख समान है वहां आध योजन ऊंचा बधे है, दो सौ छयासठ धनुष दो हाथ सोलह अंगुल शुक्लपक्ष विषे दिन-दिन वृद्धि अर कृष्णपक्ष विषे दिन दिन हानि वेदिका के अंत विषे है।।41।। अर अधोभाग विषे समुद्र द्रोणी के आकार है अर प्रकाश विषे विस्तीर्ण हैं अथवा जुड़ी हुई दो नाव के आकार है अथवा यवकी राशि तुल्य है।।42।।

अर जगती कहिये वेदी उससे 95000 योजन गये समुद्र के बीच चार दिशा में चार पाताल कलश हैं उनके नाम पूर्व दिशा में पाताल कलश 1 पश्चिम दिशा में बड़वामुख 2 दक्षिण दिशा में कदंबक 3 उत्तर दिशा में पूयकेसर 4 ये पाताल कलश मूल विषे अर अंत विषे 10000 योजन चौड़े हैं अर मध्य विषें लाख योजन चौड़े हैं अर लाख योजन ऊंडे हैं अर ये कज्जल समान पाताल कलश उनकी मोटाई 500 योजन की है अर तेतीस हजार तीन सौ तेतीस योजन अर एक योजन का तीसरा भाग इतना उतना एक एक कलश का एक एक भाग है ऐसी तीन तीन भाग एक एक कलश विषे हैं सो ऊपरले भाग में जल है अर मध्य विषे जल पवन दोनों हैं अर मूल विषे केवल पवन है पवन का ऊंचा नीचा स्वभाव है सो पवन ऊंचा आवे तब जल ऊंचा चढ़े अर नीचा पवन होय तब जल नीचा आवे शुक्ल पक्ष में जल ऊंचा जावे अर कृष्ण पक्ष में जल नीचा जावे अर इन पाताल कलशों में अन्तराल परस्पर दोय लाख सत्ताईस हजार एक सौ पौना इकहत्तर योजन है।

शुक्ल पक्ष विषे पूर्णमासी के दिन जल पूर्ण बढहार है अर अमावस्या के दिन सर्वथा जल की घटवारी है यह तो चार दिशाओं के पाताल कलश कहे।।51।। अर चार विदिशाओं में छोटे पाताल कलश चार, मुख्य अर मूल विषे 1000 योजन चौड़े अर 1000 योजन लम्बे मध्य में दश हजार योजन चौड़े हैं अर उतने ही ऊंडे हैं अर 50 मील इनकी मुटाई है अर एक एक में तीन तीन भाग हैं अर उसी तरफ जल पवन पाईए हैं।।53।। अर एक एक भाग 3333 योजन अर एक योजन का तीजा भाग है ऐसे तीन भाग है अर इन दिशाओं के कलशों का अन्तराल 113085 योजन अर एक योजन के आठवें भाग दिशा के कलशों से विदिशाओं के कलशों का अन्तराल है अर इन आठों कलशों के

अन्तराल विषे मोतियों की पंक्ति की नाई बीच में हजार छोटे कलश हैं ते हजार छोटे कलश हजार योजन ऊंडे अर मध्य विषे हजार योजन चौड़े मूल विषे अर मुख विषे 100 योजन चौड़े हैं।

अर इन छोटे कलशों का अन्तराल परस्पर 125 योजन का है अर बड़े कलशों से अन्तराल 778 योजन अर एक कोस कछुक अधिक है अर यह क्षुद्र कलश अर बड़े कलश यथायोग्य जल के प्रवाह कर संयुक्त हैं अर समुद्र के तट से 42000 योजन परे जाइये वहां चारों दिशा में दो दो पर्वत हैं वे हजार हजार योजन ऊंचे हैं।।60।। उनमें पहिला पूर्व दिशा का जौ पाताल कलश उसकी दोनों तरफ दो पर्वत एक का नाम कौस्तुभ दूसरे का नाम कौस्तभभास यह रूपामई हैं अर आधे घड़े के आकार है अर इनके अधिष्ठाता दो देव हैं उनके नाम उदंग अर उदवास उन देवों की विभूति विजयदेव की विभूति समान जानो।।61।। अर दक्षिण दिशा की तरफ कदंबक नामा कलश के दोनों तरफ उदंक अर उदास नामा पर्वत है उनके अधिपति शिव अर शिवदेव हैं।।62।।

अर पश्चिम की ओर बाडव मुख कलश के दोनों तरफ शंख अर महाशंख नामा पर्वत है सो शंख समान उज्वल हैं उनके अधिपति जो देव उनके नाम उदंक अर उद्वास हैं ।।63।। अर चौथा उत्तर दिशा की ओर यूपकेशरी नामा कलश उसके दोनों तरफ दो पर्वत हैं उनके नाम उदंक अर उद्वास हैं उनके स्वामी लोहित अर लोहितांक नामा देव हैं। इन देवों की विभूति विजयदेव समान जानो अर इन पर्वतों का पाताल कलश से अन्तर 116000 योजन का है।।66।। अर इन पर्वतों के शिखर विषे नागकुमार देव लवण समुद्र के वेलधर उनमें देवों का निवास है।।67।। लवण समुद्र की अभ्यन्तर की तरफ तरंगों के धरणहारे 420000 देव हैं उनका नियोग है 72000 नागकुमार देव जल की बाह्य तरंगणी को धरे हैं जल क्रीड़ा विषे है अति आदर जिनका।।68।।

अर 28000 नागकुमार देव जल के अग्र की शिखा को धारे हैं।।69।। अर समुद्र की पश्चिम दिशा में 12000 योजन जाइये वहां एक गौतम नामा द्वीप 12000 योजन के विस्तार है उसमें गौतम नामा गिरि है उसका गौतम नागा देव अधिपति है सो विभूति कर कौस्तुभ नामा देव समान है अर इस गौतम नामा द्वीप विषे कुभोग भूमियां मनुष्य हैं उनमें पूर्व दिशा में तो इकटंगे मनुष्य हैं अर दक्षिण दिशा विषें सींग वाले हैं अर पश्चिम दिशा विषें पूंछ वाले हैं। अर उत्तर दिशा में वचन रहित हैं अर चारों विदिशाओं में सुसा कैसे कान वाले हैं उत्तर अर दक्षिण की कोण विषे अश्वमुख अर सिंहमुख हैं।।73।। अर आगे दोनों तरफ सुसा के कान वाले अर सींग वाले हैं अर श्वानमुख अर बन्दर मुख पूंछ वाले हैं। इनमें विजयार्द्ध की दोनों तरफ गूंगा अर सुसा के कान वाले अर गोमुख अर मेंढ़ा के मुख वाले हैं।।75।। अर हिमवान् पर्वत की पूर्व दिशा में बिजुली समान मुख वाले अर पश्चिम दिशा में

श्याममुख हैं अर शिखरी पर्वत की पूर्व दिशा में मेघमुख हैं अर पश्चिम दिशा में बिजुली समान मुख हैं अर विजयार्द्ध के दोनों अंत विषे दर्पण मुख है अर गजमुख हैं।

यह चौबीस अंतर द्वीप हैं उनमें कुभोग भूमियां है।।78।। अर दिशा में पांच सौ योजन जाय अर विदिशाओं में भी पांच सौ योजन परे जाय वहां अंतर दिशा में पचास द्वीप हैं। वे छह सौ योजन चौडे उनमें पर्वत है सो दिशा में पर्वत सौ योजन का विस्तीर्ण है अर पर्वत संबंधी पच्चीस योजन दिशा विदिशा के बीच विदिशा में पचास योजन का चौड़ा द्वीप है सो पर्वत पचानवें भाग तो जल विषैं ऊंडा है अर जल से एक योजन ऊंचा है अर बेदी कर संयुक्त है अर उसी भाग को सोलह भाग का सोलह गुणा करिये तब ऊपर जल वेष्टित नीचला क्षेत्र अर ऊपरला क्षेत्र जल संयुक्त है।।81।।

लवण समुद्र के मध्य जेते जंबू द्वीप के निकटवर्ती द्वीप हैं तेते ही धातकी खंड के निकटवर्ती लवणोदधि संबंधी द्वीप के निकट जानो उनमें अष्टादश कुल कुभोग भूमिया के हैं उन सर्व का एक पल्य आयु है उनमें इक टंगे तो गुफा में बसे हैं अर माटी का भोजन करे हैं अर सब वृक्षों के मूल विषे बसे हैं अर फल पुष्प के आहारी हैं अर एक दिन के अंतर है भोजन जिनका अर वे मरकर व्यन्तर अर भवनवासी देव होय हैं।84।। अर जंबूद्वीप समान समुद्र का कोट है, उसके अभ्यन्तर शिलापट्ट है अर बाहर वन की पंक्ति है।।85।। जम्बूद्वीप के विस्तार से लवण समुद्र का विस्तार चौगुणा है उसमें तीन योजन घाट अन्तर मंडल सूची है अर द्वीप समुद्र की पांच लाख योजन की सूची है उसमें समुद्र की सूची दो लाख योजन चौडी सो घटाइये, तब तीन लाख योजन रहा उसको चौगुना करिए तब बारह लाख योजन भया, उसे दो लाख समुद्र की चौड़ाई से गुनिए तब चौबीस लाख योजन होय। ऐसे लाख लाख योजन जंबूद्वीप प्रमाण लवण समुद्र में चौबीस खंड समावे हैं अर धातकी खंड में जंबूद्वीप समान एक सौ चौबीस लाख खंड समावें हैं।।88।।

अर कालोदधि में छह सौ बहत्तर खंड समावें है अर पुष्करार्द्ध द्वीप विषे दो हजार आठ सौ अस्सी जंबूद्वीप प्रमाण खंड समावें हैं।। 89।। जैसे जंबूद्वीप को लवण समुद्र बेढ़े है वैसे लवण समुद्र को धातकी खंड बेढ़े है। सो धातकी खंड द्वीप चार लाख योजन का चौड़ा है गोल आकृति है उसकी आभ्यंतर की सूची पांच लाख योजन की है अर मध्य सूची नौ लाख योजन की है अर बाह्य की सूची तेरह लाख योजन की है।।90।। अर धातकीखंड की प्रदक्षिणा पंद्रह लाख इक्यासी हजार एक सौ उन्तालीस योजन की है।।91।। यह तो आभ्यंतर की सूची की प्रदक्षिणा कही अर मध्य सूची की प्रदक्षिणा अठाईस लाख छयालीस हजार पचास योजन की है अर बाह्य सूची की प्रदक्षिणा इकतालीस लाख दश हजार नौ सौ इकसठ योजन की हैं।।93।। अर धातकीखंड द्वीप विषे दो महामेरु

हैं एक पूर्व की ओर, एक पश्चिम की ओर, अर दोनों ही इष्वाकार पर्वत हैं एक दक्षिण ओर है एक उत्तर की ओर है वे दोनों हजार हजार योजन चौडे हैं अर चार चार लाख योजन लम्बे हैं अर चार चार सौ योजन ऊंचे हैं अर सौ सौ योजन की उनकी नींव है।।95।।

अर जंबूद्वीप विषे भरतादि क्षेत्र सप्त अर षट्कुलाचल पर्वत हैं, सो धातकी खंड विषे भरतादि दो, उनके चौदह क्षेत्र अर कुलाचल दो दो उनके बारह कुलाचल एक मेरु संबंधी सात सात क्षेत्र अर छै छै कुलाचल हैं सो दो मेरु सम्बन्धी दूने जानो।।96।। अर जे जंबूद्वीप विषे पहिली पर्वत नदी द्रह उनके नाम कहे वही नाम इन्हों के जानो यहां एक वहां दो। अर ऊंचाई में अर चौड़ाई में तो वहां पर्वतादि यहां के समान अर चौडाई द्विगुणी विस्तार जानो वे पर्वत अर क्षेत्र मध्य की तरफ तो पैये के आरा के आकार अर बाहरली तरफ खुरपे के आकार हैं।।98।। सो धातकीखंड द्वीप एक लाख अठहत्तर हजार आठ सौ 42 योजन तो भरतादि क्षेत्र पर्वत कर रुका है।।99।।

अर धातकीखंड के भरतक्षेत्र का विस्तार 6164 योजन अर एक सौ उनीस योजन के दो सौ बारह भाग करिये उनमें 19 भाग अधिक इतनी चौड़ाई कुलाचल के समीप है, अर मध्य विस्तार 12581 योजन अर 36 कला जानो अर अंत की चौडाई 18547 योजन अर एक सौ उनतालिसों के दो सौ बारह भाग करिये उनमें 155 भाग लेने अर भरत से चौगुणा हैमवत पर्वत अर हैमवत से चौगुणा विस्तार सहित हरि अर हरि से चौगुना विस्तार विदेह अर हरि प्रमाण रम्यक अर हैमवत् प्रमाण हैरण्यवत् अर भरत प्रमाण ऐरावत का विस्तार जानो।।3।। अर जो कुलाचलों का विस्तार जंबूद्वीप विषे कहा उससे दूना धातकीखंड विषे जानो वहां बारह कुलाचल हैं अर पुष्करार्द्ध द्वीप विषे भी बारह कुलाचल जानो अर इन अढाई द्वीपों विषे जंबू वृक्षादि वृक्ष अर वक्षार पर्वत अर कोट की भीति इनकी ऊंडाई ऊंचाई से चौथाई जानो अर पंचमेरु की ऊंचाई हजार हजार योजन की है अर ऊंचाई विशेष अर धातकी खंड के कुण्ड की चौडाई जंबूद्वीप के कुण्ड की चौड़ाई से छै गुणी है अर वहां की नदी अर द्रहों की चौड़ाई यहां के द्रहों की ऊंड़ाई से पचास गुनो है अर जंबूवृक्ष आदि दश महावृक्ष समान ही हैं अर नदी सरोवर वन कुण्ड कमल पर्वत द्रहों की ऊंचाई जंबूद्वीप समान है।।8।।

अर चैत्य चैत्यालय वृषभाचल नाभिगिरि, चित्रकूट, कांचनगिरि दिग्गज पर्वतकूट वेदिका इनका चौडाई ऊंचाई सर्व अढाई द्वीप में समान है। अर सर्व कूटों के आध योजन ऊंचे अर 500 धनुष चौडे सर्व कूटों के रत्नमय तोरण जानो अर धातकीखंड अर पुष्करार्द्ध विषे चार मेरु तो चौरासी चौरासी हजार ऊंचे हैं अर हजार हजार योजन ऊंड़े हैं अर पिचानवें सौ पिचानवें योजन मूल विषे चौडे हैं अर मूल विषे प्रदक्षिणा 3042 योजन की है अर 1000 योजन भूमि विषे कन्द हैं वहां 9400 योजन की

चौडाई है अर भूमि मांहि प्रदक्षिणा 29725 योजन की है अर पांच सौ योजन ऊंचे चढ़िए वहां उनके नन्दन वन हैं अर नंदन वन से 555000 योजन ऊंचे चढ़िए वहां सौमनस्य वन है।।17।। अर सौमनस्य वन से 28000 योजन ऊंचे चढ़िए वहां पांडुक वन है अर नन्दन वन विषे सुमेरु की चौडाई 9350 योजन की है।।19।। नन्दन वन की बाह्य प्रदक्षिणा 29567 योजन की है अर नन्दन वन से परे सुमेरु की चौड़ाई 8350 योजन की अर नन्दन वन की माहिली प्रदक्षिणा 26405 योजन की है अर सौमनस वन विषे सुमेरु की बाह्य चौडाई 3800 योजन की है अर माहिली चौडाई 2800 योजन की है अर सौमनस वन विषे सुमेरु की बाहरली प्रदक्षिणा 12016 योजन की है अर माहिली 8854 योजन की है।।25।।

अर पांडुक वन विषे सुमेरु की प्रदक्षिणा 3162 योजन अर एक कोस कछु एक अधिक है।।26।। अर भूमि से दस हजार योजन तो सुमेरु की चौड़ाई 10000 योजन की है अर ऊपर 10000 योजन परे दश में भाग चौडाई घटी तब शिरोभाग विषे हजार योजन की चौडाई है।।28।। अर पांचों मेरु के चैत्यालय अर चूलिका अर वापिका सरावरी तथा पांडुक शिला आदि अर कूट अर मन्दिर उनकी चौडाई अर ऊंचाई अर ऊंडाई समान हैं अर धातकीखंड के मेरु के भद्रशाल वन का विस्तार 1225 योजन का है।।30।। अर भद्रशाल की दीर्घता धातकीखंड द्वीप विषे 107879 योजन है गन्धमाधन पर्वत की लंबाई 356227 योजन है अर इतनी ही विद्युत की है।।32।।

569259 योजन की लंबाई माल्यवान् अर सौमनस की है इन दोनों गजदन्तों की समान जानों।।33।। अर देवकुरु की चौडाई कुलाचलों के समीप 223158 योजन की है।।34।। अर सुमेरु से लेकर कुलाचलों लग देवकुरु की चक्र लंबाई 397897 योजन अर बानवें कला है एक सौ गुणतीस योजन के दो सौ बारह भाग करिए उनमें बानवे भाग लेने धातकीखंड द्वीप विषें दो मेरु हैं सो पूर्वार्द्ध अर पश्चिमार्द्ध विषे यह वर्णन जानना अर देवकुरु की सूधी लंबाई 366680 योजन की है।।37।। अर एक एक मेरु सम्बन्धी बत्तीस बत्तीस विदेह उनमें 16 पूर्व विदेह अर 16 पश्चिम विदेह हैं।।38।। उनमें पूर्व मन्दिर मेरु सम्बन्धी कक्षा नामा पूर्व विदेह है पश्चिम मेरु सम्बन्धी गन्धमालिनी नामा पश्चिम विदेह है।।39।। इन दोनों का है विस्तार समान सो उनकी सूची कहिए सूधी डोरी, ग्यारह लाख पच्चास हजार एक सौ अठावन योजन की जानो अर इनकी प्रदक्षिणा 3558062 योजन की है अर पद्मनामा पूर्वविदेह अर मंगलावती नामा पश्चिम विदेह इनकी सूची मेरु अन्तराल विषे 674842 योजन की है अर इस सूची की प्रदक्षिणा 2134030 योजन की है अर क्षेत्र विस्तार 9603 योजन अर एक योजन के आठ भाग करिए उनमें तीन भाग लेने अर विदेह क्षेत्र अर वक्षारगिरि विभंगा नदी अर देवारण्य वन इनकी लम्बाई आदि मध्य अन्त के भेद से तीन प्रकार है।।46।।

अर वक्षार नामा विदेह की आदि लंबाई 595070 योजन अर 129 योजन के 212 भाग करिए उनमें 200 भाग लेने।।47।। विजय कहिए क्षेत्र उसकी आदि की लंबाई मध्य से मिलाइए तब मध्य की अधिक होय, अर मध्य की लंबाई अन्त में मिलाइए तब अन्त की अधिक होय। पर्वत नदीयों की अन्त की लंबाई तो देश की आदि लंबाई है। देश की लंबाई की वृद्धि 4584 योजन की है अर वक्षारगिरि की लंबाई की वृद्धि 477 योजन अर 60 कला का है कला का कथन ऊपर लिखा ही है, अर विभंगा नदीयों की वृद्धि 119 योजन की अर वावन कला जानों, यह सब चर्चा सर्वज्ञ वीतराग देव ने कही है।

अर देवारण्य की लंबाई वृद्धि 2789 योजन अर 92 कला।।53।। अर पद्म नाम देश की लंबाई 294623 योजन अर 196 कला।।54।। जो पहले भाग में वृद्धि हीनता सो मध्य, जो मध्य वृद्धि सो अन्त मध्य सो ऐसे वक्षारगिरि अर विदेह क्षेत्र अर विभंगा नदी इनकी लंबाई इस भान्ति कही।।55।। यह विदेह क्षेत्र अर वक्षारगिरि अर विभंगा नदी अर सीता शीतोदा दोनों नदियों के तट विषे परस्पर सन्मुख हैं अर समान है लंबाई जिनकी।।56।। अर पूर्व मेरु से पूर्व विदेह अर पश्चिम मेरु से पश्चिम विदेह है यह सब समान हैं।।57।। जो इस जंबूद्वीप समान 144 खण्ड होय हैं उतना धातकी खण्ड का फैलाव है।।58।। सो 113841 कोड़ी अर 9957661 योजन का फैलाव है।।60।।

इस धातकीखंड को कालोदधि समुद्र बेढ़े से कालोदधि आठ लाख योजन चौडा है सौ धातकी खंड से दूना चौडा है सो कालोदधि की प्रदक्षिणा इक्यानवें लाख सत्तर हजार छह सौ पांच योजन अधिक है।।62।। अर जंबूद्वीप सारिषे छह सौ बहत्तर खण्ड भेले करिए एते भेले करिए तो उतना विस्तार कालोदधि का है।।63।। कालोदधि का समस्त फैलाव 531262 कोडि 6469080 एते योजन का फैलाव है।।64।। अर कालोदधि की पश्चिम दिशा विषे कुभोग भूमिया मनुष्य उदक मुख हैं अर दक्षिण दिशा विषे अश्वकण हैं अर पश्चिम दिशा विषे पक्षियों के मुख वाले कुमानुष हैं अर उत्तरदिशा विषे गजकर्ण हैं अर विदिशा विषे सूकरमुख उष्ट्रकर्ण गोकर्ण अर मन्दार मुख अर मण्जार मुख से गजकर्ण अर अश्वकर्ण के दोनों पसवारे हैं अर जे पक्षियों के मुख उनके समीप गजमुख हैं अर कर्ण प्रावरणा कहिये एक कान बिछावें एक कान ओढें।।68।।

सिंसुमार जाति का जो जलचर उस समान है मुख जिनके ऐसे जे कुमानुष वे कालोदधि विषें विजयार्द्ध के दोनों छेहरा जिन पर जे अंतरद्वीप उन विषे तिष्ठे है।।69।। अर हिमवान् पर्वत के अग्रभाग विषे कालोदधि में व्याला कैसे मुख अर व्याघ्र मुख तिष्ठें हैं अर स्यालमुख अथवा पासा सारिषामुख से शिखरी पर्वत के अग्रभाग विषे तिष्ठें हैं।।70।। अर चीता सारिखे मुख अर झारी सारिखे मुख ऐसे

कुभोग भूमियां रूपाचल के अग्रभाग विषें तिष्ठें है अर द्वीप की जगती कहिये कोट की भींति अर समुद्र की भींति इनके मध्य एक मनुष्य है जगती के समीप चींतामुखीं हैं।।71।।

यह सब कुमानुष एक पल्य के आयु के धारक एक दिन के अन्तर मीठी गारि अर पुष्प फल के भक्षक गुफा के मध्य अर तरु के तले रहणहारे व्यन्तर अर भवनवासी देवों की गति में गमन करणहारे, लवणोदधि ही समान कालोदधि में जानो। पांच सौ कछु इक अधिक कालोदधि में अन्तर द्वीप हैं, वे लवणोदधि से द्विगुण द्विगुण विस्तार जानो अर यह समुद्र में द्वीप हजार योजन ऊंचे हैं समुद्र के तट पर्यन्त हैं कुभोगभूमि के चौबीस द्वीप तो अंतर विषे तिष्ठे है। चौबीस ही बाहर तिष्ठे हैं कालोदधि के अर लवणोदधि के भेले किए तो सकल छानवे हैं।।73।।

अर कालोदधि को बेढे पुष्करद्वीप है सो पुष्करद्वीप वट के वृक्ष कर शोभित है कालोदधि से दूना चौड़ा है उसके मध्य से मनुष्यक्षेत्र की मर्यादा का करणहारा मानुषोत्तर पर्वत है उसकर पुष्करार्द्ध कहावे है द्वीप के मध्य विषे यह गिरि है वहां तक मनुष्य का गमन है आगे मनुष्य का गमन नहीं, उस पुष्करार्द्ध विषे दोय मेरु हैं एक पूर्व मेरु एक पश्चिम मेरु अर दक्षिण उत्तर की ओर इष्वाकार पर्वत हैं एक पूर्व मेरु एक पश्चिममेरु सो जैसे धातकी खंड के दोय मेरु का विस्तार कहा उसी प्रमाण पुष्करार्द्ध के मेरु का विस्तार जानो।।74।।

अर धातकी खंड की न्याई क्षेत्र नदी पर्वत आदि सब रचना जानो।।75।। इकतालीस हजार पांच सो उनासीं योजन अर एक सौ तिहत्तर अंश वहां के भरत का मध्यवर्ती आदि विस्तार है। अर मध्य विस्तार 53512 योजन अर 199 अंश है अर बाहरला विस्तार वहां के भरतक्षेत्र की 65446 योजन अर 13 अंश है।।78।। अर भरत क्षेत्र से लेकर विदेह क्षेत्र पर्यन्त क्षेत्र चौगुणा है अर पर्वत से पर्वत चौगुणा सर्वज्ञदेव ने कहा है, अर ये अंश जो कहे सो एक योजन के दो सौ बारह अंश उसमें एक ठौर 173 लिये अर एक ठौर 199 लिये अर एक ठौर 13 लिये अर 14230249 योजन पुष्करार्द्ध की बाहरली प्रदक्षिणा कही अर 395684 योजन क्षेत्र पर्वतों कर रुका है अर विजयार्द्ध तथा नाभिगिरि अर कुलाचल इनकी ऊंचाई अर ऊंडापन जंबूद्वीप कियोंकी कही उस समान जानो अर चौडाई धातकी खंडों से द्विगुणी जानो अर दो मेरु पुष्करार्द्ध विषे समान हैं अर इष्वाकार भी दोनों समान हैं।।87।।

अर मनुष्य क्षेत्र का विस्तार पैंतालीस लाख योजन है उसमें अढाई द्वीप अर दो मेरु आ गये अर मानुषोत्तर पर्वत 1721 योजन ऊंचा है अर 430 योजन अर एक कोस का तीसरा भाग भूमि विषे ऊंडा है मूल विषे 1022 योजन चौडा है अर मध्य विषे 723 योजन चौडा है अर ऊर्द्ध विषे 424 योजन चौडा है अर एक कोटि बयालीस लाख छत्तीस हजार सात सो तेरह योजन मानुषोत्तर पर्वत की

प्रदक्षिणा है, मध्य भाग विषे समान है बाहिर क्रम कर तिरछा ऊंचा है अर अभ्यन्तर मुख कर बैठे सिंह के आकार है भीति इनकी सूधी ऊंची है ऐसा आकार है।।93।।

अर मानुषोत्तर पर्वत विषे चौदह गुफा हैं यह पर्वत पूर्व पश्चिम दिशा की जे नदी भईं स्त्री उनको पुष्करार्द्ध समुद्र विषें जायवे को मार्ग देवे है, जिस दरवाजे हो नदी जाय हैं, सो दरवाजा पचास योजन लंबा पच्चीस योजन चौड़ा अर साढ़ा सैंतीस योजन का ऊंचा है अर मानुषोत्तर पर्वत पर चारों दिशा चार चैत्यालय हैं अर गुफाओं के द्वार आठ योजन के ऊंचे अर चार योजन चौड़े हैं अर उस पर्वत के चारों दिशाओं में मनोग्य स्थल विषें अठारह शिखरी हैं वे शिखरी 500 योजन ऊंचे हैं अर मूल विषे 500 योजन चौडे हैं अर ऊर्द्ध विषे अढाई सौ योजन चौडे हैं।।98।। चार दिशाओं में अर चार विदिशाओं में तीन तीन कूट हैं ईशान दिशा में वज्र कहिये हीरामई कूट है अर आग्नेय दिशा में तपनीय कहिये ताया सोना समान कूट है अर पूर्व दिशा में वैडूर्य नामा कूट उसका यशस्वान् है नामा देव स्वामी है अर अगर्भनामा कूट विषे यशकांतनामा गडुरकुमारदेव स्वामी है अर सुगंधितकूट विषे यशोधरनामा देव स्वामी है। अर दक्षिण दिशा में रुचक नामा कूट है वहां नंदननामा देव स्वामी है अर लोहित विषे नंदोत्तर देव स्वामी है।।100।।

अर उसी दिशा में अंजन कूट विषे असनिघोस देव बसे है अर पश्चिम दिशा में अंजन मूल विषे अर कनक कूट विषे मनुष्य कूट विषे रजत नामा कूट है अर उत्तर दिशा में स्फटिक कूट विषे सुदर्शन नामा देव बसे है। अर अंकनामा कूट विषे मोघ नामा देव बसे है अर प्रवाल कूट विषे सुप्रबुद्ध देव है। अर तपनीय कूट विषे सुरस्वाति है अर वज्रकूट विषे हनूमान नामा देव है अर दक्षिण अर पूर्व के कोण विषे निषध नामा कूट विषे वेणुनामा नाग कुमार देव बसे है अर नीलाचल के पिछले भाग विषे पूर्व उत्तर दिशा में सरवर्तन नामा कूट उस विषे वैणुरी नामा गरुड कुमार देव बसे हैं। अर निषधाचल के पिछले भाग विषे दक्षिण पश्चिम दिशा विषे भाग विलंब नामा कूट विषे अति विलंब वरुणदेव बसे है।।7।। अर नीलचल के पिछले भाग विषे पश्चिम उत्तर दिशा में प्रभंजन नामा देव पवनकुमार बसे है, ऐसा अनेक आश्चर्य कर संयुक्त सुवर्ण मय महामानुषोत्तर नामा पर्वत मनुष्य क्षेत्र के कोट की न्याईं चौगिर्द सोहे है।

इस पर्वत के परली ओर मनुष्य विद्याधर तथा ऋद्धिधारी मुनि भी न जा सके हैं, बिना समुद्रघात मनुष्य का प्रदेश भी मानुषोत्तर परे न जा सके है, अर जैसे जंबूद्वीप के चौगिरद लवण समुद्र 1 अर धातकी खण्ड के कालोदधि 2 अर पुष्कर द्वीप के चौगिरद पुष्करसमुद्र 3 इसी भांति वारुणीवरद्वीप अर वारुणीवर समुद्र 4 अर क्षीरवरद्वीप अर क्षीरवर समुद्र 5 अर घृतवरसमुद्र 6 अर इक्षुवरद्वीप अर इक्षुवर

समुद्र 7 अर नंदीश्वरद्वीप अर नंदीश्वरसमुद्र 8 अर अरुणवरद्वीप अर अरुणवर समुद्र 9 अर अरुणोदभासनामाद्वीप अर अरुणोद्भासनामा समुद्र 10 अर कुण्डलवरद्वीप अर कुण्डलवर समुद्र 11 अर शंखवरद्वीप अर शंखवर समुद्र 12 अर रुचकवरद्वीप अर रुचकवर समुद्र 13 अर चौदवां भुजंगवर द्वीप भुजंगवर समुद्र 14 अर पंद्रहवां कुसमवरद्वीप कुसमवर समुद्र 15 अर सोलवां क्रौंचवर द्वीप क्रौंचवर समुद्र 16।

ये सोलह ही द्वीप समुद्रों के नाम कहे। इस ही भांति असंख्यात द्वीप अर असंख्यात समुद्र हैं सो द्वीप को वेढ़े समुद्र अर समुद्र को वेढ़े द्वीप ऐसे दूने दूने विस्तार जानो अर सोलह आदि के द्वीप समुद्र कह इसी भांति अन्त के सोलह कहे हैं। उनमें पहिला मनशिल 1 दूजा हरिताल 2 तीजा सिंदूर 3 चौथा श्यामक 4 पांचवां अंजन 5 छठा हिंगुल 6 सातवां रूपवर 7 आठवां सुवर्णवर 8 नवमां वज्रवर 9 दसवां वैडूर्यवर 10 ग्यारवां नागवर 11 बारहवां भूतवर 12 तेरहवां यक्षवर 13 चौदहवां देववर 14 पंद्रवां इन्दुवर 15 सोलवां स्वयंभू रमण 16 ये जो अन्त के द्वीपों के नाम कहे, वही नाम समुद्रों के जानो, जंबू द्वीपादिक सोलह प्रथम राशि अर मनशिल आदिक अन्त का राशि इन दोनों राशियों के मध्य असंख्यात द्वीप समुद्र अनादि काल के हैं उनके मनोहर शुभ नाम हैं।।23।।

असंख्यात जो समुद्र कहे उनमें लवणोंदधि तो लवण समान क्षार जल अर वारुणीवर समुद्र का वारुणी कहिये मदिरा उस समान है जल का स्वाद जिसका अर घृतवर घृत समान अर क्षीर सागर का दुग्धसमान अर दूजा कालोदधि अर अन्त का स्वयंभू रमण समुद्र इनका जल मिष्ट जल समान है अर पुष्करोदधि का जल मधु कैसा स्वाद है अर सब असंख्यात समुद्रों का जल ईषरस समान है अर पहिला लवणोदधि दूजा कालोदधि अर अन्त का स्वंयभू रमण इन तीनों समुद्रों में जलचर जीव हैं अर सबों में जलचर जीव नहीं केवल जल काय स्थावर ही हैं। अर लवण समुद्र विषे वेरां सम्मूर्छन महामछ नौ योजन दीर्घ हैं अर मध्य विषे लवणोदधि में अठारह योजन दीर्घ हैं सम्मूर्छन मछ है।।26।।

अर कालोदधि विषे सम्मूर्छन मछ नदियों के संगम विषे अठारह योजन दीर्घ हैं अर मध्य विषे छत्तीस योजन लंबा मछ है। यह तो सम्मूर्छन मछों की दीर्घता कही अर गर्भज इनसे आधे लंबे जानो अर अन्त का जो स्वयंभू रमण समुद्र उसके आदि विषे सम्मूर्छन मच्छ पांच सौ योजन दीर्घ है अर मध्य विषे एक हजार योजन दीर्घता के धारक हैं।।29।। इन तीन समुद्रों में जलचर हैं अर किसी में नहीं अर वेइन्द्री, तेइन्दी, चौइन्द्री, ये विकलत्रय के जीव अढ़ाई द्वीप विषे कर्म भूमि हैं अर मानुषोत्तर से परे असंख्यात द्वीप समुद्रों में विकलत्रय नहीं अर अन्त का द्वीप स्वयंभूरमण उसके मध्य नागेन्द्र पर्वत पड़ा है उसे स्वयंप्रभाचल भी कहे हैं। उसकी वरली ओर लग, सब असंख्यात द्वीप समुद्रों में

भोगभूमि है तीसरे काल कैसी रीति सदा प्रवर्ते है जहां देव हैं वहां तथा नभचर थलचर पंचेन्द्री जीव हैं, जलचर नहीं विकलत्रय नहीं स्थावर सर्वत्र हैं अर वहां के पंचेंद्री तिर्यंच एक पल्य आयु के धारक देवगति में जानेहारे हैं वहां भोगभूमि नहीं 1 अर नागेंद्र पर्वत के परली ओर आधा स्वयंभूरमण द्वीप अर सारा स्वयंभूरमण समुद्र वहां कर्मभूमि हैं, पंचम काल कैसी प्रवृत्ति रीति सदा प्रवर्ते है। द्वीप अथवा समुद्र पिछले से आगिला दुगना दुगना अधिक विस्तार है एक राजू में असंख्यात द्वीप समुद्र हैं।।31।। मेरु के अर्द्धभाग से स्वयंभूरमण समुद्र के मध्य 75000 योजन जाइये वहां आध राजू का अर्द्ध विस्तार होय है। इसी भांति सर्वत्र जानो वाकी पाव राजू में असंख्यात द्वीप समुद्र हैं।

अथानन्तर – द्वीपों के समुद्रों के जे रक्षपालदेव हैं उनके नाम कहे हैं, जम्बूद्वीप का रक्षक अनाव्रत नामा देव है 1 और लवण समुद्र का अधिपति स्वस्तिक देव है 1 और धातकी खंड के नाथ दो एक प्रभास दूजा प्रियदर्शन 1 अर कालोदधि के अधिपति दो, एक काल दूजा महाकाल और पुष्करद्वीप के नायक पद्म और पुण्डरीक अर मानुषोत्तर के नाथ चक्षुष्मान्, अर वसुचक्षु।।35।।अर पुष्करोदधि के अधिपति श्रीप्रभ अर श्रीवर अर वारुणीवरद्वीप के पति वरुण अर वरुण प्रभ अर वारुणीवर समुद्र के स्वामी मध्य अर मध्यांग अर क्षीरवरद्वीप के पति पांडुर अर पुष्पदन्त।।37।। अर क्षीरोदधि के ईश बिमल अर विमलप्रभ अर घृतवर द्वीप के अधिष्ठाता सुप्रभ, महाप्रभ।।38।। अर घृतवर समुद्र के नायक कनक, कनकप्रभ अर इक्षुवरद्वीप के पति पूर्ण अर पूर्णप्रभ अर इक्षुवर समुद्र के स्वामी गन्ध अर महागन्ध अर नन्दीश्वर द्वीप के पति नन्दीश्वर अर नन्दप्रभ अर नन्दीश्वर समुद्र के धनी सुभद्र अर भद्र अर वरुणद्वीप के रक्षक वरुण अर वरुणप्रभ।।41।। वरुणवर समुद्र के स्वामी सुगन्ध अर सर्वगन्ध नामा दो देव जानो इस भांति द्वीपों के अर समुद्रों के दो दो अधिष्ठाता देव कहे हैं एक दक्षिण का अधिपति एक उत्तर का अधिपति है।।42।।

अर आठवां नन्दीश्वर द्वीप उसका विस्तार एक सौ तरेसठ कोटि चौरासी लाख योजन जानो जगत् का द्वीपक जो सर्वज्ञ वीतराग देव उसने यह सर्वद्वीप समुद्रों का विस्तार कहा है अर नन्दीश्वर द्वीप के भीतर की प्रदक्षिणा एक हजार छत्तीस कोटि बारह लाख दो हजार सात सौ तरेपन योजन जिनवर देव ने कही अर बाहिरली प्रदक्षिणा नन्दीश्वरद्वीप की दो हजार बहत्तर कोटि तेतीस लाख चौवन हजार एक सौ नब्बे योजन है।।47।। उस नन्दीश्वर द्वीप के मध्य चारों दिशाओं विषे चार अंजनगिरि हैं वे प्रत्येक प्रत्येक चौरासी हजार योजन ऊंचे अर इतने ही चौड़े हैं अर हजार योजन उनकी जड़ पृथ्वी विषे है वे चारों ढोल के आकार हैं अर विचित्रता को धरे हैं वज्रमणि का है मूल जिनका अर प्रभा कर देदीप्यमान हैं वे चारों अंजनगिरि महा मनोहर हैं।।49।।

वे पर्वत सुवर्णमूर्ति अर श्याम शिखरों के धारक हैं उनका कांति दशों दिशा विषे विस्तार रही है अर इन पर्वतों से लाख योजन जाइए तब चारों कोण विषें चोकूटी चार वापिका हैं वे अनादिनिधन हैं।।51।। सहस्रदल कमल सहित महा मनोहर हैं स्फटिकमणि समान हैं उज्वल जल जिनका अर नाना प्रकार मणिमई हैं सिवान जिनके अर जिनमें जलचर जीव नहीं केवल स्थावरकाय हैं अर वापियों की चौगिरद भीति हैं अर वे वापिका हजार हजार योजन ऊंडी हैं अर लाख योजन लम्बीं हैं अर लाख योजन की चौड़ी हैं एक एक वापिका जंबूद्वीप समान जानो।।53।। उनके नाम नन्दा 1 नंदवती 2 नंदोत्तरा 3 नंदघोषा 4 यह चार वापिका पूर्व दिशा के अंजनगिरि सम्बन्धी कही।।54।। उनमें नन्दा में तो सौधर्म इन्द्र क्रीडा करे है अर नन्दवती विषे ईशान इन्द्र क्रीडा करे अर नन्दोत्तरा विषे असुरकुमारों का इन्द्र चमरेन्द्र क्रीडा करे है अर नंदघोषा विषे असुरकुमारों का दूजा इन्द्र वैरोचन क्रीडा करे है।।55।।

अर दक्षिण दिशा के अंजनगिरि सम्बन्धी विजय 1 वैजयन्ती 2 जयन्ती 3 अपराजिता 4 यह चार वापिका पूर्व नन्दा आदि प्रमाण कही उनहीं प्रमाण जानो उन विषे इन्द्र के लोकपाल क्रीडा करे हैं विजया विषे सोम वैजयन्ती विषे वरुण जयन्ती विषे यम अपराजिता विषे कुवेर यह चारों लोकपाल इन विषे लीला करे हैं।।56।। अर पश्चिम दिशा की अंजनगिरि सम्बन्धी यह चार वापिका उनके नाम अशोका 1 प्रबुद्धा 2 कुमुदा 3 पुण्डरीकनी 4 यह चार चारों ओर है उनमें पहिली विषे वैणु नामा देव, दूजी विषे नागकुमारों का स्वामी धरणींद्र अर तीजी विषे नागकुमारों का इन्द्र रूपानंद क्रीडा करे है, अर चौथी विषे नागकुमारों का स्वामी भूतानंद क्रीडा करे है अर उत्तर दिशा के अंजनगिरि संबंधी यह वापिका चार उनके नाम प्रभंकरा 1 सुमना 2 आनन्दा 3 सुदर्शना 4 यह चार उनमें ईशान इन्द्र के चार लोकपाल लीला करे हैं प्रभंकरा विषे वरुण सुमना विषे यम आनन्दा विषे सोम सुदर्शना विषे कुवेर।।60।।

यह चार ही अंजनगिरि संबंधी सोलह वापिका कही। इन वापिकाओं में 65045 योजन भीतर का परस्पर अन्तर है अर मध्य का अन्तर 104602 योजन है अर वारिला अन्तराल 223661 योजन है।।63।। अर चार अंजनगिरि संबंधी यह सोलह वापिका कही उनके मध्य सुवर्णमई सोलह दधिमुख पर्वत हैं उनके शिखर रूपामई हैं उन पर्वतों का हजार हजार योजन का कन्द है अर दश दश हजार योजन ऊंचे अर इतने ही चौड़े ढोल के आकार दधिमुख गिरि हैं अर वापिका की चारों ओर चार वन हैं वे लाख लाख योजन लंबे अर पचास पचास हजार योजन चौड़े हैं, पूर्व दिशा की ओर अशोक वन हैं अर दक्षिण की ओर सप्तपर्ण वन पश्चिम की ओर चंपकवन अर उत्तर की ओर आम्रवन हैं।।38।।

अर इन वापिकाओं के कोण के समीप रतिकर पर्वत हैं वे ताया स्वर्ण समान ढोल के आकार हैं उनकी 250 योजन की नींव है अर हजार हजार योजन लंबे हैं अर इतने ही चौड़े हैं इतने ही ऊंचे हैं वे सब बत्तीस हैं एक एक अंजन गिरि सम्बन्धी चार चार दधिमुख अर आठ आठ रतिकर सो चार, अंजनगिरि सम्बन्धी सोलह दधिमुख अर बत्तीस रतिकर हैं। यह चार दिशा विषे बावन बावन पर्वत हैं एक एक दिशा विषे तेरह तेरह पर्वत हैं इन बावन पर्वतों विषे भगवान् के बावन चैत्यालय हैं एक एक गिरि विषें एक एक चैत्यालय है उन चैत्यालयों कर वे पर्वत महापवित्र हैं गिरियों के शिखर पर चैत्यालय हैं उनके पूर्व की ओर मुख हैं अर 100 योजन लंबे अर 50 योजन चौड़े हैं अर 75 योजन ऊंचे हैं अर चैत्यालयों के द्वार आठ योजन ऊंचे है अर चार योजन चौड़े है अर चार ही योजन की नींव है एक एक देवल के तीन द्वार है, वे नन्दीश्वर द्वीप के बावन चैत्यालय देवों कर पूज्य हैं उन विषे रत्नमई पांच सौ धनुष की प्रभु की प्रतिमा विराजे है।

उन चैत्यालयों विषे फागुन आषाढ़ कार्तिक की अठाई विषे नितप्रति इन्द्रादिक देव उत्साह सहित पूजा करे हैं अर सोलह वापियों के वन 64 उनमें नागकुमार देवों के चौंसठ मन्दिर है जो वन का नाम सोई देवों का नाम अर देवों के मन्दिर बासठ योजन ऊंचे अर इकतीस योजन लंबे अर इतने ही चौडे अर उनके द्वारों का प्रमाण पूर्व कहा ही है उस प्रमाण जानो।।80।। अर नन्दीश्वर द्वीप के परे अर अरुणद्वीप अर अरुणसमुद्र है, सो महा अन्धकार संयुक्त है सो ब्रह्म स्वर्गपर्यन्त अन्धकार है उस समुद्र के बाह्य आठ मृदंगाकार श्याम पंक्ति घनाकार हैं, उस समुद्रक पार अल्पऋद्धि के धारक देवगैल भूलि जाय हैं इससे महाऋद्धिवान् देवों के साथ जाय हैं।।81।।

अर कुण्डलगिरि द्वीप विषे कुण्डलगिरि पर्वत है सो गोल है पवन की राशि के तुल्य है उस पर्वत की हजार योजन की नींव है अर बियालीस हजार योजन ऊंचा है मणियों के समूहकर देदीप्यमान है सो पर्वत मूल विषे 10220 योजन चौड़ा है अर मध्य विषे 7161 योजन चौडा है अर अग्रभाग विषे चार हजार छयानवे योजन (4096) चौड़ा है उस पर्वत पर चारों दिशा में चार चार कूट हैं सो समस्त सोला कूट उनमें सोलह देव हैं पूर्व दिशा विषें त्रिशरा नामा देव है अर दूजा वज्रप्रभ नामा कूट है उस विषे पंचसिर प्रभ नामा देव बसे है अर तीजा कनककूट उस विषे महासिरा नामा देव बसे है अर चौथा कनक प्रभना कूट हैं उस विषे महाभुज नामा देव बसे है यह चार तो पूर्व दिशा के कहे अर दक्षिण दिशा विषे रजता नामाकूट है 1 उस विषे पद्मनामा देव बसे है अर रजतप्रभनामा कूट उस विषे पद्मोत्तरनामा देव बसे है अर सुप्रभनामा कूट विषे महापद्मनामा देव बसे है, महाप्रभ नामा कूट विषे वासुकी देव बसे है।

यह चार दक्षिण दिशा के कहे अर पश्चिम दिशा में अंकनामा कूट उस विषे हृदयांक नामा देव हैं अर जो अनन्तप्रभनामा कूट उस विषे महास्थिर देव बसे है अर मणिकूट विषे श्रीवृक्षदेव है अर मणिप्रभ विषे स्वस्तिक देव है यह पश्चिम दिशा के कहे उत्तर दिशा विषे स्फटिकनामा कूट है उस विषे सुन्दरदेव है अर जो स्फटिकनामा कूट है उस विषे विशालाक्ष है अर माहेन्द्र प्रभनामा जो कूट उस विषे पांडुक नामा देव है हिमवान् कूट विषे पांडुर नामा देव है ये उत्तरदिशा के कहे, ये सकल 16 नागकुमार जो देव हैं उनकी एक पल्य की आयु है वे अपने कूटों के महलों में विराजे हैं अर उस कुण्डलाचल के मस्तक विषे पूर्व पश्चिम दिशा में कुण्डल द्वीप के दो देव अधिपति तिष्ठे है अर कूट की ऊंचाई योजन एक हजार की है 1000 अर मूल विषे चौडाई भी 1000 योजन की है अर मध्य विषे चौडाई 750 योजन की है अर उर्द्ध विषे चौडाई 500 योजन की है उस पर्वत पर चारों दिशा में चार जिनमन्दिर हैं वे अंजनगिरि के समान हैं।।93।।

अर तेरहवां रुचिकवरद्वीप उसके मध्य रुचिकगिरि नामा पर्वत है सो बलयाकार गोल है।।94।। सो रुचिकरगिरि हजार योजन पृथ्वी विषे ऊण्डा है अर चौरासी हजार योजन ऊंचा है अर व्यालीस हजार योजन चौड़ा है।।95।। अर उस पर्वत पर चारों दिशा विषे चार कूट है, वे कूट हजार योजन चौड़े है अर पांच सौ योजन ऊंचे है उन कूटों के नाम – पूर्व दिशा विषे नंद्यावर्तनामा कूट उस विषे पद्मोत्तर नामा देव बसे है अर दक्षिण दिशा विषे स्वस्तिक नामा कूट उस विषे स्वहस्ती नामा देव है अर पश्चिम दिशा विषे श्रीवृक्ष नामा कूट उस विषे नीलक नामा देव है अर उत्तर दिशा विषे वर्द्धमान कूट उस विषे अंजन नामा देव है ये चार दिग्पाल देव हैं इनकी पल्योपम आयु है।।98।। अर उसी पर्वत विषे पूर्व दिशा विषे आठ कूट हैं वे अगले कूट प्रमाण उनमें दिक्कुमारी देव वरे है अर वैडूर्य कूट विषे विजयादेवी है अर कांचन विषे वैजयंती अर कनक विषे जयंती, अरिष्ट विषें अपराजिता अर दिक्कूट विषें नंदा अर स्वस्तिकनन्दन कूट विषे नंदोत्तरा अर अंजन विषें आंनदा अर अंजनमूलक विषें नांदीवर्द्धना ये आठ दिक्कुमारी देवी तीर्थंकर की उत्पत्ति विषे पूजा द्रव्य सहित जिनमाता के निकट झारी लिये तिष्ठे हैं।।99।।

अर दक्षिण दिशा विषे अमोघकूट उसमें स्वस्तिता देवी अर सुप्रबुद्ध कूट विषे सुपूर्वका देवी अर मंदिर कूट विषें प्रणिधिनामा देवी सो महा प्रतिबुद्ध अर विमलकूट विषे यशोधरनामा देवी अर रुचककूट विषे लक्ष्मीनामा देवी अर उसका नाम कीर्तिमती भी है।।4।। अर चंद्रकूट विषे रुचकनामा देवी अर सुप्रतिष्ठ कूट विषे वसुन्धरा नामा देवी तिष्ठे हैं ये आठ दिक्कुमारी तीर्थंकरों की उत्पत्ति के समय मणिमई दर्पण हाथ में लिये मात की सेवा करे हैं अर पश्चिम दिशा विषें लोहित नामा कूट उस विषे इलादेवी अर जगत कुसुम कूट विषे सुरा देवी अर नलिन कूट विषें पृथ्वीदेवी अर पद्मकूट विषें

पद्मावती देवी अर कुमुद कूट विषे कांचना देवी अर सौमनस कूट विषें नवमिका देवी अर यशःकूट विषें सीता देवी अर भद्रकूट विषें भद्रका देवी ये आठ दिक्कुमारी महाउज्वल माता के शिर पर छत्र धारती भई है अर उत्तर दिशा विषे जो स्फटिक कूट उस विषें लंबुसा देवी अर अंककूट विषें मिश्रकेशी देवी अर अंजन कूट विषें पुण्डरीकनी देवी।।10।। अर कांचन कूट विषें वारुणी देवी अर रजतकूट विषें आशा देवी अर कुण्डलकूट विषें ह्री देवी अर रुचक कूट विषे श्रीदेवी अर सुदर्शन कूट विषें धृति देवी ये आठ अर दिक्कुमारी चमर हाथ में लिये श्रीजिनराज की माता को सेवे हैं।।12।।

फिर चारों दिशा विषें उस ही रुचक गिरि पर चार अर कूट हैं वे दीप्ति कर महा देदीप्यमान हैं उन विषें पूर्व दिशा की ओर विमल कूट उस विषें चित्रा देवी अर दक्षिण दिशा विषें नित्यालोक कूट उस विषें कनक चित्रादेवी तिष्ठे है अर पश्चिम दिशा विषें स्वयंप्रभ नामा कूट उस विषें त्रिसरा देवी अर उत्तर दिशा विषें निद्योतनामा कूट उस विषें सूत्रामणि देवी बसे हैं।।15।। चे चार विद्युत्कुमारी देवी जिनराज की माता के निकट रहे हैं अर महा सुन्दर वार्ता करे हैं सूर्य की किरण समान उद्योत करणहारी हैं अब चार विदिशाओं विषें कथन करे हैं पूर्व अर उत्तर की कोण विषें वैडूर्य नामा कूट उस विषें रुचका देवी अर दक्षिण पूर्ण की कोण विषें रुचक नामा कूट उस विषें रुचिकोज्वला देवी।।17।। अर दक्षिण अर पश्चिम की कोण विषें मणिप्रभ नामा कूट उस विषें रुचकाभा देवी अर पश्चिम अर उत्तर की कोण विषें रुचकोत्तम नामा कूट रुचिकोत्तमा नामा देवी।।18।।

ये दिक्कुमारियों में शिरोभाग हैं वे जिनराज की माता की सेवा करे हैं अर विदिशायों विषें अर चार कूट हैं पूर्वोत्तर विषें रत्नकूट उस विषें विजयादेवी अर दक्षिण पूर्व विषें रत्नप्रभ नामा कूट उस विषें जयंती देवी कही है अर दक्षिण पश्चिम में सर्वरत्न नामा कूट उस विषें वैयजन्ती नामा देवी है। अर उत्तर पश्चिम विषें रत्नोचयनामा कूट उस विषें अपराजिता नामा देवी है।।19।। चार वे अर चार ये ये आठ देविये दिक्कुमारियों में महंत हैं, सो तीर्थंकर देव के जन्मोत्सव विषें तीर्थंकर की माता की सेवा करे हैं अर जन्मकल्याणक का उत्सव करे हैं।।22।।

यह रुचक गिरि नामा पर्वत तेरहवां है उसके ऊर्द्ध भाग विषें चारों दिशा में चार चैत्यालय हैं उनका अंजनगिरि के चैत्यालय समान विस्तार जानो पूर्व की ओर है मुख जिनका।।23।। यह रुचकगिरि पर्वत भगवान के अकृत्रिम चैत्यालयों कर अति सोहे है अर ये भवनवासिनी देवी विद्युत्कुमारी दिक्कुमारी कहावे हैं उनके निवास के कट उद्योत रूप उन कर पर्वत प्रकाश रूप है।।24।। अर अंत का स्वयंभूरमण द्वीप है उसके मध्य स्वयंप्रभ नामा पर्वत है उसे नागेंद्र पर्वत भी कहे हैं सो बलयाकार गोल अति सोहे है।।25।। अर पुष्कर द्वीप के मध्य मानुषोत्तर पर्वत कहा उसकी परली ओर से स्वयं प्रभाचल की पहली ओर तक असंख्यात द्वीप समुद्रों में जघन्य भोगभूमि है वहां

देव हैं 1, अर थलचर अर नभचर पंचेंद्री तिर्यंच सेनी गर्भज ही हैं उनका एक पल्य का आयु है अर मरकर भवनत्रिक देव होय हैं वहां असंख्यात द्वीप समुद्र में तीजे काल जैसी रचना है जघन्य भोगभूमि है उन तिर्यंचों में जलचर, असेनी विकलत्रय नहीं अर पंच प्रकार के स्थावर सर्वत्र हैं।

अर पंचेंद्री में देव तथा थलचर नभचर तिर्यंच हैं अर अढाई द्वीप परे मनुष्य नहीं, भोगभूमि में पहिला गुणस्थान मिथ्यात्व उससे लेकर चौथा जो अव्रत सम्यक्त्व गुणस्थान, वहां लग चार गुणस्थान हैं पंचम गुणस्थान से लेकर ऊपरले गुणस्थान नहीं 1 मिथ्यात्व से तो जगत् ही भरा है अर कैएक जीव वहां अव्रत सम्यग्दृष्टी भी हैं, परन्तु श्रावक के व्रत नहीं पंच गुणस्थान नहीं, अढाई द्वीप बाहर असंख्यात द्वीप समुद्रों में यह रचना है, अर अंत के द्वीप के मध्य स्वयंप्रभाचल उसकी पहिली तरफ आगे आधे स्वयंभूरमण द्वीप हैं अर सारे स्वयंभूरमण समुद्र में कर्मभूमि की रचना है वहां सदा पंचमकाल की-सी रीति है स्थावर तो सर्वत्र ही हैं अर वहां विकलत्रय है पंचेंद्री सैनी असैनी गर्भज सन्मूर्छन जलचर थलचर नभचर सर्व ही जीव हैं।

एक मनुष्य नहीं जलचर मच्छादिक पंचेंद्री अर विकलत्रय, ये जीव पहिले द्वीप समुद्र में अर दूजे द्वीप समुद्र में अर अढाई द्वीप में अर अंत ही के जानो। अर द्वीप समुद्र में नहीं अंत के आधे द्वीप अर सारे समुद्र में कर्मभूमि की रचना है पहिले गुणस्थान से लेकर व्रत लग पांच गुणस्थान हैं छठे से लेकर ऊपरले नहीं, मिथ्यात्वमय तो सर्व जगत्त्रय ही है अर अंत के द्वीप समुद्र में स्वयंप्रभाचल के परे कैएक पंचेंद्री तिर्यंच श्रावकव्रत के धारक पंच गुणस्थानवर्ती जो हैं वे भी सर्वज्ञ देव ने असंख्यात कहे हैं ये अति मनोहर द्वीप समुद्र कहे अर महासुन्दर पर्वत कहे उनमें किन्नरादि अष्ट प्रकार व्यंतरदेव अर नागकुमारादि भवनवासी देव बसे हैं देव योनि में श्रावकव्रत अर मुनिव्रत नहीं पहिले गुणस्थान से ले चौथे लग ही है।।28।।

गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहे हैं - हे श्रेणिक! यह असंख्यात द्वीप समुद्रों की रचना तुझे कही। अब ज्योतिषी देवों की अर स्वर्ग लोक की रचना सुनो।।29।। जंबूद्वीप आदि असंख्यात द्वीप अर लवण समुद्र आदि असंख्यात जे समुद्र उनकी रचना भगवंत भाषित जो भव्यजीव श्रवण करे उसका संदेह शीघ्र ही दूर होय अर जो सकल त्रैलोक्य की रचना सुने उसका संदेह तो दूर होय ही होय श्री जिनरूप सूर्य का जब उदय होय, तब अज्ञानरूप अंधकार का समूह कहां रहे! सर्वथा संदेहरूप तिमिर का नाश होय।।30।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ द्वीपसागरवर्णनं नाम पंचमः सर्गः।।5।।

छठवाँ सर्ग

अथानन्तर – ज्योतिष चक्र का वर्णन करे हैं। इस पृथ्वीतल से सात सौ नब्बे योजन ऊंचा तारामंडल है, सो सब ज्योतिषीदेवों के नीचे हैं। पृथ्वीतल से नौ सौ योजन तक ज्योतिषचक्र की हद है।।2।। समस्त ज्योतिष चक्र सात सौ नब्बे योजन से लेकर नौ सो योजन तक ज्योतिषीदेवों का लोक है, सो एक सौ दश योजन ज्योतिष देवों की धरा का दल है।।3।। यहां से सात सौ नव्वे योजन तो तारा मंडल है अर तारामण्डल से दस योजन ऊंचा सूर्यमण्डल है सो यहां से आठ सो योजन है। अर सूर्य मंडल से अस्सी योजन ऊंचा चंद्रमंडल है सो यहां से आठ सौ अस्सी योजन है अर चंद्रमंडल से चार योजन नक्षत्र मंडल है सो यहां से आठ सौ चौरासी योजन है। अर नक्षत्रमंडल से चार योजन ऊंचा बुध का विमान है सो यहां से आठ सौ अठासी योजन है।।5।।

अर बुध से ऊंचा तीन योजन शुक्र विमान है, सो यहां से आठ सौ इक्यानवें योजन हैं अर शुक्र से तीन योजन ऊंचा बृहस्पति का विमान है सो यहां से आठ सौ चौरानवे योजन है और बृहस्पति से तीन योजन ऊंचा मंगल का विमान है सो यहां आठ सौ सतानवें योजन है। अर मंगल से तीन योजन ऊंचा शनैश्चर का विमान है सो यहां से नौ सौ योजन है चन्द्र सूर्य ग्रह नक्षत्र तारा ये पांच प्रकार जोतिषी देव असंख्यात हैं उनमें चन्द्र का आयु एक पल्य और लाख वर्ष का है अर सूर्य का आयु एक पल्य अर हजार वर्ष का है शुक्र का आयु एक पल्य सौ वर्ष का है अर बृहस्पति का आयु पौन पल्य है अर मंगल बुध शनैश्चर का आयु आधा पल्य है, अर तारों का आयु पावपल्य है अर कैएक तारों का आयु आध पल्य है आध पावपल्य से जोतिषिओं की आयु घटती नहीं।।9।।

अर एक योजन के इकसठ भाग करिये उनमें छप्पन भाग चंद्रमा का विमान है, अर इकसठ भाग एक योजन के करिये उनमें अड़तालीस भाग लीजिये सो सूर्य के विमान का विस्तार है अर एक कोस शुक्र का विमान है अर पौन कोस बृहस्पति के विमान का विस्तार है अर आध कोस सकल ग्रहों के विमानों का विस्तार उत्कृष्ट आध कोस है अर तारों का मध्य विस्तार पाव कोस से कछुक अधिक है अर जघन्य विस्तार पाव कोस ही का है अर तारों का परस्पर अन्तर जघन्य एक कोस का सातवां भाग है अर मध्य अन्तर पचास कोस है अर उत्कृष्ट अन्तर हजार योजन है, अर सूर्य का विमान ताया सोना समान रक्त वर्ण आधे गोले के आकार है अर चन्द्रमा का विमान स्फटिकमणि समान श्वेत है तथा कमलतार समान श्वेत है अर राहु वा केतु का विमान लंबा एक योजन अर मोटा अढाई सौ धनुष है अर राहु केतु के विमान श्याम मणिमय चंद्र सूर्य के विमान के नीचे हैं। अर शुक्र का विमान मालती के

पुष्प समान रूपामई उज्ज्वल है अर बृहस्पति का विमान मुक्ता फल समान तथा स्फटिक मणि समान उज्ज्वल है। अर बुद्ध का विमान सुवर्ण समान है अर शनैश्चर का विमान ताये सुवर्ण समान है अर मंगल का विमान लाख के रंग समान लाल वर्ण है। यह जोतिषी देवों के विमानों का वर्णन कहा है।।20।।

अर अरुण द्वीप अर अरुणसमुद्र के ऊपर समस्त जोतिषी देवों के विमान केवल श्याम वर्ण ही हैं अर उससे महा अंधकार हैं अर अढाई द्वीप विषें ही सूर्यादिक का उदय अस्त है आगे अढाई द्वीप के परे सब ज्योतिषी देवों के विमान स्थिर ही हैं।।23।। अर असंख्यात ज्योतिषी देव हैं उनके इंद्र सूर्य चंद्रमा हैं वे चंद्रसूर्य असंख्यात द्वीप समुद्रों में असंख्यात हैं।।24।। अर जंबूद्वीप में चंद्र सूर्य सुमेरु से 1121 योजन न्यारे रह कर प्रदक्षिणा करे हैं।।25।।

जम्बूद्वीप विषे दो चंद्र दो सूर्य अर लवणोदधि विषे चार चंद्र चार सूर्य अर धातकीखण्ड विषे बारह चंद्र बारह सूर्य अर कालोदधि विषे 42 चंद्र बयालीस सूर्य अर पुष्करार्द्ध विषे बहत्तर चंद्र सूर्य अर अढाई द्वीप विषे 132 चंद्र 132 सूर्य हैं ज्योतिषी देवों का चंद्रमा इन्द्र है अर सूर्य प्रतेंद्र है एक चंद्रमा का इतना परिवार सो कहे हैं एक चंद्र के साथ सूर्य एक अर 28 नक्षत्र अर 88 ग्रह अर छयासठ हजार नौ सौ पिचहत्तर कोडाकोडी तारे 66975000000000000000।।29।। अर मानुषोत्तर के उरे आधे पुष्कर द्वीप में 72 चंद्रमा अर 72 में सूर्य अर मानुषोत्तर से परे, पचास हजार योजन जाय वहां चंद्र सूर्यादिक चक्रवलय कर तिष्ठे हैं अर मानुषोत्तर से परे प्रथम वलय आगे लाख लाख योजन जाय वहां चार अधिकवलय हैं उनकी किरणों परस्पर मिल रही हैं।।32।। अर धातकीखण्ड को आदि देकर द्वीपों विषे पिछलो कर संयुक्त रवि शशि किंचित् घाट चौगुने चौगुने द्वीप समुद्र में द्वीप विमानों की संख्या पाइये है।।33।। यह जोतिष लोक का वर्णन संक्षेप मात्र कहा।।1।।

अथानन्तर – स्वर्गलोक का संक्षेप वर्णन करे हैं। समेरु की चूलिका के ऊपर ऊर्द्ध लोक है सो मृदंग के आकार है ऊपर ऊपर सोलह स्वर्ग हैं अर अहमिन्द्रों का लोक है नवग्रैवेयक नव अणुत्तर पंच पंचाणुत्तर ये तेईस अहमिंद्र लोक हैं।।35।। पहिला स्वर्ग सौधर्म, दूजा ईशान, तीजा सनत्कुमार, चौथा माहेंद्र, पांचवां ब्रह्म, छठा ब्रह्मोत्तर, सातवां लांतव, आठवां कापिष्ट, नवमां शुक्र, दसवां महाशुक्र, ग्यारहवां सतार, बारहवां सहस्रार, तेरहवां आनत, चौदहवां प्राणत, पंद्रहवां आरण, सोलहवां अच्युत, ये सोलह स्वर्ग कहे हैं।।37।। अर नव ग्रैवेयक की तीन त्रिक हैं उनमें पहिली अधोत्रिक, दूजी मध्यत्रिक, तीजी ऊर्द्धत्रिक।।39।। अर इनके ऊपर नव अनुदिश अर तिनके ऊपर पंच अणुत्तर अर उनके ऊपर मुक्ति है सो ऊर्द्ध लोक का शिखर है।।40।। सोलह स्वर्गों के अर अहमिंद्रों के विमान 8497023 हैं अर पटल 63 हैं सो ऊर्द्धपंक्ति तिष्ठे हैं एक एक पटल में एक एक इन्द्रक विमान है सो

पटल के मध्यभाग विषे है, सकल 63 इन्द्रक विमान हैं उनमें पहिले इन्द्रक संबंधी चार दिशा में श्रेणीबद्ध विमान प्रत्येक प्रत्येक 63 हैं।

अर चार विदिशा में प्रत्येक प्रत्येक बासठ हैं अर दूजे इन्द्रक के दिशा प्रति बासठ अर विदिशा विदिशा प्रति साठ इस भांति सब इन्द्रक संबंधी दिशा विदिशों विषें एक एक श्रेणीबद्ध घाट है। अब सब इन्द्रकों के नाम कहे हैं उनमें तरेसठ इन्द्रक विमान है उनमें दिशा दिशा प्रति एक एक घाट है। प्रथम इन्द्रक विमान का नाम ऋजु, दूजा विमल, तीजा चंद्रनायक, चौथा वल्गु, पांचवां वीर, छठा अरण, सातवां नंदन, आठवां नलिन, नवमां कांचन, दसवां रोहित्तर, ग्यारहवां चंचक, बारहवां महत, तेरहवां दीप्ति, चौदवां वैडूर्य, पंद्रहवां रुचक, सोलहवां रुचिकभास, सत्तरहवां अर्क, अठारहवां स्फटिक, उन्नीसवां पृथिवी (पथीक) बीसवां मरु, इकीसवां भद्र, बाईसवां हारिद्रक, तेईसवां पद्म, चौबीसवां लोहित, पचीसवां वज्र, छब्बीसवां नंद्या, सत्ताईसवां प्रभंकर, अठाईसवां प्रष्टद्व, उणतीसवां गज, तीसवां मित्र, इकत्तीसवां प्रभाख्य, इकतीस इन्द्रक पहिले अर दूजे स्वर्ग विषें हैं।।47।।

अर तीजे चौथे स्वर्ग विषें सात पटल हैं उनके नाम – पहिला अंजन दूजा वनमाल तीजा नाग चौथा गरुड पांचवां लांगल छठा बलिभद्र सातवां चक्र।।48।। अर पांचवें छठे स्वर्ग विषें पटल चार उनके नाम पहिला अरिष्ठ, दूजा पुष्पक, (देवसमिति) तीजा ब्रह्मक, चौथा ब्रह्मोत्तर।।49।। अर सातवें आठवें स्वर्ग विषे पटल दो हैं, उनके नाम पहिला ब्रह्म हृदय, दूजा लांतव।।50।। अर नवमें दसमें स्वर्ग विषे पटल एक है उसका शुक्र अर ग्यारहवें बारहवें स्वर्ग विषे पटल एक उसका नाम सतार अर तेरहवें चौदहवें विषे पटल तीन उनके नाम पहिला आनत, दूजा पुष्पक, तीजा प्राणत, अर पंद्रहवें सोलहवें स्वर्ग विषें पटल तीन है। उनके नाम पहिला सानुकार, दूजा सौमनस, तीजा प्रीत्यंकर।।15।। ये बावन सोलह स्वर्गों के कहे, अर नव ग्रैवेयकों के तीन त्रिक उनके पटल नव उनमें नीचले त्रिक के पटल तीन उनमें पहिला सुदर्शन दूजा अमोघ, तीजा प्रबुद्ध, अर मध्य के त्रिक के पटल तीन उनमें पहिला यशोधर, दूजा सुभ्रद, तीजा सुविशाल।।52।।

ऊपरले त्रिक के पटल तीन उनमें पहिला सुमत, दूजा सोमस, तीजा प्रीत्यंकर ये नव पटल, नव ग्रैवेयकों के कहे अर नव अणुत्तरों के जे नव वे अनुदिश कहिये उनके इन्द्रक पटल एक उसका नाम आदित्य, अर पंचानुत्तर का पटल, उसका नाम सर्वार्थसिद्धि ये 63 पटल इन्द्रक विमान ऊर्द्धलोक के कहे हैं।।54।। पटल के मध्य भाग विषें एक एक इन्द्रक श्रेणीबद्ध प्रकीर्णक है। ये सब विमान केते हैं सो कहे हैं – सौधर्म स्वर्ग विषें विमान 3200000 अर ईशान विषें 2800000 सनत्कुमार विषें 1200000 माहेंद्र विषें 800000 ब्रह्म विषें 296000 ब्रह्मोत्तर 104000 लांतव विषे 25000 कापिष्ट विषें 24958

अर शुक्र स्वर्ग विषे 20020 अर महाशुक्र विषें 19980 अर सतार स्वर्ग विषे 3019 अर सहस्रार स्वर्ग विषें 2981 अर आनत प्रानत विषे 440 अर आरण आच्युत विषें 260 अर नीचले त्रिक विषें 111 अर मध्य के त्रिक विषें 107 अर ऊपरले त्रिक विषें 91 ये नव ग्रैवेयक विषें 315 विमान हैं।।62।।

अर नव अनुदिश के विमान नव उनके नाम उनमें पहिला अर्चि, दूजा अर्चिमालिनी, तीजा बज्र, चौथा वैरोचन, पांचवां सौम्य, छठा सौम्यरूप, सातवां अक, आठवां स्फटिक, नवमां आदित्य ये नव उनमें कईएक इन्द्रक आठ श्रेणीबद्ध जो इन्द्रक हैं सो मध्य हैं अर श्रेणीबद्ध आठ चार दिशा अर चार विदिशा विषें हैं अर पंचाणुत्तर के विमान पांच पहिला विजय, दूजा वैजयंत, तीजा जयंत, चौथा अपराजित पांचवां सर्वार्थसिद्धि इनमें 4 दिशाओं में श्रेणीबद्ध हैं अर सर्वार्थसिद्धि मध्य विषे इन्द्रक हैं सो त्रेसठ पटलों विषे सब विमान 8497023 हैं।

इनमें त्रेसठ इन्द्रक के सहित सौ पटलों के मध्यभाग विषे हैं। अर जो दिशा विदिशा श्रेणीबद्ध होय वे श्रेणीगत कहिए, वे सकल आठ हजार एक सौ सत्ताईस बाकी सब विमान प्रकीर्णक कहिए विषेरवां हैं 62 श्रेणीबद्ध 8127 कहे उनमें से चार हजार चार सौ पचानवें तो पहिले स्वर्ग विषें कहे अर 1488 दूजे स्वर्ग विषे कहे तीजे स्वर्ग विषे 616 चौथे स्वर्ग विषे दो सौ तीन अर पांचवे स्वर्ग विषे 186 छठे स्वर्ग विषे 94 अर सातवें स्वर्ग विषे 125 आठ विषे 31 अर नवमें विषे 58 दसवें स्वर्ग विषें 19 अर ग्यारहवें स्वर्ग विषे 55 बारहवें स्वर्ग विषें 18 तेरहवें स्वर्ग विषें 14 अर चौदहवें स्वर्ग विषें 48 पंद्रहवें स्वर्ग विषें 120 सोलहवें स्वर्ग विषें उनतालीस।।73।।

अर अधोग्रैवेयक पहिली त्रिक उस विषे विमान एक सौ तेईस इनमें पहिली ग्रैवेयक विषे 45 दूजी स्वर्ग विषे 41 तीजी स्वर्ग विषे 33 ये सब 123 भये अर चौथी ग्रैवेयक विषें 33 पांचवीं ग्रैवेयक में 29 छठी ग्रैवेयक में 25 ये श्रेणीबद्ध विमान कहे अर उर्द्ध त्रिक विषे सातवीं ग्रैवेयक विषें 21 अर आठवीं में 17 नवमीं में 13 ये श्रेणीबद्ध कहे अर नव अणुत्तर के नव अर पंचाणुत्तर के पांच उनमें एक इंद्रक सहित 8127 बाकी सब विमान प्रकीर्णक जानो।।77।। उन विमानों में प्रथम स्वर्ग विषें संख्यात योजन विस्तार 640000 हैं अर दूजे स्वर्ग विषें विमान संख्यात योजन के विस्तार 560600 तीजे स्वर्ग विषें 240000 अर चौथे स्वर्ग विषें 160000 अर पांचवें छठे विषें 80007 अर सातवें आठवें विषें 10000 अर नवमें दसवें में 4004 अर ग्यारहवें बारहवें विषें 3976 तेहरवें चौदहवें स्वर्गविषें 88 अर पंद्रहवें सोलहवें विषें 52 स्वर्गन में ये संख्यात योजन के विमान हैं।।85।। अर नव ग्रैवेयक विषें इंद्रक विमान तो संख्यात योजन के विस्तार हैं अर श्रेणीबद्ध असंख्यात योजन के विस्तार हैं अर प्रकीर्णक कई एक तो असंख्यात योजनों के विस्तार हैं अर कैयक संख्यात योजन के विस्तार हैं। सब

विमानों में 6797649 विमान तो असंख्यात योजन के विस्तार हैं अर 1699380 संख्यात योजन के विस्तार हैं।।86।। सर्वत्र संख्यात योजन के विस्तार विमानों से असंख्यात योजन के विस्तार विमान चौगुने जानो अर अढाई द्वीप अर पहिला स्वर्ग का ऋजु विमान अर पहिले नरक का सीमंत नाम पाथडा अर मुक्तिशिला सिद्धक्षेत्र ये पांच 4500000 योजन के प्रमाण हैं अर मेरु की चूलिका के अर पहिले स्वर्ग के ऋजु विमान कैएक बालमात्र अंतराल है अर जम्बूद्वीप अर सातवें नरक का अप्रतिष्ट नाम विला अर सर्वार्थसिद्ध तीनों नौ लाख योजन के प्रमाण जानो।।88।।

अर स्वर्ग लोक के श्रेणीबद्ध विमान के आधे तो स्वयंभूरमण समुद्र ऊपर हैं अर बाकी के विमान अन्य समुद्रों के ऊपर हैं असंख्यात योजन के विमान सर्वत्र चौगुने हैं अर संख्यात योजन के विस्तार विमान उनसे चतुर्थ भाग हैं।।90।। अर पहिले दूजे स्वर्ग के मन्दिरों के पीठ को बाहुल्यता 1121 योजन अर ऊपरले स्वर्ग विषें दो दो स्वर्गों में निन्याणवें निन्याणवें योजन बाहुल्यता घटती गई है।।91।। अर मंदिरों के चौड़ाई आदि के स्वर्ग में 120 योजन अर तीजे चौथे स्वर्ग विषें 100 योजन आगे दश दश योजन चौड़ाई घटी तब पांचवें छठे स्वर्ग विषें चौडाई योजन नब्बे अर सातवें आठवें स्वर्ग में चौड़ाई योजन अस्सी अर नवमें दसमें स्वर्ग विषे चौड़ाई योजन सत्तर अर ग्यारहवें बारवें स्वर्ग विषें चौड़ाई योजन साठ तेरहवें चौदहवें विषे योजन पचास अर पंद्रहवें सोलवें स्वर्ग विषें मंदिरों की चौड़ाई योजन चालीस अर नव ग्रैवेयक विषे पहिली त्रिक में तीस, दूजी में बीस, तीजी त्रिक में दश अर नव अणुत्तर विषें मन्दिरों की चौड़ाई योजन पांच।।93।।

अर पंच अनुत्तर विषे मन्दिरों की चौडाई योजन पांच अर मन्दिरों की उच्चता योजन 500 अर आगे युगल पांच पर्यन्त पचास पचास योजन ऊंचाई में घटाइये अर वहां परे ऊंचाई में योजन पचास पचास घटे अर पांचवें छठे 450 योजन हैं अर सातवें आठवें मंदिरों की उच्चता योजन 400 अर नवमें दश में योजन 350 अर ग्यारहवें बारहवें योजन 300 अर तेरहवें चौदहवें योजन 250 अर पंद्रहवें सोलहवें योजन 225 मंदिरों की ऊंचाई है, अर आगे पच्चीस पच्चीस योजन घटती जानो अर मन्दिरों की नींव पहिले दूजे स्वर्ग विषें योजन 60 अर तीजे चौथे स्वर्ग विषे मंदिरों की नींव योजन 50 आगे युगल युगल पर्यन्त पांच पांच योजन घटी है, तब सोलहवें स्वर्ग 20 योजन मन्दिरों की नींव है अर ग्रैवेयक विषे पहिली त्रिक में 15 दूजी त्रिक में 10 तीजी त्रिक में 5 अर नव अणुत्तर, पंचाणुत्तर विषे इन 14 विमानों की मन्दिरों का नीव योजन अढाई।।95।।

अर पहिले दूजे स्वर्ग विषें मंदिर पंच वर्ण रत्मई कृष्ण नील रक्त पीत श्वेत ये पांच वर्ण तो सब जाति के रत्न पहिले दूजे स्वर्ग विषे हैं अर तीज चौथे स्वर्ग विषें कृष्णवर्ण नहीं अर चार वर्ण रत्नमई

मंदिर हैं अर पांचवें छठे सातवें आठवें इनचार स्वर्गों में कृष्ण अर नील ये दो वर्ण नहीं श्वेत रक्त पीत ये तीन वर्ण हैं अर नवमें दसवें ग्यारहवें बारहवें पीत अर श्वेत ये दो वर्ण हैं अर वर्ण नहीं अर तेरहवें चौदहवें पंद्रहवें सोलहवें अर अहमिंद्र लोक में मंदिरों के श्वेत वर्ण ही रत्न हैं वे स्वर्ग लोक के मन्दिर महा सुन्दर हैं।।98।। स्वर्ग के दो युगल घनोदधि के आकार हैं अर दो युगल घनवात बलय के आधार हैं अर ऊपर आकाश के आधार हैं।।99।। छै युगलों में इंद्रक विमान में बारह इंद्र बसे हैं अर श्रेणीबद्ध विषें देव बसे हैं बारह इन्द्रकों में इन्द्र छै दक्षिण श्रेणी के तो एक भवावतारी हैं अर उत्तर के इन्द्रक निश्चय नहीं अल्पसंसारी हैं दीर्घसंसारी नहीं।।100।।

अर पंचाग्नि के साधक तपस्वी परमती भवनत्रिक देव तक उपजे हैं जो उनसे महातप करे सो व्यंतर भवनवासी ज्योतिषी तक उपजे स्वर्ग विषें न जाय, देव होय तो भवनत्रि का होय अर मनुष्य होय तो मिथ्यादृष्टि राजादिक होय अर परिव्राजक कहिये दंडी संन्यासी सो पांचवें स्वर्ग तक जाय उसके अग्नि जल का आरम्भ नहीं अर पर मतियों में आजीवका कहिये अत्यंत मन्द कषायी सो बारहवें देवलोक तक भी उपजे परंतु बिना वीतराग देव की श्रद्धा इंद्रादिक ऊंचा देव न होय छोटे देव में उपजे अर बारहवें स्वर्ग ऊपर परदर्शनी न जाय आजीवी कहिये जिसने जन्म पर्यन्त विषय ग्रामादिक गमन तजा अर मौनावलंबी है मन्द कषाय क्षुदा तृषादि बाधा भी सहे हैं अर चौथा गुणस्थानवर्ती अव्रत सम्यग्दृष्टा भी बारहवें स्वर्ग तक जाय आगे व्रत बिना न जाय अर श्रावक श्राविका आर्या ये पंचम गुणस्थानवर्ती प्रथम स्वर्ग से लेकर सोलहवें स्वर्ग तक जाय अर अहमिंद्र लोक में न जाय 1 अर द्रव्य चरित्र मुनि का भेष धरे सो प्रथम स्वर्ग से ले नव ग्रैवेयक तक जाय आगे चौदह अणुत्तर विषे भाव लिंगी मुनि ही जाय अर द्रव्यलिंग अभव्य जीव भी धरे उग्र तप कर नवग्रैवेयक पर्यंत जाय आगे न जाय, मुक्ति विषें अर चौदह अणुत्तर विमानों विषे भाव लिंगी मुनि ही जाय, अर की गम्यता नहीं।।105।।

अर ज्योतिषी देवन पर्यंत कृष्ण नील कपोत ये तीन अशुभ लेश्या तौ द्रव्यरूप अर भाव रूप हैं अर पीतलेश्या भवनत्रिक देवों के जघन्य रूप हैं, अर पहिले दूजे स्वर्ग पीतलेश्या मध्यम है, अर तीजे चौथे स्वर्ग पीतलेश्या उत्कृष्ट है अर पद्मलेश्या जघन्य रूप है, अर पांचवें स्वर्ग से लेकर अर दशमें स्वर्ग पर्यंत पद्मलेश्या मध्यम अर ग्यारहवें बारहवें स्वर्ग विषें पद्मलेश्या उत्कृष्ट है अर शुक्ललेश्या जघन्य है अर तेरहवें चौदहवें पंद्रहवें सोलहवें इन चार स्वर्गों विषे अर नवग्रैवेयक विषें शुक्ललेश्या मध्यम है अर नव अणुदिशा विषें पंच अणुत्तर विषें शुक्ललेश्या उत्कृष्ट हैं अहमिंद्र देव संक्लेशता रहित हैं यह देवों के लेश्या कही।

अब देवों की अवधि सुनो। पहिले दूजे स्वर्ग के अवधि पहिले दूजे स्वर्ग के अवधि पहिले नरक पर्यंत हैं अवधि कर वहां तक देखे जाने अर तीजे चौथे स्वर्गों के देवों की अवधि दूजे नर्क पर्यंत है अर पांचवें स्वर्ग से ले आठवें पर्यन्त देवों की अवधि चौथे नरक पर्यन्त है अर आठवें नवमें दसवें ग्यारहवें बारहवें तेरहवें चौदहवें पंद्रहवें सोलहवें स्वर्ग के देवों की अवधि पांचवें नरकपर्यन्त है।।16।। अर नवग्रैवेयक वालों की अवधि छठे पर्यंत है अर नव अणुदिश वालों की अवधि सातवें नरक पर्यन्त है अर पांच अणुत्तर वालों की अवधि लोकनाली पर्यन्त है ।।114।। यह तो नीवली अवधी कही अर ऊपरली अवधि समस्त ही देवों के अपने-अपने विमान की ध्वजा पर्यन्त जानो आगे नहीं ऐसा निश्चय सर्वज्ञदेव ने कहा है अर ऊपरले सब ही देवों की देवी पहिले दूजे स्वर्ग उपजे हैं। आगे देवियों की उत्पत्ति नहीं, दक्षिण दिशा के देवों की नियोगनी देवी सौधर्म स्वर्ग विषें उपजे हैं अर उत्तर दिशा के देवों की देवी ईशान स्वर्ग विषें उपजे हैं सो अपनी-अपनी नियोगनी जान ऊपरले देव इन दो स्वर्गों से ले जाय हैं पहिला तीजा पांचवां सातवां ग्याहरवां पंद्रहवां यह दक्षिण श्रेणी के हैं अर इनकी देवी पहिले स्वर्ग विषे उपजे हैं सो अपनी अपनी ले जाय हैं।

दूजा चौथा छठा आठवां बारहवां सोलहवां उत्तर श्रेणी के हैं सो इनकी देवी दूजे स्वर्ग विषे उपजे हैं सो भी ले जाय हैं। सौधर्म स्वर्ग विषे केवल देवांगनायों के निवास के विमान छह लाख हैं अर ईशान स्वर्ग विषें चार लाख विमान हैं उन विषें देवी उपजे हैं। कैसी हैं देवी, सुन्दर वस्त्र आभरण कर मन अर नेत्रों की हरणहारी हैं महा सुन्दर रूप कर संयुक्त हैं अनेक विक्रया के धारक जो हाव भाव विभ्रम विलास उन कर मंडित महा मनोज्ञ हैं स्वभाव ही कर प्रेम की भरी अनेक पल्य की आयु की धरणहारी महासुख कर युक्त हैं।

उन देवियों सहित इन्द्र तथा सामानिक त्रायस्त्रिंशत् आदि देव सोलह स्वर्ग पर्यन्त सागरों की आयु के धरणहारे दीर्घकाल जीवें महा सुख भोगवें हैं।।115।। अर सोलह स्वर्गों के ऊपर अहमिंद्र हैं वे इन्द्रों से अनंत गुणा सुख भोगवें है उनके साता वेदनी का पूरण उदय है स्त्री रहित शांतभाव रूप परम सुख भोगवें हैं अर सर्वार्थसिद्धि के परे बारह योजन सिद्धों का स्थानक है सो तीन लोक के अग्र भाग में है वह अष्टमी धरा त्रैलोक्य विषे प्रसिद्ध है सुप्रभानामा पृथ्वी सात राजू लम्बी एक राजू चौड़ी आठ योजन जड़ उसके मध्य विषे आठ योजन नाड़ी है अर अनुक्रमकर घटती गई है सो अंत विषे अंगुल के असंख्यातवें भाग स्थूलता धरे है ऊंचा वर्तुलाकार श्वेत छत्र उसके समान उज्ज्वल है।।27।। पैंतालीस लाख योजन के विस्तार को धरे हैं ऐसी मोक्ष शिला है वह अष्टम धरा उसके समान अर धरा नहीं।

ऐसी भगवंत देव ने भाषी है अर मुक्ति शिला की प्रदक्षणा एक कोडि बयालीस लाख 30 हजार दो सौ उनंचास योजन है अर तीन वातवलय पहिले कहे थे, उनमें दो वातवलय की बाहुल्यता तो वहां तीन कोस की है अर तीजा तनु वातवलय उसकी बाहुल्यता वहां पंद्रह सौ पिचहत्तर धनुष है।।31।। सो तनुबातवलय के अंत विषे अनंते सिद्ध विराजे हैं उनकी उत्कृष्ट अवगाहना धनुष 525 जघन्य अवगाहना साढ़े तीन हाथ यह जिनागम विषें कही है सिद्ध भया है प्रयोजन जिनका ऐसे सिद्ध भगवान् जहां एक विराजे हैं वहां अनन्त विराज रहे हैं एक ठौर अनन्त समाये हैं ऐसी अवगाहना शक्ति है।।34।। वे भगवान शरीर रहित सुख पिंड सिद्ध परमेष्ठी विघ्न रहित ज्ञानोपयोग अर दर्शनोपयोग कर युक्त हैं।।35।। वे सदा सुखी सर्व लोक अर अलोक को निरन्तर अनन्त पर्याय सहित जाने हैं अर देखे हैं अपने स्वभाव में तिष्ठे हैं।।36।। वे सिद्ध महा शुद्ध सर्व वस्तु के वेत्ता जन्म जरा मरण रहित अविनाशी भए अविनाशी धाम विषे बंधन रहित शाश्वते तिष्ठे हैं।।37।।

यहां गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहे हैं – हे श्रेणिक! तुझे जोतिषी देव लोकों के पटल का प्रगट व्याख्यान कहा अर मोक्ष पर्यंत स्वर्ग लोक का व्याख्यान तुझे कहा। हे नरपति! मैंने संक्षेप से त्रैलोक्य प्रज्ञप्ति का व्याख्यान किया यह व्याख्यान कानों को सुखदाई है सो कल्याण के अर्थ तुझे कह सुनाया। अब हे चिरंजीव! जो उपक्षेत्र का व्याख्यानकर काल का व्याख्यान मैं तुझे कहूं हूं सो तू एकाग्र चित्तकर सुन।।38।।

यह धर्म ध्यान महा उज्ज्वल उदय रूप मोक्ष का कारण जिनेंद्रदेव ने कहा उसके चार पाये – आज्ञाविचय 1 अपाय विचय 2 अर विपाक विचय 3 अर संस्थान विचय 4 ये चारों पायै चित्तवृत्ति के निरोध के कारण हैं। यह लोक के आकार चिंतवन जितेन्द्री पुरुषों को निरन्तर करणे इस संस्थान विचय कर धर्म ध्यान पूर्ण होय है मन अर इन्द्रिय रूप माते हाथी वश करणे का यह धर्म ध्यान बड़ा उपाय है इसलिये जो विवेकी मन इन्द्रिय वश किया चाहें सो संस्थान विचय का चिंतवन कर समस्त लोक को हेय जान शुद्ध आत्मा को उपादेय मान आत्मा का ध्यान करे।।39।।

इति अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ ज्योतिर्लोकोर्द्धलोकवर्णनं नाम षष्ठः सर्गः।।6।।

कर्मभूमि में जो मनुष्य जन्म पाकर सुकृत (पुण्य) नाहीं करै हैं, उनके हस्त में प्राप्त हुआ अमृत जाता रहै है। – पद्मपुराण भाषा वचनिका, पृष्ठ 19

सातवाँ सर्ग

कालचक्र का वर्णन

अथानन्तर – सातवें अध्याय का आरम्भ करे हैं। कालद्रव्य दो प्रकार हैं – एक मुख्य कहिये निश्चय काल अर दूजा गौण काल कहिये व्यवहार काल सो काल द्रव्य वर्तना लक्षण है अर वर्ण गंध रस स्पर्श इनकर रहित है अर अगुरु लघु कहिये गुरुता उर कर रहित है।।1।। जैसे धर्म द्रव्य गति सहाई अर अधर्म द्रव्य स्थिति सहाई आकाश अवकाश देने को सहाई वैसे काल वर्तना सहाई है। जैसे ज्ञानी जन आगम की दृष्टि कर धर्म अधर्म आकाश का निश्चय करे तैसे काल का भी निश्चय करना।।3।। जीव अर पुद्गल का परिणमन अनेक प्रकार है, सो परिणमन का सहाई काल द्रव्य है, अर गौण काल कहिये समय आवली घटिकादि रूप व्यवहार काल उसकी प्रवृत्ति मुख्य काल जो कालाणुरूप निश्चय काल द्रव्य उसके आधीन है।।4।। सब ही द्रव्यों के परिणामादि वृत्तियें अन्तरंग अर बहिरंग कारण से होय हैं।।5।।

अंतरंग कारण तो वस्तु का स्वभाव है सो जीव का जीव में है अर पुद्गल का पुद्गल में है अर सबों का सबों में है। अंतरंग कारण तो आपका आप ही में है सो सब ही द्रव्य अपने स्वभाव परिणमें हैं।।6।। अर बहिरंग कारण सबों का परिणमनक निश्चय काल का सर्वज्ञ देव ने दिखाया है, सो निश्चय करना लोकाकाश के एक एक प्रदेश विषे एक एक कालाणु तिष्ठे हैं कोई प्रदेश कालाणु बिना नहीं अर सर्व कालाणु परस्पर जुदा हैं कोई किसी से न मिले लोक के असंख्यात प्रदेशों में असंख्यात कालाणु हैं। द्रव्यार्थिक नय कर सब ही द्रव्य निर्विकार हैं अर जन्म-मरण से रहित नित्य हैं अपने स्वरूप विषे तिष्ठे हैं।।9।।

अर पर्यायार्थिक नय कर अगुरुलघु गुण कर समय परिणमन सबके है सो सब ही द्रव्य समय वर्ती अर्थ पर्याय कर क्षणवर्ती हैं अनित्य हैं नित्यता अर अनित्यता द्रव्य विषें दोनों हैं निश्चय काल का पर्याय समयादि रूप व्यवहार काल अतीत अनागत वर्तमान के भेद कर तीन प्रकार हैं अनन्त समय के उपजावने वाली कालाणु को अनन्त समय कहिये 6 कारण रूप कालाणु द्रव्यवाली समय रूप पर्याय की उत्पत्ति है। कारण बिना कार्य की उत्पत्ति कदाचित् न होय।।12।। जो कारण बिना ही कार्य उपजे तो स्वतः स्वभाव खर के सींग भी क्यों न उपजें। जैसा कारण होय वैसी ही कार्य उपजे। जौ के बीज से शालि न उपजे अर जैसा अन्य द्रव्य वैसा अन्य द्रव्य की उत्पत्ति ही उससे मुख्य उपादान कारण तो सबको अपना अपना है अर दूजे द्रव्य का दूजे द्रव्य को जो कारण कहिये है सो सहकारी

कारण है मुख्य कारण नहीं। सब द्रव्यों को वर्तना सहाई काल कहा सो सहकारी कारण है समयादिक व्यवहार काल कालाणु पर्याय है, सो पुद्गल परमाणु के गमनकर जाना जाय है।।15।।

पुद्गल परमाणु मन्द चाल चले तो एक समय में आकाश के एक प्रदेश गमन करे अर शीघ्र गमन करे तो एक समय में चौदह राजू जाय।।16।। अर समय आवली उछ्वास प्राण स्तोक लव इत्यादि व्यवहार काल के भेद हैं जिसे काल का एक भाग से दूजा भाग न होय सो समय कहिये। अर जो असंख्यात समय व्यतीत होय सो एक आवली कहिए अर संख्यात आवलियों का एक उछ्वास कहिये। उछ्वास अर निश्वास इन दोनों को प्राण कहिये। अर सप्त प्राणों का एक स्तोक कहिये अर सप्त स्तोकों का एक लव कहिये अर सतहत्तर लव का एक मुहूर्त कहिये अर तीस मुहूर्त का एक अहोरात्र कहिये अर पन्द्रह अहोरात्र का एक पक्ष कहिये। अर दो पक्ष का एक मास कहिये। अर दो मास का एक ऋत्तु कहिये।

अर तीन ऋत्तुओं का एक अयन कहिये। अर दो अयनों का एक वर्ष कहिये। अर दश वर्षों को दश गुणे करिये तो वर्ष 100 होय, सौ को दश गुणो करिए तब वर्ष 1000 होय, अर हजार को सौ गुणे करिये तब एक लाख वर्ष होय। अर एक लाख को चौरासी गुणे करिये तब 8400000 वर्ष होय सो एक पूर्वांग कहिये। अर चौरासी लाख पूर्वांग व्यतीत होवें तब एक पूर्व कहिये। अर पूर्व को चौरासी लाख गुणा करिये तब एक पूर्वांग होय। अर चौरासी लाख पूर्वांग का एक पूर्व होय। अर चौरासी लाख पूर्व का एक नयुतांग होय।।4।। अर चौरासी लाख नयुतांग का एक नयुत होय।।6।। अर चौरासी लाख नयुत का एक कुमुदांग होय।।7।। अर चौरासी लाख कुमुदांग का एक कुमुद होय।।8।। अर चौरासी लाख कुमुद का एक पद्मांग होय।।9।। अर चौरासी लाख पद्मांग एक पद्म होय।।10।।

अर चौरासी लाख पद्म का एक नलिनांग होय।।11।। अर चौरासी लाख नलिनांग का एक नलिन होय।।12।। अर चौरासी लाख नलिनों का एक कमलांग होय।।13।। अर चौरासी लाख कमलां का एक कमल होय।।14।। अर चौरासी लाख कमल का एक टुट्यांग होय।।15।। अर चौरासी लाख टुट्यांग का एक टुट्यु होय।।16।। अर चौरासी लाख टुट्यु का एक अटटांग होय।।17।। अर चौरासी लाख अटटांग का एक अट्ट होय।।18।। अर चौरासी लाख अट्ट का एक अमुमांग।।19।। चौरासी लाख अमुमांग का एक अमम।।20।। अर चौरासी लाख अमम का एक उहांग।।21।। अर चौरासी लाख उहांग का एक 1 उह।।22।। अर चौरासी लाख उह का एक 1 लतांग।।23।। अर चौरासी लाख लतांग का 1 लता।।24।। अर चौरासी लाख लता का 1 महालतांग।।25।। अर चौरासी लाख महालतांग की 1 महालता।।26।। अर चौरासी लाख महालता का 1 सिर प्रकंपित।।27।।

अर चौरासी लाख सिर प्रकंपित का 1 हस्त प्रहेलिका।।28।। अर चौरासी लाख हस्तप्रहेलिका का एक वचिंतक।।29।।

यहां तक मध्य संख्यात वर्ष काल की मर्यादा कही अर अंकों की संख्या को उलंघे सो उत्कृष्ट संख्यात वर्ष वा असंख्यात अनंत काल उसके पल्य सागर कल्पादि अनन्त भेद हैं।।31।। पुद्गल परमाणु आदि मध्य अंत से रहित अविभागी हैं इन्द्रिय गोचर नहीं मूर्त्तीक हैं तो भी इन्द्रियों से अगम्य हैं महासूक्ष्म हैं, एक प्रदेशी हैं।।32।। अर एक रस अर एक वर्ण एक गन्ध दो स्पर्श ये पांच गुण एक काल में धारे हैं अर शब्द से रहित हैं अर खन्ध के योग कर शब्द की उत्पत्ति कारण हैं।।33।। वर्ण, गंध, रस, स्पर्श इन गुणों कर परमाणु गले पूरे तथा रुक्ष स्निग्ध गुण के वधने घटने से उनके स्कन्ध (क) परस्पर मिलें अर विछुरें वे पुद्गल कहिये स्कन्ध की नहीं परमाणु ही को पुद्गल कहिये वर्णादिक गुण मिले अर विछुरे।।36।।

अनन्तानन्त परमाणुओं के समूह का अब संज्ञादिक का नाम स्कन्ध कहिये अर आठ संज्ञादिक एक संज्ञा संज्ञादिक कहिये अर आठ संज्ञा संज्ञादिक का एक त्रसरेणु कहिये। आगे सनासन ततरेणु त्रसरेणु रथरेणु उत्तम मध्यम जघन्य भोगभूमि वा कर्मभूमि के बाल का अग्रवां भाग क्रम से अब सनासन से लगभग आठ आठ गुणा मोटा जानना अर आठ कर्म भूमियें बालाग्र की एक लीख कहिये अर आठ लीखों की एक जूं कहिये, अर आठ जूवों का एक यव कहिये, अर आठ यवों की एक उत्सेधांगुल कहिये। सो इस उत्सेधांगुल कर अल्प वस्तुओं का प्रमाण है अर जीव के देह की उच्चता का प्रमाण है। अर पांच सौ उत्सेधांगुल की एक प्रमाणांगुल कहिये अर प्रमाणांगुल अवसर्पिणी काल का प्रथम चक्रवर्ति पांच सौ धनुष के शरीर का धारक होय, उतना उसका जानो सो अकृत्रिम वस्तुओं की ऊंचाई अर चौड़ाई द्वीप अर सागर अर सुमेरु आदि पर्वतों का प्रमाण या प्रमाणांगुल से जानना। अर अजितनाथ स्वामी से लेकर पार्श्वनाथ पर्यन्त समय में जितना शरीर भया, उतना शरीर की जो आंगुल सो आत्मांगुल कहिये सो उन अंगुलों का प्रमाण उस समय के नगरादि ग्रहादिक अर छत्र चामरादिक का प्रमाण जानो।

भावार्थ – अंगुल तीन प्रकार है – एक उत्सेधांगुल, दूजी प्रमाणांगुल तीजी आत्मांगुल, सो अकृत्रिम वस्तुओं का विस्तार तो प्रमाणांगुल से है अर समय समय नगरादिक का प्रमाण आत्मांगुल से है अर आठ जौ की एक उत्सेधांगुल उस कर अल्प वस्तुओं का प्रमाण जानो अर जीवों के शरीर की ऊंचाई पांच सौ धनुष अर साढ़े तीन हाथ अर तीन कोस यह सब उत्सेधांगुल से गिणिये सो छै उत्सेधांगुल का पाव हाथ होय अर बारह अंगुल की एक वितस्ती होय। दो वितस्ती का एक हाथ अर दो हाथ का एक किक्क अर दो किक्क का एक धनुष सो धनुष का नाम दंड भी कहिये अर 2000

धनुष का एक कोस कहिये अर चार कोस का एक योजन कहिये अथवा आठ हजार धनुषों का एक योजन कहिये।।46।। क्षेत्रों की चौड़ाई लंबाई अर पर्वतों की लंबाई ये सब बड़े योजन से कहे सो बड़े योजन प्रमाणांगुल से हैं अर क्षेत्र की जितनी चौड़ाई उससे तिगुनी प्रदक्षिणा जानो।।47।।

अथानन्तर – पल्य का विचार कहे हैं। एक गोल खांडा एक योजन चौड़ा अर एक योजन लंबा अर एक योजन ऊण्डा सो उत्तम भोग भूमियों के सात दिन के उर्णा के रोमों के अग्र भागकर गाढ़ा बज्र से गदा से कूट कूट भरिये अर सौ वर्ष जाय तब एक रोम काढ़िये सो इस विधि काढ़ते काढ़ते जो खांडा रीता हो जाय, सो व्यवहार पल्य के समयों की संख्या कहिये अर असंख्यात कोडि वर्ष के जितने समय होंय उतने व्यवहार पल्य जावें, तब एक उद्धार पल्य कहिये।।51।। अर असंख्यात कोटि वर्ष के जेते समय होंय उतने ही उद्धार पल्य जावें तब एक अद्धा पल्य कहिये। अर अद्धा पल्य दस कोडा कोडी जाय तब एक सागर कहिये। ऐसी दस कोडा कोडी सागर की एक अवसर्पिणी, अर दस कोडा कोडी सागर की एक उत्सर्पिणी सो इनके प्रत्येक प्रत्येक छै छै काल हैं। वस्तुओं की शक्ति अर आयु काय सब जिस विषें घटती जावे सो अवसर्पिणी अर जिस विषे बढ़ती जाय सो उत्सर्पिणी। उनमें अवसर्पिणी के छै काल – पहिला सुखमा सुखमा, दूजा सुखमा, तीजा सुखमा दुखमा, चौथा दुखमा सुखमा, पांचवां दुखमा, छठा दुखमा दुखमा, ये तो अवसर्पिणी के कहे अर उत्सर्पिणी काल का पहिला दुखमा दुःख का, दूजा दुखमा, तीजा दुखमा सुखमा, चौथा सुखमा दुखमा, पांचवां सुखमा, छठा सुखमा सुखमा।।59।।

उनमें अवसर्पिणी काल का पहिला सुखमा सुखमा, सागर कोड़ा कोड़ी चार 1, अर दूजा सागर कोडा कोडी तीन 2, अर तीजा सागर कोडा कोडी दोय 3, अर चौथा बयालीस हजार वर्ष घाट सागर एक कोडा कोडी 4, अर पांचवां वर्ष हजार इक्कीस 5, अर छठा वर्ष इक्कीस 6 इस भांति अवसर्पिणी के छह काल कहे। ये अवसर्पिणी अर उत्सर्पिणी दोनों भरत अर ऐरावत क्षेत्र विषें प्रवर्ते अर क्षेत्रों में नांही। इन दोनों ही क्षेत्रों में आयु कायादिक की हानि-वृद्धि है अर सर्वत्र सदा एक रीति है, पांच मेरुओं के पांच भरत अर पांच ही ऐरावत इन दस क्षेत्रों में पहिले दूजे तीजे काल विषे कल्पवृक्षों कर शोभित भोग भूमि थी सो युगल ही उपजै। पहिले काल विषें शरीर ऊंचा कोस तीन आयु पल्य तीन।।1।। अर दूजे काल में शरीर कोस दोय अर आयु पल्य दोय।।2।। अर तीजे काल में काय कोस एक अर आयु पल्य एक।।3।।

पहिले काल में देवकुरु उत्तर कुरु, समान रीति और दूजे काल में हरिक्षेत्र रम्यकक्षेत्र कैसी रीति है अर तीजे काल में हैमवत अर हैरण्यवत क्षेत्र कैसी रीति है।।66।। अर पहिले काल में मनुष्यों की उगते सूर्य की सो प्रभा अर दूजे काल में पूर्ण चन्द्रमा की सी प्रभा अर तीजे में प्रियंगुमणि जैसी। पहिले

काल में तीन दिन पीछे बदरीफल समान आहार अर दूजे में दो दिन पीछे बहेडे प्रमाण आहार प्रभा स्त्री पुरुष सब ही सुन्दर अर तीजे में एक दिन के अन्तर आंवले प्रमाण आहार अर तीनों काल विषे यह पृथ्वी रत्नों की प्रभा कर स्वर्ग भूमि सारखी सोहे।

इन्द्र नीलमणि महानील अर अंजनमणि महाकृष्ण अर पद्म राग मणि आदिक अति आरक्त अर स्फटिक हीरा मुक्ता फलादि अति श्वेत अर पुष्यराग तथा हेमादिक पीत।।72।। इन पांच वर्ण के रत्नों कर पृथ्वी महा मनोहर भासे, रत्नों की किरणों कर सब दिशा प्रकाश रूप सोहे।।73।।

भोग भूमि की सुन्दर स्त्री समान सोहे चंद्रकान्तमणि की शिला वेई हैं मुख जिसके अर विद्रुम कहिये मूंगा बेई हैं अधर कहिये होठ जिसके अर मणि कंचन मई कंचुकियों कर अति सोहे हैं। अर जहां चंद्रकान्त मणियों की किरण अतिशीत अर सूर्यकांत की किरण उष्णता सो परस्पर मिल रही हैं जुदी न होय हैं जैसे शीत कर पीडे पुरुष को उष्णता अति रुचे, अर उष्णता कर पीडित पुरुष को शीतता रुचे तैसे परस्पर मैत्री भाव कर सूर्यकान्त अर चन्द्रकान्त मणियों की प्रभा परस्पर मिल रही हैं अर समस्त जाति की जो मणि उनकी किरण सब ही मिल रही हैं। उन कर पृथ्वी ऐसी सोहे है मानो प्रेम के बस कर सब शोभा यहां एकत्र भई हैं? अर जहां भूमि पंच वर्ण रत्नोंकर मण्डित सोहे है सुख रूप है स्पर्श जिसका अर अति सुगन्ध अति सुख की भरी अति मनोहर है शब्द जहां अर चार अंगुल के तृण महा मिष्ट महा रस के भरे उन कर भूमि महा मनोहर भासे है।।77।। अर वापी अर सरोवर महा मिष्ट जल के भरे अर रत्नों के हैं तट जिनके उन करके भोगभूमि महा रमणीक है। दधि दुग्ध घृत ईक्षुरस उन कर भरे हैं निवान जहां अर जहां पर्वत महासुन्दर नाना वर्ण मणि उन कर मण्डित अर सुवर्ण उन कर शोभित प्राणियों को सुखदाई, ऐसे सुन्दर गिरि उन कर धरा निरन्तर सोहे है।।80।।

अर जोतीरांग 1 गृहांग 2 दीपांग 3 सूर्यांग 4 भोजनांग 5 भाजनांग 6 वस्त्रांग 7 मालांग 8 षणांग 9 भूमद्यांग 10 ये दस कल्प वृक्षों कर पृथ्वी अति मनोग्य दीखे है। ज्योतिरांग जाति के कल्प वृक्षों कर चांद सूर्य की ज्योती न दीखे, राति दिन का भेद न जाना परे।।81।। अर गृहांग जाति के जे कल्पवृक्ष उनके समूह कर आकाश महामनोहर भासे अर उन वृक्षों कर नाना प्रकार के मंदिर बन जायं। कैसे हैं मंदिर, अनेक हैं स्वर्ण जिनके अर उपवन सहित नाना प्रकार की शोभा को धरें, अति सुखकारी है भूमि जिनकी।।82।। अर दीपांग जाति के कल्पवृक्ष ते अपनी विस्तीर्ण दीर्घ शाखा कर कमल समान मनोहर कोंपलों को धरे हैं। वे कोंपल दीपक समान अरुण अर उद्योतकारी हैं।।83।।

अर सूर्यांग जाति के कल्पवृक्ष वे चार प्रकार के अनेक जाति के वादित्रों को उपजावे हैं। वादित्रों के नाम – तत 1 वितत 2 घन 3 शुखिर 4 तत कहिये तारका बाजा वीणा तमूरा रवाब आदि 1 अर वितत कहिये चर्म का मढा मृदंग ढोल नगारा डफ इत्यादि 2 अर घन कहिये झालर झांझ मजीरा

इत्यादि इत्यादि कांसी का बाजा 3 अर शुखिर कहिये शंख बांसुरी करनाल तुरई इत्यादिकों का बाजा। इन वादित्रों को निपजावे है सो तूर्यांग जाति का कल्पवृक्ष कहिये।।84।। अर भोजनांग जाति का कल्पवृक्ष अति मिष्ट षट् रस मय चार प्रकार के भोजन उपजावे हैं। भोजनों के नाम – अशन कहिये दाल भात रोटी तरकारी आदि 1 अर पान कहिये जल दुग्ध तक्र शरबत इत्यादि 2 अर खाद्य कहिये मेवा मिष्टान्न आदि अर स्वाद्य कहिये लबंग इलायची दीलचीनी आदि।।85।। अर भाजन जाति के कल्पवृक्ष थाल कटोरा रकेबी इत्यादि बासन नाना प्रकार के मणि सुवर्ण मई देवे हैं।।86।।

अर वस्त्रांग जाति के कल्पवृक्ष महासुन्दर वस्त्र देवें नाना प्रकार के वस्त्र रेशमी पशमीना सूत के तथा चीनक इत्यादि नाना प्रकार के वस्त्र इनकी शाखाओं विषें लूमते रहें जो चाहो सो लो।।87।। अर मालांग जाति के कल्पवृक्ष नाना प्रकार के पुष्पों की माला धरे सोहे मालती मालिन का इत्यादि कुसम योग्य जे पुष्प उनकर गूंथी जो माला भोगभूमियां इनको देवें।।88।। अर भूषणांग जाति के कल्पवृक्ष हार कुण्डल केयूर कटिमेखला इत्यादि आभूषणों कर शोभित महान भासे हैं स्त्री अर पुरुषों को उचित जो आभूषण सो देवे है।।89।। अर मद्यांग जाति के कल्पवृक्ष स्त्री अर पुरुषों को महा मनोहर कामोत्पादक वस्तु दे हैं जिसकर मन की प्रसन्नता होय अर मदन की वृद्धि होय।।90।।

ये कल्पवृक्ष दस प्रकार उन कर उपजे भोग भूमियां भोगे हैं वे भोग चक्रवर्ती के दशांगों से अति अधिक हैं।।91।। जहां गर्भ विषे स्त्री पुरुष युगल ही रहे हैं अर गर्भ से युगल ही जन्मे हैं सो जन्म के दिन से सात दिन तक अपने अंगुष्ठ चूंसे हैं। इनकी माता तो इनके जन्म होते ही मरण पावे अर सात दिन पीछे तक धरती में लोटते चलें अर पीछे सातवें दिन बैठने की शक्ति होय अर दिन सातवें पांवों से चलने की शक्ति होय। फिर दिन सातवें सर्व कला विषे निपुण होंय अर सकल गुण में प्रवीण होंय अर दिन में सातमें यौवन प्राप्त होय अर पीछे सात दिन में सम्यक्त्व ग्रहण की योग्यता होय अर किसी को सम्यक्त्व उपजे तो यौवन पीछे सात दिन उपजे, जहां सबहीं मनुष्य रोग रहित आनंद से रमे हैं सबही कलाधारी महा गुणवंत चतुर स्त्री अर पुरुष सबही लक्षणों कर संपूर्ण कोई ही नारी पर पुरुष गामनी नहीं अर कोई ही नर परनारी रत नहीं।

शील स्वभावी भद्र परणामी महासरल सौम्य मूर्ति अर मल मूत्रादि रहित है अंग जिनका अर निर्मल कपट रहित है बुद्धि जिनकी अर तीव्र है इन्द्रियों का ज्ञान जिनके जहां नर देवों समान, नारी देवांगना तुल्य, सुन्दर वर्ण, सुन्दर गंध, सुन्दर रस, सुन्दर स्पर्श, सुन्दर शब्द, सुन्दर भेष, सबही बातों की मनोहर उस भोग भूमि में हैं जहां स्त्री पुरुष परस्पर अति अनुरागी पुरुषों के कान स्त्रियों के गीतों के शब्द विषें अर स्त्रियों के कान पुरुषों के शब्द श्रवण विषे अर पुरुषों के नेत्र स्त्रियों के रूप निरखने विषे अर पुरुषों के विलोकन विषे स्त्रियों के नेत्र अर नारों की नासिका नारी की सुगन्धता विषे, अर

नारियों की नासिका नरों की सुगन्धता विषे नरों की जिह्वा नारियों के मुख रसास्वादन विषें, अर नारियों की जिह्वा नरों के मुख रसास्वाद विषें इस भांति परस्पर नारियों का चित्त अति आसक्त है जहां देवों कैसे भोग हैं तथापि भोगों की अति आसक्तता कर जिनका मन तृप्त न होय जिनका मन सदा इन्द्रियों के विषय विषें अनुरागी हैं।।98।।

वे विषय अभिलाषी हैं उनके रंचक मात्र भी तृप्ति नहीं जैसे मनुष्यों के युगल प्रेम के भरे परस्पर रमे हैं वैसे ही परस्पर तिर्यंचों के युगल सुख से रमे हैं। कहीं एक सिंह सिंहनी कहीं एक हाथी अर हथिनी कहीं एक बराह अर बराहिनी कहीं एक अश्व अर अश्विनी कहीं इक गौ अर वृषभ, कहीं एक महिष अर महिषी, इत्यादि तिर्यंचों के युगल मदन के मद कर उन्मत्त भये परस्पर सुख से रमे हैं, जितना मनुष्य का आयु उतना ही तिर्यंच का आयु अर कोई जीव मांस आहारी दुराचारी नहीं। जहां परस्पर बैर भाव नहीं है। अपनी इच्छा कर नाना प्रकार के भोग भोगवें हैं जहां नारी नर को आर्य ऐसा नाम कहैं अर नारी को नर आर्ये कहे हैं भोग भूमि में यही नाम हैं अर नाम नहीं अर जहां सबही उत्तम एक जाति अर चार वर्ण का भेद नहीं अर षट् कर्म नहीं जहां कोई स्वामी अर सेवक नहीं अर जहां भेष धारी नहीं अर कोई राजा नहीं सब समान हैं अर कोई जहां शत्रु मित्र नहीं सबही मध्यस्थ हैं अर सहज ही सब मंद कषाय के योग से आयु के क्षय विषें देव ही होवें अर गति उनको नहीं अर मरण समय दुख नहीं सुख से प्राण छूटे। पुरुषों को तो मरण समय छींक आवे अर स्त्रियों को जंभाई आवे अर स्त्री पुरुषों का मरण एक ही बार एके लारे मरें, केलारे जन्में अर जनम एक परस्पर प्रेम होय।।100।।

अथानन्तर – गौतम गणधर राजा श्रेणिक का अभिप्राय जान कर भोगभूमि में उपजने के कारण जान कहते भये, वे कर्मभूमि के मनुष्य स्वभाव ही कर मंदकषाय हैं अर उत्तम पात्रों को दान करें हैं वे पात्रदान के प्रभाव से भोगभूमि में जावें सो पात्र के भेद तीन उत्कृष्ट मुनि सो सम्यक् दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र, सम्यक् तप, उनकी शुद्धता कर महा पवित्र हैं अर शत्रु मित्र विषे समान है बुद्धि जिनकी अर मध्य पात्र पंचम गुणस्थानवर्ती आर्या अर श्रावक श्राविका, अर जघन्य पात्र चतुर्थ गुणस्थानवर्ती अव्रत सम्यग्दृष्टि। ये त्रिविध उनको विनय संयुक्त विधिपूर्वक दान देकर कर्मभूमि का मनुष्य भोगभूमि के दिव्य सुख भोगे हैं। तीन प्रकार के ही पात्र तीन प्रकार की ही भोगभूमि ।।10।। जैसे भले क्षेत्र विषे विधि पूर्वक बोया बीज अलप भी वृद्धि को प्राप्त होवे वैसे पात्र को दिया विधिपूर्वक आहारादि दान विशेष फल को फले जैसे शालि अर सांठे से खेत विषे प्राप्त भया जल मिष्टता के भाव को भजे है अर गाय ने पीया जो नीर सो दूध होय परिणमें वैसे ही अलप है रस स्वाद जिसका ऐसा अन्न पान औषधादिक पात्र विषे दिया परलोक विषे अक्षय पद को फले है।

सम्यक्दृष्टि श्रावक तो पात्रदान ही कर मुक्ति का अधिकारी होय, जो मुनिव्रत धरे तो मुक्ति ही जाय अर मुनिव्रत न धरे तो स्वर्ग ही पावे अर सम्यक् बिना भद्र परणामी मिथ्यादृष्टि क्रियावान् विधि पूर्वक पात्र दान करे तो भोगभूमि पावे अर जे सम्यक् रहित श्रावक तथा मुनि की क्रिया के धारक वे मिथ्यात्व के योग से कुपात्र कहिये जिनके आत्मज्ञान नहीं अर यती श्रावक की क्रिया है उनको जो भक्ति कर मुनि जान आहारादिक दान देय सो कुपात्र के दान के योग से भोगभूमि विषें तिर्यंच होवे अथवा कुभोग भूमि विषें कुमानुष होय, अर जो सम्यक् अर व्रत दोनों से रहित हैं अर आपको महंत माने हैं वे अपात्र कहिये सो अपात्र विषे जो भक्ति कर दान देवें सो दान विफल है जैसे, खारी भूमि विषे बोया बीज वृथा जाय अर जो दुखित, भुखित, दीन, अन्ध, पंगु, रोगी, बाल, वृद्ध इत्यादि जीव हैं उन सबको करुणा भाव कर दान देना सफल है, सबही मनुष्य अर सबही पशु क्षुधा तृषा शीत घामादिक कर पीड़ित होय उन कर दुःख निवारने को अन्न जल वस्त्र औषधादि सबको देना योग्य है अर पशुवों को तृण जल इत्यादि देने। दान समान जग में अर सुख का दाता नहीं।।15।।

ज्ञान अर क्रियादि उन्हों से रहित है उसे गुरु जान विनय कर देना उचित नहीं जैसे नीम के वृक्ष विषे प्राप्त भया जल कटुता को भजे है अर मां चने कोदूं इन विषे जल मदिरा रूप मदकारी होय है, अर सर्प के मुख विषे गया दूध विष हो जाय है वैसे दुष्ट अर दुर्जन दुराचारी जे परद्रोही उनको दिया विपरीत रूप परणवे है, जैसे स्फटिकमणि तो महा निर्मल है अर नीचले दंड के योग से नाना रंग भासे है, वैसे दान तो सुख का ही दाता होता है परन्तु अविवेक के योग से उत्तम फल का दाता नहीं। अर सम्यग्दृष्टि जीव अपने अर पर के अनुग्रह की इच्छा कर विधि पूर्वक दान देकर स्वर्ग मोक्ष ही पावे। निर्मल है अंतःकरण जिसका। अथानन्तर पहिला दूजा काल तो व्यतीत भया अर तीजे काल में पल्य का आठवां भाग बाकी रहा तब भोगभूमि की रीति निवृति भई कल्पवृक्षों की ज्योति मंद भई उस समय इस भरत 1 क्षेत्र विषे कुलकरों की उत्पत्ति भई, सो हे श्रेणिक! कुलकरों की उत्पत्ति सुन।

गंगा सिंधु जो दो नदी उनके मध्य यह दक्षिण भरत उस विषे अनुक्रम कर चौदह कुलकर उपजे।।24।। उन में आदि प्रतिश्रुत कुलकर उपजा महाप्रभाकर संयुक्त जिसको पूर्व भव का स्मरण है।।25।। उसके समय प्रजा पूर्णमासी के दिन चांद सूर्य को विलोकती भई सूर्य तो अस्त होता देखा अर चंद्र उदय होता देखा मानो रवि शशि के मंडल आकाश रूप गज के घटा समान सोहे हैं।।26।। अब तक तो भोगभूमि में दोनों में दृष्टि न पड़े अब दृष्टि पड़े सो इनको अकस्मात् देखकर प्रजा के लोक भयमान भेले होय कुलकरों के शरण आए अर पूछते भए।।27।। हे नराधिपति। दोनों गगन के अंत विषे देखबे में आवे हैं, अब तक कभी देखे नहीं आज ही देखने में आए अर एक ओर तो एक उगता ही दीखे है अर एक ओर अस्त होता ही दीखे है अर दोनों मण्डलाकार कहिए गोल हैं सो

उनको देखकर हमारे भय उपजा है। ये क्या है? अहो स्वामी! हमको अकस्मात् भय उपजा है। क्या सब प्रजा के प्रलय का काल ही आया है। कैसा है प्रलय काल, दुस्तर कहिये दुर्निवार है।।29।।

इस भांति लोगों ने पूछा, तब कुलकर कहते हैं – हे लोग हो! तुम भय न करो, तुमको यह बाधाकारी नहीं, तुम शोक तज निश्चिन्त होवो।।30।। ये दोनों प्रभाव के मण्डल मण्डित हैं यह तो पश्चिम की ओर अस्त होता आदित्य दीखे है यह पूर्व की उदय होता चंद्र दीखे।।31।। ये दोनों सूर्य चंद्र ज्योतिषी देवों के अधिपति हैं सदा मेरु की प्रदक्षिणा करे हैं सदा भ्रमते रहे हैं। देवों के चार भेद हैं उनमें ज्योतिषी देवों के समूह आकाश में सदा भ्रमण करे हैं। उनके यह स्वामी हैं ज्योतिरांग जाति के कल्पवृक्षों की प्रभा कर यहां न दीखते थे अर महाविदेहों में तो सदा ही दृष्टिगोचर हैं अब यहां ज्योतिरांग जाति के कल्पवृक्षों की प्रभा मंद होने कर ये दृष्टिगोचर भए हैं जैसे कोई सबल शत्रु की प्रभा घटती देख उसे जीतने की इच्छा कर प्रगट होय वैसे यह कल्पवृक्षों की प्रभा मन्द भई जान मानो उनको जीतने को प्रगट भए हैं। अब इस भरत क्षेत्र विषे सूर्य के उदय अस्त से रात दिवस का विभाग होगा अर चंद्रमा की कला के घटने बढ़ने से कृष्ण अर शुक्लपक्ष प्रकट होवेंगे दिन में सूर्य की कान्ति कर चंद्रमा अस्त समान भासे है अर ग्रह तारा नक्षत्र ये दिवस को न भासेंगे, रात ही को भासेंगे।।37।। अब तुम कही हम ये अपूर्व देखे सो पूर्व जन्म विषे तुम विदेह क्षेत्र में कई बार देखे हैं इसलिये अपूर्व दर्शन नहीं। देखे सुनि अनुभई वस्तु का जिसको दर्शन होय तो उत्पाद काहे का इससे तुम निर्भय होवो काल स्वभाव के भेद कर वस्तुओं का स्वभाव नाना रूप भासे द्रव्य क्षेत्र अर प्रजा का आचरण अर का अर रूप होय।।40।। अब तक प्रजा के लोक निरपराध थे इसलिये दण्ड योग्य न थे अब कछुयक दोषों के सद्भाव से दण्ड योग्य होवेंगे, सो महा धिक्कार, इन तीन दण्डों कर कुलकर प्रजा को मार्ग में चलावते भये।

राजाओं के भय कर प्रजा दोषों से रहित होयगी। प्रजा को अनर्थ के बचाने के अर्थ अर अर्थ की सिद्धि के निमित्त शास्त्र विषे दण्ड नीति कही है दण्ड कहिये दुष्टों का निग्रह अर नीति कहिये शिष्टों का प्रतिपालन कुलकर लोकों को कहता भया। मेरी आज्ञा सुन हृदय विषे धार कर तुम स्त्री पुरुष सुख से अपने स्थान विषे तिष्टों। ये वचन प्रजापति के प्रजा उर में धार अपने-अपने स्थान को गये। उपज्या है आनन्द जिनको उसके वचन कर्मभूमि के लोकों ने प्रथम ही सुने अर धारे जैसे गुरु के वचन शिष्य सुन के धारे इससे पृथ्वी विषे प्रसिद्ध इसका नाम प्रतिश्रुत भया।।47।। यह प्रतिश्रुत पल्य के दसवें भाग अपना आयु पूर्ण कर देव लोक गया उसके पीछे फिर दूजा कुलकर सन्मति भया सो पहिले कुलकर की सी मर्यादा राखता हुवा लोकों को भली मति देता भया अर दुख निवारता भया इसलिये इसका नाम सन्मति कहा गया, समस्त कलाओं का कुलग्रह होता भया।।49।। पल्य के सौंवे भाग इसका आयु होता भया सो अपनी आयु पूर्ण कर देव लोक को गया।।50।।

इसके पीछे तीजा कुलकर क्षेमंकर भया उस समय सिंह व्याघ्र आदि क्रूरता रूप भये तिनका भय क्षेमंकर मेटता भया जो तुम इनका विश्वास मत करो अब ये कर्मभूमि के योग से विकार को प्राप्त भये हैं।।51।। लोगों को क्षेम कहिये कुशल का कर्ता इससे क्षेमंकर नामा पाया।।52।। सो पल्य के हजारवें भाग अपनी आयु पूर्ण कर स्वर्ग लोक को गया। इसके पीछे फिर चौथा कुलकर क्षेमंधर भया जो क्षेमंधर का आयु पल्य के दस हजारवें भाग उसके समय सिंहव्याघ्रादिक अत्यन्त क्रूर भये तब उनके भय निवारण अर्थ कुल करने लोकों को लट्ठ रखाये।।53।।

काल पाय क्षेमंधर भी देवलोक को गया उस समय पीछे पांचवां कुलकर सीमंकर भया उसका आयु पल्य के लाखवें भाग। इसके समय प्रजा कल्पवृक्षों के लोभी परस्पर विसंवाद करते भये तब कुलकर वृक्षों की साया कहिये मर्यादा कर उनका झगड़ा मेटता भया सीमंकर भी स्वर्ग को गया। इसके पीछे फिर छठे कुलकर सीमंधर भये उनकी आयु पल्य के दस लाखवें भाग।।55।। सो आयु पूर्ण कर स्वर्ग को गया उनके पीछे सातवां कुलकर विपुलवाहन भया सो हाथियों की सवारी कर क्रीड़ा करता भया।।56।। उसकी आयु पल्य के किरोडवें भाग सो भी आयु पूर्णकर देव भया उसके पीछे आठवां कुलकर चक्षुष्मान भया। उसकी आयु पल्य के दस करोडवें भाग उसके समय लोक पुत्रों का मुख देखते भये। अब तक यह रीति थी कि जिस समय पुत्र का जन्म होय उस ही समय माता पिता का मरण सो अष्टम कुलकर के समय माता पिता पुत्रों का मुख देखते भये। इसमें इसका नाम चक्षुष्मान लोगों ने कहा है। हे चिंरजीव राजा! मैंने सन्तान का मुख देखा इसलिये चक्षुष्मान ऐसे लोक स्तुति करते भये।।58।।

सो कुलकर आयु पूर्ण कर देवलोक गये पीछे नौवा कुलकर यशस्वी भया उसका आयु पल्य के सौ करोडवां भाग उसके समय प्रजा पुत्रों का नाम धरते भये। अब तक नाम न था यशस्वी का विस्तीर्ण यश लोक करते भये।।60।। सो यशस्वी भी अपना यश विस्तीर्ण कर पृथ्वी में स्वर्ग लोक भये उस पीछे फिर दशवें कुलकर अभिचन्द्र भया उसकी आयु पल्य के हजार कोडिवें भाग उसके समय प्रजा पुत्र को गोद में उठाय चांद के सन्मुख रमावते भये अर भाजन में जल डार चन्द्रमा का प्रतिबिंब दिखाय बालकों को रमावते भये उससे इसका नाम अभिचन्द्र कहाया सो अभिचन्द्र चन्द्रमा समान उज्ज्वल यश जगत् में प्रगट कर ऊर्द्ध लोक गये।।63।। इसके पीछे ग्यारहवें कुलकर चन्द्राभ भये उनका आयु पल्य के दश हजार कोडिवें भाग सो आयु पूर्ण कर देवलोक को गये उसके पीछे बारहवें कुलकर मरुदेव भये उनका आयु पल्य के लाख कोडिवें भाग। उनके राज्य में युगल के नियम का अभाव भया अर सन्तान भये पीछे माता पिता बहुत वर्ष जीवते भये, अर पुत्र जानते भये ये हमारे माता पिता हैं। यह अमुक का पुत्र ऐसे कहावत पृथ्वी विषे प्रसिद्ध भई सो मरुदेव कुलकर आयु पूर्ण कर देवलोक को गये।।61।।

उससे पीछे तेरहवां कुलकर प्रसेनजित अकेला ही जन्मा। यहां से युगल सृष्टि की रीति निवृत भई। प्रसेनजित से कछुक पसेव का लेश शरीर विषे होता भय, अर इनका पिता इनको विवाह की विधि कर बड़े कुल की कन्या परणावता भया। प्रसेनजित का आयु पल्य के दश लाख कोडिवें भाग सो आयु पूर्ण कर स्वर्ग लोक गये पीछे फिर चौदहवें कुलकर नाभिराजा भये जिनकी आयु कोडि पूर्व अर जिनके राज में बालकों के जन्म समय नाभी नाल होते भये उनके छेदन की विधि कर नाभि राजा कहाये।।70।। यह चौदह कुलकर कहे उनकी आयु तो कहते ही आये।

अर काया पहिले कुलकर की 1800 धनुष की अर दूजे की 1300 धनुष की अर तीजे की 800 धनुष की अर चौथे की 775 धनुष की अर पांचवें की 750 धनुष अर छठे की 725 धनुष अर सातवें की 700 धनुष अर आठवें की 675 धनुष अर नौवें की 650 धनुष अर दसवें की 625 धनुष अर ग्यारहवें की 600 धनुष अर बारवें की 575 धनुष अर तेरहवें की 550 धनुष अर चौदहवें की 525 धनुष।।72।। ये चौदह कुलकर सम चतुर संस्थान अर वज्र वृषभ नाराचसंहनन के धारक अर गंभीर अर उदार है मूर्ति जिनकी अर पूर्व भव का ज्ञान है जिनको वे चौदह मनु कहिये कुलकर मनुष्यों में बड़े हैं अर कर्मभूमि की रीति के वेत्ता हैं।।73।। इनमें चक्षुष्मान् यशस्वी प्रसेनजित ये तीन कुलकर तो प्रियंगुमणि सारिखे श्याम सुन्दर हैं।।74।। अर चन्द्राभ चन्द्रमा समान गौरकांति विस्तीर्ण है प्रभा जिसकी ये चार कुलकर तो श्याम अर गौर कहे अर बाकी दश ताये स्वर्ण समान प्रभा के धारक हैं।।75।। ये चौदह ही कुलकर मर्यादा के रक्षक सर्व उपाय के वेत्ता काम-धिक्कार दण्ड के कर्त्ता नीति के कर्त्ता प्रजा के पिता समान होते भये अधिक है बुद्धि जिनकी।।76।।

गौतम स्वामी कहे हैं - हे श्रेणिक! इस भांति सकल कुलकरों की उत्पत्ति तुझे कही, अब समस्त पापों का नाशक श्री ऋषभदेव का चरित्र सुन। ऋषभ की उत्पत्ति अर जन्माभिषेक अर राज्याभिषेक अर राजनीति अर वैराग्य उत्पत्ति केवलज्ञान की प्राप्ति निर्वाण गमन पर्यन्त ये सर्व कथा तुझे कहूं हूं सो एकाग्र चितकर सुन।।77।। यह लोक समस्त षट् द्रव्यों कर पूर्ण हैं ये षट् द्रव्य अकृत्रिम हैं जिनका कोई उपजावन हारा नहीं सो पदार्थों को केवलज्ञानी ही के उपदेश से ऋषीश्वर भली भांति जिस जिस कारण से कालादिक पदार्थों के ज्ञान विषे जीवों के अत्यन्त अज्ञान है सो भगवान रूप सूर्य का प्रकाश अज्ञान तिमिर को दूर करे है अर पदार्थों का प्रतिभास करे है। कैसा है जिन सूर्य का प्रकाश, सदा स्थिर है शोभायमान है उदय जिसका कभी भी अस्त न होय।।78।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ कालकुलरोत्पत्तिवर्णनं नाम सप्तमः सर्गः।।7।।

आठवाँ सर्ग

अथानन्तर – यह चौदह कुलकर मनु कहाए, सो मनु का अर्थ कहिये मनुजार्थ कहिए पुरुषार्थ उसका मनन कहिये ज्ञान उसकर इनकी मनु संज्ञा भई, सत्पुरुषों के योग्य जो परिणाम उनको प्राप्त भए हैं मनु समान मनुष्यों के परिणाम नहीं।।1।। जिस समय दक्षिण भरत क्षेत्र के मध्य कल्प वृक्ष क्षीण भए उस समय नाभि राजा का मन्दिर पृथ्वी विषे प्रसिद्ध होता भया।।2।। सुवर्ण मई हैं स्तन जिसके नाना प्रकार रत्न मई हैं भीति जिनकी अर पुष्पों की माला मोतियों की माला मंगाओं की मालाओं से शोभित है मन्दिर उसका नाम सर्वतोभद्र सो मन्दिर इक्यासी खणा कोट खाई वापी उपवनादि कर मण्डित।।4।। सो नाभिराजा के प्रभाव से वह एक सर्वतोभद्र अनेक कल्पवृक्षों कर मण्डित पृथ्वी विषे शोभता भया।

भावार्थ – सब पृथ्वी में कल्पवृक्ष जाते रहे अर नाभिराजा का मंदिर कल्पवृक्षों कर शोभता भया।

अथानन्तर – राजा नाभि के राणी मरुदेवी अतिवल्लभ होती भई जैसी सौधर्म इन्द्र के शची इन्द्राणी वल्लभा वैसी नाभि के मरुदेवी होती भई वह मरुदेवी बड़े वंश की शिखामणि बड़े वंश विषे उपजी है।।6।। किंचित् उन्नत अति सुन्दर पांवों के अंगुष्ट देदीप्यमान नख मंडलों कर मंडित मरुदेवी के शोभते भए मानो अपनी कांति कर ललाट के देखने की वांछा है जिसके।

भावार्थ – नखों की ज्योति में ललाट का प्रतिबिम्ब आय परे है।।7।। अर मरुदेवी के दोनों चरण शोभा को धरते भये। उन्नत है अग्रभाग जिनका अर सचिक्कण हैं सुन्दर हैं आरक्त नखों की किरणों कर कमलों की शोभा को जीतते भए। अर जिसके चरण कमल कूर्म सारिखे उन्नत शोभते भए। कैसे हैं चरण कमल, सुन्दर हैं अंगुरी रूप पत्र जिनके अर गूढ हैं गुलफ कहिए कूण्या जिनके।।8।। और कांतिरूप जल के समूह विषें गमन और दोनों समान अति शोभा को धरते भए।।9।। जिसके चरण सुन्दर मच्छ शंखादि लक्षणों कर अति शोभते भए मानो क्रीडा विषे प्रिय के स्पर्श से स्वेद का संबंध ही धरे हैं और जिसकी जंघा गोल ऊपर से नीची और उतरती आई और रोमों से रहित शिरा कहिए नस उन कर रहित लावण्य रस की भरी मानो काम रूप धनुष धारी के तरकस ही हैं।।10।। और जिस के दोनों जंघों कहिए गोडा महामृदु और गूढ़ हैं संधि जिनमें सो प्रीतक के गात्र को कोमल स्पर्श का सुख देते भए।।11।। सो संसार विषें कोईक कवि कदली के थंभ की उपमा जंघों को दे हैं सो कदली के थंभ गोल अर दीर्घतारूप गुण को धरे हैं तथापि माता मरुदेवी की जंघा समान सुन्दर नहीं। कैसे हैं कदली थंभ, जिनमें सार नहीं अर कठोर हैं अर हाथी की सूण्ड समान लम्बी है।।13।।

उरुसन्धिर्नितम्बश्च कुकन्दरमनोहरे।
गुरुर्जघनभारश्च यस्याः साददश्यमध्यगा।।1।।

जिसकी नाभि मण्डल गंभीर महा मनोहर अर दक्षिणावर्त गोल अर रोम-राजी कहिए रोमों की पंक्ति उनकर महा मनोहर नाभिराजा को हर्ष का कारण होती भई अर जिसकी कटि रोम रहित गोल अर क्षीण ऐसी मनोहर सोहे मानो कुच के भार कर डिग न जाय अर जिसके स्तन दोनों कठिन अर महा मृदु उनकी शोभा कहिने में न आवे वेई भए चकवा उनके युगल कर उरःस्थल सरिता की न्याई शोभता भया।।17।। अर जिसकी दोनों भुजा सुन्दर कांधों सहित शोभती भई आरक्त हैं हथेली जिनकी मानों ये भुजा काम की पाश ही हैं।।18।। अर मानो यह माता समुद्र की लहर ही हैं समुद्र की लहर तो शंख मूंगा मोतियों कर सुन्दर हैं। अर कैसी है माता, शंखावर्त समान है ग्रीवा जिसकी अर मूंगा समान हैं अधर पल्लव जिसके मुक्ताफल समान दांतों की उद्योत कर महा मनोहर है अर मरुदेवी का अंतरमुख शोभता भया। आरक्त हैं तालवा जिह्वा का अग्रभाग जिसका अर कोयल से भी अति सुन्दर है शब्द जिसका।।20।।

अर जिसके कपोल मणि के दर्पण समान निर्मल शोभते भए मानो प्रीतम जो राजा नाभिराजा सो प्रिया के मुख विषे काच की नांई अपना मुख देखा चाहे हैं, उसके ये दोनों कपोल सुन्दर आरसे ही सन्मुख है।।21।। अर मरुदेवी की समीचीन नासिका का अति मध्यस्थ शोभती भई समा कहिये समान है अधिक ऊँची नहीं अर सम्पुटा कहिए समान हैं दोनों पुट जिसके मानो यह नासिका मध्य तिष्टती संती दोनों ही नेत्रों का परस्पर उलंघन निवारे है। कैसे हैं दोनों नेत्र, वढ़िवे की वढी है स्पर्धा जिनके।।22।। अर जिसके नेत्र दीर्घदर्शी श्वेत श्याम आरक्त त्रिवर्ण कमल समान शोभते हैं सो कर्ण समीप तक हैं विस्तीर्णता जिनकी, दोनों नेत्र दीर्घता कर कानों तक कटाक्ष को धरे हैं सो यह दोनों कर्ण दोनों नेत्रों के मित्र हैं सो अपने अपने मित्रों से नेत्र मंत्र करे हैं।।23।। अर जिसकी भौंहें सूक्ष्म हैं रेखा जिनकी अर दोनों परस्पर घने दूर न घने मिले चढाए धनुष समान सुन्दर शोभते भए।।24।। अर जिसके ललाट की शोभा को अष्टमी का चंद्रमा न पावता भया सो ललाट तो अति ऊंचा न अति नीचा है जैसा चाहिए, वैसा है सो अष्टमी का चंद्र अनेक उपाय कर भी ललाट की मनोग्यता न लहता भया।।25।।

कुण्डलों कर उज्ज्वल है कपोल जिसके ऐसी मरुदेवी उसके कर्ण युगल की उपमा देने को कोई पदार्थ नहीं। कर्ण युगल अति मनोहर कोमल हैं अर दोनों समान हैं अर मनोहर हैं जिनवाणी के श्रवण करणहारे हैं अर जिसके शिर की शोभा वचन के मार्ग से अगोचर है। कैसा है शिर, नील कहिये श्याम कुंचित कहिये टेढ़े, स्निग्ध कहिये चिकने सूक्ष्म कहिये बारीक अर घने कहिये अति सघन दीर्घ ऐसे हैं केश जिसके फिर कैसा है शिर, सम कहिये न ऊंचा है न नीचा है जैसा चाहिए वैसा है अर जिसके मुखमण्डल की शोभा कर पूर्णमासी का चन्द्र मण्डल हारने के भाव को प्राप्त भया सो मानो आधि

कहिये मन व्यथा कर पांडु कहिये धूसरा होय गया है।

भावार्थ – जो चिंता कर ग्रसा गया होय सो पांडु रोग को प्राप्त होय। यह माता मरुदेवी तो बहत्तर कला कर युक्त अर चंद्रमा की मूर्ति सोलह कला की धारणहारी अर मरुदेवी निष्कलंक अर चंद्रकला कलंक कर युक्त सो मरुदेवी के मुख की शोभा चंद्रमा कैसे पावे।।29।। अर स्त्री को पृथ्वी की उपमा दीजे है सो पृथ्वी तो कठोर अर स्पर्श गंध वर्ण इन गुणों की धारक अर माता मरुदेवी स्त्रियों की सृष्टि में उत्कृष्ट चौंसठ जे गुण उनकर युक्त अतिकोमल सो मरुदेवी की उपमा पृथ्वी कैसे बने।।30।।

अर मरुदेवी पति से प्रीत की भरी अति सचिक्कण शुद्ध है चित्त आत्मा जिसका सो जल इसकी उपमा कैसे पावे जल तो जडात्मा है अर यह ज्ञानात्मा अर जल तो किंचित् स्निग्ध अर यह महास्निग्ध अर जल का नाम विष भी है अमृत है। यह केवल अमृत ही है अर जल की धोरी अग्रणेया कहिये पर की प्रेरी चाले है अर यह स्वतः स्वभाव धर्म मार्ग विषें चाले है सो इसको जल की उपमा कहां अर इसकी मूर्ति को अग्नि की उपमा दीजे अग्नि तो दहन स्वभाव अर यह शांति स्वभाव है यद्यपि अग्नि देदीप्यमान है प्रकाश रूप है अर तेजोमय मूर्ति है तथापि इस समान अग्नि में तेज नहीं। इस समान देदीप्यमान प्रकाशमान अग्नि नहीं अर इसकी समता समीर कहिये पवन सो कैसे पावे। पवन में तो एक स्पर्श गुण सो कभी तो पवन का स्पर्श सुख का कर्ता अर कभी सुख का हर्ता अर यह मरुदेवी दर्शन कर नाभि राजा को सदा अति सुख कर्त्ता।।33।। अर आकाश सम्बन्धी शक्ति यद्यपि शुद्ध कहिये निर्मल है तथापि मरुदेवी की समानता कैसे पावे आकाश शक्ति निर्मल है तथापि जड़ है। अर यह विलक्षण है अर आकाश शक्ति तो स्पर्श कर रहित है किसी कर स्पर्शी नहीं अर यह मरुदेवी कैसी है, भरतार के हृदय को पूर्ण स्पर्शे है अर चौदह प्रकार आभूषण कल्पवृक्ष कर रचे जिसके अंग के संग कर शोभा को प्राप्त भए।

भावार्थ – आभूषणों कर माता की शोभा नहीं, माता के अंग कर आभूषण सोहते भए।।35।। उस मरुदेवी सहित नाभि राजा स्वर्ग लोक समान भोग भोगवे हैं। उसका वर्णन करने को बृहस्पति अर शुक्र की भी शक्ति नहीं।।37।।

अथानन्तर – सर्वार्थसिद्धि से चय कर आदि तीर्थंकर के मरुदेवी के गर्भ में आने के छै मास रहे तब ही से राजा के घर आंगन विषे इन्द्र की आज्ञा से धनपति निरन्तर रत्नों की धारा आकाश से वर्षावता भया।।38।। अर दिशा अर विदिशा से हर्ष की भरी दिक्कुमारी श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी आदि निन्यानवें आईं। वे देवी भगवान के माता पिता को प्रणाम कर इन्द्र की आज्ञा से मरुदेवी की सेवा करती भईं अर ऐसी वाणी माता को कहती भईं – हे मात! तुम नादो विरधो फूलो फलो चिरकाल जीवो, हम को आज्ञा देवो जो तुम्हारी आज्ञा होय सो करें।।41।। कैयक देवी तो परम

आश्चर्य को प्राप्त भई माता रूप जो लावण्य सौभाग्यादिक गुण रूप समुद्र का वर्णन करें अर कैयक माता की शास्त्र विद्या, लिखन विद्या, गंधर्व विद्या, गणित विद्या इत्यादि आगम पूर्वक अनेक विद्या अर अनेक कला की जो प्रवीणता माता विषे उसकी प्रशंसा करें माता समान सर्व कला विषे कुशल जगत् में कोई नहीं।।43।।

अर कैयक देवी अपनो तंत्री वीणादिक की प्रवीणता माता को दिखाती भई अर कैयक नाना प्रकार के बादित्र बजावें हैं अर कैयक कानों को रसायन तुल्य मधुर गीत गावे हैं कैयक देवांगना हाव-भावविलास की भरी नेत्रों को अमृत तुल्य अद्भुत नृत्य करे हैं। कैसी है नृत्य श्रृंगारादिक नव रस की है उत्कृष्टता जिस विषे अर सुन्दर है अभिनय नृत्य कला जिस विषे।।45।। अर कैयक देवी सुन्दर हैं कर पल्लव जिनके सो माता के पांव पलोटती भई अर कैयक हाथ दावती भई।।46।। कैयक तेलाम्यंग करती भई कैयक ऊद्धर्तन कहिये उबटना लगावती भई अर कैयक माता को स्नान करावती भई। कैयक स्नान वस्त्र धोवती भई।।47।। कैयक आभूषण पहरावें हैं कईयक माता के सुगन्ध लगावती भई। कैयक नाना प्रकार के वकुचा लिये खडी हैं, कैयक वस्त्र पहरावे हैं कईयक आभूषण पहरावे हैं कैयक फूलों की माला गूंथे हैं कैयक माता की देह को श्रृंगार करे हैं भोजन करावे हैं कैयक नानाप्रकार की सामग्री ल्यावे हैं।।49।।

कैयक केश संवारे हैं कैयक माता को तांबूल देवे हैं कैयक गृह के कार्य विषे तत्पर हैं कैयक अंग की सेवा विषे सावधान हैं।।50।। कैयक दर्पण लिये खड़ी हैं कई एक चंवर ढारे हैं कैयक छत्र लिये ऊभी हैं कैयक पंखा करे हैं।।51।। कैयक देवी माता के अंग की रक्षा विषे तत्पर खड्गकर संयुक्त हैं कर के अग्रभाग जिनके ग्रह राक्षस भूत पिशाचादिक से रक्षा करे हैं, सदा सावधान हैं।।52।। कैयक बाहरले आंगन में खड़ी हैं खंग चक्र गदा शक्ति अर सुवर्ण की लाठी हैं हाथ में जिनके।।53।। इस भांति रात्रि में अर दिन देवियों कर माता सेवनीक होती भई सो इस लोक विषे आपका सा प्रकार औरों का न जानती भई, गर्भ से पहिले छह महीना तक रत्नधारा नाभिराजा के मन्दिर में वर्षी उस कर आदि तीर्थंकर की उत्पत्ति माता पिता ने निश्चय जानी।।55।।

अथानन्तर – जैसे तारों कर सब ओर चन्द्रकला सेवनीय होय तैसे मरुदेवी देवों कर सेवनीय भई।।56।। एक दिन शरद के बादरों समान उज्ज्वल मन्दिर अगर की धूप कर सुगंध उस विषे महा सुन्दर सेज जो कि महा मनोहर वस्त्रों कर शोभित उसके ऊपर शयन करती भई। रात्रि के पिछले पहर महा शुभ रूप सोलह सुपने निधि समान दुर्लभ जिनका दर्शन सो देखती भई। प्रथम ही सफेद हाथी देखा मानो वह हस्ती बड़ा राजा है अर दान के अर्थी जो भ्रमर इन कर गाइये है यश जिनका अति प्रचुर दान कहिये मद उसकी धाराकर भींज रहे हैं सुण्ड अर कपोल जिसके।

www.vitragvani.com

भावार्थ – जैसे दानेश्वर नरेश्वर के निकट दान के अर्थ याचक आय यश गावें तैसे मदोन्मत्त जो गजराज उस पर भ्रमर गुंजार रहे हैं।।59।। दूजे स्वप्न में वृषभ देखा सुन्दर है आकार जिसका मानो यह वृषभ अति उज्ज्वल महा उन्नत सुन्दराकार वृष कहिये धर्म ही का स्वरूप है सो वृषभ गर्जता देखा सो अपने नाद कर दबाया है प्रतिपक्षियों का नाद जिसने।।60।। तीजे स्वप्ने में उछलता नाहर देखा नख दाढ अर केशावली उन कर शोभित महा तेज रूप देखा मानो पहिले माते हाथी का कथन किया सो वाके मद को रोधने अर्थ मानो नाहर ढूंढने ही आया है।।61।। चौथे स्वप्न नाना प्रकार के रत्नों कर जड़ित जो स्वर्ण के कलश कमल जिन कर आछादित है मुख जिनका महा पवित्र जल को भरे उन कर लक्ष्मी का अभिषेक देखा वे कलश महा शब्द करते लक्ष्मी के सिर पर पहुंचे हैं जैसे गर्जते मेघों की घटा टोप कर पृथ्वी का अभिषेक देखा वैसे लक्ष्मी को देखा।।62।।

पांचवें स्वप्ने में दो माला आकाश विषें लटकती देखीं सो नाना प्रकार के पुष्पों कर गूंथी हैं अर लम्बी हैं अर महा सुगन्ध सर्वदेशों को सुगन्ध करने वाली हैं मानो सब ऋतु की शोभा भेली होय कर प्रभु की सेवा के अर्थ आई हैं।।63।। अर छठे स्वप्ने में चन्द्रमण्डल देखा मानो चन्द्रमण्डल की श्यामा कहिये रात्रि सोई भई श्यामा कहिये नायिका उसने प्रभु को छत्र चढाया है छत्र के नीचे दण्ड होय है अर चंद्र के नीचे किरणों का समूह है सो ही दण्ड जानो। कैसी है निशारूप नायिका, तारारूप हैं आभरण जिसके।।64।। सातवें स्वप्ने में ऊगता सूर्य देखा सो मानो पूर्व दिशा रूप स्त्री ने मंगल के अर्थ कलश ही थाप्या है, कलश सिंदूर कर आरक्त होय हैं अर सूर्य संध्या की ललाई कर लाल वर्ण को धरे है।।65।। आठवें स्वप्ने में जल क्रीड़ा करते दो मीन देखे सो मानों वे मीन माता के नेत्र को उलाहना देने आये हैं। कैसे हैं माता के नेत्र, अपनी चपलता कर जीती हैं मीनों के नेत्रों की चपलता जिनने।।66।।

अर नौवें स्वप्ने में दो स्वर्ण के कलश देखे मानो वे स्वर्ण के कलश माता के जो दोनों स्तन तिनको देखने आये हैं। कुचों को कलश की उपमा है सो माता के कुचों समान कलश कहे। कैसे हैं कलश, मन के हरने हारे हैं जल कर पूर्ण हैं, अर विस्तीर्ण हैं घन हैं कठोर हैं अर कुच भी पय कहिये दुग्ध कर भरे हैं।।66।। अर दसवें स्वप्ने में सरोवर देखा। कैसा है सरोवर, उडंड कहिये प्रफुल्लित पुण्डरीक कहिये सफेद कमल उनका है समूह जिस विषे अर राज हंसों कर युक्त मनोहर है अर रथ पाद कहिये चकवा तिनको आदि दे नाना प्रकार के जो पक्षी उनके नाद कर पूर्ण हैं सो माता ने सरोवर देखा मानो अपनी प्रबल सेना ही निरखी। कैसी है सेना, उदंड कहिये महा प्रचण्ड प्रबल सामन्त उनमें पुण्डरीक कहिये श्रेष्ठ तिनका ओघ कहिये समूह जिस विषे अर राज हंस जे बड़े राजा इन कर मनोहर है। अर रथ पयादे गज अश्वादिक के शब्द कर शोभित हैं।।68।।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

ग्यारहवें स्वप्ने में कल्लोलों कर बढ़ता समुद्र देखा। कैसा है समुद्र, प्रचुर जे मीन उनके मिथुन कहिये युगल अर उनमेष कहिये उदघाटित है दृष्टि जिनकी ऐसे मकर कहिये मगरमच्छ तिनको आदि दे जे जलचर जीव उनकी राशि कर संपूर्ण है मानो समुद्र आकाश समान ही है आकाश भी नील वर्ण भासे समुद्र भी नील वर्ण भासे अर आकाश विषे नवग्रह मीन मेष मिथुन मकरादि राशि कर पूर्ण अर यह भी मकरादि मीन राशिकर पूर्ण।।69।। बारहवें स्वप्ने में सिंहरूप है पाये जाके ऐसा सिंहासन देखा। कैसा है सिंहासन, चारों पाओं के सिंह महा प्रबल है भुजरूप स्तंभ जिनके अर प्रोट है उदघाटित दृष्टि जिनकी वे सिंह सिंहासन को कैसे धरे हैं जैसे कर्मभूमि की आदि विषे मुनिराज कहिये कुलकर जगत कहिये प्रजा को धरे हैं।।70।।

तेरहमें स्वप्ने में देवताओं का विमान देखा मानो वह विमान स्वर्ग ही की सुन्दरता का समूह मनुष्यों को दिखायवे को आया है सुन्दर है गीत जिनके ऐसी देवांगनाओं कर मानो आन्या है।।71।। चौदहमें स्वप्ने में नागेन्द्र का भवन देखा मानो वह अपनी शोभा कर नाग लोक को जीत कर समस्त लोक को जीतने की इच्छा कर आया है नाग कुमारी देवियों कर उपजी है शोभा जाके।।72।। पंद्रहमें स्वप्ने में महारत्नों की राशि देखी सो रत्न राशि अपनी देदीप्यमान किरणों कर मेघ रहित आकाश विषे मानो विजुरी अर इन्द्र धनुष की शोभा को विस्तारे है। कैसी है रत्न राशि, अभ्र कहिये आकाश उसको स्पर्शे है।।73।। सोलवें स्वप्ने में निर्धूम अग्नि देखी मानों हर्ष कर फूल गया जो आकाश उससे केसूवों के पुष्पों का समूह ही पड़ा है सो अग्नि अति निर्मल अर भ्रम जाल की निवृत करणहारी सोहे है। ये शुभ सोलह स्वप्ने देख कर इनके पीछे मुख के मार्ग होय अपने उदर विषे वृषभ प्रवेश करता देखा मानों वृषभदेव ही वृषभ के रूप माता के उदर में आए।।75।। ये सोलह स्वप्ने देख कर माता अति आनन्द को प्राप्त भई तब निद्रारूपी सखी जाती रही।

भावार्थ – माता ही स्वामिनी है अर निद्रा ही सखी है सो इस निद्रा सखी ने ऐसी जानी जो मोह कर मेरी स्वामिनी आनन्द रूप शुभ स्वप्न के दर्शन को प्राप्त भई सो मैं कृतार्थ भई। सेवक का यही धर्म है जो स्वामी को आनन्द उपजावे इसी कर सेवक को कृतार्थता है।।76।। माता तो आप ही जाग्रतरूप है परन्तु दिक्कुमारी जगाने के अर्थ माता को ऐसे शुभ शब्द कहती भई सो वे शब्द केवल मंगल ही के अर्थ है अर माता तो जाग्रतरूप है देवी कहा शब्द कहे सो सुनो – हे विबुधार्थ कहिये हे माता! तू कैसी है, जाना है पदार्थों का रहस्य जिसने सो तू विबुध्यास्व कहिये जाग, हे विवर्धने कहिये वृद्धि रूपिणी! अब तू सबको आनन्द बढा अर हे देवी! विजय लक्ष्ली की स्वामिनी देवी पूर्ण हैं मनोरथ जिसके सो तू विजय के भाव को प्राप्त हो।।77।।

हे माता! अब यह चंद्रमा तुम्हारे मुखरूप चन्द्र को देख कर लज्जावंत होय प्रभा रहित होय गया

है तुम्हारा मुख निष्कलंक अर गुणाकर कहिये गुणों की खान अर चन्द्रमा दोषा कहिये रात्रि उसका कारणहारा है उससे दोषाकर अर कलंकी है।।79।। अर द्वीपों की ज्योति मंद भासे है सो मानो ये दीपक अपने प्रकाश को हंसे हैं जो यह जिनेन्द्र के माता पिता का गृह नखों के उद्योत समान चांद सूर्य का प्रकाश नहीं यहां हम प्रकाश करें इस समान मूढ़ता कहां।।80।। अब संध्या दुष्ट की मित्रता समान निष्फल डिगती भासे है। कैसी है दुष्ट की मित्रता, अत्यंत सुख विषे है राग जिसका अर क्षण मात्र में राग मिट जाय है अर यह सांझ भी प्रथम तो राग कहिये आरक्तरूप भासे है। अर क्षण मात्र में आरक्तता मिट जाय है।

भावार्थ – अब संध्या का भी ललाई मिटे है।।81।। अब सूर्य की प्रभा सज्जन की मित्रता समान बढ़े है। कैसी है मित्रता, अबन्ध्य कहिये सफल है अर्थ जिस विषे अर कैसी है सूर्य की प्रभा, सफल है सकल कार्य जिस विषे।।82।। अर देवी कहे हैं – हे मातः! यह पूर्व दिशा स्त्री की न्याईं तुमारे मंगल के अर्थ उद्यमी भई है। कैसी है पूर्व दिशा, प्रकाश रूप जो अम्बर कहिये आकाश सोई है अम्बर कहिये वस्त्र जिसके अर दीप्यमान जो सूर्य सोई है तिलक जिसके अर कैसी है स्त्री, प्रकाशमान अम्बर कहिये वस्त्र आभूषण उन कर सोहे है अर ज्योति रूप तिलक को धरे है जैसी वस्त्राभूषण आभरण तिलक संयुक्त सौभाग्यवती स्त्री मंगल के अर्थ सोहे वैसे पूर्व दिशा सोहे है अर अब दीर्घ का कहिये सरोवरी उन विषे चकवी दीर्घ निशा पूर्ण कर इन कहिये सूर्य उसके दर्शन कर हर्षित भई सुन्दर शब्द करे है।।84।।

अर कलहंसों का कुल कहिये समूह सो मिष्ट शब्द करता हुआ तुझे जगावे है तुम्हारे दर्शन की है अभिलाषा जिसके मानो तुम्हारा दर्शन कर तुम्हारे चरणों की चाल सीखा चाहे है, अर ये वृक्ष मंद पवन कर हालते हुए प्रगट हैं मूर्ति जिनकी सो मानों तुमको अपने नृत्य का आरम्भ दिखावे हैं अर ये दशों दिशा अब निर्मल हो गई हैं सो मानो तुम्हारी निर्मल चेष्टा ही इन विषे विस्तरी है सो हे माता! अब प्रभात भया, तुम शय्या तजो। इस भांति वंदी जनों ने माता की स्तुति करी तब माता सेज को तजती भई जैसे हंसनी नदियों के पुलों को तजे। कैसा है नदी का पुल, जल की तरंगों का है समूह जहां अर कैसी है सेज, पुष्प है रूप तरंगों का है समूह जहां वह माता उज्ज्वल वस्त्र पहर कर उज्ज्वल महल से निकसी हुई कैसी सोहती भई जैसी शरद ऋतु के बादलों से निकसी चन्द्र कला सोहे है। कैसी है चन्द्रकला, अर कैसी है माता, धौत कहिये उज्ज्वल है छाया कहिये कांति जिसकी।।89।।

श्रीदेवी आदि दिक्कुमारियों ने कीए हैं श‍ृंगार जिसके अर पहिरे हैं नवीन भूषण जिसने अर गर्भ के मध्य विराजे हैं आदि पुरुष जिसके ऐसी वह माता नाभि राजा के निकट गई जैसे मेघमाला पर्वत के निकट जाय, भूभृत् नाम राजा का है, अर भूभृत् नाम पर्वत का है। कैसी है माता, धरनश्री कहिये

अत्यंत है शोभा जिसकी अर धनश्री नाम मेघमाला का भी है।।90।। राजा सिंहासन पर विराजे हुये उनके तांई प्रणाम कर उनके निकट बैठी राजा ने बहुत विनय किया एक सिंहासन पर दोनों विराजे राणी कर कमल जोड़ लक्ष्मी की न्याईं लक्ष्मीपति से सोलह स्वप्ने देखे हुओं का वृत्तांत कहती भई।।91।। वह जगत् का पिता राजा नाभि स्वप्नों का वृत्तांत चित्त विषे अवधार कर कहता भया।

हे प्राणप्रिये! तीन लोक का नाथ आदि तीर्थंकर तेरे गर्भ विषे आय प्राप्त भया। इन स्वप्नों का फल दूर नहीं नजदीक ही है अर फल अल्प नहीं महा फल है इसलिये तू मेरे वचन की प्रतीति कर तेरे गर्भ विषे भगवान् हिरण्य गर्भ आये, छै महीने तक रत्नों की वर्षा होती भई। अर दिक्कुमारी देवी सेवा करे हैं सो यह वार्ता तो जगत् विषे प्रसिद्ध है जो जिनराज का जन्म इनके होवेगा सो आज अपना मनोरथ सिद्ध भया है। हे प्रिये! सर्व कल्याण का भाजन जो तेरा पुत्र उसके जन्म कर तू सर्वथा जगत को आनंद की कर्ता होवेगी।।95।। इस भांति स्वप्न का फल सुनकर अपने गर्भ विषे जिनेश्वर को उपजा जान मरुदेवी दीप्ति अर कांति को धरती संती अति हर्ष को प्राप्त भई।।96।। तीजे काल में चौरासी लाख पूर्व अर तीन वर्ष अर साढ़े आठ महीना बाकी रहे तब आप सर्वार्थसिद्धि चय कर माता के गर्भ विषे आये असाढ़ बदी दोयज उत्तराषाढ़ नक्षत्र विषे जननी जगत पूज्य को गर्भ में धारती भई।।97।। अनुक्रम से गर्भ के बढ़ते संते माता के शरीर की कांति बढ़ी। अर उदर न बढ़ा त्रिवली का भंग न भया।।98।। वह माता तीन जगत के गुरु को गर्भ विषे धारती अर गुरुता के अतिशय को धारती हुई देह विषे लाघवता के भाव को धारती भई यह अद्भुत है।

भावार्थ – तीन लोक में अधिक भार जिसका ऐसे भगवंत को गर्भ विषे धारती लाघवता के भाव को देह विषे धारती भई यह अद्भुत बात है बड़ा आश्चर्य वे प्रभु जगत के सूर्य माता के गर्भ विषे ऐसे ऐसे तिष्ठे जैसे जल के विषें सूर्य का प्रतिबिंब आय प्राप्त होय, जो कदाचित् माता को गर्भ का खेद होय ऐसा जान जगदीश्वर अलिप्त विराजे।।100।। दिक्कुमारियों कर सोध्या जो माता गर्भ उस विषे मति श्रुति अवधि जे तीन ज्ञान उन कर विश्व को विलोकते त्रिलोकनाथ सुख से विराजे, छह महीना तो पहिले रत्न वर्षे अर नौ महीने गर्भ में तिष्ठे तब वर्षे। इस भांति पंद्रह मास पिता के घर रत्न वर्षा हुई नव महीने पूर्ण भये तब उत्तराषाढ़ नक्षत्र विषे माता के गर्भ में से जिनराज का जन्म भया, जैसे मेघ के उदय में से निकसा सूर्य सोहे वैसे जननी के गर्भ से निकसता जिनराज शोभता भया। भगवान तो तीन भुवन के सूर्य हैं अर माता पूर्वदिशा समान पवित्र है अर माता का गर्भ का स्फटिक मणि समान निर्मल है जब जिनवर का जन्म भया तब देवी दिक्कुमारी जात कर्म के कर्तव्य विषे शीघ्र ही प्रवर्ती।।5।।

विजया, वैजयंती, अपराजिता, नन्दा, नन्दोत्तरा, आनन्दा, नन्दवर्द्धना, ये आठों देवी दिक्कुमारी

झारी हाथ में लिये खड़ी हैं, अति चपल कानों के जे कुण्डल उनके प्रकाश कर देदीप्यमान है कपोल जिनके।।7।। अर स्वच्छता, प्रतिधान्या, सुप्रबुद्धा, यशोधरा, लक्ष्मीमती, कीर्तिमती, बसुन्धरा, चित्रा, ये आठ देवी विचित्र आभरण की धरणहारी धरणहारी हाथ में दर्पण लिये खड़ी हैं।।9।। इला, सुरा, पृथ्वी, पद्मवती, कांचना, सीता, नवमिका, ह्रीकांता (भद्रिका) ये आठ हर्ष की भरा उत्कृष्ट अंग की प्रभा कर दिशाओं को उद्योत करणहारी प्रभु का जन्मोत्सव देख आश्चर्य को प्राप्त भई, हाथ विषे उज्ज्वल छत्रों को धरे खड़ी हैं।।11।। श्रीः, ह्रीः, धृतिः, परासा, वारुणि, पुण्डरीकनी, अलवुसा, मित्रकेशी, ये आठ दिक्कुमारियें कमलवदनी देदीप्यमान हैं मणिमई कुण्डल जिनके वे हाथ विषे चमर लिये खड़ी हैं। कैसे हैं चमर, स्वर्ण की है डंडी जिनकी।।12।।

अर चित्रा, कनकचित्रा, सूत्रामणि, त्रिसरा ये चार देवी विजुली समान है प्रभा जिनकी सो आंगन विषे उद्योत करती भई, ये विद्युत्कुमारी हैं।।13।। अर विजया, वैजयन्ती, जयन्ती, अपराजिता, ये चार विद्युत्कुमारी रुचिका, रुचिकोज्वला, रुचिकाभा, रुचिकप्रभा ये चार वे आठ विद्युत्कुमारी देवी जात कर्म विषे प्रवीण हैं सो सबही तीर्थंकरों के जन्म विषे गीत गानादि कर उत्सव करें जिस समय जिनेन्द्र का जन्म भया उस समय पहिले ग्रैवेयक से लेकर सर्वार्थसिद्धि तक तेईस सौ विमानों के अहमिंद्र अवधिज्ञान कर जिनराज का जन्म जान अपने अपने सिंहासन से उतर सात पैंड जाय प्रणाम करते भये अर अपने अपने स्थानक तिष्ठते ही तीर्थेश्वर का ध्यान करते भये, निज स्थानक छोड़कर अहमिंद्रों का अर स्थानक में गमन नहीं, चतुरनिकाय के देवों के मुकुट नय गये अर जिनराज के जन्म के प्रभाव से सब इन्द्रों के आसन चलायमान भये अर भवनवासी देवों के लोकों विषे अकस्मात् शंख ध्वनि भई, अर व्यंतरों के भेरी नाद भया अर ज्योतिषियों के सिंहनाद भया अर स्वर्गवासियों के घंटा का शब्द भया, ये शब्द अकस्मात् भये अर तीन लोक विषे सब जीवों के सुख उपजा।।21।।

आसन कंपायमान होने कर पहिले स्वर्ग का सौधर्म इन्द्र अति आश्चर्य को प्राप्त भई है बुद्धि जिसकी सो चित्त में चिंतवता भया कि मैं इन्द्र पुरंदर शक्र ऐसा कौन जो मुझे न गिणे मेरा अचल सिंहासन उसे कौन कंपाने को समर्थ है देव दानवों का समूह महा पराक्रमी जो कोई मोसे विमुख होय उसे मैं दंड देने को समर्थ।।25।। ऐसा कौन जो मेरा पराभव करे जो अति बाल अति मुग्ध स्वेच्छाचारी अज्ञानी होय सो निशंक निर्भय भया बिना विचारे करे सो ऐसा लोक में कोई नहीं सो मेरी अवज्ञा करे जो मेरा यह सिंहासन किन्होंने कंपाया अर मेरा मुकुट किन ने नवाया, तीन भवन विषें तीर्थंकर देव टार ऐसा प्रबल पराक्रम अर का न देखूं हूं ऐसा जान कर अवधि विचारी।।26।।

तब देदीप्यमान अवधि ज्ञान नेत्र कर जंबूद्वीप के भरत क्षेत्र विषें आदि तीर्थंकर उपजे जाने।।27।। तब आसन से उतर सात पैंड जायकर हाथ जोड़कर नमस्कार किया अर हे जिनेश! तुम जयवंत हो

वो ऐसा शब्द किया।।28।। फिर जाय सिंहासन पर बैठ विचार करते मात्र ही अपने समीप जो सेनापति उसे आज्ञा करता भया अर्थात् विचार करते ही प्रमाण तत्काल इन्द्र को नमस्कार कर सेनापति जो आया था उसे सुरपति कहता भया इस अवसर्पिणी काल विषे भरतक्षेत्र में आदि जिन उपजे उससे सब देवों सहित मुझे भरतक्षेत्र में जाना है, इसलिये मेरी आज्ञा प्रमाण तुम सर्व देवों को खबर करो।।30।। तब स्वामी के आदेश कर सेनापति आज्ञा करी सौधर्म स्वर्ग के निवासी सब ही देव इन्द्र के लार चले अर अच्युत स्वर्ग पर्यन्त सोलह स्वर्गों के सब ही देव अपने अपने इन्द्रों की लार चले सोलह स्वर्गों के बारह इन्द्र अर बारह प्रतेंद्र सब ही बड़े विवेकी बिना सिखाये स्वयमेव है बोध जिनके सो जिनेश्वर का जन्म कल्याणक करने को चले, अर ज्योतिषी भवनवासी व्यंतर सब ही देव अपने अपने इन्द्र के साथ चले।।32।।

गज अश्व रथ इनके समूह अर पयादों के समूह अर वृषभ गंधर्व नृत्यकारिणी ये सप्त देवों की सेना उस कर आकाश व्याप्त हो गया।।33।। देवों के गज अर वृषभ महिषादिक तिर्यंच नहीं देव ही विक्रिया कर नाना रूप धरे हैं कैएक देव महिषों पर चढ़े है कैएक देव नावों पर चढे हैं, कैएक देव गैंडो पर चढे हैं कैएक पालिकियों पर कैएक तुरंगों पर कैएक गजों पर कैएक ऊंटों पर कैएक मगरमच्छों पर कैएक हंसों पर इत्यादिक अनेक बाहनों पर चढे चतुरनिकाय के देव चले।।34।। अर असुरकुमारादिक दश प्रकार भवनबासी उनकी अनुक्रम कर सप्त सप्त सेना उस कर व्याप्त भया आकाश अत्यंत सोहता भया।।35।। कैएक देव विमानों में बैठे हैं कैएक रथों में आरूढ हैं कैएक वृषभों पर चढे हैं कैएक रोझों पर कैएक अश्वों पर कैएक अष्टापदों पर कैएक शार्दूलों पर कैएक मछों पर कैएक सूरों पर कैएक अरणे भैंसों पर कैएक सिंहों पर कैएक नाना प्रकार के गजों पर कैएक चमरी मृगों पर कैएक हिरनों पर कैएक मीडों पर कैएक घरुडों पर कैएक कोकिलावों पर, कैएक क्रोचों पर कैएक मोरों पर कैएक कूकूड़ों पर कैएक कबूतरों पर कैएक हंसों पर कैएक करिंडों पर कैएक सारसों पर।।39।।

कैएक चकवाकों पर कैएक बगुलों पर इत्यादि अनेक बाहनों पर चढे चले।।40।। ये चतुरनिकाय के देव श्वेत छत्रों कर अर ध्वजावों कर अर नाना प्रकार के फेन समान उज्ज्वल चमरों कर सकल आकाश को व्याप्त करते गमन करते भये।।41।। यह देवों का आगमन अद्भुत गीत नृत्य वादित्रों कर संयुक्त शोभता भया भेरी शंख वादित्र इत्यादि नाना प्रकार के जे दुंदुभि उन कर पूरित किया है लोक जिन्होंने।।42।। उस समय सब गजों की सेना का अधिपति ऐरावत गज उस पर चढे सौधर्म इन्द्र अति सोहते भये। कैसा है ऐरावत, विक्रिया कर विस्तार रूप किया है शरीर जिसने।।43।। अर आकाश समान निर्मल उतंग हैं अंग जिसका सो गज मानो आकाश समान सोहे है कानों पर जो श्वेत चमर सोई है शशिमंडल जिस विषे अर गले का जो सांकल सोई है नक्षत्रमाला जिस विषे, अर श्वेत ध्वजावों

का जो समूह सोई है हंसों की पंक्ति जिस विषें।।44।।

सदन्तान्तरविस्तारी करास्फारितपुष्करः।
प्रोद्वंशांकुररुमध्योद्यन नागेंद्र इव भूधरः।।

पहिले स्वर्ग का इन्द्र सकल इन्द्रों के समूह कर गजेंद्र पर चढा सब देवों कर मंडित भगवान का पवित्र जो जन्म क्षेत्र वहां जाय प्राप्त भया सुर अर असुरों की पंक्ति आकाश से उतरती हुई कुवेर कर करी सुरपुर समान अद्भुत जो अयोध्यापुरी उसे देखते भए। कैसी है नगरी, कोट खाई पर कोटा उनकर वेष्टित महा मनोहर है अर वन उपवन वापी सरोवर उन कर शोभित है अर उस पुर विषे रत्नमई बड़े बड़े मंदिर हैं इंद्रनील मणिमई महा श्याम अर वज्र कहिए हीरा वैडूर्य मणि उनकी है भीति जिस विषे अर पद्मरागमणियों की प्रभा कर पूर्ण सोहे हैं।।40।। सुर असुरों के मन पुरुषोत्तम के पुर की विभूति देख स्वर्ग पाताल की लक्ष्मी की अभिलाषा से रहित भए, ऐसी विभूति जगत्त्रय में नहीं। अयोध्या का नाम साकेतपुर भी कहे हैं साकेत का अर्थ क्या उस नगर के विषे साकं कहिये एक साथ सब ही देव इत कहिए प्राप्त भये। उससे साकेतपुर कहिए सो पुर कीर्ति कर भरा है।।50।।

अथानन्तर – सब देवों सहित पुरंदर कहिए इंद्र अयोध्यापुरी की तीन प्रदक्षिणा दे नगर में प्रवेश करते भए नाभिराजा के आंगन में जाय कर भगवान् के लाने के अर्थ शची को इन्द्र ने आज्ञा करी कैसा है भगवान, महा पवित्र है शरीर जिसका।।51।। इन्द्र की आज्ञा पाय इन्द्राणी प्रसूति गृह में गई जननी को सुख निद्रा दिलाय अर मायामई बालक माता के निकट मेल।।52।। भगवान् को नमस्कार कर उठाय लाई बाहर लाय इन्द्र के हाथ सौंपे सो सुरपति श्रीपति के रूप का अतिशय हजार नेत्रोंकर निरखता हुआ भी तृप्त न भया भगवान को अपनी गोद में लेकर ऐरावत गज पर आरूढ भया सो अपनी गोद में लेकर आदीश्वर को सुरेश्वर कैसा सोहता भया जैसे अपने शिखर पर सूर्य को धरे निषधाचल सोहै।।54।।

देवियों के समूहों सहित देवों के नायक को सुमेरु शिखर ले गए। कैसे हैं जिनपति, छत्र की छाया के पटकर शोभित हैं सीस जिनका अर चमरों के समूह जिन पर ढुरे हैं गिरीन्द्र की प्रदक्षिणा दे सुरेन्द्र पांडुक शिला विषे जिनेंद्र को सिंहासन पर पधरावता भया सब देवों का चक्र कहिये समूह उस कर संयुक्त जो सुरपति जिनपति के अभिषेक का आरंभ करावता भया उस समय देवों ने अनेक वादित्र बजाए गाजता समुद्र समान गंभीर भेरी 1 ढोल 1 मादल 1 मृदंग 1 इत्यादि वादित्र देवों ने बजाए अर शंख पूरे अर स्त्रियों सहित किन्नर गंधर्व तुम्बर नारद इत्यादि देवों की जाति हैं सो सुन्दर गान करते भए। उनके गीत कानों को मनोहर नाना प्रकार के रसकर पूर्ण हैं तत 1 वितत 2 घन 3 सुषिर 4 ये चार प्रकार वादित्र मन के हरणहारे देव बजावते भए, इनका भेद ऊपर के श्लोकों में लिखा है अर

जन्माभिषेक समय अप्सराओं का शुभ महा रमणीक नृत्य होता भया वह नृत्य हाव भाव विलास विभ्रमादि कर अति सुन्दर है शृंगारादि रसों कर अद्भुत है रचना जिनकी और अंग हार कहिए अंग का मोड़ना उस कर किये हैं अनेक कौतूहल जहां।।60।।

इस भांति देवों का समूह महा आनंदरूप प्रवर्त्ता अर देवों के शब्द समूह कर सुमेरु की गुफा गुंजार रूप भई।।61।। जब सौधर्म इन्द्र ने अभिषेक के अर्थि आरम्भ किया तब हाथ में अष्ट मंगल द्रव्य लिये महा मनोहर देवांगना खड़ी हैं अर कंचन के कलशों सहित देवों के समूह सर्व दिशा से क्षीरसागर को लाये सो देवों के समूह कर क्षीरसागर सोहता भया कैसे हैं कंचन के कलश महावेग कहिये महाशीघ्रता कर निकसे प्रवाह जिनका अर महा घने कहिए अति पुष्ट हैं अर क्षीरसागर के जल से भरे स्वर्ण के कलश देवों के हाथों हाथ कर आवते कैसे शोभते भये जैसे चांद अर सूर्य सुमेरु की ओर आवते सोहें।

भावार्थ – कनक कलश तो सूर्य समान भए, अर क्षीरोदधि का जल चन्द्रमा समान भासता भया। फिर हजारों देव क्षीरसागर के जल कर भरे कलशों कर जिनेन्द्र का जन्माभिषेक करते भये। कैसे हैं कलश, ढुलती बेर सुन्दर है शब्द जिनका।।65।। इन्द्रादिक देवों के हाथ कर कुम्भ रूप महा मेघ क्षीरोदधि के जल कर भरे तत्काल का जाया जो जिनराज महागिर उसके शिर पर वर्षते जिनरूप गिर को खेद का कारण न भये।।66।। क्षीरसागर के जल का प्रवाह सुमेरु पर विस्तरा उस समय अनेक देव देवाधिदेव के मुख की उच्छ्वास की वायु से बारम्बार जल के समूह विषे मक्षकांवों के समूह की न्याईं जा पडें।

भावार्थ – भगवान् के मुख की वायु अति प्रबल उससे देव भी चलायमान होय जाय। अर कोई भी जीव के भगवान के कल्याणक विषे अकल्याणक नहीं सब ही को सुख उपजे है।।67।। देवों ने सुमेरु गिरि अनेक बार देखा है सो सदा रत्नमई पीत वर्ण देखा है सो सुमेरु जिनराज के जन्मोत्सव विषे दुग्धोदधि के समूह कर धवल रूप देखा है, क्षीरसागर सुमेरु से अति दूर है अर विद्याधरों के समूह कर अत्यन्त परोक्ष है विद्याधरों का गमन नहीं अढाई द्वीप विषे भूचर का संचार है। मानुषोत्तर परे मनुष्य नहीं जाय सके हैं सो जिनपति जन्माभिषेक विषे देवों ने पयोदधि प्रगट किया।।69।। ऐसा स्नान भगवान ही का होय जहां स्नान के करण हारे आप अर स्नान का आसन सुमेरु अर स्नान की कूंडी क्षीरसागर अर स्नान करावन हारे इन्द्रादिक देव ऐसी सामग्री औरों को कहां होय।।70।।

इन्द्र अर अनेक सामानिक लोकपालादिक देव अनुक्रम कर भगवान का अभिषेक करते भये।।71।। अत्यन्त सुकुमार प्रभु का शरीर उसे शची आदि सुरांगना पल्लव से भी अति कोमल जे कर उनकर अंगोछती भई और दिव्य सुगन्ध जिस पर भ्रमर गुंजार करे हैं उस का लेप करती भई

आदीश्वर के अत्यंत बाल अवस्था का शरीर उसका स्पर्श करती अद्भुत सुख को प्राप्त भई। ऐसा सुख और के स्पर्श से नहीं जैसा कोमल तनु कमलनयन भगवान का है वैसा तीन लोक में किसी का नहीं, फिर गंधोदक के कलशों कर भगवान का अभिषेक भया सुगन्ध जल कर भरे कलश जगत् के शिरोमणि के सिर पर ऐसे वर्षे जैसे गिरि पर वर्षा होवे।।74।। जिनेश्वर का समचतुरस्रसंस्थान अर वज्रवृषभनाराच संहनन, महाप्रबल।।75।। अछेद्य अभेद्य है काया जिसकी सो दोनों कान वज्रवत् अखंड हैं तथापि नियोगमात्र वज्रसूची के अग्रभाग से छिद्र प्रगट कर कानों में कुण्डल पहराये, सो कुण्डल कानों के प्रभाव कर ऐसे सोहते भए मानो जंबूद्वीप के दोनों भानु ही महासेवक स्वामी की सेवा अर्थ आये हैं।।77।।

अर चूडा कहिये प्रभु की चोटी अति स्निग्ध अर अति श्याम उस विषे पद्मराग मणि का आभूषण पहराया। सो कैसा सोहता भया, इन्द्र नीलमणि में पद्मरागमणि सौहे।।78।। अर प्रभु के ललाट पट्ट विषे रचा श्वेत चंदन का तिलक कैसा शोभता भया, जैसे अष्टमी के चन्द्रमा की रेखा संध्या समय पीत बादलों के समूह विषे सोहे है। प्रभु के भुज महा मृदु सो रत्नमई केयूर कहिये भुजाशिखराभरण (बाजूबन्द) उनकर मंडित कैसे शोभते भये, जैसे बाल भुजंग रत्नोंवाली फणोंकर शोभे हैं, अर हाथों में कड़े अद्भुत मणियों कर जडे सो कैसे शोभते भए, मानो रत्नाचल के तट ही देवों कर मंडित सोहे हैं।।81।।

अर भगवान् का वक्षःस्थल मुक्ताफलों के मनोहर हारों कर कैसा शोभता भया, जैसे पर्वत का तट जल के नीझरनों वर सोहै कर देदीप्यमान रत्नमय प्रालंब सूत्र कर प्रभु कैसे सोहते भये, जैसा कल्पवेल से बेढ़ा कल्पवृक्ष ही सोहे, प्रालंब सूत्र नाम यज्ञोपवीत का है। सो यहां कोई प्रश्न करे जो यज्ञोपवीत का ग्रहण अष्ट वर्ष उपरांत है? उसका उत्तर सूत्र मई यज्ञोपवीत का श्रावक के व्रत संबंधी अष्ट वर्ष उपरांत ही है। यह यज्ञोपवीत रत्नमई आभरण रूप है।।81।। अर जगदीश की कटि में मेखला कैसी सोहती भई, जैसी पर्वत की तलहटी विजली के उद्योत कर युक्त जो मेघ पटल उस कर सोहे है। अर जगतपति के शब्द करते चरण मणिमई भूषणों कर मण्डित ऐसे सोहते भये मानो दोनों पांव परस्पर आलाप ही करे हैं।।85।। अर जगत के स्वामी की अंगुरी रत्नजड़ित मुद्रकावों कर ऐसी सोहती भई मानो ये मुद्रका रक्षामुद्रिका ही हैं।

भावार्थ – प्रभु की सी रूप लावण्यता त्रैलोक्य में नहीं सो मत किसी की दृष्टि लागे यह जान कर सुरपति ने रक्षक मुद्रिका ही करी हैं प्रभु तो जगत के रक्षक हैं उनकी रक्षा कौन करे, परन्तु यह इन्द्र की भक्ति है अर केसर अर चंदन के पंक कर लिप्त किये त्रैलोक्य नाथ के अंग सो कैसे सोहते भये जैसा स्फटिकमणि का पर्वत संध्या के बादलों के संसर्ग से सोहै।।87।। अर हंसों की पंक्ति समान

उज्ज्वल दुपट्टा प्रभु कांधे धरा सो शुभ आकार कैसा सोहता भया, जैसा निर्मल शरद का मेघ सोहे अर सन्तान जाति के कल्पवृक्ष अर पारिजात के कल्पवृक्ष देवलोक के वृक्षों कर उपजे नाना भांति के अर जल कर उपजे कमलादिक अर स्थल कर उपजे स्थल कमलादि नाना प्रकार के पुष्प महा सुगन्ध महा मनोहर है।।89।।

अर भद्रशाल वन के अर नन्दन वन के अर सौमनस वन के अर पांडुक वन के उपजे नाना प्रकार के नाना वर्ण के जो अनेक पुष्प उनकी माला शची आदि देवी ने गूंथी वे देवी माला के गूंथने विषे प्रवीण हैं सो उनकी गूंथी मालावों की अति सुन्दरता कर मण्डित वृषभदेव अति सोहते भये। कैसे हैं आदीश्वर, सीस विषे जो माला उसके अग्रभागकर मेरु के मण्डन कहिये आभरण ही हैं।।91।। वे भव्यवत्सल आप ही भद्रशाल रूप सोहते भये भद्र कहिये कल्याणकारी है जिसका स्वभाव जिनका अर वे नाभिनन्दन आप ही नन्दन वन रूप भासते भये जगत् को आनन्द उपजावन हारे अर वे ही निर्मल निःकपट मन के धरणहारे आप ही सौमनस वनरूप भए अर वे जगतगुरु अखंड यश कर आप ही पांडुकवन रूप राजते भये।।92।। अर वे तीन लोक के एक तिलक तिलककर मंडित सोहते भये आप तो सदा शोभा रूप ही हैं जगत के आभूषण ही हैं उनको आभूषण कहां शोभित करें सब आभूषण उनके अंग के संग कर सोहते भये।।93।।

अर वे भगवान् निरंजन सकल अंजन से रहित अंजन कहां परन्तु इंद्राणी का नियोग है सो जन्म कल्याणक करते समय जिनपति के लोचन विषे अंजन करे सोई इंद्राणी ने अंजन किया सो अति सोहता भया। कैसे हैं प्रभु, जीती है चंद्र सूर्यादिक की ज्योति जिन्होंने प्रभु की सी दीप्ति अर प्रभु की सी कांति प्रभु ही में है।।94।। शची इंद्राणी अर श्रीदेवी अर कीर्ति लक्ष्मी इत्यादि सुरांगना उन्होंने अपने हस्तों कर जगत मंडन के मंडन किये सो जिनेन्द्र इन्द्रादिक देवों का मन हरता भया फिर इन्द्रादिक देव पुराणपुरुष का ऋषभ नाम धरते भये। कैसे हैं पुराणपुरुष, अनन्त हैं नाम जिनके अर युग में आदि कहिये मुख्य हैं उन कर ऋषभ नाम धर कर स्तोत्र करने को उद्यमी भये।।96।। इन्द्रादिक स्तुति करे हैं – हे वृषभ! तुमने मति, श्रुति,अवधि ज्ञानरूप श्रेष्ठ नेत्र कर मंडित इस भरतक्षेत्र में जन्म धर तीन लोक में उद्योत किया तुम अद्भुत तीर्थंकर नाम कर्म कर मनुष्यभव को सन्मुख होय जगत को कृतार्थ करो हो जिन कर यह जगत सोहै उनका यह जन्म कल्याणक का आश्चर्य कहा ऊंचा है शिखर जहां जगत विषे महागुरु कहिये गरिष्ट ऐसा सुमेरुगिरि तुम अपने चरणों के नीचे धरा उससे तुम गुरुवों के महागुरु ईश्वर बाल्यावस्था विषे बाल चेष्टा रहित गुणोंकर अति वृद्ध जगत के बड़े सबके पितामह सबके स्वामी हैं।।99।।

यह सुरगिरि अपने शिर पर तुम्हारे चरणों को धारे हैं। कैसे हैं गिरियों के शिखर, सिरा रूप मुकुट

कर ऊंचे हैं, अर सुरगिरि अपने चरणों कर सर्व भूमि स्पर्शे हैं, पृथ्वी जिनके चरणों में लग रही है सो तुम्हारे चरणों को शिर पर धारते सोहे हैं।।100।। राजाओं में तीन शक्ति होय हैं एक मंत्र शक्ति दूजी प्रभाव शक्ति तीजी उत्साह शक्ति तीन ही शक्ति भी नृपतियों में पूर्ण नहीं किंचित् मात्र ही होय हैं। अर तुम्हारे अद्भुत अनन्त शक्ति हैं पूर्ण तुम्हारा सा राज्य किसी का नहीं, अर तुमसे राजा जगत्त्रय में नहीं।

पौरुषादिकमानीतं त्वया नाभिजगत्रम्।
कथमेकपदेश्चित्रं विधिमेव विधीयताम्।।2।।

हे नाथ! कहां तुम्हारी सुकुमारता जिसके समान त्रिभुवन में सुकुमारता नहीं अर कहां यह कठोरता जो यह गिरि को चूर्ण कर डारे किसी भी जीती न जाय उससे यह परस्पर विरुद्धार्थ शक्ति तुम ही विषे देखिये है, अन्यत्र नहीं।।3।। अर तुम्हारा रूप एक हजार आठ लक्षण व्यंजनाओं कर युक्त महासुन्दर सोहे है, ऐसा रूप सुर असुरों को दुर्लभ है। हे देव! तुम्हारा विग्रह कहिये शरीर सो विग्रह विन ही चपल विश्व को नम्रीभूत करता भया, तुम्हारा शरीर रूप की सुन्दरता कर पूर्ण अनेक अतिशय को धरै महाप्रबल इस लोक विषे प्रथम कहिये मुख्य जिस समान जग में नहीं अर चरम कहिये हद्द जिसके परे अर नहीं।।5।।

जब तुम माता मरुदेवी के गर्भ विषे आये तो पहिले ही छै महीना से हिरण्य कहिये रत्न स्वर्ण की वर्षा होती भई उससे तुमको गीर्वाण कहिये देव हिरण्यगर्भ ऐसा नाम कर गावे हैं।।6।। अर तुम आप ही अपने अतिशय कर तीन ज्ञान सहित उपजे इस भव के पहिले तीजे भव विषे षोडश कारण भावना भाय तीर्थेश्वर पद उपाज्या अर सर्वार्थ सिद्धि विषे अहमिंद्र होय आदीश्वर भये। उससे तुमको सुर नर स्वयंभू नाम कर गावे हैं तुम स्वयंसिद्ध अद्भुत स्वयंभू हो अर तुम नाना प्रकार की धर्मरीति के कर्ता उससे तुम्हारा नाम सत्यार्थ विधाता बुद्धजन कहे हैं अर तुम अपूर्व कहिये आश्चर्य का ही राजा ऐसा राजा दूजा नहीं है। हे प्रभु! सकल प्रजा के पति अर सकल की सर्वथा प्रकार रक्षा करते प्रकट भये हो इसलिये तुमको पंडित प्रजापति कहते हैं अर तुम्हारे राज विषे प्रजा प्रीति कर इक्षुरस को आस्वादती तृप्त होयगी उससे तुम इक्ष्वाकुवंशी कहावोगे अर तुम सब पुराणों को आदि महा महिमा के धारक महन्त इससे तुमको पुरुदेव कहिये तुम अनंत आश्चर्य के धारक तीन लोक के नाथ तुमको भरतक्षेत्र का नाथ कहना अति अल्प महिमा है जगदीश्वर को भरतेश्वर कहना कहा अर भरत क्षेत्र भी जगत विषे आय गया इससे जगत जन भरतक्षेत्र के अधिपति भी कहें तो कहो।।12।।

तुम विधाता स्वयं बुद्ध महा दुर्द्धर तप के उपदेश अज्ञानियों को ज्ञान के दाता महा यश के कर्ता सर्व अतिशयों के कर्ता सर्वोत्कृष्ट हो।।13।। तुम इस पृथ्वी विषे आप मुनिव्रत धर निर्मल पात्र दान

www.vitragvani.com

दिखाओगे। हे धीर! धर्मध्यान का कर्ता जो श्रेयांस उसका कल्याण करोगे कल्याण के अर्थ प्राणियों को व्रतदान का उपदेश करोगे तुम काम रूप भुजंगम को वशीकरण को महामंत्र हो अर द्वेषरूप गज को वश करने को अंकुश रूप हो अर मेघों के पटल उडावने को पवन रूप हो।

प्रशस्तस्तिमित ध्यान सुसमीन महाह्रदः।
बन्धानन्तरसंधानघाती धनहुताशन।।16।।

अर तुम प्रशस्त ध्यान कर महा निश्चल रूप हो जैसा महासमुद्र, सूते मच्छों कर निर्व्याकुल होय है तैसे निर्व्याकुल शुक्लध्यान रूप अग्नि कर घातिया रूप ईंधन को भस्म करोगे।।16।। तुम स्नेह रहित केवलज्ञान रूप दीपक कर सकल पदार्थों का उद्योत करण हारे इस पृथ्वी विषे स्वतः स्वभाव मोक्षमार्ग के उपदेशक होगे इस भरत क्षेत्र विषे अठारह कोड़ा कोड़ी सागर से धर्म का नाम ही निर्मूल भया है भोगभूमि विषे भोगों की ही मुख्यता थी यति श्रावक का धर्म नहीं सो अब तुम कर्म भूमि की आदि विषे इस क्षेत्र में धर्म का प्रकाश करोगे तुम धर्म के स्रष्टा कहिए कर्त्ता हो।।18।।

हे जगत् गुरु! भव्य जीवों को स्वर्ग मुक्ति मार्ग दिखावने को तुम जगत् के उपदेश को प्रगट भए हो। कैसे हैं भव्यजीव, अनादि काल से दिग्मोह कर आंधी है बुद्धि जिसकी जैसे दिग्मोह कहिए दिशा भूल चला चाहे पूर्व को अर गमन करे पश्चिम की ओर, वैसे ये जीव अधर्म को धर्म जान सेवे हैं तुम्हारे उपदेशकर इनका भ्रम मिटेगा मार्ग पिछानेंगे।।19।। हे नाथ! तुम्हारे उपदेश से भव्यों के समूह पृथ्वी विषे अभ्युदय कहिये प्रताप रूप इन्द्र-नरेंद्रादिक की विभूति के स्वामी होवेंगे, अर कैयक महाभाग तद्भव मोक्षगामी तुम्हारे उपदेश से अध्यात्म विद्या को पायकर अविनाशी लक्ष्मी कर युक्त होवेंगे।।20।। तुम्हारा उपदेश प्रमाण नय के मार्ग अविरुद्ध जो मार्ग उसकर जगत् के प्राणी परमपद को पावेंगे इससे जे कल्याण के अर्थी हैं उनसे तुम ही नमस्कार करणे योग्य हो। अर हे नाथ! तुम ही स्तुति करने योग्य हो।

तुम ही सकल यत्नों कर आराधने योग्य हो निरंतर स्मरण करणे योग्य हो जगत के उपकारी हो, तुम्हारे नमस्कार कर काया कृतार्थ होय है अर तुम्हारे गुण स्तवनकर प्राणियों की वाणी गुणवंत होय है अर तुम्हारे गुणों के चिंतवन कर प्राणियों का मन शुद्ध होय है सब दुखों रहित गुणवंत होय हैं। हे देव! मृत्यु रूप मल्ल के दहनहारे तुम्हारे तांई नमस्कार होवे अर हे करुणानिधे! भव माया के भेदन हारे तुम्हारे तांई नमस्कार होवे हे जन्मजरा के अन्तकरण हारे आदि पुरुषोत्तम तुम्हारे तांई नमस्कार होवे।।20।। हे कर्मों के नाशक जगत् विभाकर तुम्हारे तांई नमस्कार हो। हे जिनेश्वर अनंत बोध के धारक! तुम्हारे तांई नमस्कार होवे अर हे अनन्त दर्शी! तुम्हारे तांई नमस्कार होवे, हे अनन्तवीर्य के धारक अनन्त सुख के स्वामी तुम्हारे तांई नमस्कार होवे।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

हे त्रैलोक्यनाथ! तुम्हारे तांई नमस्कार होवे। हे जगत बांधव तुम्हारे तांई नमस्कार होवे। हे लोकवीर जगत् विषे अद्वितीय योद्धा महाभट तुम्हारे तांई नमस्कार होवे। हे धर्म! के विधाता त्रैलोक्य के ईश्वर तुम्हारे तांई नमस्कार होवे।।26।। हे जिनसूर्य तुम्हारे तांई नमस्कार होवे हे सर्वव्यापी जिनराज तुम्हारे तांई नमस्कार होवे। हे जगत् के रक्षक जिनेंद्र तुम्हारे ताई नमस्कार होवे।।27।। इस भांति सैकड़ों स्तुति कर इन्द्रादिक देव आदि पुरुष की स्तुति कर बारम्बार नमस्कार कर यह प्रार्थना करते भए, जो हे आदीश्वर! तुम विषे हमारी अचल भक्ति होवे इस भांति समान अर प्रशंसा योग्य नहीं बारम्बार प्रभु की भक्ति ही इन्द्रादिक याचते भए।।28।।

फिर इन्द्र देवों के समूह सहित शीघ्र ही जिनेंद्र को लेकर गिरीन्द्र से चले।।29।। अर रूपाचल जो वैताड्य समान उज्ज्वल चलता जो पर्वत ऐसा यहां ऐरावत उस पर चढकर जिनराज को ले चले। कैसे हैं जिनराज, सुवर्ण के कमलों की राशि समान पीतवर्ण है शरीर जिनका।।30।। सो प्रभु को अयोध्यापुर विषे ले गए। कैसी है अयोध्या, किसी कर भी जीती न जाय फिर ध्वजावों की पंक्तिकर शोभित है अर वादत्रों की ध्वनि कर महा गंभीर है मानो यह अयोध्या देवों की सेना ही है किसी कर जोती न जाय अर ध्वजावों की पंक्तिकर शोभित है अर वादित्रों की ध्वनिकर पूर्ण है।।31।। अयोध्या विषे जाकर इन्द्राणी जिनराज को माता के समीप स्थापित कर इन्द्र पै आई फिर इन्द्र-इन्द्राणी दोनों माता पिता को प्रणाम कर पूजा करते भए अर अद्भुत वस्त्राभूषण माता पिता को पहिराए फिर माता पिता के निकट इन्द्र ताण्डव कहिये नृत्य उसका आरंभ कर नृत्य करता भया, देवमाया कर भुजा के समूह बनाए उन पर देवांगना नृत्य करती हुई सोहे हैं चिरकाल माता पिता के आगे आनन्द नाटक कर इन्द्र देवों सहित अपने स्थान को गया।।33।।

कैसे हैं माता-पिता, नृत्य का देखनहारा अर संगी शास्त्र का जाननहारा जिनके समान दूजा नहीं अर इन्द्र समान नृत्य का कर्ता नहीं।।34।। साड़े तीन कोटि अद्भुत रत्न प्रतिदिन त्रय संध्या पिता के घर विषे पंद्रह मास बरषे गिरींद्र कहिये सुमेरु उस विषे सुरेन्द्र ने जिनेंद्र का अभिषेक किया जो जिनेंद्र जगत का ईश्वर जिनका पुत्र तिनके भाग्य समान अन्य का भाग्य नहीं। नाभिराजा अर मरुदेवी राणी दोनों अति उदार उस समय अति आनन्द को प्राप्त भए हर्ष में अति भीग गये, स्वाधीन भया है सुख जिनके सो जैसा सुमेरु विषे उत्सव भया, वैसा ही उत्सव जन्मकल्याणक का अयोध्या विषे करते भए सर्व लोक आनन्द रूप भए, यह वृषभेश्वर का गर्भावतार अर जन्माभिषेक कल्याणक का वर्णन जो भव्यजन भक्तिकर सदा पढ़े अर सुने सो जिनसूर्य के प्रकाश से मोहतिमिर को हर कल्याण को प्राप्त होय कल्याणक के नाथ का चरित्र जगत को कल्याण कारी है।।37।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ ऋषभनाथजन्माभिषेकवर्णनं नाम अष्टमः सर्गः।।8।।

नववाँ सर्ग

अथानन्तर – इन्द्र ने कर के अंगुष्ठ विषे थाप्या जो अमृत उसे पीवता हुवा जिनेश्वर माता पिता के नेत्रों को आनन्द उपजावता हुवा वृद्धि को प्राप्त भया जैसे बालचन्द्र जो द्वितीया का चन्द्र उसके दर्शन से अर प्रति दिन चन्द्र की वृद्धि से समुद्र बढ़े है। कैसा है चंद्र, उज्ज्वल है किरण जिसकी वैसे जिनेंद्र रूप बालचंद्र के दर्शन से अर प्रतिदिन वृद्धि से जगत का आनंद रूप समुद्र बढ़ता भया, आप जिन नायक बालक्रीड़ा रूप अमृत रस को पीवता हुवा भी निरंतर लोगों को जिसका दर्शन सुलभ है तो भी समस्त लोकों के लोचनों को अति अनुराग बधावता भया, लोक निरखते तृप्त न भये।

भावार्थ – यद्यपि बाल अवस्था विषे प्रभु बारम्बार बाहर निकसे हैं अर समस्त लोक देखे हैं तो भी लोकन की लालसा न मिटे अर्थात् त्रिलोकीनाथ को देखा ही करैं।।3।। वे प्रभु नाभिकुमार इंद्र ने राखे जो देव उनके सहित मनोहर क्रीड़ा करें जो अवस्था आपकी सोई विक्रिया कर देव कर लेवें मानो प्रभु के प्रतिबिंब ही हैं उन सहित मनोहर क्रीड़ा करते भये भगवान के कोमल शय्या सिंहासन वस्त्र आभूषण सुगन्धादिक का लेपन भोजन बाहन सब देवोपुनीत ही होता भया, देवता ही नाना प्रकार की सामग्री ल्यावें।।5।। भक्ति कर कुबेर को इन्द्र ने आज्ञा करी जो इन्द्र की आज्ञा प्रमाण कुबेर देव जिनवर की निरन्तर ही सेवा करता भया, प्रभु की वय के अनुसार अर छै ऋतु के अनुसार नाना प्रकार की वस्तु ल्यावें जैसी वय है उसी प्रमाण वस्त्राभूषण भोजन विलेपनादि अर ऋतु विषे जे वस्तु चाहिए सब लावें जैसी सामग्री जिनवर को मौसर वैसी सुर नर खग नाग इत्यादि जगत् के जीवन को मौसर नहीं अपने जो निर्मल दिव्यकला गुण उन सहित आप वृद्धि को प्राप्त भये मानो वे कला गुण जन्म ही के साथी हैं, भगवान संपूर्ण यौवन कर पूर्ण चन्द्र सोहते भये कहिवे मात्र पूर्ण चन्द्रमा का दृष्टांत है अर कोटि चन्द्र सूर्यादिक के जिनेंद्र के चरण नख की ज्योति को न पावें।।7।।

जिसके महाभुजा महाप्रबल वृत्त कहिये गोल अर गोडों तक लांबे अंगद कहिये भुजाशिखर आभरण उस कर संयुक्त महा उत्तंग त्रैलोक्येश्वर की त्रैलोक्य लक्ष्मी उसके मिलाप के अर्थ पूर्ण हैं।।8।। प्रभु का उरस्थल श्रीवत्सलक्षण कर शोभता भया। कैसा है श्रीवत्सलक्षण, जैसे त्रैलोक्य के राज्य की लक्ष्मी आलिंगन कर सोहै जिसका उरस्थल रूप मन्दिर उसके स्तंभ समान महासुन्दर चरण जंघा नितंब अर दोनों गोडे उनकी अत्यंत शोभा होती भई।।10।। अर केशों का समूह महाश्याम सुन्दर कैसा सोहता भया जैसा हेमाचल के शिखर विषे महानील इन्द्र नीलमणि का समूह सोहै प्रभु का शरीर तो हेमाचल समान है अर चोटी के केशों का समूह छत्र के आकार सोहे सोई इन्द्र नीलमणियों का समूह है।।11।।

प्रभु का सुन्दर ललाट अर सुन्दर नासिका अर महा मनोहर कर्ण उनकी उपमा वचन से अगोचर होती भई अर चढ़े धनुष समान दोनों भौंह, उनकी महिमा कथन में न आवे। चन्द्रमा तो चांदनी कर रात्रि विषे हर्ष का कारण होय है अर दिवाकर अपनी दीप्ति अर दिवस विषे हर्ष का कारण होय है अर जिन चन्द्रमा का मुख निश-दिन तीन भुवन को आनन्द का कारण होय है उससे भगवान के मुख की उपमा समान कोई पदार्थ नहीं, शशि की चंद्रिका निशा विषे, दिनकर की दीप्ति दिन ही विषे, सो भी सर्वत्र नहीं अल्प क्षेत्र विषे है अर प्रभु की दीप्ति कर कांति सर्वत्र विस्तर रही है अर सर्व को आनन्दकारिणी है।।13।। अर कमल दल समान नाभिकुमार के नेत्र दोनों समान अर कर्णान्त पर्यंत अर हथेली अर पगथली अर अधर अशोक के पल्लव समान आरक्त उनकी अरुणता प्रबाल में नहीं विद्रुम में नहीं किंदूरी में नहीं।।14।।

अर जिनेश्वर के दांतों की पंक्ति महा उज्ज्वल सोहती भई मानो शुद्ध मुक्ताफलों के समूहकर करी अर कुन्दपुष्प समान है द्युति (कांति) जिसकी। कैसी है दांतों की पंक्ति, जो कि अदंतुरा कहिये अधिक ऊंची नहीं सब दांत समान हैं अर महाशोभा को धरे हैं।।15।। अर ऋषभ का देह धनुष 500 ऊंचा अर हेमाचल समान पीतवर्ण नव सै व्यंजन अर एक सौ आठ लक्षण उन कर मंडित।।16।। ऋषभ के रूप की शोभा पूर्ण को कहि सके, सौ कोटि इन्द्र कथन करे तौ भी लेश मात्र न कह सके, ऋषभ कैसा रूप त्रैलोक्य में अर का नहीं।।17।। जब आप यौवन को प्राप्त भये तब पिता ने दोनों राणी विवाह की विधि कर ऋषभ देव को परणाईं। जो उन समान त्रैलोक्य में रूपवंती नहीं महा यौवनवंती एक का नाम नंदा दूजी का नाम सुनंदा। वे दोनों गौरी श्यामा कल्पलता समान उन कर वह जगत् का कल्पवृक्ष शोभता भया। कैसी हैं दोनों, फूलन की गैंद समान हैं कुच जिनके जैसे कल्पलता कल्पवृक्ष से लिपटी सोहे वैसे वे दोनों महा भगवती भगवान से बेढ़ी सोहती भईं।।19।। जैसी कांति दीप्ति सम्पदा कला प्रभु विषें हैं अर दोनों राणियों विषें है वैसी त्रैलोक्य विषें नहीं सो उनके सुख की महिमा त्रैलोक्य विषें कैसे कथन में आवे अपितु न आवे।

भावार्थ – तीर्थेश्वर के तुल्य नर त्रिभुवन में नहीं अर तीर्थेश्वर की राणी समान जगत्रय में नारी नहीं।।20।। कै एक दिन में राणी नंदा भरत नामा पुत्र को जनती भई। कैसे हैं भरत, समस्त भरत क्षेत्र को आनंद के कर्ता आदि चक्रवर्ती हैं, फिर लक्ष्मी पुत्री को जननी भई।।21।। अर दूजी राणी सुनंदा महा बलवंत बाहुबली नामा पुत्र को जनती भई अर महा सुन्दर सुन्दरी नामा पुत्री को जनती भई।।22।। अर फिर भरत का माता नन्दा के वृषभसेनादिक अठानवें पुत्र अर होते भये। ऋषभ के पुत्र सब चरमशरीरी अर जिनको शरीर धरना नहीं इसी देह से केवल पाय निर्वाण होवेंगे।।23।। एक दिन

ऋषभदेव दोनों पुत्रियों को अक्षरविद्या अर गणितविद्या अर गांधर्वादिक अनेक कला सिखावते भये। दोनों पुत्री महा बुद्धिमान् हैं जगत् गुरु को गुरु पाय वे दोनों कन्या श्रुतरूप सागर के पार होती भईं।

अथानन्तर – सकल प्रजा नाभिराजा के साथ नाभिनन्दन के समीप आई स्तुति पूर्वक प्रणाम कर महा आर्ति के भरे सब लोक प्रभु से वीनती करते भये – हे नाथ! पहिली भोगभूमि विषे प्रजा के जीवन के कारण कल्पवृक्ष थे उनके गये पीछे स्वयमेव सांठे उपजे थे उनमें से रस झरता रहे।।27।। सो तुम्हारे प्रताप कर हमने अब तक इक्षु रस से उदर पूर्ण करे हैं। हे नाथ! हम तुम्हारे पाले कल्पवृक्षों को भूल गये। अब काल के प्रभाव कर वे इक्षु महा रस देते मृदु थे वे अति कठोर होय गये। पहली उनमें स्वयमेव रस झरता सो अब छेदे भेदे भी रस नहीं निकसे है।।29।।

अर अब कैयक तृण जाति फलों के भार कर नम्रीभूत दीखे हैं परन्तु हम न जाने क्या हैं अर इनके खाने की विधि क्या है अर घट समान है स्तन जिनके ऐसे गाय भैंस उनके स्तनों से रस झरे है सो रस भक्ष्य है कि अभक्ष्य है सो कहो। अर आगे सिंह व्याघ्र ल्यारी इत्यादि नख वारे जीव पहिले हमारे गले से लग लग क्रीड़ा करते थे सो अब हमको उद्वेग उपजावे हैं, जैसे खोटे पुत्र पिता को खेद उपजावें इसलिए अब हम क्षुधा कर पीड़ित सो अब हमको आजीविका का उपाय बताओ अर भय से रक्षा करो तब करुणा के सिंधु पुरुषोत्तम सकल प्रजा के प्रतिपालक प्रजा को क्षुधा कर पीड़ित देख उनकी आर्ति हरते भये आजीविका की सिद्धि अर्थ सर्व उपाय बतावते भये, धर्म अर्थ काम का साधन लोकों को बताया।

असि कहिये खड्ग, मसी कहिये स्याही कृषि कहिये खेती विद्या कहिये पठन-पाठन, अर वाणिज्य कहिये व्यापार, अर शिल्प कहिये सुवर्णकारादि अनेक धंधा, ये षट् कर्म आजीविका की सिद्धि के अर्थ जगत् गुरु बतावते भये, अर गौ महिषी अश्व ऊंट आदि पशुवों का पालना अर सिंह आदि दुष्ट जीवों का वर्जना इस भांति कर्मभूमि की रीति बताई तब सकल पुत्रों ने अर प्रजा के लोकों ने समस्त कला के शास्त्र सीखे अर लोकों ने अनेक भांति की शिल्पविद्या सीखी अर जे शिल्पजन हैं उन नगर गांवों में स्थानक बनाये अर भरतक्षेत्र विषे सर्वत्र खेट कर्वटादि सब थापे अर तीन वर्ण थापे। जे पीड़ा से रक्षा करें, वे क्षत्री अर जे वाणिज्य के योग से धन उपार्जें वे वैश्य कहाये अर शिल्प आदि जे अनेक धन्धे उनके प्रबन्ध से शूद्र कहाये। तीन वर्ण भूमि के आदि विषे आदीश्वर ने थापे।।39।। षट् कर्मों कर प्रजा को सुख अवस्था उपजाय, सकल दुख निवारण किये प्रभु का किया जो युग उससे प्रजा के लोग हर्षित होय कृतयुग कहते भये।।40।।

फिर इन्द्र सहित सकल देव आय ऋषभ का राज्याभिषेक कर प्रजा को आनन्दरूप करते भये।।41।। योधान से न जीता जाय उससे अयोध्या अर विनयवान जीवों कर भरी उससे अयोध्या

विनीता कहाई अर सुन्दर मन्दिरों कर भरी मण्डित उससे साकेता भी कहिये सो पुरी अधिक शोभती भई, सर्व लोकों के बांधव वे इक्ष्वाकुवंशी कहाये।।43।। अर कुरुजांगल देश के अधिपति उनको प्रभु किया अर उग्र है आज्ञा जिनकी ऐसे उग्रदेश के अधिपति ते जिनपति ने उग्रवंशी किये, अर प्रजा को न्याय से पालने से प्रभु के थापे भोजवंशी कहिये।।44।। तथा अर अनेक राजा प्रजा के पालक होते भये सोमप्रभ श्रेयांस आदि कुरु पुत्र उन कर पृथ्वी सोहती भई।।45।। दिव्य भोग देवोपनीत भोगते भगवान जन्म के दिन से लेय तिरासी लाख पूर्व व्यतीत भये।।46।।

एक दिन भगवान नृत्य देखते विराजे हुए एक नीलंयशा नामा नृत्यकारिणी सो नृत्य करते करते विलाय गई उसको देख के भगवान् के वैराग्य उपजा।।47।। जे बाह्य राग पहिले प्रभु को राज्य के कारण हुए सो अंतरंग का अनुराग मिटने से सब ही भाव शांतता का कारण भये, जे मनोग्य विषय पहिले मति विभ्रम के कारण थे वे विरक्तता के उपजने से शांतता के कारण भये सो भगवान स्वयंबुद्ध व्यतीत भई है विषय की स्पृहा जिनके अर चिरकाल भोगने की आसक्तता कर उपजी है लज्जा आपको सो अति लज्जावान होय चित्त विषे विचारते भये।

अहो! इस संसार की परम विचित्रता देखो जो विचारिये कछु अर ही, अर होय जाय कछु अर ही।।51।। यह नृत्यकारिणी अनेक रस अनेक भाव दिखावती हुई हाव-भाव की बाहुल्यता कर विचित्रता रूप हुए भाव नृत्य के अंग जिसके सो मैं भगवान को नृत्यकर प्रसन्न करूँ तो इन्द्र घना प्रसन्न होय अर इन्द्र की प्रसन्नता से मैं सुखी मेरी प्रशंसा होय इस मोह के योग से ऐसा मानती सो क्षण में क्षय गई।।53।। पराधीन प्राणी को जो सुख के अनुभव की वांछा उपजे सो धिक्कार है उसकी समझ को जो पर के आधार विषे तत्पर है उनका मन निरन्तर व्याकुल ही रहे है। जहां व्याकुलता वहां सुख काहे का, अर जे आपको स्वाधीन माने हैं अर सुखी कहावै हैं, उनमें क्या सुख वे अपने उपार्जे कर्मों के आधीन हैं उसके पराधीन ही हैं जे कर्माधीन अर भोग तृष्णा कर व्याकुल उनके सुख काहे का।

भावार्थ – कर्माधीन तो सब जगत् ही है कोई भी कर्माधीनपने से रहित नहीं अर यह नीलांयशा कर्माधीनपने से इन्द्र के आधीन अर इन्द्र मेरे आधीन सो जो आराधना है सो वे सब पराधीन ही हैं अर मुझे स्वाधीन जान सो मैं भी कर्मों के आधीन उससे भोग तृष्णा कर व्याकुल पराधीन ही है। जब मेरे कर्म जाते रहैं अर भोग तृष्णा न रहे तब स्वाधीनता कहिये उससे कर्मों के योग से भोगासक्त हूं अर विषय तृष्णा कर व्याकुल हूं जहां तक पराधीन के योग से दुखी ही हूं।।55।। जे मुनि आत्माधीन हैं पराधीनता से रहित भये हैं उन ही के आत्माधीन अव्याकुल अतेंद्री सुख होय है अर जे कर्मों कर पराधीन उनके इंद्रीजनित पराधीन सुख ही है, स्वाधीन अव्याकुल सुख नहीं।।56।। इस जीव ने

अनन्त काल सुर असुर नर के सुख भोगे परन्तु संसार विषे जीवों को तृप्ति न भई जैसे नदियों के समूह कर समुद्र को न तृप्ति होय।।57।।

मैं महाबली के भव विषे विद्याधरों का अधिपति भया 1 अर दूजे स्वर्ग ललितांग देव भया 2 अर तीजे भव वज्रजंघ राजा 3 चौथे भव उत्तर कुरु भोग भूमि विषे भोगभूमिया 4 अर पांचवें भव दूजे स्वर्ग श्रीधरदेव 5 अर छठे भव राजा सुविधि 6 अर सातवें भव अच्युत स्वर्ग विषे इन्द्र 7 अर आठवें भव विदेह क्षेत्र विषे वज्रनाभ चक्रवर्ती 8 अर नवमें भव सर्वार्थसिद्धि विषें अहमिंद्र 9 ।।59।। अर वहां से चयकर यहां, सो चिरकाल तक दिव्य सुख देवों कैसे भोग उनकर मेरे रंचमात्र भी तृप्ति न भई अब तीर्थंकर पद के विस्तीर्ण विषय पाये हैं। अब सब बात मुझे सुलभ है जो चाहूँ हूं सो मौसर तथापि इन भोगों कर तृप्ति नहीं भोगाभिलाष रूप व्याकुलता ही है।।60।।

इससे यह संसार के सुख सदा दुख कर दुखित उनको तज कर मोक्ष सुख की प्राप्ति के अर्थ तपोवन विषे प्रवेश करूं हूं। मैं गर्भ ही से तीन ज्ञान का धारक अर सामान्य जन की न्याईं ही राज्यविषे तिष्टा, इन्द्रियों के भोग भोगूं या समान अर भूल कहां, इतने दिन तक मेरा ऐसा ही उदय था जो कार्य है सो काल के आधीन है अर काल किसी से भी उलंघ्या न जाय। जाने हैं पूर्वभव जिसने ऐसा जिनराज जब वैराग्य विषे चितवन करता भया, तब पंचम स्वर्ग के निवासी लौकांतिक देव प्रभु के अन्तःकरण विषे वैराग्य उपजा जान तत्काल प्रभु के समीप आये सारस्वत आदित्य आदि आठ जाति के लौकांतिक देव इन्द्र सूर्य से अधिक है कांति जिनकी सो आकाश विषे उद्योत करते हुए भगवंत के समीप आए नमस्कार कर ऐसे शब्द कहते भये।।64।। हे नाथ! जैसा निज-पर का हित तुम विचारा है वैसा ही करो। जैसा जिनसूत्र विषे कल्याण का मार्ग है वैसा तुम भलीभांति जानो हो सो अब जीवों को उपदेश दे संसार से पार करो। अब तुम्हारे धर्म तीर्थ के प्रवर्तन का समय वर्ते है।।65।।

हे ईश्वर! यह लोग चतुर्गति रूप महावन विषे दिशा भूल होय रहे हैं, सो इनको मोक्ष स्थानक के प्रवेश का मार्ग दिखावो जैसे मंत्र की संप्रदाय चिरकाल से विनष्ट होय जाय वैसे इस क्षेत्र से मोक्षमार्ग की प्रवृत्ति विनष्ट हो गई सो तुम उदय को प्राप्त होय उद्योत करो।।67।। हे प्रभो! इस संसार समुद्र विषे तुम भ्रमते प्राणियों को कर्णधार कहिये खेवटिया हो। कैसा है संसार समुद्र, दुखत्रय कहिये जन्म जरा मरण तीन प्रकार के दुख वही हैं मोटे भंमर जिस विषे अर दोषत्रय कहिये राग द्वेष मोह वही हैं महामच्छ जिस विषें। अर तुम कैसे हो, भवभर्ता कहिये सकल लोक के स्वामी हो।।68।।

हे प्रभो! तुम इस संसार महाचक्र के भ्रमण से उपदेश रूप होय कर जगत को उधारो, कैसा है संसारचक्र, अति शीघ्र है भ्रमण जिस विषे।।69।। जे संत हैं वे तुम्हारे दिखाये मार्ग कर संसार का खेद मेट विश्राम को पाय कर अब त्रैलोक्य के शिखर पहुंचेंगे। कैसा है त्रैलोक्य का शिखर, अखण्ड है

आनंद जहां। ये लौकांतिक देवों ने स्तुति के वचन कहे। सो भगवान स्वयंबुद्ध के ऐसे वचन पूजा के अर्थ होते भये। जैसे कोई समुद्र को जल कर अर्घ दे सो समुद्र के जल की कमी नहीं। परन्तु अधिक ही है देनहारे की भक्ति है। वैसे भगवान् तो ज्ञानसमुद्र हैं, उनको लोकांतिक कहां ज्ञान बतावें। परन्तु उनका यह नियोग है। जौ वैराग्य की प्रशंसा रूप स्तुति के वचन कहें।।71।। अर इन्द्रादिक सकल चतुर्निकाय के देव नमस्कार कर पूजा कर तपकल्याणक का प्रारंभ करते भये। जिस प्रकार लोकांतिक देवों ने प्रणाम कर विज्ञप्ति करी। उसी विधि देव बारंबार स्तुति करते भये। भगवान् ऋषभ स्वयंबुद्ध लोकांतिक देवों कर आराधे कैसे सोहते भए जैसे सूर्य की किरणों कर पद्मसागर सोहै। कैसा है पद्मसागर, फूल रहे हैं कमल जिस विषे जैसे सरोवर में सूर्य की किरणों कर सरोज कहिये कमल बिगसे। अर कमलों कर सरोवर सोहे तैसे ज्ञान रूप भानुकर वैराग्यरूप किरणों कर स्वयंबुद्ध भगवान के भाव रूप कमल फूले हैं। उनकर आप अद्भुत सरोवर सोहते भए।

अथानन्तर – आपके जे शत 100 पुत्र उनको धरा बांट दई अर बड़े पुत्र भरत को राज्य दिया। जैसा सहस्रकिरणों कर सूर्य सोहै वैसे आप तप कल्याणक से सोहते भए। देवों ने क्षीरसागर आदि अनेक तीर्थों के जलकर जिनराज का अभिषेक किया। अर सुगंध का लेप किया वस्त्र आभूषण कल्पवृक्षों के पुष्पों की जे माला उनकर जगत् भूषण को सुशोभित किया।।75।।

जैसा सुमेरु पर्वत कुलाचल पर्वतों उन कर सोहे हैं, तैसे जगत् गुरु राजाओं कर अर देवों कर वेढ्या सोहता भया। पहिरे हैं मणियों के आभूषण जिन्होंने।।76।।

अथानन्तर – वैश्रवण कहिए कुवेर सुदर्शना नामा पालकी को निर्मापिता भया सो पालकी महा दिव्य अर अत्यंत शोभाकर संयुक्त सुन्दर है दर्शन जिसका कुवेर ने वह सुदर्शन नामा पालकी आकाश समान निर्मल निर्मापी अर स्वर्ग की सुन्दर श्री समान महारमणीक इन्द्र के तांई दिखाई। कैसी है पालकी, कैएक उपमा आकाश की धरे हैं। अर कैएक देवांगना की धरे हैं आकाश तो तारों कर देदीप्यमान है। अर देवांगना तारा कहिए नेत्रों की जो कांति ये उनकर शोभित हैं। अर पालकी तारावों के समान नाना प्रकार के रत्नों कर प्रकाशरूप है। आकाश तो मंडलाकार उज्ज्वल धवल जे अभ्रपटल उनके समान निर्मल है अर आताप की निवारणहारी है अर पालकी मंडलाकार कहिए गोल शुभ्र कहिए उज्ज्वल जो शरद का मेघ उस समान धवल जो आताप निवारण कहिए छत्र उनकर शोभित है।।79।।

अर आकाश तो उज्ज्वल हंसों की पंक्तिकर सोहे है अर देवांगना हंसों की पंक्ति समान उज्ज्वल वस्त्रों कर सोहे है। अर पालकी हंसों की पंक्ति समान उज्ज्वल ढुरते चमरों के जो समूह उनकर सोहे है अर आकाश तो आदर्श मण्डल कहिए सूर्य उसकी अखंड दीप्तिकर दिशा मंडल के मुखविषे उद्योत

करे है अर देवांगना आदर्शमंडल कहिये दर्पण समान जो अपने मुख की अखंडदीप्ति उसकर दिगमंडल विषे प्रकाश करे है अर पालकी दर्पणों की मंडलों की अखंड दीप्तिकर मंडल में उद्योत करे है अर आकाश तो जल के बुदबुदों समान उज्ज्वल चन्द्रकिरणों को धारे है अर देवांगना जल के बुदबुदों समान जो निर्मल कपोलों को धारे है अर चन्द्र समान है मुख शोभा जिनकी अर पालकी जल बुदबुद समान है दोनों हद्द जिसकी अर चन्द्रकला समान उज्ज्वल सोहे है, अर आकाश तो सांझ के अरुण अभ्रों की रक्तता कर सोहे है, अर देवांगना सांझ के बादलों समान अरुण विद्रुम (मूंगा) के समान अधरों को धारे हैं अर पालकी सांझ के बादलों समान रक्त अनेक विद्रुमादि मणियों को धरे है अर आकाश तो वर्षते जल की बून्दों से निर्मल शोभित है अर देवांगना जल की बून्द समान जे मोती उन समान दांतों कर शोभित है अर पालकी जलवत् निर्मल मोतियों की झालरियों कर सोहे है अर आकाश तो शुभ राहुकेतु आदि ग्रह उनके विमान की ध्वजों कर शोभे है अर देवांगना ध्वजों कैसी कला धरे अति चंचल भुजों कर मनोहर हैं अर पालकी सुन्दर जे ध्वजा पताका उनकी लीला कर शोभित हैं।।82।।

दिग्नागनासिका जंघा रंभास्तंभोरुशोभनी।
चित्स्त्रीतारकालोका जगती जघनस्थला।।

अर आकाश तो जल की धारा कर पूर्ण जे पयोधर कहिये मेघ वेई भए कलश उनको धरे हैं अर देवांगना देदीप्यमान पयोधर कहिये कुच वेई भए कलश उनको धारें अर यह पालकी जल की धारा समान शीघ्र है गमन उसका। अर देदीप्यमान कलश कुचों कर मंडित है। अर आकाश तो तारा रूप पुष्पों कर शोभित है अर देवांगना तारों समान देदीप्यमान पुष्पों की कांति को धरे हैं। नानाप्रकार पुष्पों को धारें महारमणीक हैं। अर पालकी तारारूप कांति को धरे नाना प्रकार पुष्पों कर शोभित है। अर आकाश तो नक्षत्र कहिये शोभायमान नक्षत्र को धारे हैं, अर देवांगना नक्षत्रमाला नामा हार उस कर शोभित हैं। अर पालकी शुभ नक्षत्र में रची है। अर आकाश तो बृहतफला कहिये विस्तीर्ण है विस्तार जिसका अर फलावटि नाम विस्तार का है अर देवांगना शुभकर्म का विस्तीर्ण फल भोगे हैं अर यह पालकी तप कल्याणक रूप महाफल को धरे है। अर मोक्षरूप महाफल की दाता है।।84।।

अर आकाश तो केशों के समान श्याम मेघ को धरे हैं अर देवांगना घन कहिये अत्यंत सघन श्याम केशों को धरे हैं अर केशों समान श्याम मेघ को धरे है अर पालकी महा सुन्दर बहुत नीलमणि कर जड़ी है। वे नीलमणि केशों से अतिश्याम हैं तब इन्द्र ने अति हर्षित होय जिननाथ से विनती करी कि पालकी तैयार है। तब आप माता पिता पुत्र परिवार को पूछकर पालकी चढ़ने को उद्यमी भए। सब परिवार प्रभु के निकट ही है।।86।। ग्रहे हैं चमर अर छत्र जिनने ऐसे सुर असुरों कर सेवनीय ऋषभदेव

बत्तीस पैंड तो पयादे ही चले।।87।। सब लोकों ने हाथ जोड़ वंदना करी अर आशीर्वाद दिया। प्रभु पालकी विषे आरूढ़ भए। पहिले वह पालकी पृथ्वी से पृथ्वी पति जे राजा उन्होंने उठाई। फिर आकाश विषे इन्द्र पालकी को ले चले। मानो इन्द्र ने पालकी कांधे न धरी है शिर पर ईश्वर की आज्ञा ही धरी है। सबही इन्द्र जिनेंद्र की आज्ञा विषे सावधान हैं।।88।।

जब प्रभु पालकी पर आरूढ भए उस समय अनेक वादित्रों के शब्द भए शंख अर भेरी ऐसी बाजी जिनका दशों दिशा विषे नाद भया। अर बांसुरी तथा वीणा अर ढोल इत्यादि अनेक वादित्र बाजे।।89।। आकाश विषे तो नाना प्रकार की सुरों की सेना चली जाय है अर पृथ्वी विषे बड़े बड़े राजा इक्ष्वाकुवंशी, कुरुवंशी, उग्रवंशी, भोजवंशी इत्यादि अनेक वंश विषे उपजे चले जाय हैं। पृथ्वी मंडल राजों कर मंडित मनोहर भासे है। आकाश विषे तो नृत्य करती अप्सरा उनकर नवरस प्रगट भए हैं। अर पृथ्वी विषे ऋषभ ने तजी राणी उनको आदि दे सब राजलोक रुदन करते जाय हैं उनकर शोकरस प्रगट भया है।।91।। भगवान् वृषभ सुर नर नागों के ईश्वर जगत के सेवने योग्य सिद्धार्थ वन जाय पहुंचे सो वन अशोक, चंपक, सप्तछद, अर आम्र, वट इत्यादि अनेक वृक्षोंकर मंडित है।।92।।

वहां भगवान वीतराग भाव के अर्थी पालकी से उतरे। जैसे सर्वार्थसिद्धि से उतर मध्यलोक विषे आए थे। वैसी पालकी से उतर वन में आए। कैसी है सर्वार्थसिद्धि, सब देवलोक के शिखर तिष्टे है। अर कैसी है पालकी, सब देवलोक कहिये देवों के समूह उनके सिर तिष्टी है। अर वन विषे आप जिनवर सकल प्रजा से कहते भए – हे प्रजा! तुम शोक तजो। सब संयोग वियोग को धरे हैं। इस जीव का देह से संयोग है सोई वियोग हो गया तो अर संयोग की क्या बात।।95।। अर मैंने तुम्हारी रक्षा के अर्थ भरत थाप्या है। सो तुम्हारी रक्षा करेगा। तुम धर्म वृत्तिकर सुख से रहो। इस भांति प्रजापति ने प्रजा से कहा। तब वे नमस्कार कर पीछे गए जिस ठौर ऋषभ ने योग धरा सो स्थानक प्रयाग कहाया।।97।। आप जगत के पति माता पिता को पूछ सकल कुटुम्ब से क्षमाकर नम्रीभूत जे राजावों के समूह उनको विदा कर माहिले परिग्रह उन रागादिक अर बाहिरले परिग्रह वस्त्राभूषणादिक सब तजकर संयम आदरा, जो मुनि का व्रत अनादि काल से जिनेंद्र आदि महा पुरुष लेते आए हैं। सोई आदीश्वर ने आदरा।

भावार्थ – यह जिनधर्म अनादि निधन है किसी का किया नहीं। अर कभी जाता नहीं, अनादि अनन्त है। सदा से सत्पुरुष जिनधर्म को जान योगीश्वरों का मार्ग अंगीकार कर लोक शिखर जाय हैं। अर सदा ही योगीश्वर जिनधर्म का आराधन कर निर्वाण पुर पावेंगे। सो अनादि सिद्ध यति का धर्म ऋषभ ने धारा। पंच मुष्टिकर अपने केश आप उपाडे। तब इन्द्र ने इन केशों की पूजाकर क्षीरसागर विषे जाय डारे। वह पवित्र सागर ही इन केशों के पधरायवे योग्य है।।।99।। जब जिनराज का तप

कल्याणक होय चुका तब सुर असुर अर मानव सब ही नमस्कार कर अपने अपने स्थानक गये।।100।। अर चार हजार राजा कच्छ महाकच्छादि उग्रवंशी, भोजवंशी, सोमवंशी, इक्ष्वाकुवंशी आदि अनेक वंशों के धारक मुनि व्रत की रीति में तो न समझे। अर केवल स्वामी भक्ति कर नग्न मुद्रा के धारक भये। अर आप आदिनाथ कार्योत्सर्ग धर छे महीने के उपवास धर परीषह सहते खडे रहे। कैसे हैं प्रभु, महातप के धारक चार ज्ञान कर युक्त गिरि सारिखे स्थिर मौन धर ठाडे, वे राजा स्वामी के छांदे चलनहारे जैसे कायोत्सर्ग नाथ निश्चल ऊभे वैसे ये भी नग्न होय निश्चल ठाडे। योगीश्वरों के मार्ग का ये रहस्य जाने नहीं। यह भोले जीव भगवान का मत न जान्या। सो मन में ऐसा विचार करें। जो हमारे पुत्र कलत्र चाकर अन्न जल लेकर आवेंगे।

हम सांझ सबेरे क्षुधा तृषा कर व्याकुल हैं। दो महीने ऊपर अर तीजे महिने के भीतर कच्छ महाकच्छ प्रभु के साले अर मारीच प्रभु का पोता भरत का बेटा ये तीन सबों में अग्रसर। सो क्षुधादि तीव्र परिषह कर चारित्र भ्रष्ट भये, क्षुधा कर अति दुर्बल है अंग जिनके उनकी दृष्टि अति अस्थिर भई सो भ्रमें मानो अति इच्छा कर खेद को प्राप्त भई उनकी दृष्टि भ्रमें नहीं हैं जे भ्रांतदृष्टि आगे होवेंगे तिनके आदि ही यह पहिले अखाडे में भ्रम का नाटक करे हैं, यद्यपि अन्न जल के अभाव से उनकी चक्षु चन्द्रमा समान श्वेत होय गई है तथापि क्षुधा की बाधा कर नेत्रों में ऐसा अंधकार होय गया जो दशों दिशा तिमिर ही रूप भासें अर भ्रम रूप हो गये जो दो नेत्रों कर आकाश विषें जिनको एक चन्द्र के अनेक चन्द्र भासें। अर अनेक चन्द्र भासें तो भी आकाश विषें अंधकार रूप दीखे। जैसे वेदांत मार्ग विषे एक ही आत्मा अनेक रूप भासे। चन्द्रमा का बिम्ब एक उसके अनेक प्रतिबिम्ब जल के भरे अनेक घटों में भासे। अर कैएक सकल शास्त्र का शब्द रूप भावते संते आप भी शब्द रूप प्रवर्ते।

भावार्थ – मौन छोड़ वार्ता करने लगे। आत्मा का स्वरूप आकाश तुल्य अमूर्तिक है। आत्मा तो चिदाकाश अर अम्बर जड़ाकाश। सो नैयायिक वैशेषिक शास्त्र के पाठी आकाश को शब्द गुणवाला माने हैं। तैसे ये चिद्रूप को शब्द रूप भाव परस्पर वचनोच्चारण करते भये, अर कैयक मारे भूख के भूमि में गिर पड़े जिनमें रंचमात्र ज्ञान न रहा। मानो कैयक अविवेकी आत्मा को अचेतन स्वभाव माने हैं उन ही का पंथ इनने पकड़ा। अर कैयक चिन्तवे हैं। अर स्व इच्छाचार व्रत कर फलादि भखा चाहे हैं। अर जलादि पीया चाहे हैं, परन्तु अवांछिक व्रत लोकापवाद के भय कर जल फल नहीं ग्रहे हैं। सो मानो सांख्य मत के पुरुष ऊभे हैं। जो सांख्य मत विषे पुरुष कहिये आत्मा अकर्ता है अर प्रकृति ही कर्त्री है। सो ये प्रकृति कहिये कुबुद्धि उसके प्रेरे उद्यमी भये हैं। परन्तु संख्या से नहीं हिले हैं। सांख्य कैसे पुरुष होय रहे हैं। अर कैयक अन्वय कहिये परंपरा यति का मार्गादि उसके जानने विषे अस्त है बुद्धि जिनकी, सो पूर्वापर नहीं जाने हैं क्षुधा की मूर्छा कर पीड़ित भये।

क्षणभंगुर वृत्ति जो बौद्ध उनकी बुद्धि जिनने धारी है जैसे बौद्ध आत्मा को क्षणभंगुर जाने अतीत अनागत अनंत पर्याय का ज्ञान नहीं। वर्तमान पर्याय रूप क्षणभंगुर रूप माने हैं। वैसे ये अपूर्व परिपाटी रूप मुनिव्रत से भ्रष्ट भये वर्तमान आतुर बुद्धि कर खान-पान के अभिलाषी भये हैं।।10।। इस भांति वे चार हजार राजा क्षुधा तृषादि कर अति व्याकुल भये। कायोत्सर्ग को तज कर धीरे धीरे गमन करते भये। स्वामी की सेवा अर बड़े कुल के पुत्रों की मर्यादा तब ही लग है, जब लग शरीर न डिगे। अर जब क्षुधा तृषा कर शरीर डिगे तब मर्यादा न रहै। ये सब ही फलादि का भक्षण अर सरोवरादि विषे जल का पान करने लगे।

तब आकाश से देवों की वाणी भई - हे नर! मंदबुद्धि हो। इस रूप कर यह क्रिया योग्य नहीं। यह दिगम्बर रूप महापुरुषों का है। सो तुम यति के भेष कर आचरण न करो ये डरे, दशों दिशा की ओर देख कर यह शब्द देवों का जान दिगम्बर का भेष तजा। डाभ वल्कलादि इनको ग्रहण कर भेष पलटा। ये भेष पलट जल फल का आहार कर चित्त विषे विचार करते भये। अर जब तक उदर पूर्ण न होय तब तक चित्त की स्थिरता नहीं, अर चित्त की स्थिरता बिना बुद्धि न उपजे। जब विश्राम पाया तब इन्होंने यह विचार किया जो भगवान ऋषभ जगत् के प्रभु इनका क्या अभिप्राय है। जो ये सब भोग तज दुर्द्धर योग को धर विराजे हैं। सो इस लोक का फल तो ऐसा कार्य कर कुछ दीखे नहीं।।17।।

प्रभु ने सकल संपदा तो आपदा कर जानी है अर राग द्वेष का घात कर समस्त विषय विष समान गिने हैं। अर सब आभरण तजे जैसे कोई कुव्यसन को तजे है तैसे वसन कहिये वस्त्र तजे है, अर जैसे कोई शत्रुओं को निर्मूल उखाड़े वैसे अपने हाथ से सिर के केस उखाड़े है। अर सकल आहार की वस्तुवों के त्याग कर शरीर भी तजा है। इनके शरीर का ममत्व नहीं। सो जानिये है कि कछु परलोक का साधन है। इन बातों में तो इस लोक का फल दीखे नहीं। परलोक का फल कछु होगा अपना स्वामी तो यह चेष्टा धर वैराग्य रूप धर विराजा है। अब अपने ताई क्या कर्तव्य है सो हम न जाने। हम स्वामी के लार निकसे सो अब घर को जाना तो उचित नहीं। उलटे जायवे में आताप ही है। अर प्रभु की छाया विषे फल न होय तो आताप भी नहीं।।22।। जो हम प्रभु का आचरण आचारवे समर्थ नहीं तो वन विषे तो रहैं यह बन विषे रहना ही प्रभु के आचरण के पीछे लगना है। ऐसा निश्चय कर वे चार हजार फलाहारी भये। वृक्षों के पत्र अर फल भखे। अर वृक्षों के वल्कल पहिरे जटाधारी वनबासी तापस भये अर प्रभु का पोता मारीच तप कर तप्त है तन जिसका। सो जैसे कोई मरुस्थल विषे मरीचिका कहिये भाडली उस विषे तृषा कर पीडे भ्रम कर जल देखे। वैसे मारीच सांख्य सूत्र रूप मरीचिका विषे तत्त्व के ज्ञान जल को हेरता भया सो कहां पावे।

भावार्थ - मारीच ने सांख्य पातंजल दो शास्त्र प्रगट करे जैसे दाह कर पीड़ित जो राजा उसके

जल का अवगाह दाह का कर्ता नहीं। वैसे मारीच का पर सूत्र का अभ्यास शांतभाव का कर्ता न भया। यह मानो कषाय का धारक भगवान का भेषकर संन्यास मत का पोषक भया। एक दंड का है धारण जिसके। मुण्डित स्नानादिक शुचि का करणहारा। ऐसा परिव्राजक का भेष प्रगट करता भया।।27।।

अथानन्तर – नमि विनमि कुमार कच्छ महाकच्छ के पुत्र भोगों की यातना कर आतुर भए। प्रभु के पाओं लग कर ऊभे भोगाभिलाषकर चिंतावान् है चित्त जिनका। जब वे प्रभु के पास आय ठाडे भए। अर प्रभु ध्यानारूढ, तब नागेंद्र का आसन कंपायमान भया। सो अवधिज्ञान कर प्रभु के निकट उनका आगमन जान आप धरणीन्द्र आया। भक्ति कर प्रभु को प्रणाम करता भया।।29।। ज्यों आपने भाइयों को कोई विश्वास उपजावे। त्यों इन दोनों भाइयों को विश्वास उपजायकर महाविद्या देता भया गुरु की सेवा के प्रसाद से इनको विद्या का लाभ भया।।30।। अर विद्याधरों का आधार जो विजयार्द्ध पर्वत वहां इनकी लार जाय इनको वहां का राज्य देता भया। जगत् गुरु की सेवा कर क्या न होय।।32।। दक्षिण श्रेणी के पचास नगर उनका स्वामी तो नमि भया। अर उत्तर श्रेणी के साठ नगर उनका स्वामी विनमि भया।। नमि सो दक्षिण श्रेणी विषे रथनूपुर पुष्प नगर वहां तिष्ठता भया। अर विनमि उत्तर श्रेणी विषे नभस्तिलक नामा मुख्य नगर वहां तिष्ठता भया। ये दोनों भाई श्रेणियों विषे अपने कुटुंब सहित तिष्ठे।।33।। विजयार्द्ध के विद्याधर महाधीर इन दोनों भाई को अपने शिरोमणि जान कर सब लोक से उत्कृष्ट आपको मानते भए।।34।।

अथानन्तर – वह भगवान् पुरुषोत्तम प्रतिमा समान निश्चल योग धरे अडिग ऊभा परीषहरूपी अग्नि के बुझावनहारे ध्यानरूप समुद्र विषे स्थिर जिसे कोई बाधा नाहीं। सो छै महीना तो कायोत्सर्ग धरें उपबास किए। फिर ऐसा विचार कर आहार ग्रहण को गमन किया, मन में यह विचारी कि मैं तो तीर्थंकर पद का धारक हूं मेरी शक्ति विशेष। अर मनुष्य अल्पशक्ति के धारक प्रवर्ते हैं अर आगामी काल विषे होयेंगे जो मोक्ष के अर्थ कर्म शत्रुओं को जीता चाहे हैं। उनको भोजन के अभाव विषे मुनिव्रत का साधन कैसे होय। मैं तो तीर्थंकर प्रकृति के प्रभाव कर महाशक्तिवंत बहुत दिन अनशन रहूं तो खेद नहीं। परन्तु अल्प शक्ति के धारी बहुत नर आहार बिना न रह सकें। उससे मुनि के आहार की विधि मेरे आहार की प्रवृत्ति बिना प्रगट न होय। उससे आचारांग सूत्र की आज्ञा प्रमाण मुझे श्रावक के घर आहार लेना।।33।।

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष ये चार पुरुषार्थ उनमें उत्तम क्षमादि हैं लक्षण उसके। ऐसा धर्म सो बड़ा पुरुषार्थ है। मोक्ष का अर अर्थ काम का साधन एक धर्म ही है।।37।। सो धर्म का साधन शरीर है। अर शरीर प्राणों के आधार है प्राणों कर यह प्राणी आयु पर्यन्त शरीर में रहे है। सो प्राण अन्न के आधार हैं। अन्न बिना प्राण न रहें। उससे परंपरा कर यह अन्न ही धर्म का साधन है। अल्प बल के

धारक अर मनुष्य उनको अन्न ही स्थिरता का कारण है।।39।। उससे निर्दोष आहार के लेने की विधि धर्म के अर्थियों को मैं इस भरत क्षेत्र विषे मार्ग चलावने के अर्थ दिखाऊं।।40।। ऐसा विचारकर वह ईश्वर सर्व बातों में समर्थ क्षुधा आदि सकल परीषह का जीतनहारा जो जन्म पर्यन्त आहार न करे तो उसे बाधा नहीं परन्तु परमार्थ विषे है बुद्धि जिसकी सो साधु के आहार की शास्त्रोक्त विधि दिखावने अर्थ विहार का उद्यमी भया। छै महीने तो एक आसन स्थानक में खड़ा रहा है। फिर पृथ्वी को अपने चरणों के धरने कर कोंपल रूप करता भया।

भावार्थ – प्रभु के पावों की पगथली पद्मरागमणि समान अति आरक्त है। सो पावों के धरने कर पृथ्वी कोंपल समान आरक्त भासे है। वह जिनेश्वर केवलज्ञान पर्यन्त मौनी, लम्बी हैं भुजा जिसकी सो मार्ग विषे विहार करता अति सावधान जीवदया में तत्पर ईर्या समिति को पालता पृथ्वी को देख-देख पांव धरता भया, न अति शीघ्र न अति धीरे मध्याह्न समय पुर ग्राम विषे गृह पंक्ति अवलोकता चांद्री चर्या कहिये महाउज्ज्वल आचरता पृथ्वी विषे भव्य जीवों को दर्शन देता भया।।44।। अनेक देशों विषे घूमता भगवान् जगत का नाथ सौम्य है शरीर जिसका उसे जगत के लोक ऊंचा मुख कर देखते तृप्त न भए। जैसे लोक नवे चांद को देखते-देखते तृप्त न होवें। लोक प्रभु को देख, ऐसा विचार करे हैं यह श्वेतभानु कहिये चंद्रमा है। राहु का संसर्ग तज भूमण्डल में आया है। तजे हैं तारा ग्रह नक्षत्र जिसने।।46।। अथवा यह अपूर्व कहिये दूजा सूर्य पृथ्वी विषें आया है। भूभृत कहिये पहाड़ प्रसाद कहिये मन्दिर भूरुह कहिये वृक्ष उनकी छायारूप जो तम कहिये अंधकार उसके दूर करने को प्रगटा है।

भावार्थ – सूर्य तिमिर को हरे है परन्तु गिरि मन्दिर अर वृक्ष इनकी छाया रूप तिमिर दिनकर से न मिटे। यह सब तिमिर का हर्ता दूजा सूर्य अद्भुत दिनकर है। अहो! लोक यह कांति का परम स्थानक है अर दीप्ति का परम पद है। अर शील का शैल कहिये पर्वत है। अर महा गुणों की राशि है।।47।। यह पुरुषोत्तम मनोहर रूप की परम हद है। अर सुजनता की खान। माधुर्य की अवस्था है यह धीर्यता की अवधि है। आहार के अर्थ नगर ग्रामादि विषे जाय है। वह लोक देखकर परस्पर ऐसी वार्ता करे हैं। यह भगवान् आदिनाथ अति रमणीकता की मानो खान हैं। उसकी परम हद है अर धीर्यता की सीमा है इन समान धीर-वीर अर नहीं।।49।। हे लोको! आवो, इस जिनवर दिगम्बर की दिशा विषे परम रमणीयता देखो। इसके दर्शन से दृग् सफल होवें।।50।।

इस भांति परस्पर किया है आलाप जिन्होंने। ऐसे लोकों के समूह नर-नारी आश्चर्य के भरे आदीश्वर को अवलोकते भये।।51।। चतुर्थकाल के आदि लोक सरल (जड़) चित्त के सूधे। परन्तु असमझ मुनि का अर गृहस्थ का धर्म जाने नहीं। यह जाने वे बड़े राजा हैं। सो इनकी भांति-भांति की

सेवा करे हैं। सो कैएक लोक नाना प्रकार के वस्त्र लावें। कैएक गहना लावें कैएक दिव्य सुगन्ध पुष्प प्रभु के आगे धरे हैं। अर कैएक असमझ बड़े बड़े तुरंग लावें। कैएक रथ पालकी लावें। सो ये वस्तु प्रभु के काम नहीं अर लोकों ने पूर्वे भोगभूमि विषें यति का धर्म सुना नहीं। यति देखे नहीं। यति के आहार की विधि कोई समझें नहीं, सो विधिपूर्वक योग्य आहार का ही ठौर न बना। अर लोकों ने अनेक विकल्प रूप अवधि करी।।54।।

लोक के प्रतिबोधने के अर्थ उदय रूप भया है जिनवर रूपी दिनकर सो आहार के अलाभ विषे प्रभु को खेद न भया। जैसे दिनपति को दिन विषे जगद्भ्रमण का खेद न उपजे। वैसे जिनपति को प्रतिदिन आहार के अर्थ पृथ्वी विषे विहार का खेद न उपजा।।55।। जैसे षट् मास उपवास विषे खेद रहित ध्यानारूढ तिष्ठे वैसे ही षट् मास आहार का अन्तराय भया। आहार के अर्थ नगर ग्रामादिक में गए। परन्तु विधिपूर्वक आहार का लाभ न भया। लोकों ने नाना प्रकार पूजे वन्दे, भांति भांति की वस्तु भेंट लाए। परन्तु प्रभु के काम की नहीं सो पीछे ही फिरे छै महीने पृथ्वी विषे विहार किया वर्ष एक निराहार भये। परन्तु शरीर विषे रंचमात्र खेद न उपजा। अर मन विषे आर्ति न उपजी।।56।।

अथानन्तर – जगत् का स्वामी हस्तिनागपुर के निकट गया। जिस नगर विषे सदा मदोन्मत्त हाथी विचरे हैं, उससे उसका नाम हस्तिनागपुर प्रसिद्ध है। दान कहिये गजों का मद उसकी प्रवृत्ति विशेष है। सो मानो दान की प्रवृत्ति की दिखावे है।

भावार्थ – हस्तिनागपुर विषे प्रभु का आहार होगा।।57।। वहां राजा सोमप्रभु अर श्रेयांस दोनों भाई, प्रभु पधारे, उस दिन की पहली रात्रि विषे यह स्वप्न देखते भए।।58।। चन्द्र अर इन्द्र, ध्वज, मेरु, विजुरी, कल्पवृक्ष, रत्नद्वीप, विमान अर भगवान वृषभ ये आठ स्वप्न पुरुषोत्तम के पधारने के कारण देखे।।59।। प्रभात दोनों भाई सभा विषे विराजे वहां आश्चर्य से भरे पंडितों के समूह के निकट स्वप्न फल की कथा करते भए।।60।। सो यह निश्चय भया कोई पूज्य पूर्ण प्रभा का धारी जगत् का बान्धव आज ही आवे। जैसे कुमुदिनी के खण्डों का बन्धु चन्द्रमा कुमुद वन को प्रफुल्लित करे। वैसे जगत का प्रफुल्लित करणहारा जगत् का बांधव सबों को आनंद उपजावे। यह तो चन्द्रमा के देखने का फल है अर इन्द्र की ध्वजा के देखने से यश रूप ध्वजा का धारी अर सुमेरु के देखने से कल्याण कहिये सोने का पर्वत। अर प्रभु कल्याण का पर्वत।

अर जैसे विजुरी क्षण एक प्रगट होकर छिप जाय वैसे मुनिराज एक क्षण पुर में आय वन को जाते रहे। सो विजुरी के देखने से मुनीन्द्र का आगम जाना जाय अर रत्न द्वीप के देखने से धर्म रूप रत्न का महाद्वीप अर विमान के देखने से सर्वार्थसिद्धि का चया। ये सात स्वप्न तो अनुमान कर ऋषभ का आगमन सूचे हैं। अर आठमें स्वप्न में ऋषभ ही देखे सो आज ऋषभ का प्रत्यक्ष दर्शन होगा अर

पण्डितों ने निश्चय किया अर नगर की तथा राजमंदिर की आज कछु अर ही शोभा दीखे है। ऐसी अब तक देखी नहीं। अर आज सब दिशा निर्मल भासे है सो कल्याण को सूचे हैं।।64।। यह स्वप्न का फल वे दोनों भाई जान कर भीतर अर बाहिर सब ठौर समझदार मनुष्य मेल कर जिननाथ की कथा विषे आसक्त तिष्ठे थे, सो दुपहर के समय शंखनाद भया मानो वहां शंखनाद ऋषभ के आगम के निवेदन से दोनों भाइयों को बधाई देता भया। अर परिवार ने रचा है दोनों भाइयों के अर्थ महा मनोहर दिव्य आहार सो भोजन की सब सामग्री तैयार है अर दोनों भाई भोजन के अर्थ मणियों के चौक विषे बैठे हैं उसी समय सिद्धार्थ नाम द्वारपाल शीघ्र ही आय कर दोनों भाइयों को महा मंगल रूप बधाई देता भया।।65।।

हे प्रभो! जगत् का पति श्री आदिनाथ स्वामी जिसने समुद्र पर्यन्त पृथ्वी वैराग्य के अर्थ तजी। अर घर से वन की ओर जब पालकी पर बैठ पधारा तब इन्द्रादिक देव पालकी के कहार भए। अर कच्छ महाकच्छादि राजा जिसकी लार यति भये थे, सो परिषह जीत न सके। तपोभ्रष्ट हो गए। अर यह योगींद्र महा दुर्द्धर तप का धारी अकेला धारे है। इस ऋषभ के समान जग में योगी नहीं।।70।। जिसका कथा रूप अमृत कर कान तृप्त न भए। तुमको आदि देय सत्पुरुषों के आहार बुद्धि विषें भी अभिलाषा नहीं होय है। सदा पण्डितों की गोष्ठी विषे उस ही की चर्चा है।।71।। सो वह जगत् का पति अकस्मात् आज आपके पाहुना आया। क्षमा अर सब जीवों से सुमित्रता। अर तपो लक्ष्मी है संग जिसके।।72।। सो उत्तर की ओर से नगरी में प्रवेश किया है जूड़ा प्रमाण धरती देखता चला आवे है ईर्यासमिति का पालक महा दयालु चांद्री चर्या कहिये महा निर्मल आचार की वृत्ति उसे गह कर विहार करे है अर नगर के लोक उस लोकेश्वर को देख कर अति हर्ष से भेले भए हैं अर चरणारविंद को अर्घ दे हैं अर स्तुति वन्दनादि कर सेवे हैं जैसे चन्द्रमा घर घर प्रति उद्योत करता ऊंचा बढ़े है वैसे जिनचन्द्र गृहों की पंक्ति को प्रकाशता अपने गृह के निकट आया है।।75।।

ये सिद्धार्थ के वचन सुन दोनों भाई अति आदर से उठे, ईश्वर के सन्मुख गए ललाट विषें दोनों हाथ लगाय नमस्कार किया अर जैसे चांद, सूर्य सुमेरु की प्रदक्षिणा करें वैसे ये दोनों भाई प्रभु की प्रदक्षिणा करते भए पांवों पर पड कर समाधान पूछते भए अर कहते भए – हे प्रभो! आगे पधारो हमको आज्ञा देवो सो करें। हम तुम्हारे सेवक आज्ञाकारी हैं, आप मौनावलम्बी इनको कछु उत्तर न देवें, सो ये सन्मुख ठाड़े मौन का कारण विचारे हैं।।78।। राजा सोमप्रभ की राणी लक्ष्मीमती सो भी चन्द्रमा की कला नाईं जिनेंद्ररूप गिरींद्र की प्रदक्षिणा करती भई।।79।। अर श्रेयांस राजा का छोटा भाई नहीं लगे हैं पलक सो नेत्रों कर निरंतर ऋषभ का रूप निरखता ऐसा विचार भया। जो मैंने पूर्व भव विषे ऐसे निर्ग्रन्थरूप के धारक मुनि देखे थे। प्रभु का महादेदीप्यमान शरीर महाशांतिरूप उस कर

प्रतिबोध को पाया, श्रेयांस अपने अर प्रभु के दश भव जान कर पांवों पर गिर मूर्छित होय गया। मूर्छित भया तो भी प्रभु के पांव अपने सिर के कोमल केशों से पोंछ कर मार्ग का खेद निवारणे अर्थ आनन्द की अश्रुधारा रूप उष्ण जल कर प्रभु के चरण प्रक्षाले, पूर्व जन्म विषे प्रभु तो वज्रजंघ राजा थे।

अर श्रेयांस का जीव राणी श्रीमती थे सो राजा राणी ने चारण मुनी को आहार दिया था। सो जिनराज के दर्शन से सब विधि याद आई तब ये शब्द कहे – हे भगवन्! तिष्ठो तिष्ठो, ऐसे कह मन्दिर में लीनें। अर उच्चासन विषे पधराय कर पांव धोए।।85।। अर चरणों की पूजा कर मन, वचन, काय कर प्रणाम किया। अर दान विधि का वेत्ता आहार की शुद्धता जानता भया। श्रद्धा आदि गुणों का भरा पात्र के सम्पूर्ण हैं लक्षण जिस विषे ऐसा जो मुनीन्द्र उसे ईख रस कर पूर्ण जो कुम्भ उसे उठाय कर कहता भया – हे प्रभो! प्रासुक रस लेवो। यह आहार छयालीस दोष रहित है। छयालीसों में सोलह उद्‌गम। अर सोलह उत्पाद दोष।।88।। दश एषणादोष अर धूम्र अंगार प्रमाण अर संयोजन ये छयालीस दोष उनकर रहित। यह प्रासुक रस ऋषियों के लेने योग्य है।।89।।

तब भगवान् शुद्धात्मा व्रत की वृद्धि के अर्थ पाणिपात्र कर वर्षवें दिन पारणा करते भये। दोनों पांव बराबर रख कर खड़े खड़े आहार करते भए। मुनिराज के आहार की क्रिया की विधि लोकों को दिखावते भए। राजा श्रेयांस ने परम पात्र का विधि पूर्वक पारणा कराया, कोई अन्तराय आहार में न पड़ा। तब प्रभु के आहार लिये पीछे पंचाश्चर्य भए। रत्न वर्षा, कल्पवृक्षों के पुष्पों की वर्षा। सुगन्ध जल की वर्षा शीतल मन्द सुगन्ध पवन अर धन्य धन्य वचन।।90।। आकाश विषे देवकृत ऐसे शब्द होते भए। जो धन्य यह दान अर धन्य यह पात्र अर धन्य यह दाता। अर धन्य यह मुनि के दान की विधि ऐसे धन्य धन्य शब्द होते भए। अर आकाश विषे देव दुन्दभी बाजे। उनके शब्द मेघ की ध्वनि को जीते।।91।।

श्रेयांस के दान के यश की राशि कर तीन लोक पूर्ण भए, तीन लोक में श्रेयांस का यश विस्तरा, यश के समूह कर दिशारूप नारियों के मुख उज्ज्वल भए। अर शीतल मन्द सुगन्ध पवन ऐसी वाजी मानो दिशारूप अंगना वेई भई देवांगना उनके मुख से निकसे ये सुगन्ध श्वास ही हैं। अर फूलों की वर्षा आकाश से भई सो मानो श्रेयांस के सुमन की वृत्ति अंतःकरण में न समाई सो सृष्टि विषे बरसी सुमन नाम पुष्प का है। अर सुमन नाम सत्पुरुषों के मन का है। सो मानो यह पुष्पवृष्टि ही भई कुरुवंशियों के सुमन की वृष्टि ही वर्षी।।94।। अर श्रेयांस ने योगींद्र के कर पात्र विषे ईक्षुरस की धारा डारी। उनकी स्पर्द्धा ही कर मानो देवों ने आकाश से रत्न धारा वर्षाई। जिननाथ को पूजे फिर तप की वृद्धि के अर्थ धर्म तीर्थ के कर्त्ता ऋषभ सो तो वन में गए अर दानतीर्थ का कर्त्ता सोमप्रभ का लघु वीर श्रेयांस उसको स्नान कराय देवों ने पूजा।।96।। अर जगत् विषे यश भया। ये समाचार अयोध्या

के विषे भरत ने सुने। जो दान पति को देवपति पूजते भए। तब भरत आदि भूपति भी आय कर कुरुवंश को पूजते भए देखा है प्रत्यक्ष दान का फल जिन्होंने ऐसे नृप से दान की विधि पूछते भए। अति श्रद्धा कर युक्त भरतादिक पूछे हैं। उनको दानपति श्रेयांस दान की विधि कहे हैं। मुनिराज गृह के निकट आवे।

तब श्रावक ऐसे कहे हैं – हे स्वामिंस्त्वमत्र तिष्ठ तिष्ठ – ये वचन कहकर मुनि को पडगाहे हैं। फिर उच्च स्थानक खडा राखे, दाता मुनि के पांव धोवे, पूजा करे, मन शुद्धि, वचन शुद्धि, काय शुद्धि, आहार शुद्धि ये नव प्रकार दान की विधि है।।100।। यह पुण्य प्रथम तो अभ्युदय कहिये इन्द्रादिक पर उनका कारण है। पश्चात् मुक्ति का कारण है। यह दान दाता को स्वर्ग मुक्ति दे हैं।।1।। इस भांति सुना है यथार्थ दान का स्वरूप जिन्होंने ऐसे भरतादिक भूप श्रेयांस की बारम्बार प्रशंसा कर दान धर्म विषे भया है अन्तःकरण जिनका। वे सकल अपने अपने स्थान को गए।।2।। अर ऋषभदेव चार ज्ञान के धारक हजार वर्ष पर्यन्त मोक्ष के अर्थ नाना प्रकार के तप करते भये। कैसे हैं भगवान्, ज्ञान ही का है प्रयोजन जिनके। भगवान् के शिर पर केशों रूप मणियों का समूह कैसा सोहे है, जैसे वट वृक्ष के जटा का भार सोहे है। भगवान् जिष्णु कहिये प्रकाशरूप सो सुन्दर केशों कर अति सोहते भये। कंचन पूर्ण विषें श्याम वर्ण अति सोहे।।5।।

एक दिन विहार करते पुरमिताल नगर के निकट प्राप्त भये। जहाँ राजा वृषभसेन भरत का छोटा भाई आपका पुत्र सो राज करे।।6।। उस नगर के सकटनामा वन महावट के वृक्ष तले ध्यान धर योगीन्द्र विराजे। महामनोहर शिला उस पर पद्मासन धर शुक्लध्यान रूप खड्ग की धारा कर मोह शत्रु को मारते भये। कैसे हैं मुनींद्र, वश किये हैं मन इन्द्री जिन्होंने, अर क्षपक श्रेणी विषे आरूढ़ हैं। वह क्षपक श्रेणी रणभूमि समान है जैसे रणभूमि में शूरवीर शत्रु का नाश करे। वैसे क्षपक श्रेणी विषे महामुनि मोह का नाश करे, भगवान् आदीश्वर महा उत्साह रूप गज पर चढ़े। रागादिक पर सेना का नाश करते भये।।8।।

पहिले तो प्रभु ने मोहराज को सेना सहित निपात किया। फिर ज्ञानावरणी दर्शनावरणी अर अन्तराय ये अर एक ही साथ हने तब चार घातियों के क्षय से केवलज्ञान उपजा। समस्त द्रव्य गुण पर्याय सहित विलोके लोकालोक का अवलोकन भया तब चतुरनिकाय के देव इन्द्रों सहित आये जैसे गर्भ जन्म तप विषे आये थे वैसे केवल कल्याणक में सब आए। भगवान् के कर्मों के जीतने का यश गावते भये। भगवान् चौंतीस अतिशय, अष्ट प्रातिहार्य अर अनंत चतुष्टय उन कर संयुक्त सोहते भये।।13।। अर भरत चक्रवर्ती को एक समय तीन बधाई लोकों ने दीनी – एक कहे प्रभु को केवल उपजा। अर एक कहे तुम्हारी आयुधशाला विषे चक्र उपजा, एक कहे तुम्हारे पुत्र उपजा तब भरत अति हर्षित होय पहिले प्रभु के दर्शन आया। इक्ष्वाकुवंशी, कुरुवंशी, भोजवंशी, उग्रवंशी इत्यादि बड़े

बड़े राजाओं सहित चतुरंग सेना कर शोभित समोसरण विषे जाय केवल अतिशय कर मंडित परमेश्वर की पूजा कर प्रणाम करता भया। उस समय भरत का छोटा भाई वृषभसेन अनेक राजाओं सहित मुनि भया। संयम अंगीकार कर पहिला गणधर भया।।16।।

अर राजा सोमप्रभ अर श्रेयांस दोनों भाई जयकुमार को राज देकर मुनि भये। अर लक्ष्मीमती जयकुमार की माता आर्या भई अर जयकुमार अपने भाइयों सहित सुख से राज्य करे अर श्री ऋषभदेव की पुत्री ब्राह्मी अर सुन्दरी दोनों महाधीर की धरणहारी अनेक राणियों सहित आर्यका भई। सब आर्यावों की यह स्वामिनी भई। श्रीऋषभदेव की केवल विभूति आश्चर्यकारी देख अनेक धीर सम्यक्त्व सहित व्रत आदरे कईएक मुनि भये, कईएक आर्या भईं। कई श्रावक भये। कई श्रावका भईं अर कईएक चतुर्थ गुणस्थान के धारक अव्रत सम्यग्दृष्टि भये। जिसकी जैसी सामर्थ भई उसी प्रमाण व्रत तप शील आदरे। अनेक स्त्री पुरुष पद्मरागमणि समान हैं हथेली जिनकी। अर इन्द्रनीलमणि समान हैं केश जिनके सो अपने हाथों कर केश उपाडते अति सोहते भये। प्रथम अवस्था रागरूप थे सो वीतरागभाव का प्रसंग पाय कर विरागी भये।।20।। वैराग्य के धरणहारे वे भव्यजीव महा विवेकी उनके केशों की नाई शरीर के विषे भी ममत्व न रहा। जैसे केश उपाड़े वैसे देह का नेह भी तजा जिनके केश अति स्निग्ध अति श्याम अति सघन अति कोमल। सो तत्काल उपाड डारे।।21।। भगवान् के समवसरण में चतुर्निकाय के देव अर चतुर्विध संघ सबही धर्म श्रवण के अभिलाषी भये।

ऋषभ का समवसरण बारह योजन विस्तार भया।।22।। जहां जिनशासन के अधिष्ठाता देवता महा प्रभाव के धारी धर्म चक्रवर्ती जे भगवान् आदिनाथ उनको नमस्कार करते भये।।23।। अप्रतिचक्री है नाम जिसका ऐसी जिनशासन की सेवक देवी जिनेश्वर का अर मुनी का दर्शन पाय अति हर्षित भई।।25।। भगवान् की दाहिनी ओर प्रथम सभा में मुनि, दूजी सभा में कल्पवासी देवों की देवी, तीजी सभा में आर्यिका श्राविका अनेक नारी, अर चौथी सभा में ज्योतिषी देवों की देवी, पांचवीं सभा में व्यंतरनी, छठी सभा में भवनवासिनी, सातवीं सभा में भवनवासी देव, आठवीं सभा में व्यन्तर अर नवमी सभा में ज्योतिषी स्त्री, दशवीं सभा में स्वर्गवासी, ग्यारवीं सभा में नरेंद्रादिक मनुष्य अर बारहवीं सभा में तिर्यंच – यह बारह सभाओं का वर्णन किया।।26।। तीन लोक के जीव जिनशासन के श्रवण की इच्छा कर तिष्ठे। जहां प्रथम गणधर वृषभसेन उन्होंने ऋषभदेव को पूछा जब जिनरूप सूर्य अपनी भाषारूप किरणोंकर मोहरूप अंधकार को दूर करते भव्यों को प्रतिबोधते भये। अधरों का मिलाप न होय अर रंचमात्र खेद न होय। इस भांति दिव्यध्वनि कर सकल भेद धर्म के विस्तार कर कहते भये।।28।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ ऋषभनाथकैवल्योत्पत्तिवर्णनं नाम नवमः सर्गः समाप्तः।।9।।

दशवाँ सर्ग

अथानन्तर – धर्म का व्याख्यान करणहारे आदि पुरुष ने उन त्रैलोक्य जीवों के निकट धर्म का उद्योत किया। मुनिपद विषे सहस्र वर्ष मौनधारी थे। सो जिनपद विषें सहस्र वर्ष केवल अवस्था में अनिच्छा पूर्वक दिव्यध्वनि कर तत्त्व का निर्णय किया।।1।। संसार के तरने का उपाय जो तीर्थ उसका स्वरूप तीर्थनाथ ने दिखाया। सो जगत् के जीव तीर्थ का स्वरूप विवेक दृष्टि कर देखते भए। कैसा है धर्म तीर्थ, गम्भीर है अर्थ जिसका सर्वथा प्रकार प्रगट है। तब जिनेन्द्र रूप दिनकर वचनरूप किरणों के उद्योत कर अर्थ का प्रकाश करें। तब मिथ्यात्वरूप अन्धकार कहां रहे। कोई ही निकट भव्य जीव जिनवर के होते हुए मिथ्यात्वरूप तिमिर को न ग्रहे।।3।। जगत् गुरु जिनेश्वर यह आज्ञा करते भए। सर्व सुख का करणहारा धर्म ही जीवों को सर्व यत्न कर कर्त्तव्य है। यह धर्म प्राणियों को हित के अर्थ है।।4।। चतुरनिकाय के देवों विषें अर मनुष्यों विषें। जो इन्द्रिय जनित सुख देखिये हैं। सो सर्व सुख का करणहारा धर्म ही जीवानिकूं सर्व जतनकरि कर्त्तव्य है। यह धर्म प्राणीन के क्षयकरि उपज्या जो आत्माधीन निरवाण सुख सो भी धर्म थकी ही उपजै है।।6।। ता धर्म के भेद सुनहु – दया, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, परिग्रह त्याग यह पंच महाव्रत रूप यती का धर्म है जहां रंचमात्र हू हिंसादिक अपराध नाहीं सो यती का धर्म सर्वथा अव्रत का त्यागी है।।7।। अर गृहस्थ का धर्म किंचित् त्यागी है।

तातैं श्रावक अणुव्रती है। अर साधु महाव्रती है। अर दान पूजा तप शील यह चार प्रकार गृहस्थ का धर्म है सम्यक् दर्शन है मूल जाका ऐसा अणुव्रत रूप श्रावक का धर्म है। बड़ी रिद्धी के धारी स्वर्ग के देव तिनिकी विभूति कूं दे है। अर यति को धर्म से पाथ का मोक्ष के सुख का दाता है।।9।। स्वर्ग मोक्ष का मूल जो धर्म ताका लक्षण श्रुतज्ञान थकी मोक्षाभिलाषिनीकूं निश्चय करना।

भावार्थ – जे परोक्ष ज्ञानी कल्याण के अर्थी हैं तिनिकुं गुरु के मुख श्रुत वैराग्य के धारणहारे वे भव्य जीव महा विवेकी तिनिकै केसनि की नाईं शरीर हू विषै ममत्व न रहा जैसे केश उतारे तैसे देह का नेह तज्या। जिनके केस अति स्निग्ध अति श्याम अति सघन अति कोमल सो तत्काल उपारि डारे।।12।। भगवान् के समवसरण विषै चतुरनिकाय के देव अर चतुर विधि संघ सबही धर्म श्रवण के अभिलाषी भये। ऋषभ का समोशरण 12 बारह योजन के विस्तार भया।।14।। तहां जिन शासन के अधिष्ठाता देवता महा प्रभाव के धारी धर्म चक्रवर्ती जे भगवान् आदिनाथ तिनिकूं नमस्कार करते भये।।15।। अप्रतिचक्री है नाम जाका ऐसी जिनशासन की सेवक देवी जिनेश्वर का अर मुनियों का दर्शन पाय अति हर्षित भई। भगवान् की दाहिनी ओर प्रथम सभा में मुनि, दूजी सभा में कल्पवासी

देवनि की देवी, तीजी सभा में आर्यिका अर श्राविका इत्यादि अनेक नारी, अर चौथी सभा में ज्योतिषी देवनि की देवी, पांचवीं सभा में व्यंतरि, छठी सभा में भवनवासिनी, सातवीं सभा में भवनवासी देव, आठवीं सभा में व्यन्तर नवमी सभा में ज्योतिषी, दसवीं सभा में स्वर्गवासी, ग्यारवीं सभा में नरेंद्रादिक मनुष्य अर बारहवीं सभा में तिर्यंच यह बारह सभाओं का वर्णन किया।।24।। तीन लोक के जीव जिनशासन के श्रवण की इच्छा करि तिष्ठे। तहां प्रथम गणधर तिनि वृषभसेन ऋषभदेव कूं पूछा तब जिनरूप सूर्य अपनी भाषारूप किरणनिकर मोहस्वरूप अंधकार कूं दूर करते भव्यन कूं प्रतिबोधते भये। अधरन का मिलाप न होय अर रंचमात्र खेद न होय। या भांति दिव्य ध्वनि कर सकल भेद धर्म के विस्तार कर कहते भये।

वीतराग का भाष्या धर्म ही है। अर धर्म का कथन करनहारा सर्वज्ञ देव का द्वादशांग सूत्र है ताकूं द्रव्यश्रुति कहिये अर भाव सूत्र आतम बोध है। केवलि का प्ररूप्या सूत्र ही प्रमाण है। काहे तैं जो केवलि निर्दोष है अर आवरणतें रहित है। जाके आवरण होय सो यथार्थ न जाने अर जाके दोष होय सो यथार्थ न कहै।।11।। सर्वज्ञ वीतराग ही यथार्थ कहै। सर्वज्ञ के भाषे सूत्र तिनमें ए भेद पर्याय।।1।। अर पर्याय समास।।2।। अक्षर।।3।। अक्षर समास।।4।। पद।।5।। अर पद समास।।6।। संघात।।7।। अर संघात समास।।8।। प्रतिपत्ति।।9।। अर प्रतिपत्ति समास।।10।। अनुयोग।।11।। अर अनुयोग समास।।12।। प्राभृत प्राभृत।।13।। अर प्राभृत प्राभृत समास।।14।। प्राभृत।।15।। प्राभृत समास।।16।। वस्तु।। अर वस्तु समास।।18।। पूर्व।।19।। अर पूर्व समास।।20।।

श्रुतज्ञान ज्ञान के भेद ये कहे सो अक्षर ही रूप कहिये अर अनन्तानन्त पुद्गल परमाणु तिनिके स्कन्धनि का समूह ताका कथन भी श्रुत विषै ही है। श्रुत के अनन्तानन्त विभाग तिनमें एक भाग का नाम पर्याय कहिये श्रुत के भेद अपार है।।15।। जीवनि में सूक्ष्म निगोदिया लब्ध्यपर्याप्त ता समान अर कोई तुछ नाहीं सो वाके अंस मात्र ज्ञान है सबनि में अल्प ज्ञानावास मानना ही सो श्रुत ज्ञान के आवर्ण का अभाव वाहुंके है। अक्षर के अनन्तमें भाग सूक्ष्म निगोदिया में ज्ञान है। एते हू ज्ञान का अभाव जीव कै कदे ही न होय। संसार अवस्था विषै जीव अनादि काल का अज्ञानी है परन्तु निश्चय नय करि ज्ञान रूप ही है। जो उपयोग का वियोग होय तौ जीव न कहावै जीव है सो उपयोग लक्षण का धारक है जैसे चन्द्र सूर्य अति मेघ पटल के तलै आय गये हैं तोहू उनकी प्रभा का अभाव न होय। किंचित् उद्योत रहै तैसे कर्म के आवर्णतें जीव के किंचित् ज्ञान रहै। निगोदहू विषे अचक्षु दर्शन अर कुमति कुश्रुति ज्ञान ये तीन उपयोग हैं।।18।।

जो एक अक्षर सो श्रुत का पर्याय अर अक्षर का अनन्तवां भाग सो पर्याय समास ये आवर्ण सहित श्रुत के भेद हैं।।19।। अर अक्षर का अनन्तवां भाग असंख्यातवां भाग संख्यातवां भाग यह तो

अनुक्रम करि हाणि कही। अर संख्यात गुणी वृद्धि, असंख्यात गुणी वृद्धि, अनन्त गुणी वृद्धि, यह अनुक्रम करि वृद्धि कही।।20।। याही भांति एक भाग तै जौ लग अक्षर की पूर्णता होय तौ लग पर्याय समास कहिये।

भावार्थ – एक अक्षर के अनन्त भाग कहिए तिनि में सूक्ष्म निगोद अलब्ध पर्याप्त कै अक्षर का अनंतवां भाग है सो एक भाग है अर काहू जीव कै एक भागतैं दोय भाग हैं। तब ज्ञान चक्षु कहिये याही प्रकार अंश बढ़ते जब एक अक्षर की पूर्णता होय तहां लग पर्याय समास कहिये।

बहुरि एक एक अक्षर की अनुक्रम मैं वृद्धि होय सो पद समास की मर्यादा कहिये। पद के भेद तीन अर्थपद, प्रमाणपद, मध्यमपद, तीन प्रकार तिनिमें एक, दोय, तीन, चारि, पांच, छह, सात, आठ अक्षर लग अर्थ पद कहिये सो वे अक्षर अर्थ संयुक्त हैं। अर दूजा प्रमाण पद सो आठ आंक ही का होय।।23।। अर तीजा मध्यम पद सोलासै चौंतीस कोड़ि तियासी लाख सात हजार आठ सै अठासी अक्षरनि का कहिये।।25।। सो एक एक अक्षर की वृद्धि वादि पद समास तैं लेय पूर्व समास पर्यंत द्वादसांग का प्रमाण है। ऐसे अठारह हजार मध्यम पद निकरि आचारांग सूत्र का व्याख्यान है। सो द्वादसांग के आदि है। तामें यती के आचार का वर्णन है।

अर दूजा सूत्रकृतांग ताके पद छत्तीस हजार तामें सुसमय परसमय का विशेष वर्णन है। अर तीजा स्थानांग ताके पद बियालीस हजार तामें एक आदि दश पर्यंत गिणती का व्याख्यान है अथवा राग द्वेष इत्यादि है तीन रत्नत्रय तीन शल्य त्रिदोष इत्यादि चार गति अनन्त चतुष्टय, चारि कषाय इत्यादि पंच महाव्रत, पंचास्ति पंच भेद ज्ञान के इत्यादि षट् द्रव्य छह लेश्या इत्यादि सप्त तत्त्व सप्त भय सप्त व्यसन सप्त नरक इत्यादि अष्ट कर्म अष्ट पद अष्ट गुण अष्ट रिद्ध इत्यादि नव पदार्थ नव नय नवधा शील इत्यादि अर दश लक्षण धर्म दशधा परिग्रह दश दिशा इत्यादि अनेक गणित की चरचा तीजे स्थानांग में है।।29।। अर चौथा समवायांग ताके चौंसठि हजार पद तामें द्रव्यादिक की तुलना कही। कोऊ द्रव्य काहू तैं न्यून नाहीं सबही द्रव्य सत्ता लक्षण करि समान हैं।।30।। धर्म अधर्म अर एक जीव लोकाकास ये प्रदेसनि करि समान हैं। ये असंख्यात प्रदेशी हैं यह तौ द्रव्यनि की तुलना कही।।31।।

अर क्षेत्र में अढाई द्वीप अर पहले स्वर्ग का ऋतु विमान अर पहले नर्क के पहले पाथड़े का नाम सीमन्तक नाम इन्द्रकविला अर मुक्तिशिला अर सिद्धक्षेत्र ये पांच स्थानक पैंतालीस पैंतालीस लाख योजन के हैं। यह क्षेत्र की समानता कही अर दश कोड़ाकोड़ी सागर की उतसर्प्पिणी अर दश ही की अवसर्प्पिणी यह काल की समानता कही। अर ज्ञान की अनंतता अर दर्शन की अनंतता यह भाव की तुलना कही। या भान्ति समवायांग में निरूपण किया अर पांचवां अंग व्याख्या प्रज्ञप्ति ताके पद दोय

लाख बाईस हजार तामैं शिष्य ने विनय करि गुरु सूं प्रश्न किये तिनके विस्तार का वर्णन है। कैसा है शिष्य कुमारग तैं अति उदास है।।35।।

अर छठां अंग ज्ञातृधर्म कथा ताके पांच लाख छप्पन हजार पद तामें जिनधर्म की अमृत कथा कथन है। अर सातवां उपासकाध्ययन अंग ताके पद ग्यारह लाख सत्तर हजार पद यामें सम्पूर्ण श्रावक के व्रत का व्याख्यान है अर आठवां अन्तःकृत दशांग ताके पद तेईस लाख अठाईस हजार तामें उपसर्ग के जीतनहारे महामुनि एक एक तीर्थंकर के बारे में दश दश अन्तःकृत केवली होहि तिनिका कथन है। अंतःकृत केवली ते कहिए जिनका केवल कल्याणक अर निर्वाण कल्याणक लार ही होई। आयु के अन्त ही केवल उपजै।।39।।

अर नवमां अनुत्तरोपपाद दशांग ताके पद वानवै लाख चवालीस हजार तामैं एक एक तीर्थंकर कै समै दस दस मुनि उपसर्ग जीति नव अनुत्तर तथा पांच उत्तर इनि विषै जाहि तिनका कथन है संसार विष उपसर्ग दश प्रकार है। तीन प्रकार के मनुष्य – स्त्री पुरुष नपुंसक अर तीन प्रकार ही तिर्यंच स्त्री पुरुष नपुंसक अर देवनि मैं नपुंसक नाहीं। स्त्री पुरुष दोय ही भेद हैं। तब आठ तौ ए चेतन उपसर्ग भए अर एक अपने ही शरीर करि आपकूं उपसर्ग हो। अर एक अचेतन उपसर्ग होगा। भीत पत्थर इत्यादि आप ऊपर आ परै ये दस प्रकार उपसर्ग कहै। इनकूं संत ही जीतैं। अर दशवां प्रश्न व्याकरण नामा अंग ताके तिराणवै लाख सोला हजार पद। तामें चारि प्रकार धर्म कथा आक्षेपणी कहिये धर्म की संस्थापक। अर विक्षेपणी कहिए अधर्म की उत्थापक अर संवेगनी कहिए जिन धर्मनिसूं अनुराग की उपजावनहारी अर निरवेदनी कहिए वैराग्य की बढावनहारी है।

अर विपाक सूत्र नामा ग्यारवां अंग ताके एक कोड़ि चौरासी लाख पद तामें कर्मनि के विपाक कहिये उदय तिनिका वर्णन है।।44।। अर बारहवां दृष्टीवाद नामा अंग ताके पद एक सौ आठ कोडि अर साठि लाख छप्पन हजार पांच तामें तीन सै तरेसठि कुवादीनि का कथन है। सो कुवादीनि के मूल भेद चारि तिनके विशेष भेद तीन सै तरेसठि हैं। चारि में प्रथम क्रिया वादी तिनके भेद एक सौ अस्सी अर दूजे अक्रिया वादी तिनके भेद चौरासी। अर तीजे अज्ञानवादी तिनके भेद सडसठि अर चौथे विनयवादी तिनके भेद बत्तीस ए तीन सै तरेसठि भये तिनका वर्णन सुनाऊं।

प्रथम एक सौ अस्सी क्रियावादी तिनिका व्याख्यान करिये हैं। नीति कहिये निश्चय अर स्वभाव कहिये वस्तु का स्वभाव अर काल कहिये समय अर दैव कहिये पूर्व कर्म का उदय अर पौरुष कहिये उद्यम ए पांच सौ स्व कहिये आप अर पर कहिये दूजा नित्य कहिये थिर अनित्य कहिये अथिर एक चारि तिनि सर्व पांच सो गुनिए तब बीस होइ। अर बीस कूं नव पदार्थनिसूं गिनिए तब एक सौ अस्सी

भेद हुए क्रियावादीनि के भेद कहैं। एक एक अंस का छल करि वाद करै।।50।।

अब अक्रियावादीनि के भेद चौरासी सो सुनाऊं। जीवादिक सप्त तत्त्व स्वतः कहिये आप तै अर परतः कहिये पर तै गुनिए तब चौदह भेद होई। अर चौदह कूं नियति स्वभाव काल देव पौरुष इनि पांचनि सूं गुणिए तब सत्तरि भेद होंइ। अर नियति काल ये दोय भेद आप ही करि सप्त तत्त्वनिकूं गुणिए तब चौदह भेद भये। वे सत्तरि अर ये मिलि करि चौरासी भये एक एक भेद का छल करि वाद करैं मोक्ष के उपाय तैं विमुख होय सो अक्रियावादी कहिये अक्रियावादी उदैकूं मानै उद्यम न ठानै ए अक्रियावादी के भेद कहे।

अब अज्ञानवादी के सडसठि भेद सुनाऊं। नव पदार्थनिकूं तिनकूं सप्त भंगकरि गुणिए तब तरेसठि होंय। सप्त भंगनि के नाम स्यात् अस्ति कहिये कथंचित् प्रकार सूं स्व द्रव्य क्षेत्र काल स्वभाव की अपेक्षा जीवादि द्रव्य है। अर स्यात् नास्ति कहिये पर द्रव्य पर क्षेत्र पर काल पर भाव इनि की अपेक्षा नाहीं अर स्यात् नास्ति कहिये एक ही समै अस्ति नास्ति है। जा समै स्वभाव को अस्ति है ताही समै परभाव की नास्ति है। जातैं अस्ति नास्ति उभय रूप है अर स्यात् अवक्तव्य कहिये वचन तैं अगोचर है। अस्ति कहिये तौ नास्ति का अभाव अर नास्ति कहिये तौ अस्ति का अभाव। तातैं अवक्तव्य है। अर अस्ति अवक्तव्य कहिये सुभाव करि है। परि वचनगोचर नाहीं अस्ति कहिए तौ नास्ति का अभाव नाहीं, तातैं अवक्तव्य है। अर नास्ति अवक्तव्य कहिये जीवादि पदार्थ पर भाव की अपेक्षा नाही परंच नास्ति ही कहिये तौ अस्ति का अभाव तातैं अवक्तव्य है। अर अस्ति नास्ति अवक्तव्य कहिये जीवादि पदार्थ अस्ति नास्ति ही हैं। परन्तु कहिवे में अनुक्रम सौं आवैं एकै लार कह्या न जाय आगैं पीछे ही कह्या जाय। तातैं अस्ति नास्ति अवक्तव्य है। विज्ञानवादी के त्रेसठ भेद तौ ये कहे। अर कोइक सदभाव का पक्षी कोइक असद्भाव पक्षी कोईक सत्यासत्य का पक्षी। अर कोइक अवक्तव्यता का पक्षी वे तरेसठि भेद इनि चारिसूं मिलाए सड़सठि भेद होंइ। छलकरि एक एक अंश का ग्रहण करै, तत्त्व का यथार्थ ज्ञान न होइ सो अज्ञानवादी कहिये। अर विनयवादी के भेद बत्तीस कहिये हैं। विनयवादी कहे है – मन वचन काय अर दान इनि चारि करि आठ का विनय करना तव विनय भेद बत्तीस होंय। आठ मैं माता, पिता । 2 । देव । 3 । नृप । 4 । जाति । 5 । वाल । 6 । वृद्ध ।7। अर तपस्या। 8 । ए आठ इनिका मन वचन काय दान करि सतकार करना या भांति विनय वादी कहै।

भावार्थ – विनय तौ योग्य है जिन धर्म का मूल है। परन्तु विनयवादी विनय का स्वरूप यथार्थ न जानै मूर्तिमात्र कूं देव जानै, भेष मात्रकूं गुरु जानै पत्र मात्रकूं शास्त्र जानै जल मात्रकूं तीर्थ जानै एक नय का छ पल करि एक अंग का ग्रहण करि वृथावाद करै। इत्यादि वादीनि का है कथन जा विषै

www.vitragvani.com

ऐसा दृष्टिवाद नामा बारहवां अंग ताके भेद पांच परिकर्म।।1।। सूत्र।।2।। अनुयोग।।3।। पूर्वगत।।4।। चूलिका।।5।। तिनिमें परिकर्म के भेद पांच चन्द्र प्रज्ञप्ति।।1।। सूर्य प्रज्ञप्ति।।2।। जंबू द्वीप प्रज्ञप्ति।।3।। द्वीप समुद्र प्रज्ञप्ति।।4।। व्याख्या प्रज्ञप्ति तिनिमैं चन्द्र प्रज्ञप्ति छत्तीस लाख पांच हजार पद हैं तिनमें चन्द्रमा की भोगादिक सम्पदा का वर्णन है।

अर सूर्य प्रज्ञप्ति के पांच लाख तीन हजार पद हैं। तिनि में सूर्य के विभव का अर उदय का अर सूर्य की स्त्रीनि का वर्णन है अर जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति के तीन लाख पच्चीस हजार पद हैं। तिनि में जम्बूद्वीप का सम्पूर्ण वर्णन है। अर सर्व द्वीप समुद्र प्रज्ञप्ति के बावन लाख छत्तीस हजार पद हैं। जिनि में असंख्यात द्वीप समुद्र का वर्णन है। अर व्याख्या प्रज्ञप्ति के चौरासी लाख छत्तीस हजार पद हैं। तिनि रूपी द्रव्य पुदगल अर जीवादि पांच अरूपी यह कथन है। अर भव्य अभव्य जीवनि के समूह के भेद हैं। षट् द्रव्यनि का जाकै विषै समस्त विस्तार है। परिकर्म के ए पांच भेद कहे। अर दूजा भेद सूत्र ताके अट्ठासी लाख पद हैं तिनि में प्रथम भेद विषै बन्ध के अभाव का कथन अर दूजे विषै श्रुति स्मृति पुराण के अर्थ, श्रुति कहिये केवली की दिव्यध्वनि। अर स्मृति कहिये गणधरों की वाणी अर पुराण कहिये मुनियों के वचन।।69।। अर तीजे भेद विषै नियति कहिये निश्चय का कथन अर चौथे भेद विषे दर्शन के भेद सम्यक्त्व अर मिथ्यात्व का निरूपण ये नाना भेद सूत्र में हैं।।70।। बारहवें अंग का तीजा भेद अनुयोग उसके पांच हजार पद 5000 उनमें तिरेसठ शलाका पुरुषों का कथन।।71।। अर बारहवें अंग का चौथा भेद पूर्वगति उसके भेद चौदह सौ चौदह पूर्व में एक सौ पचानवें वस्तु अर एक एक वस्तु में बीस बीस पाहुड़ सो सकल पाहुड गुणतालीस सौ हैं, चौदह पूर्व विषे एक सौ पचानवें वस्तु उनकी प्रत्येक संख्या सुनो।

पहिले पूर्व विषे वस्तु दश दूजे में चौदह, तीजे में आठ, चौथे में अठारह, पांचवें में बारह, छठे में बारह, सातवें में सोलह, आठवें में बीस, नवमें तीस, दसवें में पंद्रह, ग्यारहवें में दश, बारहवें में दश, तेरहवें में दश, चौदहवें में भी दश ये सब मिल एक सौ पचानवें हैं।।74।। पहिले पद का नाम उत्पाद उसके एक कोटि पद उनमें द्रव्य के उत्पाद व्यय ध्रौव्य का वर्णन है।।75।।

दूजा अग्रणी नाम पूर्व छयानवे लाख पद उसमें चौदह वस्तुओं के अनुक्रम से ये नाम जानों पूर्वांत – 1 अपरांत 2 ध्रुव 3 अध्रुव 4 अच्यवनलब्धि 5 अध्रुव संप्रणधियव्यात 6 कल्प 7 अर्थ 8 भौमावय 9 सर्वार्थक कल्प 10 निर्वाण 11 अतीतानागत 12 सिद्ध 13 उपाध्याय 14 । वे चौदह दूजे पूर्व में वस्तु हैं उनमें पांचमी वस्तु अच्यवनलब्धि उसके पाहुड बीस 20 उनमें चौथा पाहुड कर्म प्रकृति उन विषे इतने ही योगद्वार उनके नाम।।79।। वेदना 1 स्पर्श 2 कर्म 3 प्रकृति 4 बंधन 5 निबंधन 6 प्रक्रम 7 उपक्रम 8 उदय 9 मोक्ष 10 संक्रमण 11 लेश्या 12 लेश्या कर्म 13 लेश्या परिणाम 14 साता साता

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

15 दीर्घ 16 ह्रस्व 17 भवधारण 18 पुद्गल आत्मा 19 निधताधत 20 सनिकाचित् 21 अनिकाचित् 22 कर्मस्थितिक 23 स्कंध 24 ये दूजे पूर्व के पांचमी वस्तु के चौथे पाहुड विषे चौवीस योगद्वार कहे। इनमें अल्प बहुत्व का विशेष वर्णन 8 और भी पूर्वों की वस्तुवों विषे पाहुड हैं। उनके भेद सिद्धांत में जानने।।87।।

अर तीजा पूर्व वीर्यानुप्रवाद है नाम जिसका। उसके पद सत्तर लाख उनमें वीर्यवंत जे संत उनके वीर्य का वर्णन।।88।। अर चौथा अस्ति नास्ति प्रवाद नामा पूर्व उसके पद साठ लाख उनमें जीवादिक पदार्थों के अस्ति नास्तित्व का निरूपण स्वभाव कर सारे ही अस्तिरूप अर पर भाव कर सारे ही नास्तिरूप हैं। पर भाव किसी में भी न पाइये अर पांचमा ज्ञानप्रवाद नाम पूर्व उसके एक घाट कोटि पद।।89।। उनमें ज्ञान के पांच भेदों का निरूपण है।।90।। अर छटा सत्य प्रवाद नाम पूर्व उसके कोटि पद उनमें बारह प्रकार की भाषा कथन अर दश प्रकार के सत्य का निरूपण।।91।।

सो बारह प्रकार भाषा का कथन करे हैं। प्रथम अभ्याख्यान कहिये कोई एक हिंसादिक का अकर्त्ता है। उनके समीप कोई मूर्ख ऐसे कहे जो हिंसा कर्तव्य है। ऐसे दुर्वचन का नाम अभ्याख्यान कहिये। अर दूजा वाक् कलह उसका अर्थ। जो कलह कर्त्ता ही बोले। अर तीजा पैशून्य जे दुष्ट जीव पर के दोष प्रकट करें। अर किसी की चुगली कहें। अर चौथा अबध्य प्रलाप कहिये। जो प्रलाप का अन्त नहीं। सो प्रलाप करा ही करे जिसके वचन में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का उपदेश नहीं। अर पांचमां रति उत्पादक वचन, जो जीवों को राग उपजावे अर छठा अरति उत्पादक, जो जीवों को क्रोध उपजावे। अर सातवां वचन प्रावरण जिसके सुनिने से अर अयथार्थ वस्तु विषे श्रोताओं की बुद्धि आसक्त होय।।94।। अर आठवां निकृति वचन निःकृति नाम कपट का है। सो कपट लिये बात करे, अर नवमां प्रणति बाक् जो आपसे अधिक उनको नमस्कार करें। अर विनय वचन कहे।।95।। अर दशमा मोघ वचन जिसकर लोक चोरी विषे प्रवर्ते। अर ग्यारमां सम्यक् दर्शन वचन। जिसका कर जीव सम्यक्त्व का ग्रहण करें।।96।। अर बारमां मिथ्यादर्शन वचन जिसके श्रवण से मिथ्यात्व मार्ग की प्रवृत्ति होय, ये बारह प्रकार वचन स्थावर काय विषे नहीं। वे इन्द्री आदि त्रसजीवों विषे हैं उन में पंचेन्द्री के सब पाइये।।97।।

अर दश प्रकार के सत्य कहे। उनमें पहिला नाम सत्य जो उसका नाम होय सो लोक कहें। नेत्र तो सुन्दर अर नाम कमल नयन, सो लोक कमल नयन, ही कहें अर दूजा रूप सत्य जो किसी ने चित्राम का पुरुष लिखा किसी ने गज लिखा सो अचेतन है उन कछु शक्ति नहीं कुंजर नहीं परन्तु जगत् में जैसा रूप देखें वैसा कहैं सो रूप सत्य कहिये।।98।। अर तीजा स्थापना सत्य जो जो व्यवहार के अर्थ छती वस्तु की अथवा अछत्ती वस्तु की स्थापना करनी, जैसा जिसका आकार था

वैसा ही बनाया। अर मन्दिरादिक विषे प्रतिमा पधराई सो स्थापना सत्य कहिये। ऋषभदेव की प्रतिमा को ऋषभदेव ही कहिये।।100।। चौथा प्रतीति सत्य जो उपशमिक आदि पंच भावों का आगम प्रमाण प्रतीति कर व्याख्यान करिये उसका नाम प्रतीति सत्य कहिये।

भावार्थ – शास्त्र की प्रतीति कर न देखी वस्तु का भी वर्णन करिये सो प्रतीति सत्य कहिये अर पांचवीं स्मृति सत्य जो भेरी आदि अनेक वादित्रों के शब्द भेले भये उन्हें वाचक एकोदेश रूप कहे जो उच्च स्वर का वादित्र होय उसका नाम ले उसमें सबके शब्द मिले हैं परन्तु मुख्य का नाम कहिये स्मृति सत्य अर छठा संयोजनानाम सत्य जिसमें चेतन अचेतन द्रव्यों की रचना का विभाग नहीं, युद्ध समय दोनों सेनाओं में नानाप्रकार के व्यूह रचे हैं। चक्रव्यूह, गरुड़व्यूह, कौंचव्यूह इत्यादि सो संयोजना सत्य कहिये। सेना तो चेतन अचेतन सब द्रव्यों कर पूरित है। उसे चक्रव्यूह कहना सो चक्र तो अचेतन है अर गरुड़व्यूह कहना गरुड चेतन है। सेना को इन रूप कहिये परन्तु चक्र के गरुड के आकार रची इससे जैसा व्यूह रची होय वैसा कहिये तो मिथ्या नहीं।

यह संयोजना सत्य है। सातवीं जनपद नाम देश का है जिस देश में जिस वस्तु का जो नाम होय सो ही सत्य यह जनपद सत्य कहिये। देशों में कोई आर्यदेश है कोई म्लेच्छ देश है। उनमें धर्म अर्थ काम मोक्ष का कारणहारा जो वचन है सो जनपद सत्य जानो, अर आठमा उपदेश सत्य जो ग्राम नगर की रीति है अर राजधर्म की रीति अर आचार्य पद साधुपद का उपदेश जे पुरुष जिन बातों में प्रवीण हैं। उनका वचन उन बातों में प्रमाण करणा ग्रामाचार में अर नगराचार में लोकाचार में जो इन बातों में प्रवीण होय उसका वचन प्रमाण अर राजरीति में राजगुरु का वचन प्रमाण अर योगरीति विषे योगीश्वर का वचन प्रमाण अर नवमा भावसत्य जो द्रव्यों का यथार्थ ज्ञान केवली ही को है। छद्मस्थ को नहीं जो छद्मस्थ हैं वे ज्ञान कर मन्द हैं। तथापि केवली के वचन कर अप्रासुक कर प्रासुक का निश्चय करे हैं। प्रासुक ही भोजन करें अर अप्रासुक न करें उनके भावों में यह प्रतीति है। जो केवली के वचन अन्यथा नहीं।।6।। अर दशमा समय सत्य जो षट् द्रव्यों की स्वभाव पर्यायों के भेद का यथार्थ वक्ता जैन आगम ही है। उस विषे जो गाया जो सत्य है ऐसी जिनवाणी की दृढ़ प्रतीति करनी सो समय सत्य कहिये।।7।।

अर सातवां आत्मप्रवाद पूर्व उसके छब्बीस कोटि पद उनमें कर्तृत्व, भोक्तृत्व, नित्यत्व, अनित्यत्व इत्यादि जीव के अनंत स्वभावों का निरूपण है। अर प्रमाण नय निक्षेप की है युक्ति जिस विषे।।8।। अर आठवां कर्म प्रवाद नामा पूर्व उसके एक कोटि अस्सी लाख पद उनमें कर्मबन्ध का वर्णन।।10।। अर नवमां प्रत्याख्यान नामा पूर्व उसके चौरासी लाख पद उनमें द्रव्यसंवर अर भावसंवर का वर्णन। जो द्रव्यसंवर तो प्रमाणरूप अर भावसंवर अनंतरूप। कैसा है प्रत्याख्यान का व्याख्यान,

यतिव्रत की है वृद्धि जिस विषे।।12।। अर दशमा विद्यानुवाद पूर्व उसके एक कोटि दश लाख पद।।13।। उसमें अंगुष्ठप्रसेना आदि सात सौ क्षुद्रविद्या अर रोहिणी आदि पांच सौ महाविद्याओं का वर्णन है।।14।। अर ग्यारवां कल्याण नामा पूर्व। उसके छब्बीस कोटि पद उनमें समस्त ज्योतिर्गणों का विचार अर त्रेसठ शलाका के पुरुषों का अर सुरेन्द्र असुरेंद्रों के कल्याण का विस्तार सहित वर्णन। अर अष्टांग निमित्त का निरूपण उनके नाम – स्वप्न 1 अंतरिक्ष 2 भौम्य 3 अंग 4 स्वर 5 व्यंजन 6 लक्षण 7 छिन्न 8 ये आठ निमित्तज्ञान के भेद कहे। इनका विस्तार ग्यारहमें पूर्व में हैं।।17।।

अर बारहवां प्राणावाय नामा पूर्व उसके तेरह कोटि पद उनमें काय चिकित्सा आदि अष्ट प्रकार के वैद्यक का वर्णन है अर श्वासोछ्वास के निश्चय उसका उपाय अर पवनाभ्यास का साधन।।18।। अर पृथ्वी 1 अप् 2 तेज 3 वायु 4 आकाश 5 इन तत्त्वों विषे पवन का प्रचार। अर तेरवां क्रियाविशाल नामापूर्व नव कोटि पद उनमें छंद कहिये पिंगलादि पद छंद शास्त्र का वर्णन। अर व्याकरण आदि शब्द शास्त्रों का वर्णन अर शिल्प आदि अनेक कला अर अनेक गुण उनका निरूपण ।।20।। अर चौदवां लोक विंदुसार नामा पूर्व उसके बारह कोटि पचास लाख पद उनमें नक्षत्र राशि अष्ट विधि तथा व्यवहार विधि अर परिकर्मविधि इत्यादिक कथन हैं। समस्त श्रुतसंपदा पूर्वों में कही।

बारहवें अंग का पांचवां भेद चूलिका। उसके पांच भेद – जलगत 1 स्थलगत 2 आकाशगत 3 रूपगत 4 मायागत 5 । ये पांच चूलिकाओं के प्रत्येक प्रत्येक पद दो कोटि पद नव लाख निवासी हजार दो सौ। एक एक चूलिका के इतने इतने पद हैं। सवों के समान पद हैं यह भीतर अंग का कथन किया अर बाह्य अंग चौदह प्रकीर्णक उनका पद संख्या कर प्रमाण कहे हैं। सामायिक आदि चौदह प्रकीर्णक के आठ कोटि एक लाख आठ हजार एक सौ पचहत्तर इतने इतने अक्षर हैं। अर आठ अक्षर का एक पाद सो यहां प्रमाण पद लिया है, मध्यम पद नहीं लिया उनके अक्षर बहुत हैं सो वर्णन पहिले कर आये अर प्रकीर्णकों के अक्षर कहे उनके पद एक कोटि तेरह हजार पांच सौ इक्कीस अर सात अक्षर इतने प्रमाणपद भए आठ अक्षर का एक पद।।27।। अर चार पाद का एक श्लोक सो चौदह प्रकीर्णकों के श्लोक पच्चीस लाख तीन हजार तीन सौ अस्सी। अर पन्द्रह अक्षर।।28।। अर पहिला सामायिक नामा प्रकीर्णक उस विषे समभाव का वर्णन सो समभाव राग द्वेष के त्याग से होय है शत्रु मित्र सुख दुःख आदि विषे तुल्यभाव सो समभाव कहिये।।29।।

अर दूजा जिनस्तवन नामा प्रकीर्णक जिसमें चतुर्विंशति तीर्थेश्वर की स्तुति अर तीजा वंदना प्रकीर्णक उसमें वंदने योग्य पंचपरमेष्ठी अर चैत्य चैत्यालय तीर्थ अर शास्त्रों का वर्णन, अर वंदना की विधि।।30।। अर चौथा प्रतिक्रमण नामा प्रकीर्णक उस विषे द्रव्यकर क्षेत्रकर कालकर भावकर किया जो अपराध उसका शोधन। प्रायश्चित्तादिक का अंगीकार।।35।। अर पांचवां वैनयकनामा प्रकीर्णक उसमें पांच प्रकार विनय का व्याख्यान। दर्शनविनय 1 ज्ञानविनय 2 चारित्रविनय 3 तपविनय 4 उपचार विनय

www.vitragvani.com

5 इनका विशेष वर्णन।।32।। अर छठा कृतकर्मनाम प्रकीर्णक उसमें त्रिकाल सामायिक की विधि। सामायिक विषे चार वार शिर नवाय नमस्कार करना। सो एक एक नमस्कार में तीन तीन नमस्कार आवर्त उसके बारह आवर्त अर आह्वान अर एक विसर्जन इत्यादि कृतकर्म की है विधि जिस विषे।।33।।

अर सातवां प्रकीर्णक दश वैकालिक उस विषे ग्रह गोचर ग्रहणादिक का कथन। अर आठवां उत्तराध्ययन उस विषे महावीर के निर्वाणगमन का कथन। अर नवमां कल्प व्यवहार नामा प्रकीर्णक उसमें तपस्वियों का योगाचरण अर अयोग्य आचरण विषे प्रायश्चित्तविधि।।35।। अर कल्पाकल्प नामा दशम प्रकीर्णक उस विषे हेय का त्याग, उपादेय का अंगीकार, विषय-कषाय हेय अर ज्ञान वैराग्य उपादेय।।36।। अर ग्यारवां महाकल्प नाम प्रकीर्णक उसमें यति को उचित वस्तु उचित क्षेत्र उचित काल का कथन अर बारहवां पुण्डीकनामा प्रकीर्णक। उसमें देवों की उत्पत्ति का कथन। अर तेरहवां महापुण्डरीकनामा प्रकीर्णक उसमें देवियों की उत्पत्ति।।37।। अर चौदहवां निषद्यनामा प्रकीर्णक उस विषे प्रायश्चित्त विधि।

यह चौदह प्रकीर्णकों का वर्णन एक समस्त द्वादशांग का अर चौदह प्रकीर्णक उनके इतने अक्षर सो कहिये। एक कहिये एक का अंक उसके ऊपर आठ फिर चवालीस फिर सडसठ का अंक फिर चवालीस फिर एक विंदी उस पै तिहत्तहर उस पै सत्तर अर पंचानवे फिर इकावन फिर छै सौ पंद्रह ये बीस अंक भये। 18446744073709551615 इतने अक्षर समस्त श्रुत के हैं शब्द कर जिनका श्रुतसंख्या अर्थकर अनंत हैं। यह श्रुतज्ञान श्रुतावरणी के क्षयोपशम कर जीवों के होय है। सो यह ज्ञान मतिपूर्वक कहिये मतिज्ञान आदि उसके। मति विना श्रुति न होय। ये मतिश्रुति दोनों परोक्षज्ञान हैं। यद्यपि यह श्रुतिज्ञान शब्दकर संख्या रूप है। तथापि अनंत विषय कहिये अनंत ताके भेद कथन करणहारा है।।43।। मतिज्ञान पांच इन्द्री अर छठे मनकर उपजे है, परोक्षज्ञान है। अर मूर्तीक निकटवर्ती पदार्थ को ही प्रत्यक्ष देखे है। मतिज्ञानावरणी क्षयोपशम होय तब मतिज्ञान उपजे है उसके तीन सौ छत्तीस प्रथम अवग्रह 1 ईहा 2 अवाय 3 धारणा 4 ये चार भेद उनका अर्थ।

अवग्रह कहिये सामान्य अवलोकन जो कछु श्वेत वस्तु है। अर ईहा कहिये विचार जो खगपंक्ति है कि ध्वजा है। अवाय कहिये निश्चय करना जो ध्वजा ही है अर धारणा कहिये कालांतर विषे न भूलना। ये चार भेद जब पंचेंद्री अर छठे मनसों गुणिये तब चौबीस भेद होवें, अर जब चौबीसों को वह्वादिक छह तथा अल्पादिक छह इन बारह से गुणिये तब दो सौ अठासी होवें। सो ये अर्थावग्रह के भेद कहे। अर व्यंजनावग्रह मन अर नेत्रों के नहीं स्पर्श रसना घ्राण श्रोत्र चे चार वह्वादि बारह से गुणियें तब अड़तालीस, दो सौ अठासी से मिलाइये तब तीन सौ छत्तीस हों ये मतिज्ञान के भेद हैं, मतिज्ञानावरणी के क्षयोपशम से अनेक भेद को धरै, सम्यक् दृष्टि के होय हैं। मिथ्यादृष्टि के मतिज्ञान नहीं। कुमति अर कुश्रुत है मति अर श्रुति सम्यक्त्व बिना न होय। ये तो दोनों परोक्ष कहे।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

अर अवधिज्ञान एकदेशप्रत्यक्ष उसके भेद तीन। देशावधि, सर्वावधि, परमावधि। सो सर्वावधि का धारक पुद्गल परमाणु पर्यन्त देखे है। यह अवधि भी सम्यक्त्व बिना न होय अर सर्वावधि परमावधि तद्भव मोक्षगामी ही के होय हैं।।51।। चौथा मनःपर्ययज्ञान भी एकदेश प्रत्यक्ष ही है उसके भेद दो – ऋजुमति 1 विपुलमति 2 सो यह मनपर्ययज्ञान मुनि ही के होय है। उसमें विपुलमति चरमशरीरी के होय है। पांचवां ज्ञान केवल सो सकल प्रत्यक्ष ज्ञानावरणी दर्शनावरणी के सर्वथा क्षय सै केवलज्ञान होय है, अर ज्ञान तो आवरणी के क्षयोपशम से अर यह केवलज्ञान सर्वथा आवरण के अभाव से होय है। चार ज्ञान एक जीव की अपेक्षा आदि अंत सहित हैं। अर यह पांचवां ग्यान पंचम गति का मूल है अविनाशी है अर केवल कहिये परद्रव्य के मिलाप से रहित है। इसमें दूजा भेद नहीं समस्त लोकालोक का ग्याता केवलग्यान है, कोई भी वस्तु इसमें अगम्य नहीं। इस बिना अर सब ग्यान परोक्ष ही हैं, परोक्षग्यान का फल हेयोपादेय बुद्धि अयोग्य को तजे योग्य को ग्रहे अर प्रत्यक्षग्यान का फल सर्व विषे मध्यस्थभाव अर मोक्ष का भाव। ये दो फल।।53।।

वे चार ग्यान तो परंपरा से मोक्ष के कारण अर केवलग्यान साक्षात् मोक्षरूप है अक्षय अनंत है। सम्यक् ग्यान कर जाना है प्रमाण जिनका ऐसे जो जीवादि पदार्थ उनका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन कहिये। अर अशुभक्रिया की निवृत्ति शुभ की प्रवृत्ति सो चारित्र कहिये।।56।। ये सम्यग्दर्शन ग्यान चारित्र मोक्ष के साधन हैं। सो इनका श्रद्धान करना अर आचरण करना जे अविनाशनी लक्ष्मी इच्छे हैं उनको अर दूजा उपाय नहीं एक रत्नत्रय ही का सेवन सिद्ध पद का कर्ता है।।57।। इस रत्नत्रय से अर श्रेष्ठ नहीं। पहिली भी इन समान कोई नहीं था। अर अब भी इनके समान कोई न होगा, इनसे यही है कि ये मुक्ति के कारण जानने। यह ही सार समुच्चय है इत्यादि।।58।। आदि जिनेन्द्र के वचनरूप औषधि पीकर जगत्रय के जीव संदेह रूप रोग से रहित भये। समवसरण में बारह सभा के भव्य ऐसे सोहते भए, मानो मुक्ति को ही प्राप्त भये हैं।।59।। कर्मभूमि की आदि ही विषे अनेक गुणों कर युक्त भव्य जीव सोहते भये। ग्रहे हैं रत्नत्रय आभूषण जिनने। निश्चय भई है शुद्धभाव की भावना जिनके कईएक तो यतिव्रत के धारक भये। अर कई एक श्रावक धर्म के धारी भये।।60।। वे आदि जिन चतुरविध संघ कर युक्त आर्यक्षेत्र विषे विहार को सन्मुख भये। उनको चतुर्विध देव प्रणाम करते भये अर कई एक निर्मल सम्यक्त्व के धारक भये।।61।।

अथानन्तर – जिनेश्वर को भरतेश्वर प्रणाम कर अयोध्या गया। कैसा है भरतेश्वर, बड़े बड़े वंश के बड़े बड़े नरेश्वरों कर सेवनीक है अर महा हर्षवान् है अर बड़ा गृहस्थ है, श्रावकों में मुख्य है।।63।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ प्रथमतीर्थंकरधर्मप्रवर्तनो नाम दशमः सर्गः समाप्तः।।10।।

ग्यारहवाँ सर्ग

अथानन्तर – भरत चक्रवर्ती पुत्र के जन्म का उत्सव कर चक्र को आगे धर षट् खंड जीतने को उद्यमी भया। प्रथम ही करी है चक्र की पूजा जिसने ।।1।। चतुरंग सेनाकर युक्त देव विद्याधरों कर मंडित सेवे हैं राजाओं के समूह जिसको। सो प्रथम पूर्व की ओर प्रयाण किया गंगा के तीर पर प्रयाण करता जहां गंगा का सागर के साथ संगम भया वहां गया। गंगा के प्रवेश का द्वार है वहां तेला किया। कैसा है भरत, शोभित हैं वचन अंग जिसके। वहां समुद्र के देव ने अजित नामा रथ चक्रवर्ती को दिया। उसके दो अश्व जुते हैं। उस पर चढ़ गंगा के द्वार ही कर समुद्र में प्रवेश किया।।4।। यह महावायु ज्यों गोडे प्रमाण धरती को अवगाहिये त्यों समुद्र अवगाहन कर वज्र कांड नामा धनुष हाथ लिये।

दृष्टि कहिये नेत्र निश्चल किये। अर मूठी दृढ करी अर धनुष विषे बाण का रोपण कर वह प्रवीणपने नाम की मुद्रिका कर युक्त अमोघनामा बाण को मागध देव के निवास पर चलावता भया, सो बाण अतिशीघ्रगामी है अर शत्रुवों के प्राणों का हर्ता है। गंगाद्वार से बारह योजन जाकर चक्रवर्ती ने बाण चलाया सो मगधदेव के मन्दिर विषे वज्रपात के समान बाण पडा। सो मागध का मंदिर कंपायमान भया अर हृदय कंपित भया, अतिसंभ्रम को पाय चक्रेश्वर के परवाने सहित बाण देखा।।8।। चक्रवर्ती को क्षेत्र विषे प्रगट भया जान अपने अल्प पुण्य की निन्दा कर मन से अद्‌भुत रत्न भेंट लेय पृथ्वीनाथ के पाय ढोकने चला।।9।।

पृथ्वी विषे सार ऐसा मोतियों का हार अर मुकुट, अर रत्नों के कुण्डल, अर अनेक रत्न अर अद्‌भुत वस्त्र अर स्नान के अर्थ तीर्थों का जल लेकर देव नरेन्द्र पर आया बारम्बार नमस्कार कर वीनती करता भया – हे नाथ! आज्ञा करो, जो आज्ञा होय सो मैं करूं तुम्हारा किंकर हूं, यह समस्त क्षेत्र तुम्हारा है इत्यादि विनयरूप वचन मागध देव महीपती से कहता भया। महीपती ने कृपा कर इस को विदा किया सो अपने स्थानक गया।।11।। अर भरतेश्वर ने भी यहाँ से कूच किया, सो दक्षिण दिशा के समस्त देव अर समस्त राजा उनको वश करता हुवा समुद्र के वैजयंत नामा द्वार में गया, वहां मागध की नाईं बर्तन देव को बुलावा, सो महा नम्रीभूत होय पृथ्वीपती के पायन आया अर ये तीन भेंट करी – शिर को आभूषण चूड़ामणि, मनोहर मोतियों की कंठी, हार, कडे, कटिसूत्र, बाजूबंध, अर यज्ञोपवीत भेंट कर भूपति को प्रणाम कर वह किंकर आज्ञा पाय अपने स्थानक गया, अर राजेश्वर वहां से कूच कर पश्चिम दिशा के देवों को अर राजाओं के समूह को वश करता भया महा

मनोहर जो सिंधुद्वार जिस द्वार होय सिंधु नदी का सागर से संबंध भयो है वहां आया।।15।।

जैसे मागध अर वर्तन वश किये थे, वैसे प्रभास देव को वश किया। कैसा है वह चक्रेश्वर, समान है पराक्रम जिसका।।16।। प्रभास ने आय नमस्कार कर ये तीन भेंट करीं – सन्तान जाति के कल्पवृक्ष के पुष्पों की माला अर रत्नों की माला अर मोतियों की जाली (माला) अर हेम को मुकुट विचित्र हैं रत्न जिस विषे।।17।। फिर चक्री वहां से प्रयाण कर चक्र को आगे आगे धरे विजयार्द्ध गिरि की वेदी कहिये कोट वहां आय प्राप्त भया।

कैसा है चक्रवर्ती, सोपवास कहिये दान पूजा शील उपवासादि कर युक्त है महा धर्मात्मा है, विजयार्द्ध गिरि का अधिष्ठाता जो विजयार्द्ध कुमार देव उसने अवधि कर जानी कि चक्रेश्वर यहां आया तब वह देव भरतेश्वर के निकट आया बड़ी ऋद्धि के धारी देव उन सहित राजेंद्र का अभिषेक कर भक्ति पूर्वक प्रणाम करता भया।।19।। अर इतनी भेंट करी, भृंगार कहिये रत्नमई झारी अर तीर्थ के जल कर पूर्ण रत्नमई कलश अर महाश्रेष्ठ सिंहासन अर छत्र अर दो चमर ये भेंट कर वीनती करता भया – हे नाथ! मैं तुम्हारा किंकर हूं तुम देवों के अर मनुष्यों के देव हो इत्यादि स्तुति कर स्वामी की आज्ञा पाय विजयार्द्धकुमार गया।।20।।

वहां चक्रवर्ती ने चक्र की पूजा कर तमिस्रा नाम गुफा उसके मुख आय डेरा किया वहां चक्रत मालदेव अति भक्ति का भरा भरतेश्वर पै आया।।21।। तिलकादि चतुर्दश आभूषण भेंट कर स्तुति करी अर प्रणामकर पृथ्वीपति के बीनती करता भया – हे प्रभो! मैं तुम्हारा दास हूं तब राजेंद्र ने कृपा कर उसको विदा किया।।22।। राजाओं का राजा आदिचक्री उसकी आज्ञा से अयोध्य नाम सेनापति कुमदामेलक नामा अश्वरत्न हरित वर्ण उस पर आरूढ होय प्रचण्ड जो रत्न दण्ड उस कर गुफा के द्वार के कपाट उघाड़े अर द्वार से अश्व पीछै आया।

सेनापति अश्व पर आरूढ थे प्रचंड रत्न कर जब गुफा का द्वार उखाड़ा तब महा उष्ण हवा निकसी सो छह मास तक शांत न भई जब उष्ण मिटी तब सेना सहित भरतेश्वर विजयपर्वतनामा गज पर चढ़ गुफा में प्रवेश करते भये।।25।। वहां गुफा के मध्य दोय नदी हैं – एक का नाम उन्मग्नजला जिसका जल ऊंचा उछले, अर दूजी निमग्नजला जिसका जल नीचा जाय सो ये दोनों बड़ी नदी उनके तीर फौज के डेरा भये गुफा में अंधकार विशेष सो नरेंद्र ने कांकनी मणि की किरणों कर अंधकार मेटा वहां एक रात एक दिन मुकाम भया। लोक सावधान रहे।।27।। फिर काम वृत (शृ) नामा गृहपति रत्न अर भद्रमुख नामा शिलावट रत्न ने इन दोनों नदी का पुल बांधा तब सुख से सकल सेना दोनों नदी को उतर गुफा के पार गई जैसे पहिला दरवाजा उघाड़ा था वैसे ही उत्तर का उघाड़ा। चक्रवर्ती उत्तर

www.vitragvani.com

में गया वहां हजारों राजा मलेच्छ सो अपूर्व कटक आया जान युद्ध को उद्यमी भये तब अयोध्यनाम सेनापति दंड रत्न का धारक उसने युद्ध कर वे भगाये अयोध्य से वे युद्ध न कर सके तब लोगों ने जानी इस सेनापति का नाम अयोध्य सच्चा है। भय से वे राजा मलेच्छ भाग कर उनका कुल देवता महा भयंकर मेघमुख नामा नागकुमार देव उनके शरणे गये तब मेघमुख विमान में चढ़ आकाश को पूर कर युद्ध के अर्थ तिष्टे तब चक्रवर्ती के बड़े उमराव हस्तिनापुर के राजा जयकुमार कुरुवंशी ने उनसे युद्धकर जीत पाई। तब चक्रवर्ती ने कृपा कर मेघेश्वर का खिताब दिया अर इनके शिर पर वीरपट्ट बांधा जो इनको तुल्य योधा दूजा नहीं। फिर वे मेघमुखनामा मेघ कुमार महाभयंकर मेघ कर आकाश को पूर कटक के ऊपर मूसल धार महामेघ की वर्षा करते भये।।34।।

तब चक्रवर्ती मायामई मेघ वृष्टि देख कर पृथ्वी विषे चमर रत्न बिछाया अर ऊपर छत्र रत्न मेला सो बारह योजन लम्बा अर नव योजन चौड़ा कटक का विस्तार है उसी ही प्रमाण चमर अर छत्र हो गये जैसे कुक्कुट के अंडे का आकार होय वैसा कटक चमर रत्न अर छत्र रत्न होय गया। सात दिन तक मेघ बिकराल वर्षा विजुरियों का चमत्कार, मेघ की गर्जना उलासनी मोटी धारा देवों ने अनेक चरित्र किये, परन्तु कटक में रंच मात्र बाधा न भई। चक्रवर्ती ने मेघ कुमारों पर क्रोध कर गणवध देवों को आज्ञा करी, सो उन पर दौड़े सो मेघमुख देवों के कटक गणवध देवों से लड़ न सके। इनके दवाये वे भागे सो वर्षा संकोच लीनी अर चक्रवर्ती के शरणे आय अर मलेच्छ खंड के राजा कन्यादिक रत्न भेंट कर चक्रवर्ती के सेवक भये। वे भयवान हुते सो उनको अभयदान देय अपने किये पृथ्वीपति की आज्ञा सब ने शिर पर धरी राजाओं का राजा सबको जीत अपने साथ लेय पीछे फिरा विना खेद सब खंड जीते। वहां अर सिंधुनदी के तीर हेमाचल का सिंधु कूट जहां सिंधुदेवी बसे है सो सिंधुकूट के समीप चक्रेश्वर को आया जान सिंधुदेवी आयकर राजेंद्र का अभिषेक करती भई अर दो सिंहासन महा सुन्दर भेंट किये अर चक्रवर्ती सेना को हिमवान् गिरि की तलहटी में थापकर आप तेला धर दाभ की शय्या पर बैठे।।39।।

किया है तीर्थ जल से स्नान जिसने अर पहिरे हैं वस्त्राभूषण जिसने चक्र अग्रेसर जिसके अर हाथ में धनुष बाण लेकर रथ विषे आरूढ भया। जुते हैं दिव्य अश्व जिसके जहां हिमवान् पर्वत का हिमवत् कूट है वहां धनुष धारि आया अर धनुषबाण लगाय ऊंचे को चलाये।।41।। अर मुख से ऐसा शब्द कहा – हे नागकुमारो! जो गरुड़ कुमार हैं मेरी आज्ञा उर में धारो, तुम सब मेरे क्षेत्र में बसो हो सो आय कर सेवा करो। यह आज्ञा कर धनुष चढाय बाण चलाया सो बाण ऐसा शब्द करता भया जैसा वज्रपात शब्द होय बारह योजन बाण का शब्द भया सो हिमवत् कूट के वासी ने बाण को देख बाण

की पूजा करी अर बाण को माथे धर चक्रवर्ती पै आया।।43।। महा दिव्य रत्न धान की माला महादिव्य मलयागिरि चंदन भेंट किया अर नाना प्रकार वस्त्राभरण अर्पणकर पूजा करता भया। अर कही मैं तुम्हारा अनुचर हूं आज्ञा होय सो करूं तब चक्रवर्ती ने उसको कृपा कर विदा किया।।44।। वह नरनाथ की आज्ञा सिर चढ़ाय अपने स्थानक गया।

अथानन्तर – भरत चक्रवर्ती वृषभाचल पर्वत पर आये। वहां कांकणी रत्नोंकर अपना नाम लिखा।।47।। ऋषभदेव का पुत्र मैं भरत चक्रवर्ती फिर वहां से प्रयाण कर विजयार्ध के कोट के समीप नरों का ईश्वर आया।।48।। तब दोनों श्रेणियों के निवासी विद्याधर राजेश्वर को आया जान, नमि विनमि सहित कटक में आए।।49।। नव निधि के स्वामी की नाना प्रकार के रत्नों कर विद्याधर आराधना करते भये। सुभद्रा नाम स्त्री रत्न को चक्रेश्वर ने परण कर प्रयाण किया। गंधार आदि अनेक विद्याधरों सहित नमि विनमि भरतेश्वर की अति भक्ति करते भये। फिर भूपतियों के भूप ने गंगा के निकट डेरा किया। वहां ही तेला किया। गंगादेवी ने नरनायक को निकट आया जान सुवर्ण के सहस्र कलशों कर भरतेश्वर का अभिषेक किया, रत्नों के दो सिंहासन पीठ सहित भेंट किये अर विजयार्द्ध कुमारदेव भी नरेंद्र का किंकर भया ही था।।52।।

अठारह हजार म्लेच्छ खंडों के राजा उनको वश कर नाना प्रकार अद्‌भुत रत्न नृपतियों से भेंट ले, सब नृपति सहित छह खंड का पति विजयार्द्ध की दूजी गुफा के निकट आया।।53।। वहां भी पृथ्वीनाथ तेला करता भया। वहां नाट्यशाल नामा देव चक्रेश्वर के समीप आया। नाना प्रकार के आभरण बिजुरी समान भेंट किये। महा प्रकाशरूप दो कुण्डल नजर किये, खंड कपाट नामा गुफाद्वार अयोध्य सेनापति ने अगली भांति पहिली ही उघाड़ा था सो नरेश्वर गुफा में प्रवेश कर बाहिर निकसा। गंगा समान सेना कर युक्त वह भरतेश्वर नाथ महा प्रवीण साठ हजार वर्ष दिग्विजय कर छै खंड पृथ्वी जीत अखण्ड आज्ञा सबों को सुनाय अयोध्या में आया।।56।। वहां सुदर्शन चक्र अयोध्या के द्वार प्रवेश न करे। तब चक्रेश्वर ने बुद्धि सागर पुरोहित को पूछा कि चक्र के प्रवेश में संदेह क्या है।।57।। सब भरतक्षेत्र वश भया, अब यह चक्र पुर में प्रवेश क्यों न करे।।58।। कोई अर भी जीतना है। तब पुरोहित ने कहा – तुम्हारा भाई महा बलवान् है, वह आज्ञा में नहीं।।59।।

तब पुरोहित के वचन सुन कर पृथिवीनाथ ने भाइयों के समीप दूत भेजे। अर कृपा कर भली भली वस्तु भेजी। अर प्रीति के समाचार लिखे सो दूत उनके समीप गये। तब वे सब भाई एक बाहुबल बिना पाया है आत्मज्ञान जिन्होंने सो सबही राज्य का त्याग करते भये अर त्याग ही को महा उत्सव मानते भये।।60।। श्री आदीश्वर के शरण जायकर वे सबही संसार से विरक्त निःशल्य मोक्षाभिलाषी

पारमेश्वरी दीक्षा धारते भये।।61।। वे कुमार अति सुकुमार भव्यों में सिंह समान। सब एकेलार वैराग्य धारते भये अर इतने देश कुमारों ने तजे।।62।।

देशों के नाम – कुरुजांगल 1 पंचाल 2 सूरसेन 3 पाटच्चर 4 उलिंग 5 काशी कौशल्य 6 मद्रकार 7 वृकार्थक 8।।65।। कोलु 9 अमृष्ट 10 त्रिगत 11 कुमत्स्य 12 कुनीर 13 कोशल 14 मौकदेश 15 मध्यदेश 16 वाल्हिक 17 आश्रय 18 कांबोज 19 पवन 20 आरोर 21 मरुक 22 कापतोप 23 सूर 24 वाटवानस्व 25 कईकय 26 गंधार 27 सिंधु 28 सौवीर 29 भारद्वाज 30 दशैरुक 31 प्रस्थाल 32 तीर्ण 33 कर्ण 43 ये उत्तर की ओर अर खड्ग 1 अंगारक 2 पौंड्र 3 मल्लप्रवक 4 मस्तक 5 प्राद्योतिष 6 बंग 7 मगध 8 मानवर्तक 9 मर्दंल 10 भार्गव 11 ये देश पूर्वदिशा की ओर हैं। अर वाड मुक्त 1 वैदर्वमानवायक 2 कायर मूलक 3 अश्मक 4 दंडिक 5 ये देश कलिंग 6 आसिक 7 कुन्तल 8 नावाराष्टिक 9 महिषक 10 पुरषदेश 11 भागवर्धन 12 दक्षिण की ओर हैं। अर माल्य 1 कल्लीवन उपात 2 दुर्गसपुर 3 करचूर 4 काक्ष 5 नासरिक 6 अगरतस 7 सारस्वत 8 तरलसमाहेष 9 भरकछ 10 सुराष्ट्र 11 नर्मद 12 ये देश पश्चिम की ओर के अर दशार्णव 1 किन्धि 2 त्रिपुरावर्त्त 3 नैषध 4 नैपाल 5 उत्तमर्ण 6 वैदिशा 7 अंतप 8 कौशल मदन 10 विणिहात्र 11 ये सब देश विंध्याचल के पृष्ठ भाग विषे 75 अर भद्र 1 वत्स 2 विदेह 3 कुसुमन्त 4 सैतव 5 वज्र खंड 6 ये देश मध्य देश के समीप हैं।।75।। ये सब देश भरतेश्वर की भूमि में जानकर भरत के छोटे भाई मोक्ष के अभिलाषी तजते भये जैसे श्रीपति की आज्ञा में होय वैसे भरत क्षेत्र की भूमि भरतेश्वर की अनुचरी है सो हमको ग्राह्य नहीं ऐसा जान ये सब ऋषभ के पुत्र मुनि भये।।76।।

अथानन्तर – बाहुबली ने चक्रेश्वर की आज्ञा न मानी – चक्रवर्ती के चक्र को आलात कहीये घेघली उस समान जानता भया चक्रवर्ती के दूत को उत्तर दिया जो मैं चक्रवर्ती का सेवक होय पृथ्वी न भोगूं ऐसा कहकर आप युद्ध के अर्थ अपनी सेना सहित पोदनापुर से निकसा।।78।। उसकी बात सुन चक्रवर्ती भी निकसा सेनारूप समुद्र कर रोकी है दिशा जिसने दोनों सेना का निकटपना भया।।79।। तब दोनों मन्त्री ने मन्त्र कर अपने स्वामियों से कहते भये जो तुम दोनों में कटक युद्ध से अनेक जीवों का क्षय होवेगा इससे दोनों भाई धर्मयुद्ध करो।।80।।

तब मंत्रियों के वचन दोनों ने माने दृष्टियुद्ध, मल्लयुद्ध, जलयुद्ध थापे, सो प्रथम ही दृष्टि युद्ध भया सो चिरकाल दोनों वीरों में पलक रहित नेत्रों कर निरखते भये सो इनका नेत्रयुद्ध भूचर खेचर सुर असुर देखते भये।।81।। बाहुबल योधा का शरीर भरत से पच्चीस धनुष ऊंचा, भरत का देह पांच सौ धनुष अर बाहुबल का पांच सौ पचीस धनुष सो नेत्र युद्ध में बाहुबल जीत्या। इसकी अधोदृष्टि अर

भरत की ऊर्धदृष्टि सो ऊंचा चौंध से नेत्रों को खेद होय सो दृष्टियुद्ध में बाहुबली जीता फिर दोनों वीर जलयुद्ध करणे लगे। अपनी भुजाओं कर सरोवर में उठाये हैं तरंगों के समूह जिन्होंने, सो परस्पर महा रौद्र जल युद्ध भया ताहू विषे राणी नंदा का पुत्र भरत से सुनंदा का पुत्र बाहुबली जीता। फिर दोनों योधा मल्लयुद्ध करने लगे सो रंगभूमि में चिरकाल दोनों में बाहूयुद्ध विशेष भया बलात कहिये गर्जना अर आस्फोटिक कहिये खंभ ठोकना अर आटोप इत्यादि नाना प्रकार के करण उनकर पूर्ण मल्लयुद्ध विशेष भया। दोनों योधा पृथ्वी के वर पायकर उछलते हुए परस्पर भिड़ते भये सो इनके पांवों के संचार कर भिन्न भया है हृदय जिसका ऐसी वसुधा रूप वधू मानो शब्द करती भई।।85।। घनी वेर में भुजविक्रमां कहिये बाहुबली ने महादयावान् महाबलवान अपने भुजरूप यंत्र कर भरत को दाव कर उठाय लिये परन्तु रत्नाचल की नाईं विनय से भूमि पर पधराये अर अविनय न किया।

भावार्थ – बड़े भाई के मौरा तथा छाती को भूमि का स्पर्शन न होने दिया।।86।। तब आकाश विषे अर भूमि विषे देखनहारे देवों के समूह अर खेचर भूचर मनुष्यों के समूह वही बाहूबली का यश वर्णन करते भये। जो धन्य यह वीर, धन्य यह धैर्य, उत्तम पुरुषों में नहीं।।87।। जब लघुवीर जीता तब भरत को अति क्रोध उपजा अर चक्र को स्मरण किया तो तत्काल करविषे आय तिष्ठा जिसकी हजार देव सेवा करें अर सूर्य समान है प्रभा जिसकी सो चक्र को फिराय कर बाहुबली के ऊपर चलाया सो बाहुबली चरमशरीरी आदि कामदेव तिनका निपात करने को चक्र समर्थ न भया। वह देवाधिष्ठित चक्र बाहुबली को तीन प्रदक्षिणा देय पीछे भरत के हाथ में गया तब बाहूबली बड़े भाई को निर्भय देख अपने कर से दोनों कान मूंदकर लक्ष्मी को निंदता भया, सो धिक्कार है इस लक्ष्मी को।

यह लक्ष्मी निर्म्मल पुरुषों के चित्त को मलिन करे है, जे पुरुष महापवित्र हैं अर धर्म के सन्मुख हैं अर परस्पर जिनका मन मिल रहा है उनही के मन को जुदा करे है जल स्वच्छ कहिये निर्मल है अर अनुकूल कहिये सुलटा बहे, कदापि उलटा न बहै अर संहत कहिये जो जल मिल रहा है अर अखंड है उसी ही को कर्दम मलिन करे है तैसे कमला बड़े पुरुषों को विपरीत करे है यह जो कमला कर्दम समान उसे बारम्बार धिक्कार।।92।। फिर यंत्र कहिये घाणी उस समान लक्ष्मी उसको धिक्कार! कैसी है यह लक्ष्मी रूपी घाणी, चलाचल है स्वरूप जिसका अर मधुर कहिये मिष्ट स्निग्ध कहिये सचिक्कण स्वभाव जिसका ऐसे तिलों में चिरकाल स्नेह कहिये तेल उसे हरे है।

भावार्थ – घाणी तो मधुर स्निग्ध जो तिल उनको स्नेह रहित करे है अर ये लक्ष्मी महामधुर मिष्टवादी स्नेह के भरे सत्पुरुष उनको स्नेह से रहित करे है, प्रीति से परांगमुख करे है, घाणी भी

चलाचल कदे ही थिर नहीं अर लक्ष्मी भी एक ठौर नहीं चंचल है।।93।। अर नरिंद्र को भी लक्ष्मी दृष्टि विषे सूर्य की दृष्टि समान भयंकर सर्वथा प्रकार न देखने योग्य है धिक्कार धिक्कार इस लक्ष्मी को अर लक्ष्मी के लोभियों को।।94।। सदा काल यह लक्ष्मी अग्नि की शिखा समान आदि अंत मध्य विषे दुःखकारी है स्पर्श जिसका यद्यपि प्रकाश रूप है तथापि संताप की करणहारी है।

भावार्थ – जैसे अग्निशिखा यद्यपि उद्योत रूप है तथापि आताप की कर्त्ता है वैसे यह लक्ष्मी भी उद्योत रूप है परन्तु सर्व सन्ताप की कर्त्ता है अर अग्नि की शिखा का स्पर्श भी मूल मध्य अन्त विषे दुखकारी है वैसे कमला का ग्रहण भी आदि मध्य अंत विषे क्लेशकारी है।।95।। इस मृतलोक विषे चित्त का जो संतोष सोई सुख का लक्षण है सो बांधवों के विरोध कर न तो सुख है न धन है।।96।। इन मनुष्यों के ये भोग दुख ही उपजावे हैं जैसे शीत ज्वर कर पीड़ित पुरुष को शीत का स्पर्श दुख ही उपजावे है इस राज के भोग के अभिलाष कर भाइयों से विमुख होय।।97।।

ऐसा चितवन कर वह महाधीर राज को तज तप विषे तिष्ठा कैलाश विषे निश्चल एक वर्ष कार्योत्सर्ग धारा।।98।। बालमीक कहिये बांबी उनके छिद्र से निकसे जे मणिधारी सर्प उन कर मंडित बाहूबली के चर्ण सोहते भये।।99।। अर जैसे राज अवस्था विषे अंग से आलिंगन करती तैसे मुनी अवस्था विषे भी कोमल अंग की धरणहारी माधवीलता समस्त अंग से आलिंगन करती भई।

भावार्थ – माधवीलता सर्व अंग से लिपट गई।।100।। लता को दूर करती जे विद्याधरी उन कर महामुनि योग विषे स्थिर हरित मूर्ति ऐसा शोभता भया जैसा हरित वर्ण मरकत मणि का पर्वत सोहे है, वर्ष दिन के अंत भरत ने आय पूजाकर प्रणाम किया, उसी समय घातिया कर्म का अंतकर बाहूबली केवली भया, गंध कुटी आदि केवल अतिशय प्रगट भये दिव्यध्वनि कर ऋषभ की नाईं जगत् को संबोधता भया।।2।। चौदह महारत्न अर नव निधि उसकर युक्त चक्रवर्ती पृथ्वी का निष्कंटक राज्य करता भया।।3।।

द्वादश वर्ष पर्यंत दया भावकर सब लोकों के ताईं मनवांछित दान देता भया व्रती अव्रती की परीक्षा करी, फिर वह चक्रवर्ती जिनशासन पर है अति वात्सल्य भाव जिसका जो भक्ति के भारकर वशीभूत है चित्त जिसका।4।। सो यवों के अर शालि के जो अंकुर उनकर व्रतियों को परखता भया। जे हरी खूंदते गये ते अव्रती अर हरी पर न गये ते व्रती।।5।। सो व्रतियों का आदर किया सो रत्नत्रय का जो चिह्न जो यज्ञोपवीत सूत्र सो उनके कंठ में डार अति सत्कार किया, अर भक्तिकर उनको विनय से दान दिया। कृतयुग की आदि आदीश्वर के पुत्र ने ब्राह्मण थापे अर तीन वर्ण आगे ऋषभ ने थापे थे सो ब्राह्मणादि चार वर्ण भये।।7।। चक्र छत्र खड्ग दंड कांकिणी मणी चर्म ये सात अचेतन

रत्न हैं अर सेनापति गृहपति गज अश्व पुरोहित शिलावट अर पटरानी, ये सात चेतन रत्न।।8।। चौदह रत्न जिनकी प्रत्येक प्रत्येक सहस्र देव रक्षा करें।

नव निधियों के नाम - काल 1 महाकाल 2 पांडुक 3 माणव 4 नैसर्प्प 5 सर्व वरतन 6 शंख 7 पद्म 8 पिंगल 9 ये नव निधिपति के निधिपालक नाम देवों कर सेवित लोक के उपकार अर्थ होती भई। चक्रवर्ती जैसा पुण्य अर मनुष्य के नहीं ये सकल निधि गाढा के आकार जिनके आठ आठ पहिये, नव नव योजन चौड़ी, बारह योजन लंबी आठ योजन ओंडी। एक एक निधि की सहस्र सहस्र देव रक्षा करें।।13।। प्रथम काल नामा निधि जो ज्योतिशास्त्र, निमित्तशास्त्र, न्यायशास्त्र, कलाशास्त्र, शब्दशास्त्र तथा पुराणादिक जे हैं चाहे जेते पुस्तक या निधि में लेवो। दूजी महाकाल नामा निधि सो ये लोहादिक नाना प्रकार के लोहादिक उपकरण दे हैं। पाया है अक्षर का अर्थ भेद जिसने। यह निरूपण किया।।15।। तीजी पांडुक निधि सो सकल जाति के धान्य, शालि यव गेहूं इत्यादि सर्वधान्य अर कड़वा, कषायला, चिरपरा, खारा, खट्टा, मीठा सब रस देय सब वस्तु भोजन की सामग्री इसमें है।।16।। चौथी निधि माणवक नामा। सो वषतर, खड्ग, खेट, बाण शक्ति, धनुष चक्रादि अनेक आयुध देय।।17।।

पांचवीं सर्प नामा निधि सो सेज, आसन, दुलाई इत्यादि गृहस्थ योग्य नाना प्रकार की वस्तु भाजन देय, सकल भाजन जिसमें पाइये।।18।। छठी सर्वरत्न नामा निधि। सो समस्त रत्नों कर पूर्ण है। ऊंची है शिखा जिनकी ऐसी रत्नों की राशि जिस विषे बहुत बड़ी है। इन्द्रनील, महानील, वज्र, वैडूर्य, पद्मराग मरकत इत्यादि अनेक मणियों की खान यह निधि है।।19।। सातवीं शंख नामा निधि। भेरी शंख, नगारे, वीणा, झांझ, झालरी, मृदंग आदि अनेक जाति के वादित्र देय। यह निधि वादित्रों कर पूर्ण है।।20।।

यह आठवीं पद्म नामा निधि सो सकल जाति के वस्त्र देय। पाटंबर, वीणा, महानेत्र, दुकूल, पस्मी, कंवलादिक नाना जाति के नाना भांति के नाना रंग के समस्त वस्त्र इस निधि में हैं।।21।। पिंगल नामा नवमी निधि सो रत्न स्वर्णादिक के सकल आभूषण देय स्त्री अर पुरुष को तथा हाथी घोड़ों के सकल आभूषण जो चाहिये सो दे। कटुक कहिये कडे कटिमेखला, केयूर, हार, अंगद, मुकुट इत्यादि सकल आभूषणों की खान की यह निधि है इनका कथन किया।।22।। ये नव निधियें कामवृष्टि नामा गृहपति के हाथ हैं। सदा चक्रवर्ती की मनवांछित अर्थ निपजावे हैं।।23।। अर चक्रवर्ती के तीन सौ साठ रसोईदार हैं। जो निरन्तर चांवल दाल आदि कल्याण आहार निपजावे हैं।।24।। हजार चावल भए एक ग्रास। सो बत्तीस ग्रास चक्रवर्ती लेय। अर पटराणी सुभद्रा चक्रवर्ती की रसोई के एक ग्रास में तृप्त। अर एक ग्रास औरों के अर्थ।

भावार्थ – चक्रवर्ती का आहार अतिगरिष्ठ है। सो पटराणी को एक ही ग्रास घना। अर एक ग्रास घनों को तृप्ति करे।।25।। बत्तीस हजार राजा मुकुट बद्ध सेवा करें। अर बत्तीस हजार देश अर छयानवें हजार राणी अर कोटि हस्ती, तीन कोटि गाय कामधेनु समान। अर पवन से अधिक चाल चलें ऐसे अठारह कोटि अश्व। अर चौरासी लाख मदोन्मत्त कुंजर। अर चौरासी लाख ही रथ।।29।। तथा विवर्धनकुमार अर अर्ककीर्ति अर निन्यानवे हजार चित्रकार आदि पांच सौ पुत्र चरम शरीरी अर भाजन भोजन शय्या सेना वाहन, आसन, निधि, रत्न नगर, नाट्य ये दशांग भोगों का भोक्ता अर सोलह हजार सेवक चक्री के शरीर की सेवा करें। ये महाहितु सेवा में सदा सावधान महा चतुर।।32।।

ऐसे वैभव कर युक्त हैं चक्रवर्ती तो भी शास्त्र के अर्थ कर निपुण है बुद्धि जिसकी सो सदा धर्म ही के विचार में ही कालक्षेप करता भया, बत्तीस हजार मुकुटबद्ध राजादिकों का गर्व अपनी विभूति कर हरता भया। अर आपके रंचक मात्र गर्व नाहीं। उर विषे श्री वत्स लक्षण कर शोभित। अर शरीर चौंसठ लक्षणों कर शोभित मंडित चक्रवर्तियों में आदि। जिसकी संपदा विषे इन्द्र की संपदा अल्प दीखे। जिसकी विभूति कहां लग वर्णन करें।।35।।

ऋषभ भगवान् उनके पुत्र महाभाग भरत। जब नीतिकर भरत क्षेत्र की रक्षा करता भया, तब भूमि में रंचमात्र भी दुःख न रहा। अपने अखंड पौरुष कर षट्खंड की रक्षा करी।।36।। जिसके राज्य में प्रजा धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष विषे यथेष्ट अनुरागी भये। निरन्तर विघ्न रहित सुख सों रमते भये।।37।। वह भूपों का भूप अपनी लक्ष्मी कर पूर्वोपार्जित धर्म का फल सृष्टि को दिखाता भया। बड़े पुरुष कौन को धर्म के दिखावनहारे न होंय।।38।। सब ही को धर्म का अतिशय दिखावें। वह भरत लक्ष्मीकर इन्द्र समान अपने मन की वृत्ति सम्यक् दर्शन रूप रत्न कर शोभित करता भया। कैसा है भरत, महागुणों की निधि है अर पूर्वोपार्जित जिनमार्ग का दिखाया धर्म उसके माहात्मकर लोकों को कल्पवृक्ष समान मनवांछित फल का दाता है। अर पुरुषार्थ कर पूर्ण है शार्दूल समान है पराक्रम जिसका।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ ऋषभदेव को केवलज्ञान चक्री का दिग्विजयो नाम एकादशः सर्गः।।11।।

जैसे भले क्षेत्र में बोया बीज बहुत गुणा होय फलै है तैसै शुद्धचित्तकरि पात्रनिकों दिया दान अधिक फल को फलै है। – पद्मपुराण भाषा वचनिका

बारहवाँ सर्ग

अथानन्तर – चक्रेश्वर जिनेश्वर को प्रणामकर त्रिषष्टि शलाका पुरुषों के पुराण विस्तार सहित सुनता भया। अर चौबीसों तीर्थंकरों की वन्दना के अर्थ यह महाभाग घरों के द्वार वन्दन माला कराता भया। सो एक दिन चक्रवर्ती जिनेन्द्र के समवसरण में दर्शन को गया। सो साथ विवर्द्धन कुमारादिक पुत्र गए थे। तिन समवसरण की विभूति देख आश्चर्य को प्राप्त भए। पुत्र चक्रवर्ती के विवर्द्धन आदि राजकुमार नौ सौ तेईस नित्य निगोद के निकसे हैं। ये अनादि मिथ्यादृष्टि सदा काल नित्य निगोद के निवासी स्थावर काय विषे क्लेशों को पावें। कदेही त्रस योनि इन न पाई सो प्रभु का दर्शन कर अतिशय को पाय तत्काल संयमी भए।।5।। उन पुत्रों की प्रशंसा कर अर जिनशासन की अद्‌भुत महिमा जान साधों के संघ को नमस्कार कर पीछे अयोध्यापुरी आया। हर्षित है चित्त जिसका।।6।। लोकों का पालक भरतेश्वर छहखंड का राज करे। सो सुख से बहुत काल बीते धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के ज्ञान रूप उत्तम जलकर पखाला है चित्त जिसका।।7।। भरत के राज में जयकुमार का सुलोचना से विवाह भया, स्वयंवर के आरम्भविषे भूचर सब ही आए तथा भरतेश्वर के पुत्र अर्ककीर्ति ने जयकुमार से युद्ध किया सो जयकुमार जीता चक्री के पुत्र को बांधा अर छोडा अर बहुत स्तुति करी अर चक्रवर्ती ने उसकी प्रशंसा करी।

राजा अकम्पन की पुत्री का पति महा योधा चक्रवर्ति का महा उमराव चक्रवर्ति से आज्ञा पाय हस्तिनापुर गया। सो एक दिन राजमन्दिर में बैठा था सो सुलोचना आदि राणी समीप थीं उस आकाश विषे विद्याधर विद्याधरी के युगल को देख जयकुमार मूर्छित भया, अर अंतःपुर की स्त्री सब शीतोपचार कर मूर्छा निवारी तब सचेत होय यह वचन कहता भया जो हा प्रभावती कहां गई।।11।। जयकुमार को जातिस्मरण भया उसी समय सुलोचना को भी कबूतरी कबूतर को क्रीड़ा करते देख जाति स्मरण उपजा। सो मूर्छित होय हाय हिरण्यवर्मा! यह नाम कहती उठी तब जयकुमार बोला – यह हिरण्यवर्म मैं जब सुलोचना कही वह प्रभावती मैं।।14।। पूर्वला विद्याधर का भव उसे प्रगट जान दोनों अति हर्षित भए। यह वार्ता सुन अन्तःपुर विषे कौतुक भया। जो ये कहा कहे हैं। तब उनके संदेह निवारन के अर्थ सुलोचना जयकुमार की आज्ञा लेय अपने प्रीतम के पूर्वले भव कहती भई। सुख अर दुःख के उदय कर मिश्रित दोनों का चरित्र पूर्वले चार भव का सुलोचना कहती भई।

पहिले भव का पति का नाम सुकांत प्रिया का नाम रतिवेगा। अर इनका शत्रु भवदेव जिसका नाम लोक उष्ट्रग्रीव कहे हैं उसने इन दोनों को अग्निविषे दग्ध किये।।18।। फिर उसको शक्तिषेण के सामंतों ने मारा, अग्नि ही में जलाया सो मर मार्जार भया। अर वे पति पत्नी परेवा–परेवी भये। सो

वन में विलाव ने भषे। उसके भक्षण विषे दुख से मरण भया सो सुलोचना ने सब वृत्तांत कहा कि कबूतर कबूतरी मुनिदान की अनुमोदना कर हिरण्यवर्मा प्रभावती नामा विद्याधर विद्याधरी भये। अर वह वैरी विलाव विद्युद्वेग चोर भया। सो वे राजा रानी विद्याधर पद की विभूति तज मुनि आर्यिका भये थे सो वा वैरी चोर ने फिर भी मारे सो मुनि अर्जिका तो स्वर्ग विषे देव देवी भये अर उस चोर को राजा ने पकड़ा सो लाक्षागृह में जलाया। मरण समय चाण्डाल के उपदेश से चोर को ज्ञान उपजा, परन्तु मुनि हत्या के पूर्व पाप से पहिले नर्क गया। फिर ज्ञान के प्रताप से निकस भीमनामा वणिक पुत्र होय मुनिव्रत धारे। वे देव देवी क्रीडा के अर्थ मध्य लोक में आये थे, सो भीमनामा मुनि का दर्शन भया। तब देव धर्म का स्वरूप पूछा। उसने पूर्व भव का चरित्र कहा, सो परस्पर सुनकर निःशल्य भये। भीम मुनि तो वाही भव से निर्वाण गया।।22।।

अर देव देवी स्वर्ग से चय जयकुमार सुलोचना भये। ये पूर्व भव का चरित्र देखा सुना अनुभया सो सुलोचना ने विस्तार से कहा।।23।। फिर श्रीपाल चक्रवर्ती का चरित्र जयकुमार की आज्ञा से सुलोचना ने विस्तार से कहा। सो सुनकर सब रणवास आश्चर्य को प्राप्त भया।।24।। पांच भव का सम्बन्ध प्रिया अर प्रीतम का उसके स्मरण से पूर्व भव की विद्या दोनों को सिद्ध भई। सो विद्या के प्रभाव कर दोनों अढाई द्वीप विषे विहार करते भये।।25।। जिनेंद्र की वंदना पूर्वक धर्म अर्थ काम को पोषते सुमेरु कंदरा विषे दोनों रमते भये।।27।। कुलाचलों के तट जहां किन्नर देवों के मनोहर गीत विषे जो सुन्दर प्रिया सहित प्रीतम रमते भये।।28।। कर्म भूमि विषे उपजा अर विद्या के बल भोगभूमि विषे क्रीडा करता भया, धनी धिराणी दोनों ही कला गुण अर चतुर सो यथेष्ट अढाई द्वीप विषे रमते भये।।29।।

एक दिन इन्द्र के मुख इनकी प्रशंसा सुन कर रतिप्रभ नामा देव अपनी देवी सहित सुमेरु विषे इनकी परीक्षा करी सो इन दोनों को महा शीलवान जान पूजते भये।।30।। जितनी शुद्धता है उनमें शील की शुद्धता महा प्रशंसा योग्य है। शील की शुद्धताकर जे पवित्र हैं उन मनुष्यों के देव भी किंकर हैं।।31।। बहुत वर्ष जयकुमार अपने छोटे भाई विजय सहित पृथ्वी का राज्य करता भया सुन्दर है स्त्री जिसकी सो देवों कैसे भोग भोगता भया बहुत सुखी है प्रजा जिसकी। एक दिन जयकुमार सुलोचना सहित सुमेरादिक अनेक गिर पर क्रीडा कर जगत् गुरु की वंदना के अर्थ आया सो प्रभु की वंदना कर अपनी प्रिया को कहता भया है – हे प्रिये! त्रैलोक्य पति सुर असुर मनुष्य तिर्यंचों कर मण्डित अष्ट प्रातिहार्य अर चौंतीस अतिशय कर युक्त अर ये इनकी देवी जिनेंद्र को नमस्कार करे हैं।।36।। अर ये वृषभसेन आदि नाना ऋद्धि कर युक्त प्रभु के निकट मुनियों की सभा में सत्तर गणधर हैं।

भावार्थ – प्रभु के गणधर चौरासी हैं परन्तु जा दिन जय कुमार ने दीक्षा लीनी उस दिन गणधर

सत्तर ही थे इकहत्तरवें ये भये अर जयकुमार सुलोचना से कहे हैं – हे कांते! यह बाहुबली केवली अपने भाई जे मुनि उन सहित ऐसा सोहे है जैसा अर वृक्षों कर बड़ा वृक्ष सोहे।।38।। हे देवी! यह राजा सोमप्रभ हमारा पिता है अपने छोटे भाई श्रेयांस सहित मुनि भया तप रूप लक्ष्मी कर वेढ़्या बहुत सोहे है।।39।। अर यह तेरा पिता अकंपन अपने हजार पुत्रों कर सहित यति भया सो मुनियों की सभा में विराजे हैं, तप रूप लक्ष्मी कर मंडित महा तप विषे तिष्ठा है अर यह दुर्मर्षण दुर्मुख आदि राजा तेरे स्वयंवर विषे युद्ध के कर्ता शांत बुद्धि होय जिनभाषित तप करे है।।41।। अर ये ब्राह्मी सुन्दरी दोनों प्रभु की पुत्री समस्त आर्यकायों की गुराणी महा तप करे हैं कुमार अवस्था ही में जिन मदन का अंत किया।।42।। ये भरत अनेक राजाओं सहित मनुष्यों के कोठे में बैठा अर ये भरत की राणी सुभद्रादिक स्त्रियों के कोठे में बैठी हैं।।43।।

हे बल्लभे! यह आश्चर्य्य देखिये, सिंह, गजादिक, गरुड सर्पादिक परस्पर विरोधी तिर्यंच प्रभु के प्रताप से शान्त भये मित्र की न्याई एकत्र तिष्ठे हैं।।44।। इस भांति जयकुमार विमान में बैठा स्त्री के ताई समवसरण की शोभा आकाश से दिखाई फिर विमान से उतर समवसरण में आया प्रभु को प्रणाम कर चक्रवर्ती के पास महा विनय युक्त आय तिष्टा, जयकुमार महा नीति का वेत्ता विवेकी है अर सुलोचना भरत की राणी जो सुभद्रा उसके समीप जाय बैठी वहां जयकुमार विस्तार सहित कथा रूपी अमृत का पान कर मोह के अभाव से ज्ञान के लाभ को प्राप्त भया।।47।। तब गाढा जो स्नेह पाश उसको छेदकर सुलोचना को प्रतिबोध अपने पुत्र अनन्तवीर्य को राज देय छोटे भाई विजय कुमार सहित जिनेश्वर के समीप यति भया। चक्रवर्ती ने स्नेह के वश कर घना ही मने किया परन्तु न रहा जयकुमार के लार एक सौ आठ राजा पुत्र मित्र कलत्रों को तज राज भोग से विरक्त होय वीतराग के मार्ग विषे प्रवर्ते अर सुलोचना संसार का चरित्र असार जान अपनी सखियों सहित एक श्वेत वस्त्र धार ब्राह्मी सुन्दरी के समीप आर्या भई।।51।। जयकुमार द्वादशांग का धारक इकहत्तरवां गणधर भया अर सुलोचना आर्यिका ग्यारह अंग की धारक भई।।52।। अनेक राजा भूमिगोचरी अर विद्याधर महाव्रत के धारक भये, उनको ये लक्ष्मी असुहावनी लगी जैसे दुराचारणी स्त्री पती को अभावनी लागै।।53।।

प्रभु के चौरासी गणधर अर चौरासी हजार मुनि होते भये। गणधरों के नाम – वृषभसेन, कुंभ, दृढरथ, शत्रु गमन, देवशर्मा, धनदेव, नंदन, सोमदत्त, सुरदत्त, वायुशर्मा, सुबाहु, देवाग्नि, अग्निदेव, अग्निभूत, तेजस्वी, अग्निमित्र, हलधर, महीधर, माहेंद्र, वसुदेव, वसुंधर, अचल, मेरु, भूति, सर्वसह, यज्ञ, सर्वगुप्त, सर्वपर, सर्वदेव, विजय, विजयगुप्त, विजयमित्र, विजयश्री, परोक्ष, अपराजित, वसुमित्र, वसुसेण, साधुसैण, सत्यदेव सत्यदेव, सर्वगुप्त, मित्र, सत्यवान, विनित, संवर, ऋषिगुप्त, ऋषिदत्त, यज्ञदेव, यज्ञगुप्त, यज्ञमित्र, यज्ञदत्त, स्वयंभू, भगदत्त, भागल्गु, गुप्त, गुप्तफल्गु, मित्रफल्गु,

प्रजापति, सत्ययश, वरुण, धनवाहिक, महेंद्रदत्त तेजोराशि, महारथ, विनयश्रुत, महावल, सुविशाल, वज्र, वैर, चन्द्रसूर, मेघेश्वर, कच्छ, महाकच्छ, सुकछ, अतिबल भट्टावलि, नमि, विनमि, भद्रबल, नंदी, महानुभाव, नंदीमित्र, कामदेव, अनुपम ये 84 चौरासी गणधर जिनवर के भये। सात प्रकार के ऋषि ऋषभ के समवसरण में होते भये ।।71।। सैंतालीस सौ पचास महा भाग चतुर्दश पूर्व के धारक भये 4750।।72।।

अर इकतालीस सौ पचास शिष्य मुनि 4150 अर नव हजार अवधिज्ञानी, बीस हजार केवली अर बीस हजार छै सौ विक्रिया ऋद्धि के धारक जे अपनी विक्रिया कर चाहे तौ इन्द्रादिक देवों को जीतें अर बारह हजार सात सौ पचास विपुल मति मनःपर्यय के धारक अर वाद ऋद्धि के धारक जिनसे वाद कर कोऊ न जीते वे भी बारह हजार साढ़े सात सौ।।77।। अर पचास हजार आर्य्यका अर तीन लाख श्रावक अर श्राविका पांच लाख।।78।। भगवान की आयु चौरासी लाख पूर्व उनमें लाख पूर्व बाकी रहे तब मुनि भये एक हजार वर्ष तप किया हजार वर्ष घाट एक लाख पूर्व केवलज्ञान संयुक्त पृथ्वी विषे विहार किया अर अनेक भव्य भवसागर से तारे।।79।।

इस भांति संसार सागर के तारने को जो समर्थ रत्नत्रय रूप भाव तीर्थ उसे ही प्रगट किया, कल्प के अन्त तक पृथ्वी में प्रवर्तेगा। तीन भुवन का हितकारी धर्म उससे दृढ़कर कैलाश को तीर्थ करने अर्थ तीर्थनाथ कैलाश पर आरोहण किया भगवान का विहार अर स्थिति स्वतः स्वभाव है इच्छा पूर्वक नहीं जैसे पूर्ण वृष का सूर्य निषधाचल पर्वत पर तिष्टे है तैसे जगत् का भानु भगवान मुनिगण अर सुर समूह कर पूज्य कैलाश पर विराजे।।80।। उस पर्वत पर जिनेंद्र स्फटिकमणि की मनोग्य महा मनोहर शिला उस विषे तिष्टे योगों का निरोध किया अर चार अघातिया कर्मों को खपाय दश हजार योगीन्द्रों सहित जिनराज जगत् के शिखर पधारे। कैसा है वह जगत् शिखर, अनंत सुख ताका स्थानक है अर कैसे हैं जिनेंद्र, निर्मल कल्पवृक्ष की माला के धरणहारे जो सुरेंद्र उन कर पूजनीक हैं अथवा निर्मल कहिये शब्दार्थ मल कर वर्जित शुद्ध स्निग्धरादि अनेक जे छंद उन कर करे हैं भव्य जीव स्तुति जिनकी।।81।। तीन जगत् के गुरु भगवान निर्वाण पधारे तब मुनियों के समूह मौन पकड़ दूर जा बैठे अर देवों के समूह अर चक्रवर्त्यादिक समस्त राजादिक आयकर देवाधिदेव की देह को पुष्प सुगंध धूप निर्मल अक्षत द्वीप जल चन्दन फलादि द्रव्यों कर पूजा निर्वाण कल्याणक का समय साध यही प्रार्थना करते भये जो जिनगुण की संपत्ति रूप फल, ताकी प्राप्ति हमको होवे।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ ऋषभेश्वरनिर्वाणगमनवर्णनं नाम द्वादशः सर्गः।।12।।

दूसरा अधिकार
राजाओं के वंश की उत्पत्ति
तेरहवाँ सर्ग

अथानन्तर – गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहते भये कि हे श्रेणिक! अब तू राजाओं के वंश की उत्पत्ति सुन। ऋषभदेव को निर्वाण गये पीछे कैयक दिन भरत ने राज किया, फिर अर्ककीर्ति को राज्याभिषेक कराय आप जिन दीक्षा आदरी। कैसी है जिनदीक्षा, परिग्रह कहिये आत्मा ही का है अंगीकार जिस विषे फिर कैसी है जिन दीक्षा, उग्र कहिये अति कठिन है जिसे महाधीर ही धार सकै हैं अर कैसी है, अति चंचल जे इंद्री रूपी मृग उनके रोकने को बागुरा कहिये पाशि समान है। भरत ने पंच मुष्टियों कर केश उपारे मानो बंध की स्थिति ही उपारी लौंच किये पीछे एक मुहूर्त काल के अंत तत्काल केवलज्ञान उपजा।।2।। तब बत्तीस इन्द्र केवल पूजा कर (बत्तीस इंद्र में स्वर्ग के बारह, भुवनपतियों के दश, व्यंतरों के आठ अर सूर्य चन्द्र ये बत्तीस) भरत भगवान मोक्षमार्ग के दीपक ने चिरकाल पृथ्वी विषे विहार किया।।4।।

भरत का आयु चौरासी लाख पूर्व उसमें सतहत्तर लाख पूर्व तो कुमारकाल में गये, छै लाख पूर्व चक्रवर्ती पद में रहे अर लाख पूर्व केवल पाये पीछे पृथ्वी पर विहार कर जगत् के जीव संबोधे अर मुनि भये पीछे छद्मस्थ अवस्था तो अंतर्मुहूर्त रही।।5।। फिर वृषभसेनादि सहित कैलाश पर्वत से अघातिया कर्मों का क्षयकर मोक्ष पधारे फिर अर्ककीर्ति भरत का पुत्र उसके यशश्रुत पुत्र भया सो अर्ककीर्ति अपने पुत्रों को राज देय मुनि होय मोक्ष गया फिर उसके बलनामा पुत्र भया उसके सुबल उसके महाबल उसके अतिबल उसके अमृतबल सुभद्र उसके सागर अर उसके रवितेज उसके शशी उसके प्रभुतेज उसके प्रतापवान उसके अतिवीर्य उसके सुवीर्य उसके उदित प्राक्रमी उसके महेंद्रविक्रम उसके सूर्य उसके इन्द्र दुमन उसके महेंद्रजित।।10।। उसके विभू उसके अरिध्वंश उसके वीतभी उसके वृषभध्वज उसके गरुडांक उसके मृगांक इत्यादि पृथ्वीपति अनुक्रम कर सूर्यवंश विषै भये विस्तीर्ण है कीर्ति जिनकी वे पुत्रों विषे राज्य का भार थाप तप धर निर्वाण पधारे। इक्ष्वाकुवंश विषे सूर्यवंशी भये सो चौदह लाख पट्ट धार निर्वाण पधारे, तब एक राजा पाटधारी अहमिंद्र पद को प्राप्त भया।।13।।

अस्सी राजा मुक्ति गये तिनके अन्तर एक इंद्रपद का धारक भया।।14।। वे धीर राजधुरा को तज कर तप की धुरा धरी कई स्वर्ग गये कैयक मोक्ष गये इस भांति सूर्य वंश के उपजे अनेक भूप शुभ गति गये इत्यादि इक्षाकुवंश में अर्ककीर्ति की सन्तान के सूर्यवंशी राजा कहे अर भरत का दूजा भाई बाहूबली उसके पुत्र सोमजित इससे सोमवंश कहाया उसका पुत्र बलमहा।।16।। उसके सुबल उसके भुजवल इत्यदि

सोमवंशी अनेक राजा मोक्ष को प्राप्त भये पचास लाख कोडि सागर ऋषभ का तीर्थ प्रवर्ता।।10।।

फिर अजितनाथ भये इक्ष्वाकुवंश विषे दो वंश निपजे भरत के पुत्र से सूर्यवंश अर बाहूबली के पुत्र से सोमवंश सो दोनों ही वंशों में बहुत राजा मुक्ति पधारे अर उग्रवंश कुरुवंशी अनेक भूपति मोक्ष गये अर स्वर्ग लोक गये।।19।। नमि नामा विद्याधर उसके पुत्र रत्नमाली भया उसके रत्नवज्र उसके रत्नरथ उसके रत्नचिह्न उसके चन्द्ररथ उसके वज्रजंघ उसके वज्रसेन उसके वज्रदंड उसके वज्रध्वज उसके वज्रायुध उसके वज्र उसके सुवज्र उसके वज्रभृत।।22।। उसके वज्राभ उसके वज्रबाहु ताके वज्रांक उसके वज्रसुन्दर उसके वज्रमुख उसके वज्रपाणि उसके वज्रजानु उसके वज्रवान।।23।। उसके विद्युन्मुख उसके सुमुख उसके विद्युदंष्ट्र उसके विद्युत्वान् उसके विद्युत्प्रभ उसके विद्युद्वेग उसके विद्युत्।।24।। इत्यादि विद्याधरों के अधिपति अपने पुत्रों को राज देय तप धार सिद्ध भये अर कैयक स्वर्ग गये ऋषभ के तीर्थ विषे अनेक नृपति यति भये।।25।।

फिर ऋषभ को मुक्ति गये पचास लाख कोडि सागर व्यतीत भये। तब सर्वार्थसिद्धि से दूजे तीर्थंकर अजितनाथ प्रगट भये सो जैसा पंच कल्याणक का वर्णन ऋषभ का भया तैसा अजितनाथ का जानो।।26।। उसके समय दूजा चक्रवर्ती सगर भया जैसा निधिरत्न का स्वामी भरत प्रसिद्ध वैसा ही सगर।।27।। उसके आठ हजार पुत्र भये महा रमणीक है चेष्टा जिनकी अर भाइयों में परस्पर अधिक प्रीति सवों में बड़े का नाम अन्ह कुमार सो ये सब कैलाश पै जाय पहिले तो कैलाश के आठ पग तह किये फिर दंड रत्न कर कैलाश की चौगिरद पृथ्वी को खोदते भये सो कोप कर नागेंद्र ने भस्म किये।।28।। तव सगर चक्रवर्ती संसार की वृत्ति का वेत्ता पुत्रों का शोक तज अजितनाथ के समीप गया जिन दीक्षा धर कर्मों का नाशकर सिद्ध लोक गये।।29।। फिर सम्भवनाथ भये फिर अभिनन्दन उस पीछे सुमति उस पीछे पद्‌म।।30।। उस पीछे सुपार्श्व उस पीछे चंद्रप्रभ उस पीछे पुष्पदन्त उस पीछे दशवें शीतलनाथ।।31।। यह इक्ष्वाकुवंश प्रथम प्रगट भया इक्ष्वाकु वंशमध्य सूर्य्यवंश अर सोमवंश प्रगट भये अर कुरुवंश उग्रवंश नाथवंश ऋषभ के समय ही भये अर ऋषियों के समूह ऋषभ ही से प्रवर्ते इस भरत क्षेत्र विषे सागर अठारा कोड़ा कोड़ी भोगभूमि प्रवर्ती उस विषे महाव्रत अणुव्रतों की प्रवृत्ति न भई अर वर्ण आश्रम न भये। ऋषभ के समय से क्षत्रियों के वर्ण भये अर यति श्रावक के धर्म विस्तरे अर भूमिगोचरियों के अर विद्याधरों के वंश मैं तुम्हें कहे।।32।।

इस भांति गौतम गणधर राजा श्रेणिक से कही अर शीतलनाथ के समय हरिवंश प्रकट्या, उसकी कथा कहूं हूं सो तू सुन। कैसा है शीतलनाथ का समय, शुद्ध कहिये पवित्र है अर उज्ज्वल केवलज्ञान रूप दीपक के प्रकाश कारी भया जगत् विषे निरन्तर इन्द्रादिक देवों का आगम भया समवसरण विषे उस समय क्षत्रियों के वंश विषे हरिवंश प्रगटा सो जैसा जिनशासन विषे सत्य रूप वर्णन किया है तैसा तू सुन।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ इक्ष्वाकुवंशवर्णनं नाम त्रयोदशः सर्गः।।13।।

तीसरा अधिकार

हरिवंश की उत्पत्ति

चौदहवाँ सर्ग

अथानन्तर – गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहते भये कि श्रेणिक अब तू हरिवंश की उत्पत्ति सुन। वत्स नामा देश सब देशों में कैसा सोहे है, जैसे गाय से दोहने के समय वत्स कहिये बछरा सोहे तैसा सोहे है ।।1।। उस देश विषे कोशांबी नगर अति गंभीर है सो सोहे है जैसे शरीर के मध्य नाभी है सो नगरी यमुना के तीर बसै है। सो यमुना श्याम स्निग्ध जल कर सोहे है। उस विषे राजा के मन्दिर का प्रतिबिंब सोहें है।।2।। सो वह यह पुरी वप्र कहिये परकोटा अर प्राकार कहिये कोट अर परिखा कहिये खाई। उन कर वेष्टित सोहे है अर यह पुरी मन्दिर रूप मुख कर आकाशविषै उद्योत करे है, जिनके महल उच्चता कर मेघ मंडल को स्पर्शे है। यह पुरी स्निग्धा कहिये स्नेह की भरी है।।4।। वह पुरी अंधेरी रात्री विषे दोषाकर जो चन्द्रमा उसकी किरणों कर नहीं प्राप्त भया है प्रकाश जा विषे तो भी रत्नों की ज्योति के समूह कर प्रकाश रूप होय रही है। अर यह पुरी अन्धेरी रात्रि विषे भी रत्नों की कांति कर उद्योत को धरे है।।5।। उसका पति राजा सुमुख होता भया सो महा सुखी। अर जिसके राज में सकल प्रजा सुखी सो राजा सुमुख का प्रताप सर्व राजाओं पर प्रगट होता भया जैसे सूर्य अपनी किरणों कर मंडल को प्रकाशरूप करे सब दिशाओं में सूर्य की किरण विस्तरें तैसे राजा अपने सूर्य समान अपने कर रूपी किरणों कर सर्वत्र उद्योत करता भया। इसका हाथ सवों पर पड़ा। सब इसके वश भये।।6।। अर इसका धनुष अपने गुण कहिये फिडच कर इन्द्र धनुष को जीतता भया। कैसा है इन्द्र धनुष, जिसके गुण कहिए फिडच नहीं। निर्गुण है अर वर्णशंकर दोषकर युक्त है जिस विषे नाना प्रकार के वर्ण मिले हैं अर राजा का धनुष वर्णशंकर दोष से रहित है। अर गुणोंकर युक्त है।

भावार्थ – जो जारजातक होय उसे वर्णशंकर कहिये सो इन्द्र धनुष तो वर्णशंकर उसके दोष को धरे है अर इसका धनुष गुणरूप है दोष रूप नहीं। अर इस राजा को काम की उपमा दीजे। सो काम तो अनंग उसका रूप दृष्टिगोचर नहीं, अर यह राजा महा सुन्दर शरीर नवयौवन देखने योग्य अंग जिसका सो काम उपमा कैसे पावे।।8।। सो राजा धर्म शास्त्र के अर्थ विषे प्रवीण अर विशेष कला विशेष गुण उनको धरे अर दुष्टों का निग्रह अर सुजीवों पर अनुग्रह करने विषे समर्थ अर प्रजा का पालक।।9।। सो राजा छह ऋतु के भोग भोगवे जो ऋतु आवे उसमें उसी की सामग्री पूर्ण होय। कैसा है राजा नहीं है धर्म अर्थ की कमी जिसके अनेक जे राणी वे भई कमल वन की पंक्ति उन विषे भ्रमर होय रहा है।

www.vitragvani.com

अथानन्तर – वसन्त ऋतु आय प्राप्त भई। तब राजा इस वसन्त ऋतु के विलास का उद्यमी भया। वनों की पंक्ति पुष्प और पल्लव उनकी शोभाकर मनोहर भई अर आम्रों के वृक्ष नवीन आरक्त कोंपल उनकर संयुक्त लोकों चित्त हरते भये। मानों ये वन नाना प्रकार के वृक्षों कर फले–फूले राजा सुमुख को वनमाला के अनुराग ही के बढावनहारे हैं। अर केसूलों के फूलों के समूह अग्नि ज्वाला समान देदीप्यमान ऐसे भासते भये। मानो वियोगिनी को विरह की अग्नि कर जलावे हैं। अर अशोक वृक्ष घूंघरों के शब्दरूप स्त्रियों के सुन्दर कोमल चरण उनकर स्पर्शते हुए नवीन निकसे जे पल्लव उनकर शोभते भये।

भावार्थ – अशोक वृक्ष स्त्रियों के चरण स्पर्शकर फूले हैं। अर मोलश्री स्त्रियों के मुख के मधु के अखंड कुरला उनके पानकर पूर्ण भया है अर्थ जिसका सो पुष्पों कर फूलती भई।।15।।

भावार्थ – मौलश्री नारियों के बदन के मधु के कुरलाओं से प्रफुल्लित होय हैं अर कुरक जाति का वृक्ष भ्रमरों के शब्दकर महा मनोहर है सो योवनवान कामी पुरुष जे संयोगी हैं उनको सुख उपजावता भया अर जो विरही हैं उनको आतुरतारूप दुख उपजाता भया। जैसे श्रुत कहिए शास्त्र सो विवेकियों को रुचि उपजावे अर अविवेकियों को अरुचि उपजावे।।6।। फूले तिलक जाति के वृक्ष वे अपनी तिलक समान शोभा उस कर वन की लक्ष्मीरूप बनिता को अतिशयपने कर पुष्पवती करते भये। कैसी है वन की लक्ष्मीरूप वनिता, पाटल जाति के जे वृक्ष उनकी सुगंधता कर महा सुन्दर हैं।

भावार्थ – तिलक जाति के वृक्षों कर बन की पंक्ति अति शोभित दीखे है। अर वन की पंक्ति तो पाटलादि सुगंध वृक्षों कर महा सुन्दर है, रूपवान वनिता पाटलहू से अधिक सुगंधता अंग विषे धारे हैं।।17।। तिलक कर अति मनोहर है अर वन विषे सिंह केसरि जाति के वृक्ष सिंह के केसों की छटा की शोभा को धरे मानो विगसते नाग वृक्ष उनके समूह की पंक्ति के जीतने विषे अर्थ विस्तार है।।18।। जैसे सिंह के समूह वन विषें नाग कहिये हस्ती उनके जीतने अर्थ विचरे हैं। मधु कहिये वसंत सोई भया वल्लभ सो अपनी मालतीरूप बल्लभा घने दिनों के वियोगकर सूकि गई थी उसे अपने मिलापकर तत्काल प्रफुल्लित करता भया।।19।। अर वसंत विषें हिंडोले हींदने की क्रीडा उस विषे आसक्त स्त्रीजन महा सुन्दर गीत गावती भई हिंडोला ग्रामनामा जो राग उस कर अनुरागी है कंठ अर अधर जिनके। महा शोभा धरे वनिता वसंत विषे हिंडोला रागविषे गावती हिंडोलों पर झूले है।।20।।

हिरण जो हैं सो दूब के अंकूरे आप चरकर अपने मुख से हिरणी को देता भया अर हिरणी दूव के अंकूरे हिरण को देती भई। सो उसके मुख का उसको प्रिय।।22।। अर शल्ल की कहिये शालरि उसके पल्लव उल्हासरूप उसके ग्रास विषे है लालसा जिनको ऐसे गज को हथिणी अपनी सूंडकर ग्रास देती भई सो हथिनी के मुख के स्पर्श कर वे पल्लव गजों को अति प्रिय लागे। वे हस्ति हथणियों

के स्पर्श के सुख कर आंधे होय रहे हैं।।23।। वसंत ऋतु विषे मधु कहिये मकरंद उसके पानकर उन्मत्त भये, भ्रमर मिष्ट शब्द करे हैं। उनके शब्दकर वन शोभित होय रहा है। वे भ्रमर परस्पर शब्द करते मानो वन की सुगंधता को सूंघे हैं।

भावार्थ – पुष्पों की सुगंधता अर भ्रमरों की गुंजार वन विषे विस्तर रही है अर कोयल से भी अधिक है सुन्दर कंठ जिसका ऐसी उस नगरी की नारी मनोहर गीत गावती भई। उनको सुनकर कोयल भी जीता गई। मानो कोयल भी कामिनी की भाषा सीखा चाहे है।।25।। मधुर कहिये भ्रमर अर कोयल मिष्ट शब्द के उच्चारण कर बसंत के यश गावे हैं। तहां औरों की कहा कथा।

भावार्थ – जिसका यश पशु हू गावें तो मनुष्यों की क्या बात। इस भांति सबही जन के मन का हरणहारा वसंत समय जब आया। तब राजा वन विषे विहार के अर्थ अपना मन करता भया। राजा का मन मदन कर विभ्रम को धरे है।।27।। राजा अद्भुत वस्त्राभरण पहिरे हस्ती पर आरूढ भया अर गज को बहुत सिंगारा है नाना प्रकार के आभरण गज को पहराए हैं। अखंड मंडल जो चंद्रमा उस समान उज्ज्वल छत्र राजा के सिर पर फिरे है, उसकर सूर्य की प्रभा भी दब गई।।28।। राजा अन्य राजावों के समूह कर शोभित जैसे समुद्र जल के प्रवाह कर पूरित। सो राजा महल से राज मार्ग होय वन में जाता था। बन्दीजनों के समूह विरद वखानते हुवे।।29।। वह राजा प्रजा के हृदय विषे सदा बसे है। सो नगर की नारी साक्षात् वसंत का स्वरूप भूप को देखती भईं।।30।। नगर की नर नारी सब राजा को आसीस दे हैं। जो तुम वृद्धि को प्राप्त होवो सदा आनन्द रूप रहो। हाथ जोड़ सीस नवाय नमस्कार करे हैं। राजा को देख लोक आनन्द कर भर गए हैं। उस समय स्त्रियों के समूह में एक स्त्री नेत्रों की अंजुलिकर नृप का रूप अमृत अति रुचिकर पीवती भई अनेक स्त्रियों के मध्य में वह एक चित्त की हरणकारी साक्षात् रति समान सो राजा ने भी निरखी।।32।। जिसका मुख चन्द्रसमान अर नेत्र युगल कमल दल समान अर होंठ किंदूरी समान, कंठ कोयल समान, कटि केहरि समान।।33।। अर कर कहिये हाथ चरण कहिये पैर सबही अंग प्रशंसा योग्य।।34।। सो राजा देखकर अति अनुरागी भया अपने मन की प्रेरी चंचल दृष्टि उसके वदन पर जाय पड़ी सो राजा पीछे फेरने को समर्थ न भया।

भावार्थ – नृप की दृष्टि लागी सो पीछे न फिरे जो राजा अति अनुरक्त होय वाकी ओर चितेर रहा।।35।। अपने मन में विचारता भया। जो यह कौन की स्त्री है। अपने रूप पाशिकर मेरे मन को बांधे अर खेंचे है। यह नवयौवन मृग नेत्री स्त्रियों की सृष्टि विषे अनुपम है।।36।। यह मन की हरणहारी जो न भोगूं तो मेरा नव यौवन ऐश्वर्य सब वृथा है।।37।। परदारा का सेवन सकल जगत से वैर करना अर अति अयोग्य यह भी कठिन। अर मन विषयाभिलाष कर दौड़ा है।।38।। उसका थांभना भी कठिन। ये दोनों ही बातें अति विषम हैं। यह विचार कर राजा ने लोकापवाद सहना तो

अंगीकार किया अर मन को विषय विकार कर थांभ न सका। राजा का मन उस पर अत्यंत आसक्त भया। तब उसके हरने के लिये बुद्धि करी। राजा मन की व्यथा जीत न सका।

जैसे सूर्य प्रभावंत है परन्तु अस्त समय मंद हो जाय है, वैसे राजा लौकिक आचार का जानन हारा अर प्रकाशमान था तथापि काम के आताप कर मंदबुद्धि होय गया।।40।। अर वह बनमाला भी महारूपवान सो राजा सुमुख के रूप को देखकर सिथल अंग होय गई। सो अपना मन थांभ न सकी। उसका मन भी अभिलाष के हींडोला हींदता भया।।41।। वह अपने मन के अनुराग को बाहर प्रगट विखावती भई।

कैसे हैं अनुराग भाव, नाना प्रकार के स्पर्श के रस उनका प्रगटपना सोहे है फल का उदय जिनके दूर ही से कटाक्ष का चलावना अर राजा के रूप विषे नेत्रों का लगावना सो वह राजा के चंचल मन को अपने चंचल नेत्रों कर हरती भई। दोनों की आंखें अर मन परस्पर लगे।।43।। नेत्रों की वक्र चितवन कर बनमाला राजा सुमुख के समर कहिए काम उसका उद्दीपन करती भई। स्नेह के भरे नेत्र दोनों के तिनही कर हित के आलाप भये अर दोनों ही विह्वल हो गये। सो जीभतें बोलने का अवसर न पाया।

भावार्थ – मन अर नेत्र तो दोनों के मिल गये। अर नेत्रों ही में वतरावन होइ गई। बोलने का अवसर दोनों में न भया। चित्त दोनों के विह्वल भये।।45।। वे दोनों न छूटे ऐसा जो प्रेम का बंधन उस कर बंधे स्नेह के शिखर आरूढ भये। मन के अभिलाष का दुर्लभ फल जो संभोग का लाभ एकांत विषे मिलाप उसका है अभिलाष जिनके।।46।। महा अनुरक्त जो वह बनमाला उसका चित्त तो राजा लिया अर अपना चित्त बाह दिया। नेत्रों ही में यह लीलाकर राजा नगरी से बाहिर वन में गया। मानो राजा परस्पर मिलाप की साई दे गया अर ले गया वसंत के मुकुट तुल्य जमुनोत्तंस नामा वन नंदन वन समान वहां नरेंद्र प्रवेश करता भया।।47।। वह वन महा मनोग्य जिस विषे नारेल दाडिम द्राक्षा कमरष, नारंगी इत्यादि वृक्ष फल रहे। अर नागलता, माधवी लता, इत्यादि अनेक लता फूल रही हैं।।49।। सो राजा राणियों सहित वन विषे विहार करते भये। फिर अपने समान वय के जे मित्र महा अनुकूल कहिये सन्मुख राजाओं के पुत्र उन सहित रमता भया।।50।। किंचित् काल उस रमणीक वन विषे अनेक क्रीड़ायें करीं। अर बहुत लोकों कर वह बन भरा है। तो भी बनमाला विन शून्य भासता भया।।51।। बनमाला के वियोग से राजा सुमुख चिंताकर दुर्मुख होता भया। विषयानुराग कर हरा गया है हृदय जिसका ऐसा ही ये अंध राजा वन से नगर विषे गया। सो राजा किंचित् काल सभा विषे शून्य चित्त तिष्ठा।।52।।

फिर राजा को सुमति नाम मंत्री एकांत विषे बहुत विनयकर पूछता भया – हे प्रभो! आज

चिंतावान् क्यों हो।।53।। इक छत्र तुम्हारा राज्य अर सब प्रजा तुमको अनुरागी तुम्हारे राज को सब चाहें। अर तुम्हारे प्रतापकर सब सुखी अर तुम्हारे प्रतापकर सब राजा तुम्हारी आज्ञा सिर पर धरे हैं। कोऊ तुमसे बराबरी करणहारा नहीं।।54।। अर याचकों को मनवांछित दान कर सब अर्थी तृप्त भये हैं। अर तुम सब बात निपुण हो। सो स्नेहकर राज लोक भी बहुत पोषे हैं। तुम्हारे प्रसाद कर वे बहुत प्रसन्न हैं, तुम सबही का सन्मान करो हो। सो किसी की अरुचि तुमसे नहीं, इससे आज उदासी काहे की है। जो अपने मन का दुख होय सो अपना प्राण समान मित्र होय उसकर वाका उपाय कर मन का दुख मिटे है। यह जगत् की रीति है। उससे हे प्रभो! मन की बारता मोसे कहो। जो अव ही यत्न कर तुम्हारे मन की चिंता हरूं अर आपकी निश्चिंतता कर प्रजा की निश्चिंतता है। राजा सुखी तो प्रजा सुखी। यह लोक विषे प्रसिद्ध है।।59।। इस भांति सुमति नामा मन्त्री सुमुख राजा से कही।

तब राजा कहता भया। हे मित्र! मैंने आज पर बधू देखी। उसके देखने कर मेरा मन उसके वश भया है। जैसे मंत्र विद्या कर देव वश होय है।।60।। ऐसी रूपवान अर ऐसी आभरणादि कर शोभित इस जगत् में कोई नजर न आवे। बहुत नहीं सो वाके देखने कर मेरा चित्त चलायमान भया अर उसकी बाह्य चेष्टाकर उसका चित्त भी मो विषे अनुरक्त भया भासै है।।61।।

ये शब्द सुनकर मंत्री ने कही – हे नाथ! मैं वह लखी सो वीरक नामा सेठ की बनमाला नामा वधू है।।62।। तब राजा ने कही जो आज मुझे उसका संयोग न होय तो मेरा जीवना मत जानों। वह वक्र भौंह की धारणहारी मेरे मन में चुभ रही है।।62।। अर जानूं हूँ मो विना वह भी एक दिवस न रह सके। अर उस बिना मैं भी न रह सकूं। तातें तुम शीघ्र ही उपाय करो।।63।। अर मैं जानूं हूँ इस कार्य से इस लोक विषे अपयश अर परलोक विषे अनर्थ परन्तु मूढ जीव, कार्य अकार्य को न देखे जैसे जन्म का अन्ध कछु ही न देखे। अकार्य विषे प्रवृत्ति है बुद्धि मेरी। सो तुम मने मत करो। जो जीतव्य है तो पाप के शांत करने को अनेक यत्न हैं।।64।। राजा ये वचन कहे। सो यद्यपि न्याय रूप न थे तथापि मंत्री न माने। राजाओं को विपत्ति निकट आवे तब मंत्री ही निवारे मंत्री राजा से सन्मुख होय कहता भया। हे प्रभो! यह कार्य करने का नहीं परन्तु तुम्हारे प्राण पीड़ित होय सो हम कैसे देख सकें, इससे तुम चिंता को तजो। आज ही बनमाला तुमको मिलावेंगे। जैसे भोगी पुरुष वन के पुष्पों की माला कंठ विषे पहरे अर उरसों लगावे तैसे तुम बनमाला को कण्ठ से लगावोगे।।66।। तुम स्नान करो। अर पूर्ववत् भलीभांति भोजन करो।।67।। सुगन्ध का लेप करो महा मनोहर वस्त्राभरण पहरौ। पुष्पमाला कर तांबूल अंगीकार करो।।67।। इस भांति मंत्री महीपति से विनती करी तब राजा मंत्री के वचन से प्रमाण करता भया।

यद्यपि किसी वस्तु विषे मन नाहीं मन तो बनमाला में है। परन्तु मंत्री के प्रसन्नता के अर्थ स्नान

भोजनादि करता भया।।68।। सुमुख का अभिप्राय जान मानो कृपाकर सूर्य पश्चिम की ओर आया अपनी किरण संकोची। जब सूर्य अस्ताचल की ओर सन्मुख भया तब तेज घटा। तब सब लोग उद्यम छोड़ निरुद्यमी भये। चकवा चकवियों के स्नेह का दृष्टि कर थांभने का घना ही यत्न किया। परन्तु क्षणमात्र में दिनकर अस्त हो गया।।70।। सांझ की ललाई कर अंबर अरुण हो गया।।71।। जैसे बनमाला के अत्यंत अनुराग कर सुमुख रागरूप भासे कमलों का वन संकोच गया। अर मित्र कहिये सूर्य उसके उदय कर वन का विकाश था सो मित्र अस्त भया तब कमल वन मुदित होय गया सो यह उचित ही है मित्र की आपदा विषे कौन प्रफुल्लित होय, कोई न होय।।73।। अर क्षणमात्र में संध्या की ललाई रही फिर ललाई जाती रही। सर्वत्र अंधकार फैल गया। सो मानो जगत् ने अरुण वस्त्र तज नील पट पहिरे। जब रात्रि का समय विशेष भया तब नेत्र वाले भी न देख सकें, अन्धकार का अत्यन्त विस्तार भया।।75।।

उस समय सुमति नामा मंत्री ने राजा सुमुख की आज्ञा से बनमाला के समीप आत्रेयी नामा दूती पठाई। सो बनमाला के निकट गई। उसने दूती का बहुत सन्मान किया। आसन दिया तब दूती उसकी बहुत प्रशंसा कर एकांत विषे कहती भई। वह पापिनी दूती अन्याय विषे अति निपुण।।75।। दूती कहे है – हे बनमाले! हे प्रिये! हे वत्से! कहिए पुत्री! आज तू चिन्तावती क्यों दीखे है। चित्त की उदासी का मुझे वृत्तान्त कहो। तू पतिसों रूसी है कि पति ने तोको रुसाई है, वीरक सेठ के तो एक तू ही है, कोप का कारण क्या या कोई अर कारण है। सो चित्त का अभिप्राय मुझे कहो।।79।। हे पुत्री! सर्व रहस्य विषे मोहि परख है, मोको तेरे मनवांछित वस्तु दुर्लभ कहा। जब यह वचन दूती ने कहे तब बनमाला इसकी प्रार्थना से अपने चित्त की वार्ता नीठि नीठि कहती भई, उष्ण श्वास कर कुमलाय गये हैं होंठ जिसके बनमाला कहे है – हे माता! तो विना मेरे विश्राम का स्थानक अर कौन।

अर मंत्र जब छह कान भया तब प्रकट होय जाय तातें मंत्र को यत्न से गुप्त राखना।।80।। मैंने आज महा रूपवान् सुमुख राजा देखा जिस समान सुन्दर मुख किसी पुरुष का नहीं। सो देखने मात्र ही से वह मेरे उर विषे आ वसा है। अर मदन ने मेरे उर विषे प्रवेश किया है।।81।। सो प्रथम तो यह अभिलाषा दुर्ल्लभ फिर इस कार्य के शत्रु अनेक उन कर होय न सके। अर यह दुष्ट हृदय उसकी अभिलाषा रूप अग्नि जीव को दाह उपजावे है सो मिटे नहीं। मेरा हृदय चन्दन के लेप कर लिप्त भया भी दाह को नाहीं तजे है। अर बाहरला उपचार माहिले दाह को कैसे मेटे। भीगे वस्त्र मेरे अंग से लगाइए। तो तत्काल सूक जाय हैं। अति उष्ण विषे अल्प शीत का स्पर्श क्या करे। पल्लवों की सेज भी तत्काल कुम्हलाय जाय। ऐसा दाह कर उष्णगात्र मेरा उस विषे अल्प शीत कहा करे।।85।। उसके अंग स्पर्श विना मेरे मन का आताप न मिटे। इससे हे माता! मो पर कृपा कर मेरा महीपति से मिलाप होय सो कर।।86।। अर उनके मन की वृत्ति भी मेरे देख ने से मेरे मनोरथ रूप होय गई है। यह तू

निश्चय जान सर्व आकार कर मेरे लखिवे में उसके मन की वृत्ति मोहित भई, मैं यह जानी है। इसलिये हे प्रवीणे! हम दोनों कामाग्नि से तप्त हैं। सो तू एकान्त विषे सुख से मिलाय तू समय की जाननहारी है। तप्त वस्तु से तप्त मिल जाय है। ये वचन बनमाला के दूती सुन कर अति हर्षित भई। उसके वचन में उसका भाव सूचा गया है।

तब दूती कहती भई, हे वत्से! वत्सदेश का ईश्वर राजा सुमुख उसने तुम्हारे पास मुझे भेजी। तेरे रूप कर उसका मन हरा गया है। तांते तू चल मैं तुझे उसे मिलाऊं। इस भांति दूती के वचन सुन बनमाला अति कामातुर पति के परोक्ष दूती के संग सुमुख पै गई शीघ्र ही राजमन्दिर विषे प्रवेश किया।।91।। राजा सुमुख यह सुन्दरवदनी मन की हरणहारी उसे निरख कर आदर से कहता भया – आओ आओ ऐसे मिष्ट वचन कह वह मोहित इसे मोहरूपी करता भया अर अपने हस्त कर वह मदनापुर वनमाला को निज सेज विषे शयन करावता भया।।92।। सो इन दोनों के चरित्र देखने को केतीक रात्रि गए निशाकर उदय भया।।94।। सो चन्द्रमा के किरणों के उदय होते कुमुदिनी विगसी। जैसे सुमुख के कर स्पर्श से बनमाला का चित्त विगसे। प्रेम सम्बन्ध की वृद्धि के अर्थि वे दोनों विषयाभिलाषी अनेक प्रकार भाव परस्पर प्रगट करते भये। निज स्त्री का सेवन भी जिनश्रुत विषे निषेधा है वह भी भवभ्रमण का कारण है तो परदारा संगम के पाप की कहा बात। यह तो प्रत्यक्ष ही कुगति का कारण ही है। धिक्कार होवे इस मदन को जो मन को मोहित कर अधर्म विषे प्रवर्तावे है।।100।।

वे दोनों नाना प्रकार की क्रीडा कर श्रमयुक्त होय शय्या पर बैठे प्रेम कर बन्ध्या है चित्त जिनका विषय की बिदग्धता कर हता गया है चित्त जिसका यह दोनों निद्रा में लीन होय गए हैं। सो इनका वृत्तान्त देखवे को मानो प्रभात संध्या प्रगटी पहली सन्ध्या रात्रि के आगम की अति सुन्दर सो चन्द्रमा सहित राग की बढ़ावनहरी होती भई सो रात्रि समय चित्त की वृत्ति वह सुन्दरवदनी सुमुख ने नवीन वधू की नाईं भोगी जैसे नवीन बनमाला पहर रागी पुरुष हर्षित होय है। तैसे यह विषायानुरागी बनमाला के संगम कर प्रसन्न भया।।3।। राजा सुमुख सेज पर बनमाला सहित शयन करता था उसे सूर्य्य सरोवर विषे कमलिनी की नाईं प्रवोधित करता भया। राजा की पक्ष प्रबोध कहिये जागना। अर कमलों की पक्ष प्रबोध कहिये फूलना सो सूर्य के प्रकाश कर राजा जागा अर कमल फूले। उदयाचल पर्वत विषे तिष्ठता सूर्य तिमिर को हर लोक विषे उद्योत करता भया। सूतों को जगावता भया जैसे जिनराज सिंहासन पर विराजा, अविद्या रूप रात्रि को हरे मोह रूप तिमिर को मेटे अनादि काल से सूते को जगाबे, प्रतिबुद्ध कर भव्यों के हृदय रूपी कमल प्रफुल्लित होय तैसे सूर्य के उदय कर लोक जागे अर तिमिर भागा।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ सुमुखवनमालासंभोगवर्णनो नाम चतुर्दशः सर्गः।।14।।

पन्द्रहवाँ सर्ग

अथानन्तर – फूले कमलों के वन उनको स्पर्श कर आई तो शीतल मन्द सुगन्ध पवन उस कर हरा गया है शरीर का खेद जिनका ऐसे राजा अर बनमाला दोनों निद्रा से रहित भए। सेज महा कोमल सुर नदी की तरंग समान उज्ज्वल। अर मले गए हैं पुष्पों के समूह जिस विषे उस पर राजा बनमाला सहित जाग्रत होय बैठे सो राजा बल्लभा सहित कैसा शोभता भया जैसा तरुण हंस मद का भरा हंसनी सहित नदी के पुलिन विषे सोहे है। वे वधू अर वर रूप यौवन कर श्रेष्ठ तिनका हृदय क्षण मात्र भी वियोग को न सह सकता भया। जैसे रात्रि विषे विरहनी चकवी चकवा पंखी तिनका मन क्षणमात्र भी वियोग न सहार सके सो दशा इनकी भई।

कैसे हैं दोऊ, मनोहर है राग रूप चेष्टा जिनकी, राजा बनमाला को उसके घर न पठावता भया। अपने घर की राखता भया जिसने जिस वस्तु का रस पाया उसे वह न तजे। मनवांछित दुर्ल्लभ वस्तु एकांत में मिले उसे रागी जन छोड़ न सके।।4।। उसका मन नृप को न छोड़ सक्या सुमुख जेती राणी हैं उनमें पुरुष जे पटराणी उन हू में यह मुख्य ठहरी। सब राजलोक में सेठिनी शिरोभाग भई। रूप-यौवन की सुन्दरता, लावण्यता, चातुर्यता इत्यादि गुणों कर बनमाला पटराणी यहां पति से अति प्रतिष्ठा पावती भई जो सुमुख के घर में इसे सुलभ भया सो अर को दुर्लभ। भर्ता के घर विषे यह सुख कहां? सो दुराचारणी घर को विस्मरण होय गई।।5।।

इस भांति कैयक दिन व्यतीत हुए। एक समय राजा के घर वरधर्म नामा मुनि आहार लेने आए। जब कोई गृहस्थ का महाभाग्य होय तब मुनि का आगमन होय जैसे अनचिन्ती निधि घर में आवे वैसे तपोनिधि अनचीते आए। कैसे हैं मुनि, परम दर्शनविशुद्धि कर विशुद्ध है बुद्धि जिनकी अर ज्ञान की अधिकता कर जाने हैं पदार्थ जिन्होंने अर व्रत, समिति, गुप्ति इन तीन शुद्धतामय जो तेरह विधि चारित्र है उन कर पवित्र है शरीर जिनका।।7।। अर अनशन अध्ययनादि तप रूप लक्ष्मी कर शोभित है शरीर जिनका। सो कैसी है तपोलक्ष्मी? महा निर्मल है अर शांत भाव कर अस्त किए हैं समस्त विकार जिन्होंने। अर महा निर्जरा की करणहारी है अर महा महिमा कर मण्डित है। मुनि समान महिमा महेन्द्र की नहीं। जैसे जरा कर युक्त मनुष्य लोक विषे प्रसिद्ध होय तैसे विपुल निर्जरा कर युक्त योगी सोहता भया। जीते हैं दोष कषाय परीसह जिसने। अर निग्रह किया है इन्द्रियों का चंचल भाव जिसने। ऐसे महामुनि उनको गृह विषे आया जान राजा सुमुख तत्काल आसन से उठा।।9।। हर्ष के भार कर वशी भया है मन जिसका। सो विवाहित धर्मपत्नी सहित सन्मुख जाय प्रदक्षिणा देय विनय सहित महा पवित्र जे साधु उनको पड़गाहवता भया। महा पवित्र मणियों का आंगन उस विषे मुनीन्द्र को आहार के अर्थि थापता भया।।10।। विवाहित धर्मपत्नी उसके करतें दैदीप्यमान कनक की झारी लेय राजा

www.vitragvani.com

जल धारा कर अपने हाथों कर मुनि के पांव धोवता भया।।11।। अर सुगन्ध चन्दन अर उज्ज्वल अक्षत अर मनोहर पुष्प अर नैवेद्य दीप धूप फल इन अष्ट द्रव्यों कर मुनि को पूज अर मन वचन काय कर बारम्बार बन्द, विधि पूर्वक आहार दान देता भया।।12।। सो मुनि दान के फल कर सुमुख भले मनतें पुण्य का बन्ध करता भया अर पाप को भेद्या।।13।। वे महामुनि बहुत दिन के अनसन व्रत के धारक। अर महाक्षीण शरीर शरीर के आधार निमित्त किया है पारणा जिन्होंने। दान के करणहारेन को किया है सुख का उदय जिसने सो मुनि तो आहार कर शीघ्र ही विहार कर गए। तत्त्व का है विचार जिनके।।14।।

अथानन्तर – पुण्य के फल कर युक्त जो सुमुख नृप उसका बनमाला सहित सुख से काल व्यतीत होय। कैसा है सुमुख, जो परनारी का अंगीकार जो महा कुचेष्टा उसका है पश्चात्ताप जिसके इस कार्य कर जीव के सकल कल्याण का नाश होय है। एक दिन राजा गुणों की माला जो बनमाला उस सहित सुगन्ध गृह विषे सुन्दर सेज विषे शयन करता हुआ। सो कैसा है सुगन्ध गृह, मणियों के जो समूह उनकी छबि कर विस्तर रहा है प्रकाश जिस विषे। फिर कैसा है विहिता दरे कहिये राजा ने किया है बहुत आदर जिसका राजा के उस मन्दिर से बहुत प्रीति है उस मन्दिर मैं सेज पर पौढ़े थे। सो दोनों का आयु पूर्ण भया। उन पर दैवयोग से विजुरी पड़ी।।17।। सो वे दोनों तत्काल निर्जीव हो गए। कैसे हैं दोनों, प्रीति विषे रागी चित्त जिनके सो कार्य तो ऐसा किया था जिस कर कुगति ही जाय परन्तु मुनि दान और अनुमोदन के फल से वे दोनों मर कर विजयार्द्ध गिरि, विषे विद्याधरों के जन्म पावते भए। सो विद्याधर पद के विस्तीर्ण सुख दान के प्रभाव कर पावते भए।।18।। कैसा है विजयार्द्ध गिरि जिसकी दोनों श्रेणी समुद्र को स्पर्शे हैं। पूर्व की अनी तो पूर्व के समुद्र विषे जाय मिली है। अर पश्चिम की अनी पश्चिम के समुद्र में जाय लगी है। अर वह गिरि अपनी उज्ज्वलता कर चन्द्रमा की अर क्षीरसागर की उज्ज्वलता को हरे है अर रूपमय राजे है मूर्ति जिसकी मानों पृथिवीरूप वधू का विस्तीर्ण छोर ही है पृथिवी से दश योजन ऊंचे चढ़िये वहां दोय श्रेणी हैं। एक दक्षिण एक उत्तर मानों दोनों श्रेणी इस गिरि के बाहु युगल ही हैं।

उन दोनों श्रेणियों में ऐसी ऐसी खेचर पुरी हैं। मानों दूजी भोगभूमि ही हैं।।20।। सो दोनों श्रेणियों में अनादि निधन एक सौ दश पुरी हैं अर वह गिरि पच्चीस योजन ऊंचा अर पचास योजन चौड़ा अर समुद्रान्त लम्बा।।21।। उस गिरि विषे जो उत्तर श्रेणी उनमें हरिपुर नामा नगर सो महा सुख का स्थानक, जहां किसी प्रकार खेद न हो मानो वह हरिपुर हरि कहिए इन्द्र अथवा वासुदेव उनही के पुर समान सुन्दर है।।22।। उस पुर का रक्षक राजा पवनगिरि विद्याधर। उसके महा गुणवती कलावती कुलवन्ती मृगावती नामा राणी उसके राजा सुमुख का जीव पुत्र भया।।24।।

अर उसी ही गिरि की उत्तर श्रेणी विषे एक मेघपुर नामा नगर बड़ा अपार है विभव जिस विषे

मणियों के मंदिरों की है पंक्ति जा विषे, राजा तहां पवनवेग विद्याधर राज करे सो राजा रिपु कहिये वैरी तेई भए माते हाथी उनके समूह के मर्दन करने को केहरि कहिये सिंहसमान उसके मनोहरी नामा रानी महासुन्दर सो रति विषे राजा के मन कूं हरे सो महा पतिव्रता जिसके अति प्यारी।।26।। तिन दोनों के वह बनमाला सुमुख की सहचरी मनोरमा नामा पुत्री भई सो जगत विषे चंद्रकला समान महामनोहर सुमुख से पूर्व भव का है स्नेह जिसके वे दोनों बालक दोनों नृपों के घर सुख से लडाए थके वृद्धि को प्राप्त होते भए। कैसे हैं ये आनंदकारी है क्रीडा जिनकी मुलकण सहित सुन्दर है मुख जिनका सो अपनी हथेलियों कर मसली हैं आंखें जिन्होंने सो अति सोहते भए। अर वचन के उच्चारण विषे इनके मुख की ध्वनि माता पितादि सुजन वर्गों के मन को हर्ष उपजावती भई। इनकी चेष्टा देख देख सुजन लोग खुशी होते भए।।29।। अर जे दोनों बालक भोग भूमि के बालकों की चेष्टा को जीते ऐसी सुन्दर चेष्टा धारते भए अर ये दोनों अपनी माता के स्तन पीवते अपनी कांति कर देव देवियों की कान्ति को उलंघते भए।।30।। ज्यूं ज्यूं दिन दिन इनका शरीर वृद्धि को प्राप्त भया त्यूं त्यूं दिन दिन कला गुण वधते भए ज्यूं ज्यूं बाल अवस्था व्यतीत भई त्यूं त्यूं इनका तन परम कांति को धरता भया।।31।। उन युगल बालकों ने अपने अपने मंदिर में साधी हैं समस्त खेचरी विद्या उनकर अति सोहते भए सुन्दर यौवन की दीप्ति कर मनुष्यों के मन हरणहारे गुणकर महा मनोहर भासते भए।।32।।

अथानन्तर – मेघपुर के पति की पुत्री बनमाला का जीव। उससे हरिपुर के राजा का पुत्र सुमुख का जीव उससे सगाई भई। वह कन्या साक्षात् कमल समान। सो माता पिता ने विधि से परिणाई।।33।। सो वह वर उस वधू कूं परण कर संसार सुख भोगता भया। कैसी है वह वधू, मदन रूप नाटकाचार्य्य ने सुरतिरूप नाटक विषे प्रवीण करी है। अर वह महा विनय रूपनी है अर नवरस के भाव उन कर संयुक्त है।।34।। वह राजपुत्र उस राजपुत्री सहित राज मंदिर विषे रमता भया। जैसे देव देवियों सहित नंदन वन विषे रमें, तैसे वह वल्लभ वल्लभा सहित नंदन वन समान सुन्दर वन उन में रमता भया। वे कैसे हैं वन, महा सुगंध सुरतरु समान हैं वृक्ष जहां। अगर चंदन आदि अनेक जाति के हैं तरुवर जहां अर उन्नत हैं, चंदन के तरुवर जहां।।35।। सो राजपुत्र उस कांता सहित कुलाचल पर्वत अर मानसरोवर अर गंगा नदियों के तट विषे राग सहित रमता भया। वह कांता अति सुन्दर समस्त खेद रहित आनन्द रूप है। सो ये दंपति अढाई द्वीप विषे जे सुन्दर स्थल हैं उन विषे ये क्रीडा करते भए। कदाचित् भोगभूमि विषे कल्पवृक्ष के तले रमते भए।।36।। उस कांता कर वह कंत कल्पवासी देव के से सुख भोगता भया। विजयार्द्धगिरि के पुर, सुरपुर समान उनमें निवास। कैसे हैं वे पुर, बाजे हैं दिव्यध्वनि के पायन के नुपूर जहां अर इस पृथ्वी विषे जो वस्तु अर ठौर दुर्लभ है। विजयार्द्धगिरि विषे सब सुलभ है। ये दंपति मनवांछित अद्भुत सुख निरंतर भोगते भए।।37।।

अथानन्तर – वह वीरक सेठ दैव का मारा बनमाला के विरह से सुखकूं न प्राप्त होता भया। महा

कोमल शीतल पल्लव की सेज उस विषे भी आताप रहित न होता भया कैसी है वह पल्लव की सेज जा विषे दुःख का लेश भी नहीं उस विषे यह दाह दुःख भोगता भया। इस विरही के हृदय का दाह रात्रि विषे चंद्रमा की किरण के समूह कर सरोवर के तीर भी न मिटता भया। कैसी है चंद्रमा की किरण? हिम कहिए बरफ उससे अधिक शीतल है। जैसे रात्रि विषे चकवी ते विछुरा जो चकवा उसके हृदय का दाह सरोवर के तीर भी चंद्रमा की किरणों कर न मिटे तैसे इसका न मिटा। जैसे इस जगत् विषे योगीश्वर का मन किसी वस्तु विषे न रमे तैसे इस वियोगी का मन किसी ठौर न रमता भया।।39।।

सो वीरक नामा सेठ चिरकाल विरह की व्यथा भोग कर कैइक दिन में दुःख का मूल जो गृहस्थाश्रम उसको तज कर जिनभाषित मुनि का धर्म अंगीकार करता भया। सो मुनि का धर्म ही शरणार्थिन को बड़ा शरण है। कैसा है वीरक? वश किये हैं मन इन्द्री जिसने।।40।। सो वीरक मुनि शरीर का है शोषण जिस विषे ऐसा तप कर पहिले स्वर्ग में देव भया। सो स्वर्ग सुख रूप सागर का बढावनहारा है। अर देवों को हर्ष का उपजावनहारा है, अर मुनि का धर्म मनोभव जो काम ताका चूर्ण करणहारा है निर्वाण का कारण है। मुनि जो तद्भव मोक्ष न होय तो स्वर्ग के सुख भोग नर होय निर्वाण पद पावे।।41।। सो देव सकल आभूषण कर शोभित अनेक देवांगना के समूह आदि विस्तीर्ण है परिग्रह जिसके सो सुख रूप अमृत के सागर विषे मग्न हुवा तिष्ठता भया रागरूप है भाव जिसके।।43।।

सो देव एकबार स्वर्ग विषे देवांगनाओं के समूह में तिष्टता पूर्व भव की अवधि कर विचारता भया सो पूर्व भव की प्रिया बनमाला सो उसे चितारी। जीव के राग भाव तजना कठिन है। सुमुख राजा ने किया जो अपना अपमान सो अवधि कर देव ने जाना सो जानकर द्वेष को प्राप्त भया। फिर अवधि कर दोनों का जन्म विद्याधरों में जाना। वे दोनों इस जन्म विषे भी पति पत्नी भए हैं। वे दोनों जहां थे तहां जाने। मन में विचारी सुमुख के जीव ने राजपद का गर्वकर मेरा अपमान किया, मेरी वनिता बनमाला हरी। अर इस जन्मविषे भी उस सहित रति करे है।

अब दोनों धनी धिराणी भए हैं। उस दुष्ट को लज्जा नहीं। उसने मेरा जितना अपमान किया अर मुझे कलेश दिया, उससे दूना भी न करूं तो मेरी सामर्थता कहा? ऐसा चिंतवन कर वह देव क्रोधकर कलुषित भया इनको दुख देने का निश्चय कर स्वर्ग से मध्यलोक विषे आया। कैसा है वह देव, भास्वर कहिये महा देदीप्यमान है वह देव, सुमुख राजा का जीव विद्याधर के पुत्र भया है अर बनमाला का जीव तो विद्याधर की पुत्री उस सहित हरिवर्ष क्षेत्र जो मध्य भोग भूमि तहां क्रीडा करता देखता भया। कैसा है विद्याधर का पुत्र, हरिविभ्रम कहिये वसुदेव समान है लीला जिसकी।।48।। वह दोनों को क्रोध करता भया। फिर विचारी यह दोनों नव यौवन हैं सो मारने योग्य तो नहीं, तब अपनी अखंड देव माया कर इनकी आकाशगामिनी विद्या छेदता भया।

अर कहता भया – हे सुमुख! तू मुझे जाने है। मैं सेठ वह हूं जिसकी प्रिया बनमाला तैंने हरी थी

अर हे पापिनी बनमाला ! तैंने पूर्वजन्म विषे शील सारिखा आभरण खोया सो धिक्कार तुझको। मैं तुमारे दुखकर गृहस्थाश्रम तज जिनराज का धर्म लिया। सो तप कर पहले स्वर्ग देव भया। अर तुम मुनिदान के फल कर विद्याधर विद्याधरी भए। अब तुम्हारी विद्या तो मैं हरी अब तुमको कहा दुख दूं तुम मेरे पूर्वभव के दुखदाई हो।।51।। ऐसा कहकर देव उन दोनों को उठाया लेता भया जैसे गरुड़ नाग युगल को उठाय लेय। वे दोनों उसके भय कर कम्पित चित्त अर शिथिल शरीर मृतकतुल्य होय गए। अर वह देव इन दोनों को उठायकर दक्षिण भरत की ओर ल्याया।।52।। चंपापुरी का राजा चन्द्रकीर्ति काल प्राप्त भया था। सो चम्पापुरी अनाथ थी उसका राज्य सुमुख का जीव जो विद्याधर उसको देकर देव तो देवलोक गया उस मंडल के राजा इससे आय नये।।53।। देव कर हरी गई विद्या जिनकी ऐसे वे दंपती विजयार्द्ध गिरि जाने को असमर्थ भए। जैसे पक्षी पांख बिना उड़ न सके सो आकाश विषे गमन की शक्ति तौ इनकी गई सो इस पृथ्वी विषे थिरता करते भये।।54।। दशमें तीर्थंकर श्रीशीतलनाथ जिनका शरीर नव्वे धनुष ऊंचा। अर एक लाख पूर्व आयु। उनके तीर्थ विषे यह वार्ता भई।

चौथा काल कोडा कोडी सागर का था। उसमें केता काल वाकी रहा था, सो सुन – निन्याणवें लाख निन्याणवें हजार नव सौ सागर छयासठ लाख छबीस हजार वर्ष घाट चौथा काल वाकी था उस समय वह राजा चंपापुरी विषे राज्य करता भया। नये हैं अनेक राजा जिसको माने हैं आज्ञा राजा जिसकी सो राजा राग भाव कर तृप्त अपनी राणी सहित बहुत काल सुख भोगता भया। इन दोनों में पूर्व भव से अखंड प्रीति है अपने भुज दंड कर वश कीये हैं अनेक भूप जिसने। ऐसा वह भूपाल उसके राणी के संयोग कर हरि नामा पुत्र भया। अर वे दोनों राजा राणी परलोक गये। अब राजा हरि चंपापुरी का राज करे सो हरिवंश विषे मुख्य होता भया। इस जगत विषे उसकी संतान के लोग हरिवंशी कहावते भए।

राजा हरि के पुत्र महागिर। अर उसके हिमगिर भया उसके बसुगिर उसके गिर। ये राजा मरकर स्वर्ग लोक के देव भये। इस हरिवंश विषे सैकड़ों राजा इन्द्र समान विभव के धारक भए सो राज्य संपदा भोग मुनिव्रत धर तप कर शिवपुर गये। कैएक सुरपुर गए।।60।। इस भांति अनेक राजा हरिवंश विषे अद्भुत चरित्र के धारक भये। अर उसी वंश विषे एक मगध देश में कुशाग्रपुर नामा नगर का अधिपति कल्याण का धाम राजा सुमित्र होता भया।।61।। पृथ्वी विषे प्रसिद्ध है नाम जिसका। अर शस्त्र विषे निपुण पुरुषार्थकर शोभित उसके राणी पद्मावती उस सहित सुख भोगता पृथ्वी की रक्षा करता भया। वह राणी जिनमार्ग की अति भक्त अर राजा जिन भक्ति विषे अति अनुरक्त ये दोनों देव देवी समान पृथ्वी विषे सुख भोगते भए।।62।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ हरिवंशोत्पत्तिवर्णनो नाम पंचदशः सर्गः।।15।।

सोलहवाँ सर्ग

अथानन्तर – श्री शीतलनाथ स्वामी को सिद्धलोक पधारे पीछे श्रेयांसनाथ भए। फिर वासुपूज्य, विमल, अनन्त, धर्म, शांति, कुन्थु, अर, मल्लि। यह प्रभु जगत् के हित के अर्थि तीर्थ जो धर्म उसकी प्रवृत्ति कर परम धाम पधारे। यह सब स्वर्ग लोक के आये तीर्थेश्वर होय लोक शिखिर गए फिर बीसवें तीर्थंकर श्री मुनिसुव्रतनाथ राजा सुमित्र के घर राणी पद्मावती के उदर विषे आवेंगे। यह विचार इन्द्र ने धनपति को आज्ञा करी। सो आज्ञा प्रमाण सुमित्र के घर कुबेर मणियों की वर्षा करता भया अर पद्मावती राणी कोमल सेज विषे शयन करती थी। सो पिछली रात्रि विषे सोलह स्वप्ने देखे।

उनके नाम – गज, वृषभ, सिंह, लक्ष्मी, पुष्पमाला, चन्द्र, सूर्य, मत्स, कलश, कमलपूरित सरोवर, समुद्र, सिंहासन, देवविमान, फणीन्द्रभवन, रत्नराशि, निर्धूम अग्नि, जिनवर की जननी–यह सोलह स्वप्ने देख अति आनन्द रूप भई, वह माता दिव्य है प्रभाव जिसका अर उपमा से रहित ऐसी दिक्कुमारी नित्य करे हैं सेवा जिसकी सो माता महामनोग्य पुष्पों से पूरित जो सेज उस विषे जाग्रत होय कैसी सोहती भई जैसे आकाश विषे ताराओं कर मण्डित चन्द्रमा की कांति सोहे है।

भावार्थ – माता तो चंद्रमा की कांति भई, अर सेज आकाश समान उज्ज्वल अर पुष्पों के समूह ताराओं की मण्डली समान सोहते भए।।4।। वह जगत्रय की जननी फले कमल समान हैं नयन बदन अर कर चरण जिसके, सो सदा अनुराग की भरी, प्रभात ही अपने पति राजा सुमित्र सूर्य समान सिंहासन रूप उदयाचल पर विराजे थे उनके समीप यह राणी पद्मावती स्थल कमलिनी की न्याई फूली हुई गई।।5।।

जैसे नदी समुद्र की ओर जाय तैसे राणी राजा के समीप गई। कैसी है राणी, सुन्दर जे वस्त्र वे ही हैं जल जिस विषे अर नदी पक्षियों के नाद कर रमणीक है अर राणी नूपुरों के शोर कर शोभित है अर नदी मीन रूपी नेत्रों को धरे है रानी मृग मीन इत्यादिक के नेत्रों की शोभा को जीते ऐसे नेत्रों को धरे है अर नदी तो तरंगन को धरे है अर यह आनन्द रूप तरंगों को धरे है।।6।। अर वह जगत् की माता कल्पलता समान, जगत् का पिता जो राजा इसका पति कल्पवृक्ष समान उसके ढिंग गई। कैसी है कल्पलता फूलों के गुच्छों के जे समूह उन कर नम्रीभूत है अंग जिसका अर राणी पद्मावती पुष्प समान महा कोमल अर सुगन्ध अर पुष्पों के आभरणों कर नम्रीभूत है अंग जिसका अर कल्पवेल तो आरक्त जे पल्लवों को धरे है। अर राणी अति सुन्दर अर महा अरुण जे कर पल्लव उनको धरे है अर कल्पवेल तो महा कोमल शाखा उनको धरे है। अर यह राणी कोमल जे बाहु उन कर मंडित है अर कल्प बेल तो मणियों के आभूषणों कर मण्डित है। यह त्रैलोक्य की माता अद्भुत मणियों के

www.vitragvani.com

आभूषणों कर मण्डित है। माता कैसे आभरण इन्द्राणी चक्राणी नागेन्द्राणी के भी नहीं अर कल्पलता तो स्थिर भूत है अर यह बिहार करणहारी है। अनुपम कल्पलता है। अर कल्पबेल भी कल्पद्रुम से बेढ रही है अर यह तन मन कर पति से मिल रही है। राणी जायकर राजेश्वर को प्रणाम करती भई। राजा ने बहुत आदर किया। राजा के समीप सिंहासन पर जाय बैठी अर पृथ्वी पति से माता विनय कर जो सोलह स्वप्न देखे थे उनका फल पूछती भई।

तब राणी के ताई राजा कहते भए – हे प्रिये! त्रैलोक्य का स्वामी जगत् गुरु तेरे गर्भ में आया, यह वारता सुन हर्षित भईं। राजा रूप सूर्य उसके वचन रूप किरण की पंक्ति उन कर स्पर्शी वह पदमिनी कमलिनी की न्याई विगसती भई। परम आनंद कर भरा रोमांच शरीर होय गई। मानों हर्ष के अंकूरे उगे। संसार में स्त्री का जन्म महा निकृष्ट है। तो भी तीर्थंकर देव के गुरुपने से आपको धन्य मानती भई। अर अपना जन्म सुफल जानती भई। सहस्रार नामा बारमां स्वर्ग वहां से चय भगवान् मुनिसुव्रत बीसवें तीर्थंकर माता के गर्भ विषे आए। गर्भ से पहिले छह महीना से रत्न वृष्टि होने लगी। सो पन्द्रह मास पिता के घर में रत्न वरषे। नव महीने प्रभु गर्भ में विराजे। माता का गर्भ रूप गृह दिक्कुमारी देवियों ने शुद्ध किया है।।10।।

वह जगत् माता जगदीश्वर को गर्भ में धरे ऐसी सोहती भई जैसी शरद के समय जल की भरी मेघमाला सोहे है। अर मेघमाला तो विजुरी की प्रभा रूप आभरण को धरे सोहे है। अर वह राजा सुमित्र की राणी विजुरी से भी अधिक प्रभा को धरे जे आभरणों के समूह उनको धरे है।।11।। सो माता पद्मावती माघ मास के शुक्ल पक्ष विषे द्वादशी के दिन श्रवण नक्षत्र विषे जिननाथ को जनती भई। जैसे पूर्व दिशा पूर्णचंद्र को प्रगट करे है। स्त्री पुत्र को जने है सो प्रसूति समय में खेद खिन्न होय है यह जगत् जननी जिनको जनती रंच मात्र भी खेद खिन्न न भई अति आनंदघन जिनको जना है। कैसे हैं भगवान्, जगत् के जीवों के जे मन अर नेत्र उनको उत्सव के उपजावनहारे हैं। अर कैसी है माता अघरहिता कहिये जीव हिंसादि जे पाप उन सबों से रहित है। धर्म ही है स्वरूप जिसका ऐसी पतिव्रता ऐसी श्राविका संसार में दूजी नहीं। जिन धर्म विषे लीन है चित्त जिसका।।12।। वे प्रभु मुनियों के नाथ मुनिसुव्रत है नाम जिनका तिनके जन्म कर माता पद्मावती प्रमोद रूप भई। कैसे हैं प्रभु, मुनिसुव्रत शंख चक्रादिक एक हजार आठ लक्षणोंकर संयुक्त है शरीर जिनका, पुत्र को जनकर माता कैसी सोहती भई, जैसे मयूरी राग के भरे कण्ठ से राग को प्रकाश कर सोहे है।।13।। कैसी है माता, महा श्याम स्निग्ध जो इंद्र नीलमणि उसकी अद्वितीय खान है।

भावार्थ – श्री मुनिसुव्रतनाथ इन्द्र नीलमणि समान श्याम सुन्दर हैं। अर माता मणियों की खान है। सो चौबीस तीर्थंकरों में मुनिसुव्रत अर नेमिनाथ यह दोनों श्याम वर्ण हैं। अर सुपार्श्वनाथ अर पार्श्व

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

यह दोनों हरित् वर्ण हैं अर चन्द्रप्रभ अर पुष्पदन्त यह दोनों शुक्ल वर्ण हैं अर पद्मप्रभ अर वासुपूज्य ये दोनों अरुण वर्ण अर सब सुवर्ण वर्ण हैं। जिस समय जिनेन्द्र का जन्म भया उस समय चतुर निकाय के देवों के अकस्मात् घण्टा, सिंहनाद, ढोल, शंख यह सब बाज उठे अर इन्द्रादिक देवों के मुकुट नय गए, अर सिंहासन कम्पायमान भए, तब अवधि ज्ञान कर सुरेन्द्र ने जिनेन्द्र का जन्म जाना, अर सब देव जन्म कल्याणक के अर्थ चले।।14।।

वे देव रत्न वृष्टि, पुष्पवृष्टि, सुगन्ध जल की वृष्टि, शीतल मन्द सुगन्ध पवन अर जय जयकार शब्द यह पंचाश्चर्य करते जगत् को हर्ष कर पूरित करते भए, सुन्दर वस्त्राभूषण कर शोभित, सर्व इन्द्रादिक राजपुर नगर जिसे कुशाग्रपुर भी कहे हैं, उसकी प्रदक्षिणा कर जिनराज के माता-पिता को बारम्बार नमस्कार करते राजा के आंगन विषे आये दिक्कुमारी देवियों कर होय रहा है उत्सव जहां, इन्द्र की आज्ञा से इन्द्राणी प्रसूति गृह विषे जाय, माता को सुख निद्रा अनाय मायामई बालक पधराय जिनराज को बाहिर ल्याई तब इन्द्रादिक जिनेन्द्र को ऐरावत गजेंद्र पर आरूढ़ कर गिरींद्र जो सुमेरु वहां ले गये, सकलदेव महा तीर्थ जो सुमेरु उसकी प्रदक्षिणा कर प्रभु को सुमेरु के शिखर जो पांडुक वन उस विषै पांडुक शिला उस पर जो सिंहासन उसके ऊपर पधराया क्षीर सागर के जल कर अभिषेक करावते भए। फिर आभूषण पहिराय स्तुति कर मुनिसुव्रत नाम धर नमस्कार करते भए।।17।।

फिर विधि के वेत्ता प्रभु को सुमेरु से ल्याय कर माता की गोद में मेल आनन्द नाटक कर माता पिता की स्तुति करते भए अर तीन भुवन को आनन्द का उपजावनहारा जगत् गुरु जिनवर उसको नमस्कार कर इन्द्रादिक देव अपने अपने स्थान को गए। अर इन्द्र अपने देवों को देवाधिदेव की सेवा के अर्थि राखे। सो प्रभु की वय समान मनुष्य का रूप धरें सब ऋतु की क्रीड़ा करें। वे भगवान तीन ज्ञान के धारक विशाल हैं नेत्र जिनके देव कुमारों कर सेव्य अद्भुत बाल क्रीड़ा करते भए। निरन्तर इन्द्र की आज्ञा से कुवेर सेवा करे। खान पान वस्त्र आभूषण सब सामग्री देवोपुनीत ल्यावे। जो वस्तु जगत् में दुर्लभ सो जिनपति के सुलभ ज्यूं ज्यूं जिनपति का शरीर वृद्धि को प्राप्त भया त्यूं त्यूं गुणों की वृद्धि भई।।19।।

जब जगदीश नवयौवन को प्राप्त भए। तब उनका विवाह किया। महा मनोग्य राणी प्रभु को पाय कृतार्थ होती भई जैसे महानदी समुद्र को पाय विश्राम को प्राप्त होय। नदी तो कुलाचल से उपजी है। अर वे महाराणी बड़े कुल ते ही भए कुलाचल उनसे उपजी है। अर महा नदी आदि मध्य अन्त निरंतर प्रवाह को धरे हैं अर यह महाराणी आदि मध्य अंत विषे निरंतर प्रभा को धरे है। अर समुद्र तो लावण्यवाहानन्द कहिये लवणता के भाव को धरे है। अर प्रभु लावण्यता कहिये सुन्दरता कोमलता उसको धरे हैं। अर समुद्र भी सदा नवल है कभी जीर्ण नाहीं अर प्रभु भी नागर नवल हैं। सदा नव

www.vitragvani.com

यौवन रूप हैं। कभी भी जरा कर ग्रस्त नहीं। ऐसे वर को पाय वह वधू स्त्रियों की सृष्टि में शिरोमणि होती भई। प्रभु सारिषे पृथ्वी में पुरुष नहीं अर इन सारिषी पृथ्वी में स्त्री नहीं।।23।। श्री मुनिसुव्रतनाथ हरिवंश के सूर्य राज सिंहासन पर विराजे। समस्त राजा अर समस्त जे प्रजा वे ही भई कमलिनी उनको प्रफुल्लित करणहारे जगत् के सूर्य त्रैलोक्य के राजा राज्य करते भए। वे समस्त लोक के पालक जगत् के नाथ राजाधिराज अर देवों कर सेवनीक हैं चरण कमल जिनके। सो चारित्र मोह के उदय से राज्य सुख भोगते भए अखंड है आज्ञा जिनकी।

अथानन्तर – वर्षा ॠतु रूप वधू के बीतने से शरद ॠतु रूप सुरांगना अद्वितीय प्रगट भई। कैसी है शरद ॠतु रूप सुरवधू, प्रफुल्लित कमल है मुख जिसका अर मझन्या के पुष्पादि जे अरुण पुष्प वेई हैं अधर पल्लव जिसके अर दिशावों की उज्ज्वलता है शुक्ल चमर जिसके अर निर्मल जल सोई है वस्त्र जिसके।।24।। जब वर्षा गई शरद आई तब मेघ के अवरोध कर दसों दिशा रहित भईं। तब सूर्य ने सकल दिशा विषे पाद कहिये किरण सो पसारी। वर्षा ॠतु में सूर्य की किरणें पसरती न थीं सो शरद में पसरीं।

भावार्थ – पादनाम किरणों का है अर पाद नाम पांव का भी है। सो जिसके पांव न पसरें वह खेद खिन्न होय सो शरद में सूर्य की किरणें पसरीं तब पांव पसारे उसको सुख भया वर्षा में मेघ माला कर सूर्य दब रहा था सो उघडा अर वर्षा में मेघ माला शब्द करती सो शरद में महा उज्ज्वल धवल गायों के समूह शब्द करने लगे सो मानों इनके शब्द कर मेघावली छिप गई। अर शरद समय नदी रूप नारी क्रीड़ा विषे नरों के चित्त हरती भई कैसी है नदी रूप नारी निर्मल जल सोई है मनोहर वस्त्र जिसके। अर भंवर रूप नाभि को धरे शुभ है गमन जिसका मीन ही हैं नेत्र जिसके अर झागों की पंक्ति सोई हैं वलय कहिए चूडा जिसके, तरंगों के विलास वेई हैं वाहु जिसकी। ऐसी सरिता रूप सुन्दरी जगत् कूं अति रमणीक भासती भई।।24।।

शरद् ॠतु रूप वधू जगत् का चित्त क्रीडा विषे अनुरागी करती भई। कैसी है शरद रूप वधू, तरंगरूप हैं भोंह जिसकी अर मीन हैं नेत्रों की कटाक्ष जिसके। अर उन्मत्त जे भ्रमर अर कलहंस तिनके नाद कर रमणीक है अर फूले जे कमल उनकी मकरन्द रज सोई है अंग का वर्ण जिसके। ऐसे शरद ॠतु सुन्दर स्त्री समान सोहती भई। शरद विषे सुगंध शालि फल के भार कर नम्रीभूत भई अति सोहती भई अर सुगंध कमल फूले अति मनोहर भासते भये। सो ये दोनों सुगंध शालि अर सुगंध कमल अर रस की अधिकता ता कर मनुष्यों का मन हरते भये अर भ्रमरों के समूह कदम्ब के पुष्पों की रज कर धूसरे हैं अंग जिनके। वे कदंबादि पुष्पों को तज कर माते हाथियों का सुगंध मद अर सप्तछद जाति के जे वृक्ष उन विषे प्रीति विस्तारते भए।।27।। ऐसी शरद समय में श्री मुनिसुव्रतनाथ वेई भए राजहंस सो कैलास पर्वत समान उतंग उज्ज्वल सो महल उस विषे तिष्ठे पटराणी सहित शरद रूप राजहंस की

शोभा देखते थे। कैसी है राणी अद्‌भुत है, आभरण जिसके। अपनी लीला कर तिरस्कार किया है रति रूप राजहंसी का विभ्रम जिसने।

भावार्थ – राणी तो रति से भी अधिक रूप को धरे है। अर राजहंसनी से अधिक मनोहर है गमन जिसका, शरद ऋतु राजहंसनी से अधिक उज्ज्वल है, विजुरी समान हैं आभरण जिसके सो श्रीमुनिसुव्रतनाथ ऊंचे महल पर राणी सहित विराजे। शरद् की सकल शोभा देखते थे। तो आकाश विषे अति उज्ज्वल मेघमंडल ऐरावत के आकार देखा मानो ऐरावत ही आकाश रूप समुद्र विषे रमने को आया है।।29।। मानो वह ऐरावत के आकार मेघ मंडल अंवर का आभूषण ही है। ऊंचा उज्ज्वल सुन्दर उसे देखकर प्रभु का मन हर्षित भया। विपुल कहिये विस्तीर्ण पीन कहिये पुष्ट ऐसा वह मेघ पटल दिशा रूप स्त्रियों का नीर रहित मानो उत्तरासन ही है, उसे अनुराग की दृष्टि कर जिननाथ निरखते भए। सो निरखते निरखते तत्काल वह मेघ पटल प्रचंड पवन के घात से विलाय गया। सब अवयव उसके विघट गए। जैसे अग्नि की ज्वाला कर तप्त माखन का पिंड गल जाये ऐसा वृत्तांत देख लोक का प्रभु चित्त में ऐसे चितवता भया। यह जलधर तत्काल विलय गया। सो मानो जगत् को उपदेश ही विस्तारे है। आयुकाय यह सबही विनश्वर हैं। अर लोक यह बात भूल रहे हैं। सो लोक में जे निर्मल बुद्धि हैं उनको संसार की अनित्यता प्रगट दिखावे है।।32।।

यह शरीर महा तुच्छ जे पुद्‌गल परमाणु उनके समूह कर रचा है। रागादिक परिणामों के वशतें उपार्जे जे ज्ञानावरणादि कर्म उनके संयोग से इसकी उत्पत्ति है। सो कालरूप पवन के वेग से मेघ समान शीघ्र विघट जाय है।।33।। वज्रमई हाडों करि वेढ्या वज्र वृषभ नाराच महारमणीक संहनन सो भी तत्काल विलाय जाय है जीवों के समस्त ही गात्र मृत्यु रूप वायु के प्रकोप कर भग्न होय है। जैसे मेघ पवन कर विलाय जाय तैसे सब शरीर काल कर विलाय जाय। तातें देह से नेह करना वृथा है।।34।। यह वय की वृद्धि सोई भई शीघ्र वायु सो काय रूप मेघ की निरंतर घात करणहारी है बड़े पुरुषों का देहरूपी मेह सौभाग्य रूप जे नव यौवन सोई हैं भूषण जिसके अर चितवन ही कर लोक विषे अमृत वरषे है ऐसे देहरूप गेह की घात करणहारी दिन दिन वय की वृद्धि है।

भावार्थ – ज्यूं ज्यूं वय बढे है त्यूं त्यूं आयु घटे है।।35।। जे राजा पर्वत समान वे भी काल रूप वज्र के घात कर चूर्ण होय हैं। कैसे हैं भूप रूप गिरि, अपनी शूरवीरता के प्रभाव कर बश करी है समुद्रांत पृथ्वी जिन्होंने अर बड़े बड़े राजा सिंह तिन कर चिरकाल थांभी है पृथ्वी जिनोंने अर महा मनोहर राज्य के भोक्ता गिरींद्र से निश्चल ऊंचे हैं शिखर जिनके ऐसे भी नरेंद्र उन्हीं की चूर्ण करणहारी कालरूप वज्र की घात है।।36।। इस लोक विषे नेत्र अर मन तिन को प्यारी सुन्दर बल्लभा है। अर प्राण समान सुख दुख विषे समान ऐसे मित्र अर पुत्र हैं। वे सब काल रूप वायु कर सूके पत्र समान उड़ जाय हैं। या संसार विषे देवों के भी इष्ट का वियोग होय है। मनुष्यों की क्या बात है।।37।। इन

प्राणियों के देहादिक देखते देखते विनशि जाय हैं। तौ भी ये मूढ़ जीव मृत्यु से नहीं डरे हैं। मोह के अंधकार कर दब रही है दृष्टि जिनकी सो कल्याण के मार्ग को तज विषय रूप अभिषेक के ग्रहण को प्राप्त होय हैं। यह मूढ प्राणी काम के मद कर सर्व अंग विषे माते गज की न्यांई उन्मत्त भया। अपने अंग कर सुन्दर स्त्रियों के शरीर को स्पर्शता मुदित किए हैं नेत्र जिसने ऐसा यह मनुष्य गज की न्यांई विषम बन्धन को पावे है। धिक्कार इस स्पर्श इन्द्री के सुख को।।39।। लोह के आंकड़े के लागी मांस की डली उसकी इच्छा कर जैसे चपल मींन धीवर के जाल में परे है। तैसे जिह्वा के वशी भया अविवेकी इस लोक विषे षट्रस के स्वाद रूप जो बहु प्रकार आहार उनको अति लोलुपता कर ग्रहता, भव जाल में पडे है। कर्म्म रूप दृढ़ बन्धन कर बन्ध्या संसार वन विषे दुःख भोगे है।।40।।

नासिका इन्द्रिय का विषय है प्रिय जिसको ऐसा भ्रमर सो अज्ञानी अतृप्त भया सुगंध को अति आसक्त होय सेबे है सो विषय पुष्प को सूंघ शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होय है। कैसी है विषय पुष्प की सुगंध, विपरीत है फल जिसका। जैसे भ्रमर गंध का लोभी लोलुपी कमल में मुदित होय मरण पावे है, अथवा गज के कुम्भस्थल का मद अतृप्ति होय सूंघता गज के कानों के घात कर प्राणांत होय है अर जैसे रूप का लोभी पतंग दीप की शिखा में पड कर भस्म होय है अग्नि के योग कर तीव्र आताप को पावे है, तैसे विषयी जीव रूप है प्रिय जिसको सो चित्त के वश करने को प्रवीण जो नेत्रों के कटाक्षों का निपात कर प्रफुल्लित है मुख जिनका ऐसी सुन्दर वनिता उनके अंग विषे लगाई है दृष्टि जिसने। सो यह भव पर भव विषे अधिक आताप को पावे है अर नरक निगोद विषे पड़े है।।42।। अर जैसे मृग कर्णेन्द्री कर लुब्ध भया पारधी के मुख का राग सुन उसके शस्त्र से मरण को प्राप्त होय है तैसे यह मनुष्य महा अधीर रंच भी नहीं है धीरपना जिस के सो करणेन्द्री कर मोहित भया अपनी प्यारी जो नारी उसके वाजते जे नुपूर अर पायलादि नाना प्रकार के आभूषण उनके शब्दकरि अर उसके मुख के प्रिय वचन अर मधुर गीत उनकर हरी है बुद्धि जिसकी, सो चपल चित्त अनेक जन्म विषे दुखी होय है निगोद विषे अनन्ते जन्म मरण करे है।।43।। जे विषय रूप सोई भई चिन्ताकीच उस विषे अल्प वीर्य के धारक वृद्ध दुर्बल बैल समान क्षुद्र मनुष्य फसें तो उसका आश्चर्य नहीं अर वज्र समान है काया जिनकी ऐसे महापुरुष इस कीचड में फसें सो आश्चर्य है।।44।।

जो जीव स्वर्ग के सुख सागरों पर्यंत दीर्घकाल भोग कर तृप्त न भया सो इस मनुष्य लोक के अल्प सुख अति चंचल तृण ऊपर ओस की बून्द समान अति रंच उनकर कैसे तृप्त होय। यह अल्प दिवस के अल्प सुख इसको कैसे तृप्त करें जैसे इन्धन के समूह कर अग्नि तृप्त न होय। अर हजारों नदियों के जल कर समुद्र तृप्त न होय। त्यों ही संसार सम्बन्धी यह काम भोग उन कर यह जीव तृप्त न होय। यह इन्द्री जनित सुख तृप्ति के कारण नहीं।।46।। यह विषय रूप इन्धन की राशि भोगाभिलाषी रूप वज्राग्नि की शिखा के बढ़ाने अर्थ ही है। अर इन्द्रियों का जीतना विषय से परांगमुख होना सोई भई

शीतल जल की धारा उस कर भोगाभिलाष रूप अग्नि बुझे है।।47।। इसलिये असार भूत जो इन्द्री के सुख उनको तज कर मैं शीघ्र ही मोक्षमार्गविषे प्रवृत्ति कर आत्मा का कल्याण करूं। प्रथम परम आत्मा रूप अर्थ को साध कर पर जीवों के कल्याण अर्थ सांचा जो तीर्थ कहिये वीतराग का मार्ग उसको विस्तारूँ। जिनमार्ग का प्रवर्तन ही जीवन के कल्याण का कारण है। यही तीर्थ कहिये तिरिवे का उपाय है। अर तथ्य कहिये सत्य है।।48।।

इस भांति भगवान् स्वयंभू स्वयमेव बोध को प्राप्त भये। मति, श्रुत, अवधि, यह तीन ज्ञान ही हैं नेत्र जिनके। जिस समय जिनेन्द्र ने वैराग्य का चिन्तवन किया उसी समय सब इन्द्र अर अहमिन्द्रों के आसन कम्पायमान भए। सो अहमिन्द्र तो सिंहासन से सात पेंड़ जाय प्रभु को प्रणाम करते भए। उनका इतना ही नियोग है। अहमिन्द्रों का निज आश्रम से परक्षेत्र विषे गमन नहीं अर इन्द्रादिक देव तप कल्याण के उत्सव के लिये आयवे को उद्यमी भए।।49।। प्रथम ही लौकांतिक देव आय हाथ जोड़ नमस्कार कर पुष्पांजली चढ़ाय जिनवर की स्तुति करते भए। कैसे हैं लोकांतिक देव सुन्दर कुण्डल अर मनोहर हार उनकर शोभित हैं। अर उज्ज्वल है प्रभा जिनकी महा निश्चल सारस्वत आदि अष्ट हैं जाति जिनकी।।50।। यह लौकांतिक देवों में मुख्य ब्रह्मचारी ऐसे स्तुति करे हैं।

हे जिनेन्द्र चन्द्र! तुम जयवन्त होवो तुम चिरकाल जीवो। नादो बिरधो। ज्ञानरूप किरणों कर मोह तिमिर के समूह को हरो भव्य जीव रूप कुमुदिनी को प्रफुल्लित करो तुम बन्ध रहित हो। अर भव्यों के बांधव हो बीसमां तीर्थ जो तुम्हारा समय उस विषे धर्म तीर्थ को प्रगट करो तीर्थ के करता तुम तीर्थंकर हो।।51।।

हे त्रिलोकी नाथ! तुम धर्मतीर्थ को प्रवर्तावने को समर्थ हो। तुमारे धर्मतीर्थ विषे स्नानकर यह प्राणी प्रचण्ड दावानल रूप जो भवानल उसके दाह को निवारोगे। तुम्हारा मार्ग शांत रस रूप भवाग्नि का बुझावनहारा है। यह प्राणी समस्त मोह मल को शीघ्र ही निवार कर कल्याणरूप जो सिद्धलोक वहां जावेंगे। शिवपुर की प्राप्ति का मूल तुम्हारा मार्ग है।।52।। चारित्र मोह के उपशम से वैराग्य भाव को प्राप्त भए स्वयं बुद्ध भगवान् तिनकी लौकांतिक देव इस भांति स्तुति कर नमस्कार करते भए। उनका यह नियोग है। जो तप कल्याणक के प्रारम्भ विषे प्रभु के निकट आय वैराग्य की प्रशंसा करें। प्रभु तो सब समझ ही रहे हैं।

उनको क्या समझावें यहां कोई प्रश्न करे जो समझे को समझावना पुनरुक्त है। उसका **समाधान** – वे महा भक्त हैं अनादि काल से उनका यही नियोग है। जो तप कल्याणक विषे प्रभु के वैराग्य की प्रशंसा करें। यहां पुनरुक्त का दोष न लेना। वे लौकांतिक तो अपना समय साध अपने स्थानक गए। अर सौधर्म इन्द्रादिक चतुर्निकाय के देव नाना प्रकार के विमानों ऊपर चढ़े आकाश के मार्ग प्रभु के निकट आय सुगन्ध जल से अभिषेक कराय अद्भुत आभूषण पहिराय नमस्कार करते भये।

अथानन्तर – श्री मुनिसुव्रत स्वामी अपना सुव्रतनामा पुत्र प्रभावती राणी के गर्भ से उपज्या उसे राज्याभिषेक कराया। सो सुव्रतकुमार श्वेत छत्र श्वेत चमर सिंहासन उनको शोभित करता भया, हरिवंश रूप आकाश विषे चन्द्र समान भासता भया। अर प्रभु की पालकी पहिले तो भूपों ने उठाई पीछे देव ले चले। भगवान् उस मनोहर पालकी विषे आरूढ़ होय वन को गए। कार्त्तिक सुदी सप्तमी के दिन जिनेश्वर वेला पारणा मांड तिष्ठे। जिनेन्द्र ने हजार नरेन्द्रों सहित जिनेन्द्री दीक्षा धारी सर्वलोक के देखते जगत्रय का गुरु सिद्धों को नमस्कार कर सिर के केश लौंच करता भया। सो केश सुरेन्द्र ले जाय कर क्षीर सागर में पधरावता भया। जे देव हैं ते जिनदेव के तीजे तप कल्याण की पूजा कर अपने स्थानक गये अर भगवान् चार ज्ञानकर विराजमान भानु समान हजार राजा रूपी किरणों कर शोभते भए, तीन ज्ञान तो गर्भ विषे ही धारे थे, अर चौथा मनःपर्यय ज्ञान मुनिपद धारते ही भया। वेला के पारणे कुशाग्रपुर में आहार को उतरे सो भली विधिकर वृषभदत्त नामा प्रसिद्ध श्रावक आहार देता भया, सो भगवान् मुनियों के अधिपति विधि पूर्वक साधुन के लेवे योग्य आहार लिया।

साधुवों को कैसा आहार लेना चाहिये, स्वाधीन कहिये अपने वश आप जाय कर दोष टार लेना अर अप्रतिहत कहिये सूत्र विरुद्ध न लेना सूत्रोक्त लेना बैठ कर न लेना। खड़े रह कर लेना कर पात्र में लेना इस भांति लेने की प्रवृत्ति है सो विधि तीर्थेश्वर ने अंगीकार करी, जैसे अनन्ते तीर्थेश्वर अपने अपने तीर्थ कहिये समय में धर्म की प्रवृत्ति करते भए, तैसे ही सर्व मर्यादा के वेत्ता मुनिसुव्रत जिन करते भए।।60।। तिस दिन वृषभदत्त ऋषीन्द्र के हाथ विषे परम पवित्र अन्न शुद्धता कर मण्डित देता भया उस दिन वह अन्न अटूट हो गया, हजार मुनियों ने आहार लिया, मुनियों के पीछे सर्व नगर ने जीम्या तौ भी आहार अटूट रहा, जिनेन्द्र के आहार लेने कर वृषभदत्त के घर पंचाश्चर्य भए रत्नवृष्टि, कल्पवृक्षों के पुष्पों की वृष्टि, सुगन्ध जल की वृष्टि, शीतल मन्द सुगन्ध पवन अर देव दुन्दुभी बाजे, यह पंचाश्चर्य भए।।62।।

यह पंचाश्चर्य देव आकाश विषे करते भए। अर दानपति की पूजा कर अपने स्थान को गए। कैसा है दानपति, उपार्जा है पुण्य का स्वरूप जिसने, देव तो अपने स्थान को गये अर जिनेंद्र आहार ले करते भए विहार योग्य जो आर्यक्षेत्र उस विषे विहार किया।।63।। तेरह महीने पर्यन्त तप किया फिर छद्मस्थ दशा उलंघ कर मार्गशीर्ष शुदी पंचमी के दिन ध्यानाग्नि कर दग्ध किये जे घातिया कर्म सो केवल ज्ञान के लाभकर जिनराज इस तिथि को पवित्र करते भए। विशुद्ध केवलज्ञान रूप निर्मल नेत्र कर एक समय में सकल लोकालोक को प्रत्यक्ष विलोकते भए। जैसे मेघ पटल के आवरण से रहित दिनकर पदार्थ को भासे तैसे जिनवर कर्म रूप आवरण के अभाव से अखिल लोक को प्रकाशते भए। भक्तिकर इन्द्रादिक देव देवाधिदेव की पूजा करते भए। मनुष्यों के इन्द्र राजा पूजा करते भये। कैसे हैं भगवान्, अष्ट प्रातिहार्यादि अद्भुत विभूति कर अरहन्त पद को धरे हैं। चिन्तन में न आवे

www.vitragvani.com

महिमा जिनकी। जिनके समोसरण में अशोकवन चंपकवन आम्रवन सप्तच्छदवन यह चार वन उनमें चार ही चैत्यवृक्ष।।65।। सो जिनेन्द्र मुनींद्र आदि बारह सभा विषे तिष्ठे जे भव्यजीव उनको द्वादशांग सूत्र का उपदेश करते भए। विशाखा नाम गणधर ने विनयकर धर्म का प्रश्न किया सो गणधर के प्रश्न से जिनवर धर्म का व्याख्यान करते भए। इन्द्रादिक देव प्रभु के चतुर्थ कल्याणक की पूजाकर विहार की प्रार्थना करते भए। सो भगवान् इच्छा बिना ही सहज स्वभाव भव्यों के पुण्य के प्रेरे विहार करते भए। अनेक देशों में धर्म का उद्योत किया जैसे मेघ जल की वृष्टि करे, तैसे धर्मरूप अमृत की वृष्टि करते भए।।67।।

भगवान् के अठाईस गणधर ते चतुर्दश पूर्व के वेत्ता। अर तीस हजार यति नानाप्रकार गुणोंकर मंडित। सात प्रकार उनका संघ।।68।। उन में पांच सौ मुनि पूर्वों के पाठी, इक्कीस हजार शिष्य, अठारह सौ अवधिज्ञानी अर इतने ही केवलज्ञानी, बावीस सौ विक्रिया ऋद्धि के धारक। पन्द्रह सौ विपुल मति मनःपर्यय के धारक, बारह सौ वादित्व ऋद्धि के धारक, आर्यिका पच्चास हजार, श्रावक अणुव्रत के धारी एक लाख, श्राविका तीन लाख। इस भांति चतुर्विध संघ कर मण्डित भगवान् जगत् के जीवों को मोक्ष के मार्ग में लगाए। मुनिसुव्रतनाथ का आयु वर्ष तीस हजार। उसमें कुमार काल साढे सात हजार वर्ष अर राज्य विषे पंद्रह हजार वर्ष अर साड़ा सात हजार वर्ष तेरह मास घाट अर्हंत पद अर तेरह मास मुनि पद।।70।।

अन्त समय हर्ष का करणहारा सम्मेद शिखर वन वहां योग निरोध किया।।71।। एक महीना तक वाणी न खिरी उपदेश न भया। समोशरण विघट गया। अर माघ सुदी तेरस के दिन पिछले पहर सम्मेद शिखर से हजार मुनियों सहित लोक शिखर पधारे अर्हंतपद से सिद्धपद पाया। निर्वाण कल्याणक की पूजा कर सुरेन्द्र आप भी निर्वाण प्राप्ति की प्रार्थना करते भए।।72।। मुनिसुव्रत पीछे छह लाख वरष व्यतीत भए नमिनाथ भए जैते मुनिसुव्रत का तीर्थ जानो। देवों के निरन्तर आयवे कर बढ़ा है लोक विषे हर्ष जहां।।73।।

जो भव्यजीव बीसवां तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ उनके पंच कल्याणक का चरित्र भक्ति कर पढ़े सुने सो भव्य जीव सिद्ध पद के सुख को शीघ्र ही प्राप्त होय।।74।। इस भांति यह जो वसन्ततिलका छन्द वे ही भये मनोहर पुष्पों की माला उन कर पूजा हुआ मुनिसुव्रतनाथ हमारे रागादिक सब रोगों को टार समाधि बोध देवें।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ मुनिसुव्रतनाथपंचकल्याणकवर्णनं नाम षोडशः सर्गः।।16।।

सत्रहवाँ सर्ग

अथानन्तर – मुनिसुव्रत का पुत्र सुव्रत हरिवंशियों का प्रभु वश करी है पृथ्वी जिसने अर जीते हैं काम क्रोध लोभ मद मत्सर माहिले छह बैरी जिसने अर धर्म अर्थ काम मोक्ष का साधक जो अपने दक्ष नामा पुत्र को राज्य दे पिता के निकट दीक्षा धार तप के बल से मोक्ष गया अर दक्ष राज करे उसके राणी इला उसके उदर विषे एलेय नामा पुत्र अर मनोहर नामा पुत्री भई सो मनोहारी महा रूपमान जैसे समुद्र से लक्ष्मी प्रगट होय तैसे दक्ष से मनोहारी प्रगट भई दक्ष के पुत्री अर पुत्र महा मनोहर पुत्र चन्द्रमा समान अर पुत्री चन्द्रकला समान, सो यह पुत्री यौवनवंती अति सोहे है। कृश है कटि जिसकी जिसका रूप शस्त्र समान उसकर कामी पुरुषों का मन भेदता भया अर काम अपने पांच बाणों की गुरुता याके रूप आगे लघु जानता भया इसके रूप ही को अपना अनुपम शस्त्र जानता भया।।6।।

कई एक दिन में राजा दक्ष जिन धर्म से बहिर्भूत होय मिथ्या मार्ग विषे प्रवर्ता तब राणी इला अपने एलेय पुत्र को लेकर देश देशांतर को गई सुरपुर समान एक एलावर्धन नामा नगर बसाया वहां एलेय प्रजा को पालता राजकरता भया महा बलवान् महा न्यायवान् महा धीर हरिवंश का तिलक होता भया।।9।। उसने एक अंगदेश विषे ताम्रलिप्त पुर वसाया सो महा सुन्दर पृथ्वी विषे प्रसिद्ध भया। इस राजा ने अनेक देश जीते। अर नर्मदा के तीर एक महिष्मती नगरी बसाई सो मही विषे विख्यात भई। वहां तिष्टकर चिरकाल राज्य किया। प्रणाम करे हैं अनेक पृथ्वीपति जिसको। सो कुणिम नामा पुत्र को राज्य देय तप का उद्यमी होय वन विषे गया। फिर कुणिम राज करे सो विदर्भ देश विषे शत्रुओं के जीतने की है इच्छा जिसके। कुण्डलपुर नामा नगर नर्मदा नदी के तीर वसावता भया।।12।।

कई एक दिन राजकर राजा कुणिम जीतव्य को क्षणभंगुर जान अपने पुत्र पुलोम को राज दे आप तपोवन विषे गया।।14।। उसने पुलोमपुर वसाया। फिर वह नृपति अपने दो पुत्र एक योलोम दूजा चरम उनकौ राज दे जिनेन्द्री दीक्षा धरता भया।।15।। उसके दोनों पुत्र राज करें। चंद्र सूर्य की न्याईं जगत विषे प्रकाश किया। दोनों भाई प्रताप के समूह अखंड है मंडल जिनका सो महा प्रचंड राजाओं को जीतते भये। दोनों भाइयों का एक चित्त, इन भाइयों ने रेवा नदी के तीर तीन नगर वसाए। इन्द्रपुर जयन्ती नगरी अर नवास्या नगरी। उनमें बड़े भाई योलोम ने तो इन्द्रपुर बसाया। अर छोटे भाई चर्म ने ये दो पुरी बसाई।।17।। फिर चर्म के पुत्र संजय भया। अर योलोम के महीदत्त भया सो अपने अपने पुत्रों को राज दे दोनों भाईं मुनिव्रत धारते भए उनके पीछे योलोम का पुत्र महीदत्त उसने कुल्पपुर नगर बसाया, उसके अरिष्टासोमि अर मत्स्य दो पुत्र भये।।19।। उनमें छोटा मत्स्य नामा पुत्र चतुरंग सेना कर भद्रपुर तथा हस्तिनापुर को जीत महाप्रतापी सुख से तिष्ठता भया।।20।। उसके अयोधनादिक सौ

पुत्र भये वे सकल इंद्र समान पराक्रमी कई एक दिन में राजा मत्स्य बड़ा पुत्र अयोधन को राज दे आप जिनदीक्षा धारता भया, अयोधन राज करे। उसके मूल नामा पुत्र भया। उसके साल नामा पुत्र भया। अर साल के सूर्य उसने शुभ्रपुर शहर बसाया। सूर्य के अमरनामा पुत्र भया उसने वज्रनामा शहर बसाया। अमर के देवदत्त नाम पुत्र भया। सो देवेंद्र समान पराक्रम का धारक भया।।23।।

उसके मिथुला नाम पुत्र भया। सो सावंतों में शिरोमणी, उसके हरिषेण नाम पुत्र भया। उसके नभसेन नामा पुत्र भया।।24।। उसके शंख नामा पुत्र प्रसिद्ध भया। शंख के भद्र भद्र के अभिचंद्र। सो अभिचन्द्र शत्रुवों की कांति को हर्ता भया।।25।। उसने विन्ध्याचल की पृष्ठि विषे वेदीपुर नामा शहर बसाया। अर सुक्तिमती नदी के तीर सुक्तीमती पुरी बसाई। सो अभिचन्द्र ने उग्रवंशी राजा की पुत्री वसुमती व्याही ताके वसु नाम पुत्र भया सो चन्द्रकांति मणि समान कांति का धारक। उस शहर में एक क्षीरकदंब नाम ब्राह्मण शास्त्र का पाठी शिष्यों को विद्या पढ़ावे उसके स्वस्तिमती स्त्री उसके पर्वत नाम पुत्र सो महा दुष्टबुद्धि विपरीत अर्थ का धारक क्षीरकदंब के शिष्य घने उनमें तीन मुख्य। राजपुत्र बसु, अर क्षीरकदंब का पुत्र पर्वत अर विदेशी ब्राह्मण नारद। ये तीनों गुरु ने शास्त्र के रहस्य में प्रवीण किये। गुरु महा बुद्धिवान् सो इनको वन विषे आरण्क नाम शास्त्र पढ़ावता था वहां आकाशगामी चारणमुनि अंबर विषे विहार करते थे। सो इनकी ध्वनि सुन जो मुनि गुरु था उसने अवधिज्ञानी जो अपना शिष्य मुनि उसको पूछी। ये चार ब्राह्मण शास्त्र अध्ययन करे हैं। इनमें एक गुरु अर तीन शिष्य यह चार हैं। सो इनमें अधोगति के जानहारे कै?

अर ऊर्द्धगति जानहारै कै? तब शिष्य ने कही। क्षीरकदंब गुरु अर नारद शिष्य यह दो तो ऊर्द्धलोक के जावने हारे। अर राजा का पुत्र वसु अर अध्यापक का पुत्र पर्वत यह दोनों अधोगामी हैं।।31।। ऐसा कहकर मुनि महा दयावान् गगन के मार्ग चले गये। जाना है संसार का स्वरूप असार जिन्होंने ।।32।। ये मुनि के वचन क्षीरकदंब सुन भयकर युक्त भया है चित्त जिसका सो संध्या समय शिष्यों को घर की सीख दे आप वन में मुनियों के ढूंढने के अर्थ गया।।33।। जब ये शिष्य घर आए अर पाठक न आया तब पाठक की स्त्री स्वस्तिमती इनको पूछती भई तुम आए अर तुम्हारा गुरु न आया सो कहां रहा। तब ये कहते भये। हमको तो सीख दीनी सो आज्ञा प्रमाण आये। अर वे भी हमारे पीछे आवे हैं। तुम खेद न करो।।35।। शिष्यों के वचन सुन स्वस्तिमती सुख से तिष्ठी। दिव वीत्या अर रात्री को भी क्षीरकदंब न आये।।36।।

तब ब्राह्मणी ने जानी विप्र ने वीतराग देव की दीक्षा लीनी सो भरतार का यह रहस्य जान चित्ते विषै व्याकुल होय सारी रात रुदन किया। प्रभात क्षीरकदंब के हेरने पर्वत अर नारद गये। सो ये दोनों कईएक दिन वन में गुरु को हेरते फिरे। सो भ्रमण कर अति खेद खिन्न भये। कइएक दिन में ढूंढते ढूंढते

वन विषे महामुनि के समीप क्षीरकदंब को यती हुआ देखा सो आचारांग सूत्र भणता था सो पर्वत तो दूर ही से देख पीछा फिरा, नहीं है धैर्य जिसको।।39।। सो जायकर माता को पिता के वैराग्य का वृत्तांत कहा। सो अति चिन्तावान भई अर पर्वत दहामूढ चिन्ता रहित सुख से तिष्ठा।।40।। अर नारद ब्राह्मण महा विनयवान् तीन प्रदक्षिणा कर श्रीगुरु को अर अपने गुरु क्षीरकदंब को प्रणाम कर के व्रत आदरे व्रत धार गुरु को नमस्कार कर घर आया।।41।। शोक कर महातप्तायमान पर्वत की माता को धैर्य बंधाय नारद निज स्थानक गया। नारद महा जिनधर्मी निर्मल चित्त है।।42।।

कई एक दिन में वसु का पिता अभिचन्द्र वसु को राज्य दे संसार से विरक्त होय दिगंबरी दीक्षा धारता भया। गृह छोड़ तप के अर्थ वन में गया।।43।। उस पीछे पिता के पाट पर बसु बैठा। सो इन्द्र की नाईं राज करे नवयौवन विषे आरूढ जैसे बींद वनिता को वश करे तैसे पृथ्वी को राजा वसु वश करता भया राजनीति विषे अति निपुण।।44।। सो राजा वसु आकाश तुल्य स्फटिकमणि के सिंहासन पर बैठा ऐसा भासे मानों आकाश विषे बैठा है सो सब प्रजा यही जानती भई जो राजाधिराज सत्य के प्रताप कर आकाश विषे विराजे हैं।।45।। पृथ्वी विषे इसकी कीर्ति अति विस्तरी कि राजा धर्म के प्रसाद कर अधर विराजे है। स्फटिकमणि के सिंहासन का मरम कोई न जाने। वसु का झूठा प्रपंच लोकों ने सत्य जाना।।46।। उस वसु के दो राणी। एक इक्ष्वाकुवंशी राजा की बेटी। दूजी कुरुवंशी भूप की पुत्री। उन दोनों राणियों के वसु के योग से वसु ही समान दश पुत्र भए।।47।।

उनके नाम – बृहद्वसु, चित्रवसु, वासव, अर्क, महावसु, विश्वासु, रवि, सूर्य्य, सुवसुः, बृहध्वज ये दश ही शस्त्रविद्या विषे निपुण होत भये। इन दशों पुत्रों कर वेष्टित राजा वसु सुख भोगता भया। ये दश पुत्र परस्पर महा प्रीतिवान जैसे पांच इन्द्री इर पांच उनके विषय इनमें अभेदता वैसे इन दशों के चित्त की एकता पृथ्वी विषे प्रसिद्ध होती भई।

अथानन्तर – एक दिन बहुत शिष्यों सहित नारद पर्वत को गुरु का पुत्र जान देखवे आए।।51।। सो आयकर पर्वत का समाधान पूछा। अर गुरु की स्त्री का समाधान पूछा। अर गुरु की कथा कहते तिष्ठते थे।

अथानन्तर – पर्वत महा गर्वित वेदार्थ का व्याख्यान करता था सो नारद के समीप अजैर्यष्टव्यं इस वचन का निःसंदेह पापी ने यही अर्थ किया। अज कहिये अजा के पुत्र पशु उनकर स्वर्गाभिलाषी जे द्विज उनको यज्ञ करने। कैसे हैं द्विज? पद वाक्य पुराणार्थ उनका जो परमार्थ उस विषे प्रवीण हैं।।55।। ऐसी अयोग्य वार्ता ही अंध के मुख से निकसी उसका प्रति उत्तर नारद युक्ति आगम के बलकर पर्वत से कहता भया। कैसा है नारद, शास्त्र के बलकर दूर किया है लोक का अज्ञानरूप तिमिर जिसने।।56।।

नारद कहे है – हे भद्र के पुत्र! ऐसा अयोग्य व्याख्यान तू कहां से सीखा। यह विपरीत संप्रदाय तेरे कहां से आई।।57।। रे पापी! मेरा अर तेरा तो गुरु एक, शिष्यों को गुरु तो धर्म ही का उपदेश दिया। तेरे हाथ अधर्म कहां से आया। जो सरल बुद्धि यथार्थ के वेत्ता भले शिष्य हैं उनके तो संप्रदाय एक है। जे गुरु की शुश्रूषा विषे सावधान हैं, उनके जुदी आम्नाय नहीं, तैं यह संप्रदाय का भेद कहां से पाया? तू नहीं जानै है जो अपने गुरु क्षीरकदंब अज शब्द का यह अर्थ करते थे जो तीन वर्ष की शालि बोई न ऊगे सो अज कहिये अथवा जौ न ऊगे सो अज कहिये। तिनकर होम करना यह प्रगट अर्थ। यह व्याख्यान तो बड़े बड़े पुरुष सदा करते आये हैं तू यह विपरीत व्याख्यान कहां से सीखा। ऐसा नारद ने कहा तौ भी वह पापी दुर्निवार जो हठ उस कर विपरीत है बुद्धि जिसकी सो नारद के वचन न मानता भया अर यह कहता भया – हे नारद बहुत कहने पर क्या? मेरी बात सुन जो तू इस वाद विषे जीते अर मैं हारूं तो मेरी जिह्वा छेद करूं तब नारद ने कही।

हे पर्वत! तू खोटी पक्षरूप अग्नि की शिखा विषे क्यों पड़े है।।62।। तब पर्वत कहता भया बहुत कहिने कर क्या तेरी अर मेरी चर्चा राजा वसु की सभा में होगी। वसु कहे सो प्रमाण। तब नारद ने कही तू भ्रष्ट है गुरु से विमुख है। ऐसा कहकर नारद तो अपने स्थानक गया। अर पर्वत ने यह वार्ता माता के समीप कही।।64।। सो सुनकर पुत्र के वचन निंदती भई। अर कही – तू असत्यवादी है नारद का वचन सत्य है।।65।। नारद विद्वान है। अर तू विपरीत मार्गी है। तेरा पिता समस्त शास्त्र के समूह का वेत्ता जो कहता था सोई नारद कहे है।।66।। ऐसा कहकर पर्वत की माता प्रभात ही वसु के घर गई। तब राजा अति आदर कर गुरांनी को आगम का कारण पूछता भया। तब वह सर्व वृत्तांत वसु को कहकर पर्वत की माता से गुरुदक्षिणा मांगती भई। अर कही तुम गुरु के घर वचन दिया था सो याद करो।।69।।

हे पुत्र! तुम तो सब जानो हो, शास्त्र का मार्ग तुमसे छिपा नहीं। बात जो नारद कहे है सो सत्य है। परन्तु तुम पर्वत का वचन थापना अर नारद का वचन न थापना।।70।। वसु का बुरा होनहार सो धर्म अधर्म अर न्याय अर अन्याय ऊपर दृष्टि न धारी। अर गुरांनी को वचन दिया था उसी पर दृष्टि धरी। गुरांनी का वचन प्रमाण किया तब प्रसन्न होय घर गई।।71।। अर राजा वसु सिंहासन पर बैठा जैसे देवों के समूह इन्द्र को सेवैं छत्रियों के समूह इसको सेवते भये।।72।। उस समय पर्वत अर नारद राजा की सभा में गए अर अनेक शास्त्र के पाठी भी सभा में बैठे।।73।। ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र ये चार वर्ण। अर तापसादि आश्रम के धारक सभा में आये।।।74।।

वहां कई एक विप्र तो सामवेद की चरचा पढ़ते भये। जिनके श्रवणकर वेदपाठी प्रसन्न होय। अर

कईएक ओंकार का उच्चार करते पदक्रम सहित मंत्र पढ़ते भये। अर कई एक उदात्त अनुदात्त जे शब्द शास्त्र संबंधी स्वर पद उनका उच्चारण करते भये। ह्रस्व दीर्घ लघु इनके स्वरूप का उच्चारण करते भये। कइएक ब्राह्मण ऋग्वेद यजुर्वेद इनका पाठ करते भये। उच्च स्वर कर पाठ किया उसकर और का शब्द सुन्या न जाये। अनेक विप्रों कर राजा का आंगण पूरित होय गया। सिंहासन पर तिष्ठा जो राजा उसको आशीर्वाद देकर पर्वत अर नारद राजा के समीप बैठे। अर सभा विषे अनेक तापस आये तापस मानो वृक्ष समान हैं। वृक्ष के तो अंकुर हैं इनके डाढी है अर वृक्ष के बड़े फल हैं। अर इनके कमंडलु हैं। वृक्षों के जटा का भार है अर इनके वृक्षों के वल्कल हैं।।80।। सभा विषे कइएक पक्षपात रहित तराजू की डंडी समान तिष्ठे।।81।। कई एक कुमार्ग विषे प्रवर्ते जे वादीरूप माते हाथी, उनको अंकुश कर मार्ग विषे ल्यावन हारे विराजे हैं अर कइएक कसोटी के पाषाण समान वस्तु के निश्चय करणहारे हैं बैठे हैं। इह भांति पंडित यथायोग्य स्थान अपने अपने आसन बैठे हैं।

उस समय जे ज्ञान अर वयकर वृद्ध हैं वे राजा से प्रज्ञप्ति करते भये – हे राजन्! नारद अर पर्वत दोनों पंडित शब्द शास्त्र के वेत्ता तुम्हारे निकट आये हैं। शब्द के विचार विषे इनका विवाद है।।84।। हे राजन्! वेद के अर्थ का विचार इस भांति पृथ्वी विषे तुम को टार अर न जाने। अन्य लोक संप्रदाय के मरमी (ज्ञाता) नहीं तुम सब संप्रदाय जानो हो।।85।। इससे तुम्हारे समीप सब पंडितों के आगे इनकी हार जीत होवे। न्याय कर एक को साचा करिये एक को झूठा करिये।।86।। इस वादविषे वेद के अनुसार न्याय का निश्चय करिये संदेह रहित प्रवृत्ति है सो सर्वलोक की उपकार करणहारी है।।87।।

इस भांति सभा के लोगों ने नरेन्द्र से वीनती करी नरेन्द्र तो पर्वत का पक्षपाती था सो नृप के बल कर गर्व का भरा पर्वत अपनी पक्ष प्रगट करता भया। राजा ने पर्वत को आज्ञा करी तुम्हारा रहस्य तुम कहो। तब पर्वत कहता भया वेद का वचन है कि स्वर्ग के अर्थी अजों कर यज्ञ की विधि करो अज नाम अजा पुत्र का सो चतुष्पद पशु है यह प्रगट अर्थ है अर वेद ही विषे यह अर्थ नहीं। पशु का नाम अज लोक विषे भी प्रसिद्ध है। बाल गोपाल आबाल सबही इस अर्थ को जाने हैं। संसार विषे बाल वृद्ध से अज का अर्थ गोप्य नहीं। यह नर माता का दूध न मिले तो अजा के दुग्ध से पले है। उस मनुष्य के शरीर में अजापुत्र के गंध समान गंध आवे है सो अज शब्द का अर्थ देवों कर भी लोपा न जाय। सो प्रगट अर्थ अज सांचा अर्थ उसको अर से अर कहे तो व्यवहार का लोप होय है।।2।।

शास्त्र में भी अर लौकिक में भी अज शब्द का अर्थ अखंडित है। अर वेद विषे कहा है स्वर्ग का अभिलाषी अग्निहोत्रं जुह्यात उसका अर्थ अग्नि विषै होम करो। सो अग्नि आदि शब्द का अर्थ

www.vitragvani.com

प्रसिद्ध है। जैसे अग्नि शब्द का अर्थ कोई अर भांति न कर सके वैसे ही अज शब्द का अर्थ पशु है, यह बात प्रगट है। इससे अनादि से अज का अर्थ पशु अर वेद विषे निश्चय कर अज का होम है। अजैर्यष्टव्यं यह वेद का वाक्य है ये वचन पापी पर्वत सभा विषे कहता भया, फिर कहा – ऐसी आशंका न करनी जो पशु को निपात विषे महादुःख होय सो मंत्र के प्रभाव कर पशु को पीड़ा नहीं सुख से मरण होय है। मंत्रों के पाठ विषे अर स्वाहा शब्द विषे यज्ञ दीक्षा के अन्त प्रत्यक्ष सुख की अवस्था होय है, मणि मंत्र अर औषध इनका अचिंत्य पराक्रम है।।8।। इत्यादि पाप के भरे वचन पर्वत ने कहे अर कहता भया – जीव तो महा सूक्ष्म है सो उसका निपात नहीं अग्नि विषे शस्त्रादि कर जीव का निपात नहीं तो मंत्रकर होम में कैसे उसके निपात होय, जीव तो अमर है।।9।। अर ये देह के अंग हैं वे अपने अपने देवताओं में जाय हैं सूर्य ही नेत्रों का स्वामी है, अर कानन के स्वामी दिशा विषे जाय हैं, अर प्राणों का स्वामी वायु सो प्राण वायु में जाय हैं, अर रुधिर जल विषे जाय है अर शरीर पृथ्वी विषे मिल जाय है। ये अंग अपने अपने आश्रय विषे जाय प्राप्त होय हैं, अर मंत्र कर होम किये पशु स्वर्ग लोक के सुख को प्राप्त होय हैं, जैसे यज्ञ का करणहारी कल्प पर्यन्त बहुत काल स्वर्ग विषे सुख भोगे हैं वैसे पशु भी भोगे।।11।।

अभिसंधिकृताबंधस्वर्गात्पाशोस्यनेत्यपि।
न बलात् त्याज्यमानस्य यशोवृद्धिर्घृतादिभिः।।12।।

इस भांति पाप का प्रहार (पहाड़) जो पर्वत सो अपने पक्ष को स्थापन कर चुप हो रहा। तब नारद उसकी अयोग्य श्रद्धा के खंडन के अर्थ कहता भया। वह नारद श्रावक के व्रत का धारक महा विचक्षण ब्राह्मण है।।13।। सकल सभा को कहता भया – अहो सुबुद्धि हो! तुम सावधान होकर सुनो। यह पर्वत अन्याय रूप वचन कहे है। इसके जो वचन सो मैं खंडन करता हूँ। अज शब्द के अर्थ बहुत हैं। अर यह अज शब्द का अर्थ एक छेला ही करे है, सो वृथा है। जैसे हरि शब्द के अनेक अर्थ हैं। हरिनाम इन्द्र का। हरिनाम नारायण का। हरिनाम सिंह का। हरिनाम मर्कट का। सो शब्द के अनेक अर्थ हैं। अथवा कौशिक नाम इन्द्र का अर कौशिक नाम घूघू का सो शब्द के अनेक अर्थ हैं। अर यह विपरीत अर्थ इसकी बुद्धि में भासा है। अज नाम बकरे का, सो यह अर्थ यहां नहीं। यहां यह अर्थ है जो त्रिवर्षी शालि तथा तिवर से यव उनका होम करना।।15।। अर अज कहिये छेली सो यह अर्थ अपने अभिप्राय से करे है यह अर्थ यहां नहीं। अर वीतराग के उपदेश का नाम वेद है केवली की दिव्य ध्वनि सो वेद अर नहीं।

गुरुपूर्वक्रमादर्थानदृशः शब्दार्थनिश्चिताः।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

पृथ्वी आदि सामग्री होते सन्ते बीज से अंकूरे होय हैं। जो बीज अंकूर शक्ति से रहित होय बाह्या न ऊगे सो अज कहिये। बाह्या ऊगे सो अज नहीं। सो तिवरसी शालि तिवर से यव बाह्या न ऊगैं। अचित्त हैं इससे उनकर क्रियाविधान विषे होम करना। भगवंत की पूजा का नाम यज्ञ है अर पूजा किये पीछे ब्राह्मण क्षत्री वैश्य अग्निहोत्र करे हैं सो होम विषे अचित्त सामग्री योग्य है सचित्त का होम नहीं। इस विधान कर किया होम सो स्वर्ग फल का दाता है।।29।। देवपूजा, गुरुसेवा, स्वाध्याय, संयम, तप, अर दान ये षट् कर्म वीतराग के आगम में बताये हैं। सो भगवान् वीतराग देव धर्म का विधाता पुराण पुरुष परम उत्कृष्ट सब का रक्षक मुनियों का इन्द्र, इन्द्रादिक देवों कर पूज्य सो स्वयंभू वेद विषे वखाना है।।30।। सो भगवान मुक्ति मार्ग का उपदेशक, संसार समुद्र का तारक अनंतज्ञान-अनंत सौख्यादि अनंत गुण का स्वामी ईश्वर महामहेश्वर जिसके अनंत नाम, ब्रह्मा, विष्णु, ईशान, सिद्ध, बुद्ध, नीरोग, निर्भय, आदित्यवर्ण, वृषभ उसे हित के वांछिक पूजे हैं। उस भगवान के प्रसाद से पुरुषों को स्वर्ग सुख निश्चय से होय है। यह उसी के प्रसाद से कीर्ति दीप्ति कांति धैर्य इत्यादिक अनेक गुण होय हैं। पशु की कहा बात? चून का भी पशु बनाय होम न करना। जब पशु का आकार चून का बनाया तब इसके परिणाम दुष्ट भये, सो दुष्ट परिणामों से पाप अर शुभ परिणामों से पुण्य का बंध होय है।

अर नाम स्थापना द्रव्य भाव। ये चार निक्षेप हैं। सो नाम कहिये नाममात्र, स्थापना कहिये आकार बनाय, द्रव्य कहिये होनहार अर भाव कहिये साक्षात्, ये चार भेद पशु के उनकी हिंसा न चिंतनी। अर पर्वत ने कही जो मंत्र थकी मरण होय उसमें पशु को दुःख नहीं, सो यह बात मिथ्या है। दुःख बिना मृत्यु ही नहीं जो मृत्यु सोई दुःख। सुख से किसी के प्राण न छूटें। अर मंत्रकर मरण कैसे होय? पापी पशु के होम ने हारे उस पशु के पग बांधि नासिका का निरोधकर निपात करे हैं सो शस्त्र के निपात से अधिक दुःख होय है। जो स्वतः स्वभाव प्राण छूटें, उसके प्राण दुःख बिना नहीं छूटें वह भी मरण समय विलाप करता दिखे है। तो पर के निमित्तकर जो मरे उसके दुःख की कहा बात? किसी का मारा मरे सो तो दुःखी ही होय है।।38।।

इस पापी पर्वत ने कही - जो यह जीव सूक्ष्म है सो मरा न मरे सो यह बात मिथ्या है। यह आत्मस्वरूप कर तो अविनाशी है अर अमूर्तिक है, न सूक्ष्म है न स्थूल है। अर शरीर के संबंध से सूक्ष्म स्थूल होय है। जो सूक्ष्म शरीर धरे तो सूक्ष्म कहिये अर स्थूल शरीर धरे तो स्थूल कहिये। ये जीव देह के संबंध से सूक्ष्म भी कहिये अर स्थूल भी कहिये। जैसे दीपक का प्रकाश जैसा मंदिर पावे वैसा ही विस्तरे तैसे देह के संबंध से प्राणी प्रदेशों के संकोच विस्तार को प्राप्त होय है। जैसा देह पावे

वैसा ही प्रमाण प्रदेश विस्तरे। इससे शरीर के योग से सूक्ष्म भी कहिये। अर जीव अनादिकाल से शरीर धारे है। सो अनंत शरीर धरे। अर जो सर्वथा सूक्ष्म ही कहिये तो सुख दुख कौन भोगे है। उससे तुम यह निश्चय जानो जो निश्चय तो यह जीव लोकप्रमाण है। अर व्यवहार नय करके देह प्रमाण है। अर देह का वियोग सो ही मरण। इससे मंत्र तंत्र शस्त्र विष अग्नि आदि के योग से इसके देह छूटने से दुःख ही है।।42।।

अर जब यह प्राणी अति दुःखकर देह को छोड़े है, तब नेत्र आदि सब इन्द्रियों का वियोग होय। सो वे आप ही छूटे हैं, उनका छूणावनहारा कोई देव नहीं, ये इन्द्री देवताओं के अंश हैं अर उनही में मिले हैं सो यह बात प्रमाण नहीं ये सबही पुद्‌गल के अंश हैं अर पुद्‌गल ही में मिले हैं।।43।। अर यह यज्ञ का फल स्वर्ग बतावे है सो जीव की हिंसा से स्वर्ग कहां से होय? यज्ञ के करणहारे हिंसक वेई स्वर्ग जांय तो नरक कौन जाय, नरक का कारण तो हिंसा ही है, सुख की प्राप्ति का कारण तो धर्म ही सो धर्म दयारूप है यज्ञ के करणहारे के दया बिना धर्म कैसे होय? माता जो कुपथ्य भोजन करे तो बालक को सुख हो कैसे? इस भांति नारद के वचन वेई भये मेघ सो सभारूप वर्षाऋतु विषे वचनरूप वज्रपात कर पर्वत की खोटी पक्ष सोई भया पर्वत उसे चकचूर करते भये।।45।।

तब सभा विषे जितने धर्मात्मा पंडित परीक्षा के करणहारे बैठे थे, उन्होंने नारद की प्रशंसा करी। अर पृथिवी विषे यश भया।।46।। फिर जितने पंडित बहुश्रुत थे उन्होंने राजा वसु को पूछा – हे राजन्! तुम जैसा क्षीरकदंब गुरु के मुख से सुना होय सो सत्य कहो।।47।। तब वह मूढ दुष्टबुद्धि वसु गुरु का वचन जानता हुवा भी झूठा बोला। गुरु का वचन तो यही था जो अज कहिये बोये न ऊगे ऐसे तिवरषे यव तथा तिवरषे शालि उनकर होम करना गुरु की तो यह प्ररुपणा थी। अर यह दुष्ट वसु कहता भया – अहो सभा के लोगो! नारद तो युक्तिकर कहे हैं अर पर्वत जो कहे है सो गुरु की आज्ञा प्रमाण कहै है। तब राजा वसु के मुख से वचन निकसे तब तत्काल ही स्फटिक का सिंहासन पृथिवी विषे डूब गया। अर वसु पाताल विषे गड़ा सो निश्चय सेती पाप से पतन ही होय। पाताल विषे प्रवेशकर प्राण तजे सो सातवें नरक गया।

महा रौरव जो वह नरक उस विषे नारकी भया। हिंसादिक मृषानंद नामा रौद्रध्यान उनकर युक्त जो वसु सो नरक जाय ही जाय वह नर्क न जाय तो कौन जाय रौद्र ध्यान ही दुःख का कारण है। सब लोक के प्रत्यक्ष वसु पाताल में पड़ा तब लोकों के मुख से हाय हाय धिक्कार धिक्कार यह शब्द निकसा। वसु ने असत्य का फल पाया अर सब लोक वसु की निन्दा करते भये अर महादुष्ट जो पर्वत उसको धिक्कार देय कर नगर से निकासा।।55।। अर नारद सत्यवादी निःकपट उसकी वादविषे सभा

में जीत भई। सो सबने प्रशंसा करी अर धन्य धन्य कहा अर पूजाकर लोक अपने अपने स्थान को गये।।56।। अर पर्वत धिक्कार पाय अनेक देशों विषे भ्रमण करता हुवा महाकाल नामा असुर कुमार क्षुद्रदेव उसे देखता भया। कैसा है असुर, क्रूर है परिणाम जिसके महा निर्दय अनेक जीवों से द्वेषरूप रहे है बुद्धि जिसकी।।57।।

उसका भी पर भव विषे पराभव हुवा है। उन जीवों से वैररूप है उसे पर्वत अपना पराभव कह उससे मित्रता कर एक मंत्र किया।।58।। दोनों पापियों ने मिलकर हिंसा का शास्त्र बनाया। इस लोक विषे पृथिवी को डुबावन हारा हिंसा यज्ञ उपदेशा। मूढ लोकों को हिंसा विषे प्रवर्तावता भया।।59।। पाप के उपदेश कर वह पापी मरके सातवें नरक गया मानों वसु की सेवा करने को समीप ही गया। वसु अर पर्वत दोनों सातवें नरक गये।।60।। फिर लोकों ने वसु के राज विषे बड़े पुत्र को थाप्या। सो भी थोड़े ही दिन जिया फिर दूजे को थाप्या सो भी अल्प दिन में मूवा। इस भांति बसु के आठ पुत्र तो थोड़े थोड़े दिन में काल को प्राप्त भये तब नवमा पुत्र सुबसु मृत्यु के भय से भागकर नागपुर नामा नगर में गया अर दशमा बृहध्वज मथुरा विषे आया।।62।।

हाय हाय बड़ा कष्ट! पापी पाप का फल प्रत्यक्ष पावे हैं तो भी पाप को नहीं तजे हैं राजा वसु प्रत्यक्ष पाताल में डूब गया। अर दुर्गति गया तो भी पर्वत ने पाप न छोड़ा, हिंसा की श्रद्धाकर उसी गति को प्राप्त भया। देखो पहिले तो वसु ने पृथिवी विषे महिमा पाई लोकों ने जाना यह सत्यवादी है फिर हिंसा मृषानंद के योग से अधोगति गया अर पापी पर्वत अभिमान के योग से हिंसा का पक्षकर वसु के पीछे ही वसु के स्थान को गया। सप्तम नरक समान अर दूजा पाप का फल नहीं अर सर्वार्थसिद्धि समान धर्म का फल नहीं सो पाप का पूर्ण फल वसु अर पर्वत ने पाया अर नारद महा धर्मात्मा सो दिवाकर नाम विद्याधर सम्यक् दृष्टि उसे परम मित्र कर पर्वत के खोटे मत का क्षय कर ऊर्ध्वलोक को गया। परम सुख का निवास देवलोक सो नारद ब्राह्मण पावता भया परंपराय मोक्ष पावेगा प्राणियों के दया सोई धर्म है अर हिंसा से रहित मन सो ही दया उससे मन वचन काय कर प्राणियों की हिंसा न करनी। जे धर्म विषे सावधान हैं वे अपने प्राण जांय तो भी किसी प्राणी के प्राण घात न करें जो विवेकी आदर कर दयाधर्म को धारे सो मोह मई मुक्ति के आगे जो आड उसे तोड़कर निर्वाण को प्राप्त होय। अर जो कोई भव धरना भी होय तो स्वर्ग विषे जाय वीतराग देव का प्ररूप्या धर्म जो आचरे सो विपुल कहिये विस्तीर्ण परम आनंद पद को निश्चय सेती पावे।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ वसु–उपाख्याने नारदपर्वतविवादवर्णनं नाम सप्तदशः सर्गः।।17।।

अठारहवाँ सर्ग

अथानन्तर – जो वृषध्वज नामा वसु का दशमा पुत्र मथुरा विषे गया। उसके महा विनयवान् सुबाहु नामा पुत्र भया। सो राजा वृषध्वज उसे राजलक्ष्मी देय कर आप तपो लक्ष्मी को प्राप्त भया फिर राजा सुबाहु अपने पुत्र दीर्घवाहु को राज देय ऋषि भया। अर दीर्घवाहु बज्रवाहु को अर वज्रबाहु अभिमान नामा पुत्र को अर वह सुभान को सुभान भीम को राज देय निर्ग्रन्थ दीक्षा धारता भया।।3।। इस भांति अनेक नरेश्वर हरिवंशी मुनिसुव्रतनाथ के तीर्थ विषे व्यतीत भए। मुनिसुव्रत का तीर्थ कहिये समय छह लाख वर्ष का। फिर इक्कीसवें तीर्थंकर नमिनाथ उनका पांच लाख वर्ष का। उस समय हरिवंश रूप उदयाचल विषे राजा यदु प्रगट भया। उसकी आयु पन्द्रह हजार वर्ष सो राजा यदु इस भूमि विषे भूपों का दूजा भास्कर कहिये सूर्य्य भया।।6।।

उसके वंश के यादव कहावे उस यदु के नरपति नामा पुत्र भया। सो पृथिवी रूप स्त्री का पति भया। उसे राज देय राजा यदु जिनराज का तप धर देवलोक गया।।7।। फिर नरपति के शूर अर सुवीर यह दो पुत्र भए। सो दोनों ही महा शूरवीर उनको राज्य विषे थाप राजा मुनि भया। फिर बड़ा भाई शूर छोटे भाई सुवीर को मथुरा विषै थापकर आप कुसय्य नामा देश विषे शौर्यपुर नामा नगर बसाया।।9।। उस शूर के अन्धक वृष्टि आदि महा शूरवीर पुत्र भए। अर सुवीर मथुरा का ईश्वर उसके भोजकवृष्टि आदि महा योद्धा पुत्र भए। कई एक दिन में राजा शूर तो अपने बड़े पुत्र अन्धक वृष्टि उसके सिर राज का भार धरा अर मथुरा का पति सुवीर उसने भोजक वृष्टि को राज दिया। यह दोनों भाई अपने अपने ज्येष्ठ पुत्र को राज देय सुप्रतिष्ठित स्वामी के समीप साधु के व्रत धार सिद्ध भए।।11।।

अन्धकवृष्टि शूर का पुत्र शौर्यपुर में राज करे। उसके महा उत्तम राणी सुभद्रा उसके देवलोक से चय कर दश पुत्र देवों समान महा दिव्य रूप थे। उनके नाम – समुद्रविजय, अक्षोभ, स्तिमितिसागर, हिमवान्, विजय, अचल, धारण, पूरण, अभिचन्द्र, वसुदेव, यह दश पुत्र राजा शूर के महा भाग्य सत्यार्थ हैं नाम जिनके वे लोक विषे दशाहिनक कहाए।।14।। अर कुन्ती तथा माद्री यह दो कन्या स्त्रियों के गुण कर शोभित। सो साक्षात् लक्ष्मी अर सरस्वती समान दश भाइयों की बहन अति सोहती भईं।।15।। अर सुवीर का पुत्र भोजकवृष्टि उसके राणी पद्मावती उसके उग्रसेन महासेन देवसेन, यह तीन पुत्र भए।

यह तो राजा वसु का दशमा पुत्र बृहध्वज उसके वंश का विस्तार कहा। अर वसु का नवमा पुत्र सुबाहु नागपुर गया था उसके बृहद्रथ नामा पुत्र भया। सो मगध देश का राज्य करता भया। उसके नरवर उसके पुत्र का नाम दृढ़रथ उसके सुखरथ उसके दीपक सो कुल का दीपक उसके सागरसेन

उसके सुमित्र उसके बिन्दुसार उसके देवसर्व उसके दर्भक उसके शतधनु सो महा योद्धा धनुषधारियों में मुख्य।

इस भांति अनेक राजा हरिवंश में भए। वे अपने अपने पुत्र को राज देकर मुनिराज होय स्वर्ग-मोक्ष गए।।20।। फिर शत्रुओं का जीतनहारा राजा निहतशत्रु होता भया उसके पुत्र सत्पति के बृहद्रथ सो राजगृह का राज्य करता भया। उसका पुत्र जरासिन्धु, वश करी है तीन खण्ड की भूमि जिसने। सो रावण समान त्रिखण्डी नवमा प्रतिनारायण लक्ष्मी कर देव समान।।22।। उसकी पटराणी कालिंदसेना समस्त पतिव्रतावों में गुण कर मुख्य। उसके कालयवनादि पुत्र, अर अपराजित आदि भाई, वह जरासिन्धु अर्द्धचक्री भ्रातृ पुत्रादि संयुक्त, हरिवंश रूप महावृक्ष उसकी शाखा का फल होता भया।।25।। एक वह योद्धा पृथ्वी का अद्वितीय पति विद्याधर अर भूमिगोचरी के समूह को जीत कर राजगृह विषे सुख से राज करता भया। वह नृपों में सिंह समान उसने उत्तर दिशा के और दक्षिण दिशा के राजा सब वश किए।।28।। पूर्व के समुद्र पर्यंत अर पश्चिम के समुद्र पर्यंत सब राजा वश किये अर मध्यदेश के सब भूपति सेवा करें, भूचर अर खेचर सब राजाओं के सिर का सेहरा। वह अर्द्धचक्रवर्ती की लक्ष्मी का भोक्ता इन्द्र समान सुख भोगता भया।

एक दिन शौर्यपुर के उद्यान विषे गन्ध मादन नामा जो पर्वत उस पर रात्रि समय प्रतिमा योग धर सुप्रतिष्ठित नामा मुनि विराजे थे। सो एक सुदर्शन नामा यक्ष देवता ने पूर्व वैर के योग से यती को उपसर्ग किया। अग्निपात, हिमपात, मेघवृष्टादि उसके किये दुःसह उपसर्ग जीत कर घातिया कर्मों के क्षय से मुनि ने केवलज्ञान पाया। तब सौधर्म इन्द्रादिक देवों के समूह जो चार प्रकार के अपनी देवियों सहित आय केवली की पूजा कर वन्दना करते भए।।32।। सुप्रतिष्ठित मुनि को केवल उपजा सुन शौर्यपुर का राजा अन्धकवृष्टि, स्त्री पुत्रादि परिवार कर संयुक्त सर्वज्ञ की पूजा कर अपने स्थान में बैठे।।33।। अर भी जगत् के जीव अंजुली जोड़ सावधान होय तिष्ठे, धर्म श्रवण विषे लगाये हैं कान जिन्होंने।

तब भगवान केवली कहते भए - धर्म से अर्थ काम मोक्ष की प्राप्ति होय है तीन लोक विषे धर्म ही सार है। जो कोई अर्थ काम मोक्ष की इच्छा करे सो निरन्तर धर्म का संग्रह करो।।35।। यह धर्म जो है सो जीवों को सुख का आधार है अर जो मन वचन काय कर धर्म को सेवे पाप को तजे सो सुख के समूह को पावे।।36।। यह धर्म उत्कृष्ट मंगल है इसके लक्षण सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र हैं, दया संयम तप इनकर धर्म उपजे है।।37।। सकल पदार्थों से इस लोक विषे धर्म ही उत्तम है। अर यह धर्म ही कामधेनु समान पूर्ण सुख की खान है।।38।। अर जो शरणार्थी हैं उनको इस लोक विषे धर्म ही परम शरण है।

कैसे हैं संसार के जीव, जन्म जरा मरण रोग शोक दुःख रूप जो सूर्य उस कर आताप को प्राप्त भए हैं उनको धर्म बिना अर आताप का हर्त्ता नहीं।।39।। मनुष्य अर देवों के समस्त सुख अर प्रताप का कारण धर्म ही है। अर मुक्ति के सुख का मूल भी धर्म ही है।।40।। इक्कीसवें तीर्थंकर श्रीनमिनाथ उन्होंने लोकों को यही धर्म भाष्या। जो अनादिकाल से केवली भगवान कहते आए हैं। जब तक नेमिनाथ का जन्म न होय तब तक नमिनाथ स्वामी का तीर्थ है, सो नमिनाथ स्वामी ने जो धर्म निरूपण किया सोई हम तुमको कहे हैं। वे नमिनाथ गर्भावतारादि पंच कल्याणक पूजा के भाजन जगत्पूज्य संसार के तिरने अर्थ धर्म को प्रगट करते भए। इस ही भांति अनादि काल से परिपाटी है।।42।।

धर्म के दो भेद हैं – एक यती का धर्म दूजा श्रावक का, सो यती का धर्म पंच महाव्रत रूप। प्रथम अहिंसा महाव्रत, दूजा सत्य, तीजा अचौर्य, चौथा ब्रह्मचर्य, पांचमा परिग्रह त्याग, यह पंच महाव्रत। अर मनोगुप्ति, वचनगुप्ति, कायगुप्ति यह यह तीन गुप्ति अर ईया समिति, भाषा समिति, एषणा समिति, आदान निक्षेपण प्रतिष्ठापन यह पंच समिति तेरह प्रकार चारित्र मुनि का धर्म, जहां सर्व पापयोग का त्याग सो साधु का धर्म।।45।। अर श्रावक का धर्म पंच अणुव्रत तीन गुणव्रत चार शिक्षाव्रत। यह बारह श्रावक के व्रत हैं जो सर्व त्याग सो मुनि का धर्म अर एक देश त्याग सो श्रावक का धर्म वे ही पंच महाव्रत। एक देश रूप से अणुव्रत कहिये अर दिग्व्रत देशव्रत अनर्थ दण्ड परिहार यह तीन गुणव्रत अर त्रिकाल सामायिक चार प्रोषधोपवास अर अतिथि संविभाग अर भोगोपभोग प्रमाण अंतिम संलेषणा मरण यह चार शिक्षाव्रत कहे।।46।।

अर मांस मद्य मधु उदंबरादि पंच फलों का त्याग अर जिन वृक्षों में दूध झरे, जम्बू अर चोरी परनारी आषेट इत्यादि पापों का त्याग सो श्रावक का धर्म कहिये, यावज्जीव जीव हिंसा का त्याग, अर नियम कहिये पक्ष मास वर्ष आदि मर्यादा रूप त्याग, सो अभक्ष्य का त्याग तो यावज्जीव ही करना, अर भक्ष का भी यावज्जीव त्याग करे सो तो अति उत्तम है, अर प्रमाणरूप नेम करे तो भी भला अर सप्त व्यसनों का त्याग अर अयोग वस्तुवों का यावज्जीव त्याग ही करना।।48।।

यति अर श्रावक के व्रत का मूल सम्यक्त है, उसके आठ अंग निःशंकित निष्कांक्षित निर्विचिकित्सा अमूढदृष्टि उपगूहन स्थितिकरण वात्सल्य प्रभावना। इन आठ अंगों कर सम्यक्त्व सोहे है। सम्यक्त्व सहित श्रावक का धर्म साक्षात् स्वर्ग का कारण है। अर परंपरा से मोक्ष का कारण है अर साधु का धर्म साक्षात् मोक्ष का साधन है। यति का धर्म मनुष्य देह विषे ही होय दूजी देह विषै न होय। श्रावक का धर्म मनुष्य तथा तिर्यंच कै होय। देव नारकियों कै न होय अर सम्यक्त्व चारों ही गति में उपजे परन्तु सैनी पंचेंद्री के उपजे। इस संसार विषे ये प्राणी त्रस-स्थावर योनि विषे कर्म के उदय से अनंत

क्लेश भोगे हैं, पृथ्वीकाय अपकाय तेजकाय वायुकाय वनस्पतिकाय इन शरीरों विषे एक स्पर्शन इन्द्री को धार यह जीव बहुत काल परिभ्रमण करे है। अर अनंत जीव नित्य ही निगोद में ऐसे हैं जिन्होंने अनादिकाल से कभी भी अब तक त्रस पर्याय न पाई, निगोद में है निवास जिनका। ये सकल संसारी जीव चौरासी लाख योनी अर अनेक कुल कोडि विषे भ्रमण करे हैं।

चौरासी लाख के भेद सुनों – पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, नित्यनिगोद – ये छह जाति तो प्रत्येक प्रत्येक सात सात लाख योनि उनकी बयालीस लाख भई अर प्रत्येक वनस्पति दश लाख योनि तब स्थावर योनि के सब भेद बावन लाख भये। अर वेइंद्री तेइंद्री चौइंद्री। ये प्रत्येक प्रत्येक दो दो लाख योनि तब छह लाख योनि भईं। तब स्थावर अर ये अठावन लाख योनि भई अर चार लाख पंचेंद्री पशु ये बासठ लाख एक एक तिर्यंच गति से भेद भये अर चौदह लाख योनि मनुष्यों की अर चार लाख नारकी कही। देवगति चार लाख ये सब चौरासी लाख योनि भई अर एक सौ साडे निन्याणवें लाख। कुल कोडियों के भेद सुनो – पृथ्वीकाय के बाईस लाख कोडी अर जल के सात लाख कोडी कुल अर वायु के सात लाख कोडी कुल अर तेज के तीन लाख कोडी कुल अर वनस्पति के अठाईस लाख कोडी कुल अर वेइंद्री के सात तेइंद्री के आठ चौइन्द्री के नव ये विकलत्रय के चौइस लाख कुल कोडि।।60।। अर पंचेंद्री तिर्यंचों के जलचर के साढ़े बारह लाख कोडी कुल अर पंखियों के बारह लाख कोडी कुल अर स्थलचरों के दश लाख कोडीकुल अर सर्प्पों के नव लाख कोडीकुल अर मनुष्यों के चौदह लाख कोडी कुल अर नारकियों के पच्चीस लाख कोडीकुल अर देवों का छब्बीस लाख कोडीकुल ये सब एक सौ साढे निन्याणवें लाख कोडीकुल भये।।63।।

अर जीवों का आयु सुनो – कठोर पृथ्वीकाय का उत्कृष्ट आयु बाईस हजार वर्ष अर मृदु पृथ्वीकाय का आयु बारह हजार वर्ष।।64।। अर जलकाय का सात हजार वर्ष वायुकाय का तीन हजार वर्ष अर अग्निकाय का तीन दिन।।65।। अर प्रत्येक वनस्पति काय का आयु दश हजार वर्ष यह उत्कृष्ट आयु जानना, अर वेइन्द्री का बारह हजार वर्ष तेइन्द्री का उणचास दिन अर चौइंद्री का छह मास यह उत्कृष्ट आयु कही। अर पंचेन्द्री में पशु–पक्षियों की उत्कृष्ट आयु बहत्तर हजार वर्ष अर कइएक जाति के पक्षियों का वियालीस हजार वर्ष भी है।।68।। अर सर्प्पों का उत्कृष्ट आयु नवपूर्वांग, एक पूर्वांग के चौरासी लाख वर्ष अर मनुष्यों की आयु उत्कृष्ट कोटि पूर्व, अर मच्छ का भी एता ही आयु जानना यह तो कर्मभूमि की अपेक्षा कथन किया अर भोगभूमि की अपेक्षा नर अर तिर्यंच का उत्कृष्ट आयु तीन पल्य, देव अर नारकीयों का आयु उत्कृष्ट सागर तेतीस अर जघन्य आयु दश हजार वर्ष अर मनुष्य तिर्यंच का आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त यह तो जीवों की आयु कही।

अब काय का आकार सुनो – पृथ्वीकाय के जीवों की काय का आकार मसूर अन्न समान, अर जल काय के जीवों का आकार तृणविंदुवत्, अर अग्नि काय के जीवों का आकार सूई समान अर पवन काय के जीवों का आकार ध्वजा समान अर वनस्पति वा त्रसकाय के जीवों के अनेक आकार पांचों जाति के स्थावर अर विकलत्रय अर नारकी – ये सब हुंडक संस्थान है, अर मनुष्य अर तिर्यंचों के छहों संस्थान, देवों के समचतुरस्र संस्थान।।72।।

अर पर्याप्त में सूक्ष्म निगोदिया का शरीर अंगुल के असंख्यातवें भाग, अति सूक्ष्म जानो। जब यह जीव वर्तमान देह को तज कर नूतन शरीर गहिवे को गमन करे है तब अंतराल विषे एक समान दो समय तीन समय अनाहारक है। अर जब दूजी गति को जाय पहुंचे तब जैसे अपर्याप्त कहिये, अपूर्ण दशा है वैसे शरीर का आकार अल्प ही है। अपर्याप्त के तीजे समय विषे इसकी जघन्य अवगाहना होय है अर वनस्पति टार अर स्थावरों का आकार सूक्ष्म है अर वनस्पति काय की आदि लेकर पंचेंद्री पर्यंत शरीर का आकार सूक्ष्म भी है अर स्थूल भी है। वनस्पति में कमल समान अर दीर्घ देह नाही है, सो कमल की उत्कृष्ट उच्चता हजार योजन अर एक कोस समस्त एकेंद्रियों में उत्कृष्ट शरीर कमल का कहा।।75।। अर वेइन्द्रियों में बड़ा शंख का शरीर उत्कृष्ट अवगाहना बारह योजन अर तेइंद्रीयों में बड़ा कानखजूरा उसकी उत्कृष्ट अवगाहना तीन कोस अर चौइन्द्री में बड़ा भ्रमर उसकी उत्कृष्ट अवगाहना एक योजन अर पंचेंद्रीयों में बड़ा शरीर मच्छ का सो हजार योजन लंबा पर्याप्त अवस्था में यह दीर्घता कही सो यह मच्छ स्वयंभूरमण समुद्र में है इस समान दीर्घ देह अर का नहीं। इसके कर्ण विषे अल्प शरीर का धारक तंदुल मच्छ है, सो भी पापी है जिस नरक विषे महामच्छ जाय वहां ही वह जाय।

सम्मूर्छन जीवों में जलचर थलचर नभचर तिर्यंच उनका अपर्याप्त काल विषे शरीर वितस्ति प्रमाण है अर पर्याप्त समय जलचर थलचर गर्भज अर पर्याप्त सन्मूर्छन नभचर अर थलचर इनका शरीर पृथक् धनुष कहिये तीन से ऊपर नव के भीतर एते धनुष जानो अर नभचर तिर्यंच गर्भज पर्याप्त तथा अपर्याप्त उनकी देह का प्रमाण भी इतना ही जानो। अर थलचर, जलचर, गर्भज पर्याप्त उनका शरीर पांच सौ योजन। अर भोगभूमि विषे नर अर तिर्यंच का आयु तीन पल्य। अर काय तीन कोस अर तिर्यंच अनेक प्रकार के हैं। उनका शरीर यथायोग्य है सो जानना। अर भोगभूमि विषे जलचर नहीं अर विकलत्रय नहीं अर सन्मूर्छन नहीं गर्भज थलचर नभचर सैनी हैं।।80।। अर नारकीयों का उत्कृष्ट काय पांच से धनुष सातमें नरक है। अर देवों के शरीर की उत्कृष्ट अवगाहना धनुष पच्चीस सो असुर कुमार देवों की जानो सो यह कथन पीछे भी कर आये हैं अर अब भी प्रसंग पाय किया है।

अथानन्तर – पर्याप्त अपर्याप्त का भेद कहे हैं।।81।। पर्याप्ति छह उनके नाम आहार कहिये नवीन कर्म्म वर्गणा का ग्रहण, अर शरीर कहिए देह का धारण, अर इन्द्री कहिये स्पर्शादि पांच। अर आण

प्राण कहिये श्वासोश्वास। अर भाषा कहिए वचन। अर मन कहिए चित्त, यह छह पर्याप्ति उनमें एकेन्द्री के चार भाषा अर मन नहीं अर वेइंद्री से लेकर असैनी पंचेंद्री पर्यन्त पांच पर्याप्ति हैं एक मन नहीं अर सैनी पंचेंद्री के मन सहित षट् पर्याप्ति हैं। जब एकेन्द्री के चार पूर्ण होय चुके। अर पांचमा वालों के पांच होय चुके। अर छह वाले के छह होय चुके तब पर्याप्त कहिये। अर जब तक इन जीवों के पर्याप्ति की पूर्णता नहीं अर पूर्णता होयगी तौ लग पर्याप्त काल कहिये। अर जो अपर्याप्तकाल ही में मरण करें, सो अलब्ध पर्याप्त कहिये।।83।। अर स्पर्श रस घ्राण चक्षु श्रोत्र यह पांच इन्द्री कहिए। जिसके एक स्पर्श इंद्री ही है उनको थावर कहिए। अर वेइंद्री तेइंद्री चौइंद्री पंचेंद्री यह त्रस जीव कहिए। सो इन्द्रियों के भेद। एक भावेंद्री एक द्रव्येन्द्री उनमें लब्धि कहिए क्षयोपशम लब्धि। अर उपयोग कहिये देखने जानने की शक्ति इनको धरे होय सो भावेन्द्री कहिये अर निवृत्ति कहिये इन्द्रियों का माहिला आकार, तिनमें स्पर्श के तो अनेक आकार। अर रसना का आकार खुरपे समान है। अर घ्राण का आकार तिल के पुष्प समान है।।85।। अर आंख का आकार मसूर की दाल समान है। अर कान का आकार यव की नाली समान, यह निर्वृति भेद कहे हैं। अर उपकरण कहिये इन्द्री का बाहिरला आकार सो प्रत्यक्ष ही नजर आवे है। निर्वृति अर उपकरण को धरे सो द्रव्य इन्द्री कहिये।।86।।

अथानन्तर – इन्द्रियों के विषय का व्याख्यान करे हैं। एकेन्द्री के स्पर्श का विषय धनुष चार सौ, वेइन्द्रिय के स्पर्श का विषय धनुष आठ सौ अर तेइन्द्री के धनुष सोला सौ अर चौइंद्री के धनुष बत्तीस सौ अर असैनी पंचेन्द्री के धनुष चौंसठ सौ अर सैनी पंचेन्द्री के योजन नव, यह तो स्पर्श का विषय कहा अर रसना का विषय एकेन्द्री के तो है नहीं अर वेइंद्री के रसना का विषय धनुष चौंसठ अर तेइन्द्री के धनुष एक सौ अट्ठाईस अर चौइन्द्री के धनुष दोय सौ छप्पन अर पंचेंद्री के असेनी के धनुष पांच सौ बारह अर सैनी के योजन नव, यह रसना का विषय कहा।

अर घ्राण का विषय वेइन्द्री तक तो नहीं अर तेइंद्री के घ्राण का विषय धनुष सौ, अर चौइंद्री के धनुष दोय सौ अर असैनी के धनुष चार सौ अर सैनी के योजन नव, यह घ्राण विषय कहा। अर तेइन्द्री तक नेत्र का विषय नहीं, चौइन्द्री के नेत्र का विषय योजन गुणतीस सौ चव्वन अर असैनी के योजन गुणसठ सौ आठ सैनी पंचेंद्री के योजन सैंतालीस हजार दो सौ तिरेसठ यह चक्षु का विषय कहा। अर श्रोत्र का विषय चौइन्द्री तक तो नहीं। अर असैनी पंचेंद्री के योजन एक। अर सैनी पंचेन्द्री के योजन बारह। यह कान का विषय कहा। ये पांचों इन्द्रीयों के उत्कृष्ट विषय कहे।

अनेक विकल्प रूप यह संसार असार इस विषे मनुष्य देह ही दुर्लभ है। मुक्ति का साधन अर गति में नहीं। अशुभ कर्मों के उपशम से किसी प्रकार मनुष्य देह पायकर अर कछू उपाय न करना जे विवेकी हैं ते संसार ते विरक्त होय कर मुक्ति ही के अर्थ यत्न करे हैं। इससे जे मनुष्य देह सुफल

किया चाहैं वे निर्वाण के ही अर्थ यत्न करें। इस भांति सुप्रतिष्ठित केवली के मुख से धर्म का व्याख्यान सुनकर राजा अंधकवृष्टि अपने पूर्व भव केवली को पूछता भया। तब सर्वज्ञ देव कहते भये।।94।। हे राजा अयोध्या नगरी विषे राजा रत्नवीर राज्य करे। जीते हैं शत्रु जिसने उसके राज विषे सुरेन्द्रदत्त नामा सेठ होता भया। जिस समय भगवान ऋषभदेव का तीर्थ। अजितनाथ के उपजने से पहले की वार्ता है। सो सुरेन्द्रदत्त सेठ बत्तीस कोटि द्रव्य का धनी। सो महा जैनी। उसके मित्र रुद्रदत्त नामा ब्राह्मण।।97।।

सो सेठ के तिथि कहिये अष्टमी, चतुर्दशी अर अष्टाह्निकादि पर्व अर चौमासे के दिन। तिन विषे जिनपूजा के अर्थ बहुत द्रव्य खर्च होय। सो सेठ व्यापार के अर्थ परदेश चला, सो चलते समय बारह वरस का द्रव्य पूजा के अर्थ रुद्रदत्त विप्र को सौंपा।।98।। सो पापी जुवारी सकल धन जूवा विषे खोया। अर वेश्याओं के विषय में खोया। पूजा प्रभावना में कछू भी न लगाया। सकल द्रव्य का नाश कर चोरी विषै प्रवर्ता। सो कोटपाल ने पकड़ा फिर छोड़ा। सो पापी महादुष्ट उल्का मुख नामा वन विषे जायकर भीलों से मिला। अर पृथ्वी विषे धाडा देता भया जैसे व्याधि लोकों को पीड़े वैसे यह व्याध कहिये भील तिनमें मिलकर लोकों को पीडा करता भया। सो अयोध्या के राजा का सेनापति अश्रेणिक उसने युद्ध के विषे अनेक भील मारे। तिनमें यह भी मारा गया। सो मरकर सप्तम नरक विषे गया।।100।।

देव द्रव्य के विनाश कर तेतीस सागर नरक विषे दुःख भोगे। वहां से निकल कर दुष्ट तिर्यंच होय फिर नरक गया। सो पाप से बहुत काल कुगति विषे भ्रमण किया। फिर कछुइक पाप के उपशम से हस्तिनापुर विषे कापिष्टबायन नामा जो ब्राह्मण उसके अनुमती नामा जो स्त्री उसके गौतम नामा पुत्र भया। सो इसकी बाल्य अवस्था विषे इसके माता-पिता मर गये सो यह महा विपत्ति से कालक्षेप करे।।2।।

एक दिन यह भिक्षा के अर्थ भ्रमण करता हुवा एक समुद्रदत्त नामा मुनि के दर्शन करता भया। सो उनके लार लार उनके आश्रम में जायकर विनती करी। हे नाथ! मोको आप समान करो। तब मुनि इसको भव्य जानकर जिन दीक्षा देते भये। सो हजार वर्ष तप कर इसका पाप शांत भया।।5।। तब यह गौतम नामा मुनि अक्षीण महानसीऋद्धि फिर पादानुसारिणी लब्धि अर बीजबुद्धि नामा ऋद्धि को प्राप्त भया।।6।। कइएक दिन में इनका गुरु समुद्रदत्त नामा मुनि आराधना आराधि कर छठवीं ग्रीवक विषे विशाल नामा विमान में अहमिन्द्र भया। अर यह शिष्य पचास हजार वर्ष तप कर उसी विमान विषे अहमिन्द्र भया अठाईस सागर का छठी ग्रीवक विषे इन दोनों का आयु भया अहमिन्द्र पद के सुख

भोग कर वह गौतम नामा मुनि का जीव वहां से चयकर सो तू अंधकवृष्टि भया। अर तेरा गुरु समुद्रदत्त नामा मुनि सो मैं सुप्रतिष्ठित केवली भया। इस भांति पूर्व जन्म का वृत्तांत केवली ने कहा। फिर राजा ने अपने दश पुत्रों के पूर्व भव पूछे सो केवली कहे हैं।।10।।

एक भद्रलपुर नामा नगर जहां राजा मेघरथ उसके राणी सुभद्रा उससे दृढ़रथ नामा पुत्र, उसही नगर विषे एक धनदत्त नाम सेठ बड़ा धनवान् राजा समान उसके स्त्री नंदयशा उसके पुत्री दोय। एक सुदर्शना। एक सुज्येष्ठा। अर सेठ के नव पुत्र उनके नाम धनपाल, जिनपाल, देवपाल, अरहदास, जिनदास, अरहदत्त, जिनदत्त, प्रियमित्र, धर्मरुचि, एक दिन राजा मेघरथ स्वामी सुमंदिर के समीप जिनदीक्षा ग्रही अर धनदत्त सेठ अपने नव पुत्रों सहित मुनि भया। अर सुदर्शन आर्या के निकट राणी सुभद्रा अर सेठ की दोनों पुत्री सुदर्शना अर सुज्येष्ठा आर्या भईं।।16।। कइएक दिन में सुमन्दिर गुरु राजा मेघरथ अर सेठ धनदत्त ये तीनों मुनि काशी के वन विषे केवलज्ञान पायकर पृथ्वी विषे विहार करते भये।।17।। सो वे जगतपूज्य बारह वर्ष विहार कर राजगृहपुर से सिद्ध लोक को पधारे।।18।।

धनदत्त सेठ की स्त्री नंदयशा सो सेठ जब मुनि भया नव पुत्र मुनि भए अर दोनों पुत्री आर्यिका भई तब यह गर्भवती थी इससे आर्यिका न भई। उसके धनमित्र नामा पुत्र भया तब नंदयशा आर्यिका भई। सो एक दिन वह माता अपने नव पुत्र मुनि को प्रायोपगमन संन्यास धारे विराजे देखे एक शिला पर नव साधु संन्यास धर तिष्ठे कैसे सोहते भये, मानो सिद्ध शिला पर विराजे सिद्ध ही सोहे हैं। सो माता नंदयशा पुत्रों को देख आनन्द को प्राप्त भई। अर धर्म स्नेह से ऐसा निदान किया जो ये साधु नव अगिले भव विषे भी मेरे पुत्र होवें। अर वे दोनों बहिन सुदर्शना अर जेष्ठा आर्यिका ने भी निदान किया जो यह नव साधु अगले भव विषे भी हमारे भाई होवें स्नेह के भारकर मोहित भई ऐसी इच्छा करती भई फिर माता अर पुत्री आराधना आराध अच्युत स्वर्ग विषे देव भये। परन्तु स्त्रीलिंग न छेद्या। अर वे नवपुत्र महामुनि भी वहां सोलहवें स्वर्ग ही जाय देव भये। ये बारह जीव एक ठौर उपजे ये सब बाईस सागर आयु के भोक्ता भये। वहां से चल कर इनकी माता नंदयशा का जीव तो राजा अंधकवृष्टि को केवली कहे हैं तेरे राणी सुभद्रा भई। अर नंदयशा की दोनों पुत्री सुदर्शना अर ज्येष्ठा जिनका जीव कुन्ती अर माद्री भई। अर नव पुत्र नंदयशा के तेरे समुद्र विजय आदि नव पुत्र भये इनमें वसुदेव के पूर्वभव अर हैं अर नव भाई पूर्वभव के भी भाई हैं।

यहां कोई प्रश्न करे कि माता का अर दोनों बहनों का जीव आर्यिका से सोलहवें स्वर्ग देव होय फिर स्त्री का जन्म क्यों पाया?

उसका समाधान – जो स्त्री से पुरुष होय पुरुष से स्त्री होय। जो सम्यक्त्व के प्रभाव स्त्रीलिंग छेदे

है सो स्त्री न होय। यह पूर्वभव का वृत्तांत राजा अंधकवृष्टि को स्वामी सुप्रतिष्ठित ने कहा फिर राजा ने दशवें पुत्र वसुदेव के पूर्वभव का वृत्तांत पूछा।

तब भगवान् केवली कहते भये।।24।। हे राजन्! जैसे समुद्र के पूर्वदिशा की ओर पडा जूडा अर पश्चिम की ओर पडी कीली उसका जूड़े के छिद्र में प्रवेश अति कठिन है। वैसे संसार समुद्र विषे मनुष्य देह पाना अति दुर्लभ है सो इस संसार विषे भ्रमण करते करते वसुदेव का जीव मगध देश में सालिग्राम नाम ग्राम में दरिद्री ब्राह्मण के घर पुत्र होता भया सो जब यह गर्भ में आया, उसका पिता शांत भया। अर बाल्य अवस्था विषे माता का मरण भया। अर जब यह अभागा वर्ष आठ का भया तब उसकी मावसी भी मर गई। उसको तुच्छमात्र भी सुख नहीं। सो यह राजगृह नगर विषे मामा के घर रहै। मामा की बहू इसकी भूवा उसने उसका प्रतिपालन किया।।28।। सो यह महा मलीन दुर्गन्ध शरीर विखरे केस मलीन वस्त्र पीले नेत्र। इसके मामा का नाम मरक्त उसकी पुत्री परणावे की इसने इच्छा करी। सो उसकी पुत्री को उसकी घृणा आवे सो उसने उसको घर से निकास दिया।।30।। सो यह दुर्भाग रूप अग्निकर प्रज्वलित महा चिंतावान् सो मरणे की इच्छाकर झंपापात लेने को बाभार नामा पर्वत पर चढ़ा। जैसे पतंग दीपक की ओर सन्मुख होय। सो वहां गिरि पर अनेक मुनियों सहित महामुनि विराजे थे।।31।। उनके शंख अर निर्नामिक दो मुनि शिष्य। सो श्री गुरु नंदिषेण को पडता देखकर शंख अर निर्नामक शिष्यों को कही – जो यह अगिले भव विषे तुम्हारा पिता होगा।

तब शंख नामा मुनि इसको आयकर उपदेश दिया। उपदेश देकर गुरु के निकट इसको ले गये। सो यह अपनी निंदाकर धर्म अर अधर्म के फल को जानकर श्रीगुरु के निकट चारित्र धारता भया। गुरु के उपदेश से आशारूपी पासी छेदकर दुर्द्धर तप आचरता भया। सम्यग्ज्ञान सम्यक् चारित्र का धारक भया। जैसा तप नंदिषेण ने किया वैसा अर से न बने।।33।। वह नंदिषेणनामा मुनि आनंद रूप तप के प्रभाव कर उपजी है लब्धि इसके। ग्यारा अंग का पाठी, बाईस परीसह सहता भया।।34।। जितनी उपवास की विधि हैं तेती इसने सब करी ऐसा दुर्द्धर तप अर से न बने। महा उग्र तप इसके धैर्य के योग से सुगत होता भया। तप की लब्धि के प्रभाव कर यह मुनि आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष, ग्लान, गण, कुल, संघ, साधु, मनोज्ञ, ये दश प्रकार के मुनि तिनका वैयाव्रत करता भया।।36।। तपों में वैयाव्रत बड़ा तप सो इसके विशेष होता भया उसके तप की महा लब्धि वैयाव्रत के अर्थ भई। जो औषधि आदिक वस्तु हैं अर यह मन में चिंतवे सोई आय प्राप्त होय। इस भांति ऋद्धि सहित तप करते बहुत वर्ष व्यतीत भये।।38।।

एक समय इसके वैयाव्रत की प्रशंसा इन्द्र अपनी सभा में करता भया।।39।। जो इस समय में

नंदिषेण मुनि जंबूद्वीप के भरत क्षेत्र विषे जैसा मुनियों का वैयाव्रत करे है वैसा अर से न बने।।40।। वह सम्यग्दृष्टि क्षमावान् नंदिषेण संयमी योगीश्वरों के वैयाव्रत विषे उद्यमी है। जो संयमी यतीश्वरों का वैयाव्रत करे उसके निर्जरा ही है, बंध नहीं। यह शरीर धर्म का मुख्य साधन है।।42।। इसलिये सम्यग्दृष्टि को यही योग्य है जो उपाय कर मुनियों की बाधा हरे अर जो उपकार करने को समर्थ है अर न करे मध्यस्थ होय रहे, व्याधिवान् की व्याधि न हरे सो नष्ट पुरुष सम्यक्त्व का घातक है। जिस गृहस्थ का धन अर शरीर वैयाव्रत विषे लगा सोई सफल है।।46।।

अर जो समर्थ होय जिनधर्मियों की बाधा दूर करने का उपाय न करे सो कठोर चित्त है।।47।। उसके जिनशासन की भक्ति कहां अर सम्यग्दृष्टियों की भक्ति कहां। जब सम्यग्दृष्टि जैनियों की भक्ति का लोप भया तब यह विनयवान् नहीं। अर विनय का अंग नहीं। तब दर्शन की विशुद्धता कहां? अर जब दर्शन की विशुद्धता नहीं, तब ज्ञान का लाभ कहां। अनेक भव विषे इसको ज्ञान की प्राप्ति दुर्लभ है अर ज्ञान की प्राप्ति नहीं, तब मुक्ति का साधन कहां से होय।।50।। ज्ञान बिना चारित्र कहां अर चारित्र बिना मुक्ति कैसे होय। अर मुक्ति बिना सुख कहां? मुक्ति सुख अनंत है, अपार है, अविनश्वर है, अर सुख बिना निराकुलता कहां। अर निराकुलता बिना कृतार्थ कैसे कहिये। इससे सर्वथा प्रकार सर्व उपाय कर जे कल्याणक के अर्थी है उनको जिन धर्मियों का वैयाव्रत ही करना योग्य है। जो यती अथवा श्रावक के वैयाव्रत करे, उसने संयमी जीवों का शरीर राखा।

अर दर्शन ज्ञान चारित्र तप यह चारों आराधना राखी, अर जिसने वैयाव्रत किया उसने भगवान् का मार्ग बढ़ाया। जो जिनमार्गी विवेकी बिना प्रयोजन पर उपकार करे सो शीघ्र ही सिद्ध पद को पावे जो वैयाव्रत विषे प्रवर्ते, जिनशासन विषे लगाया है भाव जिसने सो देवों कर न रोका जाय तो अर क्षुद्र प्राणियों कर कैसे रोका जाय सो ऐसा वैयाव्रत का करणहारा नंदिषेण मुनि है। इस भांति सौधर्म इंद्र अपनी सभा में प्रशंसा करता भया तब सब ही देव मुनि की प्रशंसा करते भये अर प्रणाम करते भये एक देव मुनि का धैर्य्य परखने के अर्थ मुनि का रूप धर नंदीषेण के निकट आय कहता भया – हे नंदीषेण! तुम्हारे वैयाव्रत का यश त्रैलोक्य विषे प्रसिद्ध है।।58।।

मैं व्याधि कर पीड़ित हूँ सो मुझे व्याधि रहित करो। तब नंदीषेण ने श्रावकों को आज्ञा करी सो जाकर रोग मिटे सोई श्रेष्ठ औषधि आहार समय देवो अर इन वस्तुओं का आहार दिया – पूर्व देश की शालि के चावल अति उज्ज्वल मिष्ट सुगंध अर पंचाल देश की मूंग की दाल महा स्वाद रस भरी अर पश्चिम देश की गायों का घी अर कलिंग देश की जो गाय आई हुई थी उनका दूध श्रावकों ने भक्ति कर मुनि को दिया सो आहार लेकर नंदिषेण के आश्रम आय बमन किया। सब शरीर मलकर

www.vitragvani.com

लिप्त भया तब नंदीषेण ने अपने हाथों कर उसका शरीर धोया घृणा न करी तब वह देव बहुत स्तुति करता भया – नंदीषेण! तू प्रशंसा योग्य जाके उत्सव में भंग नहीं धर्म विषे आरूढ अखंड वैयाव्रत का करणहारा। नंदीषेण मुनि उसे वह देव दिव्यरूप धर कहता भया।।65।। इंद्र की सभा विषे जैसे तुम्हारी प्रशंसा सुरेंद्र के मुख से सुनी थी। जो वैयाव्रत विषे ऐसा प्रवीण अर नहीं वैसे ही आयकर अब प्रत्यक्ष देखा। हे ऋषीश्वर! ऋषि व्रत विषे तुम अद्वितीय हो। हे भगवन्! मैं देव अव्रती तुम्हारा दर्शन पाय कृतार्थ भया।।66।। धन्य तुम्हारा धैर्य, धन्य तुम्हारा निर्विचिकित्सा अंग।।67।।

धन्य यह जिनमार्ग की वात्सल्यता धन्य तुम्हारी निशल्यता! हे मुनि! जो अर बुद्धिवान की यह बुद्धि होय तो उनको जिनशासन के भक्त कहिये। इस भांति स्तुति कर मुनि को नमस्कार कर वह देव सम्यक्त्व को अंगीकार करता भया।।69।। वह स्वर्गवासी जिनमार्ग विषे दृढ़ होय अपने धाम गया अर नंदीषेण मुनि ने पैंतीस हजार वर्ष तप किया। अर छै महीने पर्यंत प्रायोपगमन संन्यास धर तजा है शरीर अर आहार जिसने। अर तजी है शरीर की शुश्रूषा जिसने। अपने शरीर का आप यत्न करे नहीं अर किसी से यत्न करावे नहीं।।71।। परन्तु लक्ष्मी अर रूप सौभाग्य के निदान कर मोह थकी आपको बांधा। सो यह मुनि महा तपकर रूप सौभाग्य का निदान न करता तो तीर्थंकर नामा प्रकृति बंध करता। सो आराधना को आराधि कर दशमा जो महा शुक्र नामा स्वर्ग उस विषे इंद्र तुल्य बड़ी ऋद्धि धारी देव भया।।73।। सोलह सागर देव लोक के सुख भोग वहां से चयकर सो तेरी राणी सुभद्रा उसके वसुदेवनामा दशमा पुत्र भया।

इस भांति राजा अंधकवृष्टि अपने अर अपनी स्त्री के अर दशों पुत्रों के भव सुनकर।।75।। संवेग कहिये धर्म की रुचि उसको प्राप्त भया अर मनुष्य तथा देव सुप्रतिष्ठित केवली को प्रणामकर अपने अपने स्थान को गये।।76।। अर राजा अंधकवृष्टि अपने पुत्र समुद्रविजय को राज्य देय अर वसुदेव को बड़े भाई को सौंप आप सुप्रतिष्ठ केवली के निकट निर्ग्रंथ भया। कैसा है राजा, इस भवविषे भव को अंत करणहारा है तद्भव मोक्षगामी है।।77।। अंधकवृष्टि ने तो सौर्यपुर का राज्य तजा। अर छोटे भाई भोजकवृष्टि ने मथुरा का राज्य उग्रसेन को देकर पंच महाव्रत आदरे।।79।। शौर्यपुर का राज्य समुद्रविजय करे उसने शिवदेवी को पटराणी का पद दिया। सकल राणियों में शिरो भाग्य करी सो राजा समुद्रविजय जिन सूर्य की नाईं प्रताप की वृद्धि करता स्थिति अखंड उसे पालता भया। कैसा है राजा रूप जिन-सूर्य, अपने लघु भाई जो उनका प्रफुल्लित करणहारा है। जैसे जिनरवि अपने हृदय कर भव्यरूप कमलों को प्रफुल्लित करे तैसे राजा अपने छोटे भाइयों को प्रफुल्लित करता भया।।80।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ समुद्रविजयराज्यलाभवर्णनो नाम अष्टादशः सर्गः।।18।।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

चौथा अधिकार

वसुदेव का चरित्र

उन्नीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – गौतम गणधर राजा श्रेणिक से कहे हैं – हे श्रेणिक! अब मैं वसुदेव का वर्णन करूं हूं सो तू सुन। वसुदेव का घर से निकसना। अर विजयार्द्ध की बसुधा विषे विहार। अर नाना प्रकार की चेष्टा का करना। सो तू भलीभांति चित्त विषे धार। राजा समुद्रविजय अपने लघु भाई नव उनमें आठ तो परणाये। उनकी राणियों के नाम सुनो – आपसे छोटा अक्षोभ उससे धृति परणाई। उससे छोटा स्तिमितिसागर उससे स्वयंप्रभा परणाई। उससे छोटा हिमवान उसे सुनीता परणाई उससे छोटा विजय उसे सीता परणाई। उससे छोटा अचल उसे प्रियलापा परणाई। अर उससे लहुरा धारण सो उसे प्रभावती परणाई।।4।। उससे लघु पूर्ण सो कालिंगी परणाई अर उससे छोटा अभिचन्द्र सो सुप्रभा को व्याहता भया। इन आठों के आठ स्त्री होती भई।।5।। ये सब कलागुण कर पूर्ण सो भर्ता अर भार्याओं के परस्पर अति प्रेम का निबंध होता भया औरों के ऐसा रीति नहीं।।6।।

वसुदेव कुमार समान लक्ष्मी कर मंडित शौर्यपुर विषे कुमारपने की क्रीडा करे।।7।। रूप लावण्य सौभाग्य अर चातुर्यता का समुद्र वह कुमार कामदेव सुन्दर आकार लोकों के चित्त को हरता भया।।8।। पूर्व दिशा आदि चार दिशा सो चारों ही दिशा की ओर लोकपालों का भेष कर निकसे सो वह शोभा कथन में न आवे। दिन प्रति असवारा करे पूर्व के द्वार की ओर सोम का स्वरूप धर निकसे। अर दक्षिण की ओर यम का स्वरूप धर निकसे। अर पश्चिम की ओर द्वार वरुण का भेष धर निकसे। अर उत्तर की ओर द्वार कुबेर का रूप धार निकसे सो आप नव यौवन अर सब साथी नव यौवन। ऐसा ही गज, अश्व, रथ, अर ऐसे ही पयादे। ऐसे ही सब के वस्त्र आभूषण। अर ऐसा ही सुगंध ऐसा ही राग रंग सब ठाठ देवों कैसा है।।9।। चंद्रमा समान सौम्य मुखकमल। अर सूर्य समान अंग विषे दीप्ति, सो मन्दिर से राजमार्ग होय चहुं ओर गमन करे। सो शौर्यपुर की स्त्रियों के इनके रूप के अवलोकन कर अति व्याकुलता होती भई नगर की नारियों के समूह वसुदेव के देखवे की इच्छा कर ऐसे उमगे जैसे पूर्ण चन्द्र के उदय विषे समुद्र की लहर उमगे।।11।। बाजार में, गली में, महलों के झरोखों में। नगरी की नारी कुमार का रूप निरखें। घर के सब काम तज वह नगर, आसक्तता रूप वसुदेव की कथामई होता भया – इसके रूप के सौभाग्य कर नारियों का चित्त हरा गया। ग्राम के बाहिर भीतर वसुदेव की ही कथा।।13।।

एक दिन नगर के बड़े बड़े लोग समुद्रविजय राजा पै जाय प्रणाम कर बिनती करते भये – हे प्रभो! हमको अभयदान देवो। अर हमारी विज्ञप्ति तथा अयुक्ति सुनो। जैसे पिता बालकों की वाणी उचित तथा अनुचित सुने।।15।। हे नाथ! तुम मनुष्यों के रक्षक इससे नृप कहावो हो। अर भूमिरक्षक इससे भूप कहावो हो। अर प्रजा के अनुराग बढावते राजा कहावो हो।।16।। हे राजा! तुम्हारे राज विषे प्रजा सदा हर्षरूप ही रहे है। किसी दुष्ट का उपद्रव नहीं। जैसे पिता के कांधे पुत्र कंवर पद के सुख भोगे वैसे तुम्हारी प्रजा सुख भोगे है।।17।। हे देव! तुम्हारे राज्य विषे यह पृथ्वी सर्वधान्य कर फले हैं। दोनों भांति के चांवल, गेहूँ वा चना आदि सर्व धान्य बाधा रहित प्रति वर्ष उपजे हैं। तुम्हारे राज में ईति भीति नहीं, धरती सफल है।।18।।

जो किसान तुम्हारे राज में खेती करे हैं उनके धान्य बहुत फले हैं। अर जो व्यापारी क्रय विक्रय करे हैं उनके बड़ा नफा होय है। अर तुम्हारे राज में गाय भैंस के समूह बहुत हैं। कुंभ सारिषे हैं स्तन जिनके। सो गोप निरंतर दूध दुहे हैं। तुम्हारी पृथ्वी में किसी ठौर गोरस की कमी नहीं।।20।। अर तुम्हारे राज में अन्न पान की ऐसी सत्ता है जो घर के अर्थ लोक अन्न अल्प ही पचावे हैं। सो दिन के अन्तलग दान धर्म अर घर का भोजन उस कर खान पान अटूट दीखे है। मणि मंत्र औषधादि कोई प्रकार यत्न नहीं। तुम्हारी रीति का सत्ता कर किसी के किसी वस्तु की कमी नहीं। किसी ठौर कदे नष्ट मास वर्ष आवे है, तब अन्न का दुष्काल होय है। अर तुम्हारे राज में सदा सुकाल ही है। कदे भी दुकाल नहीं। सदा दुंदुभी बाज रहे हैं। किसी के दिन वस्तु की भी कमी नहीं।।22।। इस भांति हमको अतुल्य सुख ही है अर अल्प दुःख सो कहिवे में आवे नहीं।।23।।

प्रजा के मुख यह वार्ता सुन कर जे पुरजन में मुख्य हैं, उनको राजा कहता भया – हे लोको! जो तुमरे हेतू हैं सो मुझे अपना दुःख निशंक होय कर कहो। आधि अर व्याधि अल्प ही हृदय विषे प्रवेश करे तो प्राणों को हरे, इसमें संशय नहीं, जैसे अन्न प्राण धारण का कारण है अर अन्न ही हृदय विषे लाग होय बैठे तो उसके प्राण ही हरे।।25।।

इस भांति राजा ने जब कही तब प्रजा में मुख्य लोक जो थे विश्राम पाय कहते भये – हे प्रभो! यह बिनती करने की नहीं परन्तु तुम्हारी आज्ञा से कहे हैं। प्रजा के अर्थि सो तुम सुनो। वसुदेव कुमार का नित्य नगर से उपवन की ओर भ्रमण होय है। सो कुमार के रूप का दर्शन कर स्त्री मोहित भई, शरीर की सुध भूल जाय हैं। कुमार के निकसने अर प्रवेश करने से स्त्रियें विकलेन्द्रिय हो जावे हैं। सो न कुछ देखे हैं न सुने हैं। देखना कुमार की ओर अर उनके यश को सुनना, पुत्रादिक की ओर नहीं निरषें। अर निज पर का हित अहित नहीं विचारे हैं, अर बात तो दूर ही रही जे कुलीन स्त्रियों के आचरण हैं। वे सब विस्मरण हो गये। अपने पुत्र का भी ग्रहण नहीं। जहां पडा वहां पडा रहे है।।29।।

कुमार अति रूपवंत है। ऐसा अनुपम रूप देवन को दुर्ल्लभ है अर कुमार अति धीर हैं। स्वभाव ही कर निर्मल है चित्त जिसका। अर सर्वथा शुद्ध है आत्मा जिसका शील का शिखर है।।30।। कुमार का कछु अपराध नहीं। चित्त में विकार नहीं। इस समस्त वसुधा विषे ऐसे विवेकी अर नहीं। जैसे सूर्य को किसी से द्वेष नहीं परन्तु सूर्य की घाम से पित्त की उत्पत्ति होय है। तैसे कुमार विषे विकार नहीं। परन्तु उनके रूप के अतिशय से स्त्रियों का चित्त चलायमान होय है।।31।। यह विज्ञप्ति थी सो हमने कही। अब योग्य होय सो करो जिसमें कुमार को सुख उपजे। अर पुर की व्याकुलता मिटे सो कर्त्तव्य है।

ये वचन सुनकर राजा चित्त में विचार प्रजा को कहता भया। तिहारी व्याकुलता जैसे मिटेगी सोई होगा। लोकों को तो धैर्य वन्धाय विदा किये। अर प्राणों से प्यारा जो कुमार सो चिरकाल भ्रमणकर बड़े भाई के निकट आय प्रणाम करता भया। तब बड़े भाई उर से लगाय गोद में बैठाय कर अति स्नेह करि माथे हाथ धरा।।34।। अर कही – हे कुमार! तू चिर काल बन विषै भ्रमण कर खेद-खिन्न भया, वर्ण ही अर हो गया क्रीडा विषे क्षुदा तृषा की गमता नहीं। सो इस भांति बहुत भ्रमण मत करो।।35।। अर पवन आताप शीत उनकर तुम्हारा मलीन बदन भया। कांति ही बदन की अर हो गई, तुम्हारा भ्रमण ही विषे प्रेम है शरीर का खेद नहीं गिनो हो।।36।। इसलिये स्नान की अर भोजन की वेला उलंघो मत। आज पीछे महलों ही में वन है तिन विषे रमो।।37।।

इस भांति महा भक्त जो लघुवीर उसे शिक्षा दे राणी शिवदेवी का सातखणा महल वहां भाई का हाथ पकड पधारा। भाई सहित स्नान भोजन कर अर भाई का बाह्य परिभ्रमण मेट राजा सुख सों विराजे।।39।। उस पीछे कुमार महलों में शिवदेवी के वन विषे नृत्य गीत वादित्रादि विनोद करि क्रीड़ा करता तिष्ठे।।40।। एक दिन कुब्जा नामा दासी शिवदेवी के अर्थ सुगन्ध लिये जाती थी। सो कुमार ने खोस लिया। तब वह क्रोध कर कहती भई – तुम्हारी चेष्टा है तब ही तो बंदीगृह में पडे हो।।42।।

तब कुमार ने कही – हे कुब्जे! तैंने क्या कहा? तब वह कहती भई जो तुम्हारे रूप कर मोहित भई नगर की नारी विह्वल होइ गई सो लोकों के कहिने कर भाई ने तुम्हारा भ्रमण निवारा है। तब कुमार अपना बंधन जान भाई ते उदास भये। काहू छल कर महल से निकसा नगर से निकस वन विषें गया। एक चाकर लार लिया। मंत्र साधन के मिसकर रात्रि में निकसे। मसान भूमि विषे सेवक को एक ठौर राख आप उत्तर की ओर कछु दूर जाय तिष्ठे।।45।। एक मृतक को मसान में अपने आभूषण पहिराय उसे अग्नि विषें डारा। अर मुख से सेवक को सुनाय कर ये शब्द कहते भये। राजा निष्कपट है हमारे पिता समान है सो सुख सों जीवो अर नगर के लोक संतुष्ट भये सुख सों जीवो अर हमारे दुर्जन भी चिरकाल सुख सो जीवो। हम तो अग्निविषे प्रवेश करे हैं।।46।।

ऐसा कह कर वसुदेव दौडे अर चाकर को ऐसा दिखाया जो अग्नि में पडे। अर आप छिप कर

निकस गये सेवक ने जाना कुमार ने अग्नि में प्रवेश किया।।48।। सो सेवक नगर में जाय कर कुमार का वृत्तांत राजा से कहता भया। सो राजा भाइयों के समूह अर राज लोक अर नगर के लोक उन सहित बाहर निकसा। प्रभात ही राजा प्रजा सब रोवते कुमार की चिता की ओर आये। भस्म विषे कुमार के आभरण देख कर राजा ने जाना भाई मूवा।।50।। तब अति रुदन कर भाई की क्रिया करी पश्चाताप कर हत्या राजा अति दुखी भया। अपनी भूल को निंदता दुख रूप गृह विषे तिष्ठा, मंद है उद्यम जिसका।

अथानन्तर – वसुदेव निशंकपने पश्चिम की दिशा में द्विज का भेष धर बहुत दूर गया। धीर है चित्त जिसका देवन के नगर समान एक स्वेद पुर नगर वहां एक सुग्रीव नाम गंधर्व विद्या का आचार्य क्षत्री के कुल विषे गंधर्व विद्या के अर्थ उनको अनुग्रह कर गंधर्व शास्त्र सिखावे। सो वसुदेव का रूप देख मोहित भया। उसके सोमा नाम कन्या जिस समान अर सुन्दर नहीं। चन्द्रमा समान है वदन जिसका। अर दूजी विजयसेना ये दोनों ही महा मनोहर रूप की हद। अर गंधर्वादि कला विषे अति प्रवीण सो इनके पिता ने यह धारणा करी थी जो इनको गंधर्व विद्या विषे जीते सो इनको वरे।।55।। सो वसुदेव यादव, विद्या के योग कर सभा विषें उनको जीतता भया। वे सदा जीत रूप थीं तिन सो यह ही जीता।।56।।

तब उनका पिता सुग्रीव अति हर्षित होय अपनी दोनों कन्याओं को शुभ मुहूर्त विषे कुमार से परनावता भया सो परण कर महा मनोहर मन्दिर विषे उन सहित रमता भया।।57।। उनमें विजयसेना छोटी उसके अक्रूर नाम पुत्र को उपजाय कर वसुदेव अकेला ही किसी के बिना पूछे निकस गया शूरवीरता ही है सहाय जिसके।।58।। मार्ग में जाता हुवा एक महा उद्यान विषे प्रवेश कर एक मनोहर सरोवर देखा सो कमलों कर मंडित अर जहां हंस अर सारस क्रीडा करे हैं, पक्षियों के अर भ्रमरों के शब्द होय रहे हैं, सरोवर का नाम जलावर्त उसे अवगाह कर वसुदेव ने बहुत देर तक जलक्रीडा करी।।60।। शीतल जल के तीर सुख से तिष्ठे जल जाति का वादित्र बजाया, अर मृदंग बजाया सो वादित्रों की ध्वनि सुनकर सूता गज जागा सो वसुदेव के ऊपर हनवे को आया सो यह अति चतुर उसकी घात चुकाय कर उससे अति क्रीडा कर दन्ती जो हाथी उसके दांतों पर ऐसे हींदें जैसे हिंडोरे हींदें।।62।।

चन्द्रमा के किरण समान उज्ज्वल वह श्वेत गंध हस्ती उसे वश कर वसुदेव कुमार उसके कुम्भस्थल विषे जाय बैठा। अपने हाथों कर हाथी जीता निश्चल भया ऊभा।।63।। यह गज क्रीडा कर कुमार माथा हलाय विचार करता भया, जो मैं अकेले यह क्रीडा करी किसी के देखने में न आई जैसे कोऊ वन में रोवे उसका रुदन कौन सुने तैसे मेरा कर्त्तव्य किसी ने न देखा।।64।। जो यह कार्य सौर्यपुर में होता तो सब लोक मेरा यश करते। हाथी के मस्तक चढ़े ही कुमार ने यह विचार किया

सो विचार करते। ही दो विद्याधर कुमार महा धीर शांत रूप के धारक कुमार को हाथी के मस्तक से ले उडे विजयार्द्ध पर्वत विषें एक कुंजरावर्त नामा नगर उसके बाह्य सर्वकामिक नामा वन अशोक नामा वृक्ष उसके तले वसुदेव को पधराय वे दोनों नमस्कार कर विनती करते भये – हे स्वामिन्! यहां का राजा अशनिवेग विद्याधर महा ईश्वर है। उसकी आज्ञा से हम तुमको लाये हैं उसे ही तुम अपना शशुरा जानो, पुत्री तुमको परणावेगा।।69।। उनमें एक मुख्य सो कहे है मेरा नाम अर्चिमाली है, अर यह दूजा वायुवेग है ऐसा कह कर एक तो इनके निकट रहा अर एक नृप के नगर में गया। अकस्मात् वसुदेव को विद्याधर ने गज के कुम्भ से उठाया परन्तु रंच मात्र कुमार के भय न उपजा। कैसे हैं कुमार, सदा शोक अर क्लेश से रहित हैं महा निःशंक गिरि समान अचल हैं जिनका चित्त कदाचित् न डिगे। यह तो अशोक के वृक्ष तले विराजे हैं अर उन दोनों में एक विद्याधर जाय कर नृप से कहता भया – हे देव! तुम्हारे मंगल होवे! वृद्धि होवे! उस हाथी के जीतनहारे को हम ल्याये हैं। कैसा है वह, महाधीर है। अर शूर कहिये अनेक का जीतनहारा है। अर महा रूपवान् नवयौवन है।।71।।

नमस्कार कर उसने राजा से विनती करी। तब राजा हर्षित होय एक धोवती मात्र पहरे रहे। अर सब वस्त्र अर आभूषण सो पहिरे हुए थे सो इसे दिये।।72।। अर राजा साम्हने जाय महा मंगलाचरण से कुमार को नगर में ल्याया। सकल नगर उछाला। जैसे बडों का आगम होय वैसे किया। वसुदेव कुमार आभूषणों के आभूषण महा सुन्दर उनको नगर की नारी नर निरखते भये जो ऐसा पुरुष अब तक अवलोकन में न आया। फिर भली तिथी भला वार शुभ नक्षत्र शुभ मुहूर्त भला करण ऐसा पंचांग शुद्ध मुहूर्त देख राजा अशनिवेग अपनी श्यामा नामा पुत्री वसुदेव को परणावता भया। कैसी है श्यामा, कहिये नवयौवना है।।74।। उसे परण कर वसुदेव नाना प्रकार की क्रीडा विनोद कर अत्यंत रमते भये। कैसी है वह समस्त कला अर समस्त गुणों कर चतुर है। उसके मुख रूप कमल का कुंवर भ्रमर होता भया।।75।। सो कुमार के वीणा विद्या का प्रेम आप बहुत निपुण सो श्यामा ने अपने स्वामी के निकट सप्त दश तंत्री वीणा बजाई। सो सुन कर कुमार अति प्रसन्न भये।

अर कहा – हे प्रिये! तू मोपे मांग जो कहे सो तोहे दूं। तब वह नमस्कार कर यह मांगती भई – हे प्रभो! जो तुम प्रसन्न भये हो तो मुझे यह वर देवो जो रात्रि तथा दिवस मेरे बिना न रहना। सो इसमें कारण है सो सुनो – हे देव! हे प्यारे! एक अंगारक नामा वैरी है। सो मत कदाचित् छिद्र पाय तुमको ले उडे। यह भय है इससे वर मांगा है।

यह कथा नीके सुनो – किन्नर देवों कर गाये हैं गुण जिसके ऐसा एक किन्नर गीत नामा नगर बैताड्य की दक्षिण श्रेणी विषे नरों का भरा एक नगर है। इसका राजा अर्चिमाली अनेक विद्याधरों का

भूप उसके प्रभावती राणी ताके दो पुत्र भये। बड़ा ज्वलनवेग छोटा अशनिवेग।।80।। सो राजा अर्चिमाली बड़े पुत्र को राज्य अर प्रज्ञप्ति विद्या अर छोटे को युवराज पद देकर आप स्वामी अरिन्द मुनि के निकट दिगंबर दीक्षा धारता भया। सो ज्वलनबेग के राणी विमला उसके अंगारक नामा पुत्र भया अर अशनिवेग के राणी सुप्रभा उसके मैं श्यामा नाम पुत्री भई।।82।। कई एक दिन में राजा ज्वलनवेग जो मेरा पिता (उनका छोटा भाई) उसको राज्य देय अपने अंगारक नाम पुत्र को युवराज पद अर प्रज्ञप्ति विद्या देकर आप मुनि भए।।83।। कई एक दिनों में अंगारक मेरे पिता का भतीजा संग्राम विषे मेरे पिता को जीतकर राज हरता भया सो मेरा पिता राज भ्रष्ट भया। सो जरावर्त पट्टन विषे तिष्ठे है।

हे नरकुंजर! मेरा पिता चिंतावान् भया पींजरे में पंछी ज्यों तिष्ठे है। एक दिन मेरा पिता कैलाशपर्वत के दर्शन को गया।।85।। वहां अंगिरि नाम चारण मुनि त्रिकालदर्शी, उनको नमस्कार कर मेरा पिता पूछता भया – हे नाथ! मेरा पूर्व स्थान क्या हाथ आवेगा? तब मुनि ने कही – तेरी पुत्री श्यामा उसके पति कर तेरा राज्य पीछे आवेगा। तब मेरे पिता ने पूछी – मेरी पुत्री का वर कौन होयगा अर वह कहां है, तब साधु ने कही जो जलावर्त नामा सरोवर के तीर माते हाथी का मद हरेगा सो तेरी पुत्री का पति होगा।।89।। मुनि ने ये समाचार कहे तब उसी दिन से सरोवर विषे दो विद्याधर राखे थे। जो तुम गज के जीतन हारे को यहां ले आओ सो ये विद्याधर तुम्हारे दर्शन के अभिलाषी थे तिनकी दृष्टि में तुम आये तब सब मनोरथ सिद्ध भये।

हे नाथ! मुनि का वचन अन्यथा न होय। सो यह वृत्तांत अंगारक ने सुना होयगा, सो क्रोध कर वले है। जैसे अग्नि धूम को धरे, वैसे वह कपट को धरे है अर महा विद्या के बल कर उद्धत है। अर आप विषे आकाशगामिनी विद्या नहीं है अर मैं विद्यावती हूं सो मो विना मत कदाचित् वह अरि आपको हरे।।93।। ये श्यामा के वचन सुनकर स्वामी ने कहा इसमें क्या दोष है? हम तुम बिना अकेले न रहेंगे। ऐसा कहा वह आनंद वदन वा आनन्दवदनी को उर से लगाय लेता भया। अर वसुदेव उस विद्याधरी को महा मनोहर गंधर्व विद्या सिखावता भया। कैसा है वसुदेव, नहीं है मत्सर जिसके। ये दोनों सदा सावधान रहें, हर्ष विनोद में इनका काल व्यतीत होय। एक दिन रात्रि विषे चिरकाल रति क्रीड़ा कर खेद खिन्न भये दोनों सोय गये।।96।। उस समय में अंगारक नामा बेरी ने आय कर वसुदेव कुमार को श्यामा के भुज पिंजरों में से काढा। अर काढि कर आकाश विषे ले उड़ा जैसे गरुड़ नाग को ले उडे।।97।।

जब वसुदेव को चेत भया तो आपको आकाश विषे हरा जान उसे देख कहते भये – हा पापी! तू कौन है अर मुझे क्यों हरे है, छोड़ छोड़।।98।। फिर उसे जाना यह अंगारक है। सो उसके मारने को

मूंठी बांधी आप ऐसे हैं जो वाहि मूकों से मार डारे परन्तु न मारा। जो इसे मारेंगे तो हम भी भूमि विषे जाय पडेंगे। फिर तत्काल श्यामा जागी। एक हाथ में खड्ग अर एक हाथ में खेट लिये अशनिवेग पर जाय पहुंची। वसुदेव की बहू श्यामा बड़ी शूरवीर है।

उसे श्यामा कहे है – हे दुराचार, हे चोर हे निर्दई विद्याधर! निर्लज्ज! खड़ा रह। तू मेरे जीवते मेरे प्राणनाथ को क्यों हरे है? तैं राज्य पाया तो तृप्त न भया। सदा हमको दुःख देवे ही विषे उद्यमी, मैं आज तुझे घने दिन में देखा अब मेरे आगे जीवता कैसे जायगा? मैं आज तोहि मार छोडूंगी ऐसा कह कर म्यान से खडग काढा अर उसके सिर पर आई तब वह वैरी अपनी रक्षा करता हुवा श्यामा से सूखे वचन कहता भया – हे श्यामली! स्त्री हते बड़ा पाप है। इसलिये पापिनी परे जाऊ प्रथम तो तू स्त्री जाति फिर मेरे काका की बेटी बहन, मैं तुझे कैसे मारूं। मेरे हाथ तेरे हनिवे का उद्यम न करें।।4।। तब श्यामा बोली – कौन भाई? जो वैरी होय उसे मारना, इसमें अपयश नहीं।।5।।

सिंहनी अर व्याघ्री ये स्त्री जाति हैं सो चलाय कर मारने को आवे तो सामंत उनको मारे। तूं वृथा न्याय विचारे है, जो तेरे में सामर्थ्य है तो मेरे पर शस्त्र चला, तू हमारा बैरी है, पिता का वैरी अर पति का बैरी है। ऐसे कठोर वचन कह कर उसका मार्ग रोका तब वह श्यामा पर खडग चलाता भया। इन दोनों का महा युद्ध भया परस्पर लोहे का मार कर आग भडक उठी, इन दोनों का महा युद्ध देख वसुदेव वैरी को मुष्ठि प्रहार कर खेद खिन्न करता भया। तब उसने वसुदेव को छोडा सो श्यामा की सखी ने थांभे अर इनको श्यामा के पुर में ल्या रही थी सो आकाश विषे देव वाणी भई।।10।। जो इनको इस क्षेत्र विषे बहुत लाभ है, सो यहां ही राखो। तब श्यामा की सखी सो श्याम लच्छिया उसने लघुपर्ण विद्या कर इनको पृथ्वी विषे पधराया।।11।।

सो चंपापुर के उद्यान विषे अम्बुज संगम नामा सरोवर विषे पड़े, उसमें से निकस कर उसके तीर में विराजे वहां श्री वासुपूज्य का चैत्यालय था। जिसमें मानस्तंभादि समवसरण की रचना, सो वसुदेव कुमार चैत्यालय की प्रदक्षिणा देकर दर्शन किया। यहां प्रभात ही एक ब्राह्मण जिन पूजा के अर्थ आवे था उसे वसुदेव पूछते भये, यह कौन पुरी है।।15।। तब ब्राह्मण कहता भया, जो यह अंगदेश है इसमें यह चंपापुरी तीन भुवन विषे प्रसिद्ध तू नहीं जाने, क्या आकाश से पड़ा है।।16।।

तब कुमार बोले – तू सावधान है जानिये है कि कुछ ज्योतिष शास्त्र भी पढ़ा है, मैं आकाश से ही पड़ा हूं। दो विद्याधर कुमारी हैं उनके रूप के लोभ से मुझे आकाश में हरा। फिर उनके परस्पर कलह भया। तब मैं गिर पड़ा वहां उसे ऐसा उत्तर देकर आप ब्राह्मण का भेष धार कर चंपापुरी में प्रवेश किया। कैसा है कुमार, विशाल हैं नेत्र जिसके अर पुरी रागरंग की भरी, मानो गन्धर्वपुरी ही है वहां लोगों को वीणा बजावते इधर उधर देखे, तब एक को पूछते भये जो ये लोक कहां भ्रमे हैं? वह

कहता भया यहां एक चारुदत्त नामा श्रेष्ठी है सो कुवेर समान लक्ष्मीवान् है, इस नगर विषे वह सेठों का पति है। उसके गंधर्वसेना नामा पुत्री गंधर्व विद्या विषे अति प्रवीण है अर रूप के गर्व कर महा गर्ववन्ती है। उसकी यह प्रतिज्ञा है कि जो गंधर्व विद्या विषे मुझे जीते सो मेरा भर्तार हो सो अर्थ के प्रेरे लोक नाना देशों से आये हैं। वीणा बजावने में वह बहुत निपुण है सो ये राजावों के पुत्र तथा सेठों के पुत्र वीणा बजाने वाले यहां आये हैं। वह गंधर्वदत्ता रूप लावण्य सौभाग्य का समुद्र अर मन की हरणहारी, हिरणी समान हैं नेत्र जिसके जगत् को मोह उपजावे है। ब्राह्मण का पुर अर वैश्य का पुत्र जो वीणा बजाने विषे प्रवीण हैं वे सभी कन्या के अर्थी अर यश के अर्थी यहां आये हैं। महीने महीने गंधर्वदत्ता के समीप राग का समाज होय है। बहुत वीणा बजाने वाले वहां एकट्ठे होय हैं। वह कन्या जीत की ध्वजा लिये साक्षात् सरस्वती का स्वरूप धारे ऊभी है, सो आज तो समाज पूरा भया आज से महीने फेर समाज होवेगा।

यह समाचार वसुदेव सुनकर उसको पूछता भया कि – जो यह गंधर्व विद्या का उपाध्याय कौन है, तब उसने कहा उपाध्याय का नाम सुग्रीव है।।28।। तब वह सुग्रीव के पास जाकर कहता भया – हे गौतम गोत्र! मैं गंधर्व विद्या विषे तुम्हारा शिष्य हुवा चाहू हूं। तब इसका रूप देखने से इसने जाना कि यह महा सुन्दर बड़े घर का पुत्र है अर भद्र कहिये सरल है ऐसा जान कर वह दयावान् इनको शिष्य करता भया, सो आप अति प्रवीण परन्तु भोले होय वीणा सीखते भये। सो जानते हू ऐसी अयोग्य वीणा वजावते भये जिस कर उस विद्यावाले सब हंसे, अब वह समाज का दिवस आया, उस दिन वसुदेव भी उस स्थानक विषे प्रवेश कर लोगों को देखता भया। वह सभा वसुदेव को देख कर चकित हो रही, ऐसा पुरुष अब तक देखा नहीं सभा में कैएक तो वादित्रों में तत्पर, कैएक गाने अर नाचने विषे तत्पर, अर कैएक कोतूहली लोक।।32।। पीछे वह कन्या सभा में आई निर्मल है प्रभा जिसकी आभूषणों कर मंडित जैसी वर्षा ऋतु में बिजुली मेघ मण्डल में आवे तैसे कन्या सभा विषे आई वह गन्धर्व सेना मानो साक्षात् गंधर्वविद्या ही है बीणा के बजावने विषे प्रवीण आगे जिसने अनेक जीते हैं। अब वसुदेव आकर श्रेष्ठ सिंहासन पर विराजे, उसने जितनी वीणा ल्याय कर कुमार के निकट धरी उन सबमें कुमार दूषण काढे। तब वह गन्धर्व सेना सुघोषा नामा वीणा लाय कर कुमार के कर विषे सौंपती भई सो वीणा सप्तदश तंत्री महा मनोहर देवोपुनीत उसके तार कुमार बजायकर हर्षित होय कहते भये।।36।।

यह वीणा महानिर्दोष है अति सुन्दर है। गन्धर्व सेना तू कहे अर जो तेरी अभिलाषा होय सो ही गाऊं अर वैसी ही बजाऊं मेरे रूप अर गुणकर यह वीणा भी मेरे वश भई है अर तू भी वशीभूत होवेगी इससे हे पण्डिते! मुझे गाने की आज्ञा देवो तब गंधर्वदत्ता कहती भई जिस दिन विष्णुकुमार मुनि ने

बलि को बांधा उस दिन तुम्बर अर नारद यह गन्धर्व जाति के देव हैं उन्होंने विष्णुकुमार की स्तुति करी वीणा बजाय ऐसी बीणा बजाने की तुम्हारे में प्रवीणता है तो बजावो। जो पुराण में कथा प्रसिद्ध है सो ही प्रशंसा योग्य है।।40।। चार जाति के वादित्र हैं तत कहिये तारका बाजा वीणादि अर अवनद्ध कहिये मंढ्या बाजा मृदंगादि अर घन कहिये कांशी का बाजा मंजीरा नुपूरादि अर सुषिर कहिये फूंक का बाजा सुन्दरी तुरही आदि।।42।। यह चार जाति के वादित्र प्राण जीवों के श्रोत्रों को तृप्त करे हैं। इससे गन्धर्वशास्त्र के शरीर, यह वादित्र कहे हैं। गंधर्वशास्त्र शरीर के गांधर्व की उत्पत्ति के स्थानक वीणा 1 वंशी 2 अर गान 3 यह गन्धर्व शास्त्र की उत्पत्ति के स्थानक हैं अर गन्धर्व का स्वरूप तीन प्रकार का है स्वर 1 ताल 2 पद 3 यह गन्धर्व का त्रिविध स्वरूप है।।44।। अर स्वर के मुख्य भेद दो हैं, एक बैन 1 दूजा शरीर 2 उनके विधान अर लक्षण कहे हैं।

जो जो स्वर जिस स्थान विषे योग्य थे सो स्वर वसुदेव ने यथायोग्य उसी स्थान विषे लगाये वसुदेव ने गंधर्व विद्या का विस्तार श्रोताओं के समीप गाया, सो सुन कर सब विस्मय को प्राप्त भये।।60।। ये सब कहते भये, वह गंधर्व जाति के देवों में तुंवरु है वा नारद है वा किन्नर देव है ऐसा वीणा बजाने वाला अर कौन होवे। इस भांति प्रवीण पुरुष प्रशंसा करते भये।।61।।

गन्धर्व दत्ता ने कहा कि जो विष्णुकुमार स्वामी की स्तुति करने अर्थ जैसी तुंबरु अर नारद ने वीणा बजाई थी अर गाया था वैसा ही बजावो अर गावो, सो इसी भांति वसुदेव ने वीणा बजाई अर गाया सो सुनकर गंधर्वसेना अति प्रसन्न भई अर उत्तर रहित भई।।62।। जीत की ध्वजा वसुदेव के हाथ सभा विषे आई अर वसुदेव की प्रशंसा का गम्भीर नाद सभा विषे विस्तरता भया।।63।। वह गंधर्व सेना अनुराग की भरी वसुदेव के कंठ विषे वरमाला डारती भई। जैसे गंधर्व देवांगना गंधर्व देव को वरे वैसे गंधर्व सेना वसुदेव को वरती भई।।65।। चारुदत्त सेठ यथोक्त विधि कर इन दोनों का विवाह कर निर्वृत्त भया।।66।। अर सुग्रीव अर यशोग्रीव ये दो वीणा विद्या के अध्यापक थे गंधर्व शास्त्र के पाठी उन दोनों ने अपनी कन्या वसुदेव को परणाई। अर बहुत हर्षित भये, वे तीनों कन्या गुण कर चतुर उन सहित महा मनोहर देवों कैसी क्रीड़ा वसुदेव करता भया।।68।। देखो भव्य जीव हो! क्षुद्र पाप से किसी प्रकार वसुदेव को विद्याधर वैरी ने हरा अर आकाश विषे दूर ले गया अर जाकर ऊंचे से डारे सो महासरोवर विषे आय पडे, नहीं है कोई आश्रय जिसके अर पुण्य के प्रभावकर यहां तीन राणी परणे। यह पुण्य कर्म प्राणियों को उत्कृष्ट लाभ कर संयुक्त करे है, ऐसा जान कर जे उत्तम जीव हैं वे जिनभाषित धर्म विषे यत्न करो यह जिनधर्म ही जीवों का बन्धु है।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ वसुदेवगन्धर्वसेनादिवर्णनो नाम एकोनविंशः सर्गः समाप्तः।।19।।

बीसवाँ सर्ग

विष्णुकुमार माहात्म्य

अथानन्तर – राजा श्रेणिक गौतम गणधर से पूछता भया – हे प्रभो! विष्णुकुमार ने वली को कैसे बांधा? तब गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहते भये – हे श्रेणिक! यह विष्णुकुमार स्वामी की कथा सम्यक् दर्शन की शुद्धकरण हारी भव्यों के सुनने योग्य तुझे कहता हूँ, सो तू सुन।।2।। उज्जयनी नगरी विषे राजा श्रीधर्म प्रसिद्ध पटराणी महा शोभायमान श्रीमती अति गुण कर भरी अर मंत्री चार मंत्र मार्ग के वेत्ता उनके नाम, बलि 1 बृहस्पति 2 नमुचि 3 प्रह्लाद 4 ये चार। एक दिन द्वादशांग के पाठी अकम्पनाचार्य सात सौ संयमी मुनि सहित नगर के बाह्य उद्यान में तिष्ठे सो मुनियों की वन्दना के अर्थ लोग वन में जाते थे ज्यूं समुद्र उलटे त्यूं सारा नगर जाय था सो देखकर राजा मंत्रियों को पूछता भया।।6।। जो आज क्या है? विना समय सकल लोक कहां जाय हैं तब बली बोला – हे राजन्! अज्ञानी यति आये हैं सो अज्ञानी लोक देखने को जाय हैं।।7।।

तब राजा भी गमन की इच्छा करता भया। मंत्रियों ने बर्जा परंतु राजा नहीं रहा बलात्कार से गया मंत्री भी साथ गये, जाय कर कुछ चर्चा करते भये, आचार्य्य ने पहिले ही सब मुनियों को शिक्षा दे राखी थी कि यहां दुर्जनों का अधिकार है, सो तुम मौन रहियो सो सब मौन ही तिष्ठे थे किसी ने इनको पीछे जुवाव न दिया मौनारूढ रहे। राजा के साथ मंत्री भी वापिस आये। सो एक श्रुतसागरनामा साधु जिनने आचार्य की शिक्षा न सुनी थी पहिले ही नगर में गये थे सो आवते इन देखे। राजा के निकट मार्ग में साधु से मंत्रियों ने चर्चा करी। मंत्री मिथ्या मार्ग कर मोहित सो स्वामी ने नय प्रमाण के मार्ग कर जीते।।10।। अर गुरु के निकट गये गुरु ने कहा – तुम भला नहीं किया, संघ को उपद्रव किया। तब श्रुतिसागर मुनि जहां उनसे वाद भया था, उसी जगह आय कर कायोत्सर्ग तिष्ठे। रात्रि विषे वे पापी मुनि को मारने को आये सो वन के देव ने इनको कीले सो प्रभात भये लोगों ने धिक्कार किये। राजा ने उनको कुटीरादि दिवाय देश से काढ दिया, सो यह चले चले हस्तिनापुर गये।

सो पहिले राजा महापद्म चक्रवर्ती थे, उनके आठ कन्या सो विद्याधर हर ले गये थे।।12।। सो वे शुद्धशील संवेग की धारणहारी चक्रवर्ती के योद्धा ले आये सो वे कन्या आर्य्या के व्रत धरती भईं अर वे आठों विद्याधर मुनि भये। यह वृत्तांत देख चक्रवर्ती अपनी पद्मनामा राणी लक्ष्मीपती के उदर से उपजा ज्येष्ठ पुत्र उसे राज्य दे छोटा पुत्र विष्णुकुमार उस सहित दिगम्बर भया। कैसा है चक्रवर्ती, अन्तदेही कहिए जिसे अर देह धारणा नहीं, इसी भव से लोक शिखर पधारेंगे। अब पद्म राज्य करे

अर विष्णुकुमार रत्नत्रय के धारक, तप करते भये जैसे नदीपति नदियों का आश्रय होवे, वैसे यही अनेक ऋद्धियों के स्वामी होते भये, अर पद्म विष्णुकुमार का बड़ा भाई हस्तिनापुर का राज्य करे सो पद्म का नवा राज्य उसके राज्य में एक सिंहवल नाम गढपति गढ के वल राजा के देश में उपद्रव करे सो राजा के उसकी चिन्ता। वली आदि चारों पद्म के आय रहे सो वली सिंहवल को बांध राजा के समीप ले आया। यह पापी चारों देश काल के वेत्ता राजविद्या में प्रवीण सो राजा पद्म के प्रधान भये। जब वली सिंहवल को बांध लाया तब राजा ने अति प्रसन्न होय वली को कहा - तू वर मांग।।17।। तब वली राजा को प्रणाम कर राजा का वचन धरोहर राख राजा को कहा - आपका वचन भण्डार में रहे सो जब मैं चाहूंगा उस समय लूंगा, इस भांति इनका काल व्यतीत होय, इनका राजा के अधिकार भया।।18।। कै एक दिन में वही अकम्पनाचार्य हस्तिनापुर के उद्यान विषे चातुर्मासिक योग धारते भये, इनका वृत्तान्त सुन मंत्री अपने पाप से डरे जो हमने इनको उपद्रव किया था सो शंका रूप विष के भरे निराकरण के अर्थ उपाय चिन्तते भये।।20।। वली ने जाकर पद्मराज पै वर मांगा - हे प्रभो! मुझे जो वर दिया था सो अब सात दिन का राज्य दो।।21।।

तब राजा बली को सात दिन का राज्य दे आप अदृश्य की न्याईं घर विषे रहा अर वली राज्य करे सो मुनियों को उपद्रव करता भया।।22।। जहां यति तिष्ठे थे उसकी चौगिरद यज्ञ आरम्भे सो साधुओं को धूम्र की अति बाधा भई रात अर दिन होम किया अर लोक भोजन करें उनकी जूठी पत्तलें साधुओं की ओर डारी, अर माटी के जूठे शरावा आदि उसी तरफ डारे।।23।। सो वह साधु उपसर्ग के सहनहारे मनुष्य कृत उपसर्ग जान कायोत्सर्ग धर तिष्ठे, अर यही नियम करते भये जो इस उपसर्ग से बचेंगे तो आहार-पानी लेंगे नहीं तो संन्यास है। उस समय विष्णुकुमार के गुरु मिथिलापुरी विषे विराजे थे, वे महादिव्य ज्ञानी दया कर संयुक्त ऐसे वचन कहते भये जो अकम्पनाचार्य आदि सात सौ मुनियों को महा भयंकर उपसर्ग बर्ते है।

यह वचन सुन एक पुष्पदन्त नामा क्षुल्लक श्रावक व्याकुल होय पूछता भया - हे नाथ! कहां उपसर्ग होय है? तब स्वामी ने कही हस्तिनापुर में होय है। तब उसने पूछा - वह उपसर्ग कैसे दूर हो? तब गुरु ने कहा विष्णुकुमार मुनि को विक्रियाऋद्धि उपजी है सो सुन उसके प्रभाव से मिटे। यह इन्द्र से भी अधिक शक्ति उनमें है। तब क्षुल्लक भी विद्याधर है सो सब व्रत धारे तब लौकिक विद्या सब तजी थी परन्तु धर्म के निमित्त राखी थी सो विद्या के प्रभाव कर तत्काल क्षुल्लक विष्णुकुमार के समीप जाय गुरु का कहा सकल वृत्तान्त कहता भया, सो विष्णुकुमार को सुध भी नहीं, जो मुझे विक्रिया ऋद्धि उपजी है। क्षुल्लक ने कहा तब जाना अर विद्या की परीक्षा के अर्थ भुजा पसारी सो कहीं न अटकी, दूर चली गई।।30।। तब स्वामी ने जाना जो मोहे ऋद्धि उपजी तब तत्काल अपना

भाई जो पद्‌म राज्य करे है उसके समीप गये वह इनके पांवों में पडा।।31।।

तब विष्णुकुमार ने कहा – तैंने यह क्या आरम्भा? जो तेरे राज्य में मुनियों को उपसर्ग होवे। अपने कुरुवंश विषै कदापि ऐसा भूप न भया जो भक्त जनों को भय उपजावे, इस पृथ्वी विषे ऐसा कार्य कदापि न भया मिथ्यादृष्टि लोक तपस्वियों को उपसर्ग करते होवें, अर राजा न मेटे तो वह राजा काहे का? उससे धर्म की प्रवृत्ति कहां से होवे जैसे जलती अग्नि महा प्रबल है तौ भी जलकर बुझे, अर जो जल ही से अग्नि प्रज्वले तो आग कैसे बुझे ऐश्वर्य का फल आज्ञा है। आज्ञा बिना ऐश्वर्य काहे का? जिसकी आज्ञा प्रवर्ते सो ईश्वर जैसे स्थाणु नाम ईश्वर का है अर ठूठ का भी है सो आज्ञा विना ही ईश्वर कहावे तो यह स्थाणु कहिये ठूंठ समान है। इससे हे पद्‌म! तू उठ अर इस दुराचार से बली को मने कर। तेरा मंत्री वली पशु समान है जे सकल जीवों विषे समभाव के धारक जे साधु उन विषे द्वेष कहा।।35।। शीतल है स्वभाव जिनका ऐसे जे साधु उनको ताप उपजावना शांति के अर्थ नहीं। जैसे जल महा शीतल है परन्तु तपाया हुआ अग्नि न्याईं जलावे वे मुनि कदाचित् कोप को भजें तो अग्नि की न्याईं भस्म करें वे महाधीर हैं अर सामर्थ्य जिनकी कोई जाने नहीं। त्रैलोक्य के उठाने की शक्ति है साधु जो कदाचित् कषाय करे तो प्रलय अग्नि की न्याईं भस्म करे। इससे जबलग बली आदिक का नाश न होवे उससे पहिले तू उसे अमार्ग से निवृत्त कर, विलम्ब मत कर।।38।।

तब पद्‌म ने नमस्कार कर कही – हे नाथ।।1।। मैं सात दिन का राज्य बली को दिया जो मेरा वश नहीं सो आप ही जाकर उसे समझावो वह आपकी आज्ञा प्रमाण करेगा, ऐसे राजा पद्‌म ने कहा तब विष्णुकुमार वामन रूप धार कर बली के निकट गये अर कहते भये – तैंने थोड़े दिन के जीने के अर्थ अर चार दिन का राज्य पाय ऐसे पाप कर्म क्यों किये।।41।। वे महापुरुष तपोनिधि उन्होंने तेरा अनिष्ट क्या किया जैसे कोई छोटे मनुष्य का अविनय करे तैसे तू मुनियों का करे है सो कहा योग्य है जो कर्मबन्धन से डरे सो किसी को अनिष्ट न करे सबका लाभ ही करे, जे तपस्वी मन वचन काय कर महा तप करें उनसे द्वेष कौन करे। इससे तू इनका उपसर्ग टार, प्रमाद कर जो कार्य्य तैंने किया सो अब इस कार्य्य से पीछे आव।।44।। तब बली बोला जो ये मेरे राज्य से जावें तो उपसर्ग की निवृत्ति होय अर भांति नहीं।।45।।

तब विष्णुकुमार ने कहा – वे योगारूढ हैं, चातुर्मासिक में गमन न करें, वे व्रती शरीर का त्याग करें परन्तु व्रत भंग न करें इससे यह कर – मैं बामन रूप हूँ सो मेरे पावों से मापी तीन पैण्ड पृथ्वी उनके स्थानक को देवो वे वहां रहेंगे, यह बात प्रमाण कर अपने आत्मा को अति कृश न करो। इतनी याचना मैंने करी सो देवो तब बली ने यही बात प्रमाण करी। तुम्हारे पैरों से तीन पैर धरती माप लेवो वहां ये रहैं उस सिवाय एक पैर अधिक में न विचरें जो विचरे तो मैं मारूंगा मुझे दोष नहीं।।48।। वह

www.vitragvani.com

बली अविनयी कपटी सर्प समान महा दुष्ट स्वभाव उसे वश करने को मुनि विक्रिया ऋद्धि के धारक उसे विक्रिया ऋद्धि दिखावते भये।।49।। उसे कहे हैं ये दो पैर तो तू देख अर तीसरे पैर को जगह कर। स्वामी ने अपना विक्रिया का रूप दिखाया चांद सूर्य को उलंग कर शरीर ऊंचा गया। अर एक पग तो सुमेरु पर धरा अर एक पैर मानुषोत्तर पर्वत पर धरा अर तीजे पैर की इससे दबावने कर तब वह चकित होय गया। तीजा पैर स्वामी ने आकाश पर धरा तब मुनि के प्रभाव कर तीन लोक क्षोभ को प्राप्त भये।

क्या है क्या है यह ध्वनि जगत विषे भई किन्नर गंधर्व आदि देव अपनी स्त्रियों सहित वीणा बांसरा आदि अनेक वादित्र बजाकर स्वामी की स्तुति करते भये।।53।। सो वह तो विष्णुकुमार त्रैलोक्य के नाथ हैं देव मनुष्य अर असुर उनके भी नाथ हैं उनकी प्रशंसा करने योग्य कौन परन्तु विष्णुकुमार के चरणों के अरुण तल आकाश विषे अति सोहते भये किन्नरादिक देवों की स्त्री संगीत करती हुईं, उनके मुख रूप कमलों के दर्पण स्वामी के चरणों के नख हो गये, देव विद्याधर भयरूप भया है मन जिनका सो हाथ जोड़ कर कहते भये – हे स्वामी।।54।। तुम्हारी ऋद्धि अब संकोचो, तुम्हारे तप के प्रभाव से तीन लोक कम्पायमान भये।।55।। देव विद्याधर गंधर्व किन्नर वीणा बजाय अति स्तुति कर स्वामी के गुण गावते भये अर आकाश विषे चारण मुनि प्रशंसा करते भये। मुनि देव विद्याधरों ने प्रार्थना करी अर शांत किये तब स्वामी विक्रिया ऋद्धि को संकोच कर शरीराकार भये मुनियों का उपसर्ग दूर भया, अर बली को बांध देव दूर डार आये उस दुरात्मा का निग्रह किया, उसे दूर नसाया।।58।। उस समय देवलोक की तीन वीणा देव ल्याये सो विद्याधरों को दई। घोषा नामा वीणा सो उत्तर श्रेणी विषे दई अर सुघोषा दक्षिण श्रेणी विषे दई अर महा घोषा सिद्धकूट विषे दई मुनियों का उपसर्ग निवार जिनमार्ग का वात्सल्य कर विष्णुकुमार स्वामी अपने गुरु के निकट जाय विक्रिया का प्रायश्चित्त करते भये।।60।। फिर महा दुर्द्धर तप कर घातिया कर्मों का क्षयकर केवली होय जगत का निस्तार कर मोक्ष गये।

यह विष्णुकुमार का चारित्र पापों का नाश करणहारा जो भक्ति कर सुने सो सम्यक्त्व की शुद्धता को प्राप्त होवे।।62।। पृथ्वी में कौन है जो सुमेरु को स्थानकतें चलावे अर चांद सूर्य को आकाश से भूमि विषे डारे अर समुद्र को चलायमान करे ये असम्भव बात है, सो कोई न कर सके अर साधु की अतुल्य शक्ति है उनको कोई कार्य विषम नहीं जो चाहें सो करें परन्तु जो कार्य कदापि न हुवा हो सो न करें जिनमार्ग का तप उसकी जो प्रवृत्ति सोई भई लक्ष्मी उसका है संयोग जिनके ऐसे योगी जिनके अनंत शक्ति रूप केवल ऋद्धि प्रगट होय उनके अर ऋद्धि का क्या आश्चर्य है।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ विष्णुकुमारमाहात्म्यवर्णनं नाम विंशतितमः सर्गः।।20।।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

इक्कीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – गंधर्व सेना को विद्याधर की पुत्री जान कर अर जो राजाओं की संपदा को उल्लंघे ऐसी चारुदत्त की विभूति देखकर वसुदेव एक दिन चारुदत्त से पूछते भये, वसुदेव यदुवंश विषें श्रेष्ठ अर सुन्दर गोष्ठी के श्रवण कर उपजे है सुख जिनको आप उदार चरित्र हैं, अर औरों के उदार चरित्र जिनको अति प्रिय हैं, चारुदत्त को कुमार पूछे हैं – हे पूज्य।।1।। ऐसी सम्पदा जो राजावों के नहीं सो आपने कैसे उपार्जी। अर भाग्य पुरुषार्थ जो तुम विषें है सो अर विषें नहीं यह अद्भुत महिमा कैसे प्रगटी अर यह विद्याधर की पुत्री कैसे आई? यह सकल कथा मुझे नीके कहो। मेरे कानों को यह कथा अमृत की वृष्टि समान अति प्रिय है सो आप अमृत की वृष्टि करें।।4।।

इस भांति कुमार ने चारुदत्त से जब पूछा तब वह खुशी होय अति आदर से कहता भया – हे धीर! तुमने भली पूछी यह सब वार्ता मैं कहू हूँ सो सुनो।।5।। इसी चंपापुरी विषे एक सेठों का स्वामी महा धनवान भानुदत्त नामा प्रसिद्ध सेठ उसकी स्त्री सुभद्रा।।6।। सम्यग्दर्शन की महा शुद्धता को वे दोनों सेठ सेठाणी धारते भये अर दोनों ही नाना प्रकार अणुव्रत के धारी उनका सुख से काल व्यतीत होय, सदा आनन्द सागर विषें मग्न ही रहैं, अर दोनों ही यौवनवन्त।।7।। वह सुख से काल व्यतीत करें किसी बात की भी चिन्ता नहीं परन्तु सुभद्रा के पुत्र की वांच्छा उपजी मन में विचारती भई – जो मैं ऐसा पति पाया अर ऐसा धन पाया अर ऐसा रूप पाया परन्तु पुत्र विना सोहे नहीं, साक्षात् गृहस्थ पद का फल पुत्र का मुख कमल देखना ही है।।8।।

यह अभिलाषा धर वह जिनपूजा अर दानादि विषें विशेष प्रवर्ती। एक दिन चारण मुनि को सुभद्रा, पुत्र की उत्पत्ति के अर्थ पूछती भई।।9।। वे अवधिज्ञानी अवधि विचार सेठानी को कृपा कर कहते भये, जो तुम्हारे शीघ्र ही पुत्र होवेगा अर अति श्रेष्ठ होवेगा यह आज्ञा कर मुनि तो विहार कर गये, अर थोड़े ही दिनों में मैं उनके पुत्र भया सो मेरा चारुदत्त नाम धरा अर बड़ा उत्सव किया।।11।। जब मैं बड़ा भया तब मुझे श्रावक के व्रत दिये अर सर्व कला मैंने सीखी अर मैं बाल चन्द्र समान ज्यूं ज्यूं वृद्धि को प्राप्त भया त्यूं त्यूं माता पिता अर बांधवों के चित्त विषे हर्ष रूप समुद्र की वृद्धि करता भया।।12।। अर मेरे मित्र वराह गोमुख हरिसिंह तमोन्तक मरुभूमि ये पांच मेरे समान वय, सो मुझे अति प्रिय।।13।। उनके सहित मैं क्रीडा करने अर्थ रत्न मालनी नामा नदी पर गया, सो नदी के पुलिन में विद्याधरी अर विद्याधर रति क्रीडा करते देखे सो मैं मन में जाना ये विद्याधर हैं पुष्पों की सेज पर कदली गृह विषें केल करे हैं उनके रति संघट्ट कर पुष्प अर पल्लवों की सेज मलिन हो गई थी सो

मैं तो आगे थोड़ी ही दूर गया पीछे कोई उनका शत्रु विद्याधर पहुँचा सो शत्रु ने उसको लोह की कीलों कर जडा, वह शत्रु उनके निकट खड्ग अर खेट लिये रक्त नेत्र खडा।।17।।

सो हमको देख शत्रु तो टल गया अर उस बंधे विद्याधर ने तीन दिव्य औषधि गूढ थी सो मुझको सेन कर बताईं, तब मैंने तीनों औषधि लेकर उनका यत्न किया औषधों के नाम चालन 1 उत्कीलन 2 अर व्रण संरोहण 3 सो मैं चालन औषध कर उसे चलाया अर उत्कीलन कर उत्कीला अर ब्रण संरोहण कर उसके घाव अच्छे किये।।18।। तब वह कील रहित अर घाव रहित होय खडग अर खेट दो आयुध हाथ में लेकर तत्काल उत्तर दिशा की ओर शत्रु पर दौडा।।19।। उसकी स्त्री शत्रु ले गया था सो तत्काल छुडाय स्त्री सहित हमारे निकट आया, अर अति आदर से कहता भया – हे भव्य! जैसे मुझे तुमने प्राण दिये अर मरते को बचाया वैसे मुझे आज्ञा देवो मैं तुम्हारी सेवा करूं।।

वैताड्य पर्वत की दक्षिण श्रेणी विषें शिव मन्दिर नामा नगर है उसका राजा महेन्द्र विक्रम।।22।। उसका मैं अमितगति नामा पुत्र उनको अतिप्रिय अर मेरे मित्र भूमिसिंह अर गोरमुख विद्याधर।।23।। सो अपने दोनों मित्रों सहित मैं हिमवत नामा पर्वत पर गया वहां एक हिरण्यरोम नामा तापस उनके सुकुमारिका नामा पुत्री सो सरसों के पुष्प समान अति कुमार अंग की धरणहारी, उसे देख मैं मोहित भया उसने मेरा चित्त हरा।।25।। सो मेरे चित्त विषे उसकी अभिलाषा रूप शल्य चुभी, तब मेरे पिता ने तापस से याचना करी अर मुझे परणाया, परम उत्साह सों मेरा अर सुकुमारिका का विवाह भया।।26।। सो भूमिसिंह मेरा मित्र मेरी स्त्री विषे चित्त कर अभिलाषी अर मैं उसका अभिप्राय न जानूं प्रमादी भया, उस सहित निरन्तर विहार करूं। आज मैं सुकुमारिका सहित इस चम्पापुरी नगरी के उद्यान विषे रमता था, सो मुझे मेरा कुमित्र भूमिसिंह कील गया अर कामिनी को ले गया सो मुझे तैंने छुडाया, तब मैं तत्काल जाय शत्रु से युद्ध कर स्त्री छुडाई सो यह स्त्री है।।28।। जैसा तैंने उपकार किया वैसा किसी से बने। उससे अब तू जो कहे सो मैं करूं मुझे आज्ञा देवो। यद्यपि मैं वयकर बडा हूं तथापि प्राणों का दाता सो तेरी सेवा करणी मुझे योग्य है।।29।।

जब तैंने मेरी शल्य काढी तब मैं जिया उससे यदि मैं भी कुछ पीछे उपकार करूं, तब मेरा जन्म सफल अर मेरी शल्य मिटे।।30।। ऐसे प्रिय वचन अमितगति विद्याधर ने कहे स्त्री है संग जिसके, तब चारुदत्त ने कहा तुम बड़े हो मुझसे हित जनाया अर सज्जनता दिखाया अर अपना शुद्ध भाव दिखाया, तब क्या न किया तुम विद्याधर देवों समान तुम्हारा दर्शन मनुष्यों को दुर्लभ सो मुझे सुलभ भया इस समान अर लाभ क्या आपने मुझसे जब मित्रता करी तब क्या न किया, यही बड़ा उपकार है जो मित्र को सरल भाव दिखावना।।32।। इससे मैं महा पुण्यवान अर लोक विषे मान्य जो तुम समान बड़े

पुरुषों का दर्शन भया।।33।। अर तुम ऐसा चित्त विषे विषाद न करो, जो मुझे वैरी ने कीला यह सब ही जीवों का साधारण लक्षण है जो एक अवस्था से अर अवस्था रूप होय यह जगत् की रीति है सो आप मुझसे कृपा करो। अर यदि मेरे ऊपर उपकारी बुद्धि है तो मुझको अपने पुत्रों समान गिणो।।35।।

इस भांति जब मैंने कही तब अमितगति विद्याधर बहुत प्रसन्न भया अर मेरा नाम गोत्र अर ग्राम सब चित्त में धार अर मुझे पूछ कर स्त्री सहित आकाश के मार्ग जाय अपने स्थान को गया, अर मैं पीछे चम्पापुरी आया विद्याधर की कथा विषें अनुरागी है चित्त जिसका, न देखी न सुनी अर न अनुभवी जो वस्तु सो चित्त को अति हर्षित करे है।

अथानन्तर – वसुदेव से चारुदत्त सेठ कहे है फिर मैं मेरे मामा सर्वार्थ नामा उसके सुमित्रा नामा स्त्री उसके मित्रवती नामा पुत्री परणया।।37।। परन्तु मेरे निरन्तर शास्त्र के अध्ययन से स्त्री का वार्ता ही नहीं शास्त्र का अध्ययन सब व्यसनों का बाधक है।।38।। तब मेरी माता को मेरी सास ने उलहना दिया जो तेरा पुत्र पढ्या भी बड़ा मूर्ख है स्त्री की चर्चा ही न जाने, तब मेरी माता ने मेरा काका रुद्रदत्त महा व्यसनासक्त उसे बहुत सन्मान कर कहा, मेरा पुत्र जैसे कामासक्त होवे सो करो।।39।। तब वह मुझे एक कलिंग सेना नामा गणिका सो सब गणिकाओं में मुख्य उसकी पुत्री बसन्तसेना जो अपनी शोभा कर वसन्त की शोभा को जीते उसके घर ले गया, सो कन्या नृत्य गीत वादित्र आदि कला विषे अति प्रवीण अर स्वरूप की परम हद्द अर नव यौवना सो उसके नृत्य मण्डप विषे श्रृंगार विद्या विषें प्रवीण अनेक लोक बैठे नृत्य का प्रारम्भ हुवा, सो रुद्रदत्त सहित मैं भी जाय बैठा। सूची नाटक कहिये सूइयों की अणी विषे नाचना सो नृत्य के प्रथम ही उसने जपा की कलिआं आंजुली में थी सो वषेरा तो तत्काल फूल गईं।।40।।

वह वेश्या की पुत्री वसन्तसेना रस कहिये श्रृंगारादि नवरस अर भाव कहिये उनके भाव विभाव अनुभाव उनके भेद को प्रगट करणहारी सो नृत्य समय अपनी अंगुलियों कर भावों को बतावती सब लोगों के देखते मेरे सन्मुख नृत्य करती भई अर भी लोग देखते थे सो गणिका की पुत्री हर्ष अर अनुराग की भरी अप्सरा समान नाची।।48।। फिर नृत्य संकोच कर अपने महल में माता के समीप गई, मुझे देख कामातुर भई। सो अपनी माता से कहती भई जो इस जन्म विषे मेरे चारुदत्त बिना अर पति नहीं मेरी यह प्रतिज्ञा है। इससे तू इससों रमाय।।49।।

ये बचन पुत्री के सुन कलिंगसेना मेरे वश करने के अर्थ दान सन्मान कर रुद्रदत्त को वशी किया। रुद्रदत्त वसुदेव से कहे है सो रुद्रदत्त मुझे उपाय कर उसके महल में ले गया।।51।। वहां कलिंगसेना भी थी सो हमारा अति सत्कार किया, सन्मुख आई अर आसन दिया।।52।। जाते ही वेश्या ने द्यूत

www.vitragvani.com

क्रीडा आरम्भी सो द्यूत क्रीडा विषे रुद्रदत्त का उत्तरासन जीता।

तब मैं कलिंगसेना से द्यूतक्रीडा करने विषे उद्यमी भया तब उसकी पुत्री वसन्तसेना ने माता से द्यूतक्रीडा छुडाय मुझे अपने सन्मुख किया, वह चतुर मेरे साथ द्यूतक्रीडा करती भई सो मैं उसके रूप अर चातुर्यताकर अति आसक्त भया घनी देर तक मैंने उससे द्यूतक्रीडा करी मुझे तृषा लगी तब मेरे पीने के जल में वेश्या ने मोहिनी चूर्ण डारा, सो मुझे अति भ्रम हो गया उसका अति विश्वास भया, मेरा उससे अनुराग उपजा। उसकी माता ने उसका मुझसे कर ग्रहण कराया वहां बारह वर्ष मैं उनके घर रहा माता पिता अर स्त्री तीनों को भूल गया अर कार्य की क्या कथा जो बड़े पुरुषों की सेवा कर मेरे जिन गुणों की वृद्धि भई थी सो तरुणी की सेवा करने से दोषों कर मलिन हो गई जैसे दुर्जन की संगति कर सज्जन को कलंक लगे बारह वर्ष में सोलह क्रोड़ दीनार मेरे घर से गणिका के घर गई घर में द्रव्य नहीं तब मित्रवती मेरी स्त्री उसके आभूषण आवने लगे।

तब पापिनी कलिंगसेना अपनी पुत्री वसन्तसेना को कहती भई – हे पुत्री! मैं तुझे हित की बात कहूं हूँ सो मेरी बात कान धर।।61।। गुरुवों के वचन अमृत समान हैं जो प्राणी गुरु के वचनरूप मंत्र का अभ्यास करें उसके घर के अनर्थ सदा दूर ही रहें। तू जाने है अपनी वृत्ति को कि यह सबमें हीन है वेश्या समान अर हीनाचरण नहीं सो जिसकी जैसी वृत्ति होवे वह उसके माफिक करे, महावर पगां ही लागे, वैसे जो निषिद्धाचरण है सो ही अपने को कर्त्तव्य है, उत्तम आचरण का प्रयोजन नहीं। चारुदत्त की बहू के आभूषण अपने आवन लगे, सो जानिये हैं इसके घर में अब धन नहीं। इससे इसका द्रव्य तो सब ले लिया अब तू इसे त्याग दे, यही सार है अर कोई धनवान् सा देखकर सेवन कर जैसे गन्ने की गनेरी रस की भरी जो होय वही सार अर रस चूसे पीछे असार होय वैसे वेश्याओं के धनवंत पुरुष सार, अर धनरहित पुरुष असार है, इससे अब तू कोई धनवान् नवे गन्ने की न्याईं रस का भरा उसे सेवन कर।

ये वचन माता के महापाप के करणहारे सुनकर सो शीलवन्ती ऐसे पीड़ित भई जैसे किसी के कान में कीला ठोकिये वैसी पीड़ित भई अर अपनी माता से कहती भई – हे माता! तूने यह क्या कहा? यह चारुदत्त मेरी कुमार अवस्था का पति अर बहुत दिन, जिसकी सेवा करते भये उसे त्यागकर मुझे अर धनवान् से क्या प्रयोजन? जो कुवेर समान सम्पत्तिवान् होय तो मेरे किसी अर्थ नहीं जो चारुदत्त का वियोग होय तो मेरे प्राणों कर क्या प्रयोजन। जो तुझे मेरा जीतव्य प्रिय है तो ऐसे वचन मुझे मत कहौ। अर तू महाकृतघ्नता की धरणहारी तेरा घर इसके क्रोडों सुवर्ण की दीनारों कर भरा तौ भी पापिनी उसे तजना चाहे है, स्त्री का जन्म ही कृतघ्न है।।68।।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

हे माता! ऐसे पति का त्याग मुझसे कहां होवे, सकल कला का पारगामी अर उत्कृष्ट रूप का धारणहारा, नव यौवन धर्मात्मा धर्म का उपदेशक महा उदार चित्त उसका त्याग कैसे करिये।।69।। तब वसन्तसेना की माता कलिंगसेना दुराचारिणी ने जानी जो मेरी पुत्री इससे बड़ी अनुरागिणी है इसका अनुराग मेरा मिटाया न मिटे। तब उसके यह चिन्ता उपजी किसी भांति इनको जुदा करिये। ऐसा विचार आसन विषे शयनविषे स्नान विषें भोजन विषें यह दोनों युक्त थे सो उसने उपाय कर जुदे किये अर मुझे रात्रि विषे निद्रा अणाय घर से बाहर डारा, सो मेरी निद्रा गई तब मैं अपने घर गया सो मेरा पिता भानुदत्त तो मुनि हो गया था, अर मेरी माता पति के वियोगकर महा दुःखिनी थी अर मेरा भार्या (स्त्री) अति दुःखी थी सो दोनों मुझे देख रुदन करने लगीं।।72।।

तब मैंने उनको धैर्य बंधाया अर स्त्री के आभरण उनकी कुछ पुंजी हाथ कर रावर्त नामा देश में मामा सहित व्यापार को गया। यहां लग अपनी कथा चारुदत्त वसुदेव से कहकर फिर कहे हैं। उसी रावर्त देश विषे कपास खरीदा मामा अर मैं ताम्रलिप्त नामा पुर को जावे थे सो दैवयोग कर कपास दावानल कर मार्ग में जल गई।।74।। तब मामा को तज कर अश्वारूढ़ होय मैं पूर्व दिशा को जाऊं था, सो मार्ग में अश्व भी मरा तब पांव पयादा ही खेद खिन्न प्रियंगु नगर में गया।।75।। वहां मेरे पिता का सुरेंद्रदत्त नामा मित्र था उसने मुझे देखा अर राखा अर कैएक दिन सुख से वहां विश्राम किया।।76।। फिर समुद्रविषें नाव में चढ़ व्यापार को गया सो छह बार समुद्रप्रवेश किया, सातवीं वार जहाज फट गया, आठ क्रोड़ मेरा धन था सो सब समुद्र में डूब गया। मैं एक लक्कड़ पर चढ़ समुद्र के तीर गया वहां राजपुर नामा नगर था, वहां एक तापस परिव्राजक के भेष का धारक मैंने देखा सो मुझे रसकूपिका का लोभ दिखाय वन विषे ले गया।।79।। अर उस तापस ने मुझको रस्से से बांधकर खाडे में उतारा सो मैं रसायन की तृष्णा का प्रेरा भयंकर अन्ध कूप में रस्से को दृढ़ पकड़े नीचा उतर रस कूपिका से रस का ग्रहण करने लगा, वहां एक पुरुष आगे पड़ा था उसने मुझे मने किया जो तू जीना चाहे है तो इस दुष्ट तापस का विश्वास मत कर। विश्वास करेगा तो न जीवेगा जैसे क्षयरोग वाला न जीवे।।80।।

यह रहस्य मैं सुन कर चकित चित्त हो गया अर उसे पूछा तू कौन है? यहां तेरे डालने वाला कौन तब उसने कहा मैं भी उज्जयिनी का वासी वणिक पुत्र हूं सो मेरा जहाज समुद्र में फट गया, अर मैं लकड़ियों पर चढ़ तीर निकसा सो इस वन में एक अपात्र कुलिंगी तापस भेषधारी रहे है। उसने मुझे रस कूपिका का लोभ दिखाया यहां ल्याय यह कार्य्य किया मुझे रस्से से बांध तेरी न्याईं रस कूप में उतारा सो मैं रस कूप में से रस से पात्र भर रस्से के बांधा सो पात्र तो उसने खैंच लिया। अर दूजी वेर

www.vitragvani.com

रस्से को पकड मैं चढ़े था सो उसने रस्सा काट डाला, जाने वह बाहर आवेगा तो रसायन में वट लेवेगा सो मैं बहुत दिन का यहां पडा हूं चर्म अर अस्थि रह गये हैं। इस रस के भोजन कर यह अवस्था मेरी भई। जैसे मृतक का जीवना कठिन वैसे यहां से मेरा निकलना कठिन है। यह अपनी वार्ता कह कर फिर उसने मुझे पूछा – तू कौन है? तब मैंने कहा मैं चम्पापुरी का वासी भानुदत्त सेठ का पुत्र हूँ सो वह तेरा वैरी तापस इसने मुझे यहां डारा है।।84।। यह दुष्टात्मा बगुले की वृत्ति धरे है। मुख में मीठा पेट खोटा है ऐसे पापी महा अधोगति में पडे, उसका आश्चर्य्य क्या।।85।।

चारुदत्त उस तापस को कपटी जान गया तब उसका पात्र रस से भर ऊपर चढ़ाय फिर उसने इसके अर्थ रस्सा डारा तब रस्से से एक पाषाण बांधा दिया तब उसने रस्सा काटा तब पाषाण तो रस में जाय पडा अर चारुदत्त वसुदेव से कहे है मैं बच गया वह दुष्ट तो अपना कार्य्य कर उठ गया अर मैंने अगिले पडे हुए को बाहर निकसने का उपाय पूछा तब उस दयावन्त ने मुझे निकसने का उपाय बताया।।87।। जो एक गौह यहां रस पीने को आवे है उसकी पूंछ पकड़ कर निकसे, यह निश्चय है। इस भांति उसने मुझसे कहा। तब मैं उसको सम्यक्त्व पूर्वक कथा श्रावक का धर्म कहा अर णमोकार मंत्र सुनाया सो उसके देव अरहन्त गुरु निर्ग्रन्थ अर जीव दया धर्म का श्रद्धान भया अर जीवदया सत्य अचौर्य एकदेश ब्रह्मचर्य्य परिग्रहप्रमाण उसने व्रत धरे।।90।। अर दिन में वह गोह रस पान कर जाती थी उसकी पूंछ मैंने दोनों हाथों को गाढ़ी पकडी सो वह मुझे वाहिर ले निकसी मेरा गात्र छिल गया। मैंने जाना आज नया जन्म पाया।।91।।

फिर मैं नीठ नीठ उठ धीरा धीरा जाता था सो एक आरण्य भैंसा मुझे मिला सो वह काल समान भयंकर था उसे देख मैं गुफा में पैठा।।92।। वहां एक अजगर सर्प सोया था सो भैंसे को निगलने उठा भैंसा भी उसको मारने को उद्यत हुआ तब दोनों का विषम युद्ध भया, उस समय मैं शीघ्र निकस गया, सो उस वन में से निकसकर एक प्रत्यंत ग्राम वहां आया, वहां दैव योग कर मुझे रुद्रदत्त मिला।।95।। उसने मेरी क्षुदा तृषा निवारी अर कहा – हे चारुदत्त! विषाद मत करो मेरे वचन सुन। एक सुवर्ण द्वीप है वहां हम प्रवेश कर अति धन ल्यावे उस कर कुल समूह की रक्षा होय ऐसा विचार कर हम दोनों ऐरावती नदी के उत्तर की ओर गिरिकूट नामा गिरि को उल्लंघ कर वेत्र वन में गये वहां से टंकण देश में पहुंचे। वहां रुद्रदत्त ने दो अजा पुत्र खरीदे वे चाल विषे प्रवीण उन पर हम दोनों चढ़कर पर्वत का मार्ग अति विषम उसे धीरे धीरे उल्लंग गिरि के शिखर पर जाकर पहुंचे वहां पापी रुद्रदत्त मुझे कहता भया।

हे चारुदत्त! इन दोनों को मार कर हम दोनों भाथड़ी में प्रवेश करें। यहां भारण्डव पक्षी आवेंगे सो

प्रचण्ड हैं चूंच जिनकी सो भाथड़ियों को मांस के लोभ से उड़ेंगे सो सुवर्ण द्वीप ले जावेंगे।।1।। यह बात रुद्रदत्त ने मुझे कही तब मैंने उसे बहुत निषेधा जो यह कार्य कर्त्तव्य नहीं, अपने जीवों में अर इन जीवों में भेद क्या, इस भांति बहुत समझाया परन्तु वह पापी रौद्र ध्यानी उसके मन में करुणा न आई। वह पापी मेरी दृष्टि बचाय अपने पशु का तो विनाश करता भया तब मैंने उस पशु को णमोकार मन्त्र दिया वह पापी रुद्रदत्त जो पशु हता था उसकी भाथड़ी बनाय मुझे उसमें घाला अर शस्त्र मेरे हाथ में दिया अर दूजी भाथड़ी में शस्त्र ले पापी आप उसमें बैठा।।4।। उस समय वहां भारण्डव पक्षी आये सो प्रचण्ड हैं चूंच जिनकी सो चारुदत्त वसुदेव से कहै हैं – हे कुमार! मैं जिस भाथड़ी में था उसे काणा भारण्डल ले उड़ा सो सुवर्ण द्वीप को छोड़ अर ही मनोग्य स्थानक विषे भाथडी जाय रखी।।5।। मेरे कर में शस्त्र था उस कर भाथडी फाड में निकसा सो स्वर्ग लोक समान रत्नों की किरणों कर देदीप्यमान रत्नद्वीप देखा जहां सब दिशा महा मनोग्य अर एक महा सुन्दर गिरि उसके शिखर विषे जिनेश्वर देव का मन्दिर देखा। कैसा है मन्दिर, पवन कर हाले हैं ध्वजा जिसकी सो मानो नृत्य ही करे हैं।।7।।

वहां आतापन योग धरे एक चारण मुनि विराजे उनको देखे, सो देखने से ऐसा आनन्द भया जो अब तक कभी न भया था। चारुदत्त ने गिरि पर आरोहण कर चैत्यालय की तीन प्रदक्षिणा दई अर जिन चन्द की कृत्रिम प्रतिमा चारुदत्त वसुदेव से कहे हैं – मैं वन्दी प्रभु का दर्शन कर फिर मुनि की वन्दना करी। सो मुनि का ध्यान समाप्त भया सो मुनि धर्मवृद्धि देय पूछा – हे चारुदत्त! तुझै कुशल है। तेरा आगम यहां कैसे भया बिना सहाय इतनी भूमि कैसे आये, तब मैंने नमस्कार कर विनती करी। हे नाथ! तुम्हारे प्रसाद से कुशल है। फिर मैंने नमस्कार कर आश्चर्यरूप होय मुनि से पूछा – हे प्रभो! आपने मुझे आगे कहां देखा मेरे जानने में तो अपूर्व दर्शन है। तब मुनि ने कहा – तू जाने है चम्पापुरी के उद्यान में मुझे मेरे शत्रु ने कीला अर तैंने छुड़ाया। वह अमितगिरि विद्याधर मैं हूं अर मेरा पिता मुझे राज्य विषे स्थाप आप हिरण्यकुमार मुनि के समीप मुनि भये।।16।। मैं सम्यक्त्व सहित राज्य करूं मेरे दो राणी एक विजयसेना दूजी मनोरमा सो विजयसेना के तो गंधर्वसेना पुत्री भई।।17।। अर दूजी मनोरमा के बड़ा पुत्र सिंहयश अर छोटा वराहग्रीव दोनों विनयवान।।18।।

सो मैं सिंहयश को तो राज्य दिया अर वराहग्रीव को युवराज का पद दिया, जो हमारे घर की रीति थी सो मैंने भी की जो अपना पिता महा मुनि सोई गुरु उसके निकट जाय जैनेन्द्री दीक्षा आचरी। इतनी वार्ता कह फिर मुझे पूछा – हे चारुदत्त! तूं यहां कैसे आया। यह समुद्र के मध्य कुम्भकण्टक नामा द्वीप है अर कर्कोटक नाम गिरि है।।20।। तब मैंने आदि से अन्त तक अपनी सुख दुःख मिश्रित

सब कथा स्वामी के निकट कही। उस समय दो विद्याधर आकाश से उतर साधु के समीप आये। वे मुनि के पुत्र उन दोनों पुत्रों को स्वामी ने कहा – तुमको जो पहिले कहा था कि मेरा जीव चारुदत्त ने बचाया सो मेरा भाई है सो यह यहां आया है। ऐसा जब श्रीगुरु ने कहा तब वे दोनों मुझसे मिले सो बहुत प्रीति जनाय मुझे निकट ले बैठे।।24।। उसी समय दो देव आये सो मुझे नमस्कार कर पीछे मुनि को नमस्कार किया सो यह रीति क्रम भंग है, चाहिए पहिले साधु को नमस्कार पीछे श्रावकों से संभाषण करे सो यह रीति भंग देखकर दोनों विद्याधरों से अर दोनों देवों से कारण पूछा, तब वे दोनों देव कहते भये – हम दोनों को जिनधर्म का उपदेशक साक्षात् गुरु ये चारुदत्त सेठ हैं, तब विद्याधर ने पूछी यह कथा कैसे?

तब प्रथम बकरे का जीव देव भया सो कहता भया – अहो विद्याधर हो! वाराणसी पुरी विषे एक सोम शर्म्मा नामा विप्र उसकी सोमिला नामा स्त्री सो ब्राह्मण वेद व्याकरण पुराणादिक का वेत्ता उसके दो पुत्री थी एक भद्रा दूसरी सुलसा सो यह पुत्री भी व्याकरणादिक शास्त्र की पारगामी।।29।। ये दोनों कुमारी ही परिव्राजक का भेष धारती भईं, अर विवाह न किया। सो इनकी पण्डिताई अर तप जगत् विषे प्रसिद्ध भया। अनेक वादी इन दोनों ने जीते।।30।। एक याज्ञवल्क नाम परिव्राजक प्रसिद्ध पृथ्वी विषे परिभ्रमण करता उन दोनों से जीतने की इच्छा कर वाराणसी पुरी में आया।।31।। तब वे दोनों बहिन भद्रा अर सुलसा उनमें सुलसा के गर्व घना सो पण्डितों की सभा मध्य ऐसी प्रतिज्ञा करती भई जो मैं अनेक वादी जीते हैं अर इसको भी जीतूंगी सो उससे वाद करने लगी। बड़े बड़े न्याय शास्त्र के वेत्ता बैठे। उनके निकट सुलसा ने याज्ञवल्क से प्रश्न किया सो याज्ञवल्क इसके पक्ष को दूषण कर अपना पक्ष थापता भया।

यह सुलसा बाद में हारी अर याज्ञवल्क्य जीता। तब वह इसका कर गह कुचेष्टा विचारता भया। इसने बहुत मने किया जो तू यह क्रिया मत करे परन्तु वह विषय रूप मांस का लोभी इससे रमता भया सो सुलसा के उसके योग से पुत्र भया। उसे पिप्पल वृक्ष के तले डार वे निर्दयी दोनों जाते रहे। अर वह बालक ऊंचा है मुख जिसका पिप्पल वृक्ष के नीचे सीधा पडा सो सुलसा की बड़ी बहिन भद्रा उसने बालक को देख कर जाना जो यह मेरी छोटी बहिन का पुत्र है, याज्ञवल्क से इसका जन्म है जब पीपल के नीचे इसको पडा देख इसका पिप्पलाद नाम धरा, अर वृद्धि को प्राप्त किया।।36।। यह बहुत शास्त्र का पारगामी भया। एक दिन इसने भद्रा से पूछा – हे माता! मेरा पिप्पलाद नाम किसलिये धरा? अब मेरा पिता जीवे है कि नहीं? तब भद्रा ने कही – हे पुत्र! तेरा पिता तो याज्ञवल्क है अर मेरी छोटी सुलसा नामा बहिन सो तेरी माता है सो याज्ञवल्क ने उसको वाद में जीता उसका कर ग्रहण

किया सो उनके तू पुत्र भया। वे पापी निर्दय तुझे पिप्पल के नीचे डार जाते रहे।।39।। सो मैं तेरी बड़ी मास्सी सो धाय लगाय तुझे पाला अर बड़ा किया।

तेरे माता पिता तो कामातुर थे अर तेरी पालना न करी, कानों को शूल समान यह वार्ता सुन पिप्पलाद क्रोध रूप भया अर पिता पास गया सो पिता से वाद कर उसे जीता फिर माता पिता की विनय पूर्वक शुश्रूषा कर शान्त किये परन्तु उनको अपने पंथ चलाये सो पिप्पलाद के शिष्य कहाये सो पिप्पलाद क्रूर परिणामी पर्वत के मार्ग प्रवर्ता सो बकरे का जीव कहे है पिप्पलाद का शिष्य मैं वाग्वली नामा उसी के हिंसा मार्ग को दृढ कर नरक की भयंकर वेदना को प्राप्त भया।।44।। वहां से निकसकर छह वार अजा पुत्र ही भया सो पर्वत के मार्गी यज्ञविद्या के पाठी बड़े निर्दय उन्होंने मुझे यज्ञ विषे होमा, सो नरक में से निकसे पीछे छह वार तो मेरा होम भया अर सातवीं वेर टंकण नामा देश विषे पाप के उदय कर अजा पुत्र ही भया सो चारुदत्त ने मुझे जिनधर्म का उपदेश दिया जिन देव की आराधना बताई। महा दयाकर पंच णमोकार मंत्र दिया उसके प्रभावकर मैं सौधर्म स्वर्गविषे देव भया। चारुदत्त मेरा गुरु है तातें पहिले नमस्कार किया। ऐसा कह कर बकरे का जीव चुप्प हो रहा। अर दूसरा देव कहता भया – अहो विद्याधरो! मेरी वार्ता सुनो चारुदत्त मेरा धर्म का उपदेशक कैसे भया।।40।।

एक ठग परिव्राजक का भेष धारक रसायन का लोभ दिखाकर रस कूप विषे मुझे डारता भया, उसी का भुलाया चारुदत्त भी कूप रस विषे आया। वहां दया कर धर्म का उपदेश मुझे किया। सो मैं प्रथम स्वर्ग विषे देव भया उससे चारुदत्त मेरा गुरु सो मैंने पहिले नमस्कार किया।।51।।

पाप रूप कूप विषे डूबते प्राणियों को धर्म रूप हस्तावलम्ब देकर थांभे उन मनुष्यों के तुल्य इस संसार विषे अर कौन सो धर्म संसार का तारणहारा है। एक अक्षर अथवा आधा पद कहिये चार अक्षर अर पद कहिये आठ अक्षर उनका देने वाला जो उपकारी उसे भूले सो पापी अर धर्म उपदेश देनेवाले को जो भूले सो महापापी उस समान अर निन्द्य कौन जो पहिले किसी का उपकार करे है उसका पीछे प्रत्युपकार कर उस समान भया चाहे है सो कदेही न होवे काहे से जो उसने तो इस पर बिना गुण गुण किये अर यह गुण पर गुण करे है सो उसकी तुल्यता नहीं अर भला ही है। अर जो पराये गुण को भूल जाय अथवा गुण पर अवगुण करे उस समान अर दुराचारी नहीं। कृतघ्न समान अर निन्द्य नहीं उससे यह ही योग्य है जो आप पर अल्प भी गुण करे उसकी सज्जन जन्म पर्य्यंत सेवा करे। उसका गुण कभी न भूले सो कृतज्ञ कहिये अर जो कुछ ही करने सके न होय तो सदा गुण ही माना करे अर उससे अति उज्ज्वल भाव राखे, अर उससे गर्व न करे।।55।। ये कुलवन्त पुरुषों के धर्म हैं – ऐसा कह कर ये दोनों देव मुनि के निकट विद्याधरों को अपनी विभूति दिखावते भये अनेक हैं देव देवी विद्यमान

जिनके।।53।। फिर चारुदत्त वसुदेव से कहे हैं दोनों देवों ने अग्नि में न जले ऐसे अद्भुत वस्त्र मुझे पहिराये अर अनुपम आभूषण पहराए अर कल्पवृक्षों की माला मुझे दई अर देवलोक के सुगन्ध मेरे अंग से लगाये। इस भांति मुझे शोभित कर अति सत्कार से कहते भये।।57।।

हे स्वामिन! जो हमको आज्ञा करो सो ही करें अर आज्ञा होय तो अब ही अपार धन के हित चम्पापुरी ले चलें तब मैंने कहा – भो देवो! अब तो तुम अपने स्थानक जावो अर जब मैं चितारूं तब शीघ्र ही आइयो, मैं जब यह कहा तब देवों ने कहा जो आज्ञा होयगी सो ही करेंगे। वह हाथ जोड़ कर मुनि को नमस्कार कर फिर मुझे नमस्कार कर मेरी आज्ञा पाय निज स्थानक गये।।59।। अर मैं मुनि को प्रणाम कर मुनि के पुत्रों के साथ विमान चढ़ आकाश के मार्ग उनके शिव मन्दिर नामा पुर में आया। वहां सुख से नगर विषे रहते भये। ऐसे कई एक दिनों तक विद्याधरों कर पूजित उनके नगर में रहा सब लोगों के मुख मेरा यश मैंने सुना। जन जन के मुख में यह वचन जो इस नगरी के पति का यह प्राण दाता है।।61।। एक दिन गंधर्वसेना की माता अर गंधर्वसेना के भाई दोनों मुझसे मंत्र कर मुझे गंधर्वसेना दिखाई। अर कही कि हे भाई चारुदत्त! तू सुन, एक दिन राजा अमितगति हमारे पिता अर गन्धर्वसेना के पिता तुमारे मित्र उन्होंने अवधिज्ञानी मुनि से पूछा जो मेरी पुत्री का वर कौन होवेगा।।63।।

तब मुनि ने कहा – चम्पापुरी विषे चारुदत्त सेठ के घर यादवों का पति गंधर्व विद्या विषे पण्डित सो इसे वरेगा।।64।। यह वार्ता सुनकर राजा ने निश्चय किया फिर वे तो मुनि भये अब यह कार्य्य हमको करना।।65।। तब मैंने यह बात प्रमाण करी जो भाइयों का कार्य होय सो अवश्य करना। तब धाय आदि परवार सहित यह कन्या मुझे सौंपी। अर कन्या के दोनों भाई नाना प्रकार के रत्न सम्पदा सहित बड़ी सेना साथ लेकर मेरे साथ चम्पापुरी को आयवे उद्यमी भये।।67।। उस समय वे दोनों देव मैंने चितारे, वे देव मित्र कार्य विषे उद्यमी सो स्मरण मात्र से ही नवनिधि लिये मेरे समीप आये।।68।। अर महा मनोहर हंस विमान कर गंधर्वसेना सहित मुझे महा विभूति से चम्पापुरी में ले आये।।69।। यहां मेरे मन्दिर विषे मुझे थाप अर ऐसे निधि जिनका क्षय नहीं सो मेरे घर में पूर्ण कर फिर मुझे नमस्कार कर वे दोनों देव अपने धाम गये, अर गंधर्वसेना के भाई साथ आये थे वे भी अपने स्थानक को गये।।70।।

अर मैं मेरी माता अर मामा से मिला, अर सब कुटुम्ब से मिला अर मेरी विवाहिता स्त्री से मिला, सब ही मुझे देख हर्षित भये।।71।। अर इह कलिंगसेना वेश्या की पुत्री बसंतसेना पतिव्रता मेरे परदेश गये पीछे अपनी माता का गृह छोड़ आर्य्यायों के निकट श्राविका का व्रत धार कर मेरी माता

के निकट आय रही। मेरी माता की अर स्त्री की उसने अति सेवा करी सो दोनों ही उससे अति प्रसन्न भईं अर जगत् में उसका यश बहुत भया सो मैं भी अति प्रसन्न होय उसे अंगीकार करता भया।।72।।

अब मैं निधि के प्रताप कर दीन अनाथों को तृप्त करणहारा किमिच्छा दान दूं हूं, सो जिसकी जो इच्छा होय सो मेरे से ले जाय है। अर बन्धु लोगों को मनवांछित दूं हूं। यह अपनी कथा चारुदत्त ने वसुदेव से कही। तुम मुझको अक्षय निधि की वार्ता पूंछी सो यह निधि देवों की दी हुई है। अर गंधर्वसेना अमितगति विद्याधर की पुत्री है इसके पिता तो मुनि भये हैं। अर इसके दोनों भाई राज्य करे हैं यह मेरे बहन समान है। सो तुमको परणाई।

हे यादव! यह समस्त वार्ता मैं तुमसे कही जो मुनि इसके वर कहे थे वे इसके भागकर तुम यहां आये। तुम्हारे ही अर्थ यह विजयार्द्ध से आई अर यहां रही। धन्य भाग्य इसके जो तुम से जैवर पाये अर मैं तुमको परणाय कृतकृत्य भया। मेरा चित्त तपविषे था परन्तु इसकी चिन्ता कर तप न धर सकता था, सो अब निश्चिंत होय तप धरूंगा। जे तप करे हैं उनके स्वर्ग मुक्ति समीप है। यह गंधर्वसेना का आदि से वृत्तान्त सुन अर चारुदत्त का उत्साह अर देवों का मिलाप सुनकर वसुदेव हर्षित होय चारुदत्त सेठ की अति स्तुति करता भया।।7।। वसुदेव कहे हैं – धन्य है इस निष्कपट पुरुष को, अर धन्य है उदारपना इनका, अर धन्य हैं इनका पुण्य का बल, ऐसा अर पुरुषों में नहीं, अर धन्य है पुरुषार्थ इनका, ऐसा पुरुषार्थ अर विभव अर के नहीं, देव विद्याधरों को यह विभव दुर्लभ तो अर का क्या बात।

चारुदत्त की कथा सुनकर वसुदेव ने अपनी सब कथा कही जो मैं राजा अन्धकवृष्टि का पुत्र समुद्रविजय का छोटा भाई इस भांति निकसा सो देव योग्य गंधर्वसेना परणी। यहां तक सर्व कथा कही चारुदत्त ने तो वसुदेव का वृत्तान्त जाना अर वसुदेव ने चारुदत्त का जाना। परस्पर रहस्य के मरमी भये, सुख से चारुदत्त वसुदेव चम्पापुरी विषे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का साधन करते तिष्ठे हैं।।82।। सो कोई इस लक्ष्मी के अर्थ समुद्र में प्रवेश करे अर कूप विषे उतरे अर महा अलंघ्य पर्वतों विषे संचरे अर महा गम्भीर बन में बिचरे अर द्वीपान्तर में संचरे तो भी लक्ष्मी हाथ न आवे। यह लक्ष्मी धर्म की दासी है धर्म ही है मित्र जिनके उनको यह मिले है। पाप के अभाव से लक्ष्मी का सद्भाव है इससे बुधजन जिनेश्वर का कहा धर्म मनवांच्छित फल देने को चिन्तामणि समान उसे चितारो।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ चारुदत्तचारित्रवर्णनं नाम एकविंशतितमः सर्गः।।21।।

बाईसवाँ सर्ग

अथानन्तर – गंधर्वसेना सहित चम्पापुरी विषे रमें जब फागुण की अष्टाह्निका के दिन आये तब अष्टाह्निका के दिनों में देव नन्दीश्वर द्वीप को गए अर विद्याधर सुमेरु पर्वतादि विषे वंदना के अर्थ आनन्द को धरते हुए गये।।1।। अर चंपापुरी वासुपूज्य प्रभु की पांचों कल्याणक की ठौर महा पूज्य वहां भगवान् की पूजा करने को उत्सव सहित सब ओर से भूमि गोचरी अर विद्याधर आवै हैं अर देव आवे हैं सो वासुपूज्य की प्रतिमा नगर से बाहिर है उसे पूजने को राजा आदि चंपापुरी के वासी सब ही निकसे।।5।। कई एक रथ पर चढ़े कई एक गज पर आरूढ कई एक अश्वों पर आरूढ कई पालकियों पर बैठे नर-नारी नाना प्रकार के वस्त्राभूषण पहिरे यात्रा के अर्थ नगरी से निकसे। वसुदेव गंधर्वसेना सहित घोड़ियों के रथ पर आरूढ भगवान् की पूजा के अर्थ पूजा की सामग्री सहित नगरी के बाहिर निकसे।।7।। बड़े बड़े योधा वसुदेव के साथ जो जिनगृह के अग्रभाग जाते थे, यदुपति ने एक कन्या भील की कन्या के भेष नृत्य करती देखी।।8।। सो कन्या नील कमल के पुष्प समान श्याम सुन्दर अर अद्भुत आभूषण पहिरे मानो वह तो वर्षा की विभूति है अर आभूषण विजुली समान चमके हैं।।9।।

रक्त पुष्प समान अरुणता धरे होंठ जिसके अर कमल समान हैं कर चरण जिसके अर पुण्डरीक समान है नेत्र जिसके मानो मूर्तिवाली शरद की लक्ष्मी ही है। सो अति रूपिणी जिनेंद्र की भक्ति कर नृत्य करती थी। श्री वासुपूज्य स्वामी के पांचों कल्याणक के यश गावती थी जैसे श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी, सरस्वती सोहे वैसे सोहती थी, ऐसा ही रंग का विभाग अर ऐसी ही गवैया ऐसा ही राग ऐसे ही मृदंग अर ऐसे ही ताल मंजीरादि कांसी के बाजे।।12।। ऐसे ही विपंची ऐसी वीणा ऐसा नृत्यकारणी का समूह जैसा समूह जैसा जिस स्थानक सोहे वैसा ही वनिक अर ऐसे ही भाव वतलानेहारे अर ऐसे ही रस ऐसे ही अभिनय उनको प्रगट करती नृत्यकारिणी को गंधर्वसेना सहित वसुदेव ने रथ चढ़े ही देखी।।14।। सो वह नृत्य कारिणी अपने रूप अर चतुराई के पाश कर वसुदेव का मन बांधती भई। बांधने योग्य अर बंधने वाला परस्पर दोनों अनुराग को प्राप्त होते भये।

भावार्थ – उसका रूप अर चतुराई रूप चरित्र तो बांधने वाले भये अर वसुदेव का मन बांधने योग्य है अर वसुदेव का रूप, अर वसुदेव की लीला तो बांधने वाले भये अर उसका मन बांधने योग्य भया। दोनों परस्पर प्रीति कर बंधे, तब गंधर्वसेना को उस पर ईर्षा उपजी। अर अपने नेत्र संकोचे सो यह रीति है जब विपक्षी निकट आवे तब नेत्र कुपित होंय।।17।। गंधर्वसेना सारथी को कहती भई जो यहां बहुत देर खड़े रहे। अब रथ को यहां से आगे चलावो, यहां का तमाशा देखा मिसरी भी बहुत

आस्वादी, ये तो कछु दूजा रस नहीं वहीं मिसरी है। गंधर्वसेना ने जब ऐसे कहा तब सारथि शीघ्र ही रथ को चैत्यालय के समीप ले गया, वहां रथ खड़ा कर ये दोनों धनी अर राणी जिनमन्दिर की प्रदक्षिणा देय उसके मध्य प्रवेश किया। वहां श्री वासुपूज्य स्वामी की प्रतिमा मनुष्य देव अर असुरों कर पूज्य उसे वसुदेव प्रिया अभिषेक करावता भया।।21।।

निर्मल जल अर मलयागिरि चन्दन अर अखण्डित अक्षत अर सुगंध पुष्प अर नाना प्रकार के नैवेद्य अर काला गुरु का धूप अर देदीप्यमान दीप की शिखा अर फल ये अष्टद्रव्य उन कर जिनपति की दम्पती पूजा करते भये। ये दोनों ही पूजा की विधि विषै प्रवीण।।23।। सम हैं पांव जिनके सो प्रभु के आगे खड़े रहे हाथ जोड़ पहिला ईर्यापथ शोध ये अष्टांग दण्डवत् करते भये। ईर्यापथ कर शोधी जो पृथ्वी उस विषे दोनों निपुण बैठे फिर उठे फिर पवित्र पंच णमोकार मंत्र के पाठ कर पवित्र है चित्त जिनका वे दोनों अरहन्त सिद्ध साधु केवली प्रणीत धर्म ये चार मंगल अर यही चार उत्तम अर ये चार शरण उनको उर विषे धारते भये। अर कहते भये अढाई द्वीप विषे एक सौ सत्तर आर्य्य क्षेत्र उनमें धर्म ही की प्रवृत्ति है उनमें जे केवली भये अर हैं अर होवें उनको हमारा नमस्कार होवे।।27।। हम सामायक करें तब तक सकल पाप योग तजे हैं यह पाठ पढ़ दोनों विवेकी कायोत्सर्ग लेकर खड़े।।28।। शत्रु मित्र विषे सुख दुःख विषे जीवन मरण विषे हमारी समता है। लाभ अलाभ विषे हमारी समता है। सात श्वासोश्वास प्रमाण खड़े रह कर हाथ जोड़ शिर नवाय चतुर्विंशति तीर्थंकरों का स्तवन पढ़ते भये।।30।।

प्रथम ऋषभ देव के ताईं नमस्कार अजित के ताईं नमस्कार संभव के ताईं नमस्कार, अभिनन्दन के ताईं नमस्कार, सुमति के ताईं नमस्कार, सुपार्श्व के ताईं नमस्कार, चंद्रप्रभ के तांई नमस्कार, पुष्पदंत के ताईं नमस्कार, शीतलनाथ के ताईं नमस्कार। सब ही जीवों के पालक अर लक्ष्मी के स्वामी कल्याण के कर्ता जो श्री श्रेयांसनाथ उनके तांई नमस्कार होवे, वासुपूज्य के तांई नमस्कार होवे। वे वासुपूज्य त्रैलोक्य कर पूज्य हैं चम्पापुरी विषे जिनके कल्याणक की पूजा अचल है।।34।। फिर विमल, अनन्त, धर्मनाथ के ताईं नमस्कार अर रागादिक रोगों की शांति के अर्थ श्रीशान्तिनाथ के ताईं नमस्कार।।35।। फिर कुन्थुनाथ के ताईं नमस्कार। अरनाथ के ताईं नमस्कार। मल्लिनाथ के ताईं नमस्कार। कैसे हैं मल्लिनाथ, माया मिथ्या निदान यह तीन शल्य रूप मल्ल उनके मसलने वाले हैं अर जीवों को मुनिव्रत के दायक श्री मुनिसुव्रतनाथ उनके तांई नमस्कार।।36।। फिर वसुदेव अर गन्धर्वसेना कहे हैं इकबीसवा तीर्थंकर श्री नमिनाथ उसके तांई नमस्कार होवे जिसका अवार भरत क्षेत्र तीर्थ है।

भावार्थ – जब तक नेमनाथ का जन्म न होवे तब तक नमिनाथ का तीर्थ कहिये सो जिन दिनों

में वसुदेव निकसे हैं उन दिनों में नमिनाथ का ही तीर्थ है।।37।। फिर वसुदेव कहे हैं बाईसमें स्वामी तीर्थंकर स्वामी अरिष्टनेमि तीर्थ के कर्ता हरिवंशरूप आकाश विषे चन्द्रमा समान उद्योत करेंगे उनके ताईं हमारी बारम्बार नमस्कार हो।।38।। फिर श्री पार्श्वनाथ जिनेंद्र उनके ताईं नमस्कार, श्री वर्द्धमान महावीर के ताईं नमस्कार। सर्व तीर्थंकर अर सर्व गणधर देवों के ताईं हमारी बारम्बार नमस्कार होवे।।39।। अर भगवान के कृत्रिम अकृत्रिम सब चैत्यालय अर सर्व प्रतिमा उनके ताईं हमारी नमस्कार।।40।। इस भांति वसुदेव अर गन्धर्वसेना महाभक्ति से प्रभु की स्तुति कर हर्षित भया है चित्त जिनका आये हैं रोमांच जिनके माथा नवाय गोडे कर धरती विषे लगाय प्रभु को प्रणाम करते भये।।41।।

फिर पूर्व रीति उठकर कायोत्सर्ग धर पंचपरमेष्ठी का पवित्र स्तोत्र उच्चारते भये।।42।। अर्हद्भ्यः कहिये श्री अर्हन्त देवों के ताईं सर्वदा सदा काल, सर्व सिद्धेभ्यः कहिये सब सिद्धों के ताईं, अर सर्वभूमिषु कहिये सब भूमी विषे आचार्य्येभ्यः कहिये आचार्य्यों के ताईं, फिर उपाध्याय साधुभ्यः कहिये उपाध्याय अर जे साधु उनके ताईं नमोनमः कहिये बारम्बार नमस्कार होवे। इस भांति स्तुति कर वे दोनों देवों के प्यारे प्रभु के मन्दिर की प्रदक्षिणा देकर रथ विषे आरूढ भये अर चम्पापुरी विषे प्रवेश किया परम विभूति कर अपने महल में प्रवेश करते भये।।44।। नृत्यकारिणी के देखने कर गन्धर्वसेना के नेत्र किंचित् वक्र भये थे सो वसुदेव ने प्रणाम कर जाना गन्धर्वसेना मानिनी सो उसका मान निवारा।।45।। ग्रन्थों में यही कहा है, दूजी नायिका को आशक्तता कर अबलोकन करने से अपराधी भया जो पति उस पर स्त्रियों का अनुराग रूप कोप होवे है सो पति के प्रणाम करने मात्र से कोप मिट जाय है। पति नया अर प्रिया का कोप गया, गन्धर्वसेना वसुदेव के नम्रीभूत होने कर अति प्रसन्न भई।।46।।

अथानन्तर – एक वृद्ध विद्याधरी मानो मूर्तिवन्ती विद्या ही है सो वसुदेव के समीप उस नृत्यकारिणी ने पठाई सो आई ललाट विषे पुण्ड का है तिलक जिसके।।47।। एकान्त विषे महल में आय तिष्ठी जिसकी वार्ता सुन मन हरा जाय सो वृद्धा वसुदेव को आशीर्वाद देकर सन्मुख आवती भई अर कहती भई – हे वीर! त्रेषठ शलाके पुरुषों के पुराण उनका विस्तार तो तुम्हारे चित्त विषे भास रहा ही है तथापि कछुक विद्याधर सम्बन्धी कथा मैं कहू हूं। जैसे औषधिनाथ जो चन्द्रमा उसकी किरणों कर स्पर्शी जो वस्तु उसे क्या अर न स्पर्शे, स्पर्शे ही।।50।।

भावार्थ – जो विशेषज्ञ है अर्थात् सब जाने उसके निकट क्या अल्पबुद्धि न कहे, किन्तु कहे ही सो मेरी कथा सुनो। भगवान् श्रीऋषभदेव ताईं जगत् की आजीविका वृत्ति अर युग की आदि सकल विधि के विधाता सो भरतेश्वर को राज्य देय आप मुनि भये।।51।। उस समय प्रभु के साथ क्षत्रियों

के शिरोमणि उग्र इक्ष्वाकुवंशी सोमवंशी उग्रवंशी भोजवंशी चार हजार राजा तप धारते भये, सो क्षुधा तृषादि परिषह न सह कर तपोभ्रष्ट भये।।52।। अर कच्छ के पुत्र नमि विनमि दोनों राज्य के अर्थ प्रभु के पावों लगे।।53।। तब प्रभु का है शरण जिनके ऐसे धरणींद्र ने उनसे पास आय इनको विश्वास उपजाय, अर दिति अर अदिति देवी इनको भी विश्वास उपजाया यह दोनों धरणींद्र ही की देवी हैं अर धरणींद्र भगवान् के बड़े भक्त सो भगवान के समीप विद्या का भण्डार नमि विनमि को अपनी दोनों देवीयों हाथ दिवाते भये। धरणींद्र बड़ा पुरुष है।।55।।

उसकी अदिति नामा देवी आठ गन्धर्व सेन विद्या देती भई। आठ विद्याओं के नाम – नमु 1 मानव 2 कौशिल 3 गौरिक 4 मांधार 5 भूमिमुण्ड 6 मूलवीर्य 7 संकुक्कट 8 इन आठ विद्याओं को आचार्य आदित्य गन्धर्व तथा व्योमचर कहे हैं।।57।। यह विद्या तो अदिति ने दीनी फिर दिति ने दई सो सुनो – मासांग 1 पांडूक 2 काल 3 सुपाक 4 पर्वत 5 वंशालय 6 पांशुमूल 7 वृक्षमूल 8 सो इन विद्याओं के नाम दैत्य पन्नग अर मातंग कहिये हैं यह सोलह विद्या सकल विद्याओं में मुख्य इन विद्याधरों के भेद भये हैं कैएक गंधर्व कहाये कैएक यक्ष कहाये कैएक देव कहिए कैएक असुर कहाये, कैएक राक्षस कहाये, कैएक पन्नग कहाये कैएक मातंग कहाये इत्यादि अनेक भेद विद्याधरों में पड़े इन विद्याओं के माहात्म्य से फिर अर अनेक महा विद्या हैं।।61।।

उनके नाम – प्रज्ञप्ति 1 रोहिणी 2 अंगारिणी 3 महागीरा 4 गौरी, 5 सर्व विद्यापकर्षिणी, 6 महाश्वेता, 7 मायूरी 8 हारी, 9 निरवाग्यशाद्धला, 10 तिरस्कारिणी, 11 छाया, 12 संक्रामिणी, 13 कूष्माण्डगण माता 14 सर्व विद्याविराजित, 15 आर्य्यकुष्माण्डदेवी, 16 देव देवीयों कर नमस्कार करने योग्य फिर।।64। आच्युता 17 आर्य्यवती 18 गांधारी 19 निवृत्ति 20 दन्डाधिष्यगणा 21 दण्डभूतिसहस्रकम् 22 ।।65।। भद्रकाली 23 महाकाली 24 काली 25 कालमुखी 26 इत्यादि महाविद्या विद्याधरों के ईश्वर की कही हैं।।66।। फिर एक पर्व्वा 1 द्विपर्व्वा 2 त्रिपर्व्वा 3 दशपर्व्वा 4 शतपर्व्वा 5 सहस्रपर्व्वा 6 लक्षपव्वा 7 उत्पातिनी 8 त्रिपातिनी 9 धारिणी 10 अन्तर्विचारिणी 11 जलगति अग्निगति 12 ये समस्त विद्याधरों विषे नाना प्रकार शक्तिकर मण्डित अनेक विद्या अनेक पर्वतों की निवासिनी नाना प्रकार औषधों की वेत्ता।।69।। फिर सर्वार्थ सिद्धा 1 सर्वार्था 2 जयन्ती 3 मंगला 4 जया संक्रामिणी 6 प्रहारिणी 7 असिज्याराधिनो 8 विशल्यकारिणी 9 व्रणसंरोहिणी 10 सवर्णकारिणी 11 अमृत संजीवनी 12 ।।71।।

ये सर्व परम कल्याण की दाता सर्व मंत्रों कर मण्डित सर्व विद्या बलकर युक्त सर्व लोक की हित कर्ता।।72।। ये सर्व पठित सिद्ध दिव्य औषध धरणीन्द्र ने नमि अर विनमि को दई धरणीन्द्र का दिया नमि विनमि को विजयार्द्ध का राज्य सो नमि तो दक्षिण श्रेणीविषे राज्य करता भया अर विनमि उत्तर

श्रेणी का करता भया।।74। ये दोनों मित्र बांधवों कर संयुक्त सामन्तों कर स्तुति करने योग्य नाना प्रकार के देशों के स्वामी दोनों योद्धा दोनों श्रेणी का राज्य करते भये।।75।। सो उन दोनों नृपति ने सब विद्याधरों को औषधि अर विद्या बांट दई। जो विद्या का नाम था उसके नाम विद्याधरों के कुल कहाये।।76।। जिनको गौरी विद्या दई वे गौरिक अर जिनको मन नामा विद्या दई वे मनु कहाये अर जिनको गांधारी विद्या दई वे गांधार कहाये अर जिनको मानव विद्या दई वे मानव कहाये।।77।। अर कौशिकी विद्या वाले कौशिक हुवे। अर भूमि तुण्डक विद्या से भूमितुण्ड कहाये अर मूलवीर्य विद्या से मूलवीर्य अर संकुक्क विद्या से संकुक्क विद्याधर कहाये।।78।। अर पाण्डुकीय विद्या से पाण्डुकेय अर काल विद्या से काल अर सुपाक विद्या से सुपाक कहाये।।79।।

अर मातंग विद्या से मातंग अर पर्वत विद्या से पार्व्वतीय अर वंशालय विद्या से वंशालय अर पासमूलक विद्या से पासमूलिक अर वृक्ष मूल विद्या से वृक्ष मूल कहाये अनुक्रम से विद्याधरों के वंश ठहरे।।82।। विजयार्द्ध दोनों श्रेणी हैं उनके एक सौ दस नगर हैं उनमें उत्तर श्रेणी के 60 दक्षिण श्रेणी के 50 सो उनमें उत्तर श्रेणी के नगरों के नाम कहे हैं – अलिकापुर, आदित्यपुर, गगन बल्लभपुर, चमर चम्पापुर, गगनमण्डनपुर, विजयपुर, वैजयन्तपुर, शत्रुंजयपुर, अरिंजयपुर, पद्मालयपुर, केतुमालपुर, रुद्राश्वपुर, धनंजयपुर, वस्तोकसारपुर, निवहपुर, जयंतपुर, अपराजितपुर, वराहपुर, हस्तिनापुर, सिंहपुर, शौकरपुर, हस्तिनायनपुर, पाण्डुकपुर, कौशिकपुर, वीरपुर, गौरिकपुर, मानवपुर, मनुपुर, चम्पापुर, कांचनपुर, ऐशानपुर, मणिवज्रपुर, जयावहपुर, नैमिकपुर, हस्तिविजयपुर, खण्डिकापुर, मणिकांचनपुर, अशोकपुर, वेणुपुर, आनन्दपुर, नंदनपुर, श्रीनिकेतनपुर, अग्निज्वालापुर, महाज्वालापुर, माल्यतपुर, नंदिवीपुर, विद्युत्प्रभपुर, महेन्द्रपुर, विमलपुर, गंधमादनपुर, महापुर, पुष्पमालपुर, मेघमालपुर, शिशुप्रभपुर, चूड़ामणिपुर, पुष्पभूड़पुर, हंसगर्भपुर, वलाहकपुर, बंशालयपुर, सौमनसपुर, इत्यादि साठ पुर हैं।

अर दक्षिण श्रेणी के पचास नगर उनके नाम– रथनूपुर, आनन्दपुर। चक्रवालपुर, अरिंजय मण्डितपुर, बहुकेतशकटामुखपुर, गंधसमृद्ध शिवमन्दिर वैजयन्तपुर, रथपुर, श्रीपुर, रत्नसंचयपुर, आषाढ़पुर, मानसपुर, सूर्य्यपुर, स्वर्णभासपुर, सितर्ह्दपुर, अंकावर्तपुर, जलावर्तपुर, आवर्तपुर, बृहद्गृहपुर, शंखवज्रपुर, वज्रनाभपुर, मेघकूटपुर, मणिप्रभपुर, कुंजरावर्तपुर, असितपर्वतपुर, सिन्धुकक्षपुर, महाकक्षपुर, सुकक्षपुर, चन्द्रपर्व्वतपुर, श्रीकूटपुर, गौरीकूट, लक्ष्मीकूट, धराधरपुर, कालकेशिपुर, रम्यपुर, पावतेयपुर, हिमपुर, किन्नरोगीतपुर, नभस्थिलकपुर, मगधासारनलकपुर, पांशुकूलपुर, दिव्यौषधपुर, अर्कमूलपुर, उदय पर्वतपुर, अमृतधारपुर, मातांगपुर, भूमिकुण्डकपुर, कूटपुर, जम्बूपुर, शकुपुर, ये पचास पुर दक्षिण श्रेणी में अपनी शोभा कर स्वर्गनगर समान शोभे हैं।।100।।

www.vitragvani.com

इन नगरों विषे अनेक विधि के विद्याधर रहे। ऋषभ जिनेश्वर के प्रसाद से नागेश्वर ने अर नागेश्वर की देवांगना दिति अदिति उन्होंने नमि विनमि को विद्याधरों के ईश्वर किया।।1।। उनमें उत्तर श्रेणी का अधिपति विनमि उसके बहुत पुत्र भये। सो सबही न्यायवान् विनयवान् यशवान् अनेक विद्या के धारक होते भये, उनके नाम, संजय, अरिंजय, शत्रुंजय, धनंजय, मणिचूल, हरिश्मश्रु, मेयानीत, प्रभंजन।।2।। चूणामणि, शतानीक, सहस्रानीक, सर्वंजय, बज्रवाहु, महाबाहु, अरिंदत्त इत्यादि विनमि के अनेक पुत्र स्तुति करने योग्य उत्तर श्रेणी के आभूषण भये, भद्रानामा कन्या भई। अर सुभद्रा भई सो सुभद्रा भरत चक्रेश्वर के स्त्री रत्न भई।।4।।

अर नमि के कान्तिधारी, बहुत पुत्र भये उनके नाम – रवि, तनय, सोम, पुरुहुति, अंशुभानु, हरि, जयपुलस्ति, विजय, मातंग, वासु इत्यादि अनेक पुत्र भये अर दो पुत्री भई, कनकश्री, अर कनक मंजरी।।6।। ये नमि अर विनमि महापण्डित विवेकी पुत्र को राज्य देय मुनि भये।।7।। नमि का पुत्र मातंग उसके अनेक पुत्र भये उनकी सन्तान विषे अनेक मोक्ष गये। अर अनेक स्वर्गवासी देव भये।।8।। अब इकबीसमें तीर्थंकर का समय है सो इस समय मैं असित पर्व्वत नामा पुर विषे राजा प्रहसित।।9।। मातंग वंशरूप आकाश विषे सूर्य्य समान प्रतापी उसकी हिरण्यवती नामा राणी विद्याकर पूर्ण है।।10।। अर मेरा पुत्र सिंहदंष्ट्र उसके स्त्री नीलांचना नीलकमल समान नेत्र जिसके। उसकी कन्या नीलंयशा उज्ज्वल है यश जिसका कुलवन्ती कलावन्ती गुणवन्ती उसके वंश का वर्णन मैं तुम्हारे आगे सब किया है।

हे हरिवंशरूप आकाश के चन्द्र! वह चन्द्रमुखी वासुपूज्य स्वामी के चैत्यालय के समीप नृत्य करती थी उसने तुमको देखा सो तुम्हारे दर्शन सब जीवों को सुख का कारण भया है। वह तुम पर अनुरागिणी भई है सो तुम्हारे विरह कर अति व्याकुल है।।14।। न स्नान करे है, न भोजन करे है, न बोले है, न कुछ चेष्टा करे है, काम के बाण कर भेदी जीवे है सो ही आश्चर्य है।।15।। उसकी यह अवस्था देख कुल के सब व्याकुल भये हैं। उसके माता-पिता आदि सब चिन्तावान् हैं।।16।। कन्या के मन में क्या है यह वार्ता सुन सबों ने कुल विद्या से पूछा तब विद्या ने सब वार्ता कही, तुम्हारा वृत्तान्त कहा तब हम सवों ने निश्चय किया जो यादवेश्वर के दर्शन कर यह अभिलाषवती भई है। माते हाथी समान चाल उसकी सो कन्या तुम्हारे अभिलाषकर व्यथा रूप भई है सो मैं तुमको लेने आई हूं मैं उसकी दादी हूँ। हे यादव! वह तुम्हारी नियोगिनी है। निमित्तज्ञानी ने यही कही है इससे चलो, उसे शीघ्र परणो।।19।।

यह वार्ता सुन कर वह चित्त की हरणहारी उसकी अनुराग अवस्था अर विरह कर अति खेद खिन्न दशा जानकर वहां जाने का वसुदेव अभिलाषी भया। परन्तु तत्काल चम्पापुरी से निकसना न

इच्छता भया। वृद्धा विद्याधरी से वसुदेव कहे है – हे माता! मैं अवश्य आऊंगा इसमें संदेह नहीं तू जाकर मेरे वचन से कह उस सुन्दरी को धैर्य्य बँधाय। कैसी है वह, सिंह समान है क्षीण कटि जिसकी अर किंदूरी समान अरुण हैं अधर जिसके सो वृद्धा ने वसुदेव के वचन सुनकर यह आसीस देय कहा, हे कुमार! वेग से आवो मैं जाऊं सो मनोरथ रूप रथ पर चढ़ कर जाय कन्या को धीर्य्य बंधावती भई। अर वसुदेव कुमार नेहरूप जल में स्नान कर गंधर्वसेना सहित एक सेज पर पोढे थे।।23।।

सो रात्रि समय भयंकर है दर्शन जिसका ऐसी वैताल कन्या रूप धर वह हिरण्यवती विद्याधरी आई उसने कर ग्रह वसुदेव को खैंवा, तब वसुदेव जागा दृढ़ मुष्टि कर उसे कूटता भया तौ भी उसने न छोड़ा।।24।। गली के मार्ग होय यदुपति को श्मशान भूमि में ले गई।।26।। वहां अनेक मातंग जाति की विद्याधरी उनको वसुदेव देखता भया। तब वह हिरण्यवती हंसी अर कहा – मैं हिरण्यवती हूँ वैताल विद्या कर यहां तुमको लाई हूं तू डरे मत।।28।। तेरे कार्य्य की सिद्धि के अर्थ तुझे ल्याइ हूँ वह तेरी बल्लभा नीलंयशा तेरी अप्राप्ति से मुख मुरझाय रही है, मलिन हो रही है कांति जिसकी वह बाला भुजपाशी के बंधन कर तुझे बांधा चाहे है।।29।। वसुदेव को ऐसा कहकर नीलंयशा से कहती भई। तेरा बल्लभ आया तू अपने कर से इसका कर पल्लव स्पर्श। ऐसा कहकर इसे उसका कर ग्रहण कराया। सो अनुराग भरा पति का कर ग्रहण करती भई।।31।। काम के प्रकोप कर प्रस्वेदरूप है अंग जिसका सो बाला बालम का कर ग्रहण कर आनन्द को प्राप्त भई तन के स्पर्श का सुख सोई भया जल उस कर सींचा हुवा इन दोनों के प्रेम रूपी वृक्ष रोमांच के मिस कर मानो अंकुरे धरता भया। वे दोनों स्नेहकर भीजे हैं चित्त जिनके सो स्नेहरूप पाणि ग्रहण तो प्रथम ही करते भये अर विवाहरूप भी पाणिग्रहण होवेगा।।33।। नीलंयशा की सखी अनेक विद्याधरी वसुदेव का रूप देख हर्षित भई।

कैसी है विद्याधरी, शरीर की प्रभा आभूषणों की प्रभा अर औषधों की प्रभा उनके समूहकर निवारा है अन्धकार का समूह जिनसे विद्याधरी विजुलियों के समूह की न्याईं चमत्कार करती भई। जब प्रातः समय भया तब वसुदेव की न्याईं सूर्य्य है सो अपने कर कहिये किरण उनके संयोग से पूर्व दिशा रूप जो नीलंयशा वधू उसके मुख को अपनी प्रभा कर उज्ज्वल करता भया।

भावार्थ – जैसे वसुदेव अपने कर ग्रहण कर नीलंयशा के मुख कमल को विकाश रूप करे वैसे दिनकर अपनी किरणों कर पूर्व दिशा को प्रकाशरूप करता भया।।36।। सूर्य का आधा विम्ब उदय भया आरक्त है वर्ण जिसका सो अति सोहता भया मानो पूर्व दिशा रूप तरुणी का अरुण अधर ही है।।67।। अर जब सम्पूर्ण उदय भया तब रवि मण्डल ऐसा सोहता भया मानो पूर्व दिशा रूप पद्मनी के मुख मण्डल का मण्डन कनक मय कानों का कुण्डल ही है।।38।। जैसे वसुदेव बन विषे उद्योग करे है वैसे सूर्य पृथ्वी विषे उद्योत करता भया पृथ्वी अर आकाश विषे शीघ्र ही नेत्रों का अवरोध मिट

www.vitragvani.com

गया। नेत्रों कर घट पटादि वस्तु दीखने लगीं, उस समय वसुदेव को नीलंयशा की दादी हिरण्यवती कहती भई – हे कुमार! भूमि विषे ह्रीमन्तनामा पर्वत है सो देखो। नाना भांति के वृक्षों के वनकर मण्डित है यहां ह्रीमन्त पर्वत पर विद्याधर तप कर विद्या साधैं। अशनिवेग का पुत्र अंगारक विद्याधर श्यामा ने युद्ध विषे विद्या रहित किया। उसकी सब विद्या खण्डित करी सो इस गिरि विषे तप कर विद्या साधे है।।42।। सो तुम्हारे दर्शन कर उसकी विद्या सिद्ध होवेगी सो तुम्हारी इच्छा सो उस पर अनुग्रह की है तो उसे दर्शन देवो।।43।।

इस भांति हिरण्यवती वसुदेव से आकाश विषे कही। इनको विद्या धारियों के समूह क्रीड़ा के अर्थ आकाश विषे ले गये थे। हिरण्यवती के ये वचन सुन वसुदेव ने जाना मेरी स्त्री श्यामा सुख से है युद्ध विषे वची मन में प्रसन्न भया अर हिरण्यवती से कहा अंगारक तो अनिष्ट है श्यामा का शत्रु है, उसके देखने कर क्या अर यहां आकाश में क्रीड़ा कहां, वृथा काल क्यों खोवो यहां से चलो मुझे श्वसुर के पुर ले चलो। तब हिरण्यवती ने कहा – बहुत भला चलो, इनको शीघ्र ही ल्याकर असित पर्वतपुर के बाह्य मनोहर वन विषे थापे अर अनेक विद्याधरी इनकी रक्षा को रहीं।।46।।

नीलंयशा पुर के भीतर गई माता से मिली। अन्तःपुर विषे वसुदेव की कथा करती भई। अर उसके मिलाप की है अभिलाषा जिसके नीलंयशा का पिता वन विषे वसुदेव पै आया। अर वसुदेव संपराया अर अद्भुत आभूषण पहिराये अर रथ में चढ़ाय सब विद्याधर साथ होय स्वर्गपुर समान असितपर्वतपुर वहां यदुपति को ल्याये।।48।। सो सब नगर के लोगों ने अर अन्तःपुर के लोगों ने आदर सहित कुमार देखा।।49।। अर पवित्र दिन विषे वसुदेव का अर नीलंयशा का महा मंगल से विधिपूर्वक पाणिग्रहण भया। कैसे हैं दोनों, पूर्ण है रूप जिनका अर पूर्ण है पुण्य जिनका।।50।। सो वसुदेव नीलंयशा सहित असित पर्वतपुर विषे नाना प्रकार के काम भोग सेवता भया। जैसे रति सहित काम नाना प्रकार क्रीड़ा करे संसार में ऐसी कोई स्त्री नहीं जो नीलंयशा के यश को हरे।

भावार्थ – इस समान कोई स्त्री रूपवती गुणवती सौभाग्यवती नहीं अर कोई पुरुष भूमिगोचरी विद्याधरों में ऐसा नहीं जो अपने गुणों कर वसुदेव का यश जीते। ऐसा रूपवन्त गुणवन्त सामन्त कोई पुरुष नहीं। सो सब स्त्रियों के मुख नीलंयशा का यश अर सब मनुष्यों के मुख कुमार का यश प्रवर्ता। ये दोनों परस्पर प्रेम विषै आसक्त अत्यन्त सुख रस भोगते भये। इनके समस्त सुख का वर्णन कौन कह सके।।52।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ नीलंयशालाभवर्णनो नाम द्वाविंशतितमः सर्गः समाप्तः।।22।।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

तेईसवाँ सर्ग

अथानन्तर – एक दिन वसुदेव मन्दिर में तिष्ठे थे, सो महा कोलाहल शब्द सुनकर द्वारपालनी निकट थी उसे पूछा आज नगर में क्या कोलाहल है? सब स्त्री पुरुष व्याकुल भये शब्द करे हैं। तब द्वारपालिनी कहती भई – हे देव! मैं सब वृत्तान्त जानू हूँ सो तुम सुनो, इसी विजयार्द्ध गिरि विषे एक शकटा मुख नामा नगर उसका राजा विद्याधरों का अधीश्वर नीलवान् है उसके नील नाम पुत्र अर कन्या नीलांजना नीलकुमार की बहिन सो तुम्हारा श्वसुर सिंहदंष्ट्र परिणया उस नीलांजना के नीलंयशा पुत्री भई सो तुम परणी अर सिंहदंष्ट्र अर नील के परस्पर वचन था जो तुम्हारे पुत्र होय अर मेरे पुत्री होय तो विवाह अर मेरे पुत्री होय तुम्हारे पुत्र होय तो विवाह, सो नील बड़े राजा के परणी उसके नीलकंठ पुत्र भया अर तुम्हारे श्वसुर के नीलंयशा पुत्री भई सो पुत्री का जन्म भया। तब मुनियों को पूछा जो इसका वर कौन होवेगा तब बृहस्पति नामा साधु ने कहा नवमें नारायण का पिता वासुदेव इसका पति होवेगा।

तब सिंहदंष्ट्र ने तुमको परणाई अर वह नील अपने नीलकंठ दोनों दुष्ट सभा विषे आकर तुम्हारे श्वसुर से विवाद करते भये सो तुम्हारे श्वसुर ने न्याय मार्ग कर जीते सो विद्याधर लोग शब्द करे हैं। ये वचन द्वारपालिनी के सुनकर वसुदेव हंसे अर नीलंयशा सहित तिष्ठे फिर शरदऋतु आई महा गर्ववन्त जो काम उसके वाण समान गुंजार करते भंवर तेई भये फिड़च अर वाणासन जाति के वृक्ष वही भये काम के धनुष सो काम ने धनुष चढ़ाया।।12।। उस समय विद्याधर विद्यारूप औषधियों की सिद्धि के अर्थ अपना मन निश्चल कर शीघ्र ही निकसे तब वसुदेव अर नीलंयशा ह्रीमन्त पर्वत की ओर चले। जैसे मेघ विजुली संयुक्त गगन विषे गमन करे वैसे ये दम्पती विद्याधर कर मंडित गगन विषे गमन करते भये।।14।।

दोनों ह्रीमन्त गिरि में जाय पहुंचे जहाँ मकरन्द के पान उन्मत्त कर भये मधुकर शब्द करे हैं सो मानो काम के धनुष की फिड़च का शब्द है।।15।। ये दोनों ह्रीमन्त गिरि के महा सुगन्ध सप्तवर्ण वन विषे उतरे सो वन महा मनोहर पवन कर हाले हैं वृक्ष जहां सो वन का वर्णन करते दोनों वन विषे भ्रमण करते बहुत देर तक वन की शोभा विलोक तृप्त न भये सो वन की शोभा देखते भये जहां मोर मनोहर शब्द कर रहे हैं विचित्र हैं गात जिनके।।21।। सो वन की शोभा कर हरा गया है चित्त जिनका अर नीलंयशा कौतुक भरी पति से क्षणेक विछुडी उस समय राजा नील का पुत्र नीलकंठ माया कर मोर का रूप धार आया था सो कान्ध विषे चढ़ाय पापी नीलंयशा को गगन विषे ले गया। जब प्रिया हरी गई तब वसुदेव विह्वल हो उस वन विषे भ्रमता भया वहां ग्वालों के बाडे वहां गोपों की वधू उन्होंने कुमार का आदर किया। इनके पीने योग्य पवित्र जल अर खाने योग्य पवित्र वस्तु ल्याय दई। रात्रि विषे कुमार ग्वालियों के स्थान विषे रहे प्रभात ही उठ कर दक्षिण दिशा गये।।24।।

www.vitragvani.com

वहां एक गिरतट नामा नगर जिसके ऊंचा कोट गम्भीर खाई अर पडकोटा सो देख कर यदुपति हर्षित भया अर नगर में बैठा वहां वेदपाठी विप्रों के वेदाध्ययन के शब्द कर वाचाल हो रही है सब दिशा। वहां एक मनुष्य को वसुदेव कौतुक से पूछते भये। यहां कोई विप्रों को महा दान दे है जो इतने वेदपाठी इकट्ठे हुवे हैं तब वह बोला – हे कुमार! यहां विश्वदेव नामा ब्राह्मण है। उसके सोमश्री नामा कन्या सो चन्द्रकला समान मनोहर अर वेद विद्या विषे प्रवीण।।28।। जो वेद विद्या विषे जीते सो इसका वर यह वचन निमित्तज्ञानी ने कहा सो उसने जीतने अर्थ इतने वेदपाठी इकट्ठे हुए हैं।।29।। सो वह कन्या अति नाजुक वदन है जिसका कटि महा क्षीण सो नितम्ब अर कुचों का भार नहीं सह सके है महा रूपवान् है सो न जानिये वह सुन्दरी कौन को वरै मन की हरणहारी वह सोमश्री कन्या सो उसका यश यदुपति ने कानों से सुना सो वह श्रवण मात्र ही राजहंसिनी की न्याईं इस राजहंस का चित्त हरती भई।।31।।

तब वह वसुदेव कुमार उस नगर विषे एक ब्रह्मदत्त नामा अध्यापक है, उस पै जाय कहते भये – अहो! तुम मुझे वेद पढ़ावो गोत्र शाखा सब सिखाओ तब वह अध्यापक बोला – तुम आर्षवेद भणोंगे वा अनार्ष भणोंगे यह कहा, तब यदुपति ने कहा ये दो भेद कैसे हैं? तब वह द्विज प्रसन्न होय यदुपति से यथार्थ वचन कहता भया। ब्राह्मण महा विवेकी ब्रह्मविद्या का वेत्ता जिन धर्मी है – सो कहे है – हे वसुदेव कुमार! महा विदेह क्षेत्र विषे तो सदा ही कर्मभूमि है अर धर्म की प्रवृत्ति है। अर भरत पांच अर ऐरावत पांच विषे अठारह कोटा कोटी सागर भोगभूमि है अर दो क्रोडा क्रोड़ सागर कर्मभूमि है सो भोग भूमि विषे यहां कल्पवृक्ष थे सो कर्मभूमि की आदि विलाय गये। उस समय श्रीऋषभदेव प्रजा की रक्षा करते भये प्रजा षट् कर्म विषे प्रवर्ती सो प्रभु आदि तीर्थंकर वेद के वेत्ता तीनों वर्णों की प्रतिपालना करते भये। वे प्रभु समस्त वसुधारूप वधू उसे इकछत्र भोगते भये। कैसी है वसुधा रूप वधू, हिमाचल अर विंध्याचल ये दोनों हैं कुच जिसके अर रूपों मय विजयार्द्ध पर्वत सोई है हार जिसके अर समुद्र है कांचिदाम जिसके।।36।।

कई एक दिन राज कर वे जगनाथ भरतादि पुत्रों को राज दे चार हजार राजाओं सहित दिगंबरी दीक्षा धारते भये। सो भगवान महावीर स्वयंभू हजार वर्ष पर्य्यन्त महादुर्द्धर तप किया बाईस परिषह जीते।।38।। फिर केवलज्ञान पाया, केवलज्ञान रूप नेत्रों कर सब पदार्थ निरखे, धर्मरूप तीर्थंकर आर्य्य क्षेत्रविषे जीवों को विवेकरूप कीये, अनेक जीव दुष्टता से रहित भये।।39।। उस भगवान ने यती श्रावक के दो धर्म स्वर्ग मोक्ष सुख के अर्थ भाषे। केवली प्रणीत वेद उसके बारह अंग उन विषे यति का धर्म मुख्य अर यती धर्म के अनन्तर गृहस्थों का आचार दिखाया।

भावार्थ – हिंसादि पापों का यती के सर्वथा त्याग सो महाव्रत कहिये अर गृहस्थ के एकदेश त्याग सो अणुव्रत कहिये।।41।। सो गृहस्थ के पांच अणुव्रत यह तो महाव्रत में गर्भित हैं। हिंसा, मृषा,

अदत्तादान, अब्रह्म, परिग्रह इनका सर्वथा त्याग सो महाव्रत अर एकदेश त्याग सो अणुव्रत।।41।। अर तीन गुणव्रत, चार शिक्षाव्रत इत्यादि श्रावक के अनेक नेम हैं सो ऋषभ प्रभु ने सातवें उपासकाध्ययन अंग विषे दिखाये, जिसमें यती का श्रावक का धर्म सो आर्ष वेद कहिये आर्ष कहिये केवली उनका प्ररूपा।।43।। सो केवली प्रणीत वेद को पढ़ कर वेद की आज्ञा प्रमाण धर्म के धारक भरत चक्रवर्ती ने विप्र थापे।।43।।

यह तो आर्ष वेद का स्वरूप वसुदेव से ब्रह्मदत्त नामा अध्यापक ने कहा। फिर वह कहे है – वसुदेव! अनार्ष वेद की उत्पत्ति सुनो – अनार्ष कहिये मनुष्यों का प्ररूपा सो इस युग के विप्रों का तात्पर्य अनार्ष वेद ही विषे है।।44।। सो उसकी उत्पत्ति सुनो। एक धारण युगल नामा नगर। उस विषे राजा अयोधन रण भूमि विषे जिससे कोई युद्ध न कर सके इससे अयोधन कहाया सो राजा सूर्य्यवंशी उसके दिति नामा राणी सोमवंश में उपजी। राजा तृणबिन्दु की छोटी बहन उसके सुलसा नामा पुत्री महारूपवती स्त्रियों गुण रूप आभूषण की मंजूषा होती भई सो यौवन अवस्था विषे इसका पिता इसका स्वयम्बर रचता भया। राजा सगर आदि बड़े बड़े राजा पृथिवी विषे प्रसिद्ध है कीर्ति जिनकी सो स्वयम्बर के अर्थ बुलाये।।48।।

सब में राजा सगर नामी है सो उसकी मन्दोदरी नामा द्वारपालिनी सुलसा की माता के निकट राजलोक में गई सो एकांत विषे सुलसा की माता दिति सुलसा से कहती भई।।49।। हे सुलसे! जो माता की भक्त है मेरे स्तन का तैंने दूध पिया है सो मेरी बात मान – मेरा बड़ा भाई तृणबिन्दु उसके राणी सर्वयशा उसका पुत्र मधुपिंगल सो अपनी शोभा कर सब राजपुत्रों की शोभा को जीते है। मैं मन कर तुझे उसको दिया है सो तू स्वयंबर विषे मेरे मनोरथ पूर मधुपिंगल के गले विषे माला डार। यह वचन माता पुत्री से कह नेत्र अश्रुपात संयुक्त किये।

तब सुलसा कहती भई – हे माता! तू रुदन मत कर। मैं सब राजाओं के निकट तेरी आज्ञा प्रमाण करूंगी।।53।। माता अर पुत्री दोनों के परस्पर यह बात भई। सब वार्ता सगर की द्वारपालिनी मन्दोदरी सगर से कहती भई। सगर का चित्त सुलसा के अंगीकार विषे अनुरागी है।।55।। तब सगर का पुरोहित विश्वभूति सामुद्रिक शास्त्र का पाठी नर के लक्षणों का बतानेवाला एकान्त विषे नया शास्त्र रचता भया अर स्वयम्बर के अर्थ जो स्थान रचा था वहां धरती खोद लोह की मंजूषा में मेल गाड़ दिया। फिर किसी के हाथ कढाय राजाओं को दिखाया पुस्तक धूम से धूसरी जीर्ण समान कर दिया। स्वयम्बर अर्थी राजाओं के आगे सगर का विश्वभूति मंत्री बांचता भया। कैसे हैं राजा, पुरुषों के लक्षण सुनने का है अभिलाष जिनके।।57।।

अथानन्तर – स्त्री पुरुषों के शुभ अशुभ लक्षण कहे हैं। जिस पुरुष के ऐसे चरण होवें सो राजा

होवे। जिसके चरणों में मत्स्य शंख अर अंकुश का चिह्न होवे अर कमल के गर्भ समान आरक्त पगथली होवे अर जिसके दोनों पसवाडे शोभायमान होवें अर सुन्दर होय सघन होय अंगुलियों की गांठ जिनके अर सचिक्कण होय अर आरक्त होय नख जिनके अर गूढ़ होय पगों के टकूणे जिनके अर नस नजर आवें अर चरणों में किंचित् उष्णता होय अर कर्म समान उन्नत होवे प्रस्वेद रहित होवे ऐसे चरण पृथिवीपति के होवें।।58।। अर ऐसे चरण पापी जीवों के होवें सो सुनो सूर्पाकार कहिये वर्तुलाकार होवे अर नसाजाल प्रगट नजर आवे अर बक्र होय अर रूक्ष होय नख जिनके अर शुष्क होय लहलहाट करते नहीं अर अमीलित हैं सुन्दर हैं अंगली जिनकी।।60।। अर ऐसे पांव पातकीयों के होवें अर हिंसक जीव के पांव जली माटी समान पीतवर्ण जानो अर जिनमें उष्माघनी अर छिद्रसहित कसैले रंग जे पांव ते वंश के छेद करणहारे जानो।।61।।

अर जिसकी जंघा अर गोडे नितम्ब वर्तुलाकार अर जिनके रोम अति अल्प अर अति सूक्ष्म यह लक्षण महाशुभ। अर सूकी जंघा अर सूके गोडे अर सूके नितम्ब वे अति अशुभ लक्षण फिर राजाओं के हृदय विषे एक रोम अर बुद्धिमानों के दो दो रोम अर जड़ बुद्धि अर दरिद्री उनके तीन आदि चार चार आदि हृदय विषे रोम जानो। यह उरस्थल रोमों का फल कहा।।63।। अर बालक का लिंग अल्प होय अर दाहिनी ओर बांका होय अर गांठ जिसकी स्थूल होय सो शुभ लक्षण है। अर इससे विपरीत हो तो विपरीत फल जानो अर वृष्ण कहिये पोता अल्प होय सो बालक न जीवे, अर जिनके वृषण विषम होवे वे स्त्री विषे चल चित्त होवें अर जिनके समान वृषण वे मृक होवें अर जिनके लम्बे वृषण होवें वे दीर्घायु होवें।।65।। अर जिनका मूत्र शब्द सहित होवे वे सुखी जानों। अर जिनका मूत्र शब्द रहित वे दुःख भोगें। अर जिस स्त्री के दो आदि मूत्र की धारा प्रदक्षिणावर्त होवे सो स्त्री प्रशंसा योग्य सौभाग्यवती है अर नहीं।।66।।

अर जिसके टकूणे स्थूल सो पुरुष दरिद्री जानो, अर जिसके टूकणे मांस सहित पुष्ट सो पुरुष सुखी अर मींढक समान जिसके टकूणे सो व्याघ्र से मृत्यु लहै।।67।। अर नाहर की सी जिसकी कटि होय सो राजा होवे। अर बंदरों के ओष्ठ समान है कटि जिसकी सो धनवन्त होवे। अर जिसका समान उदर होवे सो सुखी होवे। अर घट समान पिठर कहिये हांडी समान जिसका उदर होवे सो दुःखी होवे।।68।। अर जिसकी पांसली अति नीची अर वक्र सो पूर्ण धनवन्त होवे अर जिसकी कुक्ष नीची न होवे सो भोग रहित होवे अर जिसकी सम कुक्ष होवे वे भोगी होवें।।69।। अर जिनकी उन्नत कुक्ष होवे सो राजा होवें अर जिनकी विषम कुक्ष होवे सो कुधन होवें। अर जिसका उदर सर्प समान होवें वे दरिद्री होवे अर बहुत आहारी होवें।।70।।

अर जिसकी नाभि विस्तीर्ण होवे वे दरिद्री होवें अर बहुत ऊड़े होवें गम्भीर होवें वर्तुलाकार होवें

वे सुखी होवें। अर जिनकी नाभि नीची होवे अल्प होवे अदृश्य होवे वे क्लेश के भाजन पुरुष कहे।।71।। अर जिनके मध्य की त्रिवली विषम होवे उनके वायुशूल की बाधा होवे अर दरिद्री होवें फिर वह त्रिवली वांई अथवा दाहिनी आवतक कर युक्त होवे तो वह पुरुष धनवान् होवे अर बुद्धिवान् होवे।।72।। अर जिनकी त्रिवली कमल की कर्णिका समान दीर्घ होय तो वह पुरुष राजा होवे अर जिसकी त्रिवली अधोभाग विषे दीर्घ होवे तो उस पुरुष के निकट धन होवे पंडित होवे ग्रामपति होवे, अर जिसके धन पद होवे दीर्घायु होवे।।73।। अर शास्त्र के अर्थ का वेत्ता होवें अर स्त्रियों का सदा प्रिय होवें अर रूपवान् होवें उसके बहुत पुत्र होवें। एक दो तीन चार इन त्रिवलियों कर युक्त होवे सो पुरुष राजा होवे बलवान् होवे।।74।।

अर जिनके त्रिवली सरल होवें वे पुरुष परदारा के त्यागी स्वदारा संतुष्ट होवें अर जिनके विषम त्रिवली होवें वे महा व्यभिचारी अर अन्याय मार्ग के प्रवर्तनहार होवें।।75।। अर जिनकी पांशु मोटी अर मृदु होय अर दक्षिणावर्त रोम होय सो राजा होय अर जिनकी पांशु मोटी न होय मृदु न होय अर दक्षिणावर्त रोम न होय पराये किंकर होवें अर जिनके बाहु दीर्घ न होवें अर पुष्ट न होवें वे पुरुष सौभाग्यहीन होवें अर जिनके दीर्घ कुच होवें अर विषम होवें सो मनुष्य निर्धन होवें।।77।। अर जिनका हृदय पुष्ट होवे विस्तीर्ण होवे ऊंचा होवे निष्कंप होवे सो राजा होवे। ये लक्षण राजाओं के हैं अर जो यति विपरीत हृदय होवें सो हीन पुण्य के लक्षण जानों। अर खर समान कठोर रोमों कर मण्डित सो हीन पुण्यी जानो।।78।।

अर जिनका वक्षस्थल सम होवे वे धनवान् होवें।! अर जिनका वक्षस्थल पुष्ट होवे वे पुरुष शूरवीर होवें अर जिनका वक्षस्थल विषम होवे वे निर्धन होवें अर शस्त्र कर उनकी मृत्यु होवे।।79।। अर उष्टजर्वुणा कर मनोग्य होवें अर उन्नत कर भोगवान् होवे अर नीचाकर दरिद्री होवें अर हाडन कर मण्डित तथा विषम ऐसे जर्वुण कर विषम पुरुष होवे।।80।। अर जिसकी पसेव रहित कांख होवे अर पुष्ट होवें उन्नत होवे सुगंध होवे सो धनवान् होवें अर जिसकी कांख सम रोमोंकर युक्त होवे सो धनवान् होवें। अर जिसकी ग्रीवा चिपटी होवें पर शुष्क होवें अर नसान कर वेष्टित होवे सो दरिद्री होंवे। अर जिसकी शंख समान ग्रीवा होवें सो राजा होवें अर जिस मनुष्य की मही समान ग्रीवा होवें सो शूरवीर होवें फिर जिसकी पीठ रोम रहित सम भग्न होवे सो शुभ लक्षण जानो। अर जिसकी पीठ रोमों के संचय को धरे अर अति भग्न होवें सो शुभ लक्षण न जानो।।83।।

अर जिसके कंधे अल्प होवें अर पुष्ट न होवें अर भग्न रोमकर युक्त सो निर्धन पुरुष जानों अर धनवन्त मनुष्यों के सुन्दर पुष्ट रोम रहित वे शूरवीर होवें।।84।। अर जिनके कर पुष्ट होवें दोनों समान होवें हाथी की सूंड समान लंबायमान होवें वे लक्षण राजाओं के जानो अर निर्धन मनुष्यों के कर छोटे

होवें अर रोम संयुक्त होवें।।85।। फिर जो दीर्घायु पुरुष हैं उनकी कर शाखाओं विषे रेखा दीर्घ होवें अर कोमल होवें अर जो भाग्यवान् होवें उनके रेखा अवक्र होवे अर जो बुद्धिमान होय उनके कर रेखा सूक्ष्म होवें।।86।। अर जो निर्धन हैं उनके कर स्थूल होवें अर जो पराये किंकर हैं उनके कर चिपटे होवें अर जो धनवान हैं, उनके कर मर्कट समान होवें। अर जो महा क्रूर निर्दय हैं, उनके कर व्याघ्र समान होवें।।87।।

अर जिनके सन्धि मणिबंधन निगूढ होवें अर संधि सुश्लिष्ट होवें ये लक्षण राजाओं के जानो अर जिनके संधि मणिबंधन शब्द सहित होवें अर शिथिल होवें वे पुरुष दरिद्री होवें अर जिनकी हथेली नीची होवें वे पुरुष नपुंसक होवें अर पिता के धन से रहित अर जिनकी हथेली गोल होवें अर किंचित् नीची होवें वे धनवान होय अर जिनकी हथेली उच्च होवें वे दातार होवें।।89।। अर जिनकी हथेली आरक्त होवें वे धनाढ्य होवें, अर जिनकी हथेली विषम होवें वे कठोर चित्त होवें अर जिनकी हथेली पीत होवें वे अगम्य ज्ञानी अर जिनकी हथेली रूक्ष होवें वे कुरूप होवें।।90।। अर जिनके नख तुस की छवि धरे वे नपुंसक होवें अर जिनके नख फाटे होवें वे निर्धन होवें। अर जिनके नख अत्यंत अरुण होवें वे सेन्या के नाथ होवें। अर जिनके कुत्सित नख होवें वे पराधीन होवें।।91।। अर अंगुष्ट कर उपजा जो यव का आकार उस कर धनाढ्य होवें।

अर अंगुष्ठ के मूल विषे उपजा जो यव उसकर पुत्रवान् होवें। अर नीची अति स्निग्ध जो रेखा उन कर धनवान होवें। अर इससे अन्यथा होवें धन का नाशक होवें।।92।। अर जिसकी अंगुली सघन होवें सो धनवान होवें। अर जिसके अंगुली सघन न होवें वे निर्धन होवें। अर जिसके मणिबंधन से नीचे तीन रेखा कर की होय सो राजा होवें।।93।। अर जिसके रेखा का लक्षण अखण्ड होवें सो दीर्घायु होवें। अर जिसके न होवें सो अल्पायु जानो।।94।। अर जिसके कर में खडगरेखा तथा शक्ति की तथा गदा की बरछी की चक्र की तोमर की होवें सो सेना का नाथ होवे।।95।। अर जिनकी ठोडी कृश होवें अर दीर्घ होवें वे निर्धन होवें। अर जिनकी ठोडी मांसल कहिये पुष्ट होय वे महा धनवान होवें अर जिनकी ऊंट की सी ठोड़ी होवें वे प्रसिद्ध पुरुष न होवें अर जिनकी ठोड़ी किंदूरी फल के समान वे राजा जानो।।96।। अर जिनकी दाढ तीक्ष्ण होवें समान होवे स्निग्ध अर दांत निर्मल होवें सघन होवें अर जिव्हा आरक्त होवें दीर्घ होवे मनोहर होवें वे महाभाग्यवन्त भोगी पुरुष जानो।।97।।

अर जिनका मुख वर्तुलाकार होवें सौम्य होवे सम होवें वक्र न होवें वे लक्षण राजाओं के जानो। अर जो भाग्यहीन हैं उनका मुख भारी होवें अर जो मूर्ख हैं उनका मुख कुलाडी समान होवें।।98।। जे स्त्री बांझ हो उनका मुख नीचा होवें अर वक्र होवें जे कृपण मनुष्य हैं उनका मुख ह्रस्व होवें अर जो द्रव्य रहित हैं उनका मुख अति दीर्घ होवें यह निश्चय जानो।।99।। जिनके कीला सारखे कर्ण हैं वे

महीपाल जानो अर जिनके कानों के केश होवें वे दीर्घायु होवें अर जिनकी नासिका सरल अर सम्पुट होवें अर छिद्र स्वल्प होवें सो भी दीर्घायु होवें।।100।। अर जो धनवान हैं उनके छींक एक बार होवें अर जो शास्त्र के पाठी हैं उनके दो तीन वार छीक होवें अर संहित कहिये लगती अर प्रमुक्त कहिये आन्तरे आन्तरे छींक होवें सो ये दीर्घायु के धारिकों के लक्षण जानो।।1।। अर जिनके नेत्रों के कोए कमल पत्र समान आरक्त होवें वे धन भोक्ता अर यशवन्त जानो अर जिनके गजराज समान नेत्र अर वृषभ समान नेत्र वे पृथ्वीपति जानो।।2।।

शास्त्र के अनुसार संक्षेप मात्र लक्षण कहे। वहां लक्षण शास्त्र विषे मांजुरी लोचन का अति दोष गाया जो मार्ज्जार नेत्र हैं वे अमंगलीक हैं, पापी हैं मंजार समान हैं उनको न देखिये न संभाषण करिये।।3।। वे मन वचन काय के पापों कर पूर्ण हैं, दुर्ज्जन हैं, दुर्भग हैं, क्रूर हैं, कपटी हैं, अपराधी हैं, पुरुष के समस्त लक्षण के गुण चिन्तन विषे आंख का लक्षण मुख्य है जो अर शुभ लक्षण होवें अर नेत्र पिंगल होवें तो अपलक्षण जानिये। अर जिनके नेत्र कमल के पत्र समान होवें नेत्रों की अणी अरुण होवें वे महाधन के भोक्ता होवें अर गजेन्द्र सारिखे नेत्र तथा वृषभ सारिखे नेत्र वे पृथ्वीपति होवें। इस भांति पुस्तक विषे विश्वभूति ने बाचा सो मधुपिंगल सुनकर पिंगल नेत्र के दोष की आशंका कर स्वयंवर मंडप से निकल गया। सुलसा की आशा तज नवयौवन विषे मुनिव्रत धार देशान्तर विहार करता भया।।8।।

अर सुलसा कमल समान नेत्र जिसके सो स्वयंवर विषे सगर के कंठ में वरमाला डाली। सगर सुलसा सहित सुख भोगता भया अर मधुपिंगल मुनिवेश धरे एक नगर विषे मध्याह्न समय अनेक उपवासों का धारक पारणा के अर्थ गया था सो एक सामुद्रिक शास्त्र का पाठी मधुपिंगल यती को पांवों से लेय मस्तक पर्य्यन्त देख शिर धुनता भया। अर आश्चर्य को प्राप्त भया ये वचन कहता भया।।12।। इसके देह विषे सामुद्रिक शास्त्र की दृष्टि कर तिलमात्र भी दोष नहीं सो यह यती इन लक्षणों के समूह का धारक क्या राज्य सम्पदा न पावे अर इसके पिंगल नेत्र ही माधुर्य्यता को धरे राज्य सौभाग्य के कारण ऐसे लक्षणों कर युक्त यह नव यौवन विषे भिक्षा के अर्थ भ्रमे है सो धिक्कार सामुद्रिक शास्त्र को जो पूर्वोपार्जित कर्म ने इसे दुःख ही के अर्थ उपजाया तो ऐसे शुभ लक्षण इसके अंग विषे क्यों धरे।।16।। अथवा ऐसे भी होय है जे सुखाभिलाषी संसार के दुःख से भयभीत हैं उदय आई लक्ष्मी को भी विष की वेल समान जान नहीं अंगीकार करे हैं। विष की वेल फली है तो भी खोटा है विपाक जिसका तैसे यह राजलक्ष्मी अनेक फलरूप फली है तथापि दुःख रूप है उदय जिसका।

भावार्थ – यह राजलक्ष्मी है सो नरक निगोद का कारण है ऐसे शुभ लक्षणों कर पूर्ण शुद्ध वंश का उपजा मोक्ष का अभिलाषी उसके जिनदीक्षा होकर आनन्द उपजे।।18।। ये सामुद्रिक के पाठी के

www.vitragvani.com

वचन सुन एक मनुष्य इस बात का मरमी था सो बोला, हे सामुद्रिक के पाठी! इसकी वार्ता तो पृथ्वी विषे प्रसिद्ध है तैं क्या न सुनी।।19।। सुलसा के स्वयम्बर मंडप विषे अनेक दुष्ट राजा मिले सो इसमें आंखों के लक्षण की हीनता का दोष ठहराया। पिंगलनेत्र का अति औगुण वर्णा जैसे मांस का आहारी निंद्य अर पर निन्दा का करणहारा अर अपनी प्रशंसा का करणहारा निंद्य तैसे ही पिंगल नेत्र का धारक निंद्य।।21।। सो यह मधुपिंगल तो भोला आप सामुद्रिक में समझे नहीं, अन्य कहे सो प्रमाण सो इसने पराये वचन सुन आपको लक्षणहीन जाना पिंगल नेत्र का आप में दोष जान निराश हो तप धारता भया।।22।।

जे आप प्रमाद आलस्य अर गर्व के योग से आगम के ज्ञाता नहीं वे पराये बहकाये बहके हैं।।23।। यह तो व्रत धारी भया अर कन्या ने स्वयम्बर विषे राजा सगर को वरा सो उस विषे भोगासक्त क्षत्रियों के समूह कर मंडित तिष्ठे। यह वार्ता सुनकर मधुपिंगल क्रोध संयुक्त हो मूवा सो व्यन्तर देवों में महाकाल नामा महा नीच देव भया।।25।। अहो कषाय रूप विष का पान अति विषम है सम्यक्त्वरूप अमृत के पान को अति दुःखित करे है।।26।। सो मधुपिंगल महाकाल नामा असुर होय कर अवधी विचार उस कर जानी जे सगर ने छलकर सुलसा परणी सो क्रोध रूप अग्नि कर महाकाल हृदय विषे अत्यन्त जले।।27।। स्त्री का जो वैर सोई भया विष उस कर दग्ध है हृदय जिसका सो क्षमा रूप जल बिना क्रोधरूप दाह के बुझाने अर्थ समर्थ नहीं भया।।28।।

महा क्रोध कर ऐसी विचारता भया जो ऐसा उपाय करूं मेरा बैरी सगर दीर्घ संसार विषे दुःख की परंपरा भोगे। इस भव में मारा जाय अर नरक निगोद के अनन्त दुःख भोगे। यह कथा अध्यापक वसुदेव से कहे है। जो मूर्ख पर जीव के अकल्याण के अर्थ उपाय कर पाप का उपार्जन करे सो आप महा दुःख भोगे है कुगति का अधिकारी होवे है।।30।। सो पापी महाकाल नामा असुर क्रोध कर प्रज्वलित इस भरत क्षेत्र विषे आय नारद कर वाद विषे हारा जो पर्वत श्रम रूप भ्रमण करता हुआ उसे देखा सो शांडिल्य नामा तापस का रूप धर पर्वत को विश्वास उपजाय कहता भया – हे पर्वत! तू खेद मत कर, मैं तुझे सर्वथा जिताऊंगा तू मेरी वार्ता सुन।

एक ध्रौव्य नामा मुनि उसके पांच शिष्य उनमें पहिला शिष्य मैं शाण्डिल्य अर दूजा तेरा पिता क्षीरकदम्ब तीजा वैन्य चौथा उदंज पांचमा प्रर्त सो तू जैसा क्षीरकदम्ब का पुत्र तैसा मेरा पुत्र सो तेरा जिसने अपमान किया है उसके उड़ाने के अर्थ मैं उद्यमी भया हूं।।35।। तू मेरा सहाय पाकर क्षेत्र को वशी कर पवन समान मित्र जिसके ऐसी प्रज्वलित अग्नि उसे वन का दहन कठिन क्या।।36।। इस भांति पर्वत को कह कर वह दुष्ट उसे अग्रेश्वर कर भरतक्षेत्र के आर्य्य खण्ड विषे सब राजा अर प्रजा को सैकड़ों व्याधियों कर व्याकुल करता भया।।37।।

तब पर्वत व्याधि के मेटने अर्थ शान्ति कर्म करता भया। इसके विश्वास कर बहुत लोग इसके

www.vitragvani.com

शरणागत भये। राजा सगर महा मूर्ख अनेक क्षत्रियों सहित आदर से पर्वत का आश्रयकर मंत्र विधान वाला होम कराय नीरोग भया।।38।। वह दुराचारी असुर हिंसा की प्ररूपणा कर भगवत् प्रणीत आर्ष वेद से विमुख अपने किये महाक्रूर अनार्षवेद दुष्ट विप्रों को पढा अपने वश करता भया। अनेक पापी जीव पर्वत के मार्ग में प्रवर्ते। प्रथम अजा पुत्र होम किये सो अजमेध यज्ञ कहाया। फिर अश्व होमा सो अश्वमेध यज्ञ कहाया। फिर गोमेध यज्ञ किया गौ का होम किया। इस भांति अनेक यज्ञ किये अर सब लोकों में साक्षात् यज्ञ का फल दिखाया। पर्वत ने जो पशु होमे वे असुर ने माया कर ऐसे दिखाये। जो वे पशु विमान बैठ कर स्वर्ग चले जाय हैं ऐसा भ्रम दिखाया। जो यज्ञ विषे मरण का साक्षात् फल स्वर्ग है अनेक यज्ञ कर पर्वत ने एक राजसी यज्ञ प्रारंभ किया जहां अनेक राजा इकट्ठे होवे सो राजसी यज्ञ कहिये। राजा सगर का बेरी महा कालासुर उसने अनेक प्रपंच दिखाये।।41।।

तब नारद सहित दिवाकर देव विद्याधर आया। सो असुर की माया आगे विद्याधर का बल न लगा। अणिमादिक गुणों कर प्रबल पापी देव जहां विक्रिया करे वहां विद्याधर पूर्ण भी मनुष्य क्या करे।।43।। कालासुर ने अनेक जीवों का घात करा। अपने बैरी अनेक राजा उनको होम किये उन्होंने जाना हमको होमे तो स्वर्ग पावैं सो अपनी इच्छा से अनेक भस्म भये। फिर निर्दय कालासुर ने सगर अर सुलसा का पर्वत के हाथ से होम कराया सो कुगति गये। ये हिंसा रूप अनार्ष वेद कोप कर महाकालासुर ने किये अर सर्व पृथ्वी विषे पर्वतादिक ने विस्तारे। सगर अर सुलसा का होम किये पीछे कालासुर तो अपने स्थानक गया।।46।। अर नारद ब्राह्मण के पुत्र को विद्याधर अपनी पुत्री परम कल्याणी नामा महाविद्या कर संयुक्त परणावते भये, नारद का पुत्र सम्यग्दृष्टि है।।47।।

यह सब कथा अध्यापक यदुपति से कह कर फिर कहता भया – हे कुमार! एक दिन विश्वदेव नामा ब्राह्मण उसके क्षत्रिय नामा स्त्री उसके सोमश्री नामा पुत्री सो अवधिज्ञानी ब्रह्मदत्त मुनि ने कही थी जो वेद विषे इसे जीते सो इसका वर हो।।49।। यह वार्ता सुनकर यदुपति ने सर्व वेद पढ़कर सोमश्री को जीती अर परणी।।50।। सोमश्री का तो वसुदेव से स्नेह बढ़ा हुआ अर वसुदेव का उससे स्नेह बढ़ा। दोनों का परस्पर अति स्नेह वहां सुख का वर्णन क्या करिये।।51।। एकान्त में दम्पति महा अनुराग रूप रमते भये। वह वसुदेव कुमार अनेक विद्याधरों का अधिपति महा स्वरूप गुण सम्पदा कर पूर्ण रति क्रीड़ा विषे निपुण गिरतट नामा नगर विषे सोमश्री नामा द्विजपुत्री उस सहित देवों कैसी क्रीड़ा करता भया। वसुदेव कुमार की संगति कर सोमश्री जिनराज की महा भक्त भई। वसुदेव बड़े सुबुद्धि हैं अर सोमश्री स्त्रियों में शिरोभाग है। महा मनोहर अद्भुत सुख दोनों भोगते भये।।53।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ सोमश्रीलाभवर्णनो नाम त्रयोविंशतितमः सर्गः।।23।।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

चौबीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – वसुदेव एक इन्द्र शर्म्मा नामा पुरुष उसके उपदेश से उद्यान विषे विद्या साधता था सो रात्रि विषे धूर्तों ने देखा सो पालकी में बैठाय कर पिछली रात्रि दूर जाय डारा। वहां से गमन कर तिलक वस्तुक नामा नगर गये।।2।। वहां बाह्य उद्यान विषे भगवान का चैत्यालय उसके समीप शयन करते थे सो कोई मनुष्य राक्षसी विद्या का साधक नरमांस का भक्षणहारा आय कर यदुपति से कहता भया – हो मनुष्य! तू कौन है? क्या शोच करता है! उठ जाग, मैं भूखा नाहर हूं सो मेरे मुख में तू आप ही आया है।।4।। तब वसुदेव जागा महा शूरवीर कुमार सो उस दुष्ट को भुजा प्रहार कर कूटा। दोनों ही महा उद्धत सो मुष्टियों के दृढ़पात कर दोनों में महा भयंकर युद्ध भया जिसे देख कायरजन कंपे। बहुत देर में यादव वली ने दुष्ट दानव को पछाड़ कर पांवों तले दिया जब उसने जीवनदान मांगा जो आप महा वली हो, दयालु हो मुझे मत मारो। तब जीवता छोड़ा ऐसा किया जो फिर इस नगर में न आवे।।7।।

वह तो क्रूर देशान्तर गया। प्रभात भई लोगों ने जानी वह दुराचारी इन्होंने मारा। तब कुमार को रथ चढ़ाय नगर में लाय लोगों ने स्तुति करी इनका पुरुषार्थ पृथिवी विषे प्रसिद्ध भया। वहां पांच सौ कन्या रूपवती, लावण्यवती, कुलवन्ती, शीलवन्ती परणी अर वहां ही तिष्ठे। लोगों से पूछा – यह नर मांस का आहारी दुष्ट मानस कैसे भया। तब वृद्ध लोगों ने कहा – कलिंग देश विषे कांचनपुर नगर वहां राजा जितशत्रु जिसके देश विषे अखण्ड आज्ञा अर प्रजा का पालक जिसके राज्य में जीव मात्र की हिंसा न होवे। सर्वत्र देश विषे अभयदान की दुहाई फिरे किसी जीव को भय नहीं।।12।। उसके पुत्र सौदास सो महा पापी मांस का भक्षी उसे पिता ने बहुत निन्दा सो सब से गोप्य मांस भक्षण करे। पिता की आज्ञा खंडे अर निरन्तर मयूर का मांस रसोईदार हाथ रंधावे अर कोई न जाने इस रीति भखे महल में ऐसे विपरीत कार्य्य करे।।14।।

एक दिन इसके भक्षण का मांस मांजार ले गया तब रसोईदार ग्राम से बाहर जाय मरे बालक को एकान्त विषे ल्यायकर उसका मांस सौदास को जिमाया। तब सौदास प्रसन्न होय आदर से रसोईदार को पूछता भया – हे भाई! सत्य कहो, यह मांस किसका है? मैं अनेक जीवों के मांस खाये परंतु इसके सौवें भाग भी स्वाद नहीं।।17।। मेरे से तुझे भय नहीं यथार्थ कहो तब उसने कहा यह बालक का मांस है। तब बोला ऐसा ही नित्य लाया करो तब रसोईदार ने कहा तुम्हारे पिता के राज्य में यह कार्य न होवें। तुम अर हम सब मारे जावेंगे। इस नगर में मांस का नाम नहीं सुनिये है। इस भांति दबाया

तो भी पापी मृतक बालक का मांस मंगाय खाया करे कई एक दिन में पिता तो परलोक को गया अर सौदास पिता के पाट बैठा सो रसोईदार रसोई में लाडू बांटे। लडुओं के अर्थ बालक आवे सो रसोईदार किसी बालक को मार डाले अर सौदास खावे। अब निरन्तर नगर में बालकों की हानि होने लगी तब लोगों ने जाना यह सौदास बालकों का नाश करे है। तब लोगों ने मिल के इसको देश से काढ दिया।।21।। सो दिन में तो वन में रहे है अर रात्रि विषे छिद्र पाय व्याघ्र की न्याई आवे है सो किसी मनुष्य को खाय जाय है। वह पापी लोगों का नाशक असाध्य है किसी से जीता न जाय सो आप महाशक्तिवान् आज उसे मारा।।23।।

इस भांति वृद्ध वय वाले सौदास की कुचेष्टा कहकर वसुदेव को वस्त्र आभूषण मालादि कर पूजते भये।।24।। फिर अचल ग्राम विषे एक समुद्र का बड़ा व्यापारी उसकी वसुदेव ने पुत्री परणी। उसका नाम वनमाला उस सहित वे देशापुर नगर वहां का राजा कपिलश्रुत उसे युद्ध विषे जीत कर उसकी पुत्री परणी।।26।। उसके कपिल नामा प्रसिद्ध पुत्र भया, वहां वसुदेव विराजे सो कपिला का भाई अंशुमत उससे वसुदेव की अति प्रीत बढ़ी।।27।। सो एक दिन कुमार वन विषे हाथी पकड़ने गये थे सो नीलकण्ठ नामा विद्याधर इनका शत्रु गंध हस्ती का रूप ले उड़ा। तब कुमार महा योद्धा नीलकण्ठ जो मायामय गज था उसे मुष्टि मारी तब उसने आकाश से डारे सो वसुदेव उद्यानविषे एक सरोवर था उसमें आय पड़े। नहीं है व्याकुलता जिनके फिर सरोवर से निकस एक गुहानामा पुरी वहां गये।।29।। वहां एक पद्मावती नामा राजकन्या उसे धनुषविद्या के प्रभाव से परणा उसके प्रतिज्ञा थी जो धनुर्वेद विषे जीते उसे मैं परणूं फिर जयपुर के राजा को जीत कर उसकी पुत्री परणी।।30।। फिर कपिला का भाई आपका साला अश्रुमत् उस सहित भद्रलपुर नामा नगर गये। वहां राजा पांडू उसकी पुत्री चारुहासिनी सो दिव्य औषध के प्रभाव कर पुरुष का वेश धरे रहे सो वसुदेव ने इसका वृत्तान्त जान परणी।।32।।

उसके सपौद्र नामा पुत्र भया। एक रात्रि विषे चारुहासिनी सहित आप पोढ़े थे सो रात्रि विषे हंस का रूप धर अंगारक विद्याधर ले उड़ा तब उससे युद्ध किया तब उसने आकाश से डारे सो नमोकार मंत्र का स्मरण करते गंगा विषे पड़े सो प्रात ही गंगा से निकस इलावर्द्धन नामा नगर गये। वहां एक महाजन की हाट बैठे सो महाजन ने भला आसन विछा दिया। आप क्षण मात्र बैठे सो सेठ की दुकान धन से भर गई। तब सेठ ने जाना यह पुण्याधिकारी पुरुष है। सो घर ले जाय कर अपनी रत्नावती पुत्री परणावता भया। कुमार उस सहित दिव्य भोग भोगता तिष्ठे।

एक दिन महापुर नामा नगर वहां इन्द्रध्वज पूजा देखने को गया सो नगर के बाहर अनेक महल

देखे, सो किसी से पूछी इतने मन्दिर किस वास्ते बनाये तब उसने कहा राजा सोमदत्त ने कन्या के स्वयम्बर विषे अनेक राजाओं के रहने के लिये बनाये सो कन्या तो एक कारण पाय आर्य्या भई सब राजा उठ गये यह वार्ता सुन वसुदेव कन्या के वैराग्य की प्रशंसा करते भये अर कहते भये – धन्य हैं वह स्त्री पुरुष जे बाल ब्रह्मचर्य्य धारे हैं अर धन्य है यह जिनशासन जिसकर अनन्त जीव तरे अर अनन्त तिरेंगे। इस भांति वीतराग के मार्ग की प्रशंसा करते इन्द्रध्वज पूजा देखते तिष्ठे थे। जिस समय राजा की राणी इन्द्रध्वज की पूजा देखने आई सो तत्काल दर्शन कर घर गई। उसी समय माता हाथी बंधन का थम्भ उखाड़ साक्षात् मृत्यु का स्वरूप मनुष्यों को मारता आया।।42।। सो अनेक लोग मारे। उसका महा कोलाहल शब्द भया जो दश दिशा शब्दरूप होय गई।।43।।

वह माता हाथी शीघ्र आया सो स्त्रियों के समूह भागे एक कन्या भय कर पृथ्वी पर गिर पड़ी।।44।। अर वसुदेव कुमार गज के सन्मुख जाय गज से युद्ध कर उसे निर्मद किया अर सब लोगों की रक्षा करी, यदुपति ने गजपति से क्रीडा करी सो सब लोगों ने देखी। हाथी को अति खेदखिन्न निर्बल कर छोडा अर आप वह कन्या मूर्छित पड़ी थी उसे धैर्य्य बंधाय उठाई सो वह इस सुन्दर पुरुष को देखती भई। ऐसा रूपवान् इस पृथ्वी में नहीं तब वह लंबे लंबे श्वास खींचती अश्रुपात कर व्याकुल हैं लोचन जिसके सो लज्जाकर नम्रीभूत भई कुमार का कर ग्रहण करती भई। कैसा है इनका कर, सुखदायक है स्पर्श जिसका।।47।।

कुमार तो अपने स्थानक गये अर कन्या को धाय अर सहेली अन्तःपुर में ले गई।।48।। अर कुवेरदत्त के घर कुमार आभूषण पहनते थे जिनके निकट राजा की द्वारपालिनी आई। अर कहती भई – हे देव! एक राजा सोमदत्त उसके राणी पूर्णचंद्रा उसके पुत्र भूरिश्रवा अर पुत्री सोमश्री सो सोमश्री के स्वयंबर के अर्थ अनेक राजा बुलाये।।51।। अर सोमश्री रात्रि विषे मन्दिर में तिष्ठी थी सो आकाश विषे देवों का गमन देख जाति स्मरण भई अर प्रेम की भरी मूर्च्छित हो गई।।52।। फिर सचेत हो वह स्वर्ग का देव अपना पति उसे ध्यावती मौन धार तिष्ठी तजा है स्नान भोजन जिसने तब एकान्त विषे उसे पूछा तब उसने कहा – मैं पूर्व जन्म विषे देवी थी सो देव सहित क्रीड़ा करती थी।।54।।

सो मैं देवी की पर्य्याय विषे केवली को पूछा था जो मेरा पति कहां उपजेगा तब केवली ने कहा था हरिवंश विषे उपजेगा सो अब मैं जाना वह हरिवंश विषे उपजा है अर वह विद्याधर क्षेत्र में आवेगा सो हाथी के जीतने कर प्रसिद्ध होवेगा सो अव आपका आगम सबने जाना। वह सोमश्री तुम्हारे पूर्व भव की देवी इस भव विषे भी तुमको वरा चाहे है। यह वार्ता द्वारपालिनी ने कही जो आपके हाथी के जीतने का वृत्तान्त मैं राजा से कहा सो राजा ने मुझे भेजा है। हे सौम्य चन्द्रवदन! तुम सोमश्री से विवाह करो। यह वार्ता सुन अंधकवृष्टि का पुत्र वसुदेव प्रसन्न भया अर सोमश्री को परणी। वह राजा

सौम्यदत्त की पुत्री महा रूपवान्।।58।। दोनों ही सुगंध शरीर अर महाभाग सो परस्पर मुखारविन्द का मकरन्द पीवते सुख से काल व्यतीत करते भये।।59।।

अथानन्तर – एक समय रात्रि विषे सोमश्री वसुदेव के भुजरूप पंजर विषे शयन करती थी सो एक विद्याधर सोमश्री को पति के समीप से ले उड़ा अर शत्रु ने अपनी बहन सोमश्री का रूपकर वहां राखी।।60।। वसुदेव जागे सोमश्री न देखी तब व्याकुल होय शब्द किया – हे सोमश्री! तू कहां गई? तब यह सोमश्री का रूप धारिणी शत्रु की बहन बेगवती बोली – यह मैं आपकी अनुचरी हूँ आपके हजूर ही हूं। वसुदेव ने वेगवती ऐसी देखी मानो साक्षात् सोमश्री ही है।।62।। तब वसुदेव बोले – हे प्रिये! तू बाहर क्यों गई? तब मायाचारिणी बोली – हे प्रभो! महल में गरमी जगी उससे बाहर निकसी ऐसे बोली मानो सोमश्री ही है वह पापिनी रूपपरावर्तिनी विद्या धर सोमश्री समान पति को अनुरागकर रमावती भई। यह कन्या थी सो कन्या के भाव को तजकर सोमश्री समान चातुर्य्यता से स्वामी को सेवती भई। सो निरन्तर भोग भोगे। पति को शयन कराय आप शयन करे। अर पति से पहिले आप जागे अर पति के पांव पलोटे।।65।।

एक दिन वसुदेव किसी प्रकार पहिले जागे सो सोमश्री का रूप न देखा जैसा सोमवती का था वैसा देखा।।66।। तब वसुदेव महाधीर तत्काल उसे जगाया पूछते भये – तू कौन है? सोमश्री की रीति रहे है सो प्रयोजन क्या है।।67।। तब प्रणामकर कहती भई – हे सोम! हे चन्द्रवदन विजयार्द्धगिर की दक्षिण श्रेणी विषे सुरनाथ नामा नगर उसका राजा चित्तवेग विद्याधर उसके राणी अंगारवती उसका पुत्र मानसवेग अर मैं वेगवती नामा बेटी।।69।।

एक दिन राजा चित्तवेग मानस वेग को राज देय पाप के नाश करने के अर्थ तप करने को वन में गया मुनि भया अर मेरा भाई मानसवेग उसने तुम्हारे सोमश्री हरी अर अपने नगर ले गया। सो वह पतिव्रता शीलरूप गढ में अखण्ड रहे है।।71।। सो मेरे भाई ने मुझे सोमश्री के निकट प्रसन्न करने को भेजी। सो मैं उसे डिगाय न सकी तब मैं उसकी सखी भई उसके शील अर सत्यकर वश भई।।72।। उसने मुझे वृत्तान्त कहने को आपके निकट पठाई सो मैं कुवारी तो थी ही, मैं तुम्हारा रूप देख मोहित हो गई सोमश्री की न्याईं तुमसे रमी। चित्त की विचित्र गति है जो तुम मुझे वेगवती जानते तो मुझे न स्पर्शते सो मैं कुवारी कन्या तुमको आप ही वरे। अब तुम मेरे पति मैं तुम्हारी पत्नी बड़े कुल की बेटी हूं अर कुवारी हूं तुम निश्चय कर लेवो। ज्यूं तुम सोमश्री के पति त्यूं मेरे पति वह मेरी सखी है। ऐसा कह वेगवती नीची होय रही। अनुक्रम से सोमश्री के हरने का वृत्तान्त कहा।।74।।

सो सुनकर यदुपति खेदखिन्न भया। जो दोनों ही बात अयोग्य भई सोमश्री का हरण इसका अदत्तादान ग्रहण यह जिन शासन की आम्नाय नहीं। जो भले पुरुष स्त्री को उसकी इच्छा से न ग्रहे

जो उसके माता पिता ज्येष्ठ भ्रातादिक देवें तो ग्रहे अब तो जो भई सो भई। वेगवती अपनी प्राचीन रूप धरे पति को रमावे।।75।। उस सहित समुद्रविजय का छोटा भाई वसुदेव सुख से रमे। वह पतिव्रता पति की अति सेवा करे।

अथानन्तर – वसन्त ऋतु आई उन्नत भये हैं मधुकर जिस विषे।।76।। सो एक समय वसुदेव कुमार वेगवती सहित शयन करते थे। सो वेगवती रति खेद कर सो गई। उस समय दुष्ट मानस वेगवती का भाई, जो सोमश्री को हर ले गया था सो सूते वसुदेव को भी ले उड़ा।।77।। सो वसुदेव जागे विद्याधर को मुष्टि मारीं तब कम्पायमान भया वसुदेव को डारा सो गंगा में आय पड़े। एक विद्याधर विद्या साधता था उसके कंधे आय पड़ा। सो कुमार के प्रताप से विद्याधर को विद्या सिद्ध हो गई।।79।।

जब उसकी विद्या सिद्ध भई तब वह यदुपति को प्रणाम कर अपने नगर गया। अर विद्याधरों की कन्या वसुदेव कुम्बर को विजयार्द्ध में ले गई। वहां नभस्तल नामा नगर विद्याधरों कर भरा। सो अनेक नभचर पांच प्रकार पुष्पों की वर्षा करते कुंवर को पुर में ले गए।।81।। अर सूर्य के रथ समान दैदीप्यमान रथ उस पर आरूढ यदुपति अनेक वादित्रों की ध्वनि कर पूरित हैं दशों दिशा, ऐसे उत्सव से पुर में प्रवेश कर मदनवेगा नाम राजकन्या परणी। कामदेव समान है रूप जिसका, ऐसे कुमार दधिमुख आदि विद्याधरों कर दई महासुन्दर देवकन्या वरी।।82।। वसुदेव मदन वेगा को परण मदन जो काम उसके वेगकर उपजा जो अनुराग भाव, उसे धरता उससे देव की न्याई क्रीडा करता भया। कैसी है मदनवेगा, सुन्दर हैं सब अंग जिसके। यह वसुदेव जिनधर्म के प्रसाद से देवों समान सुख भोगता भया। एक दिन मदनवेगा से प्रसन्न होय कहा – तू वर मांग। तब उसने यह वर माँगा। मेरा पिता शत्रु की बंध में है छुड़ावो।।83।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ सोमश्री–वनमाला–कपिला–पद्मावती–चारुहासिनी–रत्नवती–सोमश्री–वेगवती–मदनवेगालाभवर्णनो नाम चतुर्विंशतितमः सर्गः।।24।।

रे मन! तू नरकसूं न डरै है। राग द्वेष करि उपजे जे कर्म–कलंक तिनकूं तपकरि नाहिं खिपावे है। तेरे एते दिन यों ही वृथा गए, विषय सुखरूप कूपविषै पड़ा अपने आत्माकूं भवपिंजरसूं निकास। पाया है जिन मार्गविषै बुद्धि का प्रकाश तैने, तू अनादिकाल का संसार भ्रमणसूं खेदखिन्न भया। अब अनादि के बंधे आत्माकूं छुड़ाय।

– पद्मपुराण भाषावचनिका, पृष्ठ 692

पच्चीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – वसुदेव ने मदनवेगा के भाई दधिमुख से पूछा – तुम्हारा पिता कौन भांति बंध में है अर कैसे छूटे? तब वह पिता के अर्थ सकल वृत्तान्त वसुदेव से कहता भया – हे कुमार! यह कथा सुनो –

नमि विद्याधर के वंश विषे अनेक राजा भये। कै एक पाट पीछे अरिंजयपुर के स्वामी राजा मेघनाद भया।।2।। उसके पद्मश्री नामा कन्या भई सो निमित्तज्ञानी ने कहा, यह कन्या चक्रवर्ती के स्त्री रत्न होवेगी अर नभस्तिलक नामा नगर का नाथ राजा वज्रपाणि उसने पद्मश्री अनेक बार मेघनाद से मांगी सो उसने न दई। तब कन्या के अलाभ विषे वज्रपाणि विद्याधर क्रोधायमान भया परंतु मेघनाद को न जीत सका सो अपने नगर उठ गया।।5।। फिर मेघनाद कन्या के पिता ने तत्काल उपजा है केवलज्ञान जिनको ऐसे केवली भगवान् उनकी पूजाकर सुर असुर नरों के समीप पूछता भया – हे प्रभो! मेरी पुत्री का पति कौन होवेगा? तब भगवान् केवली की ध्वनि में आज्ञा भई।।7।। जो हस्तनापुर विषे कुरुवंशियों का अधिपति राजा कार्त्यवीर्य महाबलवान् उद्धत सो कामधेनु के अर्थ यमदग्नि नामा तपस्वी को मारता भया अर यमदग्नि के पुत्र परशुराम ने पिता के वैर कर कार्तवीर्य को मारा।।9।। अर कई वार, क्षत्रियों को क्रोध कर नाश किया। जिस समय परशुराम ने कार्त्यवीर्य्य को मारा उस समय कार्त्यवीर्य्य की राणी तारा गर्भवती थी सो एकांत विषे किसी भांति निकस कर कौशिक नामा तापस के आश्रम में शरण गई।।11।।

वहां निर्भय वसे गर्भ के मास पूर्ण भये तब माता शुभ नक्षत्र विषे अष्टम चक्रवर्ती को जनती भई। सो चक्रवर्ती परशुराम कर उपजा सो क्षत्रियों को त्रास उसका निवारणहारा है। कौशिक नामा तापस के आश्रम में माता भूमि गृह विषे जनती भई, उससे सुभूमि कहाया कौशिक का महा रमणीक आश्रम वहां सुभूमि छाने बढे, यद्यपि तापस के आश्रम विषे भय नाहीं। उनका दृढ शरण है तथापि माता को यह संदेह जो शत्रु प्रबल है यदि कदाचित् तापस को मार कर मेरे पुत्र को मारे।।13।। इससे छाने बड़ा किया सो सुभूमि परशुराम का हननेवाला षट् खण्ड का पति महा प्रबल थोड़े ही दिन में तुम्हारी पुत्री का पति होवेगा।

यह वार्ता मेघनाद को केवली ने कही अर कहा अब वह तापस के आश्रम रहे है। परशुराम क्षत्रियों पर काल का स्वरूप भया। सात वार पृथ्वी क्षत्री रहित करी अर आप पृथिवी का इक छत्र राज करे है। प्रतापरूप अग्नि कर मण्डित को भोगे है अर ज्यूं ज्यूं सुभूमि बड़ा होवे है त्यों त्यों

www.vitragvani.com

परशुराम के गृह विषें अनेक उत्पात होय हैं अर परशुराम ने निमित्तज्ञानियों से पूछा जो यह क्या वृत्तांत है सो मुझे आश्चर्य भया है। ये अनिष्ट के दिखावनहारे उत्पात मेरे गृह विषे क्यों होवे हैं।।18।।

तब निमित्तज्ञानियों ने कहा किसी स्थानक विषे तेरा शत्रु छाने बढे है। तब परशुराम ने पूछा – वह जाना कैसे जावे? तब निमित्तज्ञानियों ने कहा तुम क्षत्रियों के अनेक समूह मारे हैं उनकी डाढ भोजन करते क्षीर होय प्रवर्ते सो तुम्हारा प्रबल शत्रु है। यह वार्ता सुन कर शत्रु के जानने की है इच्छा जिसके ऐसा परशुराम उसने डाढ क्षत्रियों की इकट्ठी कराय दान शाला विषे रखाई। जब भोजनवाले आवें तब उनको डाढ से पात्र भर दिखावे सो किसी के देखने कर कछू न भया जब सुभूमि आवेगा तब क्षीर हो जावेगी। तब इसे मारने को शत्रु आवेगा। सो जीमने का थाल ही सुदर्शन चक्र होवेगा उस कर सुभूम शत्रु को हनेगा तब यह वार्ता मेघनाद विद्याधर सुनकर केवली को वंद हस्तनापुर गया।।23।। तापस के आश्रम में जाय सुभूम को देखा। शास्त्र अर शस्त्र विद्या विषे महा प्रवीण प्रताप कर अति देदीप्यमान अति सूर्य समान मेघनाद ने सुभूम देखा।।24।।

तब एकांत विषे सब वृत्तान्त कहा जो तुम शत्रु के नाशक हो इससे अब तुम उद्यम करो अरिरूप जो इन्धन उसके भस्म करने अर्थ सुभूम रूप अग्नि को मेघनाद रूप पवन ने प्रज्वलित किया।।25।। सो सुभूम मेघनाद सहित शत्रु के घर में आया। यह दाभ का आसन बिछाय भोजन को बैठाया अर इसको भोजन विषे क्षत्रियों की दाढ़ दिखाई सो इसके प्रभावकर वे दाढ क्षीर रूप होय परणी।।27।। तब भोजनशाला के जो अधिकारी थे उन्होंने शीघ्र ही परशुराम से कहा जो तुम्हारा शत्रु प्रगट भया है। तब वह फरसी हाथ में लेकर सुभूम को मारने आया। अर सुभूम पात्र विषे क्षीर का भोजन करते थे सो थाली ही सुदर्शन चक्र हो गया उस कर सुभूम ने शत्रु को मारा।

अथानन्तर – सुभूम के चौदह रत्न अर नव निधि होती भई। अर बत्तीस हजार मुकुट बद्ध राजा सेवा करते भये। सबने जाना यह आठमा चक्रवर्ती भया मेघनाद विद्याधर ने अपनी पुत्री सोमश्री चक्री को परणाई तब चक्री स्त्रीरत्न के लाभ कर अति प्रसन्न भया। सो मेघनाद को सब विद्याधरों का ईश्वर किया। तब मेघनाद अपने शत्रु वज्रपाणि को युद्धविषे हनता भया वहां जो पद्मश्री परणा चाहे था सो मेघनाद ने यमपुर पहुंचाया।।31।। साठ हजार वर्ष सुभूम ने इक छत्र राज किया इकवीस वेर क्रोधकर विप्र विनाशे जैसी तीव्र कषाय परशुराम के वैसी ही सुभूम के उसने वृथा क्षत्री विनाशे। इसने वृथा विप्र विनाशे। शास्त्र की आज्ञा कर तो यह है जो किसी से द्वेष न करना। जो आपसे वैर करे उससे मित्रता करनी यह तो धर्म की रीति है। अर किसी से क्षमा न होवे क्रोधी होवे तो यथार्थ अपराधी को मारे। कार्तवीर्य्य ने जमदग्नि मारा तो परशुराम को क्षमा न होने से कार्तवीर्य को मारे अर परशुराम ने क्षत्री मारे, सो वृथा ही मारे। अर सुभूम कार्तवीर्य्य का भी वैर न लेते अर परशुराम से मित्रता करते यह तो

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

सर्वोत्कृष्ट था अर यह क्षमा न होवें तो कार्तवीर्य के वैर परशुराम मारे। अर विप्रों क्या प्रयोजन। यह दोनों महापातिकी महातापसी शठता करते भये।।23।।

सुभूम साठ हजार वर्ष राज भोगकर तृप्त न भया वीतराग के मार्ग की आराधना बिना विराधक होय सातवें नरक गया।।26।। अर सुभूम का श्वसुर मेघनाद उसकी सन्तान विषे छठा बल नामा प्रतिनारायण भया।।34।। उस समय छठा बलभद्र नन्द अर छठा नारायण पुण्डरीक ये दोनों महाबलवान् उन्होंने बली को मारा तो बली के वंश विषे सहस्रग्रीव फिर पंचशत ग्रीव फिर द्विशतग्रीव।।35।। इत्यादि बड़े बड़े राजा भये बहुत पाट वितीत भये। उस वंश विषे हमारा पिता तुम्हारा श्वसुर विद्युद्वेग नामा राजा भया।।33।। सो वह राजा विद्युद्वेग एक दिन अवधिज्ञानी मुनि को पूछता भया – हे भगवन्! मेरी पुत्री मदनवेगा का पति कौन होवेगा? तब मुनि ने कहा – गंगा विषे तिष्टता जो चण्डवेगनामा विद्याधर विद्या साधे है सो रात्रि विषे उसके कांधे पर आय पड़ेगा उसके पड़नेकर उसकी विद्या सिद्ध होवेगी सो तेरी पुत्री का पति होवेगा। यह वार्ता मुनि के मुख से सुन वहां सेवक राखे। सो तुम उसके कांधे आन पड़े तब तुमको पुत्री परणाई अर नभस्तिलक नामा नगर का धनी राजा त्रिशिखर नामा विद्याधर अपने पुत्र के अर्थ मदनवेगा मांगी सो मेरे पिता ने न दई।।41।।

तब युद्ध विषे छिद्र पाय त्रिशिखिर ने हमारा पिता विद्युद्वेग पकड़ा सो उसके वन्दीगृह में है।।42।। अब तुम महा पराक्रमी वहां आये तुमारा श्वशुर छूटे सो करो। अर हमारे बड़ों को सुभूम चक्रवर्ती ने कृपाकर विद्यामय अनेक शस्त्र दिये हैं सो ले कर शत्रु को जीतो।।44।। ये दधिमुख साले के वचन सुन कर वसुदेव महा प्रतापी श्वशुर के छुड़ाने के अर्थ युद्ध करते भये। दधिमुख अर चण्ड वेग विधि पूर्वक बहुत विद्यामय शस्त्र देवों कर सेवने योग्य वसुदेव को दिये।।46।। प्रथम ब्रह्मशस्त्र फिर लोकोत्सादन नामा दिव्यास्त्र फिर आग्नेय नामा शस्त्र वारुण नामा शस्त्र महेंद्र नामा शस्त्र तथा वैष्णव शस्त्र फिर यमदण्ड ईशान शस्त्र स्तम्भ नामा शस्त्र मोह नामा शस्त्र वायव्य नामा शस्त्र जम्भण नामा शस्त्र बंध नामा शस्त्र मोक्षण शस्त्र फिर विशल्य करण नामा शस्त्र व्रण संरोहण नामा शस्त्र सर्व शस्त्र छादन नामा शस्त्र छेदना शस्त्र हरण शस्त्र इत्यादि अनेक शस्त्र यादव को दधिमुख अर चण्डवेग ने दिये।।50।।

अथानन्तर – महाक्रूर इनका शत्रु त्रिशिखर अपने पुर से चढकर इनके नगर के समीप आया तब वसुदेव यह वार्ता सुन हर्षित भये जो हम ही उस पर जाने को उद्यमी भये थे अर वही आया तो इस समान अर क्या। मन में हर्षित होय श्वशुर कुल को साथ लेकर त्रिशिखर पर गये।।52।। विद्याधरों के मध्य यादव कैसे, सोहे जैसा स्वर्गवासी देवों के मध्य इन्द्र सोहे। अर राजा त्रिशिखर मातंग जाति के विद्याधर उनमें कैसा सोहे जैसा असुर कुमारों में चमरेन्द्र सोहे।।54।। बड़े विमान बड़े गज मदोन्मत्त अर

पवन समान तुरंग उनकर आकाश आच्छादित भया दोनों सेना आकाश में भिडीं, शस्त्रों के समूह की कान्ति कर सूर्य का किरण दब गई अर दोनों सेना के वादित्रों के शब्द कर आकाश शब्दायमान हो गया। धनुष खेंच वाणों के समूह योधा चलावते भये सो वाणों कर वगतर भिद गये अर हृदय भेदे गये अर कई एक योद्धाओं के शिर चक्र कर छेदे गये परन्तु चन्द्रमा समान उज्ज्वल यश न भेदे गये।

भावार्थ – सुभटों ने शिर दिया पर यश न दिया। खडगधारियों के निपात कर बड़े बड़े योद्धा रण विषे पड़े परन्तु उनका प्रमाप न डिगा महामाना जोधा तिनकी मुद्गरों के घात कर आंख भ्रमती भई परंतु मन न भ्रमा।।60।। हाथी घोडे रथ पयादे महायुद्ध करते भये शूरापन में वे उनसे अधिक वे उनसे महायोद्धा महोत्सव के भरे प्रथम तो खेदरहित बहुत बेर लग सामान्य शस्त्र कहिये तलवार कटारी सेल भाला धनुष वाणादि कर युद्ध करते भये।।62।। केतीक वेर में चण्डवेग ने त्रिशिखर के अंगार वैगार नीलकण्ठ आदि पुत्र जीते।।63।। वसुदेव रथ विषे आरूढ है उसके महा तेजस्वी अश्व जुते हैं। अर उस रथ में अनेक दिव्यास्त्र अर सामान्य शस्त्र भरे हैं। अर रथ का सारथी दधिमुख है सो सब त्रिशिखर वसुदेव पर आया।।64।।

तब वसुदेव के अर त्रिशिखर के प्रथम तो सामान्य शस्त्रकर युद्ध भया अर परस्पर छूटे वाण उनकर अम्बर आच्छादित भया।।65।। फिर दोनों में दिव्यास्त्रों कर युद्ध होता भया। वसुदेव ने त्रिशिखर पर आग्नेय शस्त्र चलाया सो वज्राग्नि कर शत्रु के कटक को चलावता भया।।66।। तब त्रिशिखर वारुणा शस्त्र कहिये जल वाण उसकर अग्नि बुझावता भया अर वसुदेव पर उसने मोहिनी शस्त्र चलाया सो वसुदेव मोहित हो गया।।67।। फिर वसुदेव ने चित्त प्रसाद शस्त्र कर मोहिनी शस्त्र निवारा। अर वायुव्य शस्त्र कर उसका वारुणा शस्त्र निवारा। जे जे शस्त्र शत्रु ने चलाये वे वे अपने शस्त्रों कर निवारे। फिर वसुदेव ने माहेन्द्रा शस्त्र कर शत्रु का सिर छेद्या तब त्रिशिखर पड़ा तब उसके साथ के सब विद्याधर दिशा विदिशा को भाजे, सूर्य को किरण दिशा विदिशा में विस्तरे वैसे उसके साथ के जगह जगह विचरते भये फिर वसुदेव समस्त विद्याधरों कर मण्डित त्रिशिखर के नगर में जाय अपने श्वशुर को बंधन से छुडाय श्वशुर के नगर लाये।

यह कथन गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहे हैं। त्रिशिखर समान दुर्जय बैरी महा शूरवीर अर अनेक योधा विद्याधर जिसके साथ उसे तत्काल जीतकर अनेक राजाओं के वसुदेव अधिपति होते भये सो यह जिन धर्म का प्रताप जानो।।72।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ मदनवेगालाभ–त्रिशिखरवधवर्णनो नाम पंचविंशतितमः सर्गः।।25।।

छब्बीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – वसुदेव के मदनवेगा से कामदेव समान महारूपवान् अति बली अनाव्रत नामा पुत्र होता भया सो महाविवेकी बुद्धिमान।।1।। एक दिन विद्याधर अपनी स्त्रियों सहित सिद्धकूट चैत्यालय वन्दना के अर्थ गये। अर वसुदेव भी मदनवेगा सहित गया।।2।। वहां विद्याधर प्रभु की महा पूजाकर अनेक शृंगार किये। अपने अपने थंभन के लग कर विद्याधर बैठे।।3।। अर मदनवेगा का पिता विद्युद्वेग अपना गौरी विद्या का थम्भ उसे लागकर पूजा देखते भये अपनी गौरिक नामा जाति के विद्याधर सुतिन सहित बैठे।।4।।

उस समय वसुदेव ने मदनवेगा से पूछा – इन सब विद्याधरों की जाति मुझे कहो। तब मदनवेगा कहती भई – हे प्रभो! यह कमल की माला धरे अर कमल हाथ में लिये मेरे पिता की चौगिरद गौरी विद्या के थम्भ के आस पास हमारे कुल के गौरीक नामा विद्याधर हैं।।6।। अर रक्त माला धरे रक्त हैं वस्त्र जिनके गंधार थम्भ के आश्रय गांधार जाति के विद्याधर बैठे हैं।।7।। अर ये मानवस्थम्भ के आश्रय मानव जाति के विद्याधर बैठे हैं। नाना प्रकार के सुवर्णसमान पीत पाटम्बर के हैं वस्त्र जिनके।।8।। फिर किंचित् आरक्त हैं वस्त्र जिनके अर दैदीप्यमान हैं मणियों के आभूषण जिनके ऐसे मनुजाति के विद्याधर मनुस्तम्भ से लगकर बैठे हैं।।9।। अर नाना प्रकार औषधि हाथ में धरे अर नाना प्रकार के आभरण अर पुष्पमाला जिनके ये मूलवीर्य जाति के विद्याधर औषधि स्तम्भ से लग कर बैठे हैं।।19।। अर अन्तर्भूमिचर जाति के विद्याधर सब ऋतुओं के पुष्पों की सुगन्धता को धरे है अर रत्न स्वर्ण के आभूषणों को पहरे रुण्ड मुण्ड नामा स्तम्भ के आश्रय बैठे हैं।।11।। हे प्रभो! ये संकुक जाति के विद्याधर शंकुथम्भ के आश्रय बैठे हैं नाना प्रकार कुण्डल का है शृंगार जिनके अर अनेक आभूषण पहरे सर्पों के भुजबन्ध बांधे विराजे हैं अर ये कौशिक स्तम्भ के आश्रय कौशिक जाति के विद्याधर शिर पर मुकुट धरे देदीप्यमान मणिकुण्डल पहिरे बैठे हैं।।13।। हे नाथ! यह विद्याधरों के कुल संक्षेपता कर तुमको कहे।

अब ये मातंग जाति के विद्याधर उनकी जाति का वर्णन सुनो।।14।। काली घटा समान श्याम है वर्ण जिनका अर श्याम वस्त्र अर श्याम पुष्पों की माला श्याम मणियों के आभूषण धरे ये मातंग जाति के विद्याधर मातंग थंभ के समीप बैठे हैं।।15।। मसाणती के हाड उनके हैं आभरण जिनके अर भस्म रेणु कर धूसरे हैं अंग जिनके मसाण विषे है निवास जिनका शमशान थम्भ से लगकर बैठे हैं। सो मातंग थम्भ ही का नाम श्मशान थम्भ है। अर पाण्डुक जाति के विद्याधर सो पाण्डु थम्भ के आश्रय कर बैठे हैं। अर पांडुर्य वैडूर्य मणि समान है वर्ण जिनका ऐसे वस्त्रों को धारे हैं।।17।।

अर यह कालस्वपाकी जाति के विद्याधर काल स्तम्भ को आश्रय कर बैठे हैं। कृष्णचर्म को धरे अर कृष्णचर्म के हैं वस्त्र अर माला जिनके।।18।। अर ये सुपाक जाती के विद्याधर सुपाकी विद्या के थम्भ के आश्रय बैठे हैं। तप्त कांचन के हैं आभूषण जिनके अर पीत हैं मस्तक के केश जिनके।।19।। अर ये पार्वतेय जाति के विद्याधर पर्वत स्तम्भ को आश्रय कर बैठे हैं वृक्षों के पत्र समान हरित वस्त्र धरे अर नाना प्रकार के मुकुट धरे अर माला पहिरे सोहे हैं।।20।। अर यह वंशाल्य जाति के विद्याधर वंशस्तम्भ को आश्रयकर बैठे हैं वांस के पत्र का किया है मुकुट जिन्होंने अर सब ॠतुओं के फूलों की माला जिनके।।21।। अर ये वृक्ष मूलक जाति के विद्याधर वृक्ष मूलनामा महास्तम्भ उसको आश्रय कर बैठे हैं। महा भुजंगों के हैं आभूषण जिनके।।22।।

इस भान्ति अपने अपने भेष धरे अपने अपने आभूषणों कर मण्डित संक्षेपता कर सब समूह मदनवेगा ने कुमार को दिखाये। तब वसुदेव कुमार ने सबके भेद जाने। फिर सब अपने अपने स्थानक गये वसुदेव भी अपने स्थानक गये।।24।। एक दिन वसुदेव ने मदनवेगा से कही – हे वेगवती! आ, तब वेगवती नाम सुन क्रोध को प्राप्त भई अर घर में बैठ गई इनके पास न आई।।25।। उसी समय त्रिशिखर की स्त्री सूर्यनखा वसुदेव को मदनवेगा का रूप धर छल कर कहती भई।।26।। उसी समय इनका शत्रु मानसवेग आकाश में दृष्टि पड़ी। तब सूर्पनखा ने जाना यह मानसवेग इनका मारणवाला शत्रु है तब उसे सौंप वह तो उड़ गई। अर मानसवेग ने कुमार को आकाश से डारा सो वसुदेव तृणों के पुंज पर आय पडे सो चोट न लगी।।28।। वहां अनेक लोग जरासिंध का यश गावते थे तब वसुदेव ने यह जाना – यह राजगृह नामा पुर है तब नगर में गये।।29।। अर द्यूतक्रीड़ाविषे क्रोड़ दीनार जीती अर उसी समय दान कर दई किंचित् भी न रक्खी।।30।।

आगे जरासिंध को किसी निमित्तज्ञानी ने कहा था जो ऐसा उदार चित्त होवे उसका पुत्र तेरा घाती होवे। सो निमित्तज्ञानी के ऐसे वचन सुन जरासिंध ने द्यूत क्रीडा के स्थानक विषे सेवक राखे थे उन्होंने वसुदेव को भाथडी में डाल पहाड से डारा तो तत्काल मर जाय। उस समय इनकी वेगवती भार्य्या आय पहुंची सो भाथडी समेत उठाय ले चली सो वसुदेव ने जाना यह वेगवती है सो चित्त में चिन्ता करते भये, जैसे चारुदत्त सेठ को भैरुड़ ले उडा था वैसे मुझको अनेक बार ले उडे। मुझको उपसर्ग में कमी न रही यह बन्धु जनका सम्बन्ध दुःखदायक है अर भोग संपदा दुःखदायक है। अर काय की कांति दुःखदायक है। तथापि यह प्राणी समझे नहीं। पुण्य पाप के फल सुख दुःख उनका भोक्ता यह अकेला ही है अर जनमें अकेला मरे अकेला इसका साथी कोई नहीं। तथापि वृथा ही कुटुम्ब का अनुराग धरे है।।36।। न इसका कोई न यह किसी का, वे धीर पुरुष सुखी हैं अर उन्होंने ही आत्म कल्याण किया। जो समस्त भोगोपभोग तजकर मोक्षमार्ग में प्रवर्ते।।37।। अर हम सारखे भोग तृष्णारूप लहर में डूबे पाप कर्म के करणहारे संसार समुद्र विषे बारम्बार झकोल खावे हैं। यह संसार

समुद्र दुख रूप जल पूर्ण है। इस विषे सुख का लेश नहीं ये इन्द्री जनित सुख दुखरूप ही है।।38।।

इस भांति चिंतवन करता वह समुद्रविजय का वीर वसुदेव वेगवती के स्थान पहुँचा तब वेगवती ने आकाश से उतर वसुदेव को भाथडी से बाहर काढा।।39।। पति को वेगवती देखकर विरह की भरी रुदन करती भई। तब वसुदेव ने उर से लगाय लई। अर उसे सुख रूप करी अर आप भी सुख को प्राप्त भये। फिर वसुदेव ने वेगवती को पिछली सब बातें पूछीं तब वह कहती भई – तुमको शत्रु ले उडा।।40।। तब मैं दोनों श्रेणी विषे सकल नगर अर वन ढूंढे समस्त भरतक्षेत्र हेरा कहीं न पाए तब ढूंढते ढूंढते मदनवेगा के समीप देखे सो उसको वियोग उपजाऊं यह भी बात मन में आई सो आपको देखा करी फिर त्रिशिखिर की भार्य्या सूर्पनखा ने तुमको हरा। उसके तुमको मारने की इच्छा उसका पति त्रिशिखिर तुम हता सो वह तुमसे बैर धरे फिर उसने मानस वेग को सौंपे। उसने आकाश से डारे सो राजगृह के वन विषे तृणों पर पडे वहां जरासिंध के सेवक भाथडी में डाल कर गिर के शिखरतें डालते भए। सो भाथडी मैं यहां ले आई अब तुम ह्रीमन्त पर्वत पर तिष्ठे हो अर इस पर्वत विषे पंचनन्द नामा तीर्थ है। यह सब वृत्तान्त वेगवती ने वसुदेव से कहा चन्द्रमा समान है मुख जिसका उस सहित वसुदेव धीर नदियों के मनोहर तट उन विषे रमते भए।।46।।

एक दिन वसुदेव ह्रीमन्त पर्वत पर अपनी इच्छा से गमन करते थे वहां एक विद्याधर की कन्या धन्य है रूप जिसका, को नागपास से दृढ बंधी देखी जैसी गज बंधन से बंधी हथिनी होवे।।47।। तब कुमार महा दयालु चित्त उसे नागपाश से छुडावता भया जैसे यती जीवों को पाप बंध से छुडावे। कैसी है वह कन्या, चंद्रमा समान है मुख की कांति जिसकी तब वह विद्याधरी बंधन से मुक्त हो नमस्कार कर कहती भई – हे नाथ! तुम्हारे प्रसाद से मुझे विद्या सिद्ध भई। सो मेरे तुम ही नाथ हो।।49।।

मेरी कथा सुनो – गगन बल्लभ नामा नगर विषै राजा विद्युदंष्ट्र के वंश विषें उपजा राजा उसकी मैं बालचंद्रा नामा पुत्री नदी के तट विषे विद्या साधती थी सो एक विद्याधर बेरी उसने मुझे नागपाश कर बांधी सो तुमने छुडाई।।51।। आगे हमारे वंश में एक केतुमती नामा कन्या भई थी सो इसी भांति विद्या साधती थी सो किसी विद्याधर ने बांधी थी पुण्डरीक नामा अर्द्धचक्री पांचमें नारायण उसने छुडाई, जैसे तुमने मुझे छुडाई। सो केतुमती भी पुण्डरीक की प्रिया भई। वैसे मैं भी तुम्हारी बल्लभा अवश्य हूंगी।।53।। अर हे प्रभो! विद्याधरों को दुर्लभ है यह विद्या सो तुम लेवो तब वसुदेव ने कहा – मेरी आज्ञा से तुम वेगवती को विद्या देवो। तब यह बालचंद्रा कुमारी आज्ञा पाय वेगवती को आकाश के मार्ग गगन बल्लभ नामा नगर ले गई वहां वेगवती को बालचंद्रा विद्या देकर निःशल्य भई जिनधर्मियों का यही मार्ग है जो वचन कहे सो करे।।56।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ बालचन्द्रादर्शनवर्णनो नाम षड्विंशतितमः सर्गः।।26।।

सत्ताईसवाँ सर्ग

अथानन्तर – गौतम स्वामी से राजा श्रेणिक पूछता भया – हे प्रभो! विद्युद्दंष्ट्र विद्याधर कौन भया अर उसका आचरण क्या सो कहो – तब गणधर देव कहते भए। एक गगन बल्लभ नामा नगर उसमें नमि के वंश विषे विद्युद्दंष्ट्र नामा राजा भया सो महा पराक्रमी दोनों श्रेणि का स्वामी।।2।। एक दिन पश्चिम विदेह से मुनि को यहां लाय कर महा उपसर्ग करता भया। तब श्रेणिक ने पूछा – हे नाथ! कौन कारण मुनि को उपसर्ग करता भया?

तब गणधर पाप की नाश करनहारी संजयन्त की कथा राजा श्रेणिक को कहते भये।।3।। हे राजन्! इस जम्बूद्वीप विषे पश्चिम विदेह वहां गंधमालिनी नामा देश उसमें वीतशोका नामा पुरी वहां राजा वैजयन्त होता भया।।5।। उसकी रानी सर्वश्री लक्ष्मी समान रूपवान उसके दो पुत्र महा मनोग्य एक का नाम संजयन्त एक का नाम जयंत। एक समय स्वयम्भू नामा तीर्थंकर विहार करते वीतशोका पुरी आये सो राजा दोनों पुत्रों सहित धर्म श्रवण कर वैराग्य भया पिहताश्रव स्वामी के साथ यह विहार करे। सो वैजयन्त मुनि तो घातिया कर्मों का घात कर केवली भए।।8।। चतुरनिकायों के देव केवली के दर्शन आये सो धरणेंद्र की विभूति देख के वैजयंत का छोटा पुत्र जयन्त निदान करता भया – जो तप के प्रभावकर ऐसी विभूति मैं पाऊं सो काल पाय धरणेंद्र भया अर जयन्त का बड़ा भाई संजयन्त सो वीतशोकापुरी के समीप भीम दर्शन नामा मसान उस विषे सात दिन का प्रतिमा योग धर तिष्ठे थे।।10।।

अर विद्युदंष्ट्र विद्याधर अपनी स्त्रियों सहित भद्रशाल वन विषे रमकर अपने गगन बल्लभ नगर आवे था सो संजयन्त मुनि को देखकर पूर्वभव के बैर से योग से क्रोधायमान हो विद्या के बल कर वहां से उठाय इस भरत की विजयार्द्ध की दक्षिण श्रेणी के समीप एक वरुण नामा गिर वहां पांच नदियों का संगम भया है। उन नदियों का नाम हरिण्वती, चण्डवेगा, गजवती, कुसुमवती, सुवर्णवती, इन पांचों के संगम विषे मुनि की रात्रि विषे थापे अर आप घर गया। प्रभात अनेक विद्याधरों को एकत्र कर पापी कहता भया – जो आज रात्रि विषे मुझे स्वप्न आया है जो एक राक्षस महा काया का धारक हमारे सबों के क्षय करने को आया है सो आपां भेले होय उसे हतें।।15।। ऐसा कह कर सबको ले गया। वे दुराचारी नाना प्रकार के आयुधों कर मुनि को उपसर्ग करते भये। सो मुनि परम समाधि योग कर शीतलनाथ के समय सिद्ध पद को प्राप्त भये। अर अन्तकृत केवली भये उनकी निर्वाण पूजा को धरणीन्द्र आये। सो विद्याधरों का कर्तव्य जान महा क्रोधरूप भये दोनों श्रेणी के विद्याधर नागपाश में बांधे अर उनकी विद्या खोस लीन्ही। अर सबको समुद्र में डुबोने को उद्यमी भये।।17।। उस समय

सातमें स्वर्ग का पति लान्तवेन्द्र आय कर कहता भया – हे नागों के इन्द्र! तूं इतने जीवों की हिंसा मत करो तूं अर मैं अर यह विद्युद्दंष्ट्र अर स्वामी संजयन्त इन चारों जीवों की कथा भलीभांति सुनो, परस्पर वैर के योग से संसार वन विषे भ्रमण किये हैं।

यह कथा लान्तवेन्द्र कहे है अर धरणीन्द्र सुने है।।19।। इस भरत क्षेत्र विषे शकट नामा प्रसिद्ध देश उस विषे सिंधुपुर नामा नगर वहां राजा सिंहसेन उसके राणी रामदत्ता सो समस्त कला गुण उन कर शोभित उसके निपुणमति नामा धाय सब निपुणों में महा निपुण। अर राजा के श्रीभूति नामा पुरोहित सो आपको सत्यवादी अर निर्लोभी कहावे अर महालाभ पर महालोभी उसके श्रीदत्ता नाम स्त्री।।21।। सो श्रीभूत दुष्ट ने जगत् के ठगने अर्थ नगर के चारों ओर भाड़शाला बनाई। पृथिवी में इसका बड़ा विश्वास सब लोग इसके धरोहरि धरे।।22।।

अथानन्तर – पद्मखण्ड नामा नगर वहां सुमित्रदत्त नामा वणिक सो सिंहपुर आया बहुमूल्य पांच रत्न पुरोहित के धरोहर धर तृष्णा का प्रेरा जहाज चढ़ समुद्र को गया सो दैवयोग से जहाज फट गया माल डूब गया अर यह बचा सो सिंहपुर आयकर पुरोहित से पांच रत्न मांगे सो पुरोहित महा ठग वह नट गया अर वणिक को खेद दिया। नगर में पुरोहित सत्यघोष कहावे राजा प्रजा सबको पुरोहित का बड़ा विश्वास उसे कोई झूठा न कहे। वणिक को सब विकल कहें। पुरोहित ने यह प्रसिद्ध किया समुद्र में इसका जहाज फट गया इससे यह बरड़ावे है। जहां जाय कर यह पुकारे वहां पुरोहित की बोली सब बोलें। इसे गहला ठहराया खेद देवें कोई न्याय न करे सो यह आशा कर दग्ध भया राज मन्दिर के समीप एक ऊंचा वृक्ष उस पर चढ़कर नित्य पुकारे। ऐसे शब्द करे कि यह राजा सिंहसेन महा दयावान् अर राणी रामदत्ता महा दयावन्ती अर सभी लोग नगर के भले मनुष्य हैं सो मेरा बात कृपा कर सुनो। मैं इसी मास के कृष्णपक्ष में श्रीभूत के हाथ सत्यवादी जान पांच रत्न सौंपे थे सो मुझ को नहीं देवे है अतिलुब्ध है बुद्धि जिसकी लोभी पराया माल दिया न चाहे।

इस भांति यह वणिक पहर के तड़के नित्य पुकारे बहुत दिवस भये एक समय राणी ने राजा से कही – हे महाराज! पृथ्वी विषे बलवान अर दुर्बल सभी हैं जो राजा न्यायवन्त न होवे तौ बलियों से दुर्बल कैसे जीवें।।30।। इस दुर्बल वणिक के बलवन्त पुरोहित ने रत्न हरे हैं सो तुम्हारे दया है तो दिला दीजिये।।31।।

तब राजा ने कहा – हे प्रिये! समुद्र में इसका जहाज फट गया अर धन जाता रहा। जिसका धन जावे सो गहला होवे उससे अति दुखी बैड़ा भया वृथा प्रलाप करे है, उसके लज्जा नहीं।।32।। तब राणी ने कहा जो बैडा होवें सो कभी कुछ कभी कुछ कहे यह सदा एक वचन बोले है सो इसका न्याय करो। एक तो उसका समुद्र में धन गया अर पुरोहित ने रत्न दाबे सो यह बहुत दुखी है।।33।। ये राणी

के वचन सुन एकान्त में राजा ने सत्यघोष से पूछा सो नट गया, जे धन के लोभी उनके सत्य धर्म कहां? तब राजा ने राणी ही को न्याय सौंपा। राणी द्यूतक्रीडा के छल कर परखने को उद्यमी भई। आप तो पुरोहित से द्यूतक्रीडा करे। अर निपुणमति धाय को पुरोहित की प्रिया पास पठाई जो तुमको पुरोहित ने पांच रत्न दिये हैं सो देवो तव उसने न दिए। यह कही कि मैं न जानूं, पति ने इसी भान्ति सिखाय राखी था।।36।। फिर राणी द्यूत क्रीडा विषे पुरोहित का जनेऊ जीता। सो जनेऊ लेकर धाय गई तो भी पुरोहित की स्त्री ने रत्न न दिये सो पति की ऐसी ही आज्ञा थी। फिर राणी पुरोहित के हाथ में नाम कर संयुक्त मुद्रिका थी सो द्यूत क्रीडा में जीती अर वह पठाई। तब पुरोहित की प्रिया ने धाय के हाथ रत्न दिये सो ले आई। राणी द्यूत क्रीडा निवार पुरोहित को सीख दई।।38।।

वे पांच रत्न राजा को दिखाये अर राजा ने वे रत्न बहुत अपने रत्नों में मिलाय वणिक को दिखाये तब उसने अपने पांच रत्न ही उठाय लिये, पराया एक भी न उठाया। तब राजा सत्यवादी जान वणिक की बहुत शुश्रूषा करी वह सुमित्रदत्त नामा वणिक राज मान्य भया।।39।। अर राजा ने सत्यघोष पुरोहित को आज्ञा करी – जो तेरे परधन हरने की प्रीति है सो तीन दंड अंगीकार कर। या तो अपना सर्व धन दे अथवा गोवर के तीन थाल खा अथवा मल्ल की मुष्टि सहार सो वह पापी मल्ल की मुष्टि खाय मूवा आर्त्तध्यान के योग से मर कर राजा के भंडार विषे गंधमादन जाति का सर्प भया सो राजा का द्रोही।।41।। अर सत्यघोष का पुरोहित पद एक धम्मिल नामा ब्राह्मण को दिया सो भी मिथ्यादृष्टि अनर्थ विषे उद्यमी अर ये पंच रत्न बाला वणिक अपने पद्म खंड नामा नगर गया अर जैनी भया अर इनके धन बहुत भया सो महा दान किये अर इसने यह निदान बांधा जो मैं मर कर रामदत्ता का पुत्र होऊं।।43।।

अर इस वणिक की भार्या सुमित्रदत्ता उसके इससे विरोध सो मर कर व्याघ्री भई। अर यह वणिक साधुवों के दर्शन को पर्वत विषे गया था सो व्याघ्री ने खाया सो मर कर राणी रामदत्ता के सिंहचन्द्र नामा पुत्र भया सो राणी का इससे बड़ा स्नेह।।44।। अर इस सिंहचन्द्र का दूजा भाई पूर्णचन्द्र होता भया सो ये दोनों इन्द्र प्रतीन्द्र समान दिपैं इस पृथ्वी विषे ये दोनों कुमार चन्द्र सूर्य्य समान उद्योत करते भये।।46।। एक दिन राजा सिंहसेन भंडार में गया था सो वैर भाव से उस गंधमादन सर्प ने डसा तब गरुड़ मन्त्र का धारक गरुडदत्त नामा उसने मंत्र कर गंधमादन जाति के सब सर्प बुलाये सो आये।।48।। तब गारुड ने कहा एक अपराधी है सो रहो अर सब जावो तब और सब तो गये अर यह अपराधी रहा।।49।। तब इसे गारुड ने कहा– हे दुष्ट! तू अपना विष शीघ्र खैच अथवा अग्नि में प्रवेश कर तब यह पापी पृथ्वीपति के प्राणों का हर्ता विष न खैंचता भया अर अग्नि में प्रवेश कर भस्म भया सो मर गर चमरीमृग भया। अर राजा सिंहसेन मर कर शल्लकी वन विषे हाथी भया। वह धम्मिल सत्यघोष के पुरोहित पद का धारक उसी वन विषे बन्दरा भया। मिथ्यादृष्टियों को शुभ गति कहां।।52।।

अर राणी रामदत्ता के दो पुत्र सिंहचन्द्र तो पिता पीछे राज पाया अर पूर्णचन्द्र युवराज पद करे सो दोनों भाई समुद्रान्त पृथ्वी को सुख से पालते भये अर राणी रामदत्ता का पिता पोदनापुर का राजा सुपूर्ण है नाम जिसका अब उसकी राणी हिरण्यवती सो दोनों ही जिन शासन के भक्त सो राहुभद्र मुनि के निकट रामदत्ता का पिता तो मुनि भया। अर माता हिरण्यवती आर्य्यका के समीप आर्य्यका भई।।55।। सो रामदत्ता की माता आर्य्यिका अपने पति मुनि उनके मुख से यह कथा सुनी जो राजा सिंहसेन तो सर्प का डसा मर कर गज भया है। अर पांच रत्न वाला वणिक मर कर रामदत्ता के सिंहचन्द्र नामा पुत्र भया। सो राज करे है अर माता पुत्र के मोह से वैराग्य न भई। यह कथा रामदत्ता की माता सुन रामदत्ता को संबोधने आई। सो रामदत्ता भी माता के निकट आर्यका भई। अर राजा सिंहचन्द्र वणिक का जीव स्वामी राहुभद्र के समीप साधु भये अर छोटा भाई पूर्णचन्द्र राज करे सो अपने प्रताप कर सब शत्रु नवाये परन्तु सम्यक्त्व अर व्रत रहित इन्द्रियों के भोगों विषे आरक्त।।58।। अर पूर्णचन्द्र का बड़ा भाई सिंहचन्द्र रामदत्ता का पुत्र मुनि भया था सो चारण रिद्धि पाई। अर उनको अवधिज्ञान भी उपजा रामदत्ता आर्य्यिका स्वामी सिंहचन्द्र को नमस्कार कर अपने अर अपनी माता के अर पुत्र के पूर्व जन्म पूछे।।59।।

तब मुनि ने कहा – इसी भरत क्षेत्र विषे कोशल नामा देश वहां वर्द्धक नामा ग्राम उस विषे मृगायण नामा एक ब्राह्मण ।।60।। उसके पुत्री दो एक मधुरा दूजा वारुणी सो वारुणी, कहिये मदरा उसे पीय जैसे मदोन्मत्त ब्राह्मण मर कर अयोध्या विषे राजा अतिबल के श्रीमती नामा राणी उसके हिरण्यवती नामा पुत्री भई सो तेरी इस भव की माता पूर्व ले जन्म विषे तेरा पिता था सो इस जन्म विषे तेरी माता हिरण्यवती भई।।62।। अर ब्राह्मण की छोटी बेटी मधुरा सो तू राणी रामदत्ता हमारी माता भई अर ब्राह्मण की छोटी बेटी वारुणी सो तेरा लघु पुत्र पूर्णचन्द्र भया अर वह सुमित्रदत्त वणिक पांच रत्न वाला मैं सिंहचन्द्र भया तेरा पुत्र।।63।। अर हमारा पिता राजा सिंहसेन श्रीभूति का जीव जो सर्प उसने डसा सो मरकर गजराज भया उसे मैं श्रावक के व्रत दिये।।64।।

अर श्रीभूति का जीव सर्प भया सो मरकर चमरी मृग भया। फिर वह मर महा दुष्ट कुर्कट सर्प भया उसे मैं श्रावक के व्रत दिये सो अनेक उपवासों कर खेद खिन्न पारणा के दिन नदी विषे डोहल्या जल पीने को गया सो कुर्कट सर्प ने डसा जिन धर्म के प्रसाद कर गजराज तो बारहमें स्वर्ग गया। वहां श्रीप्रभु विमान विषे श्रीधर नामा देव भया सो धर्म के प्रभाव कर अनेक देवियों सहित स्वर्ग के सुख भोगे है। अर धम्मिल का जीव जिसे राजा ने पुरोहित पद दिया था सो मर कर उसी वन में बन्दर भया उसने क्रोध कर कुर्कट सर्प को मारा सो पापी तीसरे नरक गया।।68।। अर गजराज के दांतों के अस्थि अर मोती सो शृंगालदत्त भील ने धनमित्र वणिक को बेचे अर वणिक ने राजा पूर्णचन्द्र को बेचे तब

राजा वणिक से तो बहुत तुष्ट भया अर गजदन्त का सिंहासन बनवाया। उस पर बैठे है अर मोतियों का हार बनाया सो पहिरे है।

हे माता! देखो संसार की विचित्रता! मोह के उदय से प्राणी क्या क्या चेष्टा करे है यह विपरीत देखो।।71।। यह कथा रामदत्ता आर्य्यिका स्वामी सिंहचंद्र के मुख से सुन आप आयकर महा प्रमाद रूप जो पूर्णचन्द्र उसे सकल वृत्तान्त कह संबोधा। सम्यक्त्व सहित श्रावक के व्रत लिवाये दान, पूजा, तप, शील पार कर बारहमें स्वर्ग में जहां सिंहसेन का जीव गज की पर्य्याय से गया है वहां ही पूर्णचन्द्र का जीव वैडूर्य्य प्रभ विमान विषे देव भया अर रामदत्ता आर्यका भी व्रत के प्रभाव से उसी स्वर्ग विषे प्रभंकर विमान में सूर्यप्रभ नामा देव भया।।74।। अर सिंहचन्द्र मुनि चार आराधना आराध ग्रैवेयक विषे प्रीतंकर विमान में अहमिन्द्र भया।।75।।

अथानन्तर – राणी रामदत्ता का जीव सूर्यप्रभ नामा देव वहां से चयकर विजयार्द्ध की दक्षिण श्रेणी विषे धारिणी तिलक नामा नगर उस विषे।।76।। अतिवल नामा राजा उसकी राणी सुलक्षणा उसकी श्रीधरा नामा पुत्री भई। रामदत्ता के भव विषे तप बहुत किया सो देवायु दीर्घ बांधी उसकर देव भया देवी न भई, देवियों का आयु अल्प है।।77।। सो माया अर मिथ्यात्व के योग से देव पर्य्याय विषे स्त्री पर्याय का बंध किया सो चयकर श्रीधरा भई। सो श्रीधरा के पिता अतिबल ने अपनी पुत्री अलकापुरी के पति राजा सुदर्शन को परनाई। उसके पूर्णचन्द्र का जीव जो वैडूर्य्यप्रभ विमान विषे देव था सो राणी श्रीधरा के उदर विषे यशोधरा नामा पुत्री भई।।78।। सो उत्तर श्रेणी में प्रभाकरपुर का पति राजा सूर्य्यावर्त्त से विवाही। उसके राजा सिंहसेन रानी रामदत्ता का पति गज की पर्य्याय से सहस्रार सो बारहवां देवलोक उसमें श्रीप्रभा विमान में श्रीधर नामा देव हुआ था सो चयकर यशोधरा के रश्मिवेग नामा पुत्र भया।

देखो संसार का चरित्र, यशोधरा का जीव राजा सिंहसेन का पूर्णचन्द्र नाम पुत्र था सो दैव योग करके यशोधरा विद्याधरी भई। उसके राजा का जीव पुत्र हुवा सो पुत्र से माता हो गई रानी रामदत्ता राजा सिंहसेन की स्त्री थी सो रश्मिवेग के भव विषे श्रीधरा नामा नानी हो गई। ऐसा जगत् का चरित्र है।

अथानन्तर – रश्मिवेग का पिता सूर्य्यावर्त्त प्रभाकरपुर का पति रश्मिवेग को राज्य देकर आप मुनिचन्द्र मुनि के निकट मोक्ष के अर्थ महाव्रत धारे।।80।। महातप किया अर रश्मिवेग की माता यशोधरा अर नानी श्रीधरा यह दोनों सम्यक् दर्शन की धरणहारी गुणवती आर्य्या के समीप आर्य्यका भई।।81।। एक दिन राजा रश्मिवेग सिद्धकूट चैत्यालय के दर्शन को गया था सो हरिचन्द्र मुनि के पास धर्म सुनकर मुनि भया।।82।। सो एक दिन कांचन नामा गुफा उस विषे जिन आगम की ध्वनि करता था। अर वह दोनों आर्या मुनि की माता और नानी बंदना को आई थीं सो उस मुनि के समीप तिष्ठी थीं। अर वह पापी सत्यघोष का जीव मर कर सर्प भया, फिर चमरी मृग भया, पुनः कुर्कट सर्प भया,

कुर्कट सर्प मर कर तीसरे नरक में गया। उस नरक से निकलकर इसी कांचन गुफा विषे अजगर भया।।84।। सो रश्मिवेग मुनि कायोत्सर्ग धर खडे थे अर ये दोनों आर्यका तिष्ठी हुई थीं सो अजगर उन तीनों को निगल गया, बडा है उदर जिसका।।85।। सो रश्मिवेग मुनि मर कर आठवें स्वर्ग विषे रुचक नामा विमान में अर्कप्रभ नामा देव भया, श्रेष्ठ है बुद्धि जिसकी अर अजगर मरकर रौद्र ध्यान के योग से पाप रूपी कींचड से मलीन पंकप्रभा जो चौथा नरक वहां गया।।87।।

अथानन्तर – चक्रपुर नामा नगर उस विषे राजा अपराजित रानी सुन्दरी उनके पांच रत्न वाला वणिक मर कर रानी रामदत्ता का पुत्र सिंहचन्द्र भया था सो पीछे मुनिव्रत धार अहमिंद्र भया था सो चयकर चक्रायुध नामा पुत्र भया, उसकी स्त्री चित्रमाला उसके उदर विषे राजा सिंहसेन का जीव जो गज की पर्याय से बारहवें देवलोक गया था सो वहां से चयकर रश्मिवेग नामा विद्याधर भया था अर रश्मिवेग के भव से आठवें स्वर्ग में गया था वहां से चयकर चक्रायुध का पुत्र वज्रायुध भया।।90।। अर एक पृथ्वीतिलक नामा नगर वहां राजा प्रियंकर उसकी रानी अतिवेगा उसके श्रीधरा आर्यका का जीव जो स्वर्ग विषे देव हुआ था सो चयकर रत्नमाला नामा पुत्री भई यह रानी रामदत्ता का जीव है।।91।। सो रत्नमाला राजा प्रियंकर ने चक्रायुध के वज्रायुध को परणाई। उसके यशोधरा आर्यका का जीव देवलोक से चयकर रत्नायुध नामा पुत्र भया।

अथानन्तर – राजा चक्रायुध अपने वज्रायुध पुत्र को राज्य देकर स्वामी पिहताश्रव के समीप मुनि होय मोक्ष गये। अर वज्रायुध भी अपने पुत्र रत्नायुध को राज्य देकर मुनि भये। अर रत्नायुध मिथ्यात्व के योग से मदोन्मत्त भया वह पूर्णचन्द्र का जीव है।।93।। एक दिन रत्नायुध का पाट हस्ती जल के अवगाहने अर्थ गया सो मुनि का दर्शन कर पूर्व भव स्मरण भया। सो श्रावक के व्रत धारे सो न अयोग्य जल पीवे, न अयोग्य आहार करे।।94।। हाथी का नाम मेघनिनाद था सो राजा को अति बल्लभ सो राजा ने हाथी का वृत्तान्त न जाना तब बज्रदत्त मुनि को पूछी उन्होंने कही।।95।।

एक चित्रकार नगर उस विषे राजा प्रीतिभद्र उसकी रानी सुन्दरी उसका पुत्र प्रीतंकर अर राजा के मंत्री चित्रबुद्धि उसकी स्त्री कमला, अर पुत्र विचित्रमति। राजा का पुत्र अर मंत्री का पुत्र यह दोनों ही स्वामी श्रुतसागर के समीप तप का फल सुनकर तरुण अवस्था में ही मुनि भये।।98।। सो यह दोनों नाना प्रकार के तप करते हुए अर निर्वाण क्षेत्र का दर्शन करते हुए एक समय अयोध्या में आये।।99।। सो मंत्री का पुत्र नगर में आहार करने को गया था सो बुद्धिसेना नामा वेश्या अति रूपवती थी उसको देखकर कर्म योग से वह निर्लज्ज भ्रष्ट भया सो उसको वेश्या ने निर्धन जान कर न स्वीकार किया।।100।।

वहां राजा गंधमित्र सो दुराचारी मांसाहारी था उसके यह पापी रसोइया हो रहा। मांस की विधि विषे प्रवीण होने से राजा प्रसन्न हुआ, सो राजा ने कहा – कुछ मांग तब उसने वेश्या मांगी।।1।। सो

असंयमी वेश्या का सेवन कर अर मांसाहारी मरकर सातवें नरक में गया।।2।। वहां से निकल कर संसार वन विषे बहुत भ्रमण किया। संसार में सार नहीं, बहुत भ्रमण कर यह हाथी भया सो साधु के दर्शन से जाति स्मरण भया।।3।। सो अब यह अपने पापकर्म की निन्दा करता सन्ता शान्तता को प्राप्त भया है। यह मुनि के वचन सुनकर नरेन्द्र अर गजेंद्र दोनों ही मिथ्या रूप कलंक को त्यागकर श्रावक भये।।4।। अर अजगर का जीव चौथे नरक गया था सो वहां से निकलकर दारुणनामा भील उसकी मंदी नामा स्त्री के अतिदारुण नामा भील भया।।5।। अर वज्रायुध नामा मुनि राजा सिंहसेन का जीव प्रियंगु खंड नामा वन विषे ध्यान धर विराजे थे उनको वह पापी अति दारुण भील उपसर्ग करता भया। सो मुनि उपसर्ग सह सर्वार्थसिद्ध गये। अर भील अतिदारुण सातवें नरक गया। सो मुनि हत्या के योग से महा भयंकर दुःख भोगता भया अर वज्रायुध की स्त्री रत्नमाला रत्नायुध पुत्र के मोह से आर्य्या न हो सकी श्राविका ही के व्रत में महा तप किये। अर रत्नायुध यह दोनों माता पुत्र अणुव्रत के प्रभाव से सोलहवें स्वर्ग में उत्कृष्ट देव भये।।8।।

अथानन्तर – धातकी खण्ड द्वीप विषे पूर्व मेरु से पश्चिम विदेह विषे गन्ध्य नामा देश में अयोध्या नामा पुरी।।9।। राजा अरहदास उसकी दो स्त्री एक सुव्रता दूसरी जिनदत्ता। उनके वह दोनों सोलहवें स्वर्ग के निवासी देव बलभद्र नारायण पुत्र भये। सुव्रता के बीतभय नामा बलभद्र भया अर जिनदत्ता के विभीषण नामा वसुदेव भया।।10।। यह दोनों राजा अरहदास के पुत्र सो छोटा पुत्र विभीषण पहिले नरक में गया। अर वीतभय नामा बलभद्र बड़ा भाई अनिव्रत नामा मुनि के समीप तप करके लांतव स्वर्ग में इन्द्र भया सो मैं हूं मेरा आदित्यप्रभ नाम, सो मैं प्रथम नरक में विभीषण के जीव को समझाया।।12।। सो सम्यक्त्व को प्राप्त भया नरक से निकल कर जम्बूद्वीप के विदेह विषे गन्धमालिनी देश विजयार्द्धगिर उस विषे राजा श्रीधर्मा उसकी रानी श्रीदत्ता उसके श्रीदाम नामा पुत्र भया सो मैं संबोध्या।।14।। तब वह श्रीदाम अनन्तमति स्वामी के निकट साधु के व्रत धारण कर पांचवें स्वर्ग में चन्द्राभ विमान विषे इन्द्र भया।।15।। अर वह भील का जीव सातवें नरक से निकलकर भुजंग भया सो मरकर पहिले नरक में गया वहां से निकल कर तिरयंच गति विषे बहुत भ्रमण करके दुःखी भया।।16।।

फिर एरावती नदी के तट पर भूतरमण नामा वन विषे माली नामा तपस्वी उसकी कनककेसी नामा नारी, उसके मृगशृंग नामा तापस भया सो मृग समान मूर्ख पंचाग्नि तप करता भया। एक दिन चन्द्रप्रभ विद्याधर को आकाश विषे जाता देखकर यह निदान करता भया, जो तप के प्रभाव से मैं विद्याधरों की विभूति पाऊं। सो निदान के योग से वज्रदंष्ट्र नामा विद्याधर उसकी स्त्री विद्युत् प्रभा नामा उसके गर्भ विषे यह विद्युद्दंष्ट्र नामा विद्याधर भया अर वज्रायुध मुनि का जीव सर्वार्थसिद्धि

गया था सो वहां से चयकर संजयन्त मुनि भये अर तू महेंद्र वहां से चयकर जयन्त नामा संजयन्त का भाई था, सो मरकर निदान के योग से तू धरणेंद्र भया।।11।। श्रीभूति पुरोहित जो सत्यघोष कहावता था जिसे सिंहसेन ने एक भव विषे मारा था, सो उसने बहुत जन्म वैर लिया सो वैर कर मारणहारे को मारे है सो अपने गुणों का नाश करे है। अर सुख में विघ्न करे है। राजा सिंहसेन तो गज के जन्म विषे वैर त्यागकर संजयन्त के भव विषे सिद्ध भए। अर तू वैर के योग से भव भ्रमण करे है। इससे हे धरणेंद्र! तू वैर की बुद्धि को तज। यह वैर भयंकर संसार का बढ़ावन हारा है सो तू किसी जीव के साथ बैर मत कर अर मिथ्यात्व छोड़। इस भांति आदित्यप्रभ नामा देव लौकान्तिक स्वर्ग का इन्द्र उसने धरणेंद्र को संबोधन किया। तब बैर तजा अर संसार समुद्र का तारक सम्यक्त्व गहा।।24।।

धरणेंद्र ने विद्याधरों को जीव दान तो दिया परन्तु विद्या खण्डित करी सो कटी पांख के पक्षी की न्याईं लंडूर हो गए तब धरणेंद्र से विद्याधरों ने विनती करी, हे देव! हमको विद्या की सिद्धि कैसे होय? तब नागेन्द्र ने कहा – तुम सब विद्याधर स्वामी संजयन्त स्वामी की पवित्र प्रतिमा पांच सौ धनुष ऊंची ताहि हिमवन्त पर्वत पर पधराओ।।26।। अर प्रतिमा के चरणारविन्द के समीप तपश्चरण करो कायक्लेश कर तुमको चिरकाल में विद्या सिद्ध होगी अर आज ही के दिन से विद्युद्दंष्ट की सन्तान विषे रोहणी प्रज्ञप्ती गौरी यह तीनों विद्या इनको सिद्ध न आयेंगी। दूसरे पुरुषों को तपश्चरण कर सिद्ध होयगीं इस भांति नागेन्द्र ने आज्ञा करी तब विद्याधर इसी भांति करते भए। अर धरणेंद्र की बहुत स्तुति करी बारम्बार नमस्कार करते भये। देव तो अपने स्थानक गए। अर विद्याधर विद्या के अर्थी हिमवन्त पर्वत पर संजयन्त स्वामी की सुवर्ण रत्नमई प्रतिमा स्थापते भये। अर नाना प्रकार उपकरण पधराए।।30।।

यह कथा गौतम स्वामी ने राजा श्रेणिक से कही। हरी है विद्या जिनकी ऐसे विद्याधर या हिमवन्त पर्वत पर नम्रीभूत होय तिष्ठे तातैं इसका नाम लोग ह्रीमन्त कहे हैं।।31।। अर लांतवेंद्र का जीव स्वर्ग से चयकर मथुरापुरी विषे राजा रत्नवीर्य्य महा विभूतिवान् उसकी रानी मेघमाला उनके मेरुनामा पुत्र भया।।32।। अर उस ही राजा के दूसरी रानी अमित प्रभा उसके धरणेंद्र का जीव मन्दर नामा पुत्र भया।।33।। चन्द्रमा समान अति सुन्दर दोनों भाई तरुण अवस्था ही विषे संसार का त्याग कर श्रेयांसनाथ जिनेन्द्र के शिष्य भए।।34।। बड़ा भाई मेरु सुमेरु सारिखा अचल केवलज्ञान पाय मुक्त भए। अर मन्दराचल समान महा निश्चल छोटा भाई मंदर गणधर पद को प्राप्त भए।।35।। यह संजयन्त स्वामी का चरित्र तीन लोक विषे प्रसिद्ध अति भक्ति भाव से भव्य जीव भलीभांति सुनें। कैसे हैं भव्य, जिन-पद के प्राप्त होयवे की है इच्छा जिनकी।।36।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ संजयन्तपुराणवर्णनो नाम सप्तविंशः सर्गः।।27।।

अट्ठाईवाँ सर्ग

अथानन्तर – गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहते भए – हे श्रेणिक! अब तू वसुदेवकुमार का वृत्तान्त सुन। वसुदेव वेगवती के वियोग को प्राप्त भया उद्यान भ्रमण करे। कैसा है वसुदेव, पवित्र है पुरुषार्थ जिसका सो वन में भ्रमण करता तापसियों के आश्रम गया वहां तापस राजकथा, युद्धकथा, कामकथा विषे आसक्त तिनको जिनपति के सेवक यदुपति कहते भए – तुम काहे के तापस हो यह तापस का धर्म नहीं, जो युद्धकथा, कामकथा करे तापस तो तप कर मुक्त होय अर मौन धारण से तप करे, तप में वृथा कथन योग्य नहीं। इससे मौन गहि मन को रोक प्रभु का ध्यान धरो – यह वार्ता वसुदेव ने कही।

तब वह कहते भए – हम नव दीक्षित हैं इससे चित्त की वृत्ति चंचल है मौन धारण नहीं सधे है अर हम किस कारण से तापस भए हैं, सो सुनो। यहां श्रीवस्ती नामा नगरी वहां राजा एणीपुत्र महा पराक्रमी पृथिवी का पति।।5।। उसके प्रियंगु सुन्दरी नामा पुत्री सो लोक विषे प्रकाशमान उस समान अर सुन्दरी नहीं, उसके स्वयम्बर के अर्थ हम बड़े बड़े राजा उसके पिता ने बुलाए हुए थे, सो किसी कारण कर उस कन्या ने एक को भी स्वीकार न किया। जैसे बन की हथिनी वन सिवाय अन्य गज को न ग्रहण करे जब उसने कोई भी स्वीकार न किया तब हम सब विलषे होय भेले भए। अर कन्या के पिता से युद्ध का उद्यम किया सो जैसे एक सूर्य हजारों मनुष्यों के नेत्रों को संकोच रूप करे, तैसे उस एक ने हम सब हराए तब कई एक जे महा अभिमानी थे। वह तो रणभूमि विषे प्राण त्याग करते भए। अर हम सब गंभीर वन में प्रवेश करते भए। जैसे सूर्य की किरणों से भाग कर तिमर का समूह गहन वन में प्रवेश करे तैसे हम तिमर समान अग्याण गम्भीर वन में बैठे हैं।।11।।

हम धर्म का स्वरूप नहीं जाने हैं तुम हमको धर्म का उपदेश करो। तुम्हारे वचन कर ऐसा जाना जाय है जो तुम तत्त्व के ज्ञाता हो जिनधर्मी हो। इस भान्ति तपसियों ने कही तब वसुदेव उनको कहते भये। धर्म के दो भेद हैं – एक यती का धर्म है दूजा श्रावक का धर्म है। यह दोनों ही धर्म कल्याण के कारण हैं सम्यक्त्व सहित जो महाव्रत तथा अणुव्रत धारे उस ही का जन्म सफल है, विस्तार कर दोनों धर्म यदुपति ने उनको कहे तब वे श्रद्धावान होय अपने अपने स्थान को गये, यथायोग्य व्रत धारे।।13।। अर यदुपति राजा एणीपुत्र की प्रियंगसुन्दरी उसके लाभ के लोभ कर श्रावस्ती नगरी गये। वह नगरी समस्त वस्तु के विस्तार कर प्रसिद्ध है।।14।। वहां बाह्य उद्यान विषे एक कामदेव का मंदिर उसके अग्रभाग विषे सुवर्ण का तीन पावों का कृत्रिम भैंसा था, उसे देखते भये। अर किसी से पूछा, यह तीन पांवों का भैंसा सुवर्ण रत्नमई कौन कारण बनाया है, तब उसने कही – हे आर्य्य! इसी

नगरी विषे इक्ष्वाकुवंशी राजा जितशत्रु उसके पुत्र मृगध्वज।।17।। अर इसी नगरी विषे सेठ कामदत्त सो एक दिन अपने चतुष्पद पशु देखने आया तब एक बालक भैंसा महादीन सेठ के पांवों पड़ा तब सेठ ने ग्वाल से पूछी यह क्या आश्चर्य है तब ग्वाल ने कहा यह भैंसा जन्मा उसी दिन मेरे पांवों पड़ा तब मुझे अति दया उपजी, तब वन विषे मुनि को नमस्कार करके पूछा।।20।। हे प्रभो! इस भैंसे पर मेरी अति करुणा इसका कारण कहो, तब मुनि ने कहा – हे ग्वाल! तू सुन।।21।।

तेरे यह भैंस उसके उदर विषें यह पाँच वार भैंसा भया, सो तैंने मारा छठी बेर इसी भैंस के यह फिर बालक भया। सो तुमको देख इसे भव स्मरण भया। इससे डर कर तेरे पांवों पडता है कि अब तू मुझे मत मार।।23।। यह वचन मुनि ने कहे तब मैं इसे पुत्र की न्याईं पाला। अब भी यह जीतव्य का अर्थी तुम्हारे पांवों पडा है।।24।। यह वचन ग्वाल के सुन कर सेठ दया कर भैंसे को नगर में ले आया अर राजा से अभयदान दिलाया।।25।।

एक दिन पूर्वभव के वैर से राजा के पुत्र मृगध्वज ने भैंसे का एक पग तोडा तब राजा ने पुत्र को मारने की आज्ञा करी सो राजा का मंत्री बुद्धिमान था, सो छल करि कुंवर को वन विषे ले गया। मुनि का दर्शन कर कुंवर मुनि भया। अर भैंसा पग तोडे पीछे अठारहवें दिन शुभ भावसों मूवा अर राजकुमार मुनि भये पीछे बाईसवें दिन शुक्लध्यान के प्रभाव से केवली भये।।28।। सो केवली की पूजा को चतुर्निकाय के देव आये अर मनुष्य आये, तिन्होंने पूजा करी। अर राजा जितशत्रु भी केवली के दर्शन को आया। उसने भैंसे से बैर का कारण पूछा, तब मृगध्वज केवली कहते भये अर देव दानव मानव सब ही सुनते भये। कथा को सुन कर वे संतुष्ट भया है चित्त जिनका सो कर्णपुट कर के कथा रूप अमृत का पान करते भये।।30।।

केवली कहे हैं – पहिला नारायण त्रिपृष्ठ उसका शत्रु अश्वग्रीव अलकापुरी का पति विद्याधरों का ईश पहिला प्रतिनारायण पृथिवी विषे प्रसिद्ध।।31।। उसका मंत्री हरिस्मश्रु तर्कशास्त्र का पाठी पंडिताई में प्रसिद्ध सो नास्तिक।।32।। सो एकान्तवादी एक प्रत्यक्ष प्रमाण ही माने। परोक्ष प्रमाण न माने जो वस्तु प्रत्यक्ष न दीखे सो नहीं उसके यह श्रद्धा।।33।। जो पृथिवी अप, तेज, वायु इनके मिलाप से चैतन्य शक्ति प्रगट होय है जैसे मदिरा की सामग्री मिले मद शक्ति प्रगटे है।।34।। सो यह लौकिक व्यवहार है जो जीव है पृथिवी अप तेज वायु टार कोई अर जीव नहीं। अब तक जीव को किसी ने नहीं देखा।।35।। पाप पुण्य का कर्ता अर सुख दुःख का भोक्ता जीव पदार्थ नहीं जो जीव होता तो किसी की दृष्टि में तो आता सो देखने के अभाव से जीव नहीं।।36।।

अर यह देव नारकी मनुष्य, तिरयंच अज्ञानियों ने विकल्प उठाय लिया है परलोक विषे सुख दुःख का भोक्ता कोई पदार्थ नहीं। परलोक है ही नहीं, इससे न कोई मोक्ष अर न कोई मोक्ष का

जानेहारा। सब वार्ता अप्रमाण हैं। यह पृथिवी आदि तत्त्व तिनका मिलाप सो जन्म अर इनका वियोग सो मरण है इससे परलोक के अर्थ संयम धारण वृथा ही भोग का नाश करणा है। ऐसी खोटी श्रद्धा कर मोहित वह मंत्री आगम प्रमाण से रहित जीवादिक पदार्थों को न माने जिसके निकट कोई परलोक की कथा न कर सके निरंतर खोटी कथा उस ही का श्रवण सदा काम भोग विषे आसक्त धर्म द्रोही।।41।। वह पापी नास्तिक परलोक का न मानने वाला तीर्थंकर चक्रवर्त्यादि महा पुरुषों की जिसके श्रद्धा नहीं मंत्री महा खोटी चेष्टा का धारक धर्म से विमुख अज्ञान रूप तिष्ठे।।42।। जब त्रिपृष्टि नारायन का अर अश्वग्रीव का युद्ध भया। तब त्रिपृष्टि ने अश्वग्रीव मारा अर विजय नामा बलभद्र ने हरिश्मश्रु मंत्री मारा सो अश्वग्रीव अर हरिश्मश्रु दोनों नरक को गये चिरकाल भ्रमण कर अश्वग्रीव का जीव तो मैं मृगध्वज भया अर हरिश्मश्रु का जीव यह भैंसा भया। सो पहिले जन्म में दोष उपजा हुआ था सो कोप कर मैंने इस भैंसे का पांव तोड़ा।।46।। सो अकाम निर्जरा के योग से यह भैंसा लोहित नामा महा असुर भया। सो अब यह भी वन्दना भक्ति को आया है।।47।।

केवली कहे हैं – हे राजन्! इस लोक विषे सब जीवों से मित्र भाव ही करना क्रोध का सम्बन्ध है सो जीवों को अन्ध करवे समर्थ है। इससे हे राजन्! जे मोक्षाभिलाषी हैं वे क्रोध को वश कर शांत भाव को अंगीकार करो। शान्त भाव ही शिवपद का कारण है। यह कथा सुन राजा आदि अनेक जन जिन दीक्षा धारते भए। अर वह महिषासुर कपट कर रहित भया। माया मिथ्यात्व त्याग कर शोभता भया। अर सब ही सभा के लोक केवली के शब्द सुन कर प्रतिबोध को प्राप्त भये।।49।। सब ही सुर असुर नर केवली को नमस्कार कर अपने अपने स्थान को गए। अर मृगध्वज केवली आयु पूर्ण कर परम धाम को सिधारे।।50।। जो शुद्ध व्रत का धारणहारा अपने मन विषे महिष अर मृगध्वज का चरित्र निरन्तर धारण करे सो सम्यक्त्व की शुद्धता को पावे वह भव्य जीव जिनभाषित पदार्थों का श्रद्धान करे।।51।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुरासंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ मृगध्वजमहिषव्याख्यानवर्णनो नाम अष्टाविंशः सर्गः।।28।।

जे वीतराग के मार्ग में प्रवर्तेंगे वे शिवपुर पहुँचेंगे। इसलिए जे भव्यजीव हैं वे जिनमार्ग की दृढ़प्रीति कर अपनी शक्तिप्रमाण व्रत का आचरण करो जो पूर्णशक्ति होय तो मुनि होवो अर न्यून शक्ति होय तो अणुव्रत के धारक श्रावक होवो।

– पद्मपुराण भाषावचनिका, पृष्ठ 726

उनतीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – कामदेव सेठ ने चैत्यालय के आगे जहां लोगों का आगमन होय वहां मृगध्वज केवली की प्रतिमा थापी अर उसके निकट महिष की मूर्ति स्थापी।।1।। अर इसी ठौर कामदेव अर रति की मूर्ति थापी अनेक लोग कामदेव अर रति मूर्ति देखने आवें। अर मृगध्वज अर महिष की मूर्ति देख इनका वृत्तान्त सुने सो सुन कर बहुत जीव प्रतिबोध को प्राप्त होय हैं।।2।। यह चैत्यालय प्रसिद्ध है अर यह वृत्तान्त बहुत जाने हैं कई एक जीव यहां आप धर्म की श्रद्धा को प्राप्त होय हैं सो कामदत्त सेठ की सन्तान में अनेक पुरुष भये हैं। इस समय उनका सन्तान में कामदेव सेठ है उसके रूप यौवन कर पूर्ण चन्द्रवदनी बंधुमती नामा पुत्री है सो बन्धु जनों को आनन्द उपजावे है। सो कन्या के पिता ने निमित्त ज्ञानी को पूछा था जो मेरी कन्या का वर कौन होयगा तब उसने कहा जो कामदेव के मन्दिर का पाट उघारे सो कन्या का वर सो यह वचन वसुदेव सुन कर तहां गया कामदेव के मन्दिर के द्वार बत्तीस आगम मूसला थी सो तत्काल यदुपति उघाड़ कर जिनपति के दर्शन को गया। प्रभु की पूजा करी बाहर आय आंगन विषें मृगध्वज अर महिष की मूर्ति देखी। अर कामदेव और रति की मूर्ति देखी।।10।। उसी समय सेठ को खबर भई सो हर्षित होय वसुदेव को बन्धुमती परणावता भया। सुन्दर है वदन जिसका।।11।।

कामदेव सेठ की कन्या का कन्त यदुपति भया। सो यदुपति का रतिपति से भी अधिक रूप है यह वार्ता सब नगर में प्रसिद्ध भई। जहां सुनिये तहां वसुदेव की बात, राजा के रणवास के लोग भी वसुदेव को देखने गये सो राजा की पुत्री प्रियंगु सुन्दरी जिसके अर्थि इस पुर में यदुपति आये हैं सो भी इनको किसी प्रकार देख कर अति अनुरागनी हुई।।14।। ऐसी मोहित भई जो उसे खान पान भी न रुचे सो वह प्रियंगु सुन्दरी की यह बन्धुमती सेठ की पुत्री सखी है सो वह अपनी सखी से एकान्त विषे पूछती भई। जो तू भर्ता के अति बल्लभ है सो अपने पति की प्रवीणता की वार्ता हमको भी कहो।।15।।

तब वाने वसुदेव की प्रवीणता की सब वार्ता उससे कही सो वह सुनकर अति विह्वल हो गई।।16।। सो अभिमान छोड़ कर इनके द्वार ही आई तब उसे आई सुन वसुदेव को चिन्ता उपजी जो यह अपनी इच्छा से आई सो आदर योग्य नहीं अर इसे मारिये तो स्त्री हत्या लगे सो अनुचित है। तब विचार कर यादव ने किसी मिसकर काल क्षेप किया।।18।। आप तो बंधुमती सहित एक सेज पर सोया अर वह अलग बन्धुमती के महल में सोई अर रात्रि समय एक नागकुमारी देवी ज्वलनप्रभ

नामा देव की स्त्री अचानक आ गई।।19।। सो अपने आभूषणों की कान्ति कर प्रकाश रूप करी है सब दिशा जिसने, नाग का है चिह्न जिसके उसे देख कर वसुदेव आश्चर्य्य को प्राप्त भया। चित्त में चिंतवे है कि यह दिव्य स्त्री कौन है।।21।।

तब उस देवी ने वसुदेव को बुलाय कर प्रिय वचन कहे। वह देवी महा विनयवान है अर मिष्ट वचन बोलने विषे अति प्रवीण है देवी वसुदेव से कहे है – हे धीर वीर! मेरे आगमन का कारण सुन जिस करके तेरे कान तृप्त होंय जैसे अमृत रस कर तृप्ति होय।।23।। हे कुमार! एक चंदनवन नामा नगर वहां राजा अमोघदर्शन अरिमंडल का जीतनहारा, प्रबल है पराक्रम जिसका उसकी राणी चारुमती अर चारुचंद्र नामा पुत्र सो महानीतिवान् बलवान् पुरुषार्थ कर मंडित अर नवयौवन कर शोभित उस नगर में एक रंगसेना नामा गणिका कला अर गुणों कर मण्डित उसकी पुत्री कामपताका सो मानो काम की ध्वजा ही हैं।।26।।

अथानन्तर – कई एक दिनों में राजा अमोघदर्शन धर्म की नहीं है परख जिसके सो यज्ञ के मार्ग की श्रद्धा करता भया। वहां कौशिकादिक जटाधारी अनेक तापस आये।।27।। सो तापस राजा की सभा में बैठे, राजा ने कामपताका को नृत्य की आज्ञा करी। सो कामपताका नृत्य कला कर सब मनुष्यों का मन हरती भई। कौशिक नामा तापस फल पत्र का आहारी उसका मन चलायमान भया तो अर की क्या कथा राजा के यज्ञ विधान निर्वृत्य भया। तब वह कामपताका राजा के पुत्र ने अंगीकार करी तब यह तापस राजा पै आये राजा को अपने भक्त जान कहते भये – यह कन्या कौशिक को दे तब राजा ने कही कन्या तो मेरे कुंवर ने वरी।।31।। तब कौशिक क्रोध कर राजा से कहता भया। मैं सर्प होकर तुझे डसूंगा। इस भाँति क्लेश कर कौशिक गया तब राजा अमोघदर्शन डरा पुत्र को राज दे आप राणी चारुमती सहित तापस भया। सो राणी को एक दो मास का गर्भ जिसे कोई भी न जाने सो तापसनी के आश्रम विषे ऋषिदत्ता नामा पुत्री भई।।34।। सो बड़ी भई एक दिन वन में चारण मुनि आये उनके समीप ऋषिदत्ता ने जिनधर्म का श्रद्धान किया। फिर वह कन्या यौवन अवस्था विषे अति रूपवान भई जिसको देख संसारी जीवों के मन अर नेत्र मोहित होवें।

अथानन्तर – श्रावश्री नगरी का पति राजा शान्तायुध का पुत्र शीलायुध सो तापसी के आश्रम आया सो ऋषिदत्ता तापस कन्या अकेली ही थी। उसने शीलायुध को मनोहर आहार कराया। यह दोनों ही तुल्य रूप सो इनके प्रेम बढ़ा जो चिरकाल की मर्य्यादा थी उसे तोड़ एकान्त विषे संगमकर दोनों एक होय यथेष्ट रमते भये। जब राजकुमार चला तब यह तापस कन्या भय की भरी कहती भई – हे नाथ! मुझे कदाचित् गर्भ रहे तो क्या कर्तव्य है सो कहो। तब उसने कही – हे प्रिये! तू व्याकुल

मत होवो मैं कहूं सो सुन, मैं श्रावश्री नगरी का पति इक्ष्वाकुवंशी राजा शान्तायुध का पुत्र हूं शीलायुध मेरा नाम है। सो तू पुत्र सहित मेरे पास आइयो।।41।।

इस भाँति तापस कन्या को राजकुमार धैर्य्य बन्धाया इसे उरसों लगावता भया। इतने में ही कटक आया तब कटक सहित शीलायुध तो श्रावश्री नगरी गया, उसके गये पीछे कन्या के माता पिता ने कन्या को डराई अर कहा – हे निर्लज्ज! तूने यह क्या काम किया? तब उस कन्या ने माता पिता से सकल वृत्तान्त कहा।।44।। नवमें मास वह तापस पुत्री पुत्र को जनती भई सो पुत्र पिता समान रूपवान होता भया। अर प्रसूति समय तापस पुत्री तो काल वश भई।।45।। सो मर कर चारण मुनि के उपदेश के प्रभाव कर ज्वलनप्रभ नामा नागकुमार के मैं बल्लभा भई सो अवधिकर पहला भव जाना।।46।। तब दया अर स्नेह के वश से वन के विषे माता पिता जो थे अर बालक पुत्र जो था वहां मैं आई माता पिता शोककर तप्तायमान थे उनको धीर्य्य बन्धाया अर पुत्र बालक था उसे गोद में उठाय लिया अर मृगी का स्वरूप कर मैं बालक को दूध चुघाय बड़ा किया। अर मेरा पिता अमोघदर्शन उसे पूर्व वैर से कौशिक तापस मर कर सर्प होय डसा सो मैं अमोघ मंत्र कर निर्विष किया अर धर्मोपदेश कर वह जो क्रोध कर दूषित था सो क्षमा रूप किया।।49।।

अर उसी के दया रूप श्रद्धा न थी सो उसे करुणा भई जिन धर्मी किया। सो मरकर उत्तम गति को गया। अर मैं ऋषिदत्ता तापसनी का रूप कर पुत्र को ले राजा शीलायुध पै गई अर उसे कहती भई – हे राजेन्द्र! यह एणीपुत्र नामा तिहारा पुत्र राजलक्षण करके मंडित इसे तू ग्रहण कर। तब राजा ने कही मैं अपुत्र मेरा पुत्र कहां।।52।। अर हे तापसनी! तूने यह पुत्र कहां पाया?

तब मैं आद्योपान्त सकल वृत्तान्त कहा तब राजा पुत्र को लेता भया। अर मैं पुत्र के स्नेहकर मोहित भई राजा के भाँति भाँति के प्रताप बढ़ावती भई हम देव हमको कठिन कहा। अर राजा शीलायुध को परम जिनधर्मी किया। कईएक दिन में राजा अपने एणीपुत्र को राज देय मुनि भया। सो स्वर्ग लोक गया अर एणीपुत्र राजकुमार राज करे।।56।। ताके प्रियंगुसुन्दरी नामा महा सुन्दर कन्या स्वयंबर विधान विषे किसी राजकुमार को न परनतीं भई वह कन्या काम भोग से विरक्त एक दिन तुमको बन्धुमती सहित देखती भई।।58।। सो जबसे तुम देखे तबसे वह कन्या काम वाण कर बेधी गई है सो उसे चैन नहीं, इससे हे धीर! मेरे वचन से तुम उसे अंगीकार करो अर तुम्हारे मन में यह आशंका है जो अदत्तादान मैं कैसे लूं। इसका पिता परनावे जब मैं परणूं सो इस राज्य कुल की सब मर्यादा विषे मैं अधिष्ठाता हूं अर यह राजा एणी पुत्र मेरे पूर्व भव का पुत्र है इनके घर में करता धरता मैं हूं।।60।।

मैं कन्या तुझको दई तब माता पिता सबने दई इससे तुम्हारा संगम होवे। ऐसा कह वह कन्या का कर वसुदेव को पकड़ाया उसी रात्री विषे उनका पाणी ग्रहण भया। अर देवी वसुदेव से कहती भई हम अमोघदर्शन हैं हमारा दर्शन निष्फल न जाय तो तू वर मांग। तब वसुदेव ने यह वर मांगा मैं तुमको चितारूं जब ही मेरी सहाय को आवो। तब देवी ने कहा यही वचन प्रमाण है तुम सुख से रहो। ऐसा कहकर देवी तो अपने स्थान को गई। अर वसुदेव देवी के वचन प्रमाण कर कामदेव के मंदिर विषे प्रियंगुसुन्दरी से गन्धर्व विवाह किया वसुदेव सा वर पाकर प्रियंगुसुन्दरी का मुख कमल प्रफुल्लित भया।।65।।

यदुवंश के सूर्य्य वसुदेव तिनको पायकर प्रियंगुसुन्दरी कमलों के भाव को प्राप्त भई। प्रियंगुसुन्दरी के महल विषे कई दिन विराजे इन दोनों के परस्पर प्रेम बंधा प्रियंगुसुन्दरी का पिता राजा एणीपुत्र उसने सुना जो देवी ने एकान्त विषे इनका संयोग कराया तब राजा प्रसन्न भया जैसी कन्या थी, वैसा वर पाया। इस लोक विषे प्रसिद्धता के अर्थ राजा ने इनका प्रकट विवाह किया। सब लोक इनके सम्बन्ध से हर्षित भये। वसुदेव कुमार महा सुन्दर प्रियंगुसुन्दरी सहित सुख से रमें।।69।। वह महा भाग राजा समुद्रविजय का वीर राजा की पुत्री प्रियंगुसुन्दरी अर सेठ की पुत्री बन्धुमती इन दोनों सहित देवों की सी क्रीडा करता राजा प्रजाकर पूज्य कई दिन इस पुरी में रहता भया। कैसी है पुरी, श्रीजिनेश्वर के चैत्यालयों कर मंडित तीर्थ समान यात्रा योग्य है अर कैसी है वह दोनों वसुदेव की प्रिया, प्रसिद्ध है गुण सम्पदा जिनकी। अर अनेक कलाओं के समूह उन विषे निपुण हैं अर रूप यौवन कर मन की हरनहारी हैं जैसे शची सहित इंद्र रमें तैसे वसुदेव रमता भया।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ बन्धुमतीप्रियंगुसुन्दरीलाभवर्णनो नाम एकोनत्रिंशः सर्गः।।29।।

हो पंडित हो! परम पद के उपाय निश्चय थकी जिनशासन में कहे हैं वे अपनी शक्ति प्रमाण धारण करो, जिसकरि भवसागर से पार होवो। यह शास्त्र अति मनोहर, जीवों को शुद्धताकर देनहारा, रविसमान सकल वस्तु का प्रकाशक है सो सुनकर परमानन्द स्वरूप मग्न होवो। संसार असार है, जिन धर्म सार है, जाकरि सिद्ध पद को पाइये है। सिद्धपद समान और पदार्थ नाहीं। - पद्मपुराण भाषा वचनिका, पृष्ठ 726-727

तीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – कार्तिक पूर्णमासी के दिन प्रियंगुसुन्दरी के सहित प्रीतम लेटे हुवे थे चिरकाल करी है नाना प्रकार की क्रीडा तिन करके खेद खिन्न दोनों ही निद्रा के वश हुए थे सो कुमार किसी प्रकार कर जागे एक रूपवती कन्या मानो साक्षात् लक्ष्मी ही है उसे देख पूछते भये – हे कमलनेत्रे! तू कौन है तब वह बोली – हे कुमार! मैं जोन हूं सो तुम जानोहीगे ऐसा कहकर वह मंदिर के बाहर गई अर वसुदेव भी प्रियंगुसुन्दरी के भुज पिंजर से निकलकर उसके निकट गये तब वह अपने आगमन का वृत्तान्त कहती भई – हे राजपुत्र! तुम अपना मन समाधान में लाय मेरे वचन सुनो दुर्लभ वस्तु की प्राप्ति को उपाय मेरे वचन हैं।।5।। इस भरत क्षेत्र विषे विजयार्द्ध गिर दक्षिण श्रेणी विषे गन्धारनामा देश वहां गन्ध समर्द्ध नामा नगर उसका राजा गन्धार उसके पृथ्वी समान बल्लभा रानी पृथिवी उसकी पुत्री मैं प्रभावती शरीर की प्रभा को धरे।।7।। सो एक दिन मैं मानसवेग का सुवर्णनाम नामा नगर वहां गई सो मानसवेग की माता अंगारवती उससे मैं मिली। अर उसकी पुत्री वेगवती मेरी सखी है। सो उसकी वार्ता मैं पूछी।।8।।

तब वेगवती की सखियों ने मुझे वेगवती से मिलाई अर वेगवती का संगम तुमसों भया। सो मैं सब वृत्तान्त जाना तब मैं वेगवती से हंसकर कहा जैसे चित्रा नक्षत्र का चन्द्रमा से संगम होय तैसे तुम्हारा यादवों के चंद्रमा से संगम भया।।9।। अर उसी नगर विषे तुम्हारी प्रिया सोमश्री शुद्ध शील रूप आभूषण कर मंडित तुम्हारा नाम ग्रहण सो ही है आहार जिसके, मानसवेग की माता उसके समीप सोमश्री तिष्ठे है तुम्हारे वियोग कर उपज्या महा दुःख उसकर श्वेत हो गये हैं कपोल जिसके शील के गढ़ में बैठी है वैरी के वचन कर अलंघ्य है परन्तु शत्रु के घर विषे कब लग रहे इससे सोमश्री ने मुझे तिहारे निकट पठाई है। मैं उसका संदेशा तुमको पहुंचाया। उसने यह विनती करी है शत्रु की माता ने मुझे भली भाँति राखी है अर अपने पुत्र को बहुत दवाया है अब तुम शीघ्र मुझे छुड़ाओ। अब मेरी सुध न लेवोगे तो तुम्हारे वियोग कर मेरे प्राणों का वियोग होयगा। इससे कठोर बुद्धि तज मेरे छुड़ाने का यत्न करो। आँसुओं से भरे नेत्रों सहित उसने यह विनती करी। सो मैं तुमसे कृतार्थ भई। अब तुम नीके जानों सो करो अर तुम यह सन्देह न करो जो जगह अगम्य हैं तुम्हारी आज्ञा होय तो जरा सी देर में ले चलूं।

यह वार्ता सुन वह विवेकी जानता भया। जो यह यथार्थ कहे है तब उसे कही – हे सोमवदनी! तू मुझे शीघ्र ही सोमश्री के समीप ले चल तब बल प्रभावती विद्याधरी वसुदेव की आज्ञा पाय आकाश में ले उड़ी। विद्या के प्रभाव कर सम्पन्न वह प्रभावती बिजली की न्याई प्रकाश करती भई

आकाश को उलंघन कर स्वर्णनाभपुर जाय पहुंचे। कोऊ न जाने इस भाँति प्रभावती ने वसुदेव को सोमश्री के समीप पहुंचाया सो वसुदेव सोमश्री को देखता भया। कान्त के वियोग कर कुमलाये कमल के समान है वदन जाका, अर मलिन है कपोलों की शोभा जिसकी। कई एक दिन हो गये हैं शरीर के संस्कार बिना जिसको, बिना संवारे अर ही रूप होय गये हैं केश जिसके, तांबूल के राग रहित किंचित् धूसरे हैं अधर जिसके जैसे दाहकर वेल की कूंपल मुरझाये तैसे वियोग कर मुरझाय रहा है मुख जिसका।।23।।

सो वसुदेव को देखकर सोमश्री उठकर सन्मुख आई। कुमार ने प्रिया देखी मानो शरत की लक्ष्मी है दोनों परस्पर उर लगाय मिले रोमांचित होय आये। फिर कदापि विरह न होय सो मानो एक अंग ही हो गये।।25।। सोमश्री ने जानी प्रभावती ने मेरा बड़ा उपकार किया अर भली भाँति कार्य्य सिद्ध किया सो प्रभावती को प्राण समान सखी जानी। सोमश्री मन कर मिली उरसों लगाय लई इनकी परस्पर परम प्रीति भई फिर प्रभावती रूपवान कुल का सब निश्चय कर धनीधिरानी की आज्ञा पाय अपने स्थान गई।।27।। वसुदेव सोमश्री सहित मानसवेग के घर विषे रूपपरावर्तनी विद्याकर अपना रूप पलट कर रहे। कई एक दिन हो गये सो एक दिन सोमश्री रात्री विषे जागी सो वसुदेव को अर आकार न देखा वसुदेव ही के रूप देखा तब वैरी के भय कर रुदन करती भई जो यह रूप देखे शत्रु इनका घात करेगा। ऐसी शत्रु की शंका उपजी।।29।।

तब वसुदेव ने सोमश्री को पूछा – हे प्रिये! तू रुदन क्यों करे है? तब उसने कही। तुम रूप पलटनी विद्या कर रूप पलटा था सो अब नहीं देखती हूं तुम्हारा मूल रूप देखती हूँ जिससे शत्रु का भय उपजा है। तब कुमार ने कही तू भय मत कर इन विद्याओं का यही स्वभाव है जो जाग्रित दशा में तो शरीर में रहे हैं अर शयन दशा विषे दूर हो जाय हैं। इससे तू संदेह न कर ऐसा कह कर वसुदेव ने विद्याकर रूप पलट लिया जैसा रूप विद्याकर इसे दिखाया था तैसा ही किया। अर कई दिनों में मानसवेग ने जाना जो यह वसुदेव कुमार सोमश्री का स्वामी है तब वह बलसिंहनामा वैजयन्तीपुरी का जो पति उससे मिला।।33।।

न्याय में तो वसुदेव सांचे तब वह मायाचारी विलखा होय युद्ध ही का उद्यमी भया।।34।। कई यक विद्याधर वसुदेव के पक्षी आये वसुदेव अर मानसवेग के महा संग्राम भया।।35।। सो मानसवेग की बहिन वेगवती वसुदेव की स्त्री उसकी माता अंगारवती ने पुत्री का पक्ष कर जंवाई को धनुष दिया अर दिव्य वाणों के भरे दो तरकस दिये।।36।। अर वह प्रभावती जो इनको ले आई थी ताने मानसवेग से युद्ध जान कर प्रज्ञप्ति विद्या दई सो प्रज्ञप्ति विद्या के प्रभाव से वसुदेव ने मानसवेग को बान्धा तब उसकी माता अंगारवती वसुदेव की सासू उसने पुत्र की भीख मांगी, तब आप दयावान् सोमश्री के

मंदिर ले जाय उसे छोड़ा तब मानसवेग को वसुदेव से अति हित उपज्या तब वह मानसवेग वसुदेव को सोमश्री सहित सोमश्री के पिता के महापुर ले गया। तब सोमश्री का बन्धुजन से मिलाप भया। अर वसुदेव सोमश्री के रहे अर मानसवेग इनकी आज्ञा पाय अपने स्थान को गया अर वचन दे गया जब कुमार आज्ञा करोगे तब मैं हाजर, सो वसुदेव सोमश्री सहित सुख से तिष्ठे। देखी सुनी अनुभवी परस्पर वार्ता करते सुखसों कालक्षेप करते भये। अर अनुराग के रस करके लीन है चित्त जिनका। एक समय सूर्य्यक नामा वैरी विद्याधर अश्व का रूप धर यदुपति को ले उड़ा, सो गंगा में डारे।।41।।

वसुदेव गंगा उतर कर तापस के आश्रम गये तहां एक उन्माद रूप वावरी नारी नरों के अस्थी के आभूषण पहिरे वसुदेव ने देखी।।43।। तब किसी तापस से पूछा – यह सुन्दर स्त्री महा उन्माद के वश भई ऐसी वैडी क्यों हो गई तब तापस ने कही यह राजा जरासिंध की पुत्री है। इसका नाम केतुमती यह राजा यतिशत्रु की रानी है सो एक मंत्रवादी परिव्राजक ने यह वाद में जीती अर इसने क्रोध कर मारा सो वैडी हो गई। उसके हाडों की माला कर पृथ्वी विषे परिभ्रमण करे है। यह वार्ता सुन वसुदेव दयावान ने महा मंत्र के प्रभाव से उसके ग्रह का निग्रह किया। अर उसे वावरी से समझनी करी।।47।। अर उसी समय जरासिंध के चाकर वसुदेव को पकड़ कर पुर में ले चले, इन्होंने उपकार किया था सो उलटा औगुण माना तब वसुदेव ने उनको पूछा जो मैं अपराध क्या किया? जो तुम कोप कर मोहि पकड़ते हो तब उन्होंने कही जो राजा की पुत्री का ग्रह उतारे अर समझनी करे सो राजा के वैरी का बाप है, इससे तुम्हें मारने को ले जाय हैं। नीच लोग मारने के लिये फिरे हैं सो यह वार्ता कही उस समय विद्याधर वसुदेव को आकाश में ले उड़ा।।51।।

अर उसने वसुदेव से कही – हे वीर! जो प्रभावती तुमको सोमश्री के समीप ले गई ताका मैं भगीरथनामा पिता हूं तुम्हारे मनोरथ का मैं सिद्ध करणहारा हूं। हे नीति के वेत्ता! मैं तुझको प्रभावती के समीप ले चला हूं। ऐसे प्रिय वचन कह प्रभावती का पिता भगीरथ वसुदेव को विजयार्द्धगिर ले गया। गन्धसमृद्ध नामा नगर विषे महा विभूति सहित अनेक विद्याधर सन्मुख आय कुमार का प्रवेश कराया।।52।। भली तिथि भला नक्षत्र भले योग विषे प्रभावती के माता पिता आदि सब कुटुम्बी प्रसन्न होय प्रभावती का वसुदेव से विवाह करावते भये। इनके विवाह से पहिले ही परस्पर प्रीति तो उपजी ही थी अब परस्पर मोहित भये वीर बींद बींदनी भोग सागर विषे मगन होते भये।।56।। जो मित्रों करके संयुक्त है अर उसके पाप का उदय आवे तो वियोग होय जाय अर जो जिन धर्म के भक्त हैं तिनके पुन्य के प्रभाव से वियोग का अभाव होय है अर मित्रों से मिलाप होय है।।57।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ प्रभावतीलाभवर्णनो नाम त्रिंशः सर्गः।।30।।

इकतीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – प्रभावती सहित एक समय आप मंदिर विषे पौढे हुए थे सो सूर्यक नामा विद्याधर शत्रु वसुदेव को आकाश ले उड़ा।।1।। उसे वसुदेव ने मुक्का से मारा तब उसने आकाश से डारे सो गोदावरी नदी के प्रवाह विषे परे उस नदी के तीर कुंडपुर नगर वहां राजा पद्मरथ उसकी पुत्री की यह प्रतिज्ञा जो फूलमाल के गूंथने की प्रवीणता कर मुझे रिझावे सो मेरा पति। उसे माला की प्रवीणता कर प्रसन्न करते भये अर वसुदेव ने उसे परणी।।3।।

सो वहां से एक समय इनको नीलकंठ ले उड़ा उसने चंपापुरी के सरोवर विषे डारे वहां से निकल कर चंपापुरी के मंत्री की पुत्री परणा उस सहित क्रीड़ा करते थे फिर सूर्यक नामा विद्याधर ले उड़ा अर गंगा विषे डारे।।5।। सो गंगा के तीर एक म्लेच्छखंड का राजा उसने देखे सो अपनी जरानामा पुत्री वसुदेव को परणाई ताके जरत्कुमार नामा पुत्र भया सो महा पराक्रमी फिर वसुदेव अवन्तिसुन्दरी नामा अर शूरसेना नामा राजपुत्री परणी अर एक जीवंयशा नामा राजकन्या उसे परण कर अरिष्टपुर नगर गये। वहां राजा महाधीर उसका नाम रुधिर युद्ध विषे प्रवीण उसके मित्रा नामा राणी साक्षात् स्वर्ग की देवी समान सुन्दरी।।9।। उसके बड़ा पुत्र हिरण्यनाभ सो अनेक नय का वेत्ता अर रण विषे शूरवीर महा पराक्रमी शस्त्र अर शास्त्र विद्या विषे महा निपुण।।10।। अर उसकी पुत्री रोहिणी जैसी चंद्रमा की राणी रोहिणी तैसी यह सुन्दरी।।11।। उसके स्वयम्बर विधान विषे अनेक राजा आये जरासिंध भी आया अर समुद्रविजयादिक भी आये।।12।। वहां मणिमय सिंहासनों पर सब राजा आभूषण पहरे विराजे।।13।। वहां वसुदेव भी भाइयों से अलक्ष अपना भेष छिपाय वादित्र बजावने वालों में बैठे इनके हाथ में वीणा।

अथानन्तर – राजकन्या रोहिणी नामा सौभाग्य की भूमि स्वयंबर शाला में प्रवेश करती भई।।15।। उस समय सब राजावों की दृष्टि रोहिणी पर पड़ी मानो सब राजा एक साथ अपने नेत्र रूप कमलों कर इसकी अर्चा ही करते भये जिसके रूप को देखकर सबों के बांछा रूप व्याकुलता उपजी। वह जाने मैं वरूं वह जाने मैं वरूं।।16।। जिसके रूप के श्रवण ही थकी राजावों को अति इच्छा उपजी थी सो साक्षात् देखकर जो इच्छा उपजे उसका आश्चर्य्य क्या जो अनुराग रूप अग्नि श्रवण ही कर प्रज्वलित भई थी सो इसके दर्शन रूप ईंधन कर वृद्धि को प्राप्त होय उसका क्या कहना।।19।। जिस समय रोहिणी स्वयंवर शाला में आई उस समय शंख की भेरी आदि अनेक वादित्र बाजते भये। अद्भुत श्रृंगार कर युक्त जो कन्या उसे धाय मनोहर वचन कहती भई जो राजा स्वयंवर शाला में बैठे हैं तिनके नाम कहती भई।।20।।

हे कन्ये! यह वसुधा का ईश्वर जरासिंध तिष्ठे है शरत की पुन्यों के चंद्र समान श्वेत छत्र जिसके शिर पर फिरे है तीन खण्ड के जीतने से जिसने यश पाया है मानो वह श्वेत छत्र इनके यश ही का स्वरूप है अर सब भूमिगोचरी विद्याधर इनके आज्ञाकारी हैं।।21।। मानो यह चंद्रमा ही रोहिणी देवी का संग त्याग कर तेरे लोभ थकी यहां आया है तेरी इच्छा होय तो इसे वर।।22।। जब रोहिणी ने उसकी तरफ न देखा तब धाय बोली – यह जरासिंध का पुत्र है तेरी इच्छा होय तो इसको वर।।23।। फिर धाय कहती भई – यह मथुरा का धनी राजा उग्रसेन है तेरी बांच्छा होय तो इसे वर।।24।। फिर धाय बोली – हे पुत्री! यह सौर्य्यपुर नगर का अधिपति राजा अन्धकवृष्टि का पुत्र समुद्रविजय अपने भाइयों कर संयुक्त है सो यह सबही भाई सकल गुणों कर पूर्ण हैं तेरा बांच्छा होय तो इनमें से वर।।25।।

फिर धाय कहती भई – हे पुत्री! यह राजा पांडु है यह विदुर है।।26।। यह दमघोष है यह यशोघोष है यह दंतवक्र है यह महा पराक्रमी राजा शल्य है शत्रुओं के उर में शल्य समान शाले है। अर यह राजा चंद्रबक्र सो चंद्रमा समान है प्रभा जिसकी। अर यह राजा मुख्य यह कालमुख यह पौंड्र यह पुण्डरीकाक्ष अर यह राजा मतस्या जिसके अदेषस का भाव नाहीं।।28।। फिर धाय कहे है हे पुत्री! यह राजा संजय जीत विषे निपुण अर राजावों में उत्तम सोमदत्त अर यह सोमदत्त का पुत्र अपने भाइयों कर युक्त भूरीश्रवा।।29।।

अर यह राजा अंसुमति अपने पुत्रों कर संयुक्त अर यह कपिल यह विपुलक्षण अर यह राजा पद्मरथ यह राजा सौमक अर यह राजा सौम सौम्यक।।30।। अर यह देवों के नाथ समान राजा दिवक अर यह राजा श्रीदेव इत्यादि धाय ने अनेक राजा रोहिणी को दिखाये अर इन राजावों के वंश अर नगर सब बताये अर इनमें गुण थे सो जताये फिर धाय न्याय की वेत्ता अर भी बहुत राजा बताये अर कहती भई – हे कन्ये! तेरे सौभाग्य गुण कर खेंचे ये राजावों के समूह आये हैं सो तूं अपना चित्त एक विषे लगा, योग्य भरतार के प्राप्त भये चित्त की चिंता अस्त होय है तातें योग्य वर को वर कर माता पिता की चिंता मेट, उनको सुख अवस्था उपजाय तेरे विवाहने की चिंता कर माता पिता की भूख अर निद्रा जाती रही है। इस भाँति धाय ने कही तब कन्या कहती भई – हे माता! तैं ये राजकुमार दिखाये तिन विषे मेरा मन अनुराग नहीं धरे है, वर के देखने मात्र ही से हृदय विषे स्नेह उपजे है तेरे कहने कर कहा।।36।।

जैसे मुनि के मन विषे न तो राग न द्वेष न मोह तैसे मेरे मन विषे तो ये दिखाये तिनि विषे किसी प्रकार की इच्छा नहीं, जो इनतें भिन्न अर काई विधि ने मेरा वर रचा सो दिखा।।37।। धाय के अर

कन्या के बात भई उसी समय कन्या ने वसुदेव के हाथ में मादल था अर बीन थी तिनकी ध्वनि सुनी तो कन्या के कान के मारग होय चित्त में जाय बसी। तब धाय कन्या से कहती भई – हे राजपुत्री! तेरे मन हरने को समर्थ यह राजहंस बीन का बजावन हारा प्रगट है।।40।। तब कन्या दृष्टि धरि वसुदेव की ओर विलोकती भई सो राजावों के लक्षण कर पूर्ण देवों समान वसुदेव देखा।।41।। इन दोनों का परस्पर दृष्टि मिलाप सोई भया तीक्षण बाण उस कर काम इन दोनों के मन को घायल करता भया। दोनों ही अभिलाषवंत भये। तब रोहिणी वसुदेव के कण्ठ विषे वरमाला डारती भई। स्तन के भार कर नय गया है अंग जिसका।।42।। वसुदेव अपने स्थान बैठे थे तिनके समीप जाय तिष्ठी सो रोहिणी कैसी सोहती भई। जैसे चन्द्रमा के समीप रोहिणी चन्द्र की स्त्री सोहे है।।43।। नया मिलाप उसकर उपजा जो आनंद कछुयक लज्जा के योग कर शंकी सो कन्या अपने अंग के संग कर पति के अंग को सुख उपजावती भई।

भावार्थ – पति के निकट जाय बैठी तब कई एक सुबुद्धि राजा स्वयंवर में बैठे थे सो प्रसन्न भये। अर कहते भये इनका संयोग भया जैसा रत्न अर कंचन का मिलाप सोहे तैसे इनका संयोग सोहे है। अहो, देखो इस कन्या की निपुणता जो कैसा वर ढूंढा है। इस समान इतने राजावों में अर नहीं यह कोई मोटा पुरुष बड़े राजा का पुत्र है सो अपना कुल छिपाय क्रीड़ा के अर्थ विहार करे है। भले पुरुष तो यह वचन कहते भये।

अर जो दुरजन थे वह कहते भये – कन्या ने बहुत अयुक्त करा जो इतने कुलवंत राजावों के पुत्र बैठे उनको छोड़ वाजयंत्री के कंठ में वरमाला डारी। यह समस्त राजावों का अपमान देखना योग्य नहीं। अर जो ऐसा ही होय तो हर कोई पुरुष हर किसी स्त्री को वरे तो अति प्रसंग नामा दोष लगे, कुल ऊंच नीच का विचार ही न रहे इतने बड़े पुरुष बैठे, उनमें इस रंक का औसर कहां, इस ठौर अकुलांन का प्रवेश ही अयोग्य है अगर यह कुलवंत है तो अपना कुल प्रगट करे, वरना यह नीच है सो नीच कूट कर काढ देवो। किसी राजपुत्र को कन्या परणाय देवो। यह वचन सुनकर महाधीर कहता भया – जो राजा क्षोभ को प्राप्त भये थे। उनसे वसुदेव कहता भया – अहो क्षत्रियों के पुत्र हो तुम्हारे में कितनेक सत् पुरुष हैं अर कितनेक मदोन्मत्त हैं ते सब ही मेरे वचन सुनो स्वयंवर का यही मारग है जो कन्या की इच्छा होय उसी को वरे। यहां राव अर रंक का विचार नहीं। अर यहां कन्या के माता पिता अर भाई को कोप नहीं करना स्वयंवर विषे किसी की आज्ञा नहीं यहां कन्या की इच्छा ही कारण है।।53।।

कोई महा कुलवंत रूपवंत भाग्यवंत लक्ष्मीवंत होवे अथवा अकुलीन कुरूप दरिद्री होवे जिसे

कन्या वरे सोई वर यहां कुल सौभाग्य का नेम नहीं। इस कन्या ने मेरा कुल सौभाग्य निरख कर वरमाला डारी है, अर अगर बिना जाणे डारी तो भी डारी तुमको वाद विवाद का क्या प्रयोजन है।।56।। अर जो कोई तुमसे पुरुषार्थ के गर्व कर शांतता न धारेगा उसे मैं अपने वाणों कर शांत करूंगा। जब मैं धनुष चढाय कान पर्यंत खैंच बाण चलाऊंगा तब सबको खबर पड़ेगी, यह वचन वसुदेव के सुन कर जरासिंध ने कोप किया। अर सब राजावों से कही – यह वाजयंत्री की विपरीत बुद्धि है इसे बांधो अर यह कन्या का पिता रुधिर अपने पुत्र सहित अविवेकी है स्वयंवर शाला में अकुलीन को आने दिया। इससे इसको इसके पुत्र सहित पकड़ो।।58।। दुर्जन राजा थे वह पहिले ही क्रोध रूप थे अर जरासिंध अर्धचक्री उसकी आज्ञा पाकर महा प्रज्वलित होय युद्ध को उद्यमी भये।।59।।

अर जे न्याय रूप विवेकी राजा थे वह अपनी सेना सहित दूर जाय खड़े रहे न इनमें न उनमें अर जो रोहिणी का पिता राजा रुधिर के पक्ष में थे वह वैरियों के भेदवे की इच्छा कर शस्त्र से सज कर तत्काल राजा रुधिर के समीप आये।।61।। रुधिर समान अरुण हैं नेत्र जिनके अर रुधिर का बड़ा पुत्र हिरण्यनाभ अपनी बहन रोहिणी को रथ में चढाय समस्त सेना सहित सजा खड़ा। अर राजा रुधिर रोहिणी का पिता अति मधुर वचन कर अपने योधायों को कहता भया – अहो सुभट हो! तुम महारथी हो तुमको योग्य होय सो ही युद्ध करो।

उस समय वसुदेव ससुर से कहते भये – हे पूज्य! मुझे एक रथ दिव्य शस्त्र अर सामान्य शस्त्रों कर पूरण शीघ्र ही देवो अर मुझे आज्ञा करो कौन दिश इन भूपतियों से युद्ध करूं यह कुलवंते मेरे अकुलीन के बाण संहारे। यह वचन वसुदेव ने कहे तब राजा रुधिर जानी यह बड़े वंश के उपजे महा शूरवीर पुरुष हैं तब रोहिणी का पिता इनको महारथ देता भया। जिसके महा तेजस्वी तुरंग जुरे अर शस्त्रों कर पूर्ण। जिस समय वसुदेव रथ पर चढ़ा उसी समय दधिमुख नामा विद्याधर महा शूरवीर दिव्य रथ पर चढ़ा। वसुदेव के निकट आया मानो वसुदेव का मनोरथ ही आय प्राप्त हुवा दिव्यास्त्र कहिये देवोपुनीत शस्त्र उन कर देदीप्यमान महा मित्र आया।।67।।

सो वसुदेव को नमस्कार कर कहता भया जो तुम मेरे रथ पर चढ़ो अर मैं तिहारा सारथी तुम शत्रुवों के समूह को युद्ध विषे जीतो। तब वसुदेव दधिमुख के रथ में चढ़े सो रथ नाना प्रकार के वाणों कर भरा है। अर कैसा है वसुदेव, चापी कहिये धनुष को धरे है अर कवची कहिये वक्तर पहरे।।69।। अर रोहिणी का पिता राजा रुधिर उसकी सेना रथ दो हजार हाथी हजार छह अर पियादे एक लाख चौदह हजार सो रोहिणी के पिता का कटक शत्रुवों के विनास के अर्थ उद्यमी था उस सहित वसुदेव

शत्रुवों की सेना रूप समुद्र को अवगाहता भया। कैसा है शत्रुवों का कटक रूप समुद्र, नहीं दीखे है पार जिसका अर वसुदेव की चतुरंग सेना सब ही बलवंत है दोनों सेनाओं में परस्पर महा युद्ध भया। ऐसा ही तुरंगों का हींसना अर ऐसा ही शंख आदि वादित्रों का नाद सो समुद्र की गरजना सारखा सेनाओं में शब्द होता भया।।73।। हाथी घोड़े रथ पयादे इनमें यथायोग्य युद्ध होता भया। हाथियों के असवार हाथियों के असवारों से अर तुरंगों के असवार तुरंगों के असवारों से अर रथों के असवार रथों के असवारों से अर पयादे पयादों से युद्ध करते भये।।74।। परस्पर सावंतों के वाणों कर आकाश आछादित होय गया सूर्य्य की दृष्टि न पडता भया। तो अर की कहा बात? उस रण विषे तेजोनिधि जो सूर्य्य उसकी किरणों का संचार रुक गया तो औरों की कहा बात।

भावार्थ – जिस रण विषे तेजोनिधि महा तेजवंत उनका भी पाद संचार नाहीं तो कायरों की कहा बात? कैसा है रण, खडग वाण गदा चक्र आदि अनेक शस्त्र उनके घात कर निकसी जो रुधिर की धारा उस कर अंधकार रूप होय रहा है। जिस रण विषे बड़े बड़े माते हाथी पर्वत समान सब गिर पड़े। बड़े बड़े तुरंग अर बड़े बड़े भूप रण में पड़े अर अनेक रथ चूरण हो गये।।77।। हाथियों का अर तुरंगों का जो परिहार अर योधाओं के मरने कर अर रथों के गिरने कर सब दिशा शब्द रूप होय गई।

अथानन्तर – शत्रुओं की सेना कर अपनी सेना दबी जान वसुदेव अर रोहिणी का भाई हिरण्यनाभ यह दोनों अपनी सेना के थामने को उद्यमी भये। यह दोनों दृष्टि मुष्टि अर बाण का संधान तिनके प्रयोग कर ऐसे बाण चलावते भये जो शत्रुओं के देखवे में न आये अर उनके जाथ लगे सो वह गिरे।।79।। शत्रुओं की सेना में ऐसा कोई हाथी न रहा न कोई तुरंग न रथ न मनुष्य जिनके इन दोनों योधाओं के बाण न लगे इनके तीक्षण वाणों कर सब ही भेदे गये।।80।।

वसुदेवकुमार ने पवन वाण कर अर महेंद्र वाण कर वैरियों के वाण छेदे धनुष तोड़े अर चन्द्रमा समान उज्ज्वल शत्रुवों के छत्र उडाये मानो उनके यश ही उडाये अर अपने बाणों कर शत्रुओं के सिर उडाये।।82।। योधाओं से भयानक युद्ध तो वसुदेव ने किया। अर रोहिणी का भाई हिरण्यनाभ उसने एक बड़े राजा का पुत्र शत्रुओं की सेना में पौंड्र कुम्बर उससे युद्ध आरम्भा।।83।। सो यह दोनों ही महा योद्धा महा रथी तिनके महा भयंकर युद्ध होता भया जैसे सिंह के बालक लड़ें तैसे ये राजकुमार लडते भये।।84।। केतीक देर में रोहिणी के भाई हिरण्यनाभ ने राजा पौंड्र की धुजा उड़ाई अर छत्र उड़ाया सारथी मारा अर रथ के तुरंग मारे फिर पौंड्र भी महा क्रोध कर वज्रदंड समान अपने वाण तिन कर हिरण्यनाभ की धुजा उड़ाई अर छत्र उड़ाया अर सारथी मारा अर रथ के तुरंग मारे।

हिरण्यनाभ रथ से भूमि पर पड़ा जब हिरण्यनाभ रथ से भूमि पर पड़ा पौंड्र ने हिरण्यनाभ के मारने

को अमोघ बाण साधा उसी समय हिरण्यनाभ की पक्ष वसुदेव आये अर अपने अर्धचन्द्र बाण कर पौंड्र का धनुष तोड़ा अर हिरण्यनाभ को अपने रथ में चढ़ाया अर अपने वाण रूप मेघ की वृष्टि कर पौंड्र को आछादित किया, तब पौंड्र की पक्ष अनेक योद्धा वसुदेव पर आये।।90।। सो वसुदेव ने अपने तीक्षण वाणों कर सब योधाओं के वाण भेदे अर पैंड पैंड विषे शत्रुओं की सेना कर धन्य धन्य कहावता भया। सबने कही ऐसा सुभट अब तक न देखा एक तरफ अकला वसुदेव अर एक तरफ अनेक योधा तब न्यायवंत जे राजा हैं वह कहते भये – अब तक यह अन्याय न देखा जो एक से अनेक लडें एक से एक ही युद्ध योग्य है।।92।।

तब जरासिंध ने धर्म युद्ध देखने की इच्छा कर राजाओं को आज्ञा करी। जो इससे कन्या के अर्थि एक एक नृप युद्ध करो जो इसको जीते सोई कन्या का पति। तब अर तो खड़े खड़े देखे तब राजा शत्रुंजय वसुदेव से युद्ध करने लगा सो शत्रुंजय ने वाण चलाये ते सब वसुदेव ने दूर ही से काटे। अर उसका रथ तोड़ा अर वकतर काटा अर बहुत विह्वल कर इसको जीव दान दिया।।95।। फिर वसुदेव से राजा दंतवक्र ने युद्ध आरम्भा सो दंतवक्र महा उद्धत चिरकाल युद्ध करता भया तिसको भी वसुदेव ने रथ रहित किया अर उसका सब पुरुषार्थ हर उसे भी जीवता छोड़ा।।96।। फिर काल समान उद्धत राजा काल मुख सो वसुदेव से युद्ध करने आया सो वसुदेव ने उसको भी जीता अर जीवता छोड़ा फिर राजा शल्य युद्ध को आया उसे वसुदेव ने जृम्भणा शस्त्र कर बांधा तब जरासिंध ने राजा समुद्रविजय से कही – हे नृप! तुम शस्त्रविद्या विषे प्रवीण हो सो रण विषे इस मानी का मान हरो।।99।।

तब जरासिंध की आज्ञा कर महा न्याय के वेत्ता राजा समुद्रविजय युद्ध को उद्यमी भये। जो न्यायवंत राजा हैं तिनकी यही रीति है जो रण विषे स्वामी की आज्ञा प्रमाण करें।।100।। जरासिंध सबका स्वामी है उसकी आज्ञा प्रमाण सो समुद्रविजय ने अपने सारथी से कहा – जो तू अपना रथ इस पर चलाव सो उसने चलाया तब वसुदेव अपना पिता समान जेष्ठ भ्राता का रथ अपने ऊपर आवता देख दधिमुख विद्याधर जो अपना सारथी उसे कही जो समुद्रविजय मेरा बड़ा भाई है इससे इसकी तरफ अपना रथ धीरे धीरे चलाव यह मेरे गुरु जन हैं सो इनसे एक रीति से युद्ध करना है।।3।।

दधिमुख ने कहा जो आप आज्ञा करोगे सोई होयेगा। सो बड़े भाई की तरफ धीरे धीरे रथ चलाया अर समुद्रविजय अपने सारथी से कहता भया। जो योधा को देख मेरे हिरदे विषे स्नेह उपजे है सो कारण कहो अर मेरा दाहिनी भुजा अर नेत्र फरके हैं सो प्यारा भाई मिला चाहिये। अर यह मारने योग्य शत्रु उसे देख ऐसा अनुराग भाव क्यों उपजे है यह चिह्न तो बंधु के मिलाप के हैं अर योग मिला शत्रु से रण का सो यह बात कैसे बने। देश विरुद्ध काल विरुद्ध यह बात बनती दीखे नहीं, तब सारथी ने कही – हे प्रभु! शत्रु को जीते पीछे बंधु का अवश्य मिलाप होयगा।।80।।

अर हे राजन्! यह शत्रु अगाध योधा है अर अनेक राजाओं कर जीता न जाय तातैं सब राजाओं के समीप ऐसे शत्रु भी जीतने से सर्व में तुम्हारी प्रशंसा होयगी अर जरासिंध से पूजा पावोगे वह घना सन्मान करेगा। यह वचन जब सारथी ने कहे तब राजा ने बहुत प्रसन्न होय वसुदेव पर रथ चलाया। कैसा है समुद्रविजय, धनुष चढाये है अर वाण साधा है अर वसुदेव भी धनुष चढाया वाण साधा है समुद्रविजय वसुदेव को भाई न जाने है सो पर पक्ष का योधा जान कहे हैं – हे धीर! औरों से रण विषे तेरी धनुष वाण की प्रवीणता हमने बहुत देखी तैसी ही हमको दिखाव तेरा शूरवीरता रूप पर्वत ऊंचा है उस पर मान का शिखर सोहे है पर मैं राजा समुद्रविजय हूँ सो अपने वाण रूप मेघ की वृष्टि कर तेरा मान रूप शिखर आछादित करूंगा।।12।।

बड़े भाई के यह वचन सुन वसुदेव कुमार अपना शब्द पलट कर रूप पलट कर यह वचन कहता भया – हे राजेंद्र! बहुत कहने कर क्या? रण विषे हमारा तुम्हारा पराक्रम प्रगट होवेगा।।13।। तुम समुद्रविजय हो अर में संग्रामविजय हूं अर अगर तुमको प्रतीत न आवे तो शीघ्र ही वाण चलावो। जब कुमार ने यह वचन कहे तब समुद्रविजय बड़े योधा बिना जाणे लघुवीर पर वाण चलाते भये।।15।। सो योधा ने जो बड़े भाई के वाण आये सो बीच ही में काटे आप तक आवने न दिये।।16।। अर आप जे वाण चलाये सो भाई का अंग वचा कर चलाये बहुत वेर सामान्य शस्त्रों से युद्ध भया।

तब समुद्रविजय ने विचारी जो यह सामान्य शस्त्रों न जीता जाय, तब दिव्यास्त्र हाथ लिये राजा ने अग्निवाण चलाया सो कुमार ने वरुण नामा वाण कर बुझाया। फिर राजा ने वरुण वाण कहिये जल वाण चलाया। सो कुमार ने वायु वाण कर निवारा इत्यादिक अनेक वाणों कर दोनों वीर भिड़े, दोनों ही दिव्यास्त्र विषे प्रवीण सो महा युद्ध करते भये। जिनकी आकाश विषे देव स्तुति करे हैं।।18।। बहुत कहां लग कहिये जे जे वाण बड़े भाई ने चलाये ते सब छोटे भाई ने बीच ही में काटे जैसे गरुड़ सर्प को हते तैसे समुद्रविजय के वाण वसुदेव ने छेदे सो कई बार कई वाण बड़े भाई के वसुदेव ने निराकरण किये।।19।।

तब राजा ने क्षुरूप्रताप नामा वाण चलाया सो वसुदेव ने बीच ही काटा अर अपने वाणों कर राजा का रथ अर सारथी अर घोड़े घायल करे अर बड़े भाई के अंग का बचाव किया। तब राजा इस योधा की प्रवीणता देख अति प्रसन्न भया। अर सब ही राजा सिर हलाय कर तथा चुटकी बजाय कर कुमार की प्रशंसा करते भये।।21।। एती वेर तक राजा ने भाई को न पिछाना पर सेना का सावंत जान दिव्यास्त्रों में महा प्रबल जो रौद्रास्त्र सो चलाया तब वसुदेव ने ब्रह्मशस्त्र कर उड़ाया।।22।।

शस्त्र विद्या विषे महा प्रवीण जो वसुदेव उसने रण विषे समुद्रविजय के अनेक शस्त्र छेदे अर बड़े भाई का शरीर बचाया। इस भाँति बहुत देर तक रण क्रीडा कर उपजा है अधिक स्नेह जिसके सो

अपने नामा की पत्री बाण के बांध बड़े वीर पै पठाई सो वाण राजा के पांवों में जाय पड़ा। तब राजा वाण के जो पत्र बंधा था सो बांचा। उसमें यह समाचार थे – हे महाराज! मैं तिहारा सेवक छोटा भाई वसुदेव जो छिपकर घर से निकसा था, सो सौ वर्ष व्यतीत भये, आपके पायन आया, अर अब आपके चरणारविंदों को प्रणाम करे है।।26।। यह पत्र के समाचार वांच कर राजा भाई के स्नेह कर पूर्ण है हृदय जिसका सो हाथ से धनुष डार रथ से उतर भाई के सन्मुख चला।।27।। तब छोटा भाई वसुदेव रथ से उतर दूर ही से प्रणाम कर पिता समान जो बड़ा भाई उनके पायन पड़ा। तब राजा ने भाई को उठाय उर से लगाया।।28।। दोनों भाई उर से उर लगाय अश्रुपात सहित नेत्रों को धारते भये, फिर अक्षोभ आदि आठ भाई समुद्रविजय से छोटे अर वसुदेव से बड़े से सब ही वसुदेव से मिले।।29।। उस रण विषे वसुदेव के जितने ससुर पुत्र भ्रातृ सहित आये थे, वह सब ही मिले स्नेह के अश्रुपात कर भरे हैं नेत्र जिनके।।30।।

अर जरासिंध आदि सब ही प्रसन्न भये अर रोहिणी का पिता राजा रुधिर अर भाई हिरण्यनाभ अर सब कुटुंब के रोहिणी की अति प्रशंसा करते भये कि धन्य है इस बाई का भाग जो ऐसा वर पाया। सांझ समय सब ही अपने अपने स्थानक गये, रात दिन सबके वसुदेव ही की कथा। फिर भली तिथि भला नक्षत्र देख रोहिणी विषे चन्द्रमा का समागम उस दिन समुद्रविजय ने लघुवीर को रोहिणी परणाई। इनका विवाह देख सब ही राजा हर्षित भये। जरासिंध समुद्रविजय आदि सब ही राजा एक वर्ष तक राजा रुधिर के नगर रहे।।33।।

युद्ध विषे करी है सहाय जिसने ऐसा दधिमुख नामा विद्याधर उसकी वसुदेव ने बहुत प्रशंसा करी, अति सन्मान किया, वह बहुत प्रसन्न होय, इनकी आज्ञा पाय अपने स्थानक गया।।34।। अर वसुदेव कुमार नई वधू जो रोहिणी उसका मनोहर मुख रूप कमल उस पर भँवर समान अनुरागी होय पहली परणी जो प्रिया उनको भूल गया। जैसे भवर नवीन पुष्प का रस पाय कर पूर्व में भोगी जे वेल तिनको विसर जाय।।35।। भुज ही है सहाई जिसके ऐसा जो वसुदेव शूरवीर उसका मान रूप पर्वत रण संग्राम विषे अनेक शत्रुओं के वाण रूप वज्रकर न चूरा गया भेले भये हैं समस्त पृथिवी के भूपाल जहां उन विषे वसुदेव के पराक्रम का विशेष यश होता भया। आश्चर्य्यकारी है पराक्रम जिसका वे शत्रु अति लोभी इसके प्राणों के ग्राहक इसका कछु भी न कर सके, सो यह सब जिन भाषित तप का प्रभाव है पूर्व भव विषे वसुदेव ने महा तप किये हैं ऐसे तप औरों से न वने।।36।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ रोहिणीस्वयम्वरवसुदेवस्य भ्रातृसमागमवर्णनो नाम एकत्रिंशत्तमः सर्गः।।31।।

बत्तीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – रोहिणी राणी भरतार सहित सुन्दर सेज पर शयन करती हुती सो चार शुभ स्वप्न देखे।।1।। पहले स्वप्न चन्द्रमा समान उज्ज्वल वर्ण मदोन्मत्त गाजता हुवा गजेंद्र देखा। अर दूसरे स्वपने उठे हैं पर्वत समान ऊंची लहर जिस विषे ऐसा शब्द करता समुद्र देखा अर तीजे स्वप्न में वह चन्द्रमुखी पूर्ण हैं मनोरथ जिसके सो संपूर्ण चन्द्रमा को देखती भई अर चौथे स्वप्न में कुन्द के पुष्प समान उज्ज्वल मृगराज अपने मुख में प्रवेश करता देखा।।3।। प्रभात समय वह कमल नयनी जागी अर स्नानादि क्रिया कर पति के समीप जाय स्वप्न का फल पूछती भई तब पति ने कहा – हे प्रिये! तेरे महा पुरुष पुत्र होयगा, गजेंद्र के देखने कर सब में बड़ा अर समुद्र के देखने कर महा गम्भीर सर्व जगत् का बल्लभ अर चन्द्र के देखने कर अनेक कला का धारक महा कांतिवान चन्द्रमा से भी अधिक है प्रभा जिसकी सर्व जगत् का बल्लभ अर सिंह के देखने कर महा धीर पृथिवी का पति जिस समान योधा जगत् में नहीं।।5।। इस भाँति पति के मुख से रोहिणी स्वप्न के शुभ फल सुन कर अति हर्षित भई। चन्द्र कला भी अधिक सोहती भई।

अथानन्तर – महा शुक्र स्वर्ग विषे संख नामा मुनि का जीव सामानिक देव भया था सो चयकर रोहिणी के गर्भ में आया। यह माता रोहिणी रत्नों की खानि है अर बलभद्र महा मणि है जब नव महीने पूर्ण भए। तब माता शुभ नक्षत्र विषे सुख से पुत्र जनती भई। चन्द्रमा समान है वदन जिसका। ऐसा पुत्र वसुदेव के घर प्रगट भया। उसका जन्मोत्सव देख कर जरासिंध आदि सब राजा अपने अपने स्थानक गये। वह पुत्र महा सुन्दर अपना नाम राम कहाय कर पृथिवी विषे वृद्धि को प्राप्त भया। बढ़ाई है माता पिता आदि कुटुंवियों से प्रीति जिसने, एक दिन राजा रुधिर के मन्दिर विषे श्रीमण्डप में समुद्रविजय आदि वसुदेव के हितू सब ही बैठे थे, अर वसुदेव भी उनके समीप था, सो एक विद्याधरी महा दिव्य मूर्ति आकाश से उतरी अर वसुदेव को कहती भई।।11।।

हे देव! तिहारी राणी वेगवती अर मेरी पुत्री बालचन्द्रा तिहारे चरणारविंद का दर्शन चाहे हैं अर तो तुम परण आये वह बालचन्द्रा कुमार है सो विवाह की आस कर तिष्ठे है सो शीघ्र ही चलो। उसे परण कर सुखी करो, यह वार्ता विद्याधरी की सुन बड़े भाई की तरफ दृष्टि धरी, तब समुद्रविजय सब अभिप्राय जान इसे शीघ्र ही पठाया, सो विद्याधरी की लार तत्काल गगन बल्लभपुर गया। अर समुद्रविजयादिक सब भाई सौर्यपुर गये।।15।। वसुदेव ने गगनबल्लभपुर जाय वेगवती देखी अर बालचन्द्रा परणी सो पूर्ण चन्द्र समान है मुख जिसका।।16।। नवीन वधू बालचन्द्रा अर वेगवती मन की हरणहारी उन सहित रमता कितनेक दिन सुख से वहां रहा। फिर उन दोनों सहित सौर्य्यपुर जाने

की आज्ञा मांगी, तब बालचन्द्रा का पिता कांचनदंष्ट्र अर वेगवती का बड़ा भाई मनोवेग इन्होंने वसुदेव को द्रव्य दिया अर पुत्रियों को बहुत सामग्री दीनी।

जब ससुर से सौर्यपुर की सीख मांगी, तब वह नागकुमारी एणीपुत्र की पूर्व भव की माता रत्नों कर देदीप्यमान विमान रचा। उसमें बैठकर वसुदेव बालचंद्रा वेगवती सहित उस विमान में चढ़कर अरिंजयपुर आये, विद्युद्वेग से मिले। वह विमान ऐसा जहां मन करे तहां ही जाय।।20।। विद्युद्वेग से मिल राजलोक के मांही गये, अर अपनी स्त्री मदनवेगा देखी, उसे लेकर विमान के मारग शीघ्र ही गंधसमृद्ध नामा नगर गए। वहां राजा गंधार की पुत्री प्रभावती देखी।।22।। प्रभावती के पिता ने बहुत धन दिया।।23।।

फिर उसे लेकर तत्काल असित पर्वत नगर गए, वहां राजा सिंहदंष्ट्र उसकी पुत्री नीलयंशा अपनी बल्लभा उसके महल में कितनेक दिन रहे उसके पिता ने भी बहुत धन दिया। फिर नीलंयशा को लेकर किन्नरोद्गीत नामा नगर गए। वहां नील कमल सारखे सुन्दर नेत्र जिसके ऐसी श्यामा देखी उसे लेकर श्रावश्री पुरी गए। वहां प्रियंगुसुन्दरी अर बन्धुमती थी उनको लेकर महापुर नामा नगर गए, वहां सोमश्री से मिले, सो उसे लेकर इलावर्द्धन नामा पुर गए, वहां रानी रत्नवती से मिले उसे लेकर भद्रलिपुर गए, वहां चारुहासिनी उसे लेकर जयपुर नामा नगर गए, वहां से अश्वसेना नामा राणी को लेकर शीलगुहा नामा पुर गये। वहां से पद्मावती राणी को लेकर वेदशामपुर नामा नगर गये, वहां कपिला नामा स्त्री से मिले अर कपिल नामा पुत्र उसका अभिषेक कराया, अर उनको लेय कर अचल ग्राम गए।।30।।

वहां मित्रश्री नामा रानी उसको लेय कर तिलकवस्तु नामा नगर गए, वहां पांच सौ रानी थीं, उनको लेयकर गिरतट नामा नगर गये, वहां सोमश्री कर युक्त होय चम्पापुरी गए, वहां रानी गन्धर्वसेना थी उसे लेकर विजयखेट नामा नगर गए, वहां रानी विजयसेना उसके पुत्र अक्रूरदृष्टि उनको लेयकर कुल्लपुर नामा नगर गए।।33।। वहां पद्मश्री अर अवन्ती सुन्दरी अर सूरसेना अर अपने पुत्र सहित जरा अर जीवंयशा।।34।। इनको लेयकर अर भी जहां जहां जे जे रानी थीं उन सबको लेयकर शीघ्रगामी जो विमान उसमें बैठ सूर्य्यपुर नामा नगर आया प्राप्त भए। कैसा है सूर्यपुर, सूर्य के विमान समान देदीप्यमान है प्रभा जिसकी अर सुन्दर गीत नृत्य वादित्रों की ध्वनि कर पूर्ण है।।36।। सो विमान तो वसुदेव का नगर के बाहिर रहा अर वह धनवती देवी जो इनको विमान में बैठाय कर लाई है सो पहली नगर में आय कर वसुदेव के राजलोक सहित आने की समुद्रविजय को बधाई दी। तब राजा सर्व नगर में शोभा कराय नगर उछाल आप सब भाइयों सहित सनमुख आया।।38।।

तब वसुदेव विमान से उतर के बड़े भाई समुद्रविजय को प्रणाम कर अर भी सब बड़े भाइयों को प्रणाम करता भया। अर वसुदेव की सब राणी जिठानियों को प्रणाम कर जिठानियों के पांव लागती भईं। अर सब वसुदेव अर इनकी रानियों को प्रणाम करते भए शिव देवी को आदि देय सब ही जिठानी वसुदेव की वधू जो नम्रीभूत भईं तिनको उर से लगाय लोचन अश्रुओं से पूर्ण किए अर अनेक आशीष दई।।40।। सबों का यथायोग्य सन्मान किया। अर सबों के आदर है जिसका ऐसा जो वसुदेव सो रोहिणी सहित रमता भया। बंधु रूप सिंधु कहिये समुद्र तिन विषे आनंद रूप जल का बढ़ावनहारा वसुदेव रूप चन्द्रमा सो रोहिणी समान रानी रोहिणी उससे रमता जगत् का आताप हरता भया। वसुदेव को रानियों सहित सौर्य्यपुर में पधराय देवी धनवती समुद्रविजय से अर वसुदेव से विदा लेय अपने स्थानक गई।।42।। सौर्य्यपुर के समस्त ही लोग वसुदेव का विभव देखकर परस्पर वतरावते भये जो पूर्व भव विषे इस वसुदेव ने जिनधर्म्म आराधा है उसका यह फल है। वसुदेव शूरवीरता कर प्रबल जीते हैं राजाओं के समूह जिसने अति उदार महा मनोहर है चरित्र जिसका अनेक विद्याधरियों का बल्लभ देवों समान है प्रभा जिसकी। अर अद्भुत है विभूति जिसकी, यह सर्व पूर्वोपार्जित धर्म का फल है।।44।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ सकल बन्धुवधूजनसमागमवर्णनो नाम द्वात्रिंशः सर्गः।।32।।

।। इति विद्याधरकाण्ड समाप्त ।।

जे सरलचित्त साधुनकूं आहारादिक दान के देनहारे ते भोगभूमिविषै मनुष्य होय हैं। जैसै भले खेत में बोया बीज बहुतगुणा होकर फलै है, अर इक्षु (सांठे) में प्राप्त हुआ जल मिष्ट होय है, अर गाय ने पिया जो जल सो दूध होय परिणमै है। तैसै व्रतनिकर मंडित परिग्रहरहित मुनि को दिया जो दान सो महाफल को फलै है। अर जैसै नीरस क्षेत्र में बोया बीज अल्पफल को प्राप्त होय, अर नींब में गया जल कटुक होय है तैसै ही भोगतृष्णा से जे कुदान करै हैं ते भोगभूमि में पशु जन्म पावै हैं।

- पद्मपुराण भाषा वचनिका, पृष्ठ 26

तेतीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – सौर्य्यपुर विषे वसुदेव से जे बुद्धिमान राजकुमार थे, वह विनती करते भये कि हमको शस्त्र विद्या सिखाओ सो वसुदेव अनेक राजपुत्रों को शस्त्र विद्या सिखावते भए। एक समय वसुदेव अपने कंसादिक धनुषविद्या के जे शिष्य प्रवीण उन सहित जरासिन्ध के देखने को राजगृह नामा नगर गये, वहां जरासिन्ध की आज्ञा से घोषणा कहिये मुनादी फिरती थी कि समस्त लोग सावधान होय सुनो। एक सिंहपुर नामा नगर उसका निवासी राजा सिंहरथ महा उद्धत है अर उसके रथ के सिंह जुते हैं सिंहों के रथ पर चढ़ा फिरे है सो प्रबल है पुरुषार्थ उसका।।4।। उसको जो कोई जीवता पकड़कर मुझे दिखावे वही पुरुष सावन्तों में महा सावन्त है। वह शत्रुओं के यश रूप समुद्र का पीवनहारा, उसे मैं मान धन अर अपनी पुत्री जीवंयशा परणाऊंगा अर जो देश मांगे सो ही दूं।।7।।

यह मुनादी वसुदेव ने सुनी तब अपने सब शिष्यों को आज्ञा करी कि इस मुनादी का पता तुम लाओ सो पता लेते ही वसुदेव सिंहरथ पर चढ़ कर गये जायकर उससे युद्ध आरम्भा सो वह सिंहरथ तो जो सिंह तिर्यंच उनके रथ पर चढ़ा। अर वसुदेव विद्यामई जो सिंह उनके रथ पर चढ़ा, सो सब वसुदेव ने अपने वाण उस पर चलाये तब सिंह भागे अर सिंहरथ भागा तब वसुदेव ने कंस को आज्ञा करी तू इसको बांध तब कंस ने वसुदेव की आज्ञा से सिंहरथ को बांधा तब वसुदेव ने प्रसन्न होकर कंस से कही – तू वर मांग तब उसने कही – हे प्रभु! तुम्हारा वचन भण्डार रहे। जब मुझे चाहियेगा मांग लूंगा, तब वसुदेव ने कही हमने प्रमाण किया। कैयक दिन में सिंहरथ को लाय कर जरासिंध को सौंपा तब जरासिंध ने प्रसन्न होय वसुदेव से कही तुम मेरी पुत्री परणो, तब वसुदेव ने कही, यह शत्रु कंस ने पकड़ा है।।12।। तब जरासिंध ने कंस को बुलाकर कही तेरा कुल क्या है सो तू कह। तब कंस ने कही – कौसांबी नगरी विषे मंजोदरी नामा मद्य विक्रेता मेरी माता है।।13।। यह कंस के वचन सुनकर जरासिंध चित्त में चिन्तवे कि इसकी आकृति राजपुत्र जैसी है, यह कलाली का पुत्र नहीं। उसी समय कौसाम्बी नगरी से मंजोदरी बुलाई, तब वह मंजूषा अर मुद्रका ले आई।।15।।

तब जरासिंध ने पूछी – क्या यह तेरा पुत्र है? तब उसने इसका वृत्तान्त कहा कि– हे प्रभु! यमुना के प्रवाह में से यह मंजूषा पाई उसमें से यह बालक निकसा, सो दयाकर मैं पाला, अर बड़ा किया सो नित्य सैकड़ों उरहाने लाबे तब मैं उरहानों से डरी।।17।। यह स्वभाव ही कर निर्दई बालकों से क्रीड़ा करे सो उनके परस्पर सिर भिडावे अर वेश्याओं की चोटी पकड़ पकड़ खेंचे। उनको व्याकुल कर छोड़े, तब लोगों के उराहने से मैं इसे घर से निकाला। सो यह भिक्षा के अर्थ विदेश में गया। किसी

का शस्त्र विद्या में शिष्य भया, अब शस्त्रकला में निपुण है।।20।। इसकी माता यह मंजूषा है, मैं नहीं इससे जो गुण दोष होय तो मुझे न लागें, इनके गुण दोष इसही को अथवा मंजूषा को। ऐसा कहकर वह मंजूषा महीपत को दिखाई उसमें राजा उग्रसेन के नाम की मुद्रिका सो जरासिंध ने वाची।।22।।

उसमें यह लिखा हुआ था कि यह राजा उग्रसेन अर राणी पद्मावती का पुत्र गर्भ विषे तिष्ठता ही माता पिता को क्लेशहारा भया। अर अशुभ नक्षत्र में उपजा सो मंजूषा में घालकर यमुना में बहाया। इसके कर्मों कर इसकी रक्षा होऊ।।24।। यह लेख वांचकर राजा ने जाना यह तो मेरा भाणजा है। पद्मावती मेरी बहन उसका पुत्र है तब जरासिंध हर्षित होय कंस को अपनी कन्या जीवंयशा परणाई। तब कंस ने विचारा जो मुझे जन्म होते ही पिता ने नदी में बहाया सो पिता मेरा बैरी है यह जान जरासिंध से मथुरा का राज मांगा। अर बड़ी सेना लार ले जीवंयशा सहित मथुरा आया, पिता को युद्ध विषे जीतकर बांधा अर मथुरापुरी दरवाजे में राखा आप जीवंयशा सहित मथुरा में सुख से तिष्ठे। यह जीवंयशा जरासिंध की कालिन्द सेना नामा रानी उसकी पुत्री है।।27।।

कंस ने मथुरा का राज पाया तब विचारी यह सब उपकार वसुदेव का है सो मैं भी कुछ उनकी सेवा करूं। तब प्रार्थना कर वसुदेव को महा भक्ति से मथुरा में लाया। अर अपनी बहन देवकी वसुदेव को परणाई, सो कंस के स्नेह से वसुदेव मथुरा में रहे देवकी सहित देवों समान रमे।।30।। उग्रसेन महाराजा की राजधानी कंस ने पाई सो मथुरा का राज करे, यह जरासिंध का जंवाई सो उसके अति बल्लभ। एक दिन मुनि के आहार के समय कंस के बड़े भाई अतिमुक्तक नामा मुनि कंस के घर आहार को आये। तब नमस्कार कर जीवंयशा चंचल भाव कर हंसती थकी, देवकी के रजस्वलापने के वस्त्र स्वामी के समीप डारे, अर कहती भई यह तिहारी बहन के आनन्द के वस्त्र हैं सो देखो। इस भाँति उसके चंचलता के वचन सुन मुनिवर संसार स्थिति के वेत्ता सो वचनगुप्ति को छोड़ कर कहते भये – ओह! शोक के स्थान विषे तू आनन्द को प्राप्त भई, सो यह तेरी महा मूढ़ता है।।35।।

इस देवकी के गर्भ विषे ऐसा पुत्र होयगा, जो तेरे पति अर पिता दोनों को मारेगा।।36।। तब यह जीवंयशा अश्रुपात कर भरे हैं नेत्र जिसके सो जाय कर पति को मुनि के कहे वचन कहती भई। तब कंस यह वचन सुन कर शंकावान होय तत्काल वसुदेव पै गया अर अपना वर मांगा।।38।। कही हे स्वामी! मुझे यह वर दो जो देवकी की प्रसूति मेरे घर होय सो वसुदेव तो यह वृत्तान्त जाने नहीं सो बिना जाने कही तिहारे ही घर प्रसूत के समय वह रहे। इसमें क्या दोष है? बहन का जापा भाई के घर होय यह तो उचित ही है इस भाँति वचन दिया।।40।। पीछे अतिमुक्तिक मुनि के वचन का वृत्तान्त जाना तब पश्चात्ताप उपजा। देवकी रुदन करती संती पति से कहती भई – हे प्रभु! तिहारे पुत्र

www.vitragvani.com

घने ही हैं मैं क्या करूंगी। तब पति पत्नी सहकार नामा वन विषे अतिमुक्तक स्वामी के निकट गये, वह मुनि चारण ऋद्धि के धारक अवधिज्ञानी उनको वसुदेव देवकी सहित नमस्कार कर निकट बैठे। तब मुनि ने धर्म वृद्धि दई, तब वसुदेव पूछते भये – हे भगवन्! यह कंस अपने पिता का वैरी भया। सो कारण कहा? इसी भव का कारण है या परभव का कारण है, अर इसने क्या तप किया, जो राजविभूति पाई। अर मेरा पुत्र इसका घातक कैसा होयगा, सो मैं सुना चाहू हूं। तब मुनि अवधिज्ञानी इसकी संशय निवारने के अर्थि कहते भये, महापुरुषों का यही स्वभाव है जो जीवों का महा संदेह दूर करें।।45।। अतिमुक्तिक नामा मुनि वसुदेव से कहते भये – हे देवों के प्यारे! परम सज्जन! मैं तेरे प्रश्न का उत्तर कहूं हूं सो सुन।।46।।

इस ही मथुरा विषे उग्रसेन के राज में इस कंस का जीव पहले भव वसिष्ट नामा तापस था, सो पंचाग्नि तप विषे प्रवीण।।47।। एक पांव से खड़ा रहै अर उर्द्धबाहु अर बड़ी जटा जिसके सो यह तापस ज्ञान भाव से रहित यमुना के तट विषे तप करे सो यमुना के तट जल के अर्थि लोगों की पनहारी जावें सो जिनदास सेठ की प्रियंगुतिलका नामा दासी सो भी जल भरने गई उसे सब पनिहारी कहती भईं – तू इस तापस को प्रणाम कर। तब प्रियंगुतिलका ने कही इस ऊपर मेरी भक्ति नहीं कैसे प्रणाम करूं? तब पनिहारियों ने हठ कर इसे उस तापस के पायन में डारी। तब इसने कही मैं धीवर के पायन परी यह वचन मूढ तापस सुन कर जाय कर राजा पर पुकारा जो जिनदास सेठ ने मुझे निंद्या, बिना कारण क्लेश उपजाया।।53।। तब राजा जिनदत्त सेठ को बुलाय कर पूछा – तैं तापस को क्यूं दुखाया? तब जिनदत्त सेठ ने कही मेरे अर इसके मिलाप नहीं रूसावने का कारण कहा।।54।। तब तापस ने कही इसकी दासी प्रियंगुतिलका ने मुझे दुखाया, तब राजा ने दासी बुलाई अर कही – हे पापिनी! तू तपस्वी की निंदा क्यों करी, अर नमस्कार क्यों न किया।।55।।

तब उसने कही यह तपस्वी नहीं धीवर समान कुबुद्धि है इसकी जटा विषे अनेक नन्हीं नन्हीं मच्छी मरी हुई हैं। तब राजा ने उसकी जटा सुधवाई सो अनेक सूक्ष्म मच्छी मरी हुई निकसीं तब वह तापस लज्जावान भया। लोगों ने उसकी हास्य करी, अर कही झूठा तापस है।।57।। तब वह कोप कर मथुरा से वाराणसी पुरी गया सो वाराणसी पुरी के बाहिर गंगा के तीर तप करे।।59।। वहां पाँच सौ मुनि सहित स्वामी वीरभद्र आये, तहां एक पुरुष ने बिना जाने तापस की प्रशंसा करी कि यह वसिष्ट नामा तापस महा भयंकर तप करे है। तब मुनि ने उसे मने किया, जो अज्ञान तप प्रशंसा योग्य नहीं तब उस तापस ने मुनि को पूछा मैं कैसे अज्ञानी? तब मुनि बोले – तू छै काय के जीवों को पीडा करे है इससे अज्ञानी है। इस पंचाग्नि तप विषे अग्नि के योग कर पंचेन्द्री जीव पर्यंत भस्म होय हैं तहां

विकलत्रय की कहा बात।।63।। तेरे पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, यह पाँच स्थावर अर वेइन्द्री, तेइन्द्री, चौइन्द्री, पंचेन्द्री, इन प्राणियों की हिंसा होय है। इससे प्राणिसंयम कहां प्राणियों की दया सो ही संयम है।।64।। सो तू विरक्त तो भया, परन्तु मिथ्या दर्शन ज्ञान चारित्र कर अभिमानी है। अर जहां अभिमान वहां ज्ञान नहीं सो ज्ञान विना संयम रहित तप मुक्ति के अर्थि कैसे होय।।66।। सो एक जैन मारग ही विषे तप संयम ज्ञान दर्शन चारित्र है।।67।।

वीरभद्र आचार्य्य कहे हैं – हे तापस! तेरा पिता मर कर सर्प भया सो इस इन्धण विषे बले है यह तू निश्चय जान, यह मुनि के वचन सुन तापस ने कुल्हाड़े से काठ चीरा सो बलता सर्प नजर पड़ा।।69।। तब तापस आपका तप अज्ञान रूप जाना अर अपने पिता को तप कर स्वर्ग गया जानता था। सो सर्प की योनि विषें देख खेद खिन्न भया।।70।। अर जिनधर्म का स्वरूप ज्ञानमई जान वह वसिष्ट तापस वीरभद्र नामा मुनि के निकट मुनि भया।।71।। अर अनेक मुनि तप करते थे उनके मध्य यह भी तप करने लगा, परन्तु इसके अंतराय के उदय से आहार के लाभ में अंतराय पड़े। मुनि भये पीछे वीरभद्र गुरु ने इसको शास्त्र पढ़ने के अर्थि शिवगुप्त नामा मुनि को सौंपा, उनके निकट छह मास रहा। फिर सुमति नामा मुनि तिनके निकट रहा।।75।। यति धर्म की विधि का वेत्ता यह वसिष्ट मुनि बाईस परिषह का सहनहारा पृथ्वी विषे एका विहारी भया। कईएक दिन में विहार करता मथुरा आया। उसको राजा प्रजा सब गुरु जान पूजते भये सो पर्वत के शिखर पर आतापन योग धर तिष्ठा था उसके निकट सात देवांगना आकर कहती भईं – हे देव! हमको आज्ञा करो सोई हम करें तब मुनि ने कही इस समय मोही कछु कार्य्य नहीं। इससे तुम अपने स्थानक जावो तब अपने स्थानक गईं।

अर वसिष्ट मुनि मासोपवासी अति निस्पृह महातपस्वी तिनको सब ही लोग आहार दिया चाहें सो राजा उग्रसेन ने लोगों को मने किया। जो इनिको मैं ही पारणा दूंगा अर न देवो सो किसी ने न दिया अर राजा परमाद के योग से विस्मरण होय गया। तीन बार पारणे राजा भूला। एक वेर तो जरासिंध का दूत आया अर दूजी बार अग्नि के उपद्रव कर विस्मरण होय गया अर तीजी वेर हाथी का उपद्रव भया। सो वसिष्ठ नगर विषे भ्रमण कर आहार के अलाभ से खेद कर पीड़ित भये संते वन को जाते थे सो नगर के द्वार क्षणिक खड़े रहे शरीर अति सिथिल हो गया था।।82।। तब देखकर किसी ने कही – राजा ने बड़ा अनर्थ किया, जो आप मुनि को आहार न दिया अर औरों को मने किये यह वचन सुनकर ऋषि को रोष उपजा। तब वह सातों देवांगना चितारीं सो शीघ्र ही आईं उनको कही अगले जन्म में मेरा कार्य करियो। ऐसा कह नगर बाहिर गया।।84।।

अर उग्रसेन को क्लेश देने के अर्थि निदान किया जो मैं इसका पुत्र होय इसे पीड़ा उपजाऊं, सो

वह प्राण तज उग्रसेन की राणी पद्मावती के गर्भ विषे आया।।85।। जिस दिन से गर्भ में आया उसी दिन से माता पिता को क्लेशकारी भया। एक दिन राजा राणी को क्षीणशरीर देख कर पूछा तुमको क्या दोहला उपजा है।।86।। तब राणी ने कही – हे नाथ! इस गर्भ के दोष कर जो दोहला उपजा है सो न चिंतवन में आवे, न कहने में आवे, तब राजा ने कहा जो उपजा है सो कहो, तब राणी राजा के हठ से आंसू भरि गद गद वाणी कर कहती भई – हे प्रभु! इस गर्भ के दोष कर मुझ पापनी को दोहला उपजा है कि तुम्हारा उदर विदार रक्तपान करूं, तब राजा ने अपने शरीर समान मैदे का पुतला बनवाय रस से भर उसकी इच्छा पूरी करी तब नवमें मास पुत्र का जन्म भया। सो वक्रमुख अर भ्रकुटी चढ़ाये।।89।।

सो जन्म लेते ही कांस की मंजूषा में डाल जमुना में बहाया, सो कौसांबी नगरी विषे मंजोदरी नामा मद्यकारनी ने पकड़ा। अर उसमें जो बच्चा था उसका कंस नाम धरा बाकी सब वृत्तान्त तुम जानो ही हो।।91।। वह दुष्ट निदान के दोष कर पिता का निग्रह करता भया, सो अब तेरा पुत्र उसके पिता उग्रसेन को छुड़ावेगा। यह कथा अतिमुक्तक स्वामी ने वसुदेव से कही फिर कहते भये तेरे पुत्र का संबंध मैं कहूं हूं सो सुन।।93।। इस देवकी के सातवां पुत्र नवमां नारायण होवेगा। शंख, चक्र, गदा, खड्ग का धारक कंसादिक वैरियों को हण कर तीन खण्ड का भोक्ता होवेगा।।94।। अर इससे बड़े छह भाई तद्भव मोक्षगामी हैं तिनकी मृत्यु ही नहीं इससे तू चिंता तज।।95।। सात पुत्र तो देवकी के अर एक पुत्र रोहिणी का बलभद्र। इन सभों के पूर्व भव मैं तुमसे कहूं हूं सो देवकी सहित तू सुन। इनके भव तेरे चित्त को आनंदकारी हैं।

इस ही मथुरा विषे राजा सूरसेन उसके राजविषे एक भानु नामा सेठ सो बारह कोटी द्रव्य का स्वामी उसके यमुना नामा स्त्री।।97।। उसके सात पुत्र उनके नाम सुभानु 1, भानुमित्र 2, भानुषेण 3, सूर 4, सूरदेव 5, सूरदत्त 6, सूरसेन 7 । उनकी स्त्रियों के नाम कालिंद्री 1, तिलका 2, कांता 3, श्रीकांता 4, सुन्दरी 5, द्विती 6, चंद्रकांता 7। यह सातों पुत्रों की स्त्रियों के नाम कहे।।100।। कई एक दिन में भानुसेठ अभयनंदि गुरु के समीप दिगंबर भये अर यमुना नामा सेठाणी जिनदत्ता आर्या के निकट आर्या भई।।1।। अर यह सातों भाई द्यूत क्रीडा अर वेश्या के प्रसंग कर सब द्रव्य खोय चोरी के अर्थि उजैणी नगरी गये।।2।। रात्रि समय छोटा भाई सूरसेन उसे महाकाल नामा मसाण भूमि में कुल की सन्तान के अर्थ राख कर छहों भाई नगरी में चोरी को गये, अर इसे कह गये जो हम मारे जायें अथवा पकड़े जायें तो तू यहां से भाग जाइयो अर जो हम द्रव्य लेकर आवें तो बराबर का बांट तुझे देंगे।।3।।

यह वार्ता कह कर वह छहों तो गये अर छोटा सूरसेन भाई को राखा तहां बैठा। उस समय उज्जैन का राजा वृषभध्वज उसके राणी कमला अर राजा के एक दृष्टिमुष्टि नामा बड़ा योधा उसके वप्रश्री नामा स्त्री उसके वज्रमुष्टि नामा पुत्र उसको राजा विमलचन्द्र की मंगी नामा पुत्री परणाई, मंगी की माता का नाम विमला, सो मंगी अपने भर्त्तार वज्रमुष्टि को अति बल्लभ सो सासू की सेवा विषे मन्द प्रवर्ते सो सासू का चित्त इस ऊपर कलुषित रहे सो सासू के यह उपाय रहे जो किसी प्रकार मेरे पुत्र का चित्त इससे विरक्त होय अथवा यह मरे।।7।। एक समय वसन्त के उच्छव विषे वज्रमुष्टि तो वन में रमने गया अर मंगी की सासू ने घड़े में सर्प रखाया अर मंगी से कपट कर कही – हे वधू! इसमें मोतियों की माला है सो तू पहन। तब यह घड़े में हाथ डारती भई।।9।। सो उस सर्प ने डसी, मंगी विष के वेग कर मूर्छित हो गई सो सासू ने सेवकों से कही इसे मसाण में डाल आवो, सो सासू की आज्ञा से महाकाल मसान में डाल आये।।19।। पीछे रात्री विषे मंगी का पति वज्रमुष्टि आया सो यह वृत्तान्त सुन कर प्यारी जो प्रिया ताके ढूंढने को महा स्नेह से महाकाल नामा मसाण विषे गया। एक हाथ में खडग अर एक हाथ में दीपक सो रात्री को प्रतिमा योग धरे एक वरधर्म नामा मुनि विराजे हुए थे तिनकी तीन प्रदक्षिणा दे नमस्कार कर वज्रमुष्टि कहता भया – हे पूज्यपाद! जो मैं अपनी स्त्री को पाऊंगा तो मैं सहस्रदल कमल कर तुम्हारी पूजा करूंगा।।13।। यह कह कर ढूंढने आया सो मंगी को इसने देखी उसको उठाय कर मुनि के निकट ले गया, सो मुनि के चरणारविन्द के प्रसाद से मंगी निर्विष हो गई।।14।।

तब वज्रमुष्टि मंगी को मुनि के पायन में मेल्हि आप सुदर्शन नामा सरोवर विषे कमलों के लेने को गया। स्त्री को कह गया जब तक मैं न आऊं तब तक तू यहां ही रहियो, मंगी तो मुनि के निकट तिष्ठी अर इसका पति सरोवर गया, सो सूरसेन नामा चोर सातवां भाई सो वज्रमुष्टि का उसकी स्त्री से अधिक स्नेह देख मन में विचारी पति की प्रीति में तो कमी नहीं, देखूं नारी की प्रीति इससे कैसी है? तब बाकी परीक्षा लेने को उसको अपना रूप दिखाया, सो सूरसेन महा रूपवान है अर अपने मिष्ट वचन इसे सुनाये, सो वह पापनी सूरसेन का रूप देख अर उसके मिष्ट वचन सुन काम कर विह्वल भई अर यही कहती भई – हे देव! मोहि अंगीकार करो, तब उसने कही तेरे भर्त्तार के जीवते मैं कैसे अंगीकार करूं। तेरा पति महा बलवान योधा इससे मैं डरू हूं तब उसने कही – हे नाथ! तुम भय मत करो मैं याहि खड्ग कर मारूंगी, तब सूरसेन ने कही उसे मारेगी तो मैं अंगीकार करूंगा, ऐसे कह उसका कर्त्तव्य देखने को सूरसेन छिपकर तिष्ठा।।19।।

फिर वज्रमुष्टि आय मुनि को कमल चढ़ाय अर नमस्कार करता था, सो मंगी ने उसे मारना

विचारा, तब सूरसेन ने उसके हाथ पकड़ उसे बचाया। अर सूरसेन छिप गया। सो यह वृत्तान्त देख सूरसेन का चित्त संसार से विरक्त भया। अर मंगी अपने दोष छिपावने के अर्थि मूर्छा खाय धरती पर पड़ी। तब भर्त्तार ने उससे पूछी – हे प्रिये! काहूंते तू डरी यहां तो भय का कारण कुछ नहीं। इस भाँति धैर्य्य बंधाय वज्रमुष्टि मुनि को नमस्कार कर मंगी को ले अपने घर गया।।23।। पीछे सूरसेन के छहों बड़े भाई चोरी कर बहुत धन लाये सो बराबर के सात बट करे अर सूरसेन से कही एक बट तू ले। तब सूरसेन ने बट न लिया। अर भाइयों से कही यह संसारी जीव धन उपार्जे है सो स्त्रियों के अर्थी सो स्त्रियों की चेष्टा तो मैं नीके देखी तब उसको भाइयों ने पूछी – तैं क्या देखी? तब वज्रमुष्टि का अर मंगी का सकल वृत्तान्त कहा। तब सुनकर यह सब भाई वरधर्म मुनि के निकट ही मुनि भये। अर द्रव्य अपनी स्त्रियों के पास भेजा।।27।।

कई एक दिन में ये सातों मुनि गुरु के लार उज्जयनी आये सो वज्रमुष्टि ने देखे अर अपनी स्त्री का वृत्तांत जान कर इनका वैराग्य जान वज्रमुष्टि भी मुनि भया। अर वह सातों भाई की स्त्री अपनी सासू की गुराणी जिनदत्ता आर्य्यका ताके समीप आर्या भई। सो भी उज्जयनी विषे आई, तब मंगी इनका वृत्तांत सुन संसार को निंद्य जान अपने खोटे चारित्र की निंदा कर गृह त्याग आर्या भई।।29।। यह सब महा तप कर प्रथम स्वर्ग विषे एक सागर आयु के धारक त्रायस्त्रिंशत् जाति के देव भये।।30।। तहां से चयकर धातकी खंड विषे पहले भरतक्षेत्र में विजयार्द्ध गिर विषे, दक्षिण श्रेणी में नित्यालोक नामा नगर।।31।। ता विषे चित्रचूल नामा राजा के मनोहरी नामा राणी तिनके सात भाइयों में बड़ा भाई सुभानु का जीव प्रथम स्वर्गते चयकर चित्रांगद नामा पुत्र भया। अर छह भाई इन ही माता पिता के तीन युगल भये।।32।। उनके नाम गरुडकांत, गरुडसेन, गरुडध्वज, गरुडवाहन, मणिचूल, हेमचूल यह सातों भाई चित्रांगद सुधे यहां भी भेले भये।।33।। सातों ही अति सुन्दर रूप अर समस्त विद्या के पारगामी राजा चित्रचूल के पुत्र मनुष्यों के शिरोमणि होते भये।

अथानन्तर – मेघपुर नामा नगर तहां राजा धनंजय उसके राणी सर्वश्री उसकी पुत्री धनश्री सो अति रूपवान पृथिवी विषे प्रसिद्ध।।35।। उसके स्वयंवर विषे समस्त विद्याधरों के पुत्र आये तब उसने अपने मामा के पुत्र हरवाहन के गले में वरमाला डाली।।36।। तब सब राजा क्रोध में भर गये, जो हमको इसने यूं ही बुलाये इसकी इच्छा तो हरिवाहन के देने को थी।।37।। सो वह क्रोधवान होकर अर कन्या के अर्थि परस्पर युद्ध करते भये, सो युद्ध में अनेक सावंतों का नाश भया तब यह चित्रचूल के सातों पुत्र इन विषयों को पाप के कारण जान भूतानंद नामा केवली के निकट मुनिव्रत धारते भये।।39।। सातों ही भाई आराधना आराध माहेंद्र नामा चौथा स्वर्ग उस विषे सात सागर की आयु के धारक सामान्यक जाति के देव होकर सुख भोगते भये। वहां से चयकर चित्रांगद नामा बड़ा भाई

का जीव इस भरत क्षेत्र से हस्तिनापुर विषे श्रेष्ठी स्वेतवाहन उसके स्त्री बंधुमती उसके शंख नामा पुत्र भया।।41।। अर छोटे भाई छहों उसी नगर का गंगदेव नामा राजा उसके राणी नंदयशा उसके छहों पुत्र तीन युगल भये तिनके नाम।।42।। गंग 1, गंगदत्त 2, गंगरक्षक 3, नंद 4, सुनंद 5, नंदिषेण 6 । यह सब ही अति सुन्दर होते भये।।43।।

अथानन्तर – राणी नंदयशा के चौथे गर्भ सातवां पुत्र आया सो आगामी जन्म विषे कृष्ण होनहार है अर या नंदयशा का पूर्व भव का विरोधी है। इसको गर्भ में आये पीछे राणी राजा के अभावनी होती भई सो जन्म होते ही पुत्र को तज दिया तब रेवती नामा धाय ने उसको पाला।।44।। जब यह बड़ा हुआ तब सेठ के शंख नामा पुत्र से इसका स्नेह बढ़ा। वह बलभद्र होनहार यह नारायण होनहार, एक दिन यह निर्नामिक शंख की लार मनोहर नामा उद्यान में गया वहां प्रजा के लोक भी गये थे अर यह निर्मामिक के बड़े भाई छहों भोजन करते थे। उनको शंख ने कही – यह तुम्हारा छोटा भाई है इसे क्यों न बुलावो? तब उन्होंने निर्मामिक को बुलाया सो निर्मामिक भी भोजन करे था सो नंदयशा ने देखा। तब क्रोध कर निर्मामिक के लात मारी। तब निर्मामिक को अधिक दुःख उपजा अर शंख भी खेदखिन्न भया। अर निर्मामिक को साथ ले शंख द्रुमषेणि नामा मुनि के निकट जाकर नमस्कार किया अर एकांत विषे निर्मामिक के पूर्व भव पूछे। तब द्रुमषेणि नामा मुनि अवधिज्ञानी कहते भये सो एक गिरनगर नामा नगर वहां चित्ररथ नामा राजा उसके कनकमालिनी नामा राणी सो महा गुणवंत राजा कुबुद्धियों के संग में मांस आहारी भया। उसके अमृतरसायन नामा रसोईदार सो मांस के बनावने की विधि विषे प्रवीण सो राजा ने रीझ कर उसे दश गांव दिये।

एक दिन राजा सुधर्म्म नामा मुनि के निकट धर्म्म श्रवण कर मांस में दोष जान कर आपको निंद्य तीन सौ राजाओं सहित अपने मेघरथ नामा पुत्र को राज देय मुनि भया। अर मेघरथ श्रावक के व्रत धारे सो रसोईदार से कोप किया जो इस रसोईदार ने हमारे पिता को अभक्ष का भक्षण कराया सो एक अकेला गांव इसके राखा अर गांव छीन लिये।।53।। तब रसोईदार ने मुनि से द्वेष बांधा जो इसने मेरी आजीविका हरी। सो वह प्रपंच रूप श्रावक होय कड़वी तुंबी विष रूप उसका आहार दिया सो मुनि ने गिरनारी नामा गिर पर देह तजी पाँच पिचोतरा में अपराजित नामा विमान विषे बत्तीस सागर आयु के धारक अहमिंद्र देव भये।।55।। अर रसोईदार मुवा सो मर कर तीजे नरक में गया तहां तीन सागर दुःख भोगे। फिर वह अमृत रसायन नामा रसोईदार का जीव तीजे नर्क से निकस तिर्यंच गति रूप वन विषे बहुत भ्रमा, फिर मलय नामा देश विषे पलास नामा ग्राम।।57।।

उस विषे यक्षदत्त नामा कुटुम्बी उसके यक्षला नामा स्त्री इसके यक्षलिक नामा पुत्र भया, अर उसही कुटुम्बी के एक दूजा पुत्र छोटा उसका नाम यक्षस्थावर सो एक दिन यह यक्षलिक गाड़ी भरे

www.vitragvani.com

जाय था अर मारग में एक सर्पणी थी सो छोटे भाई ने बहुत मने किया तौ भी बड़े भाई ने गाड़ी सर्पिणी पर चलाया, सो सर्पिणी का फण टूट गया, महा दुःख तैं मुई अकाम निर्जरा के योग तें मुनष्य गति में उपजा।।60।। सो सर्पिणी शरीर तज स्वेतांविका नामा पुरी विषे एक बासब नामा राजा ताके बसुन्दरी नामा राणी उसके गर्भ विषे नंदियशा नामा पुत्री भई, सो राजा गंगदेव परणी। कई एक दिन में यक्षलिक नामा कुटुम्बी मर कर नंदियशा के निर्नामिक नामा पुत्र भया। सो पूर्व भव के विरोध से नंदियशा निर्नामिक से द्वेष राखे। अर यह निर्नामिक अमृतरसायन नामा रसोईदार का जीव है सो मुनि हत्या के योग से इसने कुगति विषे महा दुःख भोगे हैं।

यह कथा राजा गंगदेव आदि सबने सुनी, सो राजा संसार से विरक्त होय देवनंद नामा पुत्र को राज दे दोय सौ नृपों सहित मुनि भया। अर वह छहों पुत्र अर निर्नामिक अर श्रेष्ठी का पुत्र शंख सेठ ये सकल मुनि होय संसार से मुक्ति होणे के अर्थि निर्मल तप करते भये। अर राणी नंदियशा अर रेवती नामा धाय अर बंधुमती सेठानी यह तीनों सुव्रता आर्य्या के निकट व्रत धारती भई।।65।।

निर्नामिक नामा मुनि सिंहनिःक्रीडत आदि तप कर सो नारायण पद का निदान करता भया अर यह सब ही तप के प्रभाव कर देवलोक गये, तहां से चयकर रेवती धाय का जीव भद्रलपुर विषे सुद्रष्टी नामा सेठ के अलका नामा स्त्री हुई। अर राणी नंदीयशा का जीव यह देवकी भई ताके वे गंग आदि स्वर्ग तैं चयकर इस जन्म विषे भी पुत्र होंहिगे तद्भव मोक्षगामी गुणों के समुद्र होंहिगे। अर अलका नामा सेठानी के मृतक पुत्र तीन युगल होवेंगे। सो इन्द्र की आज्ञा से देव अलका नामा सेठानी के ले जावेंगे, अर अलका के मृतक युगल यहां लावेंगे अर तेरे पुत्र भद्रलपुर विषे सुद्रष्टी सेठ के घर में अलका सेठाणी के नवयौवन होवेंगे।

वसुदेव से अतिमुक्तक मुनि कहे हैं – तेरे छहों पुत्रों के नाम सुन – नृपदत्त 1, देवपाल 2, अनिकदत्त 3, अनिकपाल 4, शत्रुघन 5, यतिशत्रु 6 यह छहों रूप कर समान तेरे पुत्र बाईसवें तीर्थंकर तीन जगत् के नाथ हरिवंश रूप आकाश के चन्द्र श्रीनेमनाथ उनके शिष्य होय निर्वाण को प्राप्त होवेंगे, अर इन छहों के पीछे देवकी की चौथे गर्भ में निर्नामिक मुनि का जीव सातवां पुत्र होगा, सो कृष्ण नामा नवमां वासुदेव है।।72।। इस भाँति वसुदेव अतिमुक्तिक मुनि के निकट कंस के पूर्व भव अर तप के प्रभाव कर कंस का उदय अर अपने बलदेव अर वासुदेव अर वे तीनों युगल यह आठ पुत्र अर देवकी स्त्री के पूर्व भव अर इस भव का प्रताप सुन वसुदेव परम हर्ष को प्राप्त भया। जिनमार्ग की है परम श्रद्धा जिसके निरन्तर जिनवाणी की प्रशंसा करनहारा यादव मथुरा विषे सुख से तिष्ठता भया।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ बलदेववासुदेव की तनय अनागार चरित्रवर्णनो नाम त्रयस्त्रिंशः सर्गः।।33।।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

चौंतीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहे हैं – हे श्रेणिक! देवकी का बल्लभ वसुदेव अपने वंश में जिनेंद्र का प्रगट होना सुनकर हर्षित भया अर अतिमुक्तक स्वामी को पूछता भया – हे नाथ! हरिवंश का तिलक जिनेंद्र देव होयगा। उसका कुछ वृत्तांत सुनना चाहू हूं। तब मुनि कही – इस ही जंबूद्वीप विषे सीतोदा नामा नदी के दक्षिण तट विषे पद्मा नामा विदेहक्षेत्र में एक स्यंघपुर नामा नगर वहां अरहदास नामा राजा होता भया।।3।। सो महा जिनधर्मी उसके जिनदत्ता नामा स्त्री सो भगवान की पूजा विषे प्रवीण उसने ये शुभ स्वप्न देखे तिनके नाम – लक्ष्मी 1, गज 2, शेर 3, सूर्य्य 4, चंद्र 5, उससे शुभ नक्षत्र विषे एक अपराजित नामा पुत्र भया सो किसी कर जीता न जाय। अर पृथ्वी विषे प्रसिद्ध है पराक्रम जिसका।।5।।

सो उसके माता-पिता ने चक्रवर्ति की प्रीतिमती नामा पुत्री महा गुणवंती यौवन अवस्था विषे परणाई।।6।। फिर दो हजार राजकन्या गुण रूप आभूषण कर मंडित अर परणाई। एक दिन राजा अरहदास मनोहर नामा उद्यान विषें देवों कर वंदने योग्य विमलवाहन नामा तीर्थंकर उनकी वंदना के अर्थ पुत्र परिवार सहित गया।।8।। वहां जिनवानी सुन पाँच सौ राजाओं सहित मुनि भया। अर अपराजित को राज दिया सो अपराजित राज करे। एक दिन अपराजित ने सुनी जो विमलवाहन नामा तीर्थंकर अर अरहदास मुनि गंधमादन नामा पर्वत से मुक्ति गये। सो राजा अपराजित यह बात सुन कर तेला किया। अर निर्वाण कल्याणक की भक्ति करी, अर नगर विषे जे चैत्यालय हैं उनकी पूजा कर अपने मन्दिर में गया। अपनी स्त्री को धर्मोपदेश करे था।।11।। उस समय दो चारण मुनि आये उनको राजा ने उठ कर हाथ जोड़ नमस्कार किया। वे विराजे तब उनको पूछा – हे प्रभु! जे जिनधर्मी हैं तिनको मुनियों को देख कर परम हर्ष उपजे है सो यह रीति तो अनादि की है अर आपको देख कर मेरे अपूर्व स्नेह उपजा सो कुछ पूर्व सम्बन्ध है।

तब दोनों मुनियों में बड़े मुनि कहते भये – हे राजन्! हमारे अर तेरे जे पूर्व सम्बन्ध है सो सुन। अमृत रूप वानी कर मुनि कहे हैं अर अपराजित सुने है। एक पुष्करार्द्ध नामा द्वीप विषे पश्चिम विदेह वहां विजयार्द्ध गिरि की उत्तर श्रेणी विषे एक गण्यपुर नामा नगर वहां सूर्यप्रभ नामा राजा सूर्य्य समान है प्रभा जिसकी। उसके धरती समान मन की हरणहारी धारिणी नामा राणी।।16।। उसके पुत्र तीन भये – चिंतागति 1, मनगति 2, चपलगति 3 यह तीनों ही भाई महा स्नेहवंत अर महा पुरुषार्थ के धारक।।17।। अर उसी उत्तर श्रेणी विषे एक अरिंजय नामा नगर उस विषे राजा अरिंजय उसके

अतीतसेना नामा राणी उसके प्रीतिमती नामा पुत्री जिसको अनेक विद्या सिद्ध भई, सो पृथिवी विषे प्रसिद्ध सो उसके स्त्री पर्याय को अति निन्द्या उसको विवाह करना स्वीकार नहीं सो एक दिन पुत्री पिता से कहती भई – हे पिता! जो मांगू सो मुझे वर देवो तब पिता उसका मन संसार से पराङ्गमुख जान कहता भया। जो एक तप की तो आज्ञा न दूं अर जो मांगे सो ही दूं।।20।। तब कन्या कहती भई – मेरे तो तप की वांछा है अर जो तुम आज्ञा न देवो तो मोहि गमन विषे जीते सो मेरा वर। तब राजा ने यह प्रमाण करी सो सब विद्याधर राजा ने बुलाये सो भेले भये तिनको राजा कहता भया।

हे समस्त विद्याधर! जो गमन विषे मेरी पुत्री को जीते उस ही मैं पुत्री परणाऊँ, मेरी पुत्री अर वह सुमेर की प्रदक्षिणा कर जिनवर की पूजा करे अर दोनों में पहली आय मुझे आशिषा देवे सो जीते, जो कोई इसे जीते सो परणे। यह वार्ता सुनकर सब विद्याधर इस राजा का पुत्री को विद्या विषे अधिक जान इसकी विद्या देखने को खड़े उस समय राजा सूर्य प्रभु अर धारणी नामा राणी के पुत्र चिंतागति आदि तीनों कमर बांध गमन को उद्यमी भये। अर सब देखें यह तीनों भाई कन्या की लार दौड़े। सो कोई केता दौड़ा कोई केता दौड़ा अर कन्या को न पहुंचे। सो कन्या इनको उलंघ कर सुमेर की प्रदक्षिणा दे भद्रसाल वन विषे जिन प्रतिमा पूज शीघ्र ही आय श्रम कर उपजे स्वेद के पसेव तिनकी वन्द तेई भये मुक्ताफल तिनकर शोभित पिता पै आय नमस्कार कर आशिषा दीन्हीं। तब राजा सब राजन के मध्य अपनी पुत्री को जीत का पत्र दिया। अर पुत्री को संसार के भोगों से विरक्त जान तप की आज्ञा करी। तब वह निवृत नामा आर्य्या के समीप व्रतों के समूह धर आर्य्या भई।।31।।

गमन विषे जीते कन्या ने चिंतागति आदि तीनों भाई सो दमवर स्वामी के समीप मुनि भया सो महा तप कर माहेंद्र नामा चौथा स्वर्ग उस विषे सात सागर आयु के धारक सामानिक जाति के देव भये। वहां से चल कर मनोगति अर चपलगति दोनों भाइयों के जीव गगन बल्लभ नामा पुर विषे राजा गगनचंद्र उसके राणी गगनसुन्दरी उनके मनोगति का जीव तो अमितवेग नामा पुत्र भया। अर चपलगति का जीव अमिततेज नामा पुत्र भया। सो हम दोनों भाई पुण्डरीकणी नामा पुरी विषे स्वयंप्रभ तीर्थंकर के समीप अपने पूर्व भव सुन मुनि भये। अर हम तिहारी पूछी जो चिंतागति कहां उपजा है तब केवली कही – राजा अरहदास का पुत्र अपराजित भया है। सो इस भव से पाँचवें भव भरतक्षेत्र विषे हरिवंश का तिलक अरिष्टनेमी मुनि बाईसवां तीर्थंकर होयगा। अर इस भव विषे अपराजित का आयु एक महीने का है सो अब आत्म कल्याण करना योग्य है। यह वचन कह चारण मुनि तो विहार कर गये।

अर राजा अपराजित मुनि के वचन सुन आठ दिन तक तो भगवान की पूजा करी, फिर प्रीतिकर

नामा पुत्र को राज दे आप संसार शरीर भोगतें विरक्त होय प्रायोपगमन नामा संन्यास धार आराधना आराध अच्युत नामा सोलहवां स्वर्ग विषे बाईस सागर के आयु का धारक अच्युतेंद्र भया।।41।। फिर वहां ते चयकर हस्तिनापुर विषे परम जिनधर्मी राजा श्रीचन्द्र उसके श्रीमति नामा राणी उसके सुप्रतिष्ठ नामा पुत्र भया।।42।। कई एक दिन में राजा श्रीचन्द्र सुप्रतिष्ठ को राज दे सुमंदिर नामा मुनि के निकट मुनि होय मोक्ष प्राप्त भये। अर राजा सुप्रतिष्ठ मासोपवासी यशोधर नामा मुनि तिनको विधि पूर्वक आहार दिया, सो राजा के पंचाश्चर्य भये।।44।। एक दिन राजा कार्तिक की पून्यू की रात्रि विषे आठ सौ राणियों सहित तिष्ठे था सो उलकापात देखकर राजलक्ष्मी को विनश्वर जान अपनी स्वनंदा नामा राणी का सुदृष्टि नामा पुत्र को राज दे सुमंदिर नामा मुनि के समीप चार हजार राजाओं सहित महाव्रत धारता भया।।47।। ज्ञान दर्शन चारित्र तप वीर्य्य की वृद्धि भई, ग्यारह अंग चौदह पूर्व पढ़े।।48।। अर सर्वतोभद्र आदि अनेक तप कर अपना शरीर शोषित किया जेते सिंहनिःक्रीड़तादि महा तप हैं वे सब सुप्रतिष्ठ नामा मुनि ने किये।।49।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ महोपवासवर्णनो नाम चतुस्त्रिंशत् सर्गः।।34।।

जे संसारविषै दुख दीखै हैं ते सर्व पाप के फल हैं। अर जे सुख हैं ते धर्म के फल हैं। सो तू पूर्व पुण्य के प्रभावतैं महाराज की पटराणी भई, अर महासंपत्तिवती भई, अर अद्भुत कार्य का करणहारा तेरा पुत्र है। अब तू ऐसा कर जो सुख पावै। अब अपना कल्याण कर।

हे भव्ये! सूर्य के अर नेत्र के होते संते तू कूप में मत पड़। जो ऐसे कर्म करेगी तो घोर नरक में पड़ेगी। देवगुरु शास्त्र का अविनय करना अनंत दुःख का कारण है। अर ऐसे दोष देखे जो मैं तोहि न संबोधूं तो मोहि प्रमाद का दोष लागै है। तातैं तेरे कल्याण निमित्त धर्मोपदेश दिया है।

– पद्मपुराण भाषा वचनिका, पृष्ठ 214

पैंतीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – श्री अरिष्टनेमि का चरित्र वसुदेव अतिमुक्तिक मुनि के मुख सुनि करि परम हर्षित भया। सो मुनि को नमस्कार करि देवकी सहित अपने घर गया। जैसे मथुरापुरी विषे पहले रमते हुते क्रीड़ा करि आशक्त ताही भाँति निःशंक रमते भये अर शंका सहित जो कंस ताकरि अति सेवनीक कैयक दिन में पहला गर्भ देवकी कूं रह्या तामें नृप अर देवपाल ये दोऊ पुत्र गर्भ में आये। परंतु कंस का भय नाहीं। अर शत्रु के योगतें महा भय होय। परन्तु प्रबल सहाई के सहायतें भय का नाश ही होय। वसुदेव के धर्म का सहाय, अर इंद्रादिक देवनि का सहाय, जा समे देवकी के युगल पुत्र भये। ताही समे इन्द्र की आज्ञातें एक नैगम नामा देव दोऊ पुत्रनि को भद्रलपुर विषे अलका नामा सेठानी रेवती नामा धाय का जीव ताके घरि ले गया, अर वाके मृतक युगल भया था सो देवकी के प्रसूतिगृह विषे मेल देव तौ अपने स्थानक गया। अर कंसकूं प्रसूति की खबर भई, सो वह पापी प्रसूतिगृह में आय निर्ज्जीव पुत्रनि का युगल देखता भया। तोऊ कंस पाप का प्रेरया पांय पकरि अर शिला परि पटके।।6।।

बहुरि कैयक दिन में देवकी के दूजा गर्भ रह्या ता विषे अनीकदत्त अनीक पाल आये सो इनिका जन्म भया। तब यह देव वाही भाँति इनिको भद्रलपुर विषे सुदृष्टि नामा सेठ ताकी अलका नामा स्त्री के पहुंचाये। अर वाके मृतक युगल भया था सो यहां ल्याये। तेऊ पापी कंस ने शिला परि पटकि मारे। बहुरि तीजे गर्भ शत्रुघ्न अर यतिशत्रु ये दोऊ पुत्र भये तिनहूं को वाही भाँति देव ले गया अर वाके मृतक पुत्र ल्याय डारे। वसुदेव के छहूं पुत्र निर्विघ्नपने भद्रलपुर में अलका नामा सेठानी के पले जिनिका पुण्य रक्षक तिनिकूं विघन करिवे समर्थ नाहीं। वे छहों पुत्र अतिरूपवान् सुख सूं लड़ाये थके वृद्धि कूं प्राप्त भये।।8।। ज्यूं ज्यूं ये कुमार श्रेष्ठी सुदृष्टि नामा श्रावक के घरि अलका सेठानी के पले अर बृद्धिकूं प्राप्त भये, त्यूं त्यूं सेठ सेठानी के अतुल्य लक्ष्मी बढ़ती भई। जे अपूर्व वस्तु सेठ के घर में न हुती तिनिका लाभ भया। सेठ की विभूति राजान की विभूति को उल्लंघती भई। कैएक दिन देवकी पुत्रनि के वियोग से चिन्ता रूप भई। तब वसुदेव कही तेरे पुत्र तौ भद्रलपुर विषे आनंदसू तिष्ठे हैं तू चिन्तावान् क्यूं है। तब यह पति के वचनतैं दूज की चंद्रमा की कला की नाईं कांति कर बढ़ती भई।।10।।

अथानन्तर – एकांत में देवकी अपने मंदिर विषे पति की सेज पर शयन करती हुती सो रात्री को पिछले पहरि प्रशंसा योग्य याने सात स्वप्न देखे। तिनके नाम – पहिले स्वप्न में अन्धकार का नाश करनहारा सूर्य देखा। दूजे स्वप्न में महा मनोहर पूर्ण चन्द्रमा देखा। तीजे स्वप्न में दिग्पाल लक्ष्मी

कूं स्नान करावते देखा। चौथे स्वप्ने आकाशते पृथ्वी विषे विमान आवता देखा। पाँचवें स्वप्ने देदीप्यमान अग्नि देखी। छठे स्वप्ने देवनि की ध्वजा देखी। अर सातवें स्वप्ने क्रांति करियुक्त रतन की राशि देखी अर इन स्वप्ननि के पीछे सिंह मुख में प्रवेश करता देख्या।।13।।

ए अपूर्व स्वप्न देखवे करि देवकी आश्चर्य करि युक्त भई। अर प्रात समय स्नान करि वस्त्राभरण पहरि पति के समीप जाय स्वप्न का फल पूछती भई, तब वसुदेव महा विवेकी कहते भये – हे प्रिये! तेरे पुत्र सूर्य के देखवे तें महा प्रतापी अन्याय रूप तिमिर का हरनहारा जगत का सूर्य होयगा। अर चन्द्रमा के अवलोकनतैं महा कांति का धारक परम सुन्दर पुत्र होयगा। अर लक्ष्मी के स्नान तें देवनि करि राज्याभिषेक योग्य होयगा। अर विमान देखवें तैं देवलोक तैं आवेगा अर अग्नि के देखवे तैं महा तेजवंत होयगा। अर देवनि की ध्वजा देखवे तैं देवनि करि प्रशंसा योग्य मनुष्यनि का पति होयगा अर रतन राशि देखवें तैं गुण रूप रतननि के समूह का धारक होयगा, महा सुन्दर जगत का बल्लभ धैर्य का धारक निर्भय पुरुष होयगा। ए स्वप्न के फल भर्त्तार के मुख से देवकी सुनि करि अति हर्षित भई गर्भकूं धारती भई। ज्यूं ज्यूं देवकी का गर्भ बढ़ै त्यूं त्यूं जगत का आताप मिटता गया।

ज्यूं ज्यूं गर्भ की बढ़वारी भई, त्यों त्यों गौतम स्वामी कहे हैं – हे राजा श्रेणिक! पृथ्वी विषैं सर्व जीवनिकूं सुख बढ़ता भया। जीवनि के धर्म रूप मन होय गये।।16।। अर कंस जु है सो बहनि के गर्भ के दिन गिनता जाय परंतु नारायण के गुण न गिनै जो ऐसा पुरुष मोतैं हत्या न जाय। यह न विचारी। यह तो जाने नव महीने पुत्र होयगा। अर वासुदेव का जन्म सातमे मास ही भया। सो वाहि सुधि न रही। रात्रि समय कृष्ण नामा पुत्र का जन्म भया।।18।। शंख, चक्र, गदा आदि शुभ लक्षणों का धारक अति दैदीप्यमान इन्द्र नील मणि समान श्याम सुन्दर देवकी की प्रसूति गृहकूं अपनी दीप्ति करि उद्योत करता भया।।19।।

जा समय कृष्ण का जन्म भया ता समे मित्र बांधवनि के घर विषैं कल्याण के कारण शुभ निमित्त होते भये। अर शत्रुनि के घर में भय के कारण अशुभ निमित्त होते भये। सो नरनि में उत्तम जो नारायण ताके प्रभाव तैं प्रकाश होय गया। सात दिन का अखंड कुण्ड (वर्षा) भया था, सो रात्रि समय होते ही बालककूं वसुदेव बलभद्र ले निकसे। बलभद्र की गोद में वासुदेव अर वसुदेव के हाथ में छत्र या भाँति ये दोऊ घर से निकसे। कंस के सुभट सूते थे सो सूते ही रहे। तिनमें एकहू न जाग्या। अर नगर के द्वार आय पहुंचे तहां भी लोक सूते ही रहे। अर द्वार के दृढ़ कपाट सो कृष्ण के चरण स्पर्शतें उघरि गये। अर मेह के जल की बून्द बालक के नाक में गई सो छींक का शब्द भया। सो दरवाजे की ऊपरली भूमि विषें राजा उग्रसेन तिष्ठता हुता ताने छींक का शब्द सुनि आशीष दई। जो तूं चिरकाल जीज्यो। तोहु काहू करि विघन मति होऊ। तब वसुदेव बलभद्र उग्रसेनकूं कहते भये – हे पूज्य! यह

रहस्य गोप्य राख्यो या देवकी के पुत्र तें तिहारा वंदीगृहतें छूटना होयगा।।24।। तब उग्रसेन कही – यह मेरे भाई देवसेन की पुत्री का पुत्र वैरी की बिना जानि में सुख सूं रह्यौ। ये राजा उग्रसेन के शुभ वचन सुनि वसुदेव अर बलभद्र नगर तैं बाहर गये।।25।।

जा समे कृष्ण को लेय अर बाहरि निकसे ता समे नगर का रक्षक देव वृषभ का रूप धरि सींगन पर दीपक धरि इनके आगे आगे गमन करता मारग दिखावता भया। आगे यमुना प्रवाह तीव्र बहता हुता सो कृष्ण के प्रताप तें यमुना के मध्य मारग होय गया। नदी का प्रवाह भी घटि गया। तब ये वृन्दावन के घाट यमुना उतरि अरि गोकुल गांव गये। तहां नंद गोप ताके यशोदा स्त्री सो वे दोऊ आप इनके पाइन परे इनि रात्रि विषे वे देखे।।27।। उनकूं बालक सोंप्या अर सब रहस्य जताया। अर कही तुम याहि पुत्र की बुद्धि करि पालियौ। यह बालक विशाल नेत्र देखिवे बालेनि की दृष्टिकूं कांति रूप अमृत वरषै हैं। या भाँति उनकूं समझाय कृष्णकूं वहां पधराया। अर वाही समे यशोदा के पुत्री भई हुती ताहि विश्वास के अर्थ ल्याय अर देवकी को सोंपी। अर आप दोऊ अपने स्थानक बैठे काहू के लखवे में यह वार्ता न आई।।29।।

अथानन्तर – देवकी के प्रसूति भई सुनि करि निरदई कंस प्रसूति गृह में आया, अर कन्या भई देखी तब मन में विचारी यह कन्या तो मोहि मारवे सकै नाहीं। याका पति कोऊ राजकुमार मेरा शत्रु होय तो होय। यह विचारि मन में शंकावान होय वह पापी अपने हाथ करि कन्या की नासिका चिपटी करता भया। वह कंस देवकी के मनकूं आताप का कारणहारा ए दुष्ट कार्य करि कई एक दिन गृह में सुखसूं तिष्ठा अर गोकुल विषे कृष्ण का जात कर्म भया। कृष्ण नाम धरया सो बड़ा पुण्याधिकारी नन्द यशोदा को अद्भुत प्रीति बढ़ावता वृद्धिकूं प्राप्त भया।।33।। सो बालक गदा, खड्ग, चक्र, अंकुश, शंख, पद्म इत्यादि प्रशस्त लक्षण का धारक अरुण है मुख कर चरण जाके सो गोपी अर गोपनि का चित्त हरता भया। महा सुन्दर कहिये नील कमल ता समान शोभायमान है मुख का जाका ताहि अवलोकन करते गोपनि के समूह तृप्त न भये। दूध करि पूर्ण हैं स्तन जिनके सो वह कहै याहि मैं चुखाऊं वह कहै याहि मैं चुखाऊं। यह जगत् बल्लभ सब ही को सुहावणा लागै।।34।। एक दिन वरुण नामा निमित्तज्ञानी कंस सूं कही – हे राजा! तेरो रिपु काहू नगरी में तथा वन विषे तथा गांव विषे वृद्धिकूं प्राप्त होय है सो ठीक करहु।।36।।

तब कंस रिपु के नाम की बुद्धि के अर्थि तेला किया अर पूर्व भव विषे देवी साधी हुती ते चितारीं। सो सातों ही देवी कंस के निकट आयीं अर कहती भई – तें तप करिकै हमकूं पूरव भव विषे साधी हुती सो अब हम तेरे कार्य करिवे विषे तत्पर हैं। एक बलदेव अर वासुदेव विना कहौ जाहि मारें। तब कंस कही – मेरा वैरी प्रबल काहू स्थानक विषे वृद्धिकूं प्राप्त होय है ताहि तुम हेरि कर

मारो। वाकी करुणा न करहु।।39।। या भाँति कंस कही तब वे आज्ञा प्रमाण शत्रु के ढूंढवे को गईं। तिनमें एक पूतना नामा देवी विकराल है मूर्ति जाकी सो विष के भरे आंचल तिनकूं धारे धाय का रूप करि कृष्ण को चुसायवे को गई। सो बालक पालने झूले था ताके मुख में आंचल दिया सो वे नारायण अनेक देवनि करिजे सेवनीक कठोर है मुख जिनका सो याके आंचल ऐसे दाबे जो पुकार करि भागी।।41।।

अर आप सोबते बैठते डग करि पसरते डिगते पाइनि परते दौरते अनेक कला धारते दूध दही घृत भोजन करते दिन दिन वृद्धिकूं प्राप्त भये। वे मनुसनि के इन्द्र कुल के चन्द्र उनकी उपमा काहू अर मनुषनिकूं न बनै। जो पूतना तौ भाजि करि ऐसी गई जो फेरि न आई अर कंसहूँ से न मिली। अर दूजी दैवी विकराल है शरीर जाका पायन के घात करि कृष्ण को मारिवे की है इच्छा जाकी सो विजुरी की नाईं परी। वे अर्धचक्री नरनि के नायक अंजनगिरि समान है शोभा जिनकी अर विस्तीर्ण है हृदय जिनका बालक है तोऊ कोप करि वाके पांव याकूं पकरि दूर वगाई अनेक देव हैं सहाय जिनिके।।43।। सो वह दूजी ही देवी गई अर दोय देवी याकूं दाबि करि मारिवे के अर्थ जामन अर अर्जुन दोय वृक्ष का रूप धारि दाहिणी बांई ओर ठाड़ी। अर यशोदा ने बिलोनड़े के थंभ कै डोरि सूं मोहनकूं बांधा सो महाबली थंभकूं उपाड़ि बाहरि जाय सो उन दोऊनि वृक्षनि को दाहिने हाथ सूं अर बांये हाथ सू उपारि करि दूरि बगाय दिये। सो नंद अर यशोदा दोऊ पुत्र बाल्यावस्था विषे पराक्रम देखि अति अचरजकूं प्राप्त भये। अर मन में जानी यह सामान्य मनुष्य नाहीं कोऊ महापुरुष हैं सो घरि घरि बालक की सबनि के प्रशंसा होती भई बारंबार देखिवे योग्य वे सब महारूपवान गोकुल विषे वृद्धिकूं प्राप्त भया, बहुरि पाँचमी देवी वृषभ का रूप धरि वासुदेव के मारिवे को आई। सो वह वृषभ ऐसा शब्द करे मानूं समुद्र गरजै है अर इधर उधर याहि मारिवेकूं फिरै। तब कृष्ण ने वाकूं मायाचारी देव जान वाका कंठ पकरि दूर बगाय दिया। कैसे हैं कृष्ण, सुकंठ कहिये सुन्दर है कंठ जिनका।

भावार्थ – ऐसा मनोहर कंठ अर मनुष्यनि का नाहीं। महा मधुर है वचन जाके।।46।। बहुरि एक देव पाषाण मई अति वर्षा करि गाय गोप अर गोपिन सहित गोपाल के मारिवेकूं उद्यमी भया। तब गोपाल अपने भुज करि गोवर्धन पर्वत उठाय लिया अर गिरि के तले गाय अर गोपी बचाय लिये। ए कृष्ण के चरित्र मनुष्यनितें अगोचर बलभद्र के मुख सुनि करि माता देवकी अपने पुत्र देखिवे अर्थ उपवास के मिस करि गोकुल में आई। सो कृष्ण के सुकंठ करि गाये जे गीत सो देवकी सुने अर गायनि के घण्टानि की ध्वनि सुनि करि देवकी परम सन्तोष कूं प्राप्त भई। कृष्ण के कण्ठ के गीत सुनि देवनि का मन हरया जाय सो देवकी की कहा बात।।49।।

अर देवकी ने दोऊ भाइनि के योग करि वन महा मनोहर देख्या। कहुं यक वन महा सचिक्कण जो कृष्ण का वर्ण नाईं इन्द्रनील मणि समान श्याम भासै है। अर कहूं इक बलिभद्र के शुक्लवर्ण करि शुक्ल भासै है, अर गायनि के समूह करि वन शब्दायमान होय रह्या ऐसे वन देखि करि माता हर्षकूं प्राप्त भई। वसुदेव सूं कह्या सो अतिप्रसन्न भया बलिभद्र केशवकूं नित प्रति जाय करि कला गुण सिखावे, सो बुद्धिमान तुरंत सीख ले। गुरु का वचन जो शिष्य विनयवान होय ताहीं के लागे। या भाँति हलधर करि हरि विद्याभ्यास करि काल व्यतीत करै। सो कृष्ण बाल्यावस्था को उल्लंघ करि कुमार अवस्था कूं प्राप्त भया, परन्तु वह महानुभाव निर्विकार परदारा का परित्याग जाके सो विषयानुरागी न होता भया। जो बड़े पुरुष हैं तिन तैं अयोग्य क्रिया न होय। अर जगत का बल्लभ जो इनिको देखि के स्त्रीनि का मन मोहित न होय। वे गोपबधू इनिके निकट रास विलास करती भईं। अर ए देवनि समान नृत्य अरु गान करते भये। अर कछू ही विकार नाहीं। जैसे सुवर्ण की मुद्रिका में मणि सोहे तैसे कृष्ण गोपिन में सोहते भये।।57।।

या हरि विषें जीवनि का अनुराग वृद्धि को प्राप्त होता भया। अर याहि न देखें तब सबनि के विरह उपजे। एक दिन कंस अपने शत्रु को ढूंढवेकूं व्रज मण्डल में विहार करता भया। तब कंस को वाहरि निकस्या जानि नन्द अरु यशोदा पुत्र को वन विषें ले गये। तहां एक राक्षसनी अट्टहास करती रूक्ष हैं नेत्र जाके अर विकराल है मुख जाका सो कृष्ण को देखि करि अपनी काया बढ़ाई अर खायवेकूं दौरी। तब हरि अपने पराक्रम करि वाहि दूर भगाय दई।।60।। अर कृष्ण माता पिता की लार आगे जाय था सो मारग में सालमली वृक्ष के खण्ड का एक थंभ बने था तहां थंभनि की पंकति अति भारी सो अनेक मनुष्यनितें न उचैं। ताहि कृष्ण उठाय करि मण्डप परि धरता भया। ये पुत्र के पराक्रम देखि माता पिता निसंक भये। जो याहि मारिवे समर्थ कोऊ नाहीं।।66।।

तब अपने स्थानक जाय सुख सूं बैठे। अर कंस ब्रज विषे विहार करि मथुरापुरी आया। सो मथुरापुरी में देवालय विषें तीन रत्न अकस्मात् उपजे। नागसैय्या, सिंह के आकार के हैं पाये जाके अर पंचानन संख, अर धनुष, सो निमित्तज्ञानी ने कंस सूं कही। जो नाग सय्या परि आरोहण करै अर धनुष चढ़ावे अर संख बजावै सो तेरा शत्रु है। सो कंस ने शत्रु के निश्चय करवे अर्थि नगर में घोषणा फेरी। जो पुरुष नाग सय्या परि आरूढ़ होय अर धनुष चढ़ावे अर शंख का शब्द करै ताही मेरी पुत्री अपराजिता परणाऊं। अर जो मांगै सो देऊं। सो या घोषणा को सुनि करि अनेक राजकुमार आये सो काहू ही तैं यह कार्य न भया। तब विलखे होय उठि गये।

अथानन्तर – जरासिंधु का पोता भानु गोकुल में आय उतरया। सो कृष्ण को पराक्रमी जानि

याकी सामर्थ्य प्रत्यक्ष देखि कार्य के अर्थि याहि मथुरा ल्याया।।74।। सो कृष्ण भानु की लार आयकरि नागसय्या देखी। महा भयंकर जे सर्प तिनके फणनि करि डरावनि सो वा नागसय्या पर आरूढ़ होता भया। अर माया मई भुजंगम तिनके मुख करि निकस है धूम ता करि भयंकर अग्नि की ज्वालाकरि प्रज्वलित जो देखा न जाय सो धनुष माधव ने तत्काल चढ़ाया। अर शंख फूंका ताका शब्द दसूं दिशा में भया। ये कार्य कृष्ण किये अर भानुकुमार के किये जनाये। तब सब लोक ताके महात्म की प्रशंसा करते भये। शंख ऐसा वाज्या मानो समुद्र ही गाज्या। कैयक तो कहैं हैं ये कार्य भानुकुमार ने किया अर कैयक कहे एक सांवरा लरिका हुता ताने किये। तब भानुकुमार ने कंस की शंकाकरि कृष्ण के लार अपने चाकर देय गोकुल में पठाय दिया।।78।। अर आप शय्या, अर धनुष शंख के समीप ठाडा। जे भानु के सेवक कृष्ण की लार गये हुते ते कृष्ण के गुणनि कर अति अनुरागी भये।

यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिकसूं कहे हैं – हे श्रेणिक! कृष्ण गर्भ में न आया हुता ता पहलैं ही बांध्या है वैर जाने ऐसा कंस महा दुष्ट सो कहा करि सकै। कृष्ण ने पूरव भव विषे जिन धर्म आराध्या सो सहाई, तब शत्रु का किया कहा होय।।79।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ कृष्णबालक्रीडावर्णनो नाम पंचत्रिंशः सर्गः।।35।।

यद्यपि श्री वीतराग देव राग-द्वेष रहित हैं, जे सेवा करैं तिनतैं प्रसन्न नाहीं, अर जे निंदा करैं तिनतैं द्वेष नाहीं, महा मध्यम भाव को धारै हैं। परन्तु जे जीव सेवा करैं ते स्वर्ग मोक्ष पावै हैं। जे निंदा करैं ते नरक निगोद पावैं।

काहेतैं? जीवों के शुभ-अशुभ परणामनितैं सुख-दुःख की उत्पत्ति होय है। जैसैं अग्नि के सेवनतैं शीत का निवारण होय है अर खानपानतैं क्षुधा-तृषा की पीड़ा मिटै है, तैसैं जिनराज के अर्चनतैं स्वयमेव ही सुख होय है अर अविनयतैं परमदुख होय है।

– पद्मपुराण भाषा वचनिका, पृष्ठ 214

छत्तीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – सरद ऋतु प्रगट भई। वाणासन जाति के वृक्ष तेई भये धनुष तिनके भ्रमर रूप फिडिचि चढ़ी। अर कल हंसनि के मनोहर शब्द तेई शंखनि के शब्द सो रिपु का मद सोई भया मोरन का शब्द ताहि तिरस्कार करते भये।

भावार्थ – सरद विषें मयूरनि का शब्द नाहीं सोहै है तैसे कृष्ण की नवीन लक्ष्मी सोई भई सरद ऋतु ता विषें कंस का मद न सोहता भया।।2।। अर सरद ऋतु विषें मेघमाला के अभावतैं चन्द्रमा की किरणि आकाश विषें प्रगट भासती भई। आकाश तो चन्द्रकला करि दैदीप्यमान भासता भया। अर पृथ्वी विषे कुधर्म विघटि गया। पृथ्वी निर्मल होय गई। अब कैयक दिन में कंस के घात करि बढ़ैगा हरि का प्रताप ताकौ प्रगट करती सरद ऋतु सोहै है।।3।। सरद ऋतु विषें विस्तीर्ण जे नदीनि के पुलनि तिन पर आय परे हैं जल के फैन अर निर्मल होय गई है नदी। अर निर्मल होय गये हैं सरोवर अर सरोवरनि में फूले हैं स्वेत कमल तिनिके मिसतैं यह ऋतु मानूं हरि का उज्ज्वल यश ही विस्तारती थकी सोहै है। सो सरद रितु विषे पृथ्वी सब दिसि हर्ष की भरी नारी समान सोहती भई। कैसी है वसुन्धरा रूप नव वधू, नवा वर जो नवल नाग ताके कण्ठसूं लागिवे की है इच्छा जाके।

भावार्थ – धरित्री रूप स्त्री धरिणी को वर को वरा चाहे है। कैसी है धरित्री रूप स्त्री, वृक्षनि के फलरूप कुच तिनके भार करि नम्रीभूत है अर नाना प्रकार के काचे धान विकसि रहे हैं तेई मानूं कंचुकी समान सोहैं, अर स्त्री हू पहिली गर्भ ग्रहै हैं पीछे जणै हैं। अर भूमिहू पहले वीजकूं ग्रहै है पीछे अंकूरा काढ़ै है, अर नाना प्रकार के त्रण अर काचे धान तिनकूं चरिकर हर्षित भये गाय अर बलध शब्द करें हैं, तेई हैं शब्द जाके।

भावार्थ – स्त्री तौ हर्षित होय गावें हैं अर गाय बलध हर्षित होय ढाड़ैं हैं, सो उनका ढांड़ना सोई धरा रूप नारी का शब्द है सरद रितु विषें भूमि रूप भार्या कृष्णकूं हर्ष उपजावती भई, अर रिपुनि का नाश दिखावती भई।।5।।

अथानन्तर – जानी है हरि की सकल क्रीड़ा जाने ऐसा कंस सो बहुरि भी कृष्ण के नास अर्थि नाग द्रह विषे सहस्रदल कमल ताके ल्यायवेकूं गोकुल के गोपनकूं आज्ञा करी। सो वा सरोवर विषें महा विकराल नाग कुमार देव रहै ता विषें कोऊ स्नान करिवे कूं जाय न सके। सो वह यमुना का द्रह नाग करि महा विषम तहां तैं कमल कौन ल्याय सकैं। कंस जानी वह मेरा शत्रु नाग थकी नाश को प्राप्त होयगा। जब कंस का आज्ञा पत्र गोकुल में आया तब सबनिकूं चिन्ता उपजी। यह कमल कौन ल्यावै। तब महाबली वासुदेव अपनी भुजा का है बल जाके सो लीला मात्र मणिनि की किरणि

तिनका समूह तिनितें निकसैं हैं अग्नि के फुलिंगनि के समूह तिनिकरि हरि के जरायवे की इच्छा जाके। तब माधव उछलिकरि वाके सिर परि जाय परे। अर नाग कूं नारायण ने पांव सूं खूंधा अर सहस्रदल कमल ले वाहिर आया। सब गोप अर गोपी द्रह के तट वृक्षनि के तलैं चिन्ता रूप खड़े थे। अर हलधर हू खड़े थे। सो हरि को देखि करि सबही हर्षित भये। अर गोप गोपी गान करते भये। अर बलभद्र अति प्रसन्न धन्य धन्य यह शब्द उच्चार करते भये। भुजंगकूं भुजनितैं जीति करि कमलकूं लेय पवन नाईं शीघ्र ही मुकुन्द आये। सो देखि करि सब सखा फूलि गये।

लहलहाट करते दैदीप्यमान पीतांवर तिनिकरि शोभित आनन्द के भरे अति उल्लास रूप श्याम सुन्दर कारी नाग परि परते ऐसे सोहते भये जैसे श्याम शिला पर जानहु। नागकूं जीति भुजानितें उपारि सहस्रदल कमल को साथ ल्याये। अर और अनेक कमल गोप ल्याये तिनके भारे बंधाय के सबसे कंस पै पठाये। सो पापी पराये गुणनि का न सहि सकनहारा क्रोध करि तप्तायमान भया। अर अति उष्ण उस्वास वाके मुखतें निकसे। अर आज्ञा करी नंद के नंदन आदि सब ही ग्वाल मल्ल युद्धकूं इहां आवैं, यह आज्ञा करि, मल्लयुद्ध के अर्थि अपने सब मल्ल भेले किये। जघन्य मध्यम अर उत्कृष्ट सब ही मल्ल एकत्र भये चक्र अर करोत सारिखा हैं तीक्षण चित्त जाका। तत्काल माधव को मारया चाहै है।

यह शत्रु का चरित्र वसुदेव ने जान्या जो याके विलम्ब नाहीं शीघ्र ही हरिकूं हत्या चाहे है। तब वसुदेव अपने अनावृष्टि पुत्र को मंत्र करि बड़े भाई समुद्रविजय के निकट समाचार पठाये जो इहां यह चरित्र है। यह वार्ता सुनि शत्रु की दुष्टता जानि समुद्रविजय आदि वसुदेव के बड़े भाई अर और यदुवंशी रथ तुरंग हाथी पयादे समस्त अपनी सैन्या सहित शीघ्र ही वसुदेव के समीप आये। पृथ्वी को शोभित करते शस्त्रनि के धारक सावन्त वसुदेव के निकट आये। उपज्या है गर्व जाकूं अर दुष्ट है हृदय जाका ऐसा कंस ताके विदारिवे की है इच्छा जिनकी।।9।। चिरकाल का बिछुरा है छोटा भाई वसुदेव ताके देखवे मिस करि बड़े भाई मथुरा आये। कंस को यह जतावनी जो छोटे भाई सूं मिलवे आये हैं। जब यादवनि का इन्द्र समुद्रविजय सब भाइन सहित आया तब वसुदेव सन्मुख गये। अर कंसहू संका का भरया सन्मुख जाय इनिकु पुरी में ल्याया। नगर के मन्दिरनि की शोभा देखि करि यादवनि के नेत्र तृप्त भये। कंस ने सबनिकूं डेरे दिवाये अर बहुत आदर किया। भांति भांति की इनके सामग्री पठाई। जैसे कोऊ स्नेही स्नेह दिखावे तैसे कंस ने कपट सूं दिखाया, दिन प्रति उनका सेवा दान मान प्रमाण करि पाऊनगति करी मानूं स्नेह ही दिखावे है।

कैयक दिन यादवनि सहित यादवनि का ईश्वर समुद्रविजय भाई के निकट रह्या अन्तर में है दाह जिसके अर गोकुल में हैं गोप तिनको मल्लयुद्ध के अर्थि कंस पत्र पठाया। तब बलिभद्र सब अर्थ जान्या अर सब गोपनि को युद्धाभिलाषी करते भये अर कृष्ण के निकट महा प्रवीण बलिभद्र यसोदा

www.vitragvani.com

को तेज करि कठोर वचन कहते भये – हे यशोदे! तू कृष्ण को स्नान क्यूं न करावै एती ढील क्यू करै है। तोहि तनहु की सुधि नाहीं। एक वेर कहौ भावो बहुत वेर कहौ तू अपना स्वभाव नाहीं तजै है जैसे सीप महा उज्ज्वल पवित्र मुक्ताफल को निपजावै हैं। परन्तु समुद्र विषे उपजी हैं तातैं समुद्र की लहरि का स्वभाव चंचल सीप हू धरै है। तैसे तू कृष्ण सारिखे पुत्र रत्ननि की उपजावनहारी है परन्तु गोपिनि के स्वभाव को नाही तजै है। ए वचन हलधन ने कहे तब यशोदा के नेत्र आंसूनि करि भरि आये अर कछु उत्तर न दिया। शीघ्र ही न्हायवे को जल किया अर भोजन की तयारी करी।।18।।

तब दोऊ भाई बोले – स्नान तो हम नदी विषे करेंगे। अर भोजन की तयारी कर लेहु। सो दोऊ वीर महाधीर नदी के तीर गये। तहां एकांत विषे हलधर चक्रधर सूं कहता भया – हे कृष्ण! तू आज उदास क्यूं हैं? तेरे मुख से लंबे उछवास निकसे हैं अर तेरे नेत्र आंसूनि करि सजल हैं अर तेरा मुख दाह करि मुरझाये कमल समान भासै है कांति रहित दीखे है। यह कहा कारण है सो मोहि कहौ।।20।। विकसित बदन बलिभद्र ताने स्नेह सहित माधवसूं पूछा। तव माधव कहते भये – हे आर्य्य! मेरे वचन सुनो। चित्त दुःख करि युक्त देख्या ताका कारण कहूं हूं। तुम मेरे शास्त्र पढ़ावने के गुरु अर महा पण्डित अर या लोक की सकल रीति के ज्ञाता अरनि को मारग वतावहु सो तुम सारिखे विवेकी मेरी माता पूज्य ताहि तिरस्कार के वचन कहे यह तुम को योग्य है।।21।।

ये वचन वासुदेव उलाहना रूप कहे तब बलदेव भाई को छातीसूं लगाय रोमांच होय गदगद वाणी करि हर्ष के आंसू नाखता प्रगट करी है अन्तःकरण की विमल वृत्ति जानें सो सब वृत्तांत केशव सूं कहता भया – हे धीर! जरासिंधु की पुत्री है सो कंस परन्या है ताके घर कंस के बड़े भाई अतिमुक्तिक नामा मुनि आहार को आये सो वा पापिनी ने मुनि के निकट तेरी माता देवकी के रति के वस्त्र डारे तब मुनि कहा या देवकी के नवमा नारायण पुत्र होयगा सो पहले तेरे पति कूं मारेगा। अर पीछे तेरे पिता को मारेगा। सो बाने ये मुनि के वचन कंस सूं कहे। सो तो पहली तेरे छह भाई तीनि युगल भये वे तौ तद्भव मोक्षगामी हैं। सो भद्दलपुर में अल्का नामा सेठानी के घर हैं अर अल्का के छह पुत्र तीन युगल मृतक भये सो देवनि देवकी की प्रसूति गृह में आय डारे। सो मूवे हु कंस ने शिला पर पछार मारे। अर चौथे गर्भ सातवा पुत्र तू भया सो सातवें महीने ही जन्म्या शत्रु न जानि सका सो तोहि होते ही नन्द के घर आय राख्या है। ये वचन बलदेव के सुनि वासुदेवकूं बड़े भाइनि के मारिवे करि कंस परि क्रोध उपजा।

अर बड़े भाई कही – तेरे मारिवे के उपाय बाने बहुत किये, जन्म हीतें उपाय करे है अर अब मल्लयुद्ध का उपाय रच्या है। ये वचन हलधर के मुरलीधर सुनि करि कंस के मारिवे विषे चित्त धरता भया।।24।। अब तक हरि के जीव में यह हुती जो मो सारिखा सावन्त अहीरन के कुल में क्यों

उपजा। अब रोहणी का पुत्र जो बलदेव ताके मुख आपकुं हरिवंशी जान्या जो हमारा क्षत्रीनि का कुल है। जा वंश विषें श्रीमुनिसुव्रतनाथ भए अर नेमनाथ होहिंगे। मैं देवकी का पुत्र हूँ अर मेरा पिता वसुदेव है अर यह बलदेव मेरी बड़ी माता का पुत्र वसुदेव का नन्दन मेरा बड़ा भाई है। अर समुद्रविजयादि वसुदेव के बड़े भाई सब मेरे बाबा हैं। मैं बड़े कुल विषे उपज्या हूं अर नन्द यशोदा के पल्या हूं सो ये मेरे धर्म के माता पिता हैं ऐसा सब वृत्तान्त जानि कृष्ण का मुख कमल फूलि गया हरि कहिये इन्द्र ता समान यह हरि कहिये वासुदेव राजानि का इन्द्र है।।25।।

दोऊ भाईनि के जन्मान्तर का स्नेह ताकरि मिलि गये हैं मन जिनके सो यमुना मैं स्नान करि गोपनि के समूह सहित अपने घर आये दोऊ भाई जल क्रीड़ा विषे निपुण अर देवनि करि सेवनीक।।26।। सो आय करि भोजन किया बलिभद्र ने इनके लैवे योग्य वस्तु थी सो लई अर हरि ने महा सुगन्ध महास्वाद गायनि का घीव अर दधि दुग्ध मिष्टान्न आदि अनेक रस अर दारि भात नाना प्रकार के व्यंजन अर खीरि आदि अनेक भोजन मणिनि के चौक में सुवर्ण के पात्र में भली भांति किये अति नरम अति सुन्दर सुगन्ध अति मिष्ट अति उज्ज्वल तन्दुल आहार कर कृष्ण उठे। दोउ भाई महा सुगन्ध चन्दन अर गजा अतर लगाय करि नाना प्रकार के पुष्पनि को धरे अति सुगंध हैं शरीर जिनके पान सुपारी लवंग इलायचीन चावते अरुण हैं अधर जिनके दैदीप्यमान है मुख जिनके।।28।।

नाना प्रकार के मल्लविद्या के करणहारे तिनिमैं प्रवीण समस्त विद्यानि में प्रवीण किये हैं सुन्दर भेष जिनि बड़ा भाई नीलाम्बर छोटा भाई पीताम्बर उर विषें लगाया है सिन्दूर का रंग जिनि अर नवीन पुष्पनि की वनमाला तिनके हैं सिंदुरे जिनके मालती आदि अनेक पुष्पनि करि शोभित।।29।। अपने मन विषें कंस का विध्वंस विचार करि चले अपने चरणनि के घातकरि पृथ्वी को क्षोभ उपजाबते महा भयंकर मल्ल का वेष धरै अपने गोप के समूह सहित मथुरापुरी की ओर चाले। मारग में कंस के पक्ष के असुर इनि परि आये। एक नाग रूप होय आया एक गर्द्धव होयकर आया एक खोटा तुरंग होय आया फाड़ा है मुख जिनि कृष्ण के विनासिवे को चलाय करि सन्मुख आया। ए कृष्ण ने सब भगाये अर एक केसी नामा असुर आया। सो उसको सबने भगाया। सबनि को जीति करि नगर में प्रवेश करते हुते।

सो नगर के द्वार दोय गजराज आये। मद के भरिवे करि भीजि रहे हैं कपोल जिनके सो एकै लार दोऊ गज कंस की आज्ञातें इनि परि ल्याये। तिनको जानि करि दौऊ भाई हर्षित भये। दोऊ युद्ध की रंगभूमि विषे महा मल्ल हैं। उन दोऊ हाथीन में एक चंपक नामा हाथी ताके सन्मुख तौ राम कहिये बलदेव गये, अर दूजे हाथी का नाम पादभर ता परि फणिरिपु कहिये नाग के दमनहारे दामोदर गये। सो लीला मात्र दोऊ भाई गजनिसूं युद्ध किया। सो कठिन चोट लगावें तौ वे मरि ही जांय। परि इनिको

न मारना सो लीला मात्र में दोऊ भाई इनि दोउ गजन के दांत उखार लिये। जैसे सांपनि करि बैढे बांस के अंकुरे उखारे तैसे बंधन करि वेष्टित हस्तीन के दांत उखारि लिये।।34।। मूलतैं उखरि गये हैं दांत जिनिके ऐसे वे हस्ती विरस शब्द करते भागि करि नगर में पैठे। अर ए दोऊ वीर अपने गोपनि सहित नगर में आये।।35।। अपने कांधेन करि महा मल्लनि ठेलते ये दोऊ मल्ल रंगभूमि में आये। कैसी है रंगभूमि, कमलनि की कूपलिनि करि मण्डित शोभित है द्वार जाका। अर बड़े बड़े राजा जहां कौतुक देखे हैं कमलिनि परि भंवर गुंजार करे हैं।।36।।

हरि अर हलधर का लीलामात्र गर्जना, खम का ठोकना अर अपने चरण अर भुज दण्ड तिनकी चेष्टा का करना अर नाना प्रकार की मल्लविद्या की कला अर दृढ़ दृष्टि अर दृढ़ मुष्टि तिनकर वह रंगभूमि सोहती भई। जैसे वस्त्र का सेहरा हालता थका सुन्दर भासे तैसे इनकी चेष्टा सुन्दर भासती भई। ता समे वसुदेवकूं बलदेव सेन करि सब दिखावता भया। हे हरि! यही बैरी कंस है। अर वे याके निकट जरासिंध के लोग हैं। अर ये समुद्रविजयादिक तेरे बाबा हैं अर ए काका बाबानि के बेटा हैं। कृष्ण तो उनकी ओर देखि रह्या। अर वे सब भाई काका बाबा के इन दोऊ भाइनि की ओर देखि रहे।।38।। अर कंस मल्लनिकूं आज्ञा करी जो तुम परस्पर मल्लयुद्ध करहू। सो सब ही अपनी जोड़ी से युद्ध करते भये। जहां अनेक देशनि के राजा देखे हैं अर अनेक लोक भेले होय रहे हैं तिनिका अति क्षोभ होय रहा है। अर अनेक मल्ल गर्जना करे हैं अर खम ठोके हैं। तिन करि रंगभूमि रमणीक होय रही है, जैसे आरणे भैंसे क्रोध के भरे परस्पर लरें तैसे मल्ल परस्पर लड़े हैं।।39।।

अथानन्तर – दुष्ट कंस कृष्ण परि चाडूर नामा मल्ल को आज्ञा करी। कैसा है चाडूर, पर्वत की भारी भीति समान विस्तीर्ण है वक्षस्थल जाका अर प्रगट महा दृढ़ घाणी समान है थम्भ जाके, जामें अनेक पेलि राखे हैं मल्ल जाने जो स्वामी की आज्ञा प्रमाण सबके सन्मुख आया अर कंस ने विष समान विषम दृष्टि करि दूजा मुष्टी नामा मल्ल ताहू को सैन करी सोहू आया।

भावार्थ – दोऊ भेले होय भूधरकूं मारे। सो दोऊ महामल्ल माधव पै आये। कैसे हैं दोऊ मल्ल, महा कठोर महा तीक्षण विकराल है नख जिनके अर दोऊ मुष्टि बांधे प्रगट सिंह समान हैं। भयंकर है आकार जिनिका अर स्थिर है चरण जिनका।

भावार्थ – जिनके पग अति दृढ़ हैं सो कृष्ण तो चाडूर मल्ल के सन्मुख आया, परस्पर मुष्टिन कर युद्ध होने लाग्या। अर मुष्टी नामा मल्ल परि बलभद्र पधारे। कैसा है मुष्टी, वज्राघात समान है कठोर मुष्टि जाकी वाहि आवते को देखि करि बलदेव बोले – तिष्ठ तिष्ठ ऐसा कहि एक थपेड़ दीन्ही। सो वाके तत्काल प्राण निकसि गये। मनुष्य की कहा शक्ति जो सलाका पुरुषनिकूं लरे, इनिसूं देव न लरि सकैं। अर कृष्ण ने चाडूर को पकस्या अर भुज जंभ में पेलि डाला रुधिर की धारा वाके

www.vitragvani.com

मुखतें निकसी। तत्काल जीव निकसि गया। यद्यपि वह चाड़ूर अति समर्थ हुता अर बलवान महा गर्ववान जासूं कोई मनुष्य जीति न सके। परन्तु हरि पै वाका जोर कहां चलै। कैसे हैं हरि, हरि कहिये इन्द्र अथवा हरि कहिये मृगेन्द्र ता समान महावीर्य के धारक हैं।।40।। वे दोऊ मल्ल एक हजार सिंह अर एक हजार माते हस्ती तिनतैं अधिक बल के धारक हुते सो तत्काल दोऊ मल्ल हरि हलधर ने मारे। इन दोऊनि को मूवे देखि करि कंस आप चलाय करि आया। तीक्षण शस्त्र हैं जाके कर विषें। तब समस्त रंगभूमि चलायमान होय गई। जैसा समुद्र गाजे तैसा गाजता कृष्ण परि आया तब कृष्ण महाबली वाके हाथतें खड्ग खोंसि लई अर म्यान में घाल दई। अर वाहि गाढा पकऱ्या क्रोध करि वाके पग पकरि चहूं ओर फिराय अरि शिला परि पटकि माऱ्या अर हंसे। अर कही याही बल परि गर्व करे था।।45।।

जब कंस कूं केशव ने पछाऱ्या तब कंस की समस्त सैन्या क्रोध करि युद्ध कूं उद्यमी भई तब अकेले बलभद्र कुटिल हैं भृकुटी जिनकी महल का थंभ उपारि योद्धानि परि दौरे। वज्रपात समान थंभ का घात ताकरि कैयक मारे। तब सर्व योद्धा भागे। बलदेव वासुदेवसूं कौन लरि सके। तब कंस के सावंत सब भागि गये। तब जरासिंधु की बड़ी सेना कंस के तावे हुती ताके बड़े बड़े राजा युद्ध को उद्यमी भये। यादवनि परि विषमदृष्टि है जिनकी जैसे समुद्र गाजै तैसा शब्द करते भये। सब ओरतैं सावंत उठे। समस्त सेना कंस के कार्य विषे सावधान सो बलदेव वासुदेव के प्रतापतें सकल सेना भाग गई।।43।।

अथानन्तर – बलदेव वासुदेव बड़े भाई सहित रथ पर बैठि मल्ल का भेष धरैं अनेक आभरण करि युक्त माता पिता के मंदिर गये, सो मंदिर समुद्रविजयादिक सब भाइनि करि पूर्ण है।।48।। हलधर अर हरि अनुक्रमतैं बड़ेनि के पाय परे। पहली समुद्रविजय के बहुरि समुद्रविजय तैं छोटे अर वसुदेव तें बडे आठू भाई तिनके पायं परे। बहुरि मातानि के पायं परे। सबनि अशीष दई चिरकाल का विरह से उपज्या जो अन्तरंग का आताप ताहि मिलिवे रूप जल की धारा करि बुझावते भये।।49।। देवनि समान वसुदेव अर देवीनि समान देवकी सो अपने पुत्र का मुख देखि अतुल सुख को प्राप्त भई। कैसा है पुत्र, बुझाई है शत्रुरूप अगनि जाने। अर सदा प्रफुल्लित है वदन जाका ऐसे पुत्र का संयोग सुख का कारण क्यों न होय। या समान अर सुख कहा। अर वह यशोदा की पुत्री वसुदेव ले आये हुते जाका नाक कंस ने चिपटा किया सो हू कृष्ण को देखि आनन्द रूप भई।।50।। जा समे कृष्ण घरि आये ताही समे उग्रसेन को निर्वंधन किया। चिरकाल बंधीगृह के योगतें क्षीण है शरीर जाका। कंस की शका तैं रहित सकल नगर उछाह रूप भया।।51।।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

कंस के सकल सज्जन अर ताकी बहूँ अत्यन्त रुदन करती भईं अर कंस को शीघ्र ही दाह को ले गये। संस्कार करि जरासिंध की पुत्री जीवंद्यसा अपने पिता के समीप गई। रुदन करि रुक रहे कंठ हैं जाके।।52।। जीवंद्यसा सो जरासिंध पै गई। अर यादव अपनी सभा सहित विराजे हैं ता समे आकाश रूप समुद्र विषें एक विद्याधर मीन की सी लीला धरता मथुरा के समस्त लोकनि देख्या। कैसे हैं मथुरा के लोक, ऊपर की ओर है मुख कमल जिनके। अर वह विद्याधर अति शीघ्रगामी मीन समान चपल गति सुकेत नामा विद्याधर का दूत आकाश रूप समुद्र विषें सबनि की दृष्टि पर्‍या। कैसा है आकाश रूप समुद्र, अंभोद कहिये मेघ तेई हैं चपल तरंग ता विषें मीन के तौ नेत्र चमके अर दूत के दैदीप्यमान आभूषण भासते भये।।53।।

शरीर विषें उज्ज्वल निर्मल वस्त्र पहिरे, अर चंदनादि सुगंध लगाये वह विद्याधर प्रगट कलहंस समान मथुरापुरी आया जैसे मानसरोवर का निवासी हंस गंगा के तीर आवे तैसे वह विद्याधर हंस रथनूपुर चक्रवाल नामा नगर तैं मथुरा आया। कैसी है मथुरा, दिसि दिसि गलीनि में विचरै है राजहंस जहां।।54।। सो दूत आय करि द्वारे खड़ा तब द्वारपाल वाहि राजसभा में ल्याये। सो वह राजसभा यादवनि करि शोभित तहां दूत आय नमस्कार करि यादवनि का इन्द्र जो समुद्रविजय तासूं कहता भया – हे नरेन्द्र! मेरी विज्ञप्ति सुनहू। विजयार्द्ध गिरि विषें दक्षिण श्रेणि तहां रथनूपुर चन्द्रवाल नामा नगर ताका अधिपति राजा सुकेत नामा विद्याधर नमि विनमि के कुल की ध्वजा।।55।।

सो सब विद्याधरनि का स्वामी है ताने कृष्ण के पराक्रम सुने जो देवोपुनीत धनुष चढ़ाय अर शंख बजाया अर नागसय्या परि आरोहण किया। यह वार्ता सुनि राजा सुकेत के कृष्ण सूं अति प्रेम उपज्या सो मोहि पठाया है ताकी पुत्री सत्यभामाकूं कृष्ण बरहु। सर्व कल्याण का मूल जो कृष्ण सो विद्याधरनि को विभूति के अर्थ होहू।।56।। यह दूत का वचन सकल यादवनि के मन का हरणहारा ताहि सुनि करि समुद्रविजय कृष्ण को आज्ञा करी – जो तुम सुकेत की पुत्री सत्यभामासूं विवाह करहु तब कृष्ण अति प्रसन्न होय दूत सों कही – सत्यभामा रूप रतन की धारा सुकेत रूप कुवेर की वरषाई, रतनाचलरूप जो मैं सो मो परि शीघ्र ही परौ।

भावार्थ – सुकेतु तो कुवेर समान, अर सत्यभामा रतन की वृष्टि समान, अर मैं रतनाचल समान सो रतनधारा मो परि परौ। सुकेतु की दई मेरे गृह में प्रवेश करो।।57।। ऐसे प्रीति के वचन कहि दूत का बहुत सन्मान किया अर दूत को विदा किया। अर वह दूत अति हर्षित भया अपने स्वामी पै जाय करि नमस्कार पूर्वक सब यादवनि के गुण वर्णन किये। अर वाके बहुत गुण गाये। अर दूत तौ हर्षित होय आया ही था। अर सत्यभामा के माता पिता कूं अति हर्षित किये अर कार्य की सिद्धी

कही।।58।। विद्याधरनि का इन्द्र राजा सुकेत अपने दूत के मुख बलदेव वासुदेव के गुण सुनि करि अति अनुरागी भया। दूत कही – या पृथिवी विषें बलदेव वासुदेव दोऊ भाई प्रकाश रूप हैं। हत्या है औरनि का तेज जिनि रूप कांति प्रताप धर्मज्ञता उनकी सब जानि करि सुकेत का भाई रतिमाल ए दोऊ पुत्री लेकरि मथुरा आये सो रतिमाल ने रति समान अपनी रेवती नामा पुत्री बलभद्रकूं बिवाही, अर सुकेतु ने अपनी सत्यभामा नामा पुत्री कृष्णकूं परनाई। वह सत्यभामा प्रभा नामा रानी की पुत्री है।।60।। इनिके विवाह विषे अनेक विद्याधरी पवित्र है भेष जिनके, सो नृत्य करती भईं वे विद्याधरी अपने कुच रूप कलश तिनि के भार करि खेदखिन्न भया है अंग जिनिका।

भावार्थ – अति नाजुक वदन है अर नृत्य विषें सिथिल होय गये हैं वस्त्र अर कांचीदाम अर केसनि के बंधन जिनके। अर मनोहर है नूपुरनि का शब्द जिनिका।।61।। नीलांबर कहिये हलधर पीतांबर कहिये हरि इन होऊ भाईन के प्रथम विवाह भये। कैसे हैं दोऊ वीर, नाना प्रकार के मणिन के आभूषण तिनिकी जोति करि प्रकाश रूप है अंग जिनिके। समस्त यादव इनि दोऊ भाईनिकूं देखि करि अति प्रसन्न भये। इनिकूं सब वंश के शिरोमणि जानते भये। बड़े बड़े राजा तिनि करि सेवनीक ए पुत्र तिनिकूं देख रोहिणी बलभद्र की माता अर देवकी कृष्ण की माता अति हर्षित भई, अरि शिवादेवी आदि सबही बहुत हर्षित भईं। प्रथम ही मदन की रंगभूमि विषे सत्यभामा मोहन का मन हरती भई। अर रेवती हलधर का मन मोहती भईं, सीखी हैं अनेक कला अर धारे हैं अनेक गुण तिनके योग करि उन दोऊ भाइन के वे दोउ मन हरती भईं, जे चतुर हैं ते समय न चूंकें जिंहि जिंहि समय जे जे उचित कर्तव्य हैं तिनि तिनि करि वे इनिकूं प्रसन्न करती भईं।

अथानन्तर – वह जरासिंध की पुत्री जीवंद्यसा कलुष है भावना जाके सो समुद्र समान राजा जरासिंध ताहि क्षोभ उपजावती भई। जैसे वेला कहिये तरंग अति चंचलता रूप सो समुद्र कूं क्षोभ उपजावे, तमाल के पत्र समान अति श्याम बिखरि रहे हैं केश जाके सो पिता के निकट अति रुदन किया यादवनि करि किया जो दोष सो पिताकूं कहती भई – हे तात! सर्व पृथ्वी के पति तुम, अर तुम बैठे मेरा धनी मार्‍या जाय अर मैं विधवा भई। सो यह वीरता सहारी न परै, अब यादवनि का रुधिर सोई भया जल अर उनके सिर तेई भये सरोज कहिये कमल तिनकरि पतिकूं पाणी द्यूँ तौ मेरा क्रोध न बुझे।।65।। पुत्री के ये विलाप के वचन सुन करि पृथिवी का पति कहता भया – हे पुत्री! तू शोक तज। जीव के पूर्वोपार्जित कर्म सोई प्रबल हैं। काहू का किया कछु होय नाहीं। जा समे जो भवितव्य होय सो ही होय, काहू का बल भवितव्य आगे न चले।।66।। अर यादवनि का बुरा होनहार है, वे उन्मत्त भये हैं। तेरे पतिकूं मार्‍या है सो वे सब मूवा चाहे हैं वे पशु देहते मूर्ख हैं, जो पशु आधा

भी होय सोहू मरिवे की शंका राखे, खेत में चरिवे को पैसे तब निकसिवे का उपाय विचारि कर पैसे, सो वे मूर्ख पशुहूतें अति अविवेकी हैं। यह विचार न किया जो हम याहि मारे हैं परि याके पीछे जरासिंध है।।67।।

तेरे ही चरण का उनको शरण हुता, अर तेरे ही कंटक भये तौ अब वे श्रवण अगोचर ही रहेंगे, अर उनके कुल रूप साखा का बल बहुत भया है तोऊ हे पुत्री! मेरे क्रोध रूप दावानल करि भस्म भया देखि।।68।। ऐसे प्रिय वचन रूप जल करि पुत्री की क्रोध रूप अग्नि बुझाई। अर कालयवन नामा अपना पुत्र साक्षात् काल तुल्य महा विकराल ताहि यादवनि के नाश के अर्थि आज्ञा करता भया।।69।। सो पिता की आज्ञा पाय हाथी घोड़े रथ पयादेनि करि पूर्ण चालते समुद्र समान कटक ता करि युक्त शत्रु जे यादव तिनि परि चाल्या। सो शीघ्र ही जाय करि यादवनिसूं युद्ध करता भया। सतरह वेर युद्ध तानें यादवनिसूं किया परन्तु इनिको जीत न सक्या। सो अतुल मालावर्त नामा पर्वत तहां ते भागि गया।।70।।

बहुरि जरासिंधु अपने भाई अपराजित को यादवनि परि विदा करता भया। कैसा है भाई, जीते हैं अनेक प्रबल बैरी जाने अर जरासिंध के प्राण समान प्यारा है सो शीघ्र ही यादवनि परि गमन किया। वैरीन का समूह ताके ग्रसवे का लोलुपी सो प्रबल काल की अग्नि की शिखा की पंक्ति समान प्रज्वलित अपना कटक रूप वन ताका प्रेर्या चाल्या। सो तीनि सै छियालीस प्रबल युद्ध अपराजित ने यादवनिसूं किये। सो महा योद्धा यश का उपाजनहारा हरि के वाण करि हर्या है प्राण रूप सार जाका सो मानूं खेद निवारिवे अर्थि वीर शय्या परि शयन करता भया।

भावार्थ – जरासिंध का छोटा भाई अपराजित तीन सै छयालीस वेर युद्ध कर हरि के वाण से मूवा।।72।। अर हरि की पुरी जो मथुरा उस विषे नगर के लोक हर्ष को धरते अर सुख को करते बसते भये। कैसे हैं लोक, हरि अर हलधर का अखंड प्रताप जिसके गर्व कर हती है रिपु की शंका जिन अर यदुवंशी राजा नाना प्रकार क्रीड़ा कर रमते भये।।73।।

यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहे हैं – हे श्रेणिक! जिन धर्म्मरूप मेघ जिसके जल की धारा कर इस पृथिवी विषे नाना प्रकार के फल निपजे यह जिन धर्म रूप जल का धारा लक्ष्मी अर कीर्ति की उपजावनहारी है। महा भयंकर जो रिपु रूप दावानल उसके दाह रूप दुःख को बुझावे है अर यह जिनमत रूप मेघमाला जगत् की बांधव बंधु रूप जो सज्जन तिनको हर्ष उपजावे है।।74।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ कंसपराजयवर्णनो नाम षड्त्रिंशः सर्गः।।36।।

पाँचवाँ अधिकार

श्री नेमिनाथ स्वामी का चरित्र

सैंतीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – गौतम स्वामी कहे हैं – हे श्रणिक! इस लोक विषे हर्ष का कारण जो प्रगट भया, सो तू सुन, पहले तुझे कहा ही था जो समुद्रविजय के घर नेमनाथ अवतरेंगे तिनका अद्भुत चरित्र मैं कहूं हूं सो सुन – हे राजा! अंधकवृष्टि के दशपुत्र ते दशाहर्न कहिये उनमें मुख्य शौर्यपुर का स्वामी राजा समुद्रविजय उसके रानी शिवदेवी उसके गर्भ विषे नेमनाथ अवतरेंगे। उसके छै महीने पहले इन्द्र की आज्ञा से पिता के घर कुवेर रत्नों की वृष्टि करता भया। सो दिन प्रति साढ़े तीन कोडि रत्न वर्षे सो अर्थी जन तृप्त भये। सब ही लोक अमोलिक रत्न राजा के द्वार से ले गये। जे उदारचित्त मेह समान दानधारा वर्षे उनके पात्र अपात्र का भेदा कहा? वह सब ही अर्थियों को तृप्त करे।।3।। सब दिशाओं से दिक् कुमारी माता की सेवा को आईं तीन जगत विषे सब दिशा के जीतने का यश जिनेश्वर का प्रगट करती भई।।4।। एक दिन माता शिवदेवी रात्रि के पिछले पहर महा सुन्दर सोले स्वप्न देखती भई। कैसी है शिवदेवी, समस्त अतिशय का दिखावनहारा समुद्रविजय अपना पति उसकी प्रीति कर अति हर्षित है मन जिसका सो महा प्रशंसा योग्य यह स्वप्न देख कर आनन्द से भर गई।।5।।

पहले स्वप्न श्वेत गजराज देखा सब ओर झरे हैं मद के नीझरने जिसके अर दिग्गजों तक प्राप्त भई है गर्जना जिसकी अर तमाल वृक्ष के पत्रों समान श्याम भंवर जिन पर गुंजार करे हैं अर कैलाश पर्वत समान है वर्ण जिसका ऐसा चलते पर्वत समान सुर हस्ती देखा।

अर दूजे स्वप्न धवल वृषभ देखा ऊंचे हैं सींग जिसके अर अपने खुरों कर भूमि को खोदता महा दहाड़ता सब दिशाओं को शब्दायमान करता लम्बी है पूंछ जिसकी अर दीर्घ है कांधा जिसका शरद के मेघ समान शुक्ल वर्ण महा धीर नेत्रों को प्रिय महा भार के चलावने को समर्थ शिवदेवी देखती भई।।7।। अर तीजे स्वप्न सिंह देखा, उलंघा है पर्वत का शिखर जिसने अर चन्द्रमा की किरण समान उज्ज्वल हैं दाढ़ जिसकी अर लम्बा अर सब दिश में व्याप रहा है शब्द जिसका शरद के बादलों समान श्वेत महा सुन्दर मृगराज (शेर) देखा। अर चौथे स्वप्ने हाथियों कर होय है अभिषेक जिसका अर गजराज के कुम्भस्थल समान कुच रूप कलश जिसके ऐसी लक्ष्मी देखी। सुगन्ध जल के भरे

कलश तिन कर जाहि गजराज स्नान करावे हैं गजों की सूंड कर उठाये हैं कलश अर कलशों के मुख कमल के पत्र हैं अर कमला स्नान करती कमलों के सिंहासन बैठी है।।9।।

अर पांचवें स्वप्ने निर्मल आकाश विषे दो माला लटकती देखी सो माला महा श्रेष्ठ जिनके मकरंद कर तृप्त होय रहे हैं भंवरों के समूह माला महा प्रफुल्लित महा कोमल हैं पुष्प जिस विषे मानो माला माता ने अपनी भुजा ही समान देखी। अर छठे स्वप्ने चन्द्रमा देखा जो चन्द्रमा रात्रि विषे अपनी किरणों कर अंधकार को दूर कर मेघ पटल रहित आकाश विषे प्रकाश कर रहा है मानो वह निशाकर निशा रूप सुन्दर नारी का मनोहर हास्य ही है। हास्य भी उज्ज्वल अर चंद्रमा भी उज्ज्वल। अर सातवें स्वप्ने माता शिवादेवी दिवाकर को देखती भई। कैसा सूर्य्य देखा, दृष्टि सुख कहिये नेत्रों को सुखकारी अर आले सिंदूर समान हैं अरुण चरण जिसका मानो वह सूर्य्य दिशा रूप स्त्री का पुत्र ही है दिन दिन देखने योग्य है मुख जिसका अर सूर्य्य नेत्रों के आताप उपजावे है अर माता ने नेत्रों को आह्लादकारी ऐसा सूर्य्य देखा। अर आठवें स्वप्ने सरोवरी रूप सुन्दर स्त्री ताके दीर्घ चंचल लोचन युगल समान मीन युगल देखे परस्पर स्नेह के भरे अदेखशका भाव से रहित जल विषे केल करते देखे अर नवमें स्वप्ने वह कमल नैनी सुगन्ध जल के भरे दोय कंचन के कलश जिनके मुख कमल से ढके सो देखती भई मानो वह कलश माता अपने कुच कुम्भ समान ही देखे।।14।। अर दशवें स्वप्न वह जगज्जननी महा मनोहर सरोवर को देखती भई मानो वह निर्मल सरोवर पवित्र जल का भरा माता का मन ही है। कैसा है सरोवर, सिवाण सहित स्वच्छ जल से भरा अर कमलों कर शोभित अर राजहंसादि पक्षियों कर संयुक्त है।।15।।

अर ग्यारहवें स्वप्ने माता ने मोटा समुद्र देखा। कैसा है समुद्र, घूमती उछलती जो ऊंची तरंग तिन कर सुन्दर है। अर मूंगा, मोती, मणि तिन कर पूरित है अर जिसमें झाग उठे हैं महा उद्धत महा भयंकर गिराहों के समूह जिसमें भ्रमे हैं।।16।। अर बारहमें स्वप्ने लक्ष्मी का स्थानक महा मनोहर सिंहासन देखा। सो कैसा है सिंहासन, जिसके चारों पाये मृगेंद्र के आकार महा मनोहर हैं। कैसे हैं मृगेंद्रों के आकार, तीक्ष्ण नख अर तीक्ष्ण डाढ अर दृढ़ दृष्टि अर दैदीप्यमान अति सुन्दर केशावली तिसकर शोभित है अर यह सिंहासन मणियों की जो प्रभा ताकर दशों दिशा रूप जे वधू तिनके मुख को उद्योत करनहारा है। अर तेरवें स्वप्ने यह जगत माता आकाश विषें देव विमान देखती भई। कैसा है विमान, नाना प्रकार भेदों को लिये जे ध्वजा तिनकी जो अणी सो ही भई भुजा ताहि हलावता मणियों की माला अर मोतियों के हार तिनकर दैदीप्यमान है।।17।।

अर चौदहवें स्वप्ने यह जिनजननी पाताल से निकसता नागेंद्र का भवन देखती भई। कैसा है

www.vitragvani.com

फणेंद्र का भवन, फणों पर मणिओं का उद्योत तिसकर भेद्या है पृथिवी का तिमिर जाने अर नागकुमारी के मधुर गीत तिनकर मनोहर है अर मानो वह नागभवन भूमि की शिखामणि ही हैं।।19।। अर पंद्रहवें स्वप्ने यह पतिव्रता आकाश को स्पर्शे शिखा जिसकी ऐसी रत्नों की राशि देखती भई। कैसी है रत्नराशि, अरुण जे पद्मराग मणि अर उज्ज्वल जे वज्रमणि अर हरित जे मरकत मणि अर श्याम इन्द्र नीलमणि अर पीत जे पुष्पराग मणि इत्यादि अति श्रेष्ठमणि तिनकी महा शिखा तिनकर प्रकाश रूप है जिनके नाना प्रकार रंग का आकाश विषे इन्द्रधनुष होय रहा है। अर सोलहवें स्वप्ने वह शिवदेवी राजा समुद्रविजय की रानी निर्धूम अग्नि देखती भई। कैसी है अग्नि, विकराल है शिखा जिसकी अर दशों दिशा विषे प्रकाश है जिसका अर महा पवित्र है कांति जिसकी अर सौम्य है स्वरूप जिसका मानों शरीर धरे साक्षात् लक्ष्मी ही आनन्द की बढ़ावनहारी है।।21।।

यह सोलह स्वप्ने माता देखे, जिसके पीछे एक श्वेत हस्ती मुख में प्रवेश करते देखा मानो भगवान् नेमनाथ ही इन्द्रादिक देवों के आसन कंपायमान करते जयन्त नामा विमान से चयकर माता के गर्भ में आये। कार्त्तिक सुदी छठ के दिन गर्भावतार भया। सो मानो यह तिथि ही त्रैलोक्य विषे प्रसिद्ध करी।।22।। यह माता पुनः पुनः जागरण के अन्तर ये सोलह स्वप्ने देख कर जय जय शब्द करती अर गीत गान मंगल तिन कर जाग्रत होय आलस्य रहित सेज को तजती भई।।23।। प्रभात समय देहक्रिया कर मंगलरूप वस्त्राभरण पहरे हर्ष की भरी पति के निकट जाय प्रणाम करती भई। राजा बहुत आदर किया राजा के समीप यह जगत् की माता सोलह स्वप्न देखे थे तिनका फल पूछती भई।।24।।

सो राजा स्वप्न का फल कहे हैं – हे प्रिये! आज छै महीने भये तेरे घर रत्नों की वृष्टि होय है अर दिक्कुमारी देवी जिसके अर्थी तोहि सेवे हैं वह त्रिभुवन का स्वामी तीर्थ का कर्त्ता तेरे पुत्र होयगा। स्वप्नों का फल तोहि कहा कहैं हैं गजगामिनी तूं तीर्थंकर की जननी तेरे भगवान् पुत्र होयेंगे वह महंतों का महंत जगत्रय का गुरु तेरा बालक होयगा तेरे भाग की कहा प्रशंसा करिये सो हे तनुधरा कहिये महा सुकुमार है अंग जिसका सो शुक्लवर्ण हस्ती देखा सो तेरा पुत्र सबमें श्रेष्ठ सबका एक अधिपति गजराज की चाल का जीतनहारा सर्वोत्कृष्ट होयगा अर श्वेत वृषभ के देखने से कलंकरहित है बुद्धि जिसकी सो यह जगत् का गुरु अपने गुणों कर अपने कुल को अर तीन लोक को शोभित करेगा जैसे गायों के कुल को धोरी वृषभ शोभित करे तेरा पुत्र धर्म रूप रथ का धोरी वृषभ समान है स्कंध जिसके सो मोक्षमार्ग का चलावनहारा होयगा अर हे केहरी कटिनी! सिंह के देखने से अत्यन्त वीर्य का धारी महा मदोन्मत्त हस्ती समान जे मिथ्यादृष्टि तिनके मद का हरनहारा महा धीर एक अद्वितीय वीर तपोवन का ईश्वर होयगा।।29।।

अर लक्ष्मी अभिषेक करती देखी सो जन्म समय ही सुरेन्द्र गजेंद्र पर आरूढ कर गिरेन्द्र के मस्तक विषे क्षीर सागर के जल कर जाहि न्हवावेंगे अर आप सुमेरु सारखा स्थिर होयगा अर हे प्राणप्रिये! पुष्पों की दो सुगन्ध माला अम्बर विषे लटकती देखीं जिसका यह फल है तेरा सुत सुगंध शरीर का धारक होयगा। अर अनन्त दर्शन ज्ञान का धारक लोक अर अलोक का ज्ञाता दृष्टा होयगा। अर हे चन्द्रवदनि! तैंने स्वप्न में चन्द्र देखा सो तेरा पुत्र जिनेंद्र चन्द्र जगत का तिमिर हरनहारा निरन्तर आह्लाद करता दर्शन योग्य होयगा अर हे सुदर्शन कहिये सम्यक् दर्शन की धरनहारी अथवा सुन्दर है अवलोकन जिसका ऐसी तू सो तेरे सूर्य्य के देखने से जगत् का सूर्य्य पुत्र होयगा। तेरा पुत्र अपने प्रचंड तेज कर समस्त तेजस्वियों का तेज जीतकर जगत् विषे तेजोनिधि होयगा। अर अन्तर बाह्य तिमिर को हरेगा।।33।। अर हे मृगनेत्रे! तैने दो मच्छ जल विषे केलि करते देखे तिनके देखने से तेरा नंदन इन्द्रियों के भोग अर उपभोग त्यागकर सिद्ध लोक विषे अनन्त सुख का रस भोगता होयगा।।34।।

अर हे प्रियभाषिणी! तैंने दो पूर्ण कुम्भ देखे सो तेरा घर नव निधि कर पूर्ण होयगा। नव निधि का नाथ तेरे नंदन होयगा पूर्ण हैं मनोरथ जिसके ऐसा तेरा अंगज कहिये पुत्र उसके प्रभाव से सब जगत् आनन्द रूप होयगा तेरे संपूर्ण मनोरथ सिद्ध भये। अर हे पतिव्रते! अनेक कमल के समूह कर भरा सरोवर तैने देखा सो समस्त लक्षणों कर मंडित तेरा पुत्र महाज्ञानी तृष्णा रहित अनेक भव्य जीवों की तृष्णा दूर कर निर्वाण प्राप्त करेगा। अर हे विशालनेत्रे! तैंने अमृतमई महा गंभीर समुद्र देखा तिसका यह फल है तेरा पुत्र समुद्र समान गंभीर बुद्धि होयगा नीति रूप महानदियों से भरा जो सुख रूप समुद्र तिसका अमृत रस अनेक भव्य जीवों को प्यावेगा। तेरा पुत्र जगत् का गुरु धर्म का उपदेशक भव्यों को भवसागर से तारेगा अर हे सुन्दरवदनी! रत्नों के सिंहासन देखने कर देव अर दानव तिनके समूह कर वेष्टित होयगा जिसके सिंहासन को सब सेवेंगे। कैसे हैं देव अर दानव, दैदीप्यमान जे मणि तिनके उद्योत कर युक्त जो मुकुट जिस पर लगाये हैं कर युगल जिनने।

भावार्थ – सीस का मुकट नवाय हाथ जोड़ बारम्बार नमस्कार करेंगे सबसे ऊंचा, सब कर पूज्य जो सिंहासन तापर तेरा पुत्र विराजेगा अर हे कमलवदनी! तैंने देव विमान आवता देखा सो विमानों में मुख्य जो पंचोत्तर विमान तिनमें जयन्त नामा विमान से प्रभू तेरे उदर में आवेंगे। विमानों के नाथ जे सुरनाथ ते जिसकी सदा सेवा करेंगे अर सुरनर मुनि सबोंकर सेवनीक है चरण जिसके महा उदय का धारक त्रैलोक्य में गरिष्ठ ऐसा जिन चन्द्र तेरे पुत्र होयगा।।39।।

अर हे हंसगामिनी! तैंने जो नागेंद्र का भवन भूमि भेदकर निकसता देखा सो तेरा पुत्र भवपिंजर भेत्ता मति श्रुति अवधि तीन प्रकार का धारक सकल विधि का वेत्ता होयगा।।40।। अर हे देवी! तैंने

नाना प्रकार दैदीप्यमान किरणों के समूह कर दिव्य रत्नों की राशि देखी जिसके अवलोकन से तेरा पुत्र गुणरूप रत्नों की राशि होयगा। अर जे शरणार्थी हैं तिनका आश्रय होयगा।।41।। अर हे वल्लभे! तैंने निर्धूम अग्नि की ज्वाला आकाश विषे लग रही है शिखा जिसकी ऐसी प्रदक्षिणा करती देखी जिसका यह फल है तेरा पुत्र शुक्ल ध्यान रूप अग्नि कर सकल कर्मरूप वन को भस्म करेगा।।42।। हे सौभागवंती! तेरे पुत्र के प्रभाव से ये सुरेश्वर सामान्य की नाईं तेरी आज्ञा सिर पर धारेंगे। कैसे हैं सुरेश्वर, किरीट कहिये मुकुट अर कुंडल तिनको आदि देय अद्भुत हैं आभूषण जिनके जो अपने आज्ञाकारी सेवक है।।43।।

हे सुन्दरी! तेरे पुत्र के प्रताप से ये सुरेंद्र की सुन्दरी सची आदि तेरी सेवा विषे उद्यमी हैं ढीले होय गये हैं केशों के बंधन जिनके अर हलहलाट करे है माला जिनकी कटिमेखला अर नूपुरन के रमणीक हैं शब्द जिनके।।44।। हे शशिमुखि! तू यह प्रतीत कर पवित्र है चरित्र जिनका ऐसे जिनेंद्र सूर्य के जनने कर तू अपने वंश को अर आपको अर मुझको अर इस जगत् को पवित्र करेगी, शोभित करेगी।।45।।

यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहे हैं – हे श्रेणिक! वह शिवदेवी सौभाग्यवती अपने पति के मुख यह स्वप्न के फल सुन कर अति हर्षित चित्त भई पुत्र गोद ही में आया ऐसा जानकर जिन पूजादिक प्रशंसा योग्य शुभ क्रिया करती भई। कैसी है वह शुभ क्रिया, सब जीवों के मन की हरनहारी कल्याण की दायक है। यह जिनराज की माता के स्वप्न फल का व्याख्यान पवित्र स्तोत्र जो प्रभात संध्या विषे निरन्तर पढ़े स्मरण करे सो जिनराज की लक्ष्मी को प्राप्त होय।।47।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ स्वप्नकथनवर्णनो नाम सप्तत्रिंशः सर्गः।।37।।

हे श्रेणिक! कदाचित् या लोकविषै उत्तम वस्तु के संयोगतैं किंचित् सुख होय है सो क्षणभंगुर है। अर देहधारियों के पाप के उदयतैं दुख होय है, सुख दुख दोनों विनश्वर हैं, तातैं हर्ष विषाद न करना।

हो प्राणी हो! जीवों को निरंतर सुख का देनहारा दुखरूप अंधकार का दूर करणहारा जिनवर भाषित धर्म सोई भया सूर्य ताके प्रताप करि मोहतिमिर हरहु।

– पद्मपुराण भाषावचनिका, पृष्ठ 238

अड़तीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – इन्द्र की आज्ञा कर कुवेर जिनेन्द्र के माता पिता की महाभक्ति के समूह से तीर्थों के जल कर अभिषेक कराय सुगन्ध द्रव्यसूं चर्चकर अद्भुत वस्त्र आभूषण पृथिवी में दुर्लभ तिनकर पूजता भया। माता का गर्भ दिक्कुमारियों ने पहिले ही सोधा हुआ था ता विषे शिवदेवी प्रभु को धरती भई। कैसा है जिनरूप चन्द्र, बंधुजनरूप समुद्र ताकी वृद्धि का करणहारा, अस्त किया है आताप का उदय जाने, तिसे माता शिवदेवी जगत् के कल्याण के अर्थ उदर विषे धारती भई जैसे पूर्व दिशा चंद्रमा को धारे।।2।। जब प्रभू गर्भ में पधारे तब गर्भ की अर ही प्रभा होय गई। माता के गर्भ के योग से त्रिवली भंग न भई अर न उष्ण स्वास निकसे अर अधरपल्लव का रंग न घटा आलस्य न उपजा मातारूप वेल ऐसी नाजुक जो कुच रूप गुच्छों का भार न सम्हार सके तो अर भार कैसे सम्हारे। तिससे कृपानिधि जो भगवान् सो फलरूप इस वेल के लागे परन्तु इसको भाराक्रांत न करी।

भावार्थ – यह पद्मिनी रूप सुन्दर वेल पुष्प ही का भार न सम्हारे तो फल का कैसे सम्हारे तिससे प्रभु इसके गर्भ में अलिप्त रहे इसे गर्भ का भार न भया। जिस दिन से जिनेश्वर उदर में आये उसी दिन से माता का मन सकल जीवों की दया विषे अति प्रवर्ता अर मन विषे निरन्तर तत्त्व ही का विचार रहे अर वचन सब जीवों के हित भाषण विषें अर संदेह निवारण विषे प्रवर्ते। अर शरीर व्रतरूप आभूषण विषे अर विनय के पोषण विषे प्रवर्ते। जिनराज के अतिशय से माता शिवदेवी के सब उचित ही उचित रीति होती भई।।5।। वह माता कनक को जीते प्रभा जिसकी ऐसे अपने शरीर की प्रभा कर दशों दिशा विषे बिजुरी की न्याई उद्योत करती भई।

भावार्थ – बिजुरी भी ठौर ठौर चमके अर यह भी महल महल में भासे।।6।। भगवान के गर्भावतार विषे राजा समुद्रविजय महासमुद्र की लीला को धारता गाजता भया। कैसा है समुद्रविजय रूप समुद्र, बड़े बड़े गजराज सोई मगरमच्छ जिस विषे अर उछलते ऊंचे तुरंग सोई है मीनों की पंक्ति जिस विषे अर महासुन्दर रथ सोई हैं जहाज जिस विषे अर आज्ञाकारी भये हैं राजा तिनकी सेना सन्मुख चली आवे है सोई है नदियों का आगम जिस विषे नदियों में तरंग उछले हैं अर सेनाओं में तुरंग उछले हैं। जिनेश्वर के माता पिता सुख से नव मास पूर्ण करते भये। कैसे हैं माता पिता, सुर नर विद्याधर सबों कर पूज्य हैं अर परस्पर बढ़ा है परम स्नेह जिनके राजा तो राणी को अति चाहे अर रानी राजा को अति चाहे। अर कैसे हैं माता पिता, इन्द्र की आज्ञा कर सेवा विषे तत्पर जे देव देवी तिन कर किया प्रचुर विभव तिसकर मंडित हैं।।8।। नव महीने व्यतीत भये तब शुभ तिथि विषे चित्रा नक्षत्र में रात्रि शुभ वेला सब ही ग्रह जिस समय शुभ थे तिस समय वह जगज्जननी शिवदेवी शिवलोक

का देनहारा जो बुद्ध परब्रह्म जगत् विषे उद्योत करनहारा जगत् के जीवों का मन हरनहारा जगदीश तिसे जननी भई। वे भगवान् नेमिनाथ हरिवंश के आभूषण तीन ज्ञान रूप नेत्र के धारक एक हजार आठ लक्षणों कर शोभित है शरीर जिनका नील कमल समान श्याम सुन्दर शरीर के धारक अपनी कांति कर पृथिवी विषे किया है प्रकाश जिन, दसों दिशा ज्योतिरूप हो गई रात्रि समय प्रसूतिगृह विषे मणियों के महादीपक तिनकी कांति से बहुत गुणी कांति आपके तन की फैल गई मानो कोटिक सूर्य्य ऊगे।।9।।

जिनेंद्रचन्द्र के उदय विषे जगत् में हर्ष रूप समुद्र वृद्धि को प्राप्त भया। जंबू द्वीप सम्बन्धी पृथ्वी अर समुद्र का तट सोही है वस्त्र जिसके अर जम्बूद्वीप की वेदिका सोई है कटि मेखला जिसके अर गिरराज जो सुमेरु सोई है नाभि जिसके अर षट कुलाचल वे ही हैं कंठ जिसके अर कुलाचलों से निकसी गंगादिक नदी सोई हैं हार जिसके ऐसी धरती रूप स्त्री प्रमोदकर चलायमान भई सो मानो नृत्य ही करे हैं।।11।। अथवा त्रैलोक्य रूपी पुरुष ही मानो आनन्द कर नृत्य करे है। कैसा है त्रैलोक्य रूपी पुरुष, शिव पद जो मोक्ष सोई है सीस जिसके अर पंचानुत्तर है मुख जिसके अर नवानुत्तर है ठोडी जिसके अर नवग्रीव है ग्रीवा जिसके अर षोडस स्वर्ग है शरीर जिसके अर मध्य लोक है कटि जिसकी अर अधोलोक है पांव जिसके ऐसा त्रैलोक्य रूपी नटवा मानो श्री भगवान के जन्म विषे नृत्य ही करे है। नृत्य का करनहारा भी कटि पर हाथ धर कर नाचे है अर लोक ही का आकार ऐसा है जैसा कटि पर हाथ धर पुरुष होय।

भावार्थ – जिनराज के जन्म विषे सब लोक हर्ष कर नाच उठा सब ही के आनन्द भया।।12।। जिस समय जिनेंद्र का जन्म भया उसी समय भवनवासियों के शंख का शब्द बिना बजाये अकस्मात् होता भया अर व्यंतर देवों के अकस्मात् ढोल का शब्द भया अर ज्योतिषी देवों के सिंहनाद बाज उठे अर कल्पवासी देवों के स्वयमेव घंटा का नाद भया अर जिनवर के जन्म के प्रभाव से चतुरनिकाय के देवों के बिना बजाये वादित्र शब्द करते भये। अर देवों के अधिपति सौधर्म इन्द्रादि अर असुरों के अधिपति चमरेंद्रादिक जिनके सिंहासन कंपायमान भये। अर मुकुट चलायमान भये तब वे अवधि विचार भगवान् का जन्म कल्याणक जान अति आनन्द के भरे चतुरनिकाय के देवों सहित भरत क्षेत्र की ओर चले अर सोले स्वर्ग के ऊपर नवग्रैवेयिक नव अनुत्तर पंचानुत्तर तिनके अहमिंद्र विशुद्ध है दृष्टि जिनकी ये प्रभु का जन्म जान सिंहासन से उठ सात पैंड जायकर जिनराज के चरणारविन्द को नमस्कार करते भये अहमिन्द्रों का यही नियोग है जो निज स्थान तज पर क्षेत्र विषें विहार न करें पांचों कल्याणक विषें विहार न करै पांचों कल्याणक विषें वहां तिष्ठे ही वन्दना करें। कैसे हैं अहमिंद्र, मुकुट की अणी तिसके संघट्ट कर अर दैदीप्यमान आभरण के रत्नों की किरणों कर किया है सकल दिशा

में प्रकाश जिन जिन भगवान् के महा भक्त हैं। सदा प्रभु का ध्यान ही करे हैं अर वहां तिष्ठे ही अढ़ाई द्वीप विषे जिनेंद्र अर मुनींद्र तिनकी वन्दना करें हैं।

अर चतुर्निकाय के देव तिनमें भवनवासी दश प्रकार के असुरकुमार 1 नागकुमार 2 विद्युतकुमार 3 पवनकुमार 4 अग्निकुमार 5 द्वीपकुमार 6 सुवर्णकुमार 7 उदधिकुमार 8 मेघकुमार 9 दिक्कुमार 10। यह दश प्रकार के भवनवासी महा दैदीप्यमान इनके इन्द्र 20 अर प्रत्येन्द्र 20 तिनके साथ यह दशों दिशा को प्रकाश करते गमन करते भये।।16।। अर व्यंतरों के भेद 8 – किन्नर 1 किम् पुरुष 2 महोरग 3 गंधर्व 4 यक्ष 5 भूत 6 राक्षस 7 पिशाच 8 तिनके इन्द्र सोलह अर प्रत्येन्द्र भी सोलह तिनके पीछे सब चले अर देवों की देवी मन की हरनहारी गीत, नृत्य, वादित्र विषे निपुन ते जिनराज का जन्म कल्याणक का उत्सव देखने को चली भवनवासी व्यन्तर इनके निवास अधोलोक विषे भी हैं अर मध्यलोक में भी हैं।।19।। अर ज्योतिषी देवों के भेद 5 चन्द्र, सूर्य्य, ग्रह, तारा, नक्षत्र तिनमें चन्द्रमा इनका इन्द्र अर सूर्य्य प्रत्येंद्र सो यह सब ही ज्योतिषी देव अपनी कांति कर पृथिवी विषे प्रकाश करते शोभते भये। सब देवों के साथ अधिक शोभा विस्तारते सौर्य्यपुर आये।।18।।

अर स्वर्ग सोलह तिनके इन्द्र 12 अर प्रत्येन्द्र भी 12 प्रथम स्वर्ग का नाथ सौधर्म तिसको आदि दे अच्युतेंद्र पर्य्यन्त सबही इन्द्र अपने देवों सहित देवाधिदेव के दर्शन को आये एक एक इन्द्र की साथ सप्तांग सेना सो सोलह ही स्वर्गों के देव अति आनन्द के भरे इंद्रों के साथ जिनेंद्र की जन्मपुरी आये।।19।। सौधर्म्म इन्द्र अपनी इन्द्राणी आदि देवियों सहित ऐरावत गजेंद्र पर आरूढ अति शोभता भया। कैसा है ऐरावत, अनेक हैं मुख अर दांत जिसके अर दान्तों पर सरोवर अर सरोवरों में कमलों के समूह अर कमलों में पत्र पत्र में महास्वरूप सुर सुन्दरी नृत्य करे हैं, मानो वह ऐरावत गजेन्द्र चलता हिमाचल पर्वत ही है। यह ऐरावत तिर्यंच नाहीं देव है देव माया कर गज का रूप भरा है।।20।। अर इन्द्र के साथ सप्त प्रकार सेना सो एक एक सेना सात सात प्रकार की सो इन्द्र को बेढ़ कर सब सेना चली। कुलिश कहिये वज्र सो है मुख्य जिनमें ऐसे शस्त्र तिनको धरे मानो यह देवों की सेना शस्त्रों की वनी ही है तिनके मध्य कुलिशायुध कहिये इन्द्र सो अति सोहे है।।21।। सात सेना में एक तुरंगों की सेना सात प्रकार की तिसका व्याख्यान करे हैं। वे तुरंग तिर्यंच नाहीं देव माया कर अश्वरूप हैं अपनी शीघ्रता कर पवन को जीतें ऐसी है चाल जिनकी अर अद्भुत हैं हींस जिनकी अर ऐसे उछले हैं मानो आकाश को उलंघेंगे अर आवर्त रूप करे हैं मानो गगन रूप समुद्र की तरंग ही उठे हैं सो यह सेना वर्तुलाकार है अर स्वतः स्वभाव है पुरुषार्थ जिनमें।

अर दूजी वृषभों की सेना सुन्दर है मुख अर रोम जिनके कमल समान हैं नेत्र जिनके, अर महा मनोहर हैं ककुध जिनके अर सुन्दर है पूंछ जिनकी अर मनोज्ञ हैं गात्र जिनके अर स्वर्ण मई खुर अर

सींग तिनकर महा रमणीक अर विस्तीर्ण है कांति जिनकी अर चन्द्रमा समान है प्रभा जिनकी।।24।। ज्यों तुरंगों की सेना सप्त प्रकार त्यों ही वृषभों की सप्त प्रकार सेना है अर सप्त प्रकार ही भिन्न भिन्न रथों की सेना सो रथ पर्वतों कर अभेद्य आकाश रूप समुद्र विषें जहाज समान जिनकी प्रभा देखते सूर्य के रथ की कहा प्रभा ऐसी रथों की सेना अति मनोहर वर्तुलाकार शोभती भई।।25।। अर चौथी गजों की सेना सोई सप्त प्रकार भांति भांति के गज अपनी मद धाराकर वर्षते मानो मेघ समान ही हैं। ऊंची करी सूंड जिन अर महा गर्जना करे हैं जैसे मेघ गाजे तैसे ही यह गाजे हैं बड़े बड़े देव जिन पर चढे हैं। यह गजों की सेना अनेक रचना को धरे वर्षा ऋतु की शोभा को विस्तारे है। यह गज तुरंग वृषभ सब देव ही हैं तिर्यंच नाहीं, माया रूप रचे हैं।।26।।

अर पांचमी गंधर्वों की सेना सात प्रकार सो सप्त प्रकार महा कोमल सुरति कर गान की रचना करे हैं अर वीन, बांसुरी, ताल, मजीरा इत्यादि अनेक वादित्रों के मिले हुए शब्द तिन कर पूर्ण किया है त्रिभुवन का उदर जिन अर देव देवांगना तिनके कानों को रमणीक ऐसे गीत गंधर्व अपनी स्त्रियों सहित गावते भये।।27।। अर छठी नृत्यकारिणियों की सेना सो भी सात प्रकार तिस विषें देवांगना नृत्य करे हैं समस्त रस को पुष्ट करनहारी महा मनोहर गात्रों की चेष्टा तिनकर देवों के मन सोई भये कल्पवृक्ष तिनके आनन्द रूप पुष्पों की मंजरी प्रफुल्लित करती संती आगे आगे नृत्य करती संती जाय हैं। यह नृत्य कारनियों की सेना नितम्ब के भार कर मंद मंद चलती अति शोभे है। यह षट सेना कही अर सातमी पियादों की सेना सो भी सात प्रकार से सब ही नाना प्रकार आभूषण पहरे। स्वतः स्वभाव पुरुषार्थ को धरे अनेक प्रकार के आयुध लिये मानो आयुधों की अटवी ही चली जाय है। यह सात प्रकार सेना कही। एक सेना सात सात प्रकार है – प्रथम ही हाथियों की सेना निकसी सात कक्षाओं में, पहली कक्षा में हाथी चौरासी हजार 1 अर दूसरी कक्षा में हाथी एक लाख सड़सठ हजार 2 तीसरी में इससे दूणी 3 चौथी में उससे दूणी 4 पांचमी में उससे दूणी 5 छठी में उससे दूणी 6 अर सातमी में उससे दूणी 7 इस ही भांति सातों सेना में जानों। सवों में पहली कक्षा में चौरासी हजार अर आगे दूणे दूणे बढ़ते सर्वत्र इस ही प्रकार संख्या जाननी। यह सकल देव तो जन्म कल्याणक का उत्सव करने को आये अर दिक्कुमारी देवी पहली ही आई थीं सो जन्म कल्याणक के गीत गावती भईं।।30।।

देवियों के नाम – विजया 1 वैजयन्ती 2 अपराजिता 3 जयंति 4 नंदा 5 आनंदा 6 नंदिवर्द्धनी 7 नंदोत्तरा 8 यह हृदय को आनन्द की उपजावनहारी माता की सेवा करती भईं।।31।। यह देवी कुंडलादि आभूषणों कर शोभित हाथ में झारी लिये खड़ी हैं मानो श्रृंगार रस के भरे अपने कुच कलश लिये ही खड़ी हैं अर महा सुन्दर निर्मल हार नाना प्रकार के मणिमई आभूषण लिये ठाडी हैं।।32।। अर देवी यशोधरा 1 स्वप्रबुद्धा 2 स्वकीर्ति 3 सुस्थिता 4 लक्ष्मीमती 5 अर विचित्र गुण की धरनहारी

विचित्रा 6 अर चित्रा 7 वसुन्धरा 8 यह देवी मणियों के दर्पण लिये खड़ी हैं मानो यह देवी तो दिशा भईं दर्पण चन्द्रमा भये जैसे चन्द्रमा संयुक्त दिशा सोहे तैसे दर्पण सहित ये देवी सोहे हैं। अर इला 1 नवमिका 2 पद्मावती 3 पृथिवी 4 परा 5 प्रवर कांचना 6 चंद्रिका 7 यह देवी नाना प्रकार के आभूषणों कर मंडित अपनी प्रभारूप तारा तिनकर दैदीप्यमान चांदनी समान माता के निकट श्वेत छत्र लिये खड़ी हैं।।34।। श्री 1 धृति 2 दिशा 3 वारवारुणी 4 पुंडरीकणी 5 अलंबुसा 6 मिश्रकेशी 7 ह्री 8 यह देवी चमर हाथ में लिये माता के सिर पर ढारती कैसी सोहे हैं, मानो उज्ज्वल झागोंकर युक्त जे तरंग तिनकर संयुक्त कुलाचलों से निकसी नदी ही हैं।

भावार्थ – देवी तो नदी भईं अर इनके कर तरंग भये अर चमर फेन भये। अर दैदीप्यमान देवी कनक चित्रा 1, अर चित्रा 4 अर तीन लोक में प्रसिद्ध त्रिसिरसार 3, सूत्रामणि 4, यह देवी नाना प्रकार के उपकरण लिये तिमिर की हरनहारी जिन जननी रूप मेघमाला के समीप विजुरी समान चमकती सोहे हैं।।35।। अर रुचिक प्रभा 1, रुचिका 2, रुचिकोज्वाला 3, यह सम्पूर्ण विद्युत कुमारियों में मुख्य अर विजयादिक चार यह भगवान के जात कर्म्म का उत्सव करती भईं। अर चतुर्निकाय के सब ही देव शीघ्र ही आयकर शौर्य्यपुर की प्रदक्षिणा दे नगर में आये। कैसा है नगर, कुवेर कर निपजाया अद्भुत शोभा को धरे है। मानो वह नगर इन्द्र देव लोक की शोभा के जीतने ही को प्रगट भया है सो इन्द्र सहित सब देव जिनके जन्मपुर को देखते भये।।37।। अर इन्द्र है सो देवों सहित नगर में प्रवेश कर राजमहल में आय खड़े रहे। सब ही रीति के वेत्ता इन्द्र ने भगवान के लायवे को शचि नामा इन्द्राणी को आज्ञा करी सो प्रभु के लायवे को प्रसूतिगृह में गई।।38।।

वहां मायामई बालक माता के समीप पधराय माता की सुख निद्रा अणाय माता अर पुत्र को प्रणाम कर अपने कोमल करों से जिनेंद्र को बाहर लाय अपने पति को सौंपा तब इन्द्र सीस नबाय दोनों हाथों से प्रभु को लिये जिनेंद्र का मुखचन्द्र कमलों को जीते ऐसा सुन्दर अर कमल समान नेत्र जीती है नील कमल के वन की प्रभा जिसने श्याम सुन्दर शरीर अर कमलों से अति अरुण है कर चरण जिसके ऐसे भगवान तिनका रूप हजार नेत्रों कर निरखता भी इन्द्र तृप्त न भया।।39।। फटिक मणियों के गिरों से भी अति उज्ज्वल जो ऐरावत गजेंद्र तिसके मस्तक विषे जिनेंद्र को पधराया सो कैसा शोभे है, मानो फटिक मणिमय गिर का इन्द्र नीलमणि मई शिखर ही है। गजराज पर जिनराज को चढ़ायकर गिरराज की ओर चले ढुरते चमर अर सिर पर ढुरता छत्र उसकर कैसी शोभा वनी है मानो चलती तरंगों कर फेन संयुक्त समुद्र ही है।।40।।

ऐरावत पर प्रभु आरूढ भये सो ऐरावत का वर्णन करे हैं – जिसके बत्तीस वदन अर वदन प्रति अष्ट अष्ट दन्त अर दन्त दन्त प्रति एक एक सरोवर अर सरोवर विषे कमलिनी अर कमलनी विषे कमल अर कमल कमल प्रति बत्तीस बत्तीस पत्र अर पत्र पत्र प्रति महा रस की भरी अप्सरा नृत्य करे

हैं यह विभूति कर देव सुमेरु पर्वत गये तहां जाय गिरेंद्र की प्रदक्षिणा करी। अर गजेंद्र से जिनेंद्र को उतार गिरेंद्र शिखर पर पांडुक वन है तहां अति मनोहर पाण्डुक शिला तिस ऊपर पांच सौ धनुष का ऊंचा सिंहासन है तिस विषे प्रभु को पधराये तहां ग्रहे हैं पूजा के उपकरण अर देवांगना के समूह चौगिर्द गीत गान करे हैं अर नटवाओं के समूह नृत्य करे हैं महा उत्कृष्ट रस हाव भाव लय तिस विषे स्वर्गवासी अनुरागी होय रहे हैं।।43।। जहां ढोल वाजे हैं शंखों का शब्द होय रहा है अर सिंहनाद अर भेरी तिनके शब्द होय रहे हैं सो वादित्रों की ध्वनि कर गिरेंद्र की गुफा नाद रूप होय रही है मानो जिनेश्वर के गुणों कर समस्त जगत् का उदर ही भर गया है। जिनेंद्र के गुण भव्यों के श्रवणों को महा सुखदाई है अर दशों दिशा में फैल रहे हैं।।44।।

अर आकाश सुगन्ध कर आच्छादित भया। नाना प्रकार के आबीर अर धूप के पटल अर पुष्पों के समूह महा सुगन्ध महा मनोहर पाण्डुक वन में विस्तरे। सो पाण्डुक वन की पवन कर दशों दिशा सुगन्ध रूप हो गई।।45।। ग्रहे हैं अनेक शरीर जाने अर देवों की है सेना जिसकी ऐसा इन्द्र सो भक्ति कर जिनवर का महा अभिषेक आरंभता भया। देवों कर लाये मणि स्वर्ण मई कलश दुग्ध रूप क्षीर सागर के शुभ सुगन्ध जल कर पूर्ण तिन कर शची का पति जगतपति को न्हावता भया। अर आनन्द कर भरी जो देवों की पंक्ति अर दैदीप्यमान मणियों के मनोहर कलश ते हैं तिनके कर विषे तिन कलशों के जल के प्रवाह कर सुमेरु सब ओर आच्छादित होय गया। सो कैसा सोहे है, मानो पांचमां क्षीरसागर सुमेरु से अति दूर है तिस ही को जिनराज के प्रभाव कर देव अपने वाहु रूप रस्सों कर लाये हैं तिस ही विषे सुमेरु तिष्ठा है ऐसा सोहे है।।47।। देव कलशों को हाथों हाथ लावे हैं वह उसे पकड़ावे हैं वह उसे पकड़ावे है अर परस्पर यह शब्द होय रहे हैं – तू कलश को ले तू कलश को ले मेरा सन्मुख छोड़ ऐसा कानों को मनोहर शब्द देवों के होय रहे हैं देवों के समूह कर वह कलशों की पंक्ति शोभा सहित पाण्डुक वन में आवे है जैसे हंसों की पंक्ति आवे।।48।। स्वर्ण अर मणि के कलश क्षीरोदधि के जल से भरे देवों की शीघ्र चाल कर चले आवे हैं सो ऐसे शोभे हैं मानो चन्द्र सूर्य्य की पंक्ति ही है।

भावार्थ – कलश तो सूर्य्य की प्रभा को धरे अर उज्ज्वल जल चन्द्रमा की प्रभा धरे है अर वह कलश आकाश विषे आवते ऐसे शोभे हैं मानो गरुड़ अर हंसों की पंक्ति ही अनेक प्रकार चली आवे है गरुड के अर हंस के दोनों ओर पर हैं अर कलशों के दोनों पसवारे हैं। कलश तो पीत वर्ण हैं सो गरुड का स्वरूप जानो अर क्षीरोदधि का जल अति उज्ज्वल हंस का स्वरूप है।।49।। इन्द्र की भुजा कर उठाये मेघ समान गाजते सहस्र है गणना जिनकी ऐसी पवित्र जल के भरे प्रभु के सिर पर अखंड वर्षते मानो सुमेरु को धवल वर्ण ही करे हैं यद्यपि सुमेरु का वर्ण धवल नाहीं पीत है तथापि भगवान

के आश्रय से धवल कहिये उज्ज्वल भया है जो शुद्ध का आश्रय करे सो शुद्ध होय यह निश्चय है सो जिनराज के आश्रय से गजराज धवल भासे है।।50।। सौधर्म्म इंद्र जब जिनेंद्र का अभिषेक किया तब सब ही निर्मल जल कर जिनवर का अभिषेक करते भये। जिनशासन के ज्ञान कर उपजा है प्रशस्त राग जिनके, सो वीतराग की भक्ति विषे सदा सावधान हैं अल्प रहा है संसार समुद्र जिनके जे भक्तों के लक्षण सिद्धान्त विषे कहे हैं सो सुरेंद्रों में है।।51।। अर शची आदि इन्द्राणी भगवान के तन को अंगोछती भई। अर सुगन्ध जलकर अभिषेक किया मानो वह कलश इन्द्राणियों के कुच कुम्भों समान सुन्दर हैं। एक साथ सब इन्द्रानी सुगन्ध का लेप करती भई अर सुन्दर वस्त्र अर मणियों के आभूषण अर कल्पवृक्षों के पुष्पों की माला प्रभु को पहराई। कल्याण के पर्वत यदुपति तिनको शृंगार अरिष्टनेमि नाम धर इन्द्रादिक सुर असुरों कर सहित प्रदक्षिणा कर प्रभु की स्तुति करते भये। कैसे हैं प्रभु, तीन लोक की लक्ष्मी जिनके चरणाविंद विषे आय प्राप्त भई है।।52।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ जन्माभिषेकवर्णनो नाम अष्टत्रिंशः सर्गः।।38।।

जे भव्यजीव हैं वे जिनमार्ग की दृढ़प्रीति कर अपनी शक्तिप्रमाण व्रत का आचरण करो जो पूर्णशक्ति होय तो मुनि होवो अर न्यून शक्ति होय तो अणुव्रत के धारक श्रावक होवो।

यह प्राणी धर्म के फलकरि स्वर्ग मोक्ष के सुख पावै हैं, अर पाप के फलसूं नरक निगोद के फल पावै हैं। यह निःसंदेह जानो। अनादिकाल की यही रीति है धर्म सुखदायी। पाप किसे कहिए अर पुण्य किसे कहिए सो उरविषै धारो। जेते धर्म के भेद हैं तिनविषै सम्यक्त्व मुख्य है। अर जितने पाप के भेद हैं तिनमें मिथ्यात्व मुख्य है। सो मिथ्यात्व कहा?

अतत्त्व की श्रद्धा, अर कुगुरु कुदेव कुधर्म का आराधन, परजीवकूं पीड़ा उपजावना, अर क्रोध मान माया लोभ की तीव्रता, अर पांच इन्द्रियों के विषय सप्तव्यसन का सेवन, अर मित्रद्रोह, कृतघ्न, विश्वासघात, अभक्ष्य का भक्षण, अगम्यविषै गमन, मर्म का छेदक वचन, दुर्जनता, इत्यादि पाप के अनेक भेद हैं वे सब तजने। अर दया पालनी, सत्य बोलना, चोरी न करनी, शीलपालना, तृष्णा तजनी, कामलोभ तजने, शास्त्र पढ़ना, काहूंकूं कुवचन न कहना, गर्व न करना, प्रपंच न करना, अदेखसका न होना, शान्तभाव धरना, पर उपकार करना, परदारा परधन परद्रोह तजना, परपीड़ा का वचन न कहना, बहु आरंभ बहु परिग्रह का त्याग करना, दान देना, तप करना, पर दुःखहरना इत्यादि जो अनेक भेद पुण्य के हैं, वे अंगीकार करने। **– पद्मपुराण भाषा वचनिका, पृष्ठ 726**

उनतालीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – सुरपति जिनपति की स्तुति करे है – हे त्रैलोक्य नाथ! तुम बिना पढ़ाये सकल श्रुत के पारगामी मतिज्ञान के धारक अवधि प्रकाशक निर्मल ज्योति के धारक मोह निद्रा कर रहित विशिष्ट है ज्ञानलोचन तुम्हारे सो ज्ञानदृष्टि कर समस्त स्थावर जंगम रूप यह जगत् तिसको देखो हो अर दर्शन ज्ञान चारित्र रूप निर्मल रत्न तिनकर विराजमान हो पूर्व भव विषे उग्र तप कर युक्त सोलह कारण भावना भाय तीर्थंकर प्रकृति उपारजी जो तीर्थंकर नाम प्रकृति रूप अति विशिष्ट अद्भुत पुण्य का महा उदय सोई भया तीव्र पवन का वेग तिसकर चलायमान यह देवों के समूह सोई भये कुलाचल तिनकर सेवित हैं चरण कमल तुम्हारे अर तुम युग विषे मुख्य तुम्हारे मुख कमल का दर्शन करते करते तृप्ति न होय है। भव्य जीव रूप भंवरों की यही अभिलाषा है कि आपके मुख रूप कमल का दर्शन ही करते रहें।

धीर पुरुषों के स्तवन की ध्वनि अर दुंदुभि वादित्रों का नाद तिसकर प्रगट भया है शुद्ध यश तुम्हारा तिसकर पवित्र भया है भरतक्षेत्र हरिवंश रूप मोटा उदयाचल पर्वत तिसकी शिखा मणि बाल दिवाकर अपनी दीप्ति कर जीती है अनेक सूर्य्यों की दीप्ति जिन और महा कांति का धरणहारा शरीर उस कर जीती है अनेक पूर्ण चन्द्रमाओं की कांति जिन। इन्द्रनील मणियों की ज्योति का मंडल तिसकर मंडित करी है दशों दिशा ऐसा मुख मंडल तुम्हारे सो तुम्हारे तांई नमस्कार। तुम तीन भुवन के गुरु परमेश्वर सब जीवों पर दयालु अपने आत्म कल्याण के अर्थि अर परोपकार की बुद्धि कर इस भव से तीन भव पहले जैसा जिन सूत्र विषे गाया है यति का धर्म्म, सो आदरा जिसकी बराबर तीन लोक में अर वस्तु नाहीं। महा कल्याण का कारण मुक्ति का पंथ सो तुम विधिपूर्वक पालन किया अर जीवों को उपदेश दिया नाना प्रकार के तप विधिपूर्वक कर कुकर्म रूप मल समस्त धोया अर निर्मल भाव कर तीर्थंकर पद उपार्ज्या सो पद सकल जगत् कर पूज्य है।।2।।

हे जगत् बल्लभ! अब तुम अपार दुःख का भरा जो समुद्र तिसे उल्लंघकर मोक्ष पधारोगे। कैसा है भव समुद्र, जन्म जरा मरण रोग इत्यादि अनेक महा भयंकर हैं दुःख जिस विषे अर कैसा है मोक्ष पद, समस्त जगत् का शिखर है जिसके अग्रभाग गुणों के आश्रय सिद्ध परमेष्ठी विराजे हैं तिस कर पाई है महा महिमा जिसने अर जिस स्थानक को महामुनि परम पद कहे हैं। वह एक अविनश्वर आत्महित है अर वह महत पुरुषों कर पूज्य है अर महंत पुरुषों कर ही पाइये है। अर निरन्तर है उदय जिसका अर अंत से रहित है महा प्रबल बड़े पराक्रमी धीर पुरुष सोई उस सुख को पावे हैं अर अभव्य जनोंकर यह सुख अलभ्य है जो निर्वाण पद का सुख है सोई सुख है अर सुख नाहीं। वह सुख

अतीन्द्रिय है अर अखंड है अविनश्वर है। जे भगवान केवली जगत के ईश्वर महा प्रभु तिनकर वह सुख सेवन योग्य है। देवेंद्र, नागेंद्र, नरेंद्र आदि देव मनुष्यों का सुख वा सुख के अनंतवें भाग नाहीं।।4।।

हे प्रभु! उत्पाद व्यय ध्रुव वही है स्वभाव जिसका ऐसे सकल पदार्थ तिनका निरूपण करणहारा एक तिहारा ही मार्ग है अर तिहारे ही मार्ग के सेवते ये प्राणी परमपद पावे हैं। अन्य मत के आश्रय से परमपद नाहीं मिले है तिससे तुम्हारा शासन ही सेवने योग्य है ऐसा निश्चय कर इस जगत् विषें जे जीवों के समूह तुम्हारी भक्ति विषें निरंतर सावधान है सोई कृतार्थता को प्राप्त होय हैं। हे जिनेन्द्र! जीवों को कृतार्थ करनहारे तुम ही हो। हे प्रभु! तुम जन्म ही से दश अतिशय धरे हो सब ही जीवों को हितकारी परम प्रिय वचन जिनके ऐसे तुम अर दशों दिशा को सुगन्ध करनहारा महा सुगन्ध है शरीर तुम्हारा।।2।। अर सम चतुरस्र संस्थान 3 अर वज्र वृषभ नाराच संहनन 4 अर अद्भुत रूप 5 एक हजार आठ लक्षण 6 अर दुग्ध समान रुधिर 7 अर पसेव रहित 8 अर अतुल बल 9 निर्मल शरीर जिसके देह विषे मल मूत्र नाहीं 10 । हे स्वामी! सब विभागों को जीतनेहारी जो तुम्हारी बुद्धि तिसकर तुम मदन के जीतनेहारे हो अर सकल पूज्य हो तुम्हारे जन्म कर यह क्षेत्र पूज्य, यह पृथिवी सुख से भर गई।

भावार्थ – सकल भूमि में सुख की वृद्धि भई अर छहों ऋतु के धान्य फल गये। तुम अनन्तगुण कर पूर्ण हो तुम्हारे गुण सकल लोक में न समावें। हम गुणों की वांछा से तुम्हारी आराधना करे हैं। हे नाथ! यह अचल नाथ कहिये मेरु सो यद्यपि निन्याणवें हजार योजन पृथिवी से ऊंचा है तथापि तुम समान उच्च नाहीं। यह सुमेरु उच्च है अचल है तथापि तुम्हारे स्नान का आसन होता भया। सो यह उचित ही है जे बुद्धिमान हैं ते बड़ों की बराबरी न करे हैं इस अप्रमाण अनन्त अतुल्य प्रभुत्व तुम्हारा मान ही है धन जिनके ऐसे देव अर मनुष्य तिनकर आप मानने योग्य हो। यह पृथिवी विषे सबसे ऊंचा ऊर्ध्व लोक है सो उर्द्धलोक के निवासी देव तुम्हारे किंकर हैं। उर्द्धलोक से तजकर यह मध्यलोक विषे तुम्हारे पायन आवे हैं। तुम तत्काल के जन्मे तौ भी त्रैलोक्य से अधिक है बल तुम्हारा। हे जीवों के हितू! तीन भुवन के गुरु! सब कर स्तुति करने योग्य नेम जिनेन्द्र हम इन्द्रादिक देव भक्ति के भार कर तुमको नमस्कार करे हैं सो हमको तुम अविनाशी सुख देओ।।10।।

हे कामरूप! गजेंद्र को मृगेंद्र समान तुम्हारे तांई नमस्कार अर हे क्रोधरूप फणेंद्र को पक्षियों के इन्द्र गरुड़ समान तुमको नमस्कार। अर हे मानरूप गिर को वज्र समान तुमको नमस्कार अर हे लोभ रूप महावन को दावानल समान तुम्हारे तांई नमस्कार। हे ईश्वरता के धरनहारे धीर! तुम्हारे तांई नमस्कार अर हे सर्वव्यापक विष्णु! तुम्हारे तांई नमस्कार, हे अनंत शक्ति कर युक्त देव! तुम्हारे तांई

नमस्कार हे अरिहंत! हे वीतराग! हे सर्व के वेत्ता सर्वज्ञ। अर हे अचिंत्य पद के स्वामी! तुम्हारे तांई नमस्कार। हे ब्रह्मपद के कारण! तुम्हारे तांई नमस्कार। इस भांति सत्य वचन के समूहों कर देवों के समूह जिनराज की स्तुति कर प्रणाम कर महा विकराल जो भवसागर तिसके तारक जे नेम तीर्थेश्वर तिनसे यही वर मांगते भये। जो हमको भव भव विषे तुम्हारी भक्ति देवो, तुम्हारी भक्ति ही भवसागर के तारणहारी है।।12।। अर पूर्ण ज्ञान की देनहारी है सो यह भक्ति के प्रसाद कर हमको केवल बोध की प्राप्ति होवो।

अथानन्तर – खेद रहित जे देव विशेष है बुद्धि जिनकी जिन्होंने मथा महा अमृतरूप क्षीर समुद्र सो मानो अमृत का अति पान किया इसलिए उद्गीरण भया। सो मेरु के खंड खंड विषे क्षीरसागर का जल विस्तरा है अर अतिशयपने कर बाजे हैं अनेक प्रकार के वादित्र मृदंग वीन भेरी आदि अनेक तिनका गंभीर शब्द तिसकर पूर रहा है सुमेरु का सकल स्थल वादित्रों के शब्द कर सब दिशा पूर्ण हो गईं। ऐसा जिनेन्द्र का जन्माभिषेक तिसका उत्सव तिसकी घोषणा ही के अर्थि मानो सब दिशाओं में वादित्रों का शब्द विस्तरा है सब दिशा गुंजार कर रही हैं अर नृत्य करे हैं देव देवांगना अर विद्याधरों के समूह उतंग जो संगीत तिसके नाद कर अति मनोहर श्रृंगार हास्य रस का प्रवाह वहे है अर नाना प्रकार के आभूषण पहिरे अति सुन्दर है अंग जिनके ऐसी देवांगनाओं के समूह नाना प्रकार की नृत्य कलाकर नृत्य की रचना करे हैं।

भावार्थ – इस भांति सुरगिर पर जगत्गुरु का अभिषेक भया। अर देवों ने स्तुति की नृत्य भये जन्म कल्याणक का उत्सव कर सौधर्म स्वर्ग का अधिपति आनन्द के साथ जिनेंद्र को ऐरावत के ऊपर चढ़ाय कर सौर्यपुर की ओर चाले। जिनेंद्र महाधीर हैं जिनके सिर पर छत्र फिरे है अर चमर ढुरे हैं जिसकी कीर्ति देव देवी गावे हैं। ऐसे जिनेंद्र को गिरराज से सुरराज गजराज पर आरूढ कर सौर्य्यपुर को ले चले सो सौर्य्यपुर मृगेंद्र समान जे यादवों के इन्द्र तिनकर भरा है। आनन्द के भरे चतुर्निकाय के देव बारम्बार प्रणाम करते स्तुति करते गीत गान करते जगत् विषे आनन्द विस्तारते भगवान के चरण कमल की सेवा विषे सावधान तिन सहित सुरेंद्र ऐसे शब्द करते प्रभु को लावें हैं। हे प्रभु! समस्त लोक को उल्लंघे ऐसे हैं अतिशय तुम्हारे अद्भुत ऐश्वर्य के धारक हे शिवदेवी के नन्दन! तुम नांदो वृद्धो, फूलो, फलो, चिरकाल जीवो इत्यादि पवित्र वचनोंकर स्तुति करने योग्य भगवान तिनका स्तवन करते सुर असुर सौर्यपुर की ओर चले आवे हैं अर कुलाचलों से उपजी जे नदी तिनका निर्मल जल तिसकी लहर कर शीतल अर भोगभूमि के कल्पवृक्ष तिनके नाना प्रकार के पुष्पों कर महा सुगंध अर मंद मंद विचरती ऐसी शीतल मंद सुगंध पवन वाजे है जिसकर प्राणियों के खेद दूर होय सो पवन प्रभु के साथ साथ अनुकूल चली आवे है।

www.vitragvani.com

भावार्थ – पवन पीछे पीछे चली आवे है सामने नहीं आवे है प्रभु का कोमल अंग तिसे आलिंग कर पवन महा मनोहर भई है। भगवान तत्काल के बालक योग्य वस्त्र पहरे अर आभूषणों कर मंडित अति सुन्दर है माला उर विषे ऐसे अद्‌भुत बालक कल्पवृक्ष अपनी परम शोभा कर सबकी शोभा जीतनहारे श्याम मूर्ति महा सुगंध कर्पूर चन्दन का लेप किये कैसे शोभे हैं, जैसा चांदनी कर संयुक्त नीलाचल शोभे है।

भावार्थ – आप तो नीलाचल समान हैं अर कर्पूर चंदन का लेप चांदनी समान है। वे भगवान लक्ष्मीधर देवों की सेनाकर मंडित शीघ्र ही उत्तर दिशा को उल्लंघकर अपना जन्म जो सौर्यपुर तहां पधारे। कैसा है सौर्यपुर, ऊंची ध्वजाओं का समूह तिसकर शोभित है अर वादित्रों के गंभीर नाद तिनकर जहां दशों दिशा व्याप्त होय रही है अर महा मनोज्ञ सुगंध जल की जहां वर्षा होय रही है अर पुष्पों की वृष्टि होय रही है तिस कर नगर की गली रुक रही हैं। मानो वह पुर लक्ष्मी का निधान ही है अनेक निधियों से भरा है अर महामंगल का है प्रसंग जिस विषे ऐसे सुन्दर सौर्यपुर विषे श्रीनेमिनाथ आय प्राप्त भये।

वह सौर्यपुर ऐश्वर्य का अर आश्चर्य का मूल है। इस पृथिवी विषे आनन्द को प्रगट करते लोकों को प्रमोद बढ़ाते प्रभु आये। वयकर बालक अर गुणों कर वृद्ध जिनेश्वर सौर्यपुर की प्रजा अर राजा समुद्रविजय सोई भये। कमलों के वन तिनके प्रफुल्लित करने को ऊगते सूर्य्य समान हैं तिसे ऐरावत मतंग के शिर से उतार कर माता की गोद में इन्द्र पधरावता भया। अर इन्द्र आप विक्रिया शक्ति कर दैदीप्यमान हजारों भुजा बनाईं सो शोभाकर युक्त तिन पर हजारों देवी नचाईं। सो देवी सौन्दर्यता के समूह कर पूर्ण तिनका नृत्य हर्ष कर यादव देखे हैं। वे यादव समस्त पृथिवी के राज्य से प्रभु के जन्मोत्सव का लाभ मन में अधिक जानते संते आनन्द रूप हैं नेत्र जिनके सो इन्द्र का रचा आनन्द नाटक तिसे निरखते भये। जहां इन्द्र नटवा तिस नृत्य का कहा वर्णन करिये। ऐसी ही शोभा ऐसी ही वादित्र ऐसा ही आप ऐसा सब समाज ऐसा ही अंग का मोड़ना ऐसा ही भौंह का चढ़ावना ऐसी ही लीला तिसकर महा प्रवीण इन्द्र नटवा आनन्द नाटक करता भया। प्रगट किये हैं नाना प्रकार रस जिसने अर देवों को राजा जगत् के राजा को अर तिसके माता पिता को प्रणाम कर पूजाकर अमोलिक वस्त्राभरण पहराय भगवान के दाहने अंगूठे में अमृत का स्थापन कर अर अनेक देवकुमार प्रभु की सेवा को राखे।

तिनको यह आज्ञा करी जो प्रभु की वय होय तिस ही प्रमाण तुम वय धार कर नाना प्रकार सेवा करो अर सेवा विषे अति तत्पर जो कुवेर तिसे सुरपति ने आज्ञा करी – हे धनपति! तू जिनपति की वय प्रमाण छह ऋतु योग्य सकल सामग्री पहुंचाय जो वस्तु न होय सो लावो अर उनकी रक्षा करो।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

यहां की सब सेवा तेरे तालुक है ऐसी आज्ञाकर देवों का राजा प्रभु के माता पिता की आज्ञा पाय आपको कृतार्थ मानता सन्ता समस्त चतुरनिकाय के देवों सहित अर समस्त इन्द्राणियों सहित पाया है जन्मोत्सव का लाभ जाने सो अपने स्थान गया। सिद्ध भई है यात्रा जिसकी अर दिक्कुमारी भी जन्म समय का उत्सव कर पुत्र सहित माता शिवदेवी को प्रणाम कर हर्ष की भरी अपने अपने स्थानक गईं। अपने शरीर की प्रभाकर दशों दिशा विषे किया है उद्योत जिनने अर भगवान जगत् के चन्द्र अपने उज्ज्वल गुणों कर जगत् को आह्लाद उपजावते लक्ष्मी कर सोहते भये। कैसे हैं भगवान, बालावस्था विषे भी बाल भाव से रहित है क्रिया जिनकी सो बंधुवर्ग अर देव तिनकर लड़ाये वृद्धि को प्राप्त होते भये।

यह अरिष्टनेमि का जन्माभिषेक का स्तवन तीन लोक को हर्षित करणहारा पाप का नाशक पुण्य का मार्ग संसार में सार मोक्ष का कारण भव्यजीवों को प्रमोद का कर्त्ता धर्म का बढ़ावनहारा जो कोई प्रीति कर सुने अर स्मरण करे व्याख्यान करे पढ़े सदा चिन्तवे सो पुरुष सम्यक् दर्शन ज्ञान चारित्र सम्पदा का वर्णनहारा जो वीतराग का धर्म तिसे प्राप्त होय। अर वह पुरुष पुण्य के आस्रव का कारण होय है। कैसा है पुण्य का आस्रव, शरीर के सुख का देनहारा शांति का करणहारा पुष्टता का बढ़ावनहारा संतोष का उपजावनहारा सम्पत्ति का मूल यह लोक परलोक कल्याण की प्राप्ति का प्रत्यक्ष उपाय सर्व पापास्रव का निवारणहारा पूर्व भव विषे अनेक दारुण कर्म्म किये तिनका नाश करनहारा है जे राग द्वेष मोहादि भाव कर उपजे हैं अशुभ कर्म तिनका मेटनहारा यह जिनेंद्र का मुख्य स्तोत्र हमारे भक्ति का समूह करो। इस स्तोत्र के प्रभाव कर हमारे परमेश्वर की परम भक्ति होवो।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ जन्माभिषेकस्तवनवर्णनो नाम एकोनचत्वारिंशत्तमः सर्गः।।39।।

गौतम स्वामी राजा श्रेणिकतैं कहै हैं – हे राजन्! यह जगत् नाना प्रकार के जीवनिकरि भस्या है, तिनमें जो कोई परमार्थ के निमित्त उद्यम करै है सो प्रशंसा योग्य है, अर स्वार्थतैं जगत ही भरा है। जे पराया उपकार करैं ते कृतज्ञ हैं, प्रशंसनीय हैं। अर जे नि:कारण उपकार करै हैं उनके तुल्य इन्द्रचन्द्र कुवेर भी नाहीं। अर जे पापी कृतघ्नी पराया उपकार लोपै हैं वे नरक निगोद के पात्र हैं अर लोकनिंद्य हैं। – पद्मपुराण भाषा वचनिका, पृष्ठ 437

चालीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – जरासिंध सुनी जो भाई अपराजित युद्ध विषे परलोक गया सो यह वार्ता सुन कर शोक रूप समुद्र विषे डूबे था सो क्रोध रूप जहाज कर थंभा।

भावार्थ – जरासिंध को अपराजित का ऐसा शोक उपजा जो तत्काल प्राण जाते रहें परन्तु इसके मारने कर यादवों पर महा क्रोध उपजा तिस कर प्राण थाम्भे।।1।। समस्त यादवों के नाश के अर्थ अपने मित्रवर्गों से मंत्र कर आज्ञा करता भया। कैसा है जरासिंध, समस्त नय अर पुरुषार्थ तिनकर पूर्ण है।।2।। जरासिंध की आज्ञा से नाना देश के राजा चतुरंग सेना कर मंडित स्वामी के आज्ञाकारी महा स्वामिभक्त स्वामी के निकट आये सेना रूप समुद्र तिसके मध्यवर्ती जरासिंध पृथिवी का पति यादवों पर कूच ही करता भया। तब यह खबर यादवों को भई। यादव महा चतुर हलकारे ही हैं नेत्र जिनके।।4।। यह वार्ता सुन कर जे वयोवृद्ध हैं अंधकवृष्टि अर भोजकवृष्टि के वंश के सो सब मिल कर मंत्र करते भये धर्म्म का है निरूपण जिनके।।5।। यादव विचार करे हैं जरासिंध तीन खंड का स्वामी है अखंड है आज्ञा जिसकी सो औरों कर जीता न जाय प्रचंड है। अर चक्र, खडग, गदा, दंड, रत्नादि दिव्यास्त्रों के बलकर उद्धत है।।6।। अर कृतज्ञ है जो कोई उसकी सेवा करे तिसका गुण माने है कृतघ्न नाहीं अर कोई उससे द्वेष करे फिर प्रणाम करे तो उसे क्षमा भी करे है। अब तक अपना बुरा उसने नाहीं किया, पहले अनेक उपकार ही किये हैं।।7।।

अर आपां उसका जवाई मारा, अर भाई मारा सो उसका बड़ा अपमान भया सो वह अपना अपमान मल धोवने को महा कोपवान अपने ऊपर आवे है।।8।। अर अपना दैवबल अर पुरुषार्थ की सामर्थ्य देखता भी नाहीं देखे है महा गर्ववान है।।9।। अर कृष्ण के पुण्य की सामर्थ्य अर पुरुषार्थ अर बलभद्र का पुरुषार्थ बाल्यावस्था ही से लेयकर जगत् में प्रसिद्ध है परन्तु उसे नहीं भासे है अर श्रीनेमिनाथ का अपने जन्म भया इन्द्रादिक देवों के आसन कंपायमान भये। जिसका प्रभुत्व बाल्यावस्था ही विषे तीन लोक में प्रगट है जिसकी सेवा विषे सकल लोकपाल सदा सावधान तिसके कुल को ऐसा कौन मनुष्य जो विघ्न करे जिस कुल विषे तीर्थंकर देव प्रगट होय सो कुल अपराजित है किसी कर जीता न जाय ऐसा कौन है जो अग्नि को हाथ कर स्पर्शे। अग्नि तीव्र ज्वाला कर युक्त है तैसे तीर्थंकर बलदेव-वासुदेव के सन्मुख जीत की इच्छा कर कौन आवे।।13।।

यह जरासिंध प्रतिनारायण है अर इसके नाश करनहारे अपने कुल में यह बलभद्र नारायण उपजे हैं।।14।। तिससे जबतक कृष्ण रूप अग्नि विषे वह प्रति नारायण पतंग अपनी पक्ष सहित आप ही आय कर भस्म न होय तबतक कालक्षेप करना योग्य है जिससे कई एक दिन हम तुम शूरवीर कृष्ण

को यहां से उठाय कर अर जगह रक्खें। यह कृष्ण तीन खंड का जीतनहारा योद्धा इस समय जरासिंध से लड़ने समर्थ नाहीं तिससे यह स्थानक तज कर हम तुम कइ एक दिन पश्चिम दिशा की ओर निवास करें। स्थानक पकड़े कार्य्य की सिद्धि निःसन्देह होय।।17।। हम यह स्थानक तज पश्चिम की ओर चलें अर जो वहां जरासिंध आवे तो रण विषे नीकी पाहुण गति करें। यह भी रणप्रिय है सो उसे रण विषे प्रसन्न करें।।18।।

यह मंत्र कर अपने कटक में सवों को कही, आनन्द भेरी का नाद कर सबों को चलने का विचार जनाया तब सब ही लोक चलने को उद्यमी भये। आनन्द भेरी का नाद सुन सब ही प्रजा चारों वर्ण अपने कुटुम्ब सहित यादवों के साथ चलने को उद्यमी भये सबही यदुवंशी अंधकवृष्टि के अर भोजन वृष्टि के साथ चलने को उद्यमी भये। मथुरा के अर शौर्यपुर के अर वीर्यपुर के सब ही लोक प्रस्थान करते भये जैसे कोई क्रीड़ा के अर्थ वन विषे जाय जैसे देश तज विदेश को उद्यमी भये। अठारह कोड घर अप्रमाण धन के भरे राजा के साथ निकसे यादवों का राज्य ही प्रिय है जिनको।।22।। शुभ तिथि नक्षत्र शुभ योग देख कर यह यादव भूपाल प्रयाण करते भये।

यद्यपि बलदेव वासुदेव के मन में यह विचार आया जो जरासिंध से अब ही लड़ें परन्तु बड़ों की आज्ञा से प्रयाण ही करते भये उन्होंने कही इस समय तुम्हारी अवस्था नाहीं तब यह बड़ों के आज्ञाकारी सो उनके कहे से प्रयाण ही किया।।23।। सो अनेक देशों को उल्लंघ कर ये पश्चिम की ओर गये सो विन्ध्याचल के समीप डेरा किया। जो विंन्ध्याचल गजों के वनकर रमणीक अर जहां सिंह शार्दूल घने अर जिसका शिखर आकाश लग रहा है सो उस गिर की शोभा राजा प्रजा के मन को हरती भई।।24।।

यहां हरिवंशपुराण में तो यह कथन है जो श्रीनेमिनाथ का जन्म शौर्यपुर में भया अर जन्म भये पीछे द्वारका गये अर उत्तरपुराण तथा नेमपुराण विषे यह कथन है जो नेमिनाथ स्वामी का जन्म शौर्यपुर का नाहीं द्वारका गये पीछे प्रभु का जन्म भया है अर नेम निर्वाण काव्य विषे ऐसा कथन है जो प्रभु का जन्म तो द्वारका ही है परन्तु द्वारका में यह बास वसे हैं जहां दशार्ह समुद्रविजयादि दश भाइयों के महल अर इनकी प्रजा बसे सो शौर्यपुर अर उग्रसेन का निवास सो मथुरा अर द्वारका ही में जहां पांडवों का निवास सो हस्तिनापुर इस भांति लिखा है।।25।।

अर इनको निकसे सुन पीछे से जरासिंध गया तब यादवों ने सुनी जो वह आया तब महा उत्सव कर यादव युद्ध को उद्यमी भये अल्प ही अन्तर दोनों सेना के रहा तब तीन खण्ड के निवासी देव माया की सामर्थ्य कर विक्रिया रचते भये। ठौर ठौर अग्नि की ज्वाला प्रज्वलित है अर यादवों के अधीश अग्नि में जरे हैं अर सब कटक जरे है अर जगह जगह इनके आभूषण पड़े हैं अर गज अश्व दौड़े दौड़े

फिरे हैं ऐसी विक्रिया जरासिंध ने देखी अर अग्नि की ज्वाला कर मार्ग भी चलता न देखा अर एक देवी वृद्ध मनुष्यनी का रूप धरे रोवती देखी तिससे जरासिंध ने पूछा – यह विस्तीर्ण कटक कौन का जरे है अर तू क्यों रोवे है अर कौन है? इस भांति पूछी तब वह देवी वृद्धरूपणी कष्टकर स्वास भरती नीठ नीठ कहती भई रुदन कर रुक रहे हैं कंठ जिसके।।32।। वृद्ध रूपणी कहे है – हे तेजस्वी! मैं कहूं – सो तू सुन महत् पुरुष के निकट अपना दुःख निवेदन करिये तो दुःख की निवृत्ति होय उनके वचन ही सुन साता उपजे है।।33।।

एक राजगृह नामा नगर है तहां राजा जरासिंध राज करे है सो पृथिवी विषे प्रसिद्ध है अर समुद्र पृथिवी विषे उसका राज है अर महा सत्यवादी है अर उसके प्रतापरूपी अग्नि बडवानल का रूपकर समुद्र विषे भी मानो प्रज्वलित है उससे वैर करने समर्थ कौन? अर उसने तो यादवों पर कृपा करने में कमी न करी परन्तु ये अपराधी भये सो अपने अपराध की शल्यकर वह किसी दिशा अपना जीव ले भागे सो पृथिवी विषे कोई शरण न देखा, चक्रवर्तियों के कोप कर कहां वचें तब उन अपना मरण ही शरण जाना, अग्नि विषे प्रवेश कर भस्म भये अर मैं उनके बड़ों की दासी हूं सो अपने स्वामी की दुर्बुद्धि कर दुखी भई रुदन करू हूं। मैं इतनी बड़ी भई तो भी उनके साथ जल न सकी अद्यापि जीवने की आशा है।।38।। अर यादव सबही राजा अपनी प्रजा सहित अग्नि में जले।।39।। अर मैं दुखिनी स्वामियों के वियोग से दुःख की भरी विलाप करूं हूँ।।40।।

यह वचन वृद्धरूपणी के जरासिंध सुन कर आश्चर्य को प्राप्त भया। अर अंधकवृष्टि अर भोजकवृष्टियों के सन्तान का मरण जान।।41।। पीछे फिर अपने स्थानक भाइयों सहित आया अर जे यादवों में इसके अंगी हैं तिनको पाणी देकर कृत्य कृत्य होय सुख से तिष्ठा।।42।। अर यादव अपनी इच्छा से पश्चिम के समुद्र के वनों विषे आये सो वन में लोंग इलायची दालचीनी आदि सुगन्ध है अर जहां शीतल मंद सुगन्ध पवन वाजे है।।43।। दूर देश से आये यह यादव नृप सो पश्चिम के सागर के तट अपनी प्रजा सहित डेरा कर तिष्ठे।।44।।

यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहे हैं – हे राजन्! वह जरासिंध करुणा रहित यादवों के पीछे लग गया अर उनके मारने ही का प्रयोजन जवांई अर भाइयों के मारने कर उपजा है अधिक कोप जिसको सो मार्ग विषे देवों ने अग्नि का प्रपंच कर रोका सो पीछे फिरा। जिनके पुण्य का उदय है तिनका रिपु कहा करे – ऐसा जान जे जिनधर्मी विवेकी जन हैं सो जिनभाषित धर्म में स्थिति करो। जिनधर्म के प्रभाव से विघ्न टरे हैं।।45।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे श्रीजिनसेनाचार्यस्य कृतौ यादवप्रस्थानवर्णनो नाम चत्वारिंशः सर्गः।।40।।

छठवाँ अधिकार

यादवों का द्वारिका में निवास करना

इकतालीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – श्रीनेमिनाथ जिनके साथ समुद्रविजय आदि दशार्ह अर भोजकवृष्टि के पुत्र अर बलभद्र नारायण सब ही समुद्र की शोभा को देखने को गये सो समुद्र अति अथाह देखा जिस विषे अनेक तरंग उठे हैं अर जैसा मस्त हाथी घूमे है जिस विषे अनेक भंवर उठे हैं अर अनेक लहर उठे हैं अर बैठे हैं अर अनेक जल के मण्डल ऊंचे उछले हैं सो मानो आकाश को आच्छादित करे हैं।।3।। अर जिस विषे अनेक मगरमच्छ विचरे हैं अर ग्राहों का गृह ऐसे रत्नाकर को यादव निरखते भये।।4।। जिसका पार न पाइये ऐसा अपार है अर अति गम्भीर है जे महा बुद्धिमान अनेक यत्न करें तो भी समुद्र का थाह न पावे जिसे कोई तिर न सके। गम्भीरता के योग से जिसका तल अगम्य है।।5।। अर अति उतंग अति चंचल तरंगों के प्रसंग कर अलंघ्य है जिस विषे चली आवे हैं अनेक नदी तिन कर मनोहर है अर अमोलिक महा रत्न तिन कर जगत का उपकार करे है अर अनादि काल का है अर निर्मलता अर विस्तीर्णता के योग से आकाश की शोभा को अंगीकार करे है।।7।।

अर अपने उदर विषे धरे है अनेक जीव तिन की रक्षा का है दृढ़ व्रत जिसके मानो यह समुद्र जिनशासन का स्वरूप ही है जिनमार्ग भी जीवों का रक्षक है अर यह समुद्र भी अनेक जीवों का रक्षक है अर जिनमार्ग जे वादी जीत की इच्छा करें तिन कर अलंघ्य है अर, यह भी लोकों कर अलंघ्य है अर उसका भव्य जीव अनन्तानुबंधी कषायों के आताप निवारने को आश्रय करें अर यह समुद्रों का आश्रय ताप के अनुबंधन को निवारे है। यह समुद्र अपने स्पर्श ही कर आताप को निवारे तो अवगाह कर क्यों न निवारे।।9।। ऐसे समुद्र को यादवों ने देख कर जानी मानो यह सूत्रार्णव ही है अंबुधि (समुद्र) को विलोक कर राजाओं के समूह बहुत राजी भये। अर समुद्र की लहर में मूंगा मोती आदि अनेक रत्न तट पर आये सो मानो नेमिनाथ के आगम कर समुद्र ने हर्षित होय पुष्पांजलि ही चढ़ाई अर समुद्र ऊंचा उछला सो मानों नृत्य ही करे है अर समुद्र गर्जा मानो जय जयकार शब्द ही करे है अपनी तरंग रूप कर तिनसे नाना प्रकार के रत्नों कर मानो अर्घ ही देय है अर मानों वह सागर अपनी कल्लोल रूप भुजाओं कर हरि जे कृष्ण तिनसे मिलाप ही करे है अर ध्वनिरूप वचन कर हरि का सत्कार ही करे है अर वह समुद्र युग विषे प्रधान जे बलभद्र तिनको देखकर मानों चलाचल होने के मिस कर उठे ही हैं बड़ों को देखकर उठना चाहिए। सो मानो समुद्र बलभद्र नारायण का सत्कार

www.vitragvani.com

ही करे है नेमिनाथ तीर्थंकर तो तीन लोक के प्रभु अर बलभद्र नारायण तीन खंड के अधिपति जिनपति के महा भक्त सो मानो समुद्र इनका विनय ही करता भया। अर वह समुद्र झागों के मंडल कर ऐसा शोभे है मानों समुद्रविजय अक्षोभ आदि सब भाइयों का अर भोजवंशियों का आदर ही करे है, तुम भले ही पधारे।

भावार्थ – झाग भी उज्ज्वल अर हास्य भी उज्ज्वल सो फेन न उठे है। इनके आयवे कर समुद्र हर्षित भया हंसे ही है। अर शुभ तिथि देख स्थानक की इच्छा कर बलभद्र सहित कृष्ण तीन उपवास धारते भये। अर डाब सेज पर तिष्ट कर नमोकार मंत्र जपा अर समुद्र के तीर तिष्ठे।।16।। तब सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से गौतम नामा देव आय कर इनका बहुत सन्मान करता भया अर कुवेर ने इन्द्र की आज्ञा से श्रीनेम जिनेश्वर की भक्ति अर बलदेव वासुदेव के पुण्य कर द्वारावती नामा परम पुरी निर्वापी सो नगरी बारह योजन लम्बी अर नव योजन चौड़ी वसी वज्र कहिये हीरा तिनका है कोट जिसके अर समुद्र ही है खाई जिसके।।19।।

अर रत्न स्वर्ण कर रचे बहुत खणों के अनेक मंदिर तिन कर वह नगरी आकाश को रोकती संती ऐसी शोभती भई मानो इन्द्रपुरी ही स्वर्गलोक से उतरी है। जहां अनेक कूप अनेक वापी अनेक सरोवरी अनेक कुंड चौखूटे तथा गोल अर अनेक द्रह जिनमें नाना प्रकार के कमल फूल रहे हैं अर महामिष्ट स्वादिष्ट है जल जिन विषे।।21।। अर अनेक हैं चारों ओर वन जहां कल्पवृक्ष समान बेल अर नागर बेलि, लौंग, सुपारी, इलायची, अगर, चंदन आदि अनेक वृक्ष तिनकर शोभित वन नन्दन वन की शोभा को जीतते भये। अर उस नगरी विषे अनेक मंदिर ऐसे हैं जिनके स्वर्ण रत्न के कोट अर दरवाजे सर्व रीति के सुख के देनहारे वह मंदिर सुरमंदिर समान सोहते भये, नाना प्रकार की मणियों के हैं शिखर जिनके।।23।।

अर अनेक सुन्दर बाजार अर अनेक गली अर ठौर ठौर जल के निवाण तिन कर महा मनोहर वह पुरी सब राजा अर प्रजाओं के वास योग्य शोभती भई।।24।। अर जहां सर्व रत्न मई अति उतंग जिनेंद्र के चैत्यालय महा पवित्र जिनके चौगिर्द कोट अर दरवाजे तिन कर वह पुरी स्वर्गपुरी समान सोहे है अर अग्नि कूण आदि चार विदिशा अर पूर्व आदि चार दिशा तिन विषे समुद्रविजयादि दश भाइयों के महल अनुक्रम से होते भये। अर वसुदेव के मन्दिर के मध्य एक सर्वतोभद्र नामा महल कल्पवृक्ष अर कल्पलता कर मण्डित अठारह खण का सबके रहने का शोभता भया।।27।। अर सब राजलोकों के अर पुत्रादिकों के योग्य मंदिरों की पंक्ति कृष्ण के मंदिर के चौगिर्द शोभती भई अर बलदेव का मन्दिर अति सुन्दर वन वापी सरोवरादि कर संयुक्त शोभता भया।।29।। अर बलदेव के महल के आगे एक सभा मण्डप शोभता भया वह रत्न मई सभा मंडप इन्द्र के सभा मण्डप समान शोभे

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

है जिसकी कांति कर सूर्य्य की किरण मंद भासे अर उग्रसेनादि भूपति के योग्य मंदिर सबही भाइयों के आठ आठ खण के शोभते भये। नहीं कर सकिये वर्णन जिसका ऐसी द्वारावती नामा पुरी महा मनोज्ञ रच कर कुवेर वासुदेव को दिखावता भया।।32।। इर इतनी वस्तु कुवेर कृष्ण को देता भया। मुकुट हार कौस्तुभ मणि पीतवस्त्र अर नक्षत्र माला नामा आभूषण यह वस्तु लोक विषे दुर्लभ हैं सो माधव को दईं अर कुमुद्वती नामा गदा अर शक्ति अर नंदक नामा खडग सारंग नामा धनुष अर दोय तरकस अर वज्र मई वाण।।34।।

अर सर्व आयुधों से पूर्ण दिव्य रथ जिसके गरुड़ की ध्वजा अर चमर अर सफेद छत्र यह केशव को कुवेर ने दिये अर बलभद्र के ताईं दो नील वस्त्र अर रत्नमाला मुकुट गदा अर हल मूसल अर धनुष वाण दो तरकस अर दिव्य शस्त्रों कर भरा रथ उसके ताड़ पत्र के आकार की ध्वजा अर छत्रादिक सहित अर भी मनोहर वस्तु हलधर को दी।।36।। अर नेम जिनेन्द्र के माता पिता समुद्रविजय अर शिवदेवी अर समुद्रविजय के सब भाई तिनको आभरणादि नाना प्रकार की वस्तु दी अर उग्रसेनादि भोजकवृष्टि के पुत्र तिनको वस्त्राभरणादि अनेक वस्तु दई।।38।। अर भगवान श्रीनेमनाथ तो निरंतर इन्द्रादि देवों कर अर कुवेर कर पूज्य ही हैं उनको तो उनकी अवस्था योग्य अनुपम वस्तु तिनकर सदा ही सेवे है। ऋतु ऋतु की भांति भांति की वस्तु कुवेर सदा ही लावे है अर आप सदा देवलोक ही के वस्त्राभरणादि पहिरे हैं अर सब सामग्री देवलोक ही की आवे है तिनको कहा वर्णन करिये। जिनके साथ जितने आये हुते थे सब ही देवों ने आराधे अर हरि हलधर की विशेष पाहुन गति करी।

अर कुवेर ने यादवेंद्र से कही – आप सब ही सरदार इस पुरी विषे प्रवेश करो अर तुम्हारी प्रजा को वसाओ। ऐसा कह पूर्णभद्र यक्ष को रख कुवेर तो अपने स्थानक गया अर सब यादव एकत्र होय समुद्र के तट जय जयकार शब्द कर अति हर्षित होय हलधर अर हरि का अभिषेक करवाया। दोनों वीर नरनायक हैं हल अर गदा का है आयुध जिन्हों के। बड़ा भाई तो हलधर है अर छोटा गदाधर है यह दोनों ही नरेश्वर जिनेश्वर देव के उपासक हैं।।41।। जैसे स्वर्ग विषे सुर प्रवेश करे तैसे यादव चतुरंग सेना सहित अर अपनी प्रजा सहित द्वारका में प्रवेश करते भये।।42।।

पूर्णभद्र नामा यक्ष को कुवेर रख गया था। तिसने सवों को यथायोग्य स्थान विषे राखे मंगल रूप वे सब ही मंदिर तिन विषे यह यादवेश्वर सुख से तिष्ठे। जे मथुरावासी थे उन्होंने तो द्वारका विषे अपने निवास का स्थानक मथुरा ठहराया अर जे शौर्यपुर के निवासी थे तिन द्वारका विषे अपने निवास का नाम शौर्यपुर ठहराया। अर जे वीरपुर के वासी थे तिन्होंने अपने वास का नाम वीरपुर ठहराया। इस भांति संकेत कर वे यथायोग्य निवास करते भये अर उस नगरी विषे कुवेर की आज्ञा कर यक्ष देव

अढाई दिन सब ही घर विषे पूर्ण धन धान्य वर्षावते भये। किसी के घर में किसी वस्तु की कमी न रही जहां विराजा कृष्ण सो उसके प्रताप कर पश्चिम के सब राजा बस भये बलदेव वासुदेव की आज्ञा सब मानते भये।।46।। अनेक राजाओं की पुत्री हजारों व्याह कर द्वारकापति सुरपति की न्याईं यथेष्ट सुख सों रमे।।47।।

अथानन्तर – श्रीनेमिनाथ कुमार द्वारका विषे चन्द्रमा की न्याईं वृद्धि को प्राप्त होता भया, समस्त कलाओं का स्थानक है शरीर जिसका।।48।। अर श्री नेमिनाथ ऊगते सूर्य्य समान शोभते भये दशार्ह कहिये समुद्रविजयादि दश भाई जिनके वदन सोई भये कमल तिनका प्रफुल्लित करनहारा उदय जिनका अर अपनी ज्योति कर दूर किया है तिमिर का समूह जिन्होंने राम कहिये बलदेव दामोदर कहिये वासुदेव तिनको निरन्तर आनन्द को बढ़ावते श्रीनेमिनाथ बाल्यावस्था विषे मनोहर क्रीड़ा करते भये जिनकी क्रीड़ा सुर नर विद्याधर सबों के मन को हरे।।50।। समस्त यादवों की स्त्री तिनके करों को शोभित करते श्री भगवान सबों के हाथों में विचरें। वह जाने मैं लूं वह जाने मैं लूं सबों के प्यारे जग जीवन जिनेश्वर बाल्यावस्था से तरुण अवस्था को प्राप्त भये महा रूपवान जिनके रूप समान त्रैलोक्य में किसी का रूप नहीं। प्रगट हैं सब लक्षण जिसमें ऐसे यौवन रूप जिन पर नील कमल समान नेत्र जिनके सो प्रभु के रूप को देख कर नर नारियों के नेत्र अर जग विश्राम न करते भये।।52।।

जगत् का हृदय कमल समान, तिस भगवान का रूप भानु समान, सो प्रफुल्लित करता भया। प्रभु ऐसे सुन्दर जो सबका मन हरें इनको देख सकल जनों का मन मोहित होय परन्तु इनका मन किसी को देख मोहित न होय। इन समान सुन नर का रूप नाहीं।।53।। तिससे जिनके रूप की उपमा अर को नाही जिनेश्वर स्वरूप जिनेश्वर ही का है जगत् विषे कोई इन समान होय तो इनको उपमा दीजै। हरि कहिये इन्द्र अथवा हरि कहिये वासुदेव यह बड़े बुद्धिमान हैं। इनके जानने में अनेक उपमा हैं परन्तु जिनराज को जिसकी उपमा दीजे ऐसा कोई पदार्थ नहीं तिससे मौन गहि बैठ रहे हैं।।54।। श्रीनेमिनाथ के निकट भाई बंधु निज जन जब शृंगार रस की चरचा करें अथवा परणायवे की बात चलावें, तब आप लज्जा कर नीचे होय जावें।।55।। तीन ज्ञान रूप जल तिसकर धोया है मोह रूप कलंक जिन सो नेमि जिनेश्वर का मन संसार की माया रूप धूलि कर धूसरा न होता भया।।56।। अर वह द्वारिकापुरी सुन्दर हैं द्वार जिसके सो जैसे समुद्र की लहर चन्द्रमा की किरणों के समूह कर वृद्धि को प्राप्त होय तैसे वह पुरी जिनराज के गुणों के समूह कर अत्यन्त हर्ष को प्राप्त भई। लोक रूप तरंग तिन कर उछलती हुई आनंद रूप प्रवर्ती शोभती भई।।57।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे श्रीजिनसेनाचार्यस्य कृतौ द्वारावती निवेशवर्णनो नाम एकचत्वारिंशः सर्गः।।41।।

बयालीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – सब यादवों की सभा है तिस विषे आकाशगामी नारद आकाश से आवते भये। कैसे हैं नारद, पीत वर्ण है जटा का भार जिनके अर दाढी मूंछ श्वेत हैं अर शरद के मेघ समान उज्ज्वल है वर्ण जिनका।।2।। जैसा विजुरी का उद्योत होय तैसी प्रभा को धरे सभा में आये अर नाना प्रकार के वर्ण कर विस्तीर्ण जो योग पट तिस कर शोभित है। जैसा प्रवेश कर युक्त चन्द्रमा शोभे तैसे शोभे हैं।।3।। अर हलहलाट करते वस्त्र कोपीन अर दुपटा तिन कर मंडित सभा में ऐसे आये जैसे जग के अनुग्रह की बुद्धि कर कल्पवृक्ष आवे।।4।। कंठ विषे यज्ञोपवीत का सूत्र कैसा शोभे है मानो रत्नत्रय ही कर युक्त है मन वच काय की शुद्धता कर धारा है ब्रह्मचर्य तिस कर उज्ज्वल है जन्म से लेय बाल ब्रह्मचर्य रूप महा पंडित तिसकर मंडित है। कैसा है ब्रह्मचर्य, अद्वितीय है प्रभाव जिसका अति बढ़ाई का कारण है।।6।। कैसे हैं नारद, मिथ्यात्व रहित पवित्र है प्रकृति जिनकी कामादि अंतरंग के वैरी छै तिन के जीतनहारे हैं जैसे बलदेव वासुदेव राज्य के उदय कर समस्त राजाओं कर पूजित हैं तैसे यह बिना ही राज विभूति सब राजाओं कर पूजनीक हैं।।7।।

कामादिक षट वैरियों के नाम – काम 1 क्रोध 2 लोभ 3 मोह 4 मद 5 मत्सर 6 । जब नारद अम्बर से उतरा तब सब ही राजा सीस नवाय उठ खड़े रहे अर नमस्कार कर आसन देते भये। बहुत भक्ति कर नारद के चरण पूजते भये कैसे हैं नारद, सन्मान मात्र ही है हर्ष जिनके अर किसी का कुछ चाहिये नाहीं।।9।। वसुदेव वासुदेव अर समुद्रविजयादि सब ही राजा नारद का सन्मान करते भये। नारद नेमि जिनेश्वर को नमस्कार कर सभा में बैठा। नेमनाथ के दर्शन कर अर वचन श्रवण कर उपजा है अति आनन्द जिसको सो इसके यही अभिलाषा कि मैं प्रभु का दर्शन करा ही करूं अर इनके वचन सुना ही करूं। तीर्थंकर देव बलदेव अर वासुदेव इनसे नारद का अधिक अनुराग है सो इनका अवलोकन कर अर इनके वचन रूप अमृत कर नारद के अति प्रीति बढ़ी।।10।। सभा में तिष्ट कर नारद पूर्व विदेह के अर पश्चिम विदेह के तीर्थंकरों की कथा रूप अमृत कर अर सुमेरु की वंदना कर आये थे सो वहां की सब वार्ता कहि यादवों का मन तृप्त करते भये।

जब नारद का कथन आया तब गौतम गणधर से राजा श्रेणिक ने पूछी – हे नाथ! यह नारद कौन है? अर इसकी उत्पत्ति किससे है? तब गौतम गणधर ने कहा – हे भूप! नारद की सम्पूर्ण कथा तुझे कहू हूं सो सुन।।13।।

यही सौर्यपुर जहां यादवों का राज तिस नगर के समीप दक्षिण की ओर तापसों का आश्रम जहां अनेक तापस कंद मूलादि फलपत्रों के भक्षण हारे रहें।।14।। जिनमें एक सुमित्र नामा तापस उसके

सोमयश नामा स्त्री वह तापस उंच्छ वृत्ति कहिये नगर विषे वणिक जन हाट उठाय घर जायं अर उनकी हाट में बाह्यस्थल विषे अन्न के कण विखर रहे होवें सो वीन लावे। इस वृत्ति कर उदर पूर्ण करे अर कभी कंद मूलादि भक्षण करे सो इनके नारद पुत्र भये।।15।। सो बालक चन्द्रमा समान कांति धारी सो बालक को वृक्ष के नीचे सूधा सुवाकर माता पिता दोनों क्षुधा तृषा से पीड़ित उंच्छ वृत्ति के अर्थ नगर में गये।।16।।

अर बालक वृक्ष के नीचे क्रीडा करता था तहां एक ज्रंभक नामा देव आया सो बालक को देख कर पूर्व स्नेह से वैताड्य पर्वत ले गया।।17।। तहां एक मणि कांचन नामा गुफा उस विषे वह देव बालक को रख कर कल्पवृक्षों कर उपजा मनोज्ञ आहार तिस कर इसे बढ़ाया।।18।। जब यह बालक अष्ट वर्ष ऊपर भया तब इसे जिनआगम का रहस्य समझाया अर देव इसे आकाशगामिनी विद्या देता भया।।19।। अर इसका नाम नारद धरा सो यह नारद महा विद्वान् अनेक शास्त्रों का पाठी मुनिराजों के चरणारविंद की सेवा कर श्रावक के व्रत धारता भया।।20।।

यह नारद जन्म ही से काम का जीतनहारा है अर कामदेव समान महा सुन्दर है अर जो राजा कामी हैं तिनका अति बल्लभ है उनको मन वांछित स्त्री परणाय दे अर आप महा शीलवान है लोभ कर रहित है अर सदा प्रसन्न वदन है हास्य रसविषे है अनुराग जिसका।।21।। अर महा तेजस्वी है मान धन है अर बिना सत्कार क्रोधकर प्रज्वलित होय अर कोई स्तुति करे तो डर भी जाय अर रण के देखने विषे है प्रेम जिसका अर जे जल्पाक कहिये वाचाल हैं तिनमें मुख्य है।।22।। अर अढ़ाई दीप विषे जिनराज के जन्म कल्याणक आदि पंच कल्याणक तिनके दर्शन का है अभिलाषा जिसके अर चैत्यालयों की वन्दना अर मुनियों की वन्दना तिन विषे है अनुराग जिसका महा जिनधर्मी निकट भव्य चतुर्विध संघ का अनुरागी धर्म प्रिय महा श्रद्धावान शास्त्र विषे निपुण अर बडा चरचावान सज्जन स्वभाव कौतूहली सदा अढाई द्वीप विषे परिभ्रमण करे जहां इसके आदर सत्कार में कमी होय तहां ही अरुचि रूप होय। सो नारद यादवों की सभा में धर्म की चरचा कर राजा समुद्रविजय आदि बड़ों को पूछ कर राजलोक में गया।।24।।

तहां कृष्ण की पटराणी सत्यभामा कृष्ण के प्राण से प्यारी महा शीलवन्ती स्नान कर आभूषण पहिरे थी अर मणियों का दर्पण हाथ विषे था सो अपना रूप निरखती थी सो नारद ने दूर से सत्यभामा देखी मानो साक्षात् रति ही है।।26।। अर वह शृंगार में लग रही थी सो नारद को न देखा उठकर इनका आदर न किया सो तत्काल क्रोध कर इसके घर से निकसे।।27।। मन में विचारी इस लोकविषे विद्याधर भूमिगोचरी मुझे देख सब ही उठकर नमस्कार करें अर सब ही राजाओं की रानी नमस्कार करें।।28।।

यह सत्यभामा रूप के मद कर गर्वित मेरी ओर दृष्टि ही न करी यह विद्याधर की पुत्री महा धीठ है।।28।। तिससे इस के रूप सौभाग्य के गर्व रूप पर्वत का मैं इसकी सौक रूप वज्र के निपात कर चूरण न करूं तो नारद काहे का अर आगे को मेरी संका कौन रक्खे।।30।। इसके रूप सौभाग्य को उल्लंघे ऐसी इस पर सौक हरि के घर में लाऊं बहुत रत्नों की भरी वसुंधरा राणी कन्हैया के लाऊ अर इसे निस्वास नाखती मैं निरखूं तब क्रोध रूप अग्नि बुझे। मुझ नारद को रुसाय निश्चिंत कौन रहे।।31।। ऐसा विचारकर नारद सब जगह भ्रमे परन्तु सत्यभामा सादृश्य रूप न देखा तब कुण्डलपुर आये जहां राजा भीष्म शत्रुओं को महा भयंकर बड़ा वंश का उपजा तिसके एक रुक्म नामा पुत्र महा बुद्धिमान् महा पराक्रमी अर रुक्मणी नामा कन्या सो कला गुण विषे प्रवीण।।34।।

सो नारद पहिले राजसभा विषे आये अर राजा ने अति सत्कार किया अर राजलोक में गये सो रणवास की सबही स्त्री आय प्रणाम करती भईं। अर रुक्मणी नामा कन्या महा सुन्दर भूवा से है अनुराग जिसके जैसी संध्या समय सूर्य्य की उदय लक्ष्मी सोहे तैसी रुक्मणी शोभे है मानो हरि के पुण्य कर पूर्वोपार्जित कर्म्म ने यह कन्या महा सुलक्ष महारूप महा सौभाग्य एकत्र कर बनाई है जगत से अधिक है सुन्दरता सौभाग्यता अर सुलक्षण जिसके।।36।। इसके अर चरण अर मुख रूप कमल अर जंघा, नितंब, भुज, नाभि, कुच, उदर, भौंह, करण, नेत्र, सिर, कंठ, नासिका, अधर, यह समस्त अंग उपमा को जीति कर इसके तन विषे तिष्ठे हैं। संसार में ऐसी कोई उपमा नहीं। सो रुक्मणी का रूप देख नारद आश्चर्य को प्राप्त भये। मन में विचारी मैं अनेक राजकन्या देखीं परन्तु इस समान नहीं। यह अनुपम कन्या केशव को परणायकर सत्यभामा के रूप अर सौभाग्य कर मद है सो निवारूं। ऐसा विचार करता जो नारद उसे हाथ जोड़ प्रणाम करती भई सो रुक्मणी सहज स्वभाव विनय की भूमि अर शब्द करे है आभूषण जिसके। जब रुक्मणी नमस्कार किया तब नारद ने असीस दी – जो हे पुत्री! तू द्वारिकापति की पटरानी हूज्यो।

जब रुक्मणी की भूवा नारद से पूछी – द्वारिकापति कौन? तब नारद ने सब व्याख्यान किया सो सुनकर रुक्मणी कृष्ण विषे अति आसक्त भई। नारद किंचित काल रह रुक्मणी के चित रूप भीत विषे कृष्ण का चित्राम कर अर रुक्मणी का वर्ण रूप वय विद्या चित्त विषे लिख बाहर गए।।43।। एकान्त विषे रुक्मणी का रूप पट विषे स्पष्ट लिखा अर जाय कर हरि को दिखाया। कैसा है रूप, चित्त को मोह का कारण।।44।। सो चित्राम में लक्षण देख कृष्ण नारद से पूछते भये। नारद से श्रीकृष्ण का हित तो सदा से है अर चित्रपट देख दूना स्नेह उपजा।।45।।

कृष्ण पूछे – हे भगवन्! यह तुम कौन कन्या का रूप चित्र पट विषे लिखा है? ऐसा अद्‌भुत रूप मनुष्यणियों का नाहीं अर देवियों का नाहीं।।46।। इस भांति कृष्ण ने पूछी तब नारद कहते भए – हे

मित्र! यह राजा भीष्म की कन्या रुक्मणी का रूप है सो सुनकर कृष्ण को रुक्मणी के करग्रहण की चिन्ता उपजी।।47।। एक समय एकान्त में भूवा रुक्मणी से कहती भई – हे बाले! मैं कहूं हूं सो सुन। एक दिन अतिमुक्तक नामा अवधिज्ञानी मुनि यहां आये थे सो तुझे देखकर कही – यह पुत्री लक्षणवती है सो वासुदेव के उरस्थल विषे लक्ष्मी की न्याईं निवास करेगी। केशव के सोलह हजार राणी तिनकी यह स्वामिनी होगी।।51।।

यह आज्ञा कर वे तो गये। अपने घर में किसी ने कृष्ण की बात ही न करी जैसे कोई पूर्वजन्म की कथा याद न आवे तैसे नारद ने याद दिवाई।।52।। अर तेरा भाई रुक्मी शिशुपाल की पक्ष गया था सो उसने अति हित जताया सो रुक्मी तेरी सगाई शिशुपाल से कर आया सो विवाह के दिन नजदीक हैं। कुछ दिनों में विवाह होने वाला है शिशुपाल बड़ा राजा है यह वचन भूवा के सुनकर रुक्मणी कहती भई – क्या मुनि के वचन अन्यथा हों? कदापि न हों। मेरे तो एक पति वासुदेव ही हैं तिससे मेरा अभिप्राय शीघ्र ही द्वारकापति को पहुंचा बहुरि वेई मेरे नाथ हैं।

यह कन्या का रहस्य भूवा जानकर एकांत में रुक्मणी के नाम से एक पत्र लिख नारायण के पास भिजवाया। जिसमें यह समाचार –तुम्हारे नाम ग्रहण किया है विश्राम जिसकर राखे हैं प्राण जिसने ऐसी रुक्मणी सो तुम्हारे दर्शन को चाहे है। माह शुदि अष्टमी का लग्न है इस लग्न पर मुझे आय कर ले जाओ अर जो कदाचित् तुम न आये अर मेरा पिता अर बांधव जो शिशुपाल को परणावेंगे तो मेरा मरण ही है। तुम्हारे अलाभ विषे मैं न जीऊंगी अर नगर के बाहर नागदेव का मंदिर है तहां मैं लग्न के वक्त पहले आऊंगी। अर तुम मेरे से पहले वहां आइयो। कृपा कर मेरा कर ग्रहण कर ले जाइयो।।63।।

यह रुक्मणी के पत्र का रहस्य माधव जानकर रुक्मणी के हरण प्रति सावधान हो तिष्ठे।।64।। चंदेरी नामा नगरी का पति शिशुपाल कुंडलपुर के धनी राजा भीष्म विदर्भ देश के स्वामी तिनके वचन से विवाह के अर्थी बड़ी सेना से आया कुंडलपुर के चारों तरफ शिशुपाल का कटक पड़ा। अर नारद ने एकांत विषे मोहन से कही। यह अवसर है तब कृष्ण बलभद्र सहित प्रछन्न निकसे। यह भेद कोई न जाने जिस समय कन्या नगर के बाहर नागदेव के मंदिर भूवा आदि अनेक स्त्रियों सहित आई थी उससे पहले बलदेव वासुदेव जाय पहुंचे सो माधव ने रुक्मणी देखी।।68।। पहले नारद ने रुक्मणी का रूप वर्णन किया था उसके श्रवण रूप ईंधन कर केशव के रागरूप अग्नि उपजी थी सो परस्पर दर्शन रूप पवन कर दोनों के राग रूप अग्नि अति वृद्धि को प्राप्त भई। तहां रुक्मणी को मोहन कही – तेरे अर्थी हम आये हैं तू हमारे हृदय विषे तिष्ठे है जो तेरा हमसे सच्चा स्नेह है तो हमारे पास आय बैठ अर हमारे मनोरथ पूर्ण कर।।70।।

www.vitragvani.com

यह वचन माधव ने कहे तब भूवा रुक्मणी से कहती भई – हे कल्याण रूपिणी! जो अतिमुक्तक स्वामी ने कहा था सो तेरा वर तेरे पुण्य के उदय से यहां आया अर पुत्री के देनहारे शास्त्र में माता पिता कहे हैं सो माता पिता भी विधि कहिये कर्म तिसके अनुसार दे हैं सो पूर्वोपार्जित कर्म ही गुरु है।।73।। यह वचन भूवा कहे अर रुक्मणी कृष्ण विषे अति अनुरागिनी परंतु लज्जाकर युक्त सो रथ पर कैसे चढ़े। तब माधव अपने दोनों हाथों कर इसे उठाय अर रथ में धरी स्नेह कर लग गये हैं नेत्र जिसके।।74।। यह दोनों मदन कर आतुर सो इन दोनों का परस्पर अंगस्पर्श तो होय गया सो दोनों को अति सुख उपजा।।75।। कृष्ण भी अद्‌भुत रूप अर रुक्मणी भी अद्‌भुत रूप अर दोनों के सुगंध शरीर मुख से सुगंध स्वास सो परस्पर दोनों सुगंध में भर गये। प्रिया का रूप तो प्रीतम के मन को वशीकरण होता भया। अर प्रीतम का रूप प्रिया के मन का वशीकरण होता भया। पूर्वोपार्जित कर्म ने रुक्मणी को शिशुपाल से विमुख करी अर कृष्ण को सन्मुख करी विधि ने इनका संयोग किया।।77।।

कृष्ण ने रुक्मणी रथ में चढ़ाय मन में विचारी ऐसा तो मैं निर्बल नहीं जो चोर की न्यांई छाने ले जाऊं। तब पंचजन्यनामा शंख मोहन ने बजाया तब उसका शब्द दशों दिशाओं में भया सो शब्द सुन शत्रु की सेना क्षोभ को प्राप्त भई। रुक्मणी का भाई रुक्मी अर शिशुपाल यह वृत्तांत जान युद्ध को चढ़े तिनके साथ साठ हजार रथ अर दस हजार हाथी अर तीस लाख घोड़े सो पवन से भी शीघ्रगामी।।81।। अर बहुत लक्ष पयादे जिनके हाथो में खडग चक्र धनुष इतनी सेना सहित रुक्मी अर शिशुपाल दशों दिशा को ग्रस्ते हरि हलधर के निकट आये।।82।।

तब माधव रुक्मणी को शत्रुओं की सेना दिखावते भये। रुक्मणी हरि के वाये अंग बैठी है सो रुक्मणी मृगनैनी वैरी का प्रबल बल देख उपजी है पतिमरण की शंका जिसके सो पति से कहती भई।।84।। हे नाथ! यह मेरा भाई रुक्मी कोपित भया अर यह शिशुपाल सो इनके अपार सेना है अर आप दोनों भाई।।85।। सो तुम्हारी दोनों भाइयों की सेना से रण विषे कैसे विजय होय? यह मेरे मन में संदेह है सो मैं ही मंद भागिनी हूं अर तुम तो वीराधिवीर हो सो तुम्हारे युद्ध की चिन्ता कहा। यह वचन रुक्मणी ने कहे, तब कृष्ण ने कही – हे कोमल चित्त की धरणहारी! तू भय मत कर। यह बहुत भये तो क्या मैं पराक्रमी एक ही घना मेरे होते यह क्या कर सकें।।87।।

तब रुक्मणी ने कही – अतिमुक्तक मुनि ने यह कही थी जो एक वाण कर सात ताल के वृक्ष छेदे। सो वासुदेव है इसमें संदेह नहीं। ये वचन रुक्मणी के सुनकर कृष्ण ने एक बाण कर तालवृक्षों की पंक्ति छेदी यह वासुदेव सामान्यास्त्र अर दिव्यास्त्रों के वेत्ता इनकी शस्त्रविद्या का कहा कहना अर रुक्मणी का अंगुली विषे वज्रमणि की मुद्रिका थी सो माधव ने अपने हाथ कर चूर्ण करी तब

www.vitragvani.com

रुक्मणी का यह संदेह तो गया जो इस युद्ध विषे दोनों भाई तो मारे न जायं तब हाथ जोड़ बहुत विनती करी – हे नाथ! मेरे भाई की रक्षा करो इस युद्ध विषे यह न मारा जाय।।92।। तब हरि ने कही तेरे भाई को न मारें कृष्ण अर रुक्मणी तो रथ में विराजे हैं। अर बलभद्र सारथी हैं सो बलभद्र ने शत्रुओं की ओर रथ चलाया दोनों भाई क्रोधकर वैरियों पर वाणों की वृष्टि करते भये सो शिशुपाल का सब कटक भागा।

अर वह दोनों रुक्मी अर शिशुपाल खड़े सो शिशुपाल को तो हरि ने कहा जो तू हमसे युद्ध कर यह शिशुपाल राजा मदघोष का पुत्र है अर उन्मत्त है परंतु कृष्ण से कहा कर सके। कृष्ण तो हरि कहिये साक्षात् सिंह ही है अर वह गज है अर बलभद्र ने रुक्मी से कही तू हमसे लड़ो सो उन दोनों से यह युद्ध करते भये सो शीघ्र ही शिशुपाल का सिर कृष्ण ने वाण कर वेध्या सो भूमि में पड़ा उसके सावंतपने का अति मद था अर पृथ्वी विषे अतिशय था सो यश सहित उसको मारा अर बलदेव रुक्मी को घायल किया अर रथ चूर्ण किया रुक्मणी का भाई जान जीवनदान दिया अर दोनों भाई विजय कर रुक्मणी को लेय गिरनार गये तहां कृष्ण से रुक्मणी का विवाह भया।।93।। कुन्दनपुर के राजा की पुत्री परण कर हलधर सहित हरि द्वारावती आया।।98।। बलभद्र तो रेवती के मंदिर गये रेवती से अधिक है प्रीति जिनकी अर कृष्ण नववधू जो रुक्मणी उस सहित परम प्रेम से रमते भये।

गौतम गणधर राजा श्रेणिक से कहै हैं – जब वासुदेव ने शिशुपाल मारा अर अनेक रथों के समूह चूर्ण कर डारे तब मानो सूर्य्य भी अपनी किरण संकोच कर अस्ताचल के आश्रय आय गया। सूर्य ने मन में विचारी यह माधव तेजस्वियों का तेज नहीं देख सके है। मति कदाचित् मुझे तेजवान जान कर पकड़ ले ऐसी शंका कर दिवाकर अस्त भया।।100।। जब सूर्य्य का उदय भया था तब इसके अनुराग कर संध्या आरक्त भई थी अर जब सूर्य अस्त भया तब भी संध्या आरक्त होती भई सो मानो आद्योपांत अपना अनुराग इसने दिखाया।

भावार्थ – जैसा उदय विषे तैसा ही अस्त विषे अनुराग ऐसा ही चाहिये।।1।। जब सूर्य्य अस्त भया अर संध्या भी इसके पीछे चली गई तब समस्त जगत तिमिर के पटल कर आच्छादित भया सो तिमिर पटल कज्जल समान श्याम है अर मोह को उपजावे है अर काम को बढ़ावे है ऐसी जो रात्रि सम्बन्धी पवन कर तिमिर की पताका फर्रावे है। जैसे राजा का वियोग भये दुष्ट जन चौगिर्द दौड़े तैसे दिनकर के अस्त होते तिमिर सर्वत्र विस्तरा।।2।। अर कितनी एक रात्रि गये चन्द्रमा का उदय भया सो चन्द्रमा अपनी किरणों कर निशा सम्बन्धी अंधकार को हरता संता पृथिवी विषे प्रकाश करता भया।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

जैसे तृषातुर अंजुलि कर जल पीवे तैसे मनुष्यों के लोचन सोई भई अंजुलि तिनकर पीया सन्ता निशाकर जनों के मन का आताप मेटता भया अर मदन की वृद्धि करता भया। वह चन्द्रमा जे सुखी जन कहिये संयोगी जन हैं तिनका तो सखा कहिये मित्र है तिनको तो प्रमोद उपजावे है। अर जो विरही हैं तिनको आताप उपजावे है चन्द्रमा की किरण को स्पर्शती हुई कुमोदनी विकाश को प्राप्त भई। जैसे प्रिया प्रीतम के समीप विकाश को प्राप्त होय। अर चन्द्रमा के उदय से कमलिनी मुदित भई। अर चकवा चकवी वियोग कर दुखी भये जे हर्ष के कारण हैं तो भी दुखियों को सुख न उपजाय सके।।4।।

जब रात्रि का समय भया तब माननी नायकों के मान मिटे। वह रात्रि का समय स्त्री पुरुषों को हर्ष का उपजावनहारा है तिस समय फटिक मणियों के महल अर हीरा मोतियों के महल चांदनी कर अति शोभित तिन विषे मनोहर स्त्रियों कर संयुक्त यादव नृप सुख से रमते भये अर मुरारि कहिये कृष्ण सो भी रुक्मणी का शरीर सोई भई बेल अर उसका मुख सोई सुगंध फूल तिसका भंवर भया निशि विषे रमता भया सो अति क्रीड़ा कर कोमल सेज विषे दोनों लगकर सूते सो परस्पर भुजाओं के स्पर्श से सुख निद्रा आय गई। अर प्रभात का समय आया कूकड़े बोलने लगे मानो वे कूर्कट रात्रि का अन्त ही निवेदन करे हैं। पहले तो वह कूर्कट ऊंचे स्वर बोले हैं फिर नीचे स्वर बोले सो मानो सुख सेज सूती जे यादवों की रानी तिनके भय ही कर धीरे बोले हैं जो मत कदाचित् हमारे उच्च शब्दकर यह रानी दुःख पावें। रात्रि थोड़ी सी ही रहे तब कूकड़े बोले हैं सो कूकड़ का बोलना कामिनियों को रुचे नहीं – प्रभात समय प्रथम संध्या की न्यांई रुक्मणी कृष्ण के पहले जागी।

यह पतिव्रताओं का धर्म्म है पति के शयन किये पीछे आप शयन करे अर पति के जागने से पहले वह जागे। अर पति को भोजन कराये पीछे आप भोजन करे सो रुक्मणी कृष्ण से पहले जाग कर सेज से उतर बैठी अर पति के पांव दाबे सो कृष्ण प्रिया के हाथ का स्पर्श जान कर जागे देखे तो साक्षात् लक्ष्मी पांव पलोटे है अर रति क्रीड़ा कर दैदीप्यमान है मुख कमल जिसका अर लज्जा कर नीची होय रही है।।8।। सो कृष्ण नवीन कामनी को देख कर अति अनुराग रूप भये ऐसी सुन्दर स्त्री किसी के नहीं अर प्रभात के वादित्र बाजे संगीत की ऐसी ध्वनि भई जैसी मेह की ध्वनि होय द्वारका में घर घर लोक जागे, सब प्रजा अपने अपने कार्य्य विषे प्रवर्ती अर सूर्य्य का उदय भया जो तिमिर निशाकर से न गया था सो सूर्य्य के उदय से गया अर पदार्थ प्रगट भासने लगे सूर्य्य दुर्निवार तिमिर के हरने को समर्थ है अर जगत का नेत्र निर्मल है सो प्रगट भया जैसे जिन वचन मिथ्यात रूप तिमिर को हर कर विधि मार्ग विषे प्रवर्ते तैसे रवि रात्रि को हर कर आकाश विषे चढ़ा।।110।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे श्रीजिनसेनाचार्यस्य कृतौ रुक्मणीकृष्णवर्णनो नाम द्विचत्वारिंशः सर्गः।।42।।

तेतालीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – कृष्ण ने सत्यभामा के घर के शिरोभाग रुक्मणी को महल दिया सो महल सकल सम्पदा कर भरा। रुक्मणी को कृष्ण ने पटराणी का पद दिया। प्रधान और द्वारपाल और सेवक, हाथी, घोड़े, रथ, पालकी आदि सब सामग्री दी। सब राणियों के शिरोभाग करी सो रुक्मणी पति की प्रीति कर और मान्य कर अति संतुष्ट भई अब तक सत्यभामा का और रुक्मणी का मिलाप न भया है रुक्मणी अति चतुर सो मन में जाने सत्यभामा ही हरि के मन भावती है अर महा सुन्दर है सो किसी भांति मुझ पर अधिक कृपा रहे तो भली। सो सत्यभामा से ईर्षा राखे रति क्रीड़ा विषे पति को अति रमावती भई। कृष्ण के रुक्मणी से अति राग सो एक दिन रुक्मणी के मुख के तांबूल का उगाल पीताम्बर के पल्ले बांध छिपाय अर सत्यभामा के घर गये अर उसकी सेज पर जागते ही सोय गये अर वह पीताम्बर के पल्ले बंधा हुआ उगाल सो सहज ही सुगन्ध अर रुक्मणी के मुख की सुगन्ध तिससे अति सुगन्ध तिस पर भंवरों के समूह गुंजार करते थे सो सत्यभामा जानी यह कोई अद्‌भुत सुगन्धित वस्तु है सो पीताम्बर के पल्ले से खोल वह महा सुगंध सुन्दर तिसे पीस कर अंग के लगावती भई। तब माधव मुलके अर वह ईर्षाकर कोप करती भई अर कही रुक्मणी तो मेरी बहन है तुम क्यों हंसो हो।।6।।

हरि की चेष्टा कर सत्यभामा सौक का सौभाग्य अति जान कर उसके रूप लावण्य देखने को अभिलाषिनी भई अर पति को कहती भई – हे नाथ! मुझे रुक्मणी दिखाओ। मेरे कान तो उसके गुण श्रवण कर हर्षित भये अब नेत्र भी हर्षित करो।।8।। तब कृष्ण कही भली बात तुमको मिलावेंगे यह कहकर आप मणि वापिका के तट सत्यभामा को ले गये अर कही तुम यहां तिष्ठो मैं रुक्मणी को लाऊं सो आप आय के रुक्मणी को ले गये अर कही हे प्रिये! तुम वन विषे प्रवेश करो। मैं भी आऊं हूं सो आप तो वृक्षों के आसरे होय रहे अर रुक्मणी बन के मध्य होय गई सो सत्यभामा रुक्मणी को दूर से देख जानी यह कोई वन देवी है अद्‌भुत आभूषण पहरे आम्र के वृक्ष की डाली हाथ से पकड़े खड़ी, ढीले होय रहे हैं चोटी के केश जिसके तिनको बायें कर से संवारती स्तन के भार कर नम्रीभूत है अंग जिसका जैसे अद्‌भुत लता फल के भार कर नम्रीभूत होय है तैसी शोभे है।।21।। ऐसी रुक्मणी को देखकर सत्यभामा जानी यह कोई वनदेवी है।

तब पुष्पांजली चढ़ाय रुक्मणी के पांवों पर अपना सौभाग्य अर सौक का दुर्भाग्य याचती भई ईर्षा रूप शल्य कर पीड़ित है चित्त जिसका, सत्यभामा जाने यह वनदेवी है उस समय हरि आय कर सत्यभामा से हंसते भये जो तुमको तुम्हारी बहन का अपूर्व दर्शन भया परन्तु भली भांति भया सुनकर

सत्यभामा यह रहस्य जान कृष्ण से कोप कर कहती भई हम तो आपस में मिल ही रही हैं तुम कहा मिलावोगे तब रुक्मणी कृष्ण के वचन सुन कर सत्यभामा को जानकर विनयपूर्वक नमस्कार करती भई जे बड़े कुल के उपजे हैं तिनमें विनय लक्षण सहज ही होय है।।17।। वृक्ष अर लताओं के मंडप कर मंडित वह वन उस विषे दोनों रानियों सहित चिरकाल विहार कर कृष्ण अपने महल पधारे।।18।। वे कृष्ण महा शूरवीर सुख के सागर में मग्न तिनके एक दिन की न्याईं बहुत दिन व्यतीत होते भये।।19।।

एक दिन हस्तिनापुर का अधिपति राजा दुर्योधन तिसने नेह पूर्वक हरि के निकट दूत भेजा अर पत्र में यह समाचार लिखे कि तुम्हारी रुक्मणी अर सत्यभामा दोनों रानियों के गर्भ है सो जिसके पहले पुत्र होवेगा सो मेरी पुत्री का वर। यह दूत के वचन सुन हरि ने उसका बहुत सन्मान कर विदा किया सो जाय कर अपने पति के कार्य की सिद्धि कहता भया।।22।। अर यह वार्ता सत्यभामा सुन कर रुक्मणी के निकट अपनी दासी पठवाई सो नमस्कार कर कहती भई।।23।। हे देवी! हमारी स्वामिनी ने हमारे मुख कितनेक समाचार कहाये हैं सो तुम करणफूलों की न्यांई कानों में धारो, तुम महा बुद्धिमान हो।।24।।

सत्यभामा यह कही है जो हम तुम दोनों में जिसके पुत्र होय सो दुर्योधन की पुत्री परणेगा सो तुम्हारे जो पहले पुत्र होय तो वह वरेगा। अर जो मेरे होय तो वह वरेगा सो तुम्हारे पुत्र परणे तो मेरे सिर के केश मुडाय तिन पर पांव धर परणने जाय अर मेरा परणे तो तिहारे केशों पर पांव धर परणने को जाय यह अपने वचन हैं। हे यश की धरनहारी सौभाग्यवती! यह वचन हमारी स्वामिनी कहे सो हम तुमसे कहे सो अब तुम कहो सो उनसे कहे तब रुक्मणी प्रमाण करी वह पीछे जाय सत्यभामा से कहती भई।।28।। एक दिन रुक्मणी रात्रि विषे सेज पर शयन करती थी सो स्वप्न विषे हंस विमान पर चढ़े आपको अम्बर विषे विहार करती देखी।।29।। तब जागी अति प्रसन्न भई प्रभात पति के तांई स्वप्न के फल पूछे तब पति ने कही तेरे पुत्र महा पुरुष आकाशगामी होयगा।।30।। यह पति के वचन सुन प्रिया हर्ष को प्राप्त भई जैसे दिवस की आदि विषे कमलनी सूर्य्य के तेज कर स्पर्शी हुई प्रफुल्लित होय तैसे ही प्रफुल्लित भई।।31।।

अथानन्तर – सोलहवें स्वर्ग का अच्युतेंद्र उपेन्द्र कहिये कृष्ण तिन को परम आनन्द बढ़ावता संता रुक्मणी के गर्भ में आया।।32।। अर उस ही दिन सत्यभामा को शुभ स्वप्न आये अर गर्भ रहा।।33। जब इन दोनों के गर्भ बढ़े सो ज्यों ज्यों गर्भ बढ़े त्यों त्यों माता पिता को परम सुख होय।।34।। जब नव महीने पूर्ण भये तब रुक्मणी के पुत्र भया सर्व लक्षण कर पूरण अर उस ही परम सत्यभामा के पुत्र भया।।35।। सो दोनुओं के बधाई वाले रात्रि समय एक साथ हरि पर आये। हरि पौढ़े

हुये सो सत्यभामा के गर्व कर सिराहने की ओर खड़े रहे – जानी पहले दृष्टि हम पर आवेगी। इतने ही में हरि जागे सो पहले रुक्मणी वालों पर दृष्टि पड़ी अर उनही बधाई दी। अर पीछे सत्यभामा के बधाई देते भये सो प्रथम पुत्र रुक्मणी का ठहरा अर वह दूजा ठहरा। हरि हर्षित होय दोनों को अंग के आभूषण दिये बड़ा हर्ष भया।।38।। अर उसी समय एक धूमकेतु नामा असुर महा बलवान धूमकेतु कहिये अग्नि तिस समान प्रज्वलित सो उसका विमान रुक्मणी के मन्दिर पर अटका सो कुअवधि कर उसने रुक्मणी का पुत्र अपना शत्रु जाना सो क्रोध कर अरुण भये हैं नेत्र जिसके विमान से नीचा आय प्रच्छन्न रूप रुक्मणी के प्रसूतिगृह में प्रवेश किया। बालक के दर्शन रूप ईन्धन कर प्रज्वलित भई है पूर्व वैररूप अग्नि जिसके।।41।।

यद्यपि रुक्मणी के महल की महा रक्षा है अर किसी का संचार नहीं तथापि यह आसुरी माया कर रुक्मणी को महा निद्रा आय गई। बालक को अपनी बाहु कर उठाया, बालक पुण्य के भार कर पर्वत समान है। परन्तु असुर मलिन बुद्धि लेकर आकाश में चला।।43।। सो ऊपर ले जाय विचारी कि यह मेरा शत्रु स्त्री का हरनहारा है इसे हाथों कर मसल डारूं या नखन कर विदार आकाश विषे पक्षियों को खुवाय दूं।।44।। अथवा मगर मच्छों के समूह कर भरा जो समुद्र तिस विषे डाल दूं।।45।। अथवा यह तत्काल का जाया मांस का पिंड है इसके मारने कर कहा? विन रक्षा आप ही मर जायेगा ऐसा विचार कर असुर आकाश से उतरा मानो बालक के पुण्य से उतरा पृथिवी विषे आय एक खंदरा अटवी देखी तहां बड़ी भारी शिला के तले बालक को दावकर वह धूमकेतु नामा असुर अदृश्य हो गया।।48।।

तिस ही समय एक मेघकूट नामा नगर तिसका अधिपति कालसम्बर नामा विद्याधर अपनी कनकमाला नामा रानी सहित विमान में बैठा जाय था सो बालक के पुण्य कर तिसका विमान अटका तब उसने विचारी यह कहा कारण है।।50।। तत्काल पृथिवी विषे उतरा अर बालक के स्वास से शिला हालती देखी। तब विद्या के बल कर शिला को उठाय बालक देखा अर अखंडित है अंग जिसका अर स्वर्ण समान है प्रभा जिसकी साक्षात् कामदेव।।52।। तिसको वह विद्याधर दयावान लेकर अपनी रानी कनकमाला तिसे देने को उद्यमी भया अर कही – तेरे पुत्र नहीं है सो यह तू ले, तब उसने पहिले तो हाथ पसारे फिर संकोच लिये मानो नहीं इच्छे है विद्याधरी दीर्घदर्शनी जिसके विचार गंभीर।।54।।

तब राजा कही – हे प्रिये! ऐसा सुन्दर बालक तू क्यों न ग्रहे है? तब उसने कही आगे तुम्हारे पांच सौ पुत्र हैं अर जिनके नानेरे के बड़े बड़े राजा हैं अर यह बालक पड़ा पाया जिसका कुल कोई जाने नहीं सो उन आगे इसकी गिनती कहा, यह मारा मारा फिरे अर हर कोई इसके सिर में दे ले तब

मुझसे देखा न जाय इसलिये मैं अपुत्रवन्ती ही रहूंगी। इस क्लेश से अपुत्रपना ही भला है।।56।। इस भांति कनकमाला कही तब राजा कालसम्बर ने उसे धैर्य्य बन्धाया अर उसके कान में से करणपत्र लेकर बालक के पट्ट बांधा अर कही मो जीवते यह युवराज अर मुझ पीछे यह राजा।।57।। तब कनकमाला बालक को उर से लगाय लिया। यह कनकमाला राजविद्या में प्रवीण है यह राजा रानी दोनों पुत्र सहित मेघकूट नगर गये।।58।। बालक भी एक दिन ही का था अर तिस समय रात्रि विषे यह बालक पाया तिस समय राजा रानी ही थे अर कोई न था सो नगर में जाय कर राजा कही – रानी को गूढ गर्भ था किसी ने न जाना सो मार्ग में पुत्र भया। यह वार्ता कह राजा अति उत्सव किया नगर में सबों के आनंद भया। विद्याधरियों के समूह इस पुण्याधिकारी के जन्मोत्सव विषे नूपुर का नाद करते नृत्य करते भये।।60।। प्रद्युम्न नाम स्वर्ण का है सो यह कुमार स्वर्ण की कांति को जीते तिससे इसका नाम प्रद्युम्न ठहराया। यह कुमार सैकड़ों कुमारों कर सेवित राजा कालसम्बर के घर वृद्धि को प्राप्त होय।।61।।

अथानन्तर – रुक्मणी जागी, देखे तो पुत्र नहीं तब वृद्धा धाय से कही – देखो बालक कहां है सो सगरे मंदिर में ढूंढा अर न पाया तब माता विलाप करती भई – हाय पुत्र! तुझे किस वैरी ने हरा। पूर्वोपार्जित पुण्य ने मुझे निधि दिखाय अर पाछी लई मैं परभव विषे किसी स्त्री का पुत्र हरा तिसका यह फल है।।64।। इस भांति रुक्मणी विलाप किया जिसकर सबको करुणा उपजे। इसके रुदन की ऐसी ध्वनि भई जो सबों के कान पड़ी।।65।।

तब वासुदेव यह वृत्तांत जान बलदेव सहित रुक्मणी के मंदिर आये। अर अन्य भी राजलोक की रानी बांधव जन आये, भेले गये। रुक्मणी का अर सब रानियों का रुदन सुन नारायण अपने भुज वीर्य्य को अर अपनी सावधानी को निन्द्यते भये। सुनन्दा नामा खड्ग के स्वामी कृष्ण सो कहते भये जगत विषे दोय ही पदार्थ दैव अर पुरुषार्थ सो दैव ही प्रबल है जे पुरुषार्थ का गर्व करे हैं तिनको धिक्कार।।68।। जो पुरुषार्थी ही प्रबल होय तो मैं वासुदेव उघड़ी खड्ग समान तेजस्वी मेरे पुत्र को शत्रु कैसे ले जाय इत्यादि विचार कर माधव रुक्मणी से कहते भये – हे प्रिये! तू शोक मत कर, धैर्य धर।।70।। वह पुत्र स्वर्गलोक से चया है अर पुण्याधिकारी है सो अल्प आयु न होय मुझ सारखे पिता के अर तुझ सारखी माता के हीन पुण्य का धनी अर अल्प आयु न होय यह कोई भवितव्य ऐसा ही था सो भया। इस भांति अनेक जाय हैं अर पीछे आवे हैं। तेरा पुत्र लोकों के नेत्रों को उत्सव का कर्ता तिसे मैं हेरूंगा जैसे सूक्ष्म दृष्टिवाले द्वितीया के चन्द्रमा को आकाश विषे हेरे। इस भांति रुक्मणी से राम कहिये बलभद्र तिसका भाई वासुदेव धैर्य बंधाया, उसका मुख धुवाया अर पुत्र के ढूंढने को माधव उपाय करते भये।।73।।

उसी समय नारद आये रुक्मणी के पुत्र की वार्ता सुन क्षण एक शोक कर नीचे हो रहे।।74।। अर सब यादवों के ऐसे मुख देखे जैसे दाह के मारे कमल दग्ध हो जायं।।75।। तब नारद नारायण से कहते भये – हे भाई! तू शोक मत कर। तेरे पुत्र की वार्ता मैं शीघ्र ही लाऊं हूं। इस क्षेत्र विषे अतिमुक्तिक नामा मुनि अवधिज्ञानी थे सो केवलज्ञान साथ निर्वाण पधारे अर भगवान नेमिनाथ तीन ज्ञान के धारक हैं परन्तु यह अवधि न प्रकाशें केवली ही प्रकाशें इसलिये मैं पूर्व विदेह विषे जाय कर सीमंधर जिनेश्वर को पूछकर तेरे पुत्र की वार्ता लाऊं हूं। इस भांति बलदेव आदि सब यादवों को धैर्य बंधाय नारद रुक्मणी के गया शोकरूप दाह कर दग्ध होय रहा है मुखारविंद जिसका ऐसी रुक्मणी नारद को देखकर चित्त विषे शोकवान है तो हू धैर्य धर उठ खड़ी भई अर नारद को नमस्कार कर निकट आय बैठी। राजा भीष्म समान नारद तिसे देखकर रुक्मणी ने बहुत रुदन किया। अपने हितू को देखकर शोक पुराणा पड़ा भी नवीन हो आवे है।।82।।

रुक्मणी को शोक रूप समुद्र विषे डूबी देख काढने के अर्थ वह विवेकी निकट संसारी नारद हरि की प्रिया को संतोष उपजावता कहता भया – हे पुत्री! तू शोक तज तेरा पुत्र जीवे अर किसी जगह सुख से रहे है। किसी पूर्व भव के बैरी ने हरा है।।84।। वह महात्मा है चिरजीवी है वासुदेव के घर अर तो सारखी माता के उदर हीनपुन्नी न आवे है। हे बेटी! इस संसार विषे जीवों का संयोग अर वियोग यह सुख दुःख के दायक होय हैं अर तेरे दुःख कर मुझको दुःख उपजा है। यह यादवों का बड़ा कुल है इस कुल विषे ज्ञानवान् विशेष है अर कर्मों का चरित्र जाने हैं। इनके कुल विषे दुःखदायी न उपजे।।87।। अर तू जिनशासन का रहस्य जाने है संसार की झूठी माया तिसे नीके जाने है। यह संसार असार है इसलिये शोक के वश न हो तेरे सुत की वार्ता मैं शीघ्र ही लाऊं हूं। इस भांति नारद रुक्मणी के धर्म के पिता अपने वचन रूप अमृतकर इसे संतोष उपजाया आकाश के मार्ग गमन किया। पूर्व विदेह विषे पुष्कलावती नामा देश तहां पुण्डरीकनी नामा पुरी तिसके वन विषे सुर असुर नरोंकर सेवा योग्य भगवान् सीमंधर तीर्थंकर तिनको नारद हाथ जोड़ सीस नवाय नमस्कार कर मनुष्यों की सभा में जाय बैठा भगवान के स्तोत्र कर पवित्र है मुख जिसका।।91।।

तहां समोसरण विषे पद्मरथनामा चक्रवर्ती पांच सौ धनुष ऊंचा है शरीर जिसका सो दश धनुष के ऊंचे नारद को नर सभा में निरखकर।।92।। आश्चर्य्य को प्राप्त भया अर अपने हाथ से इसे उठाय भगवान से पूछी – हे नाथ! यह मनुष्य के आकार कौन जाति का कीट है।।93।। तब भगवान ने कहा – यह जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र का नारद है नवमा वासुदेव कृष्ण ताका यह मित्र है।।94।। तब पद्मरथ चक्रवर्ती पूछी – हे ईश! यह कौन अर्थ आया है? तब भगवान धर्मचक्र के धारक चक्रवर्ती को सब कथा कहते भये।।95।। कृष्ण का पुत्र प्रद्युम्न तिसे पूर्व भव का शत्रु हरके ले गया सो सोलह वर्ष

सोलह लाभ लेकर माता पिता से मिलेगा सो रोहणी प्रज्ञप्ति आदि महाविद्याओं का धारक प्रबल पराक्रमी देवों कर जीता न जायगा।।96।। तब चक्रवर्ती ने कही – हे प्रभु! उसके चरित्र कैसे अर वह कौन कारण से हरा गया सो कहो। तब भगवान नारद के समीप पद्मरथ चक्रवर्ती से सब वार्ता कहते भये।।97।।

इस जंबूद्वीप विषे मगध नामा देश तिस विषे शालिग्राम नामा नगर तिस विषे सोमदेव नामा ब्राह्मण उसके अग्निला नामा ब्राह्मणी पति को सुखदाई जैसे अग्नि के दीप्ति तैसे उसके वह होती भई तिसके दोय पुत्र एक का नाम अग्निभूति दूसरे का नाम वायुभूति सो यह दोनों वेदविद्या विषे प्रवीण अपनी विद्याकर मंद करी है अर विप्रों की कांति जिनने जैसे नक्षत्रों में शुक्र अर बृहस्पति तैसे यह दोनों वेदपाठियों में होते भये। वेदाभ्यास कर उपजा है जातिगर्व जिनके सो बड़े वाचाल अर माता पिता ने लड़ाये सो भोग विषे तत्पर।।2।। जिनके यह श्रद्धा जो षोडशवर्ष की नारी का सेवन सोई स्वर्ग यह दोनों भाई परलोक की कथा प्रति अत्यन्त द्वेषी जिनको परलोक सुधारने की बात ही न भावे।

एक दिन नन्दीवर्धन नामा मुनि बड़े संघ से वहां आये अर उद्यान विषे विराजे श्रुतरूप सागर के पारगामी।।4।। सो उनों की वंदना के अर्थ ग्राम के चारों वर्ण के मनुष जाते थे जिनको इन कारण पूछा तब एक भला मनुष ब्राह्मण था तिसने कहा – मुनियों का संघ आया है सो लोग वंदना को जाय है।।6।। तब इन्होंने मन में विचारी हमसे भी कोई अधिक है, हम भी मुनि का माहात्म्य देखें ऐसे विचार यह दोनों अभिमानी मुनियों पर गये।।7।। सो एक सात्विकनामा मुनि गुरु से परे विराजे थे। इन दोनों विप्र पुत्रों को देख मन में विचारी यह अभिमानी हैं अर क्रोधरूप हैं मति कदाचित् गुरु पै जाय विवाद करें वह दोनों महिषसमान हैं सो सभा विषे क्षोभ उपजावेंगे। मुनियों की सभा सागर समान है अर श्रीगुरु उपदेश करे हैं इसलिये इनको यहां ही ठहराइये। यह विचार अवधि नेत्र है जिन्हों के ऐसे सात्विकनामा साधु द्विजपुत्रों को कहते भये – हे विप्रो! यहां आओ। तब यह सात्विक मुनि पर गये अर उनके निकट बैठे तब इनको वाद रूप अर गर्व सहित देख मुनि के निकट अनेक लोग आय भेले भये। जैसे वर्षा विषे गृह में पानी आय भरे। मुनि ने विप्रों से पूछा – हे विप्रो! तुम कहां से आये। तब वह बोले – हम गांव से आये हैं।।12।।

तब मुनि कही यह तो हम जाने हैं, शालिग्राम गांव के तुम वासी हो परंतु हमने यह पूछा है या संसार विषे भ्रमण करते तुम कौन गति से आये? तब विप्र बोले यह ज्ञान तो किसी को नहीं तब यति कही तुम जहां से आये हो, सो हम कहे।।14।। तुम पूर्व भव विषे इस ग्राम के निकट श्याल थे। तुममें पूर्वभव विषे भी प्रीति थी।।15।। सो इस ही गांव में प्रवरक नामा ब्राह्मण किसान सात दिन की महा वर्षा भई अर प्रबल पवन चली अर उल्कापात भये वह किसान कम्पायमान है शरीर जिसका सो एक

www.vitragvani.com

बड़ के वृक्ष तले गया अर सात दिन की वर्षा कर किसान के चर्ण उपकरण नाडी चरस इत्यादि भीज गये सो दोनों श्याल क्षुधा की वेदना कर भखते भये तिस कर उदर विषे वायु शूल उपजा सो सही न जाय ऐसी वेदना पाय श्याल मरे अकाम निर्जरा के योग से मनुष्य भये।।19।। सो एक सोमदेव नामा ब्राह्मण तिसकी अग्निला नामा स्त्री के तुम दोनों अग्निभूति वायुभूति नामा पुत्र भये कुल के गर्व कर गर्वित।।20।। सो यह कुल-मद झूठा है पाप के उदय से दुर्गति अर पुण्य के उदय से सुगति जीवों को होय है कुल जाति के गर्व कर कहा? सो गर्व करना वृथा है।।21।।

श्यालों के मरे पीछे वह प्रवरक नामा किसान खेत में आया सो श्यालों को मरे देख उनकी खाल की भाथड़ी बनाई सो अद्यापि उसके घर में वह दोनों भाथड़ी हैं अर प्रवरक मर कर अपने पुत्र के पुत्र भया तिसे जाति स्मरण उपजा सो जानता ही गूंगा होय रहा है। यह अपने भाइयों में बैठा है अर मेरी ओर निरखे है ऐसा कहकर गूंगे को मुनि ने बुलाया अर कहा तू प्रवरक नामा ब्राह्मण है सो पुत्र का पुत्र भया है। अब शोक को तज अर गूंगापना भी तज। अमृत रूप वचन बोल इस संसार विषे यह जीव नट की न्यांई नृत्य करे है सो स्वामी से सेवक होय अर सेवक से स्वामी होय। पिता से पुत्र होय अर पुत्र से पिता होय। माता से स्त्री होय अर स्त्री से माता होय। संसार का स्वरूप ही विपर्यय है जैसे अरहट विषे ऊपर की घटी तले अर तले की ऊपर इस भांति होय है अर भरा रीता होय है तैसे इस संसार विषे उपरांतली होय है यह जीव अनादि काल से भ्रमण करे है।।27।। यह संसार का चरित असार अर महा भयंकर जान हे पुत्र! तू सार वस्तु का संग्रह कर। दया है मूल जिनका ऐसे पंचमहाव्रत सोई सार है। इस भांति प्रवरक नामा किसान ब्राह्मण को मुनि ने प्रतिबोधा तब वह प्रदक्षिणा कर मुनि के पांव पडा।।29।।

आनन्द के अश्रुपात कर भर गये हैं नेत्र जिसके अर उठ गद्‌गद् वाणी बोलता हाथ जोड़े मुनि को नमस्कार कर प्रिय कहता भया - हे ईश्वर! तुम सर्वज्ञ तुल्य हो वस्तु का स्वरूप प्रत्यक्ष देखो हो, त्रैलोक्य की रचना तुमसे छिपी नहीं।।31।। हे श्री गुरु! मेरा मन रूप नेत्र अज्ञान रूप पटल कर आच्छादित था सो तुम ज्ञान रूप अंजन की सींक कर पटल दूर किया यह अनादि भव वन विषे मोह रूप अंधकार विस्तर रहा है अर मैं भव वन विषे अनादि का भ्रमण करूं हूं सो तुम मुक्ति का मार्ग दिखाया।।33।। हे भगवन्! तुम प्रसन्न होय मुझे दिगम्बरी दीक्षा देवो। यह विनती कर प्रवरक किसान ब्राह्मण मुनि भया।।34।। यह विप्र का चरित्र सुनकर देखकर कई मुनि भये अर कई श्रावक भये।।35।। अर यह दोनों भाई अग्निभूत वायुभूत विलषे होय घर गये इनके माता पिता ने इनको बहुत निन्दे।।36।।

रात्रि विषे यह पापी मुनि को मारने गये। यह सात्विक मुनि एकांत विषे कायोत्सर्ग ठाडे थे सो

इन दोनों ने खड्ग चलाई सो वन का अधिष्ठाता यक्ष देवता ने यह कीले।।37।। प्रभात भये लोक इनकी निंदा करी अर यह भी दुराचार की मन में निंदा करते भये।।38।। यह दोनों चित्त में चिंतवते भये मुनिनि का बड़ा प्रभाव है हम विनयाचार उल्लंघा था सो कीले गये। जिनधर्म का हम फल प्रत्यक्ष देखा अब जो बंधन से छूटैं तो जिनधर्म का आराधन करें यह विचार कर यह दोनों खड़े अर इनके माता पिता ने सुनी जो तुम्हारे पुत्र मुनि को मारने को गये थे सो देवों ने कीला तब यह दोनों माता पिता आय मुनि के पांव लगे मुनि के प्रसन्न करने को उद्यमी भये। मुनि महा दयावान ध्यान पूर्ण कर तिष्ठे थे। यह सकल कार्य क्षेत्रपाल का किया जान उससे कहा वह महा विनयवान निकट खड़ा है।।41।।

मुनि कहे हैं – हे यक्ष! इन विप्रपुत्रों का दोष क्षमा करो, कर्मों की प्रेरणा कर जीवों से शुभ अशुभ कार्य निपजे हैं तिससे तुम करुणा करो। यह मुनि आज्ञा करी तब वह कहता भया। जो आप आज्ञा करोगे सो ही होयगा यह कह उनको अकीले।।44।। सो यह दोनों मुनि के मुख यति अर श्रावक का धर्म श्रवणकर अणुव्रत ले श्रावक भये।।45।। चिरकाल सम्यक् सहित श्रावक के व्रत पाल कालकर पहिले स्वर्ग देवलोक गये अर इनके माता पिता जिनधर्म की अश्रद्धा कर मरे सो मिथ्यात्व के प्रभाव कर कुगति गये।।47।। अर वह देवलोक के सुख भोग चये सो अयोध्यापुरी विषे समुद्रदत्त नामा सेठ के धारणी नामा सेठानी तिसके पूर्णभद्र मणिभद्र नामा दोनों पुत्र भये, नाही विराधा है सम्यक्त्व जिन सो महा जिनधर्मी भये।।48।। एक दिन महेंद्रसैन नामा मुनि के मुख धर्म श्रवण कर इनका पिता मुनि भया। अर नगर का राजा मुनि भया अर भी अनेक मुनि भये।।50।। अर एक समय यह दोनों भाई पूर्णभद्र अर मणिभद्र रथ चढ़े मुनि के दर्शन को जाय थे सो मार्ग में एक चांडाल अर कुत्ती को देखकर इनको अति अनुराग उपजा।।51।।

तब गुरु पै जाय वंदना कर भक्ति से पूछते भये – हे प्रभो! चांडाल अर कुत्ती से स्नेह का कारण कहा? तब मुनि अवधिज्ञानी त्रैलोक्य की स्थिति के ज्ञाता कहते भये – विप्र के जन्म विषे तुम्हारे यह माता पिता थे सो पाप के उदय से नरक में जाय तहां के दुःख भोग यह चांडाल कूकरी भये हैं। श्रीगुरु के वचन सुन पूर्णभद्र मणिभद्र उनके पास जाय पूर्वभव की कथा कह धर्मोपदेश देते भये सो वह दोनों ही उपदेश सुन शांत चित्त भये। चांडाल का आयु एक मास मात्र था सो श्रावक के व्रत धार चतुर्विध आहार का त्याग कर समाधिमरण किया सो नन्दीश्वर द्वीप का अधिष्ठाता देव भया चांडाल की पर्याय से देव पर्याय भई अर वह कुत्ती श्रावक के व्रत पाल समाधिमरण कर अयोध्या के राजा के घर पुत्री भई सो यौवन प्राप्त भई तब इसका स्वयंवर रचा सो वरमाला हाथ में अर वर की ओर निरखे थी

तिस समय वह नंदीश्वर द्वीप का देव यहां आय निकसा सो इसे देख कान में कही – हे अग्निज्वाला! तू वे नर्क के दुःख भूल गई अर अब विवाह करे है सो धिक्कार तुझको।।56।।

ऐसे देव के वचन सुन यह राजपुत्री संसार को असार जान सम्यक्त्व को अंगीकार कर आर्या के व्रत धरे, एक श्वेत साड़ी धारी अर सब परिग्रह तजे।।57।। नव यौवन में व्रत धारे अर वह दोनों भाई श्रावक के व्रत पाल समाधिमरण कर सौधर्म्म स्वर्ग विषे देव भये अर स्वर्ग से चय कर अयोध्या का राजा हेमनाथ तिसके धरावती नामा रानी तिसके यह दोनों मधु कैटभ नामा पुत्र भये। जब यह बड़े भये तब राजा हेमनाथ मधु को राज्य अर कैटभ को युवराज पद देय मुनिव्रत धारते भये।।60।।

अर मधु कैटभ दोनों भाई अति सुख से राज करे। इन समान पृथिवी में अर योधा नहीं अर अद्‌भुत है तेज जिनका सो चन्द्र सूर्य्य की न्यांई उद्योत करते भये।।61।। तिस समय एक भीमक नामा राजा तिसके क्षुद्र सावंत अर एक पहाड़ पर गढ़ तिसे गहकर मधु की आज्ञा न माने अर इसके देश में बाधा करे सो उसके वश करने के अर्थ मधु चला सो मार्ग में एक वटपुर नामा नगर तहां राजा वीरसेन सो राजा मधु का अति भक्त तहां डेरा किया सो वीरसेन ने मधु की अति भक्ति करी अर राजलोक सहित मधु की पाहुण गति करा अर अति सन्मान किया सो राजा वीरसेन के रानी चन्द्राभा सो साक्षात् चन्द्रकला अर महा रूपवती अर मधुरभाषिणी सो वह राजा मधु का मन हरती भई।।65।।

यद्यपि राजा मधु की बुद्धि शास्त्र विषे दृढ़ थी तथापि चन्द्राभा के देखने कर राग रूप होय गई। जैसे चन्द्रकांत मणि का शिला दृढ़ है परन्तु चन्द्रमा के देखने कर आर्द्र होय जाय।।66।। राजा मधु मन में विचारे है यह रूप सौभाग्य कर युक्त इस सहित मैं राज करूं तो वह राज सुख के अर्थि अर इस बिना मेरे राज विष तुल्य है।।67।। जैसे चन्द्रमा कलंकी है परन्तु चांदनी कर युक्त अत्यंत शोभे है तैसे यद्यपि मुझे परदारा के हरण कर कलंक तो लगेगा परन्तु यह चन्द्राभा कर शोभा ही है।।68।।

चन्द्रकांति के योग कर पाया है विकाश जिसने ऐसा जो कुमुदनियों का वन सो यद्यपि उसे तोड़ने की बाधा है तथापि प्रफुल्लित तिसके योगकर बाधा को नाहीं बेवे है ऐसा चिंतवनकर वह रागकर अंध चंद्राभा के हरने विषे मन धरता भया। बुद्धिमान् अर मानवान् था तथापि मंदबुद्धि हो गया तब प्रधान बुद्धिवान् था तिसने कही – इस समय राजा भीम को वश करना है सो अर उपद्रव न उठावना तब राजा के मन में आ गई सो पहले भीम के ऊपर गये उसे वश कर अयोध्या आये। चन्द्राभा विषे आसक्त है मन जिसका सो वसंत की क्रीड़ा रची सब राजा स्त्री सहित बुलाये सो इसके आज्ञाकारी सभी राजा राजलोक सहित आये अर राजा वीरसेन भी अपनी स्त्री सहित आया अन्य राजा तो वस्त्राभरण देय विदा किये सो प्रसन्न होय सबही अपने अपने स्थानक गये। अर वीरसेन का सबों से

अधिक सन्मान कर बटपुर को विदा किया अर चन्द्राभा बेई कही जो इन योग्य आभूषन होय हैं सो थोड़े ही दिन में हो चुकेंगे तब रानी इनको विदा करेगी सो वीरसेन तो भोला सो उसके मन में आय गई सो वह तो अपने स्थानक गया अर उसके गये पीछे मधु ने चन्द्राभा को घर में रखी अर सब रानियों के ऊपर शिरोभाग करी अर पटरानी का पद दिया इस सहित यथेष्ट क्रीड़ा करे।।76।।

अर इसका पति वीरसेन इसके वियोग रूप अग्निकर दाह को प्राप्त भया संता बैडा बाबला हो गया। पृथिवी विषे परिभ्रमण करे – हाय चन्द्राभा! हाय चन्द्राभा! ऐसे प्रलाप करता गांव गांव की गली में भ्रमे सो भ्रमता भ्रमता अयोध्या आय निकसा। चन्द्राभा अपने महल के झरोखे बैठी थी सो अपने पति को देख कर दयावान् होय राजा से कहती भई – हे नाथ! मेरे पूर्वले पति को देखो यह प्रलाप करता भ्रमे है सो राजा ने कुछ जबाव न दिया तिसही समय कोतवाल एक परदारा रत को पकड़ कर पृथिवीपति पर लाये अर कही – हे देव! यह महा पापी है बड़ा अपराध किया है परदारा के सेवन का जो दंड होय सो इसे दीजिये।।81।। तब राजा ने कही – परदारा सेवन का दंड हाथ पांव अर सिर का छेद कहा है सो योग्य जानो जैसा करो तब चन्द्राभा राजा ने को कही – हे प्रभु! ऐसा क्या इसने अपराध किया जो ऐसा दंड इसे दीजे? तब राजा कही – परदारा समान अर पाप कहा तब चन्द्राभा कही इस पाप का दंड प्रजा ही को है या राजाओं को भी दंड है? तब राजा ने कही – सबों को है तब वह हंसी अर नीचा होय गई।

भावार्थ – तुम भी परदारा रत पापी हो। तब राजा मन में समझ मुर्झाय गया जैसे दाह का मारा कमल मुर्झाय जाय राजा मन में चिन्तवे है इसने मेरे कल्याण के अर्थ सच्ची वार्ता कही परस्त्री का हरण दुर्गति का कारण है। राजा को वैराग उपजा अर यह भी वैराग रूप भई राजा को विरक्त जान चन्द्राभा कहती भई – हे प्रभु! ऐसे अन्याय रूप भोगों कर कहा? यह परस्त्री के विषय विष फल समान दुःखदाई हैं बाह्य मनोज्ञ भाषे तो कहा।।85।। भोग तो वही जो आपको अर पर को संताप न उपजावे। समस्त ही विषय शास्त्र से विरुद्ध हैं अर परदारा सेवन अर परधन हरण अर मांस भक्षण यह तो महा पाप हैं। इन पापों के करणहारे नरक निगोद विषे जाय हैं। इस भांति चन्द्राभा ने मधु को संबोधा तब राजा मधु प्रतिबोध होय मोह रूप मदरा जो काम सो तजा।।87।।

अर अति आदर से राजा उसे कहता भया – हे सत्यभाषिणी! तैंने भली कही।।88।। ऐसे कर्म भले पुरुषों को योग्य नहीं। इन बातों कर आपको नरकादि पीड़ा उपजे है इन व्रतों के करणहारे महा पापी इस भव विषे भी दुखी होय अपयश लहैं परभव नरक के विषे पड़े हैं।।89।। जो मेरे सारिखे राजा भी ऐसे निन्दकर्म करें तो प्रजा को कौन निवारे।।90।। निज स्त्री विषे भी जो अधिक राग करे तो वह भी कर्म बंध का कारण है निंद्य है तो परस्त्री सेवन की क्या बात! परस्त्री सेवन समान अर पाप

नहीं।।91।। यह मन रूप माता हाथी ज्ञान रूप अंकुश कर रोका भी उबट मारग विषे ले जाय।।92।। यह मन रूप मातंग गज उसे तीव्र तप रूप अंकुश कर उबट मारग से पीछे लाय मारग विषे चलावे है सो ही धन्य है।।93।। काम लोभ की वासना कर उन्मत्त भया यह मन रूप गज उसको तप संयम रूप दंड कर जब लग पीछे न लावे तब लग मद का अभाव कहां से होय।।94।। जब लग मन रूप माते मातंग को यत्न कर बस न करे तब लग चढ़ने बाले को भय ही है, कुशल नहीं।।95।। जो यह मन रूप दंती साधु रूप महाव्रत के योग कर बस होय तो तप रूप रणभूमि विषे पाप रूप सेना को हणे यह पंच इन्द्री रूप मृगन के समूह परस्पर सुगंध रूप शब्द के अभिलाषी मन रूप पवन के प्रेरे विषय रूप वन में चरे हैं तिनको धैर्य्य रूप पाश में बांधकर चिरकाल के उपार्जे पाप तिनका मैं क्षय करूं।।98।।

ऐसे कह कर राजा मधु ने मन का वेग रोका अर ज्ञान रूप जल कर बुद्धि निर्मल करा भवताप की शांति के अर्थ मुनिव्रत धारने को उद्यमी भया।।99।। उसी समय एक विमलवाहन नामा मुनि अयोध्या के सहस्रार नामा वन विषे सहस्र मुनि सहित आये। सो मुनि का आगमन सुन कर राजा मधु कैटभ दोनों भाई परिजन कहिये परिवार के लोक अर पुरजन कहिये नगर के लोग अर बंधुजन कहिये राज लोग तिन सहित साधु के समीप गया। अर विधिपूर्वक मुनि की पूजाकर धर्म श्रवण किया। संसार शरीर अर भोग इनसे उपजा है वैराग्य जिसके सो राजा मधु भाई कैटभ सहित मुनि भया।।2।। अर भी बड़े बड़े वंश के उपजे हजारों राजा मधु के लार महाव्रत धारते भये अर चन्द्राभा आदि अनेक रानी आर्य्या भई।।3।।

अर राजा मधु का माधव नामा पुत्र राज्य करे सो कुल की वृद्धि का करने वाला दिन दिन बढ़ता जो पुरुषार्थ अर विजय तिनकर युक्त बहुत दिन राज्य करता भया। अर दोऊ भाई मधु कैटभ पंच महाव्रत अर पंच समिति तीन गुप्ति कर मण्डित सकल परिग्रह रहित निःस्पृह निर्ग्रंथन के गुरु महा तप करते भये। बाहर के अर भीतर के सब परिग्रह तजे एक शरीर मात्र ही है परिग्रह जिनके। किसी का ममत्व नाहीं षष्ठ कहिये बेला अष्टम कहिये तेला पक्ष कहिये पन्द्रह उपवास मासोपवास अर षण मास पर्यंत यह धीर उपवास ही करते भये। जेते सिद्धांत विषे तप के विधान कहे हैं अर उपवास की विधि कही है सो कर्मनिर्जरा के अर्थ सब करे।।7।।

अर ग्रीष्मऋतु विषे ऊंचे गिरि के शिखर आतापन योग धर तिष्टे सो पसेव की बून्द इनके परती भई सो मानों कर्म ही झरे हैं।।8।। अर वर्षा ऋतु विषे वे धीर भगवती जीव दया के प्रतिपालक वृक्ष के मूल दोनों मुनि तिष्टे धैर्य रूप बखतर को पहरे बाणन की धारा समान जो मेह की धारा ताहि धैर्य्य से सहते भये।।9।। अर शीतकाल की रात्री विषे वे दोनों बुद्धिमान नदी सरोवर के तीर तिष्ठे देह की

कांति रूप कमल को कलेश उपजावनहारी जो हिम ऋतु की शीत पवन जिसको दोऊ मुनि कायोत्सर्ग धरे सहते भये।।10।। अर इनके निरन्तर बारह भावना चारित्र धर्म की शुद्ध करने वाली जिस कर इनका हृदय पवित्र होता भया। अर बाईस परिषह के जीतने कर योगीश्वर संवर को करते भये।।11।। वे दोनों ध्यान अर अध्ययन विषे सावधान वैयावृत्य की क्रिया विषे उद्यमी रत्नत्रय की शुद्धता कर अर मुनियों को दृष्टांत रूप होते भये – जो कोई मुनिव्रत धारे सो ऐसे तप करे।।12।। यह मधु कैटभ तपोधन महा मुनीश्वर हजारों वर्ष तप कर अंत समय सम्मेद शिखर आय कर प्रायोगनामा संन्यास धारण किया। कैसे हैं दोनों यतीश्वर, माया मिथ्या निदान यह तीन शल्य तिनसे वर्जित हैं सो एक महीने का संन्यास धारण कर शरीर तज सोलहवें स्वर्ग मधु तो इन्द्र भया। अर कैटभ सामान्यक जाति का देव भया हजारों देव देवियों का नायक भया।।15।।

बाईस सागर दोऊन का आयु भया दोनों सम्यक् दृष्टि स्वर्ग विषे सुख भोगते भये।।16।। जिनमें मधु का जीव पहले चया सो रुक्मणी की कुक्षिरूप रत्नों की खान विषे भरतक्षेत्र का कृष्ण नामा नवमा नारायण जिसके प्रद्युम्न नामा पुत्र भया अर दूसरा भाई कैटभ सो भी देवलोक से चयकर इसी का भाई दूसरी जांबवती नामा माता के गर्भ विषे पुत्र होयगा। अर इसका नाम शंबूकुमार होयगा। सो रूप कर पराक्रम कर कृष्ण समान होयगा।।18।।

ये दोनों भाई जन्मान्तर की प्रीति कर परस्पर हित विषे उद्यमी महाधीर चरम शरीरी प्रद्युम्न अर शंबुकुमार महा सुन्दर याही भव से सिद्ध लोक सिधारेंगे। अर वह राजा वीरसेन बटपुर का स्वामी चन्द्राभा का धनी स्त्री के विरह के संताप से आर्तध्यान विषे मगन होय मूवा सो संसार वन विषे चिरकाल भ्रमण कर मनुष्य भया सो अज्ञान तप कर धूमकेतु कहिये अग्नि के समान प्रज्वलित सो धूमकेतु नामा असुर भया।।21।। सो पूर्व भव की स्त्री का हरण विभंगा अवधि तें जानकर वैरानुबंध ते बालक को माता ते जुदा करता भया। धिक्कार या वैर को यह वैर पाप बढ़ावनहारा है।।22।। अर प्रद्युम्न के पूर्व भव के पुण्य ने उस कष्ट से बचाया सो कष्ट विषे रक्षा करे यह सामर्थ्य पुण्य ही की है।।23।।

सीमंधर जिनेन्द्र ने यह कथा कही सो पद्मरथ चक्रवर्ती सुन कर प्रमोद रूप भया प्रणाम करता भया।।24।। अर नारद भी यह कथा सुन जिनेश्वर को प्रणाम कर हर्षित होय चला सो आकाश के मार्ग होय तत्काल मेघकूट नामा नगर गया।।25।। काल संवर ने नारद का बहुत विनय किया अर नारद भी पुत्र लाभ के उत्सव कर उसे आनन्द उपजाय कर कनकमाला रानी के मंदिर गया। उसने बहुत विनय की वह पुत्रवंती सो बारम्बार वाकी प्रशंसा करे पुत्र को नारद ने देखा जाकी सैकड़ों कुमार सेवा करे हैं सो प्रद्युम्न कुमार को देखकर प्रमोद के योग से नारद के रोमांच हो आये परन्तु किसी को

भेद न जताया।।27।। राजा रानी कुंवर सबने प्रणाम किया सो इन आशीश देकर आकाश के मार्ग विमान में बैठे शीघ्र ही द्वारका आये। प्रद्युम्न की कथा पूर्वभव सम्बन्धी जिनेन्द्र मुख सुनी थी सो यादवन से कही अर आप मेघकूट नामा नगर विषे प्रत्यक्ष प्रद्युम्न को देख आये सो सब वार्ता यादवन से कह कर सबको हर्ष उपजाया।।29।।

फिर नारद प्रफुल्लित है मुख कमल जिनका सो रुक्मणी को देखकर सीमंधर जिनेश्वर की भाषी सकल कथा कहकर फिर कहते भये – हे रुक्मणी! तेरा पुत्र मेघकूटपुर विषे कालसंवर राजा के घर में अनेक राजकुमारन सहित क्रीड़ा करता देखा सो मानो साक्षात् देवकुमार ही है ऐसा रूपवान अर नहीं।।31।। सो तेरा पुत्र सोलहवें वर्ष सोलह लाभ संयुक्त प्रज्ञप्ती विद्या को धार कर आनन्द रूप आवेगा। जिस दिन वह आवेगा उस दिन तेरे मंदर के उपवन विषे बिना समय मयूर धुनि करेंगे।।33।। अर तेरे उपवन विषे एक मणि वापिका सूखी है सो पुत्र का आगमन होगा ताही समय वह वापिका जल से पूर्ण होयगी अर कमल फूल जायेंगे।।34।।

अर तेरा शोक दूर करने के अर्थ बिना ही समय अशोक वृक्ष प्रफुल्लित होयगा अर मूक कहिये गूंगा ते वचनालाप करने लगेंगे अर कुब्ज कहिये कुबड़ा कुब्जपनते रहित होंयगे। यह कारण होंय तब तू अपने पुत्र का आगमन जानियो। अर हे पुत्री! तू सीमंधर स्वामी के वचन अन्यथा मत जानियो।।37।। यह नारद के मुख के हित रूप वचन सुनकर श्रद्धा करी अर नमस्कार कर नारद से कहती भई पुत्र की वार्ता सुन झरे है दुग्ध जिसके स्तन विषे।।38। रुक्मणी कहे है – हे भगवन्! यह कार्य तुम-से बांधव ही से बने अर से न वने है साधून की सेवा विषे उद्यमी जिनधर्मी तिहारे जिनधर्मी मात्र से परम स्नेह है अर मैं तो बालकी ही हूँ। मैं पुत्र के शोक रूप अग्नि कर दग्ध थी अर मेरे कोई अबलंब नहीं था सो हे धीर! तुम हस्तावलंब देकर मोहि थामी।।40।।

जो सीमंधर सर्वज्ञ ने भाष्या है सो सत्य है। मोहि जीवते पुत्र का दर्शन अवश्य होयगा मैं जिनेश्वर के वाक्य कर जीऊं हूं, अर दृढ़ है मन मेरा अर आप इच्छा होय जहां जाइये अर शीघ्र ही फिर तिहारे दर्शन हूंजियो।।42।। इस भांति नारद से रुक्मणी मिष्ट वचन कह प्रणाम किया तब नारद भी इसे आसीस देकर गये अर रुक्मणी हरि की इच्छा पूरती संती सुख से तिष्टी।।43।। यह प्रद्युम्न अर संबूकुमार पूर्व भव का चरित्र। मनुष्य, बहुरि देव बहुरि मनुष्य, बहुरि देव, बहुरि मनुष्य, बहुरि देव, प्रद्युम्न संबूकुमार के भव से मुक्त होयंगे। यह चरित्र जो पढ़े सुने अर सरदहे सो जिनशासन विषे भक्तिवंत थोरे ही भव में निर्वाण पद पावे।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ शंबूप्रद्युम्नपूर्वभववर्णनो नाम त्रिचत्वारिंशः सर्गः।।43।।

चवालीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – सत्यभामा के भानुकुमार नामा पुत्र सो उगते सूर्य्य की नाईं वृद्धि को प्राप्त होता भया। कैसा है भानुकुमार, सूर्य्य की किरणों के समूह समान है ज्योति जिसकी सो भानु कहिये सूर्य्य ताकी भानु कहिये दीप्ति ता समान है उद्योत जाका ऐसा भानुकुमार नामा पुत्र ताके बढ़िवे कर सत्यभामा का मन रूप उदयाचल प्रकाश को प्राप्त होता भया।।2।। एक दिन नारद कृष्ण पै आये तब कृष्ण प्रणाम कर पूछी – हे भगवन्! अब आप कहां से यहां आये सो कहो तिहारे दर्शनकर मोहि अति हर्ष होता है। जब जब आप आवे हैं तब तब हर्ष ही की बात लावे हैं।।3।।

तब नारद बोले – हे हरि! विजयार्द्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी जहां जंबूपुर नामा नगर ताका राजा जांबूव नामा विद्याधर ताके शिवचंद्रा रानी ताके विश्वकश्रेनी नामा पुत्र जिसका विश्व विषे यश अर उसके जांववती नामा बहन साक्षात् लक्ष्मी समान सो अपनी सखीन सहित गंगा स्नान को आई सो ऐसी सोहती थी मानो तारान कर युक्त चन्द्रकांति ही सोहे है। सो मैंने गंगा में प्रवेश करती देखी ऊंचे हैं, अर गोल हैं कठिन कुच जाके तेरे मन हरिवे को समर्थ मानो राजा जांबूव रूप हिमाचलते उपजी साक्षात् गंगा ही गंगा द्वार विषे प्रवेश करती देखी। यह नारद के वचन स्नेह रूप सुनवे करि कृष्ण के काम उदीप्त भया। जैसे घृत से सींचवे कर अग्नि प्रज्वलित होय ताही समय बड़ा भाई अनावृष्टि ता सहित मोहन तहां गये सो जांववती को गंगा विषे स्नान क्रीड़ा करती देखी अर कन्या ने केशव देखे इन्दीवर कमल समान है श्याम सुन्दर शरीर जाका। तब यह दोनों काम के पांच बाण कर बेधे गये।।10।।

उसी समय कृष्ण दोनों भुजान कर उसे उठाय लई सुख से लग गये हैं नेत्र जिसके अर कृष्ण के भी नेत्र लग गये। कैसी है वह, तिरस्कार करी है लक्ष्मी की शोभा जाने अर अत्यंत है लज्जा जामें।।11।। जब कान्ह ने जांववती उठाई तब बाके लार हजारों सखी थीं सो विलाप करती भईं सो राजा सुनकर जांववती का पिता अति क्रोध रूप भया। पुत्री के हरिवे कर विद्याधर खड्ग हाथ में लिये शीघ्र ही कृष्ण पर आया तीक्ष्ण शस्त्र है जाके कर विषे।।13।।

तब अनावृष्टि नामा कृष्ण का बड़ा भाई विद्याधर पर गया सो वासे युद्धकर उसे तत्काल बांध लिया अर वासुदेव को आय सौंपा। तब वह अपने पुत्र विश्वकसेन को वासुदेवकूं सौंप आप मुनि भया अर विश्वकसेन ने अपनी बहन जांववती वासुदेव को परनाई उसे परण विश्वकसेन को साथ लेय द्वारावतीनाथ द्वारका आये।।16।। रुक्मणी के महल के निकट जांववती को माधव ने महल दिया।।17।।

अर जांववती के भाई का बहुत सन्मान कर वासुदेव ने विदा किया सो अपने स्थान को गया अर पृथिवी विषे दुर्लभ जो भोग तिन कर केशव जांववती को रमावता भया।।18।। रुक्मणी का अर जांववती का निकट महल सो परस्पर मिलाप हुवा ही करे, आने जाने से रुक्मणी अर जांववती के अखंडित प्रीति हो गई।।19।।

फिर एक सिंहलद्वीप का श्लक्षणरोम नामा राजा जिसके लक्ष्मणा नामा कन्या सो महा लक्षणवती सो राजा माधव से विमुख ताके निकट माधव ने दूत पठाया सो जायकर उसे कहता भया। तिहारी कन्या मुरारी को परनावो सो याने न मानी तब बलभद्र सहित मुरारी लक्ष्मणा के देखने को आये सो लक्ष्मणा समुद्र स्नान को आई थी सो विशाल हैं नेत्र जाके।।22।। सो बाकी लार राजा का सेनापति द्रुमसेन था उसे युद्ध विषे हतिकर मुरारी लक्ष्मणा को हर लाये अर विधि से परनी। अर कैसे हैं कृष्ण, लक्ष्मण समान है प्रभा जाकी सो जांववती के घर के निकट लक्ष्मणा को माधव ने महल बताये अर लक्ष्मणा का भाई महा सेवक हरि पै आया अर नम्रीभूत भया। सो हरि उसका अति सन्मान कर सिंहलद्वीप पठाया सो कृष्ण की कृपातें सुख से राज्य करता भया।।25।।

फिर एक राष्ट्रवर्द्धन नामा देस ता विषे अजासुरी नामा पुरी ताका सुराष्ट्र नामा राजा जिसके विनया नामा रानी जिसके नेमित नाम पुत्र महा पराक्रमी अर महा बुद्धिमान जिसके सुसीमा नामा बहन मानों वह सुसीमा वसुधा की सीमा कहिये हद्द ही है। वसुधा में ऐसी कोई अर वनिता नहीं सो राजा सुराष्ट्र ने नेमित को युवराज पद दिया सो नेमित पृथिवी विषे प्रसिद्ध महा पुरुषार्थ का धारक महा मानी सो बड़े बड़े राजाओं को न गिने।।28।। सो नेमित कुमार अर सुसीमा यह दोनों बहन भाई समुद्र स्नान को आये थे सो नारद ने नारायण से कही जो सुसीमा रूप गुण की खान है। तब आप माधव वहां गये प्रभास नामा तीर्थ के तीर अपनी सेना राख वहां गये सो नेमित को युद्ध विषे जीत कन्या को द्वारावती ले आये।।30।। लक्ष्मणा के मंदिर के समीप मणि सुवर्णमय मंदिर सुसीमा को दिया अर देवों की नाईं वासुदेव सुसीमा सहित रमता भया अर सुसीमा का पिता राष्ट्रवर्द्धन पुत्री के अर्थ बहुत दायजा भेजता भया अर रथ हाथी घोड़े पालकी आदि भली भली भेंट हरि पै पठाई।।31।।

अथानन्तर – सिंधु देश का राजा मेरु इक्षाकुकुल का वीतभव नामा नगर तहां राज करे जिसकी रानी चंद्रवती उसके उदर विषे गौरी नामा पुत्री भई सो मानो साक्षात् गौरी कहिये पार्वती ही है अर मूर्तिवंती विद्या ही है अर मानो ईति भीति रहित पृथिवी ही है।।33।। तब माधव ने राजा मेरु के निकट दूत भेजा सो वाने पहिले ही निमित्त ज्ञानी को पूछा था कि इस पुत्री का वर कौन होयगा तब वाने कही कृष्ण नामा नारायण होयगा। कृष्ण का दूत गया उसी समय पुत्री वाने पठाई मृग समान हैं नेत्र जिसके।।34।।

मन की हरनहारी जो गौरी उसको मनमोहन परणकर सुसीमा के मंदिर के समीप इसे ऊंचा मंदिर दिया।।35।। फिर अरिष्टपुर का राजा हिरण्यनाभि सो बलभद्र का मामा उसके श्रीकान्ता नामक रानी अर पुत्री पद्मावती सो साक्षात् लक्ष्मी ही है उसका स्वयम्बर मंडप सुनकर बलभद्र नारायण गये अर बड़ा भाई अनावृष्टि इनके साथ सो हिरण्यनाभ ने प्रीति कर इनका बहुत सम्मान किया अर इस हिरण्यनाभ का पिता राजा सत्र सो वैराग्य भया तब हिरण्यनाभ का रेवत नामा बड़ा भाई सो भी पिता के साथ मुनि भया था।।39।।

उसकी पुत्री चार – रेवती 1 बन्धुवती 2 सीता 3 राजीवनेत्रा 4 सो चारों पहले ही बलभद्र को दीनी थी सो उनका स्वयम्बर काहे को होय। उनकी तो सगाई पहिले ही बलभद्र से हो गई अर पद्मावती का स्वयम्बर था सो अनेक राजा आये थे जिनको युद्ध विषे जीत कर कृष्ण पद्मावती परणा। यह दोनों भाई परणकर द्वारका आये।।42।। जैसे इन्द्र प्रत्येन्द्र देवन सहित इन्द्रपुरी में आवें तैसे यह दोनों भाई अनेक भाईन सहित द्वारावती में आये। पद्मावती को परण कर गौरी के गृह के समीप हरि ने इसको मंदिर दिया।।43।।

अथानन्तर – गंधार नामा देश उस विषे पुष्कलावती नामा नगरी तहां राजा इन्द्रगिर उसके मेरुमती नामा रानी अर पुत्र हिमगिर सो हिमाचल सारखा स्थिर अर पुत्री गांधारी सो महा मनोहर गंधर्वादि कला की वेत्ता।।45।। सो गांधारी की इसके भाई हिमगिर ने हयपुर के राजा सुमुख से सगाई करी थी सो नारद ने आय यह वार्ता वासुदेव से कही सो हरि वहां जाय कर हिमगिर को रणभूमि विषे जीत कर गांधारी को ले आये। आनन्द से विवाह किया।।47।। अर पद्मावती के मंदिर के समीप माधव ने गांधारी को महल दिया अर देवन कैसे भोग भोग कर इसे रमावते भये।।48।।

यह कृष्ण की आठ पटरानी अर सोलह हजार रानी तिन कर सेवनीक तिन सहित मनमोहन सुख से राज्य करें।।49।। पुण्य रूप वृक्ष कर उपजे नारायण पद के भोग रूप फल तिनको भोगवता लोकन के समूह को आनन्द देता भया। कृष्ण के राज्य में कोई पुरुष दुःखी नहीं सब ही आनन्द करे हैं। वह मुकुन्द जिनधर्म का धौरी जे शत्रु सन्मुख आये अर लड़े तिनको क्षण मात्र में तृण की नांई उपार डारे अर महाश्रेष्ठ देवांगना सारखी वधू वरता भया अर बिना ही यत्न जाके बहुत रत्न आय प्राप्त भये। इसलिये जो भव्यजन जिनधर्म का सेवन करे सो मनमोहन की नांई मनवांछित सुख पावे।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे श्रीजिनसेनाचार्यस्य कृतौ जांववत्यादि महादेवीलाभवर्णनो नाम चतुश्चत्वारिंशः सर्गः।।44।।

पैंतालीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – दशार्ह्न कहिये समुद्रविजयादि दश भाई जिनके भाणजे प्रसिद्ध पंच पांडव जिनके नाम – युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, अर सहदेव, सो यह द्वारावती नगरी आये।।2।। यह वार्ता सुनकर राजा श्रेणिक गौतम गणधर से पूछता भया – हे प्रभो! ये पांडव कौन हैं अर कौन वंश विषे उपजे हैं।।3।। तब गणधर कहते भये। सोमप्रभ श्रेयांस का वंश ता विषे कुरु नामा राजा भये उसके वंश में शांति कुंथु अरनाथ ए तीन तीर्थंकर भये।।4।। इस वंश में जितने राजा हुए सो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के साधक हुए सो कुरुवंशी की महिमा तू आदि से सुन।।5।।

इस वंश विषे बड़े बड़े राजा हुए जिनके नाम सुन कुरुजांगल देश भोगभूमि समान है शोभा जाकी उस विषे हस्तनापुर ता विषे पृथिवी के आभूषण रिषभदेव के समै राजा सोमप्रभ अर श्रेयांस कुरुवंश के तिलक दान धर्म के नायक होते भये।।7।। सो राजा सोमप्रभ के जयकुमार पुत्र भये तिनका नाम मेघेश्वर भी कहते हैं सो मेघेश्वर भरत के बड़े उमराव जिनके कुरु नामा पुत्र। जिसके कुरुचंद्र ताके शुभंकर ताके धृति कर।

इस भांति अनेक कोटि राजा भये। ऋषभदेव के समय से नेमनाथ के समय पर्यन्त कोटा कोटि सागर विषे जो राजा भये जिनका कथन कौन कर सके, फिर या वंश विषे राजा धृतदेव भये ताके धृतकर ताके गंगदेव इत्यादि अनेक राजा भये फिर धृतमित्र धृतिषेण सुव्रत व्रात मंदर श्रीचन्द्र स्वप्रतिष्ट इत्यादि सैकड़ों नृप व्यतीत भये फिर राजा धृति पद्म धृतिंद्र धृति वीर्य यह प्रसिद्ध भये। फिर धृतिदृष्टि धृति द्विति धृतिप्रीति इत्यादि अनेक कुरुवंशी भूपति भये फिर राजा भ्रमरघोष हरिघोष हरिध्वज सूर्य्यघोष सुतेज पृथु इभ वाहन इत्यादि पृथिवीपति व्यतीत भये। फिर राजा विजय जिसके जयराज फिर सनत्कुमार नामा चौथे चक्रवर्ती कुरुवंश ही में भये।।15।। सो महा रूपवान जिनके रूप की पासि के खैंचे स्वर्ग के देव आये अर देवन के वचन सुन मुनि भये।।16।।

फिर सनत्कुमार का पुत्र सुकुमार ताके वरकुमार ताके विश्व ताके विश्वानर ताके विश्वकेद ताके बृहध्वज।।17।। ताके विश्वसेन ताके ऐरा नामा रानी प्राण से भी अधिक बल्लभ ताके उदर भगवान शांतिनाथ सोलहवें तीर्थंकर पंचम चक्रवर्ती होते भये।।18।। तिनके नारायण नामा पुत्र ताके नरहर ताके प्रशांति ताके शांतिवर्द्धन ताके शांतिचन्द्र ताके शशांकांक ताके कुरु। इत्यादि राजा कुरुवंशी भये इत्यादि अनेक भूप काल वश भये फिर राजा सूर्य्य भया ताके रानी श्रीमती ताके गर्भ विषे भगवान कंथुनाथ सतरहवें तीर्थंकर छठे चक्रवर्ति भये।।20।। तिन पीछे अनेक राजा भये फिर सुदर्शन नामा

राजा भये तिनके रानी मित्रा ताके गर्भ विषे भगवान अरनाथ अठारहवें तीर्थंकर सातवें चक्रवर्ती भये।।22।।

फिर राजा सुचारु ताके चारु ताके चारुरूप महा बलवान ताके चारुपद इत्यादि अनेक राजा व्यतीत भये।।23।। फिर ताके राजा पद्‌ममाल ताके सुभूप ताके पद्‌मरथ ताके महापद्‌म नवमें चक्रवर्ती इनके विष्णु अर पद्‌म यह दोनों पुत्र हुए।।24।। फिर राजा सुपद्‌म पद्‌मदेव कुलकीर्ति। कीर्ति सुकीर्ति वसुकीर्ति वीर्यवान।।25।। वासुकी, वासव, वसु, सुवसु, यह कुरुवंशी के नाम होते भये। बहुरि श्रीवसु, वसुन्धर।।26।। बसुरथ, इंद्रवीर्य चित्र विचित्रवीर्य यह महा बलवान होते भये फिर राजा विचित्रवीर्य, चित्ररथ, महारथ, व्रातरथ, वृषानंत, वृषध्वज।।28।। श्रीवृत व्रत धर्माधृत धारण महासर, प्रतिसर परासर।।29।। सारद्वीप, द्वीपाइन, सुशांति, शांतिभद्र, शांतिषेण।।30।। सो वह राजा शांतिषेण योजनगंधा नाम रानी का पति सो योजनगंधा राजा की पुत्री अर कीर केपली ताके पुत्र संतन अर संतन के शांतन ताका दूसरा नाम व्यास भी कहते हैं।।31।। तिसका पुत्र धृत धर्म अर तिसका धृतोदय ताके धृतयश ताके धृतिमान अर ताके धृत।।32।। अर धृतराज ताके रानी तीन, अंविका 1 अंबालिका 2 अंबा 3 यह तीनों ही बड़े राजान की बेटी तिनमें अंबिका के धृतराष्ट्र नामा पुत्र भया। अर अंबालिका के पांडु नाम पुत्र भया अर अंबा के विदुर नामा पुत्र भया। यह तीनों ही महा ज्ञानवान होते भये अर राजा धृतराज का भाई रुक्मण जाके रानी गंगा से बड़े राजा की पुत्री महा पवित्र ताके भीष्म नामा पुत्र होते भये।।35।।

अथानन्तर – धृतराष्ट्र के रानी गान्धारी ताके दुर्योधन आदि सौ पुत्र भये तिनमें परस्पर अत्यन्त प्रीति अर सब ही शास्त्र विद्या विषे प्रवीण।।3।। अर पांडु के रानी दोय एक कुन्ती दूसरी माद्री, कुन्ती के कर्णनामा पुत्र तो पांडु थकी गांधर्व विवाह कर भये। फिर युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, यह तीन पुत्र भये अर माद्री के नकुल अर सहदेव यह दोनों पुत्र भये। पांचों ही भाई पांडु के पुत्र महा जिनधर्मी पंचपरमेष्ठी के दास होते भये।।38।। कुछेक दिन में पांडु तो मुनि भये अर माद्री आर्य्यका भई सो जिनधर्म के प्रसाद से दोनों स्वर्ग विषे गये अर धृतराष्ट्र के सौ पुत्र अर पांडु के पांच पुत्र तिनमें राज के अर्थ विरोध होता भया तब भीष्म, विदुर, द्रोण यह बीच पडे अर दुर्योधन का मंत्री शकुनि ससुरोम यह भी बीच परे अर इनके राज का विभाग कर दिया – पांडु के पांच तिनकूं राज्य आधा अर धृतराष्ट्र के पुत्र सौ तिनको आधा राज दिया। इस भांति बट किया परन्तु वे सौ इस बात में प्रसन्न नहीं।।41।।

अथानन्तर – जरासिंध के अर दुर्योधन के अर कर्ण के एकांत विषे वचन भया ऐसी प्रीति भई सो किसी के टारे न टरै।।42।। अर भार्गवाचार्य धनुर्विद्या के आचार्य तिनके वंशविषे उपजे द्रोणाचार्य

सो धनुष विषे प्रवीण सो धृतराष्ट्र के अर पांडवों के पुत्रों को धनुषवेद सिखावे सो द्रोण के मध्यस्थ भाव सवन को समान सिखावे किसी से अन्तर नहीं द्रोण की वार्ता सुन राजा श्रेणिक ने गौतम स्वामी से पूछा – हे प्रभो! भार्गवाचार्य के वंश में द्रोण उपजे सो इनके वंश की मोहि कथा कहो। तब गणधर देव कहे हैं – हे श्रेणिक! तू सुन।।44।। प्रथम ही आत्रेय भया ताका पुत्र अर शिष्य कौथुमी ताका अमरावर्त ताका सित्व अर सित का वामदेव ताका कपिष्ठल ताका जस्थामा ताका सरवण ताका सरासण।।46।। अर ताका द्रावण। ताका विद्रावण, अर विद्रावण का पुत्र द्रोणाचार्य सब भार्गव वंश विषे श्रेष्ठ।।47।। सो द्रौण के अश्विनी नामा स्त्री ताके अश्वत्थामा नामक पुत्र होता भया। सो बड़ा धनुषधारी जाके सन्मुख रण विषे अर्जुन ही आय सके।।48।।

अथानन्तर – अर्जुन का प्रताप अर धनुष विद्या का ज्ञान यह सौ भाई दुर्योधनादि न सह सके सो पहिले बट भया था अर सन्धि भई थी तामें दूषण विचारते भये। सो यह तो बड़ी अयोग्य हम सौ अर वे पांच, सो आधा वट कैसे संभवे है।।50।। यह वार्ता पांडुवों ने सुनी तब युधिष्ठिर तो महा धीर सो उनको तो क्रोध न उपजा अर छोटे भाई चारों समुद्र समान निर्मल अर गम्भीर थे परन्तु पुरुषों के वचन वे ही भये पवन ताकर क्षोभ को प्राप्त भये।।51।। प्रथम ही अर्जुन उठा सो मैं वाणों की धारा रूप मेघ वृष्टि कर शत्रु रूप पर्वतों को आच्छादित करूं तब युधिष्ठिर ने उसे मने किया जो क्षमा करहु। तब बड़े भाई के वचन रूप वायु कर अर्जुन रूप मेघ शांत हो गया अर भीम रूपी भुजंगम यह कहता संता उद्यत भया था जो मैं दृष्टि ही कर सोऊ शत्रुन को भस्म करूंगा सो बड़े भाई के वचन रूप मंत्रकर शांत भया।।53।। अर नकुल भी शत्रु के समूह के नाश करने को उद्यमी भया था सो युधिष्ठिर ने भुजाओं कर थावां अर सहदेव रूप दावानल प्रज्वलित भया था जो मैं वनरूप वैरीन को शीघ्र ही भस्म करूंगा सो भी युधिष्ठिर मेघ ने बुझाया। यह चारों ही भाई युधिष्ठिर के प्राण समान हैं सो युधिष्ठिर की आज्ञाकर क्षमारूप भये।।55।।

अर वे भी इनको प्रबल जान रुक गये, शांत चित्त होय घर में रहे सो धृतराष्ट्र के पुत्र कपटी तिन यह घर में सोते थे सो रात्री को घर में अग्नि लगाई तब यह सचेत होय माता सहित सुरंग के मार्ग होय निकसे सो यह तो विदेश गये अर दुर्योधन का अपयश भया, जो याने प्रपंचोंकर भाई मारे। हस्तिनापुर के सब लोग दुर्योधन की निन्दा करते भये जो यह पापी है अर सब कुल के लोक पांड्वों को मरे जान इनकी क्रिया करते भये।।59।। अर यह पांचों भाई महा बुद्धिमान गंगा पार उतर कर भेष पलट पूरब की दिस गये।।60।।

सो माता कुन्ती लार तातैं यह भी उसकी चाल परमाण धीरे धीरे जा रहे थे सो चले चले कोसिका

नामा पुरी गये जहां राजा वर्ण।।61।। ताके रानी प्रभावती अर पुत्री सुदर्शना पुष्प समान कोमल है अंग जिसका सो पहिले युधिष्ठर की प्रशंसा इसने सुनी थी सो याके युधिष्ठर पर अनुराग था सो युधिष्ठर पर के दर्शन रूप चन्द्रमा कर वह सुदर्शना नामा कन्या कमोदनी समान विकाश को प्राप्त भई। इस जन्म विषे मेरे यही भरतार होवे वह राजा वर्ण की पुत्री राजा युधिष्ठर के प्यारी स्त्री होनहार है।।64।। सो उसका अभिप्राय जान युधिष्ठर के भी प्रेम उपजा सो वाहि सैन ही कर करग्रहण की आशा बन्धाय आप आगे गये।।65।। उसने जानी इनके वचन मिथ्या नहीं यह मोहि बरेंगे। यह प्रतीत धर राजा के संगम की आशा कर कन्या सखीन में उचित जो विनोद ताकर काल व्यतीत करे।।66।। अर वे पांचों भाई स्वभाव ही कर सुन्दराकार विप्र का भेष धारे आगे गये पांचों ही भाई मनुष्यों का मन हरणहारे।।67।। इनका आसन शयन अर महा मनोहर भोजन सुख से होय यह पुण्याधिकारी सो इनको अचिंती वस्तु आय प्राप्त होय।।68।। फिर यह तापस का भेष धर श्लेष्मान्तक नामक वन विषे गये, तहां तापसियों का आश्रम महा रमणीक ता विषे यह तापसियों कर पूजित विश्राम करते भये, यहां एक अर कथा है। बसुन्धरपुर का राजा विंध्यसेन उसकी नर्मदा नामा रानी उसकी पुत्री बसंतसुन्दरी सो उसके माता पिता ने युधिष्ठर को देनी विचारा।

फिर उनके दग्ध भये की वार्ता सुनकर वह कन्या अपने पूर्वोपार्जित कर्म को निंदती संती तापसूं के आश्रम विषे तप करने का उद्यम करे थी जो कि जन्मान्तर विषे भी मेरा पति युधिष्ठर ही होय।।72।। सो वह कन्या तापसियों के आश्रम विषे अति उत्कृष्ट रूप लावण्यता की धरणहारी पाटंवर की सारी ओढ़े शिर पर जटा धरे बटवृक्ष की साखा समान शीतल सोहती भई।।73।। कर्ण पर्यंत हैं विशाल अर तीक्ष्ण नेत्र जिसके अर किंदूरी समान आरक्त है अधर जिसके अर चन्द्रमा समान है मुख जिसका। अर ऐसी नाजुक जो नितंब अर स्तन का भी भार न सहार सके। वह देवन का मन हरणहारी तापसनियों कर पूज्य चन्द्रकला समान निर्मल सम्पूर्ण तपोवन को उज्ज्वल करती थी।।7।। सो उसके आश्रम पांडव गये सो उसने उचित वृत्ति कर इनकी पाहुन गति करी अर वह मिष्ट वचन बोलनहारी इनके मार्ग का खेद निवारती भई। तब उसको माता कुन्ती ने प्रेमकर पूछी – हे बाले! हे कमल कोमली! तू नव यौवन विषे वैराग्य को कौन कारन प्राप्त हुई है सो कह तेरी बुद्धि निर्मल है। इस भांति कुन्ती ने पूछी, तब वह राजपुत्री मृगनयनी मधुर वचन कहकर माता का मन हरती भई।।78।। हे पूज्ये! तुम भली पूछी मेरे वैराग्य कारण कहू हूं सज्जन से मिले मन का दुःख कहने में आवे।।79।।

पहिले मेरे माता पिता ने यह विचार किया था जो इस कन्या को राजा पांडु अर रानी कुन्ती का

www.vitragvani.com

बड़ा पुत्र युधिष्ठर ताहि परणावेंगे। वह सुते स्वभाव ही उदार चेष्टा का धारक है फिर मेरे अभाग्य से उनकी माता अर भाईन सहित ऐसी वार्ता लोकन के मुख से सुनने में आई जो न कही जाय न धरी जाय।।81।। सो योग्य तो यह कि जैसे मेरा पति अग्नि दाह कर मरा त्यों ही मैं भी अग्नि प्रवेश करूं यह तो मोतें न बनी, मैं थी हीनशक्ति इसलिये तापस्यीयों के मार्ग विषे प्रवर्ती हूं।।82।।

यह वचन राजपुत्री के सुनकर कुन्ती ने जानी यह मेरी ही पुत्रवधू होनहार है। तब उससे कहा – हे भद्रे! तैंने बहुत भला किया जो अग्निप्रवेश न किया अपने प्राण बचाये।।83।। यह प्राणी अपने मित्रों का कल्याण विचारे अर पूर्वोपार्जित कर्म अर ही कर डारे जिससे दीघदर्शीपना ही योग्य है। बिना विचारे शीघ्र करना सो ही संताप का कारण है। हे कल्याणी! यह प्राण कल्याण के कारण हैं सो मेरे वचन से तू यह प्राण राख जीवता थका प्राणी सैकड़ों कल्याण देखे है इसलिये तू घर में रहे तो तपोवन विषे रह परन्तु प्राण त्याग मत कर।।85।। उसी समय युधिष्ठिर भी माता के निकट आय खड़े रहे। कुन्ती अर वह राजकन्या दोनों की बात युधिष्ठिर ने सुनी सो माता के निकट धर्म का व्याख्यान करते रहे अर उसे सुनाते रहे जो वीतराग का प्ररूप्या था।

दोय प्रकार धर्म तिसमें गृहस्थ धर्म तो बारह व्रत रूप – पंच अणुव्रत तीन गुणव्रत चार शिक्षाव्रत अर यति का धर्म पंच महाव्रत पंचसमिति तीन गुप्ति।।87।। यह तेरह प्रकार चारित्र है सो इस भांति इनके परस्पर आलाप भया अर मन विषे प्रीति उपजी। तब कन्या मन में चिंतवती भई। राजलक्षण कर युक्त कहा यह ही युधिष्ठर है जो माता सहित महा दया कर मण्डित मुझे उपदेश दे है अर धीरज बंधावे है। सर्वथा मेरे पुण्य कर वह मेरा पति सत्यवादी जीवो। वे पुरुष शत्रुओं के जीतनहारे हैं।।89।। उस दिन उसके आश्रम रहे फिर प्रातः ही चलने के उद्यमी हुए तब युधिष्ठर ने उससे कही – तेरा दर्शन फिर हूजियो। उसको बहुत सन्मान कर मिष्ट वचन कह आगे चले अर इसके आशा बंधी जो यही है समय पाय मोहि परणेंगे। सो यह तो आशा रूप यहां तिष्ठै है, युधिष्ठर के उपदेश कर कुछ इसको अणुव्रत का ग्रहण हुवा। अर वन से निकस तापस का भेष तज विप्र का रूप धर पांचों भाई माता कुन्ती सहित इहांपुर नामा नगर गये।।91।।

अर राजा समुद्रविजय ने द्वारका में सुनी जो दुर्योधन ने कुन्ती अर पांचों पांडव मायाचार कर अग्नि में जलाये सो अपनी बहन अर भाणजे तिनके मरण कर दुर्योधन पर अति क्रोध भये। कुरुवंशीन के मारिवे को उद्यमी भये। अर पांचों भाई इहांपुर में कई एक दिन रहे तहां भृंग नामा राक्षस महा भयंकर मनुष्यों का आहार करनहारा जिससे भीमसेन ने युद्ध किया उसे जीत कर ताड दिया फिर न आवे सो इनका नगर विषे बड़ा यश भया। यह राक्षस मनुष्यों के आहारी देवयोनि नहीं राक्षसी विद्या

के साधक दुष्ट मनुष्य हैं वा राक्षस के तिरस्कार कर नगर के लोगन का भय मिटा प्रजा भय रहित भई तब इनकी बहुत पूजा करी अर माता सहित आगे चले। सो एक तृशृंगनामा बड़ा नगर।।93।। तहां राजा चंडवाहन जो पापकर्म के करनहारे हैं तिनको भयंकर ताके रानी विमलप्रजा अति बल्लभा ताके पुत्री दश ते सर्व ही रूप के अतिशय कर संपूर्ण शरद की पूरणमासी के चन्द्रमा की समान सुन्दर बदन जिनके अर वे सर्व ही कला विषे प्रवीण।।95।।

तिनके नाम - गुणप्रभा 1 सुप्रभा 2 ह्री 3 श्री 4 रति 5, पद्मा 6, इन्दीवरा 7, विश्वा 8, चार्या 9, अशोका 10, सो इनके माता पिता ने यह सब युधिष्ठर को विवाहनी विचारी थी सो उनकी अर भांत सुन यह सब श्राविका के व्रतरूप तिष्ठती थी।।97।। अर उसी नगर में एक प्रिय मित्र नामा बड़ा धनवान सो इसने सुनी थी जो इस समय पांडव बड़े पुरुष हैं उन समान अर नाहीं सो पांडवन के देखने की तथा उनके यश सुनने की उसको अति अभिलाषा थी उसके सामिनी नामा भामिनी अर नयनसुन्दरी नामा कन्या सो अपने रूप सौंदर्यता कर नेत्रन को आनन्द देनहारी।।97।। सो जब राजा ने अपनी दश पुत्री युधिष्ठर को देनी विचारी थी तब इसने भी अपनी पुत्री युधिष्ठर ही को देनी विचारी थी सो उनकी अर वार्ता सुन राजा की दशों पुत्री अणुव्रत धर तिष्ठी थीं त्यों ही श्रेष्ठी की पुत्री भी उन सहित तिष्ठी राजा अर राजा की रानी अर यह सेठ अर सेठानी महा पुरुषन के लक्षन जाननहारे इसलिये युधिष्ठर को देनी विचारी थी।।1।। सो उनके परलोक की सुन इन सबन के यह विचार भया था कि जो वे परलोक गये तो कोई दूसरा तो पति हमारे होनहार नहीं, पति वे ही हैं सो वह तो निश्चय रूप हैं अर यह पांचों भाई वहां से आगे चले सो चंपापुरी गये तहां इनका भाई कर्ण राज करे सो दुर्योधन का अर जरासिंध का मित्र तहां एक भयंकर गजराज सो नगर के मध्य उपद्रव करे था अर महा प्रबल ताहि भीम ने मद रहित किया अर प्रजा का उपद्रव मेटा परन्तु वहां आपको प्रकट न किया। वहां से आगे एक सुरपुर समान वैदिसि नामा नगर तहां राजा वृषध्वज उसके दृढाय युद्ध नाम का बड़ा पुत्र सो युवराज।।5।।

अर राजा के दिशावली नामा रानी उसके द्यसानन्दा नामा पुत्री सो सब दिश विषे प्रकट है यश जिसका दिशा समान निर्मल।।6।। उस राजा के मंदिर भीम भिक्षा के अर्थ गये सो गम्भीर है शब्द जिसके सो वह राजा भीम को महा रूपवान अर महा पुरुष जान अपनी कन्या लेकर भीम के निकट आया अर मिष्ट वचन कहता भया।।8।। हे नरोत्तम! तुम योग भिक्षा यह मेरी कन्या है सो लेहु अर पाणिग्रहण करो।।9।। तब भीम ने कही यह अपूर्व भिक्षा है सो मैं स्वाधीन नहीं जो इसके अर्थ हाथ पसारूं। यहां मेरी माता अर मेरा बड़ा भाई है वह करे सो सही। तब राजा कही उनको पूछ आओ तब

भीम जायकर माता अर भाई से कही अर उन्होंने आज्ञा दी तुम विवाह करो। तब वृषभध्वज की पुत्री द्यसानन्दा तिसे परणकर वैदिशपुर में डेढ महीना रहकर नर्मदा नामा नदी को तैर विंध्याचल पर्वत गये यह पांचों भाई अनेक प्रकार राजक्रीडा तिन विषे प्रवीण।।11।।

अथानन्तर – संध्याकार नामा अंतरद्वीप ता विशे संध्याकार नामा नगर उस विषे राजा सिंहघोष राज करे सो राजा हिडम्ब के वंश विषे उपजा।।12।। उसकी सुदर्शना नामा रानी अर उसके हृदयसुन्दरी नामा पुत्री उसे त्रिकूटाचल का राजा मेघवेग याचता था सो सिंहघोष ने नहीं दी।।13।। निमित्त ज्ञानी से पूछा कि मेरी पुत्री का वर कौन होयगा? तब उसने कहा – मेघवेग विंध्याचल विषे गदा नामा विद्या साधे है सो जो उसे हनेगा वह तेरी पुत्री को वरेगा।।14।। यह वृत्तांत जान भीमसेन वहां गया उसे सावधान कर उससे युद्ध किया सो उसे मार कर गदा के स्वामी भये।।15।। अर सिंहघोष की हृदयसुन्दरी नामा पुत्री परनी उसका दूसरा नाम हिडंबसुन्दरी भी कहे हैं महाउच्छव से इनका विवाह भया।।16।। फिर अनेक देश विहार करते यह प्रताप के पुंज हस्तिनापुर नामा नगर तहां जाने की है इच्छा जिनकी, तब पांडव पुत्र मार्ग के बस से एक माकंदी नामा नगरी तहां गये सो वह नगरी देवपुरी समान अर वहां के मनुष्य देवों समान।।18।।

तहां राजा द्रुपद ताके रानी भोगवती अर धृष्टद्युम्न आदि पुत्र तिनकी शक्ति अनेक वेर सावंतन के देखने में आई।।19।। अर राजा द्रुपद के द्रोपदी नामा पुत्री सो रूप लावण्य सौभाग्य कला तिनकर शोभित शरीर जिसका।।20।। जिसके समान अर सुन्दरी नाहीं। वह द्रोपदी स्त्रीन की सृष्टि में अनुपम है इसके अर्थ सकल राजाओं के पुत्र मनोरथ करें अर सबों ही के दूत इसको यांचने के अर्थ आवें जैसे क्रूर ग्रह दान याचे जैसे इसे याचें।।21।। तब राजा द्रुपद मन में विचारी इस कन्या को सब याचें मैं कौन की प्रार्थना भंग करूं तब राजा ने स्वयम्बर रचा अर सब राजपुत्र बुलाये अर सबन को यह लिखी जो राजा बेध बन्धि सो कन्या को वरे।।22।। यह बात सुन द्रोपदी रूप ग्रह के बस भये कर्ण दुर्योधनादि सब ही राजा द्रुपद की माकन्दी नामा नगरी आये सो राजाओं का समूह भेला भया एक सुरेंद्रवर्द्धन नामा विद्याधर उसने अपनी पुत्री के वर ढूंढने के अर्थ गांडीव नामा धनुष मेल्या जो यह धनुष चढ़ावे सो मेरी पुत्री का वर अर यह धनुष चढ़ाय राधा वेध बींधवे को समर्थ होय सो द्रोपदी का पति।।25।।

यह घोषणा सुन कर द्रोण अर दुर्योधनादिक धनुष के निकट आये सो वह धनुष देवाधिष्ठित वह कोऊ देख न सके स्पर्श न कर सके सो चढ़ावना कहां।।17।। तब द्रोपदी का पति होणहार जो अर्जुन तिन आय कर धनुष देखा अर स्पर्श किया जैसे पतिव्रता पति के वश होय तैसे धनुष की फिड़चि अर्जुन के वश भई।।18।। तब अर्जुन धनुष चढ़ाया सो फिड़च के चढ़ाने का ऐसा शब्द भया जिसकर

कर्ण दुर्योधन द्रोणादिकन के कान बधिर समान हो गये उस शब्द कर अर शब्द सुनने में नहीं आया जिस समय अर्जुन ने गांडीव नामा धनुष चढ़ाया उस समय द्रोण करण दुर्योधनादिकों के जीव में यह शंका उपजी जो यह कहा अर्जुन ही है, मरकर फिर उपजा अर धनुषधारी के यह विद्या कहां! धन्य इसकी दृष्टि धन्य इसकी मुष्टि धन्य इसकी सुष्टता।।31।। धनुष चढ़ाय वह कुंती का पुत्र वेधविद्या विषे प्रवीण निशाणा वेधता गया।।33।। सब राजनि देखा जो यह कार्य याही से बने जब यह कार्य भया। तब द्रोपदी इसके सुन्दर कंठ विषे अपने कर कमल कर वरमाला डारी। सो वरमाला डालते समय माला का तार टूट गया सो माला के पुष्प चपल पवन कर पांचों भाइयों पर आ पड़े तब मूढ लोग कहते भये इसने पांचों वरे वह महा सती अर्जुन की स्त्री अर्जुन को वर कर फूली बेल समान सोहती भई।।36।। फिर अर्जुन सब राजाओं के देखते द्रोपदी को माता के निकट ले गया।।37।।

तब सब राजा युद्ध के अभिलाषी भये सो द्रुपद ने मने किये तो भी न मानी अर युद्ध को उद्यमी भये तब भीम अर्जुन अर धृष्टद्युम्न यह तीनों धनुषधारी तिन उनको आगे न आवने दिये।।39।। अर धृष्टद्युम्न द्रोपदी का भाई अर्जुन सहित रथ में बैठा था सो अर्जुन को कही अब तुम भीष्म अर द्रोण से आपा प्रकट करो तब अर्जुन ने अपने नाम का पत्र लिखकर बाण के बांध द्रोण की ओर भेजा सो वहां बाण द्रोण की गोद में पड़ा। पत्र में अपना सब संबन्ध लिखा था सो वह पत्र।।40।। द्रोण की गोद में से उठाय अश्वत्थामा अर भीष्म अर विदुर ने बांचा सो पत्र बांचकर सब वृत्तांत जान परम प्रमोद को प्राप्त भये। द्रुपद के कुटुम्ब में द्रोणादिक के अति सुख भया शंख आदि वादित्रन की ध्वनि भई पांडुवों को द्रोण अर भीष्म अर विदुर से मिलाप भया तब सबों ने दुर्योधन को लायकर उनको अर इनको एकत्रित किया यह पांचों भाई अर वे दुर्योधनादि 100 द्रौपदी के विवाह में मिले।

जैसे दीवट स्नेह कहिये तेल उसके भार कर भरी अधिक उद्योत करे तैसे द्रोपदी परम स्नेह की भरी पाणिग्रहण के योग कर अर्जुन ने बरी अधिक दीपती भई।।44।। द्रोपदी अर अर्जुन का विवाह मंगल देख कर सकल राजा अपने अपने नगर गये अर दुर्योधनादि भी पांडवन को लेकर हस्तनापुर आये।।45।। आधे-आधे राज्य के विभाग कर यह पूर्व रीति हस्तनापुर में तिष्ठे।।46।। अपने नगर आये जो युधिष्ठर की मांग थी वह मंगायकर युधिष्ठर परणी अर भीमसेन की मांग थी वह मंगायकर भीमसेन परणा सो दोनों भाई परण कर सुख से हस्तिनापुर में तिष्ठे अर द्रोपदी अर्जुन की स्त्री सो युधिष्ठर अर भीम यह दोनों अर्जुन से बड़े सो इनके छोटे भाई की बहू पुत्र की वधू पुत्री ही गिनिये। नकुल अर सहदेव यह अर्जुन से छोटे सो इनकी द्रोपदी भावज सो माता समान गिनिये।।48।। इन चारों भाइयों के तो द्रोपदी विषे पुत्री अर माता की बुद्धी अर द्रोपदी के दो ज्येष्ठ सो स्वसुर समान अर पिता समान अर दो देवर सो पुत्र समान अर अर्जुन पति अर यह पतिव्रता नारी।।49।।

यह पांचों पांडव शुद्ध अर द्रोपदी शुद्ध जिनका यह विपरीत कथन करे हैं तिनके पाप के निवारने को कौन समर्थ।।50।। जो परजीव में सच्चा भी दूषण होय अर कोई प्रकाशे तो पाप का कारण है अर जो वृथा परदोष भाषे है झूठा दूषण लगावे है तिनके पाप का कहा पूछना।।51।। जो जीव छोटे भी मनुष्यन का सांचहु दोष कहे हैं वे भी कुगतिगामी हैं अर लोक निंद्य हैं, भले पुरुष परदोष न भाषें अर जो कोई स्त्री की सांची निन्दा होती होय तो भी सत्पुरुष मौन गहें अर औरन को मने करें सो स्त्री चरित्र की कहा चर्चा चुप रहो।।52।। अर जो महापुरुषन के झूठे दोष पापी कहे हैं तिनकी जिह्वा के सौ खण्ड क्यों न होंय।।53।। वह कथा करनी जामें वक्ता अर श्रोता के पाप का बंध न होय अर कुगति के फल न भोगें सो धर्मकथा इस लोक अर परलोक के कल्याण के अर्थ जानो।।54।।

जैसे पुण्यमयी कथा वक्ता अर श्रोता को कल्याण के अर्थी होय है तैसे पापमय कथा वक्ता अर श्रोता को विपरीत फल का कारण होय है ऐसा जान अहो भव्य जीव हो! मल के भरे असत्य वचन तिनको तजो अर निष्पाप दयामई जे सत्य वचन तिनको भजो। कैसे हैं निष्पाप सत्य वचन, अपना निर्मल यश उसे प्रगट करे हैं अर गुणन को बढ़ावे हैं दोषन को जीते हैं अर सर्वज्ञ देव कर भया है प्रकाश जिनका।।56।। इन जीवन के पूर्व भव के भले आचरण का फल भली बुद्धि अर महा पुरुषार्थ अर बुरे आचरण का फल कुबुद्धि अर हीन पराक्रम अर जहां जाये तहां अपमान होय इसलिये प्राणियों के शुभ आचरण ही शरण हैं।।57।। या लोक विषे यह जिन आगम समान दुःख रूप अग्नि की शिखा तेहि भया ज्येष्ठ मास का आताप उसके निवारणे को मेघ के आगम समान है या जिन आगम विषे भाषी जो व्रतन की विधि सो यह प्राणी करो सो व्रतन की विधि नाना प्रकार के लाभ रूप निधि को धरे हैं अर फिर कैसी है व्रतन की विधि, शास्त्रन के वेत्तान कर करी है।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ कुरुवंशोत्पत्तिपांडवधृतराष्ट्राणां संयोग-द्रोपदीलाभवर्णनो नाम पंचचत्वारिंशः सर्गः।।45।।

हे नृप! यह संसार असार है। अर इस जीव के कौन कौन माता पिता न भये? जगत के सब ही सम्बन्ध झूठे हैं एक धर्म ही का सम्बन्ध सत्य है। इसलिये विवेकिनिकूं धर्म ही का यत्न करना, जिसकरि संसार के दुखनिसूं छूटैं। समस्त कर्म महानिंद्य, दुःख की वृद्धि के कारण, तिनकूं तजकरि जैन का भाषा तपकरि अनेक सूर्य की कांति कूं जीत साधु शिवपुर कहिये मुक्ति तहां जाय हैं। – पद्मपुराण भाषा वचनिका, पृष्ठ 674

छियालीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – हस्तिनापुर विषे गिरिहुते थिर जो पांडव सब कर मानने योग्य महा भोगी पुरुष जिनका सुख से काल व्यतीत होय।।1।। निरन्तर परम विभूति कर वर्द्धमान जो यह पांचों भाई सो इनकी विभूति देखकर वह सौ फिर मर्य्यादा उलंघवे को उद्यति भये तब सकुनि नामा दुर्योधन का मंत्री उसने दुर्योधन से कही जो युधिष्ठर भोला जीव है उसे कपट के पाशों कर द्यूत क्रीडा विषे जीतो सो दुर्योधन ने कपट के पाशों से द्यूत क्रीडाकर युधिष्ठर को जीता, सो जीतकर दुर्योधन अपने भाईन सहित इन पांचन में बड़ा जो युधिष्ठर उसे कहता भया – जो तुम बारह वर्ष का राज्य हारे सो तुम सब भाई यहां मत रहो।।3।। जहां तुम्हारा नाम न सुनिये तहां जाओ। हे युधिष्ठर! जो तुम सत्यवादी हो तो बारह वर्ष प्रछन्न रहो।।4।। ऐसा दुर्योधन ने कहा, तब यह धर्मात्मा सकल सामग्री तज चारों भाइन सहित बारह वर्ष की अवधि कर नगर से निकले जब पांचों भाई निकले तब द्रोपदी भी प्रेम की भरी अर्जुन के पीछे चली जैसे चांदनी चन्द्रमा के साथ ही रहे तैसे यह भी अर्जुन के साथ चली। पांडवन ने विचारी अपने कृष्ण का आश्रय है सो उन्हीं पै चले।।6।।

यह पांचों भाई महाधीर नर कुंजर गमन कर कालांजना नाम बनी तहां गये।।7।। सो असरो द्वीप नामा नगर से आय कर सुतार नामा विद्याधर कुसुमावली नामा अपनी स्त्री उसके सहित वन में रमें। यह सुतार नामा विद्याधर प्रकीर्णक नामा विद्याधर का पुत्र अर इसकी माता का नाम आसुरी सो वन में सावर नामा विद्या कर भील का भेष किये कामनी सहित क्रीड़ा करे। अर कामनी भी भीलनी का भेष किये सो उस विद्याधर को अर्जुन ने जानी यह भी महा धनुषधारी है अर उसने अर्जुन को देखकर जाना यह महा बाण बली है।।10।। सो परस्पर तत्काल इन दोनों के महा युद्ध भया दिव्य जे बाण जिन कर दशों दिशा आच्छादित होय गई फिर वह दोनों बाहुयुद्ध करने को उद्यत हुए सो महावली अर्जुन ने उस बलवान विद्याधर के उरस्थल विषे एक मुष्टि प्रहार किया सो एक ही मुष्टि से वह भूमि में गिर पड़ा अर आप दयालु चित्त से खड़े होय रहे।।12।। उसकी कुसुमावलि नामा स्त्री ने पति की भीख मांगी तब उसे भीख दई। सो नमस्कार कर विजयार्द्धगिर की दक्षिण श्रेणि विषे गया।।13।।

अर यह धीरे चले चले मेघ दल नामा नगर गये तहां राजा सिंह ताके कनकमेखला नामा रानी।।14।। अर तिनके पुत्री कनकावति सो अत्यन्त रूपवान महा सुन्दर अर उसी नगर में एक मेघ नामा वणिक उसके अल्का नामा स्त्री जिसके लक्ष्मीकांता नामा पुत्री सो राजकन्या अर सेठ की कन्या सो यह दोनों कन्या निमित्तज्ञानी के कहने से इनको माता ने भीमसेन को देनी विचारी थी सो

भीमसेन भेष पलट भिक्षा के अर्थ उनके पास गया सो पुण्य के योग कर भीख में यह दोनों कन्या ही मिलीं।।16।। तहां कई एक दिन सुख से विश्राम कर यह पुरुष प्रधान कौशल नामा देश गये वहां भी सुख से कैएक दिन रह रामगिर नामा पर्वत गये तहां राम लक्ष्मण के कराये जिनेंद्र के चैत्यालय चांद सूर्य समान दैदीप्यमान सैंकड़ों रतनमयी अकृत्रिम चैत्यालय सारिखे सुन्दर जे श्रीरामचन्द्र कराये तिनकी शोभा को कहा कहना जहां निरन्तर नाना देश के अनेक भव्य जन आवें अर वन्दना करें सो पांडव के पुत्र वहां पूजा कर प्रभु की स्तुति करते भये। पर्वत विषे लतामंडप महामनोज्ञ ता विषे अर्जुन द्रोपदी सहित क्रीड़ा करता भया। जैसे श्रीराम सीता सहित रमे।।21।। इस भांति स्व इच्छा विहार कर यह पुरुषोत्तम सुख से ग्यारह वर्ष पूर्ण करते भये। किसी के जानने में नहीं आये जो यह पांडव हैं अर इनके सुख में अन्तर न पडा। कैसे हैं यह पांचों भाई, धन्य है अर मान्य है चेष्टा जिनकी।

अथानन्तर – एक विराट नामा नगर जहां विराट जिसकी सुदर्शना नामा स्त्री।।23।। तहां यह पांडव अपना आपा छिपाय रहे। युधिष्ठर तो पंडित होयकर रहा, अर भीम रसोइदार होय कर रहा। अर अर्जुन नृत्यकाली होय रहा अर नकुल सहदेव अश्वों के सालहोत्री होयकर रहे अर द्रोपदी मालन होयकर रही। यह राजा विराट के सन्मान योग्य होयकर रहे।।24।। यथा योग्य अपने विनोद कर यह सुख से काल व्यतीत करें प्रमाद रहित है मन जिनका।।25।।

अथानन्तर – एक चूलिका नामा नगरी तहां चूलिक नामा राजा उसके विंकचा नामा रानी फूले कमल समान है मुख जिसका उसके सौ पुत्र।।26।। तिनमें बड़ा कीचक सौ भाइयों में बड़ा के अर दुयाचार्यों में बड़ा जाके रूपमद यौवनमद चातुर्य्यता का मद अर शूरवीरता का मद अर द्रव्य का मद एते मदों कर उन्मत्त।।27।। सो राजा विराट की रानी सुदर्शना कीचक की बहन सो यह बहन से मिलने के अर्थ विराटपुर आया। उसने द्रोपदी देखी सो देखकर कामासक्त भया पापी यह न जाने जो यह महा सती है।।28।। कैसी है द्रोपदी, महा सुगन्धित है शरीर जिसका उसके तन की सुगंधता कर दशों दिशा सुगंधित होय रही। अर रूप लावण्य सौभाग्य गुणकर पूरित है शरीर जिसका।।29।। उसके दर्शन मात्र ही कीचक महा मानी था तौ भी उसका मन द्रोपदी से तनमई भया। दीनता के भाव को प्राप्त भया। उस पापी ने अनेक उपाय कर लोभ दिखाया अर अन्य भी राग के वचन कहे अर अरन हाथ कहाये सो इसके मन में कुछ भी न आई।।31।। वह महा सती जिसके परपुरुष तृण समान उस दुष्ट के आग्रह विशेष तब द्रोपदी उससे मिथ्या वार्ता कर उसे विश्वास उपजाय आय कर सब वृत्तांत अपने जेठ भीमसेन से कहा।।33।।

तब वह महा धीर रात्री समय द्रोपदी का भेष धर उस पापी ने जहां संकेत किया था तहां एकांत

www.vitragvani.com

विषे गया सो वह महा मदनातुर याहि द्रोपदी जान शीघ्र ही आया जैसे स्परश इन्द्री के विषे कर अंध गंध हस्ती खाड़े में पड़ने को आवे तैसे द्रोपदी जान भीम के निकट आया सो भीमसेन ने दोनों भुजाओं कर उसका कण्ठ ही पकड़ा।।34।। अर वाहे भूमि विषे पिछाड़ा अर पामन से मसला अर मुष्टि प्रहार कर हन्या जैसे गिर पर वज्र परे तैसे कीचक पर भीम की मुष्टी पड़ी। वह परदारा रत कामी कुशील का अभिलाषी उसे अन्याय फल दिखाय छोड़ दिया। जे दयावन्त उज्ज्वल चित्त हैं वह ऐसे पापी को भी न मारें सब जीवन पर दयालु चित्त जिनका।।36।।

वह कीचक पाप का फल प्रत्यक्ष देख विषय से विरक्त भया एक रतिवर्द्धन नामा मुनि तिनके समीप जाय कर मुनिव्रत आदरे, भावन की शुद्धता से वह शास्त्र का श्रद्धानी भया। अर बारह भावना कर शुद्ध रत्नत्रय का आराधन करता भया।।38।। अर कीचक के भाई सौ तिन कीचक को न देखा तब जानी इस द्रोपदी के कारण से हमारा भाई मारा गया सो हम द्रोपदी को अग्नि में जलावेंगे सो इसके जलाने को उन पापियों ने अग्नि प्रज्वलित करी सो भीमसेन यह वार्ता जान, वे सौ हू वाही अग्नि में भस्म किये।।40।। वह सौ हू महा उद्धत बलवान महा सुभट थे परन्तु अकेले भीम ने सब मारे जैसे एक सिंह अनेक गजन का प्रहार करे।।41।।

अथानन्तर – वह कीचक जो मुनि भया सो वन विषे पर्यंकासन धरे ध्यानारूढ तिष्टता था सो एक यक्ष ने देखा।।42।। तब यक्ष ने विचारी यह द्रोपदी पर आशिक भया था सो अब देखे इसके वैराग्य विषे कैसी दृढ़ता है सो मुनि के चित्त की परख के अर्थ यक्ष ने अर्ध रात्रि के समय द्रोपदी का रूप दिखाया मदन कर उन्माद रूप।।43।। सो साधु उसके शब्द सुनने को बधिर समान हो गये अर उसका रूप देखने को अंध समान होय गये रूप महा मनोहर अर बिलास का भरा परन्तु अंधा कहा देखे अर महा सुन्दर शब्द श्रृंगार रस के भरे परन्तु बधिर कहा सुनें।।44।। कैसे हैं कीचक नामा मुनि, वश किये हैं इन्द्रियन के समूह जिसने अर शुद्ध भया है मन जिसका। उसी समय कीचक नामा मुनि को केवलज्ञान उपजा तब यक्ष देव मुनि को नमस्कार कर क्षमा कराय पूछता भया – हे प्रभो! द्रोपदी से आपके मोह का कारण कहा? बिना कारण ऐसा मोह न उपजे।।45।।

तब कई एक पूर्व भव आपके अर द्रोपदी के यक्ष को कीचक यति कहते भये यक्ष नमस्कार कर हाथ जोड़ विनयवान हुवा सुनै है।।48।। मुनि कहे हैं – हे यक्ष! यह तरंगिनी नामा नदी जिसमें वेगवती नदी का मिलाप भया है सो तरंगिनी नामा नदी के क्षीर में महा दुष्ट क्षुद्र नामा मलेक्ष था सो महा पापी गरीब जीवों का वैरी।।49।। सो साधु के दर्शन से मैं शांत भया अर मरकर उत्तम मनुष्य भया तहां मेरा नाम कुमारदेव भया। अर धनदेव नामा मेरा पिता अर सुकुमारिका नामा मेरी माता सो वह पापिनी

आहार विषे मुनि को विष देय मारती भई सो मुनि हत्या के पाप कर नर्क विषे महा दुःख भोग तिर्यंच भई फिर नर्क को गई फिर तिर्यंच भई।

इस भांति अनेक जन्म नर्क अर तिर्यंच के लहे।।52।। अर मैं कुमारदेव नाम ताका पुत्र सो मलेच्छ से मर कर उत्तम कुल तो पाया परन्तु यती के तथा श्रावक के व्रत न धारे सो अव्रत के योग से अनेक भव विषे भ्रमण किया।।53।। फिर एक सित नामा तापस ताके मृगछृंगिनी नाम तापसनी तिनके मैं मधुनामा पुत्र भया सो तापसीन के आश्रम विषे वृद्धि को प्राप्त भया।।54।। फिर एक विनयदत्त नामा मुनि जिसको किसी महाभाग पुरुष ने आहार दान दिया ताके पंचाश्चर्य का अतिशय देखकर मैं मुनि भया फिर स्वर्गलोक गया तहां से चयकर कीचक भया।।55।। अर कुमारदेव की पर्याय विषे मेरी सुकुमारिका नामा माता चिरकाल संसार भ्रमण कर दुर्भंगा दुर्गंधा अनुमतिका नामा मनुष्यणी भई अर महा दुःख की भोक्ता सो आर्या के व्रत धार निदान सहित तप किया। उसके प्रभाव कर देवयोनि पाय द्रोपदी भई सो अनेक भव विषे यासे मेरे अनेक सम्बन्ध भये। काहू जन्म में यह माता भई कभी बहन भई कभी पुत्री भई कभी प्रिया भई, इसलिये मेरा इससे मोह भया। यह कथा कीचन ने यक्ष को कही।

सो गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहे हैं – हे श्रेणिक! इस संसार चक्र के परिभ्रमण विषे संयोग, वियोग अवश्य होय है माता मरकर बहन बेटी होय अर स्त्री मर माता होय बहन होय बेटी होय यह संसार चक्र का चरित्र है।।59।। ऐसी संसार चक्र की विचित्रता जान कर भव्यजीव वैराग्य को अंगीकार कर मोक्ष ही के अर्थ महा तप कर यत्न करो। कैसे हैं भव्य, संसार के कारण से निवृत्त भई है बुद्धि जिनकी इस संसार के इन्द्रादिक पद के महासुख भी तुच्छ भासे हैं, इत्यादि कीचक मुनि के वचन सुन कर यक्ष देव अपनी देवीन सहित सम्यक्त्व रूप रत्नाभरण कर आपको शोभित करता सन्ता गुरुओं को नमस्कार कर धीर्य्य कर संयुक्त अपने धाम गया।।61।। अर कीचक नामा मुनि देव मनुष्य अर विद्याधर तिनके समूह कर पूजनीक हैं चरण जिनके सो अंतर बाह्य तप कर महा धैर्य्य के धारी लोक विषे जिनमार्ग का प्रबल प्रकाश कर परम पद को प्राप्त भये। वह परम पद अविनश्वर है सो आत्मशुद्धता कर पाइये है।।63।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ कीचकनिर्वाणगमनवर्णनो नाम षट्चत्वारिंशः सर्गः।।46।।

सैंतालीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – कीचक के सौ भाइयों का वृत्तान्त सुन कर दुर्योधन मन में विचारता भया ऐसे कार्य पांडवन विना न होवें। बारह वर्ष में कैयक दिन घटे हैं सो जानिये, वे विराटपुर में हैं सो नगर के गौ महिषी आदि ग्रहण किये ये प्रगट होहिं। यह क्षत्रीन का विरद है कोई दुर्जन बालक तथा गऊ आदि पशून का ग्रहण करे उससे युद्ध करें, उनको छुड़ावें अथवा उने अर्थ अपना जीव देंय यह मन में विचार कर हस्तिनापुर से दुर्योधनादि सौ भाई विराटपुर आय गौ ग्रहण करते भये।

तब पांचों भाई उन पर चढ़े। बारह वर्ष की अवधि भी पूर्ण भई। जैसी भली नय दुर्नय के निवारने को उद्यमी होय तैसे पांडव उनके जीतने को उद्यमी भये। दुर्योधन से युद्ध के अर्थ पांचों प्रयाण करते भये। जैसे मुनि कर्मों के समूह से लड़ने को सावधान होय जैसे वर्षा विषे मेघ जल की धारा वरषे अर दशों दिशा को आच्छादित करें तैसे यह पांचों बाण वृष्टि कर दिशान को आच्छादित करते भये। गांधारी के सौऊ पुत्र दुर्योधनादिक इनका युद्ध देख कर अति प्रसन्न भये ऐसे योधा जगत् में नहीं।।5।।

तब दुर्योधन फिर एकता विचारता भया तब युधिष्ठर निर्मल बुद्धि महाधीर उनकी बात न मानी अर उन पर द्वेष भी न विचारता हुवा भीष्म द्रोण दुर्योधनादि सबन से क्षमा कराय माता कुंती सहित अर सकल भाइन सहित दक्षिण की दिश चले।।7।। सो मार्ग में विंध्याचल के वन विषे विदुर नामा मुनि तप करते थे, सो उनको युधिष्ठर सब भाईन सहित नमस्कार कर स्तुति करता भया।।8।। हे पूज्य! तिहारा जन्म कृतार्थ है सो सकल परिग्रह तजकर जिनेश्वर के मार्ग विषे महा तप करो हो। यह जिनभाषित मुनि का धर्म मोक्ष का मार्ग है या जिनधर्म विषे निर्मल सम्यक् दर्शन तत्त्वार्थ श्रद्धान लक्षण रूप अर सर्व अर्थ का प्रकाश करणहारा सम्यक् ज्ञान अर सर्व पाप रहित सम्यक् चारित्र सोहे है। पंच महाव्रत तीन गुप्ति पांच समिति पंच इन्द्रिन का निरोध अर कषायन का जीतना अर संयम का धारना या जैन मार्ग विषे है। उस विषे प्रवर्ते तुम सारिखे साधु शीघ्र ही सिद्ध पद पावे हैं।।11।।

इस भांति जिनमार्ग की अर साधुन की स्तुति कर बहुरि मुनि को बंदि पांडु के पुत्र माता अर द्रोपदी सहित द्वारका गये।।12।। सर्व भाइन सहित राजा युधिष्ठर को आये जान यादव सन्मुख गये अर नगरविषे महा उछाल भया। बहन अर भाणजों का आगमन भया अर चिरकाल में आये सो समुद्रविजयादि दशों भाइन के परम आनन्द भया अर प्रथम ही पांडव श्री नेमिनाथ का दर्शन कर फिर समुद्रविजयादि अपने मामान से मिल बलदेव वासुदेव आदि दशों भाइयों के पुर महा सुन्दर तिनसे मिले अर मांहें सब अन्तःपुर की रानी नानी मामी आदि तिनसे मिले अर द्वारका नगरी की रचना देख अति प्रसन्न भये।।14।। अर इनके दर्शन कर सबन को आनन्द भया अर सज्जनों का मिलाप सुख का कारण है।

अथानन्तर – कृष्ण ने पांचों भाइन को रत्नमय पंच मंदिर रहने को दिये जिनमें सर्व भोग सामग्री। तिन विषे यह पांचों भाई निवास करते भये।

अथानन्तर – समुद्रविजयादि दशों भाई इनको अपनी पांच पुत्री परनावते भये सो युधिष्ठर तो लक्ष्मीमति परने अर भीम सेखवती परने अर अर्जुन सुभद्रा परने अर नकुल विजया परने अर सहदेव रति परने।।18।। देवनि सारिखे वे पांचों भाई देवांगना समान यह इष्ट कन्या तिनको परन कर इन सहित सुख से रमे।।19।। यह पांडवन की कथा हे श्रेणिक! तोहि संक्षेप रूप कही। अब कृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न का चरित्र तोहि कहूं हूं, सो सुन।।20।।

एक विजयार्द्ध गिर विषे मेघकूट नामा नगर में कालसंवर नामा राजा के घर प्रद्युम्न सकल कला अर गुण तिन कर वृद्धि को प्राप्त भया। जैसे चन्द्रमा बड़ता थका समुद्र की वृद्धि करे है तैसे प्रद्युम्न कुमार बढ़ता थका बंधु वर्ग की वृद्धि करता भया।।21।। विद्याधरों की उचित जे विद्या आकाशगमनादि सो विद्याधरों के पुत्र सहित सीखता भया। शीघ्र ही इस महा उद्यमी को सकल विद्या सिद्ध भईं।।21।। बाल्यावस्था ही से लेकर इसके रूप लावण्य सौभाग्य पुरुषार्थ की वृद्धि भई, सो अपने रूप लावण्यता कर नर-नारियों का मन हरता भया उसके गुण छिपे नाहीं।

अथानन्तर – कुमार यौवन को प्राप्त भया सर्व शस्त्र विद्या विषे प्रवीण सो यह कुमार अपने गुणन कर नारीन का मन हरता सबन का बल्लभ भया।

भावार्थ – जो काहू का कुछ हरे सो अभावणा लगे है अर यह मन हरताहू बल्लभ भया।।24।। एते नाम कह लोक इसका यश कहते भये – मन्मथ, मदन, काम, कामदेव, मनोभव, अनंगसुन्दर, अंग इत्यादि अनेक नाम इसके प्रसिद्ध भये।

अथानन्तर – एक सिंहरथ नामा राजा सो राजा कालसम्बर से परांगमुख उस पर राजा ने अपने पांच सौ पुत्र विदा किये थे। सो उनको उसने जीता तब राजा को उसके जीतने की चिंता भई। तब प्रद्युम्न राजा से विदा होय उस पर गये। सो उसे पकड़कर कालसंवर पर ले आये, अर कालसंवर को दिखाया जो यह शत्रु तिहारे पांयन आया है यह पुत्र का पराक्रम राजा देख कर अति प्रसन्न भया। अर मन में जानी इस पुत्र के प्रताप कर मैं दोनों श्रेणि का अधिपति होय चुका जो दोनों श्रेणी में गर्ववंत होयगा। उसे यह जीतने समर्थ है। महाराज्य पद है उदार फल जिसका ऐसा पुहुप समान युवराज पद सो राज्य याहि दिया अर इसके सिर पट्ट बंधा, सो प्रद्युम्न का प्रताप देख पांच सौ भाई कालसंवर राजा के पुत्र सर्वथा प्रकार इसका नाश चिंतवते भये सो वह छल ढूंढने विषे तत्पर आसन विषे सज्या विषे वस्त्र तांबूल विष अथवा खान पान विषे घात किया चाहें सो काहू ठौर याहि छल न सके।।29।।

वे मायाचारी अर यह निःकपट महा विनयवान इसके सबसे हित सो वह इसे सिद्धायतन नामा द्वार तहां ले गये।।30।।

अर इन सबने कही जो शीघ्र ही इस द्वार पर चढ़े सो यहां के निवासी देव से विद्या का भंडार अर मुकुट पावे।।31।। सो यह वहां गये अर उस देव ने वही वस्तु भेंट करी। फिर उनके कहे से महा काल नामा गुफा में गये तहां के निवासी देव ने खड्ग, खेट, छत्र, चमर भेंट किये। फिर नाग गुफा में गये तहां के देव ने सिंहासन अर नागसय्या अर विद्या रूप जे देवी तिनको प्रसन्न करनहारी बीन भेंट करी।।33।। फिर एक विषम वापिका तहां प्रद्युम्न गया। सो वहां के देव ने युद्ध किया सो युद्ध विषे उसे जीता सो उसने मगर के चिह्न की ध्वजा भेंट करी। अर अनेक वस्तु दई फिर अग्निकुण्ड विषे प्रवेश कर अग्नि को मथी, तहां का देव दास होय युगल वस्त्र भेंट करता भया।।34।।

फिर मीढ़ा के आकार दोय गिर तिन विषे प्रद्युम्न प्रवेश किया सो दोनों कुण्डल अर मुकुट अर अमृत माला अति उज्ज्वल तहां के मर्कट नामा देवता ने भेंट करी। फिर कपित्थ नामा वन में गये सो वहां के देव ने विद्यामयी हस्ती दिया अर बल्मीक नामा वन विषे गये तहां के देव ने क्षुद्रघंट का अर बकतर अर मुद्रिकादि आभूषण दिये।।36।। अर सरावना नामा पर्वत विषे गये। वहां के देव से कटि सूत्र हार अर कड़े अर केयूर अर कंठाभरण एती वस्तु को प्राप्ति भई। फिर सूकर नामा असुर ता थकी दिव्य शंख अर धनुष इनकी प्राप्ति भई अर एक मनोवेग नामा विद्याधर सो काहू शत्रु ने कीला था। उसे प्रद्युम्नकुमार ने छुड़ाया ता थकी मोतियों का हार अर इंद्रजाल की प्राप्ति भई।।39।। अर मनोवेग का शत्रु एक वसन्त नामा विद्याधर ताथकी कन्या अर नरेंद्र जाल अर पुष्प धनुष इतनी वस्तु की प्राप्ति भई अर भवनाधिप नामा देव ने प्रद्युम्न को पांच बाण दिये। तिनके नाम – उन्मादकर मोहकर संतापकर मदकर सोककर।।40।। फिर प्रद्युम्नकुमार एक नाग गुफा है तहां गये सो उसका अधिष्ठाता पार्थिव नामा देव ने चन्दन की अर अगर की माला अर पुष्पन का छत्र अर पुष्पशय्या इतनी वस्तु भेंट करी।।41।।

फिर दुर्जन नामा वन जा विषे एक जयंता नामा गिर उस विषे वायुनामा विद्याधर उसके सरस्वती नामा स्त्री उसकी रति नामा पुत्री सो प्रद्युम्न कामदेव परन्या।।42।। यही सोलह स्थानक विघ्न के कारण तिन विषे प्रद्युम्न अनेक लाभ लेकर निकस्या सौ इसके लाभ देखकर वह पांच सौ भाई अचरज को प्राप्त भये ते संवरादिक पांच सौ कालसंवर के पुत्र प्रद्युम्नकुमार के पुण्य का माहात्म्य जानकर इसकी अति प्रशंसा करते भये अर इसके साथ अपने नगर आये।।44।। पाया है देवोपुनीत दिव्य रथ जाने अर जुपे हैं महाउज्ज्वल वृषभ जिसके उस पर आरूढ अर देवोपुनीत पुष्पों का धनुष

जिसके हाथ में अर पांच बाण देवोपुनीत अर छत्र ध्वजा अर दिव्य आभरण यह सब देवोपुनीत तिनको धरे प्रद्युम्न काम के बाण कर स्त्रियों का मन वेधता, अर सब नगर का मन हरता मेघकूट नगर में आया सैकड़ों राजकुमार हैं संग जिसके।।46।। सो आय कर कालसंवर पिता को प्रणाम करता भया सो राजा देख कर अति हर्षित भया अर जानी इसी छब से यह माता पै जाय तो वह भी अति प्रसन्न होय तब याहे आज्ञा करी – हे पुत्र! तू अपनी जननी के निकट जावहू। तब यह पिता की आज्ञा से उसी छबि से माता पर आया।।47।। सो नेत्र को पक्ष्य समान महा मनोहर अद्भुत आभूषण पहरे अनुपम है रूप जिसका सो दूर ही से रथ ऊपर चढ़े प्रद्युम्न कुमार को देखकर कनकमाला के कुछ अर ही भाव होय गये।।48।।

फिर यह महा विनयवान रथ से उतर कर कनकमाला के पांयन पड़ा, तब इसकी अति प्रशंसा कर गोदी में लिया अर इसका मस्तक चूंबा अर अपने कोमल कर पल्लव कर इसका अंग स्पर्शा।।49।। फिर महा मोह के उदय उसका मन परबस होय गया सो हृदय रूप भूमि का विषे खोट मनोरथ प्रवर्ते।।50।। उसका मन विकार ने खेंचा सो मन में चिंतवे है जो स्त्री एक बार भी सेज विषे अपने अंगकर इसके अंग स्पर्शे है सो धन्य है अर उसी का जन्म सफल है। इस संसार विषे एक वही स्त्री स्त्री कहने मात्र है।।51।। रूप लावण्य सौभाग्य चतुराई आदि अनेक गुण इस प्रद्युम्न में हैं, सो एक क्षणमात्र भी इस कामदेव का मिलाप मोहे होय तो इस समान दुर्लभ पदार्थ नहीं।

इस भांति प्रवर्त्या है असंभाव्य संकल्प जिसके उसे प्रणामकर प्रद्युम्न अपने घर आया वह विद्याधरी प्रद्युम्न के मिलाप के लाभ का है मनोरथ जिसके सब क्रिया भूल गई। न खान न पान न स्नान न संस्कार सब ही विसर गई। तब उसके शरीर की असमाधानी जान प्रद्युम्न देखने गये। सो उसका तन कमलनी के पत्र समान कोमल मुरझाया देखा अर उसके देह की दाह कर पुष्प अर पल्लवन की सेज कुमलाई देखी तब उसे शरीर की असमाधि का कारण पूछा। तब उसके अंग की चेष्टा कर उसके मन की विपरीतता जानी तब कर्मों की चेष्टा को निंद्यकर उसे माता अर पुत्र का संबंध कहने को तत्पर भये।।57।।

तब उसने आदि मध्य अर अंत तक सब कथा कही। तोहि उद्यान विषे पाया अर महारूपवान जान बढ़ाया सो इसी अर्थ जो यह यौवनवान होयगा तब हमारे मनोरथ पूरेगा सो इस कारण मेरे यत्न किये अर आकाशगामिनी विद्या का तुझे लाभ भया।।58।। यह वार्ता उसके मुख की सुनकर यह जिनमंदिर विषे सागरचन्द्र नामा मुनि थे तिन पै गया। उनका दर्शन प्रणाम कर अपने पूर्व भव पूछे। तब स्वामी सब कहे अर कनकमाला पूर्वभव विषे चंद्राभा थी अर यह राजा मधु था सो सब वृत्तान्त मुनि ने प्रद्युम्नकुमार को कहा।।60।।

अर मुनि कही गौरी अर प्रज्ञप्ती विद्या भी वह देगी यह वार्ता सुन यह धर्मात्मा शील ही है धन जिसके सो उसके पास गया सो वह देखकर हर्षित भई। अर इससे कही – हे मदन! तू सुन जो तेरी इच्छा है गौरी अर प्रज्ञप्ति विद्या लेहु।।62।। तब याने कही इच्छा है कृपाकर भिक्षा देवोगे तो मैं लूंगा। यह कथा कही, तब दुराचारनी विधिपूर्वक यह दोनों विद्या प्रद्युम्नकुमार को देती भई। तब इसने हाथ पसार विद्या ली। अर वह हर्षित होय कुछ अर भावना करती भई तब वाहि कही तुम मेरी प्राणदाता तातें माता अर विद्या के दान से मेरी गुरु।।64।। इस भांति कह नमस्कार कर आगे खड़ा अर नया है मुकुट जिसका अर जोडी हैं आंजुली जाने नमस्कार कर अपने स्थान को गया।।65।। तब वाने जानी इसने मुझे छली सो महा क्रोध के बस से वक्षस्थल अर कुच नखों कर विलूरे।।66।। अर अपने धनी को अंग दिखाया अर कही प्रद्युम्न की यह चेष्टा देखो। मैं तो तुमको उस ही दिन कही थी जो यह पराया पूत अपना कैसे होयगा? सो तुम न मानी अब यह चरित्र देखिये मेरा शील मैं नीठ राखा है।।67।।

यह वार्ता त्रिया की सुनकर वह विवेकहीन एकांत विषे अपने पांच सौ पुत्रों को आज्ञा करता भया जो प्रद्युम्न दुराचारी है इसे शीघ्र ही मारो। तब वे पापी पिता की आज्ञा पाय प्रसन्न भये अर इसे आदर सहित कालांबू नामा वापिका में ले गये।।69।। वहां जायकर प्रद्युम्नकुमार से कहते भये – जो आपां इस वापी विषे जल क्रीडा करें। यह विचार पहिली वापिका में यह पडे पीछे आपां पांच सौ इस पर पडे अर मारने की है इच्छा जिनके तब प्रज्ञप्ती विद्या ने इसके कान में कही – यह शत्रु हैं इनसे सावधान रहना जैसी उनके मन में थी तैसी विद्यादेवी ने कही। तब यह आप तो अंतर्ध्यान होय वापिका के तीर बैठा अर अपना माया मई शरीर बनाय वापिका में प्रवेश कराया। वे जाने वापिका में प्रद्युम्न पडा तब पांच सौ भाई निर्दई वज्रपात की नाई इसके ऊपर एके साथ पड़े।।72।।

सो मारने की इच्छा जिनकी सो कुमार तो वापिका के तीर ही थे इनको दुष्ट जान सबके नीचे मुख अर ऊपर पांव कर वापिका विषे लटकाये अर वापिका ऊपर एक अजूह सिला मेली जो वह निकल न सके अर चार सौ निन्यानवे को तो या भांति टेरे अर एक पंचचूड नामा उनका भाई ताहि न लटकाया अर वाहि पिता के निकट पठाया जो वाने जाय सब वृत्तान्त कहा सो सुन कर राजा अति क्रोधायमान हुवा अर आप बखतर पहर सकल शस्त्र बांध समस्त सेना सहित कालसंवर प्रद्युम्न कुमार पर आया तब प्रद्युम्नकुमार ने विद्या के प्रभाव कर मायामई सेना रची सो महायुद्ध भया। कितनीक देर में कालसंवर भागा सो घर जाय कनकमाला पर गौरी अर प्रज्ञप्ति विद्या मांगी जो वह विद्या देहु जो शत्रु का निपात करें। तब वह पापिनी कहती भई – जो वे दोनों विद्या तो मैं बा दुराचारी को बाल्यावस्था में ही दी।।76।।

तब उसने जानी यह स्त्री दुराचारिणी है। इसने पुत्र भी मेरे से खोया अर विद्या भी मेरे से खोई – ऐसा जान वह महा मानी पाछा जाय कुमार से युद्ध करता भया। तब कुमार ने इसको बांधा।।77।। ताही समय नारद आये सो महा प्रवीण तब प्रद्युम्न उठ कर नमस्कार किया अर बहुत स्तुति करी। नारद ने सब संबंध कहा अर कही – तू वेग चल। यह वृत्तान्त सुन प्रद्युम्न नारद की लार ही द्वारका जायवे को उद्यमी भया।

ताही समय कालसंवर को बंधन से छोड़ा अर क्षमा कराई पांयन पड़ा बारंबार नमस्कार कर कहता भया – तुम मेरे पिता हो मैं तिहारा बालक हूं मेरा अपराध क्षमा करो। फिर माता कनकमाला पै जायकर क्षमा कराई जो पूर्व कर्म के वश कर जीवन के अनेक अपराध उपजे हैं सो मैं तुम्हारा पुत्र हूं मेरे दोष क्षमा करो।।79।। अर वे चार सौ निन्यानवे भाई वापिका में गिरे थे तिनके छुड़ावने का उपाय कोई नहीं जानता था सो कुमार सब उपाय का वेत्ता उनको छोड़ कर बहुत क्षमा कराई। उनसे भाईपने का बहुत स्नेह जनाया।।80।।

फिर कालसंवर से आज्ञा मांगी जो पुत्र तो मैं तिहारा हूं परन्तु कृष्ण रुक्मणी के मेरे देखने की बहुत अभिलाषा है सो तुम आज्ञा करो तो मैं मिल आऊं।।81।। अर इसी भांति माता कनक माला से कही अर माता पिता को प्रसन्न कर बारम्बार प्रणाम कर उनकी आज्ञा पाय नारद के साथ विमान पर आरूढ होय आकाश के मार्ग द्वारका की ओर चले।।82।। सो मार्ग में नाना प्रकार कथा करते चले जायं। हस्तिनापुर का राजा दुर्योधन ताकी पुत्री को कृष्ण के पुत्र को परणावने अर्थ लावते थे। सो उसके लार बड़ी सेना थी सो मार्ग विषे वनी के मध्य वह सेना प्रद्युम्न ने देखी तब नारद से पूछा – हे पूज्य! यह सेना कौन की पश्चिम दिशा की ओर किस अर्थ जाय है या भांति कामदेव पूछी, तब नारद ने कही – हे प्रद्युम्न! यह कथा मैं तोहि संक्षेप मात्र कहूं हूं।।85।।

एक कुरुवंश का आभूषण राजा दुर्योधन युद्ध विषे शत्रुन कर न जीता जाय सो हस्तिनापुर विषे राज करे है।।86।। ताने यह प्रतिज्ञा करी थी जो रुक्मणी अर सत्यभामा दोनोंन के गर्भ हैं सो कृष्ण के बड़ा पुत्र होय ताहि मैं अपनी पुत्री परणाऊं सो भये तो दोनों के साथ सो तेरी बधाई कृष्ण पै पहिले गई सो तुझे बड़ा ठहराया पीछे सत्यभामा के बधाई बारे गये।।88।। अर धूमकेतु नामा असुर जाय था सो रुक्मणी के मंदिर पर उसका विमान अटका तब ताहि शत्रु जान वह ले गया। तब रुक्मणी खेद खिन्न भई अर सत्यभामा हर्षित भई।।89।। सो तेरे पाइवे की वार्ता तो दुर्योधन जाने नहीं इसलिये अपनी उदधिकुमारी नामा पुत्री भानुकुमार के अर्थ भेजी है अर यह मांग तो तेरी है। बड़ा पुत्र तो तू है सो यह बड़े राजा की पुत्री है इसलिये रक्षा के निमित्त बड़ी सेना लार है।।91।।

यह वार्ता सुन कर नारद को आकाश विषे थाप कर कुमार पृथिवी विषे उतरा सो महा विकराल भील का रूप धर मार्ग रोक कर सेना के अधिकारियों को कही जो कृष्ण ने इस वन की जगापति हमको दी है सो तुम देकर जावो। तब कइयों ने कही इसे घेर देहु अर कइयों ने कही अपने कहा कमी है। यह अर्थी है यह कुछ ले जाहु। तब इसको पूछी – तुम कहा मांगो हो? तब भील कही जो सेना विषे सार वस्तु है सो लूंगा। तब किसी ने कही सब में सार तो कन्या है तब यह बोला जो सार है सो देवो। तब उनने कही तू कन्या मांगे सो तू कृष्ण का पुत्र नाहीं। तब याने कही हम कृष्ण ही के पुत्र हैं। तब सेना में समझदार पुरुष थे उनने कही यह बैडा है याहि घेर देहु। तब धनुष की अणी कर योहि सावंतन डराया अर वे चलने को उद्यमी भये।।96।। तब प्रद्युम्न ने माया मई भीलों की सेना रची ताकर दुर्योधन की सेना जीति अर कन्या को लेकर नारद के निकट आय बैठे अर कन्या को अपना दिव्य रूप दिखाया सो कन्या कामदेव का रूप देख मोहित भई। अर भय रहित तिष्ठी अर नारद ने कन्या को सर्व वृत्तान्त कहे जो तू इसकी मांग है। यह कृष्ण का बड़ा पुत्र है तब वह महा प्रसन्न होय विश्राम को प्राप्त भई।।98।।

अथानन्तर – महा शीघ्रगामी जो विमान तापर चढ़े कुमार नारद सहित द्वारका आये। कैसी है द्वारका, मनोहर है द्वार जाका।।99।। सो प्रद्युम्न दूर ही से द्वारका को देखकर आश्चर्य को प्राप्त भये समुद्र ही है कोट जिसके अर गोपुर कहिये दरवाजे अर बुरज तिनकर शोभित है।।100।। अर नगर के बाहर भानुकुमार को देखा अश्वनि का अभ्यास करे अर नाना प्रकार के अश्व खरीदे सो विमान बैठे प्रद्युम्न ने देखा तब विमान से उतर एक महा मनोहर मायामई तुरंग रचा अर आप वृद्ध को रूप धर अश्वनि के व्यापारी भये अर अश्व को भानुकुमार के निकट ले गये। सो वह अश्व पर आरूढ़ भया अर अश्व महा मनोहर।।2।। सो भानुकुमार ने अश्व को दौड़ाया सो अश्व भानुकुमार के वश न रहा, अपनी इच्छा कर पाछा वृद्ध के निकट आया।।3।।

तब भानुकुमार तुरंग से उतर वृद्ध को कहा – तुरंग बद लगाम है चढ़ने योग्य नहीं, तब वृद्ध हँसा कही तुम राजकुमार तुरंग की असवारी न जानो। देखहु मैं वृद्ध हूं जो कोई मोहि चढ़ाय दे तो मैं तुमको अश्व के गुण दिखाऊं तब याहि अश्व पर चढ़ाया सो अश्व को भली भांति नचाय दौड़ाया अश्व के गुण दिखाये अर उतर कर कुंवर की ताली देकर बहुत हास्य करी। कुंवर बहुत खिसाना पड़ा फिर वृद्ध का रूप दूर कर माया मई मर्कट अर माया मई तुरंग बनाये तिन कर सत्यभामा का उपवन विध्वंस किया। फिर सत्यभामा की वापिका आये सो माया कर वापी निर्जल करी अर मांखी मांछर डांस तिन कर विरूप करी अर नाना प्रकार की क्रीड़ा कर लोगन को आश्चर्य्य उपजा अर मीडान के युद्ध कर

कृष्ण का पिता वसुदेव ताहू से क्रीडा करी।।8।। फिर सत्यभामा के घर नगर के लोग न्योते थे सो माया कर लड़ाये ऐसी माया कर जो वे परस्पर दृष्टि मुष्टि आदिकर भिडे अर उठ गये वह आहार सब आप अकेला भोजन कर गया। फिर बमन कर सत्यभामा का सब मंदिर मलीन किया।।9।।

यह क्रीड़ा कर फिर मायामई क्षुल्लक का भेष कर माता रुक्मणी के घर गया सो कृष्ण के खायने के सब लाडू खा गया अर माता को आश्चर्य्य उपजाया फिर माता के सिर के केश लेने को सत्यभामा की नायण आई सो माया कर उन ही के सिर के केश मूंडे तब वे सत्यभामा पर गई सो सत्यभामा उनका वृत्तांत देख बलदेव पर पुकारी तब बलदेव रुक्मणी के कृष्ण की हिमायत जान इसके तिरस्कार करने को आप ही रुक्मणी के घर आये सो प्रद्युम्न वृद्ध का रूप कर रुक्मणी की पौली में पसरा सो बलभद्र टांग पकड घसीटने लगे सो टांग बधती चली गई।

तब बलदेव जानी यह देव माया है तब ये उठ गये इत्यादि अनेक चरित्र लोगन को अचरज के उपजावन हारे प्रद्युम्न उपजाये सो कहां तक कहे।।11।। अर प्रद्युम्न के आगम के चिह्न जो सीमंधर स्वामी नारद को कहते थे सो सब भये। रुक्मणी के कुच कलस दूध से भर गये अर झरने लगे अर जितने चिह्न कहे थे सो सब भये। तब माता ने जानी सोलह वर्ष होय चुके सो मेरा पुत्र यहां रूप पलट आया है।।13।। ताही समय प्रद्युम्न कुमार संपूर्ण माया संकोच अपना निज रूप प्रकट कर माता को प्रणाम करता भया।।14।।

तब माता आनन्द की भरी पुत्र को उर से लगाय समस्त दुःख विस्मरण करती भई। अर तत्काल माता के हर्ष के आंसू पड़े सो आंसू न पड़े मानो सब दुःख शरीर के निकस गये अर पुत्र के दर्शन रूप अमृत कर सींचा रुक्मणी का शरीर मानो रोमांच के मिस कर स्नेह के अंकूरे ही धारता भया।।16।। फिर माता के अर पुत्र के परस्पर कुशल का पूछना भया अर माता पुत्र के चित्त कूं आनन्द के दायक वचन कहती भई – हे पुत्र! धन्य है वह कनकमाला विद्याधरी जाने तेरी बालक्रीड़ा के सुख देखे।।18।। तब पुत्र प्रणाम कर माता से कहता भया। हे माता! मैं तोहि सर्व बालक्रीड़ा दिखाऊं तू देख। यह वचन पुत्र ने माता से कहे। कैसा है पुत्र, जिसे देखे नेत्रन कों आनन्द उपजे।।19।। उसी समय तत्काल का जाया बालक होय गया फिर एक दिन का हो गया अर नाना प्रकार के विनोद दिखाये फिर अंगूठा चूंखने लगा अर फूले हैं नेत्र कमल जाके।।20।।

फिर दूध चूंखणा होय माता के आंचल चूंखने लगा फिर उर कर चलने लगा, फिर थड़ी करने लगा फिर माता की आंगुरी पकड़ मणिन के आंगन में चलने लगा फिर रज में लोट माता के कंठ लगा। फिर तोतला बोलने लगा। जाके सुने आनन्द उपजे फिर रोने लगा हंसने लगा। बारम्बार मुलके

इत्यादि मनोहर बालक्रीड़ा कर माता के मनोर्थ पूर्ण किये अर कही जिस समय तू कहे जैसा ही होय जाऊं तब माता अति प्रसन्न भई।

फिर सोलह वर्ष का कुमार हो गया अर माता को नमस्कार कर कही – मैं कहूं सो करो। माता को उठाय कर आकाश में ले गये। यादव की सभा के ऊपर जाय कहता भया अहो यादव भूपति हो! तुम सर्व देखो हो अर तुम्हारे देखते मैं लक्ष्मी समान कृष्ण की प्रिया रुक्मणी को ले जाऊं हूं। तुम राखने समर्थ हो तो राखो ऐसा कह शंख बजाया रुक्मणी को नारद अर उदधि सुन्दरी के निकट विमान में थाप आप युद्ध के अर्थ तिष्ठा। तब सब यादव युद्ध के अर्थ द्वारका से निकले चतुरंग सेना सहित अर सर्व आयुध ही हैं आभूषण जिनके सो प्रद्युम्न ने अपनी विद्या के बल कर सब यादवन की सेना मूर्छित करी अर आप हरि से चिरकाल युद्ध किया सो कृष्ण के सर्वशस्त्र पुत्र ने विफल कर डारे तब कृष्ण बाहू युद्ध करने को उद्यमी भये अर प्रद्युम्न भी उद्यमी भया।।30।।

तब नारद विमान से नीचे उतर कर दोनों योधाओं को युद्ध से निवारे अर पिता पुत्र का संबंध प्रकट किया।।31।। तब प्रद्युम्न ने प्रणाम किया अर कृष्ण ने पुत्र को उर से लगाय आनन्द के अश्रुपात कर नेत्र भर आये।।32।। अर कृष्ण बहुत असीस दीनी। प्रद्युम्न ने माया कर यादवन की सेना मूर्छित करी थी सो उठाई सब यादव प्रद्युम्न को देखकर अति प्रसन्न भये अर प्रद्युम्न सब बांधव लोकों सहित द्वारावती में प्रवेश करता भया।।33।। रुक्मणी अर जांमवन्ती यह दोनों पुत्र के आगमन का अति उछाह करतीं भईं इन दोनों का एक चित्त है प्रद्युम्न पर दोनों विशेष हित है।।34।।

अथानन्तर – सब ही काकी बड़िया माईन का है मान्य जिसके ऐसे प्रद्युम्न सो श्रेष्ठ राजकन्याओं से विवाह के आरंभ विषे कृष्ण रुक्मिणी को कह कर कालसंवर अर कनकमाला को बुलावता भया सो इसके विवाह विषे मेघकूटपुर से कालसंवर अर कनकमाला दोनों आये प्रद्युम्न का उदधि सुन्दरी आदि अनेक कन्याओं से विवाह भया। विवाह विषे जे माता पिता के करने के कार्य्य हैं सो सब प्रद्युम्न के कहेतैं कृष्ण अर रुक्मिणी ने कालसंवर कनकमाला से कराये अर उनको कही इस प्रद्युम्न के माता पिता तुम ही हो अर तिहारा ही पुत्र है। इस भांति उनसे बहुत हित जनायो अर प्रद्युम्न अनेक राजकन्या परण पूर्वोपार्जित पुण्य के प्रभावकर अद्भुत सुख भोगता भया। जिनेंद्र का उत्तम मार्ग उस कर उपज्या है निर्मल भाव जिसके।।36।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ कुरुवंशनिरूपण–प्रद्युम्नमातापितासमागमवर्णनो नाम सप्तचत्वारिंशः सर्ग।।47।।

अड़तालीसवाँ सर्ग

अथानन्तर – संबुकुमार की अर सुभानुकुमार की उत्पत्ति कही है सो सुनहु। गौतम कहे हैं – हे श्रेणिक! यह कथा चित्त की हरणहारी है।।1।। राजा मधु का छोटा भाई कैटभ सोलहवें स्वर्ग देव था उसकी आयु वहां व्यतीत भई सो उसने केवली को पूछा – मैं कहां उपजूंगा? तब केवली कही – तू कृष्ण का पुत्र होयगा अर तेरा बड़ा भाई भी उन ही के उपजा है सो वह देव कृष्ण पै आय महा मनोहर हार देता भया। यह हार तुम जिस रानी को दोगे उसके मेरा जन्म होयगा। सो कृष्ण के जीव में यह जो मैं यह हार सतभामा को दूं अर यह उसके पुत्र होय सो यह वार्ता रुक्मिणी सुनी अर पुत्र को कही जो यह पुत्र जांबुवंती के होय। तब प्रद्युम्न मायाकर जांबुवंती को सत्यभामा का रूप कर कृष्ण पै पठाई सो कृष्ण जांबुवंती को सत्यभामा जान वह हार दिया सो वह सोलहवें स्वर्ग का देव जांबुवंती के गर्भ विषे आया। फिर सत्यभामा भी गई।

तब बाहू को निकट बुलाई उसके कोई अर देव गर्भ में आया। यह दोनों गर्भवती भईं ज्यों ज्यों उनके गर्भ बढ़े त्यों त्यों माता पिता अर सब कुटुम्ब को आनन्द बढ़ता भया। जैसे चन्द्रमा की वृद्धि विषे समुद्र की कलोल वृद्धि को प्राप्त होय। जब नव मास संपूर्ण भये तब जांबुवंती के वह देव पुत्र भया जिसका संबुकुमार नाम धरा अर सत्यभामा के पुत्र भया जिसका नाम सुभानुकुमार, भानुकुमार से छोटा। रुक्मिणी अर जांबुवंती यह दोनों प्रद्युम्नकुमार अर संबुकुमार कर हर्षित भई अर सत्यभामा भानुकुमार अर सुभानुकुमार इन दोनों पुत्रन कर अति प्रमोद रूप भई।।8।। अर हरि की स्त्रीन विषे पुत्र भये सो सर्व यादवन के हृदय को आनन्द के करणहारे महा सत्यवादी पराक्रमी यश के धारी होते भये।।9।। संबुकुमार अर सुभानुकुमार यह दोनों समान वय नाना प्रकार की क्रीड़ा करें सो सब क्रीड़ाओं में संबुकुमार जीते। संबुकुमार महा पराक्रमी देवन की न्याईं क्रीड़ा करें।।11।।

अथानन्तर – रुक्मिणी प्रद्युम्न के अर्थ अपने भाई रुक्म कुंवर की पुत्री जांची सो वाने न दई। वह बहन को न चाहे पूर्वला विरोध तब माता की आज्ञा से प्रद्युम्न अर संबुकुमार यह दोनों भील का भेष धर तहां गये अर रुक्म कुंवर की कन्या हरी वह छुड़ायवे आया तब वाहि जीत कन्या को ले आये सो वह कन्या साक्षात् लक्ष्मी समान ताहि परण कर कृष्ण का पुत्र द्वारका विषे अद्भुत भोगन कर रमें।।14।। अर संबुकुमार एक दिन सुभानुकुमार को द्युतक्रीड़ा में जीता अर ताही समय जीत का सकल धन याचकन को दिया। फिर जो जो क्रीड़ा होय तामें संबुकुमार जीते, पंखीन को क्रीड़ा मीढान की क्रीड़ा हिरणन की क्रीड़ा सुगन्ध की परख राग की परख अर तुरंग आदि सबकी क्रीड़ा विषे संबुकुमार ही जीते कृष्ण की सभा विषे संबुकुमार की जीत की प्रशंसा होय। एक दिन युगल वस्त्र

संबुकुमार ने आंगन में धोयकर पहने अर दिव्य अलंकार रचना विषे संबुकुमार जीता।।17।। संबुकुमार का बल देख कृष्ण अति प्रसन्न भये। संबुकुमार को कही – तू वर मांगा। तब वाने एक महीने का राज मांगा हरि ने दिया। सो एक महीने का राज पाय संबुकुमार अन्याय मार्ग विषे प्रवर्त्या।।18।।

तब केशव ने पकड़ उसे नगर बाहर निकाला सो प्रद्युम्न की माया कर कन्या का भेष धर वन विषे रहे। अद्‌भुत कन्या वनी अर सत्यभामा वन में गई थी सो याका रूप देख चकित होय गई याहि पूछी – तू कौन है? तब याने कही – मैं विद्याधर की पुत्री हूं तब सत्यभामा याहि रथ में चढ़ाय नगर में ले आई।।19।। सुभानुकुमार के परणायवे की है इच्छा जाके सो संबुकुमार नगर में आय सत्यभामा अपने पुत्र के अर्थ जे बड़े बड़े राजाओं की पुत्री आई हुई थीं ते बलात्कार परन्या अर अपना रूप संबुकुमार प्रगट दिखाया। एक ही रात्रि विषे सैकड़ों कन्या परण कर माता को सुख उपजाया।।21।। ता पीछे सत्यभामा आदि कृष्ण की सब रानीन के सैकड़ा कुमार सैकड़ा राजपुत्री परने अर इन्द्र समान क्रीड़ा करते भये।।22।।

एक दिन संबुकुमार कृष्ण के पिता जो वसुदेव तिनके निकट जाय विनोद की वार्ता कहता भया। पितामह से प्रणाम कर पोता कहता भया – हे पूज्य! तुम तो चिरकाल बहुत परिभ्रमण कर विद्याधरों की पुत्री ब्याही अर मैं तो बिना खेद ही अपने घर में बैठे एक रात्रि में सौ परनी सो तुम में मोमें बड़ा अंतर।।25।। तब वसुदेव कही हे वत्स! तू तो बाण की न्याई पराया प्रेरा चले है अर चलाया भी गृह में आय पडे है। सो तोमें अर हममें बड़ा अंतर। हम तो विजयार्द्ध गिर रूप सागर के मगर मच्छ अर तू द्वारका रूप कूप मींडक वृथा ही आपको पराक्रमी माने है।।27।। जे हम विद्याधरन के पुर विषे देखी सुनी अर अनुभवी सो औरन को दुर्लभ ऐसे वसुदेव ने कहा। तब संबुकुमार कहता भया – हे पूज्य! जो जो चरित्र तुमने देखे अर किये अर अनुभवे ते सब सुनने की मेरी इच्छा है आप कृपा कर मोसे कहो।।29।।

तब वसुदेव ने कही आनन्द भेरी दिवाय अर सब भाइन को भेले कर यादवों के समीप मैं मेरा चरित्र कहूंगा। तब संबुकुमार ने सब यादव एकत्र किये तिनके समीप वसुदेव अपना सब वृत्तांत कहता भया।।31।। प्रथम ही वसुदेव ने लोक अर अलोक का स्वरूप कहा फिर हरिवंश की उत्पत्ति अर ता विषे यदुवंश का प्रगट होना तामें राजा अन्धकवृष्टि के दश पुत्र दशार्हन तिनमें बड़े समुद्रविजय अर छोटा मैं। सो सौर्य्यपुर के लोगन के कहने से मेरा गमन भया। सो सौ वर्ष में बड़े भाई से मिला विजयार्द्ध गिर के अपने सब चरित्र कहे अर बलदेव वासुदेव की उत्पत्ति कही अर श्रीनेमिजिन का जन्म अर प्रद्युम्न संबुकुमार की उत्पत्ति पर्यंत सब कथा कही।।33।। जा समय वसुदेव निज कथा कही ता समय सब ही यादव अर सबकी रानी समुद्रविजयादि सब भाई अर भाइन की रानी अर वसुदेव की

सब रानी विद्याधरी सब सुन कर अति हर्षित भईं। सब विद्याधरीन को अपने अपने सब चरित्र स्मरण भये।।34।।

सभा में बाल वृद्ध तरुण स्त्री-पुरुष सब थे। यदुवंशी अर पांडव यह सब कथा रूप अमृत रस का पान कर वसुदेव की प्रशंसा करते भये। माता शिवदेवी आदि सब ही रानी रुचि कर वसुदेव की कथा सुन याके सौभाग्य की प्रशंसा करती भई। राजा तो अपने स्थान को गए अर रानी अपने अपने स्थान को गई बड़े बड़े विश्वास भाजन करे हैं रक्षा जिनकी।

भावार्थ – राजलोक की रक्षा या भांति है। बड़ी बड़ी समझदार स्त्रीं उन पर रहे हैं। अर बुद्धिमान् खोजानि का प्रवेश है अर डोढ़ के दरोगा बड़े इतवारी पुरुष हैं।।37।। वसुदेव की कथा पुरानी पडी थी सो दिन दिन घर घर विषे प्रवर्तती मानो नवीन कथा है। आश्चर्यमय वसुदेव की कथा सबन को अनुराग रूप होती भई।।38।।

फिर राजा श्रेणिक नमस्कार कर गौतम स्वामी से पूछते भये – हे प्रभो! इन यादवन के कुमार का कथन मोहे कहो, द्वारका विषे कितने कुमार क्रीड़ा करते भये।।39।।

तब गौतम गणधर कहे हैं – हे श्रेणिक! तू सून।

राजा उग्रसेन के पुत्र धर अर गुणधर युक्तिक दुर्द्धर सागरचन्द्र अर उग्रसेन का काका सांतन ताके पुत्र महासेन सिवी अस्वस्त विशद अनन्तमित्र।।41।। अर महासेन का पुत्र सुखेण हृदिक विषमित्र अर सिवी का पुत्र सत्यक अर हृदिक का पुत्र कृतिधर्मा द्रढधर्मा अर सत्य का पुत्र वज्रधर्म अर वज्रधर्म का पुत्र असंग।।42।। अर समुद्रविजय के पुत्र महासत्य दृढनेम अरिष्ट। नेमिरथ नमि सुनेमि जयसेन महीजय, सफल गुनेज सेनमयमेघ सिवनन्द चित्रक अर गोतमादिक।।45।। अर समुद्रविजय ते छोटा अक्षोभित ताका पुत्र उद्वद बच्छल क्षुभित वारिधि। अंभोधि जलधि कामदेव दृढ़व्रत।।45।। अर तीजा भाई स्तिमितिसागर ताके पांच पुत्र – उर्मिमाल वसुमान वीर पाताल स्थिर।।47।। अर चौथा भाई हिमवत ताके तीन पुत्र- विद्युत्प्रभ, माल्यवान, गंधमादन। ये सब ही सत्यवादी अर महा पराक्रमी।।48।। अर पांचवां भाई विजय ताके छः पुत्र –अकंपन, बलियुगंत, केसरी, धीमान, अलंपुष।।49।। अर छठा भाई अचल ताके सात पुत्र – महेंद्र मलय सहयगिरि सैंलगन अचल आदि यह हैं नाम जिनके।।50।। अर सातवां भाई धारण ताके पांच पुत्र – वासुकीय, धनंजय, कर्कोटिक, सतमुख, विश्वरूप।।51।।

अर आठवां भाई धारण ताके चार पुत्र- दुःखकूर, दर्दशी, दुर्द्धर, दुर्मुख। यह चारों अति चतुर।।52।। अर नवमा भाई अभिचन्द्र ताके छः पुत्र चन्द्रमा समान है उज्ज्वल कीर्ति जिनकी तिनके

नाम – चन्द्र, शशांक, चन्द्रमा वा शशी, सोम, अमृत, प्रभ।।53।। अर दशवां भाई वसुदेव ताके पुत्र बहुत अर सबही महा बलवान तिनमें कई एकन के नाम कहूँ हूं सो हे श्रेणिक! तू सुन। रानी विजयसेना ताके पुत्र दो– अक्रूर, अर क्रूर। अर स्याया के पुत्र दो, एक ज्वलन दूसरा अनिलवेग। अर गंधर्व सेना के पुत्र तीन, मानो तीन लोक ही हैं। एक वायुवेग, दूसरा अमितगति तीजा माहेंद्रगिर। अर पद्मावती के पुत्र तीन– दारु, वृधार्थ अर दारुक।।56।। अर नीलयशा के पुत्र दोय महा धीर। एक सिंह, दूजा मतंगज। अर सोमश्री के पुत्र दोय– एक नारद, दूजा मरुदेव।

अर मितश्री के पुत्र सुमित, कपिल, कपिलात्मज अर दूजीं पद्मावती के पुत्र दोय, एक पद्म अर दूजा पद्मक अर अश्वसेना का पुत्र एक– अश्वसेन अर प्रोढा का पुत्र पौंड्र। अर रत्नावली के पुत्र दोय– एक रत्नगर्भ दूजा सुगर्भ।।59।। अर सोमदत्त की पुत्री ताके पुत्र दोय– एक चंद्रकांत, दूजा शशुप्रभ अर वेगवती के पुत्र दोय। एक वेगवान, दूजा वायुतेज।।60।। अर मदनवेगा के पुत्र तीन – दृढमुष्टि अनावृष्टि, हिममुष्टि। यह तीनों भाई कामदेव समान सुन्दर।।61।। अर बंधुमती के पुत्र दोय। बंधुषेण अर सिंहसेन अर प्रियंगुसुन्दरी का पुत्र एक सीलायुध।।62।। अर प्रभावती के पुत्र दोय। एक गांधार, दूजा पिंगल। अर जरा नामा रानी के पुत्र दोय – एक जरतकुमार, दूजा वाल्हीक।।63।। अर अवंती नामा रानी के सुत तीन – सुमुख, दुर्मुख, महारथ।

अर रोहणी नामा रानी के सुत तीन – बलदेव, सारण, अर विदुरथ यह तीन सुत अर बालचन्द्रा नामा रानी के सुत दोय। एक वज्रदंष्ट्र दूजा अमितप्रभ अर देवकी का सुत कृष्ण इत्यादि। वसुदेव के सुत कहे अर बलभद्र के सुत बहुत तिनमें कइ एक नाम उन्मुण्ड निषध प्रकृति द्रुति चारुदत्त, ध्रुवपीठ शक्रदमन श्रीधृतिनन्दन, धीमान, दशरथ, देवनन्द, निष्पात, विद्रुम, सन्तनु।।67।। पृथु, सतधनु, नरदेव, महाधनु, इत्यादि महा बलवान बलदेव के सुत पृथिवी में प्रसिद्ध होते भये।।68।।

अब कृष्ण के सुतन के नाम सुनिये – प्रथम, भानु, सुभानु, भीम, महाभानु, सुष्टभानु, बृहद्रथ, अगिनिशिख, विष्णुसंजय।।69।। अकंपन, महासेन, धीर, गंभीर, उदधि, गौतम, वसुधर्मा, प्रसेनजीत।।70।। सूर्य्य, चन्द्र, वर्मा, चारुकृष्ण, विश्रुत, सुचारु, देवदत्त, भरत, शंख।।71।। प्रद्युम्न, शंबू, इत्यादि केशव के सुत शस्त्र, शास्त्र विद्या के अभ्यासी युद्ध विषे प्रवीण होते भये।।72।। तिनके सुत पौत्र अर सब यादवन के कुमार अर भानजे अर भूवा के सुत सबही साढे तीन क्रोड गिनने में आये ते सबही कुमार यशवंत महा पराक्रमी अर कामदेव समान सुन्दर क्रीड़ा है प्रिय जिनको सो द्वारिका विषे नाना प्रकार की क्रीडा करें।।74।।

तिन कुमारों कर वह द्वारावती कैसी है, जैसी नागेन्द्र की पुरी नागकुमारों कर सोहे है। यह कुमार नाना प्रकार के भेष धरे, सुन्दर वस्त्र भूषण पहरे सुगन्ध कर मंडित प्रचंड है चरित्त जिनके सो हाथिन

पर चढ़े तुरंगन चढ़ें रथन चढ़ें अर नाना प्रकार के वाहन तिन पर चढ़ें महा योद्धा प्रजा को प्रमोद उपजावन हारे नगरी में प्रवेश करें अर निकसें तिनकर वह पुरी देवपुरी समान सोहती भई।।75।। बाहुल्लता कर वह यादवों के पुत्र स्वर्गलोक के चये वीतराग के मारग के आचरण हारे उदार हैं पुण्य का उदय जिनका। यह चरित्र इस ग्रन्थ विषे गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहा। तिन उत्तम कुमारों का चारित्र जे मनुष्य बुद्धिमान एकाग्र चित्त कर सुनें अर श्रद्धा करें तो इस लोक परलोक विषे सुख के भाजन होंय अर उनकी कुमार वय अर यौवन वय धर्म में व्यतीत होय, विषे वासना न उपजे।।76।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुरागसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ यदुकुलकुमारोद्देशवर्णनो नाम अष्टचत्वारिंशः सर्गः।।48।।

सीताजी का रामचन्द्रजी को संदेश

जैसैं हाथविषै आया रत्न समुद्रविषै डालिए तो बहुरि कौन उपायसूं हाथ आवै। अर अमृतफल अंधकूप में डास्या बहुरि कैसैं मिले? जैसैं अमृतफलकूं डाल बालक पश्चात्ताप करै तैसैं सम्यग्दर्शन से रहित हुवा जीव विषाद करै है। यह जगत दुर्निवार है, जगत का मुख बंद करवेकूं कौन समर्थ है? जाके मुख में जो आवै सो ही कहै। तातैं जगत की बात सुनकर जो योग्य होव सो करियो।

लोक गडरिया प्रवाह हैं सो अपने हृदयविषै हे गुणभूषण! लौकिक वार्ता न धरणी, अर दानकरि, प्रीति के योगकरि जनोकूं प्रसन्न राखना। अर विमल स्वभाव कर मित्रों कूं वश करना अर साधु तथा आर्यिका आहारकूं तिनकूं प्रासुक अन्नसूं अति भक्तिकर निरन्तर आहार देना। अर चतुर्विध संघ की सेवा करनी। मन वचन कायकरि मुनिकूं प्रणाम पूजन अर्चनादिकरि शुभ कर्म उपार्जना करना। अर क्रोधकूं क्षमाकरि, मानकूं निगर्वता करि, मायाकूं निष्कपटताकरि लोभकूं संतोषकरि जीतना। आप सर्व शास्त्रविषै प्रवीण हो सो हम तुमकूं उपदेश देनेकूं समर्थ नाहीं, क्योंकि हम स्त्रीजन हैं। आपकी कृपा के योगकरि कभी कोई परिहास्यकरि अविनय भरा वचन कहा हो तो क्षमा करियो।

– पद्मपुराण भाषावचनिका, पृष्ठ 606

उनचासवाँ सर्ग

अथानन्तर – मधुसूदन कहिये कृष्ण तिनकी बहन यशोदा की पुत्री जो इनकी एवज यशोदा के घर ल्याये थे अर देवकी के वृद्धि भई सो अब यौवन अवस्था को प्राप्त भई। उनका नख शिख वर्णन करे हैं – वह महा श्रेष्ठ चन्द्रमा समान निर्मल यश की धरणहारी विस्तरया है यौवन का प्रचुर जिसके ताहि धरे महा मनोहर गुण रूप आभूषण कर शोभित।।1।। कोमल हैं चरण कमल जिसके बिना ही महावर आरक्त है पगथली जिसकी अर समान है उन्नत भाग जिनका अर नख रूप मणिन के मंडल चन्द्रमा समान प्रकाश रूप तिन कर सुन्दर है अंगुली रूप पल्लव जिसके, जाके चरणों की उपमा को जगत में वस्तु नहीं अर लोक कमल की उपमा चरण को देहिं सो कमल कहा इसलिये कमल लज्जा कर मुद्रित होय।।2।। अर जिसके गूढ टकूर्णे अर मनोहर जानू अर अत्यन्त वर्तुलाकार रोम रहित अनुपम जंघा नितम्ब का भार सहिने में समर्थ जिनकी उपमा देने को कोई वस्तु नहीं।।3।। जिसकी दोनों जंघा अति कोमल वर्तुलाकार उज्ज्वल कान्ति अर दीप्ति को धरे शोभाकर पूर्ण हाथी का सूण्ड समान आकार को धरे लाठी समान गोल कदली समान कोमल लोक कहे हैं परन्तु सर्व उपमा को उल्लंघ करके सोहती भई।।4।।

फिर रसकर पूर्ण वर्ण रूप कुलाचलते उपजी आनन्द की उपजावनहारी पुण्य प्रकृति रूप नदी उसके पुल समान जघन स्थली जिसकी अर तट समान नितंब जिसके महा राजकुमार रूप जो राजहंस तिनकी हैं क्रीड़ा जहां ऐसी वह।।5।। सुन्दर स्त्रीन के मध्य अति सोहती भई तनु रूप वृक्ष ताके मध्य सूक्ष्म कोमल रोमन की पंक्ति सोई भई लता उसकर वह अति सुन्दर भासती भई मनोहर है छवि जिसकी अर मनुष्यों के नेत्रों को सुन्दर ऐसी निज नाभि की गम्भीरता उस कर वह अति सोहती भई अर त्रिवली की सुन्दरता कर वह सुन्दर स्त्रीन के मध्य विशेष सोहती भई अर उर विषे दैदीप्यमान सोलाबानी के सुवर्ण के कलश समान जे कुच तिनको धारती सोहती भई। कैसे हैं कुच, अतिशय स्याम है वीटली जिनकी। अर अति कठिन हैं गोल हैं पुष्ट हैं कुम्भ तो जलकर पूर्ण अर कुच पय ताकर पूर्ण, वे अमृत रस जो जल ताकर पूर्ण झरें अर ये अमृत रस कहिये पय ताकर झरें अर कनक के कलस जल के भरे राजान के पीवने योग्य तिन पर मुहर होय है अर इन पर श्याम वीटली है सोई मुहर है।।7।।

अर जाकी दोनों भुजलता सिरस के पुष्प समान मृदु अर मनोज्ञ हैं कांधे जिसके अर कर कमल की प्रभा को धरे अति रमणीक पाटल के पल्लव समान अरुण हथेली जिसकी अर कण्डीर के पुष्प

www.vitragvani.com

समान आरक्त हैं नख रूप पुष्प जिसके अर कठोरता रहित अति कोमल शंख समान कण्ठ जाका अर अति सुन्दर ठोडी अर कंदूरी के फल समान अरुण हैं अधर जाके अर हंसित मुख प्रसन्न है वदन जिसका अर दैदीप्यमान कपोल कान्ति को धरे अति निर्मल सोहते भये अर बक्र हैं भौंहें जिसकी अर मनोहर है ललाट जिसका अर कमल दल समान विस्तीर्ण कर्ण पर्यन्त कटाक्ष को धरे उज्ज्वलता अर श्यामता अर अरुणता को धरे विशाल नेत्र महा तीक्ष्ण तिन कर वह कन्या अति सोहती भई।।9।।

जाके मुख की उपमा न तो चन्द्रमा को न कमल को अर अति सुन्दर उज्ज्वल महा सघन दाडिम के कण समान सब समान मनोहर हैं दांत जाके। अर सिर विषे भ्रमर की श्यामता को उलंघे ऐसे श्याम दैदीप्यमान सुगन्ध सच्चिकण लंबायमान वक्र अद्भुत हैं केश जाके अर हाथ में पायन में हैं मुद्रिका जिसके अर कंकण नूपुर आदि चतुर दस आभरण तिनको शोभित करें ऐसा सुन्दर तनु जिसका दैदीप्यमान अंग जिसका उद्योत कर कोमल वस्त्र अर महा सुन्दर पुष्पमाला पहरे कनकते अति सुन्दर शरीर जिसका सो सब यादवन के बाल वृद्ध तिनके चित्त को बालक्रीड़ा कर हरे सब ही याकू लडावें सब यादवन कर पाई है प्रतिष्ठा जाने। सकल कला सकल गुणन के समूह यामें बसते भये यह साक्षात् सरस्वती समान सोहती भई।।11। या भांति या कन्या का सुख से काल व्यतीत होय एक दिन यह दर्पन विषे अपना मुख कमल देखती थी सो चिपटी नासिका देख लज्यावान हुई संसार के भोगनतें विरक्त भई।।12।।

एक दिन सुव्रता नामा आर्य्या नगर के वन विषे आई जिनके साथ आर्यकानि का समूह सो कन्या वसुदेव अर देवकी आदि गुरुजनों को पूछकर आर्यकानि के दर्शन को गई सो नमस्कार कर अपने पूर्व भव सुव्रता नामा आर्य्या को पूछती भई। आर्यका अवधिज्ञान कर संयुक्त है सो उसने इसके पूर्व भव कहे – हे पुत्री! तू पूर्व भव विषे सोरठ नामा देश विषे मूढबुद्धि पुरुष थी जो देश विषे किसी का भय नहीं अर तू पुरुष के शरीर विषे अति रूपवान अर धन कर पूर्ण जाहि किसी का अंकुश न था मद का भरा अन्ध था। जाके हृदय का ज्ञान नेत्रन का ज्ञान महा उन्मत्त था सो वह ही अन्ध एक दिन गाडा भरे जाय था अर मार्ग विषे वन में कोई एक महा मुनि मृतकासन धरे थे सो या मूर्ख ने कुछ न देखा सो मुनि के समीप होय कर गाड़ा काढा सो गाड़ा की रगड कर मुनि की नासिका मसली गई परन्तु वे मुनि महा धीर सो धीरता के योग कर उनके मन में कुछ भी खेद न भया।।15।।

जो कदाचित् किसी जीवन का बिना जाने भी घात होय तो जीव घात के पाप से नर्क विषे निपात होय अर मुनि के घात का कहा कहना? या जीव के उपार्जे कर्म याको दुखरूप फलै हैं जो एक बार भी किसी एक जीव का घात करे तो याका घात परबस अनेक बार होय अर जो एक बार भी किसी

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

के अवयव भंग करे तो अनेक बार याके अवयव भंग होंय यह जिनेश्वर की आज्ञा है। जैसा करे तैसा भोगे, जो वचन कर मन कर काय कर जीव को पीडा करे सो भव भव में पीडा पावे अर प्रभुता के मद कर किसी प्रकार पर जीव का अपमान करे अर कठोर वचन कहे ताका भव भव विषे अपमान होय जो पर जीवन को दुख देवे विषे चतुर होय सो चतुर गति विषे दुख ही भोगे ऐसा जान जो विवेकी जीव हैं तिनको परबाधा की निर्वृति ही करनी, जो राज्य पावे अर ऐश्वर्यता पावे तौ भी किसी का पराभव न करना। आपको अर पर को हित, सोही करना या संसार भ्रमण विषे भ्रमते जे प्राणी तिनके सदा प्रबलता ही नाहीं रहे है। कबहूक प्रबल से निबल होय जाय है अर कबहूक निबल से प्रबल होहि जाय है, जो दुष्ट प्रबल होय निबल को पीडा करे हैं जीवन को दुख दे हैं सो भव भव विषे दुखी होय हैं। इसलिये किसी भी प्राणी को दुख न देना अर जो दुष्ट मुनि को उपद्रव करें ताके पाप का कहा पूछना वह महा पापी अनंतकाल कुगति विषे भ्रमण करे हैं।

तू विना जाना प्रमाद कर गाडा चलाया फिर अति पश्चाताप किया अर मुनि से क्षमा कराई अर पाप का प्रायश्चित्त किया इसलिये नर्क न गई अर मनुष्य गति पाई परन्तु पाप के उदय कर स्त्री जन्म पाया अर नासिका मसली गई। यह आर्या के वचन सुन वह कन्या नमस्कार कर वाही आर्य्या के समीप व्रत धारती भई। समस्त कुटुम्ब से मोह तज घर का त्याग किया। समस्त वस्त्र तज एक श्वेत साड़ी राखी अर सिर के केशों का लौंच किया आभूषण सब तजे। अर अपने कर की उंगलियों कर केश उखाड़े सो मानो सब पाप ही उखाड़े। पाप भी श्याम केश भी श्याम सो यह आर्य्या परिग्रह तजती अर लौंच करती ऐसी सोही मानो अशुभ की नाशक ही है। वह आर्य्या सफेद वस्त्र धरे ऐसी सोहती भई मानो शरद की नदी है। नदी तो निर्मल जल की भरी है अर यह निर्मल भावन की भरी है।।23।।

समस्त यादवन करी है तप की महिमा जाकी अर याके वय विषे तप के भाव देख सब ही उत्तम जीवन के भाव भये। जो नव यौवन विषे तप धरे है सो धन्य है अर याहि देख सब लोक ऐसी जानते भये जो यह रति है या धृति है या सरस्वती है।।24।। व्रत गुण संयम उपवासादि तप कर वह दिन प्रति बढ़ती भई अर बारह भावना कर भाया है भाव जाने सो महा तप की करणहारी आर्यकान के संग में गुण संयुक्त वसे। आगम विषे लगाई है अपनी बुद्धि जाने सकल आर्यकाओं विषें है प्रशंसा जाकी।।25।।

इस भांति बहुत वर्ष तप करते व्यतीत भये। एक समय आर्यन सहित यह विंध्याचल पर्वत के वन विषे गई।।23।। अर अन्य भी संग यात्रा को जाय था सो रात्रि विषे तीक्ष्ण है शस्त्र जिनके अर कठोर है चित्त जिनका ऐसे वनचर कहिये भील तिन इसको देखी। यह प्रतिमा योग धर वन विषे तिष्ठती थी

सो भीलन जाना यह कोई वन देवता है सो इससे वरदान मांगते भये। वे मूर्ख ऐसी प्रार्थना करते भये – हे भगवती! हम तेरे प्रसाद से आज की दौड़ में धन पावें तो तेरी सेवा करें हम किंकर हैं। ऐसा मनोरथ कर वे पापी काहू पर दौडे सो मार्ग विषे माल लूट लिया। भीलन के हाथ द्रव्य बहुत आया सो उन मूढन जानी हमको देवी का वर भया। फिर वन में आये सो प्रतिमा योग धरे तिष्टती सो भील न देखी सो वह समाधि योग धर तिष्टती थी फिर वन विषे एक सिंह आया उसने आर्या भखी सो समाधि मरण कर स्वर्ग लोक को गई।।29।।

जे सज्जन पुरुष हैं ते दुष्ट के उपद्रव ते साहस न तजें वो सिंह के विकराल नख अर तीक्ष्ण डाढ अर विकट मुख तिनकी अणी कर विदारा गया है शरीर जिसका सो अर अंग तो सिंह भख गया अर तीन आंगुली बची, यह धर्म के प्रसाद कर स्वर्ग लोक गई।।30।। अर सिंह के भषने कर इसके शरीर का रुधिर गिरा ताकर पृथिवीतल आरक्त हो रहा था सो भीलों ने जानी यह वरदाता देवता रुधिर प्रिय है। अर इसकी रुधिर से रुचि है ऐसा विचार वे दुराचारी इसकी तीन आंगुली का त्रिशूल थाप इसे विन्धवासनी देवी जान।।32।। वन के महिष मार वा स्थल की पूजा करते भये। वह पापी किंरात महाहिंसक रुधिर मांस कर वलि देते भये। वह स्थानक इन दुष्ट मलीन वस्तु कर अपवित्र किया दुर्गंध किया जहां माखी भिण भिणाट करें। नेत्रन को विष समान वह स्थान किंरातन किया चहू ओर दुर्गंध महा अपवित्र दीखे। वह तो महा दयावान धर्म की आराधनहारी तप कर स्वर्ग गई। सब अपराध रहित जामें कुछ दोष नहीं अर दुष्ट भीलों ने खोटा मार्ग प्रगट किया सो यह भीलन का मार्ग जे नर्क के जानहारे मांस आहारी हैं तिन अंगीकार किया, अर भैंसा आदि पशु तिनको हणे हैं रुधिर पान करें है वह वधिक खोटी गति के जानहारे हैं जिनके हाथ में त्रिशूल महा रुद्र ध्यानी अभक्ष के भक्षण हारे अयोग्य पान करणहारे वे ही कुगति न जायं तो अर कौन जाय।

जे अनर्थी अवस्तु जे देवी ताहि देवत्व मानकर हिंसा करे हैं भीति मात्र विषे त्रिशूल का आकार बनाय जो पशु का घात करे हैं वे नर्क निगोद में पड़े हैं। जे सावन्त परस्पर संग्राम कर मरण मारण करे हैं तेऊ शास्त्र के अनुसार शान्त भाव रूप नाहीं कषाय रूप हैं तो दुर्बल के मारने की कहा बात? जे पापी वृथा दीन जीवन को मारै हैं ते करुणारहित पारधी महा घोर नर्क में पड़े। हिंसा समान अर अपराध नहीं अर दया समान कोई धर्म नहीं काहू का छता हू अपराध एकांत विषे अथवा सभा विषे कोई कहे सो पाप का बंध करे अर जो किसी का अनहोता दोष प्रगट करे सो तो नर्क गमन का कारण है ही, इसमें संदेह कहा। झूठ ही को मूर्ख लोक सत्य कर माने हैं जो विकथा का कथन करैं मांस का भक्षण करें महिषादिकों का रुधिर पान करें जिनके हाथ में त्रिशूल ते प्रत्यक्ष पापी हैं तिनमें विवेक काहे

का अर मद्य मांस रुधिर का आहार करें या समान विपरीत कहा। यह भी मूर्खन में ज्ञान नहीं, जैसे एक गाडरी कूप में पडे तो उसकी देखा देखी अनेक गाडरी कूप में पडें तैसे कोई मूढ़ कुदेवन का सेवनहारा अवस्तु रूप जे कुदेव तिनकी सेवा करें उनकी देखा देखी अनेक मूढ़जन कुदेवन की आराधना करें सो इस समान विपरीत कहा?

वीतराग देव का मार्ग परजीव की दया विषे तत्पर जो आराध्या थका जीवन को अविनश्वर पद देय। अर कहां परजीव की घात का निरूपण हारा अधर्म साक्षात् नर्क निगोद का कारण दुष्ट कुकवियों का प्ररूप्या सो इस कलिकाल विषे दुराचारी जीवों ने धर्म कर माना है।।37।। देखो देखो, इस कलिकाल के चरित्र प्रथम तो इस समय न्यायवान धर्मात्मा राजा ही नहीं अर कदाचित् कोई बड़ा राजा कभी राजा प्रजा के भाग्य कर न्यायवान होय दुष्ट लोकन से प्रजा की रक्षा करे। सोऊ कुकवियों का प्रेरा मिथ्या शास्त्र के योग से महिषा अर मींडा आदि पशु जीवन का घात कुदेवन के आराधन निमित्त करे, क्षत्रियों के कुल में दीन जीवन का निपात करें तो भीलादिक नीच कुल की कहा कथा? क्षत्रियों का कुल तो दीन बन्धु दीनानाथ है अर देखिये मूढ लोकन की मूढता जो काहू प्रकार कबहुक पूर्वोपार्जित कर्म्म के योग से कार्य की सिद्धि होय तो मूढ जन ऐसे माने जो देवता के वर से यह कार्य्य सिद्ध भया इसलिये मैं उनका आराधन करूं यह विचार आयुध कर जीवों को मार उनका रुधिर देवताओं को बलि दे हैं सो भव भव विषे दुःख भोगवे हैं। पापी जीवों के करुणा कहा अर करुणा बिना सुगति कहां।

जो पापी रुधिर ही दे तो अपने अंग का क्यों न दे अर अपना शिर छेद बलि क्यों न दे अर देवता तो मनसा आहारी है मांस आहारी नहीं, देवों के मन ही में क्षुदा उपजे है अर मन ही में विलाय जाय है।।39।। जे निर्दई देवन का छलकर पशुओं का घात करे हैं ते पारधी समान हैं अर इस जगत् विषे जो देवता ही वरदाता होय तो पूज्या थका प्रणम्या थका प्रसन्न किया थका काहू को राज्य देय धन सन्तानादि देय तो सब ही धनवान अर राजा हो जायं कोई निर्धन अर रंक न रहें सो जीवों का भला अर बुरा होना तो कर्माधीन है अर कोई के आधीन नहीं, वह कुदेव धनवन्तों पै दीप तैल बलि पुष्प इत्यादि वस्तुओं की याचना करे हैं ते तोहि धन सम्पदा कहां से देहिंगे, वे ही दीन पराई आस करें तो औरों की आस कैसे पूर्ण करें। देवता मोहि वर देंगे यह अभिलाषा करना जगतविषे बड़ी भूल है।।41।। इस संसारविषे एक जिन प्रतिमा टार अर प्रतिमा पूज्य नाहीं जो भव्य जीव द्रव्य कर भावकर परिणामन की शुद्धता से जिनप्रतिमा की पूजा करें सो मनोवांछित स्वर्ग मोक्ष फल पावें। यह जिनप्रतिमा कल्पबेल समान मनवांछित फल को फले है।।42।।

हिंसा करना अर करावना अर हिंसा की अनुमोदना करनी यह तीन अशुभ इन कर पाप का

आस्रव होय है ताकर दुर्गति का बन्ध होय है अर हिंसा कुगति का कारण है अर सर्व पाप का मूल है अर वीतराग का भाख्या जीव दया रूप धर्म जो किया थका अर कराया थका अर करते को भला जाना थका कल्याणकारी है उस कर शुभ का आस्रव होय है सो सुगति का कारण है।।43।। जो मन शुभ होय अर वचन सत्य होय अर काय कुचेष्टा से रहित होय सो ही पुन्य कहिये अर मन अशुभ अर असत्य वचन अर कुचेष्टा रूप काया यह ही अशुभ इन कर महा पाप बन्ध होय है सो पाप ही दुर्गति का कारण है।।44।। अज्ञान रूप तिमिर अति सघन अति दृढ़ सकल लोक विषे विस्तर्‌या है सो पवित्र बुद्धि रूप नेत्रों को मुद्रित करे है जिसकी कोई औषधी नाहीं इसलिये जो प्राणी तत्त्व को देखा चाहे सो अज्ञानतिमिर को दूर करे अर जो अतत्त्व विषे निरन्तर व्याकुल बुद्धि है सो तत्त्व को कैसे विलोक सके।।45।। जे अग्नि अर वायु को जल को भूमि को लता को वृक्ष को देव माने है सो भ्रम बुद्धि है उनमें धर्म नाहीं अर अपने घर में मृत्तिकादि कर देव कल्पे हैं ते बुद्धि से विमुख हैं अर चन्द्रमा अर सूर्य्य ग्रह तारा नक्षत्र यह गगन में विचरे हैं अर नेत्रों कर दीखे हैं तिनको जे देव माने हैं ते तो सब मूढदृष्टि हैं। देव तो परब्रह्म परमात्मा सिद्ध भगवान ही हैं अथवा निज आत्मा ही देव है अर कोई देव नहीं वस्तु का स्वरूप सदा अस्ति रूप नास्ति रूप है, नित्य है, अनित्य है, सामान्य है, विशेष है, निज पर को अनेकान्त रूप मानना सो ही कार्य्य की सिद्धि है द्रव्य में अर गुण में नाममात्र भेद है अर वस्तु अभेद है। यह स्याद्वाद ज्ञान का मूल है अर जे मिथ्या दृष्टि दृढ़ मूढता कर एक ही नय का पक्षपात करे हैं तिनको ज्ञान की प्राप्ति नहीं सो दीर्घ संसारी जानने।।47।।

ये ही नय परस्पर विवाद को लिये मिथ्या है अर यही परस्पर विरोध रहित सत्य है। जो दो नय का धारक सोई ज्ञानी अर एक नय का पक्षी सो अज्ञानी है। नैगम संग्रह व्यवहार यह सब नय प्रमाण का अंश है एक अंग का कथन सो नय अर सर्वांग कथन सो प्रमाण अर प्रमाण का निश्चय रूप जो वस्तु उस विषे सब नय सधे हैं।।48।। मुनि पति भगवान तिनका जो मार्ग उस विषे श्रद्धावान जे मोक्षाभिलाषी जीव पुरुषन के किये नवीन मार्ग तिनसे विमुख हैं तेई निर्वाण को पावे हैं। सिद्धन का जो अखंड अविनाशी सुख उसका है लाभ जहां वह परम धाम महा मनोहर है समस्त पदार्थ जहां भासै हैं। उदार हैं चरित्र जिनके तिन्हीं को वह धाम सुलभ है औरों को नाहीं।।49।। जे भव्यजीव सम्यक्त की शुद्धता कर युक्त हैं ते नाना प्रकार निरमल तप को अंगीकार करो सो तप, व्रत, गुण अर शील तिनकी शाल तिनकी राशि हैं। अर वे भव्य जीव जिनेन्द्र के गुणों के ग्रहण को अति अनुरागी हैं।।50।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ दुर्गोत्पत्तिवर्णनो नाम एकोनपंचाशः सर्गः समाप्तः।।49।।

पचासवाँ सर्ग

अथानन्तर – राजा श्रेणिक यादवों की वृद्धि सुनकर गौतम स्वामी को नमस्कार कर पूछता भया। कैसे हैं गौतम, वृद्धि को प्राप्त भये हैं श्रुतज्ञानरूप नेत्र जिनके।।1।।

राजा श्रेणिक पूछे हैं – हे प्रभो! जैसे समुद्र विषे मणियों की राशी होय सो मणियों की राशि कांतिकर संयुक्त होय तैसे यदुवंशी रूप समुद्र विषे अनेक पुरुष रत्नसमान गुणरूप किरणों के धारक होते भये ते सकल लोक विषे प्रसिद्ध महा योधा भये अर कृष्ण वासुदेव अनेक युद्ध विषे प्रगटे है पराक्रम जिसका सो पृथिवी विषे अति प्रसिद्ध भये सो इनकी प्रसिद्धता विषे जरासिंध के कहा विचार भया।।3।।

तब गणधर कहते भये – हे श्रेणिक! यह बलदेव अर वासुदेव दोनों भाई मनुष्यों में मुख्य सो इनके पराक्रम जरासिंध के श्रवण में आये तब जरासिंध अपने मुख्य मंत्री हैं तिनसे मंत्र करता भया – अहो मंत्री हो! तुम यह शत्रु अब तक क्यों ढीले छोड़े? यह शत्रु समुद्र विषे क्षणभंगुर तरंग की न्यांई वृद्धि को प्राप्त भये सो तुम मोहि क्यों नहीं कही यह कारण कहो। मंत्री हैं सो राजा के नेत्र हैं सब ओर की खबर मंत्री हलकारों कर मंगाय कर राजा से कहें अर मंत्री ही न कहें तो अर कौन कहे। मंत्री जो है राज्य के रक्षक हैं।।7।। मैं तो ऐश्वर्य के मदकर असावधान, मैं जानूं तो एते दिन शत्रु द्वारका में कैसे रहते तुम जानते हुए यह बात प्रगट क्यों न करी। अर जो तुम भी न जानी तो यह मंत्री पद कहा मैं तो तिहारे भरोसे। सेवक का यह धर्म नहीं जो स्वामी को शत्रु मित्रन की बात न कहे जो महा उद्यमकर राजा शत्रुन का उपाय न करे तो परिपाक विषे अति दुखदाई होय। जैसे रोग उपजा अर तत्काल यत्न न करे तो रोग बढा थका दुख को उपजावे। प्रथम तो यादवों ने मेरा जवाई कंस मारा फिर मेरा भाई अपराजित को मारा ऐसे अपराध कर समुद्र के शरण गये।

मेरे समुद्र के जीतने के अनेक उपाय हैं जो मैं समुद्र में प्रवेश न करूं अर देव विद्याधरों को आज्ञा न करूं तो भी जाल डाल मच्छी की तरह पकड़ लूं। जेते मैं उपाय न करूं तब तक मेरा शत्रु चाहे जहां रहे अर जो मैं क्रोध करूं तो समुद्र में कैसे रह सके? जब लग मेरे क्रोधरूप अग्नि प्रज्वलित न होय तब लग द्वारका में निर्भय रहें अर मैं उपाय कर मारा चाहूं तब कैसे निर्भय रहें। एते दिन मैं न जाना इसलिये कुटुम्ब सहित सुख से रहे। अब मैं जानी तब कैसे मेरे बैरी निश्चिन्त रहें। इसलिये अब तुम शम कहिये शान्तता अर दान कहिये देना यह दोनों उपाय तो सर्वथा तजो अर भेद कहिये फोड़ा तोड़ी अर दंड कहिये मारना दोनों उपाय निश्चित करो। ये अपराधी साम अर दाम योग्य नाहीं भेद अर दंड योग्य ही हैं।

यह वचन स्वामी के सुनकर मंत्री नमस्कार कर घनी शांतता उपजाय हाथ जोड़ विज्ञप्ती करते भये। कैसा है स्वामी, यादवों के दंड के उपाय का है उद्यम जिसके, मंत्री महीपति से कहे हैं – हे नाथ! हम शत्रुओं की सुध न राखें ऐसे शठ तो नाहीं परंतु जान ही कर आपसे मालूम नहीं किया। यादवन के वंश में तीन पुरुष ऐसे जन्मे हैं जिनकी देव सेवा करे हैं उनको जीतने समर्थ देव अर मनुष्य कोई नाहीं। प्रथम तो बाईसवें श्री नेमिनाथ राजा समुद्रविजय रानी शिवादेवी के गर्भ विषे उपजे हैं तिनकी तीन लोक सेवा करें फिर वसुदेव के रोहिणी नामा रानी के उदर विषे नवमें बलभद्र उपजे हैं जिनका नाम पद्म है अर वसुदेव ही के दूजी रानी है देवकी सो उसके गर्भ विषे नवमें नारायण कृष्ण उपजे हैं। यह तीन पुरुष महा दुर्जय हैं।

जब श्री नेमिनाथ गर्भ विषे आये तब छः महीने पहिले से समुद्रविजय के घर रत्नवृष्टि भई सो पंद्रह मास रत्न वर्षे अर उनका जन्म भया तब इन्द्रादिक सुमेरु विषे ले जाय अर जन्माभिषेक करते भये। सो भगवान् तीन लोक के नाथ जिनकी सब लोग सेवा करें तिनके पिता को कोई कैसे जीते जो समस्त पृथिवी के राजा एकत्र होंय तो भी उनका कहा कर सकें अर बलभद्र नारायण की सामर्थ कहा आपके श्रवण में न आई जो शिशुपाल सरीखे योधा अनेक रण विषे जीते।।20।। अर जिनकी पक्ष पांडवन से प्रचण्ड योधा विद्याधर भी बहुत उनमें है उनका पिता अर वे अर उनके पुत्र विद्याधरन के परने हैं अर साढ़े तीन क्रोड़ कुमार महायोधा रणधीर एक राजा सूर के वंश के हैं अर आप यह न जाने जो मेरे भय से समुद्र में छिप कर हैं वह सब ही बहुत बुद्धिमान न्यायमार्गी हैं।।23।। दैवबल, समयबल, बुद्धिबल, सब उनमें हैं अर देव उनके सहाई हैं सो हम जानी सोते नाहर को न जगावें। ज्यों है त्यों ही रहो।।24।। ऐसा जान हम देश काल विचार धीरे रहे। अपना अर पराया बल विचारना समय विचारना यह ही प्रशंसा योग्य है।।25।।

यह विचार हम चुप हो रहे। सेवक वही जो स्वामी के हित को कहे अब आप भली जानो सो करो इत्यादि सत्य वचन पथ्य रूप मंत्रिन जरासिंध से कहे परंतु जरासिंध के मन में न आई। जब क्षय काल आवे तब हठग्राही हठ न छोड़े।।27।। मंत्रियों के वचन उलंघ जरासिंध यादवन के निकट द्वारका की ओर प्रतिसेन नामा दूत भेजा।।28।। पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, सब दिशा राजान पै दूज भेजे अर पत्र में लिखी जो चतुरंग सेना सहित शीघ्र ही तुम यहां आईओ ढील मत करियो।।39।। सो दूत के देखवे मात्र ही राजा करण अर दुर्योधनादि सब ही राजा जरासिंध के हित की है अभिलाषा जिनके सो सब ही जरासिंध पे आये जब महा बलवान् सब राजा आये, तब उन सहित जरासिंध प्रयाणकर शत्रु के जीतने की है इच्छा जिसके सो राजगृही नगरी से कूंचकर आप आया अर प्रतिसेन नामा दूत

द्वारका गया। जैसे पुण्यवान स्वर्गपुरी जाय।।33।। सो दूत अनेक आश्चर्य्यकर भरी जो द्वारकापुरी उस विषे प्रवेशकर राज्य द्वार आया अर समस्त यादवन कर भरी जो सभा उस विषे अंधकवृष्टि के वंश के सब अर पांडव सब ही बैठे थे सो द्वारपाल जाय विनती करी, तब उसी समय सभा में बुलाया।।35।। सो जाय प्रणामकर आज्ञा से सन्मुख बैठा अर प्रतिहार की आज्ञा प्रमाण राजा समुद्रविजय से स्वामी के बल के गर्व कर कहता भया – जो पृथिवीपति ने आज्ञा करी है जो चित्त लगाकर सुनिये सकल यादवन कर चक्रेश्वर की आज्ञा उर में धरो।।37।।

ऐसी आज्ञा करी है मैं तिहारा कहा अनिष्ट किया जो तुम भय मान समुद्र में बसे हो।।38।। जो अपराध उपजा है तो तुम ही से उपजा है आप ही से भय मान आश्रय पकडा है सो मोसे भय मत मानो। तुम आयकर मुझे नवो अर मेरी सेवा करो।।39।। अर कदाचित् समुद्र के बल से जो न आवोगे तो मैं ऐसा हूं समुद्र को पान कर जाऊंगा अर तुमको पीडा करूंगा।।40।। जब तक मैंने तुमको न जाना था तब तक देश काल विचार आश्रय पकड रहे अब मैं तुमको जान पाये तब कैसे रह सकोंगे।।41।। ये दूत के वचन सुन समस्त ही राजा कोप रूप भये अर बलदेव वासुदेव भौंहें टेढी कर बोले – उसकी मृत्यु निकट आई है। सो समस्त सेना सहित हम पर आवो, हम भी संग्राम के अभिलाषी हैं तुम्हारी भली भांति पाहुण गति करेंगे। ऐसे वचन कहकर दूत को विदा किया सो कुवचन रूप वज्र का मारा स्वामी के पास जायकर सब वार्ता कहता भया अर उनका सब रहस्य जनाया जो वह महा मदोन्मत्त है अर युद्ध करने को सन्मुख हैं।।44।।

अथानन्तर – समुद्रविजय के बड़े मंत्री विमल अमल अर शार्दूल ये तीनों मंत्र विषे निपुण सो मंत्रकर राजा समुद्रविजय को कहते भये – हे नाथ! साम, दाम, दंड, भेद चार उपाय हैं तिनमें साम कहिये मृदुता सो अपनी अर पराई दोनों ओर की शांतता के अर्थ हैं इसलिये मगध देश का राजा जरासिंध उससे सलाह करिये अर संग्राम न करिये तो बहुत भला है।।46।। युद्ध विषें बहुतों का नाश है कुशल का संदेह है अपने कुल ही कुल के सब कुमारन का समूह है सो एकहू ढील युद्ध विषे नाश को पावे तो सहारा न जाय अर ज्यों अपने अमोघ बाण के वर्षणहारे हैं त्यूं जरासिंध हू की सेना में बहुत हैं। कर्ण, दुर्योधन, द्रवण, भीष्म आदि बड़े बड़े योधा हैं।।49।। इसलिये समस्त जीवन के कल्याण निमित्त साम ही योग्य है जरासिंध के निकट दूत भेजो।।50।। इसमें दोष नहीं अर अपनी मृदुता कर जो वह शांतता न होय तो जैसा उचित होयगा तैसा करेंगे इसमें दोष नहीं।।51।।

यह मंत्रकर इन मंत्रियों ने राजा से कही, तब राजा कही – कहा दोष है। तब एक लोहजंघ नामा कुमार महाचतुर शूरवीर नीतिवान जरासिंध के निकट अपनी सेना से बहुत सन्मान कर भेजा सो वह आज्ञा प्रमाण गया।।53।। अर इन पहली जरासिंध कूचकर मालव देश विषे देवावतार नामा तीर्थ है

तहां आय डेरे करे थे।।54।। सो वह तीर्थ कैसे प्रसिद्ध भया – दो मुनि मासोपवास एक का नाम तिलकानन्द अर दूसरे का नाम नंदक सो उनके प्रतिज्ञा थी जो वन ही में भिक्षा पावें तो वन विषें बड़ा संघ श्रावकों का आय उतरा था। तहां मुनियों को पारणा भया सो मुनि ऋद्धिधारी तिनके प्रसाद से पंचाश्चर्य भये – रत्नवृष्टि पुष्पवृष्टि सुगन्ध जल की वृष्टि शीतल मंद सुगन्ध पवन अर जय जयकार शब्द।।55।। यह पंचाश्चर्य कहिये या अतिशय ते वह देवावतार नामा तीर्थ पृथिवी विषे प्रसिद्ध भया, अनेक जीवन के पाप हरणहारा, तहां जरासिंध के कटक विषे यादवन का लोहजंघ नामा दूत गया।।56।। सो दूत जाय जरासिंध से मिला अर एकान्त विषे जरासिंध से वार्ता करी। दूत महा पण्डित सो याके वचनकर प्रतिहरि प्रसन्न भया अर छः महीने की सन्धि मानी, छः महीने में तुम सरंजाम कर लेवो।।58।।

अर दूत का बहुत सन्मान किया बहुत बकसीस करी सो दूत पृथिवीपति से प्रसन्न होय द्वारका आया। समुद्रविजयादिक से सब वार्ता कही।।59।। तब सब यादव सावधान होय एक वर्ष में संग्राम का सब सरंजाम किया।।60।। यादवन के मित्र सब यादवन में आये अर जरासिंध सैन्य रूप समुद्र कर वेष्टित कुरुक्षेत्र नामा स्थान विषे प्रधान पुरुषन कर युक्त आय प्राप्त भया अर द्वारका ते दूजा सागर केशव भी तहां ही जाय प्राप्त भया। दोऊ सेना समुद्र समान सोहती भईं।।62।। तहां कै एक दक्षिण दिशि के अर कैयक उत्तर दिशि के बड़े बड़े राजा अपने सकल कटक कर युक्त केशव से आय मिले।

दशार्हन कहिये अंधकवृष्टि के पुत्र समुद्रविजयादि दश भाई। अर भोजकवृष्टि के पुत्र अर पांडव अर अन्य भी बड़े बड़े शार्दूल नृप पृथिवी विषे प्रसिद्ध हरि के हितू सब आये सबन में बड़े राजा समुद्रविजय श्रीनेमिनाथ के पिता तिनके साथ अक्षोहणी दल अर राजा उग्रसेन एक अक्षोहणी के पति अर राजा मेघ नामा इक्ष्वाकु वंश के अधिपति एक अक्षोहणी दल का स्वामी।।66।। राष्ट्रवर्धन नामा देश का राजा अर्द्ध अक्षोहणी दल का स्वामी अर सिंघल देश का राजा पद्मरथ सो भी अर्द्ध अक्षोहिणी दल का स्वामी।।67।। अर राजा सकुन का भाई चारुदत्त नामा महापराक्रमी चौथाई अक्षोहणी दल का स्वामी कृष्ण के परम हितु।।68।। अर चरवर देश के स्वामी यवन देश के स्वामी अर आवीर देश के कांबोज देश के अर द्रबिड देश के अर अर भी अनेक देशन के बहुत राजा शूरवीर हरि की पक्ष आये।।69।। अर अनेक अक्षोहिणी दल के धनी बहुत गुण कर पूर्ण अनेक राजा जरासिंधी की ओर आये। कैसा है जरासिंध, चक्ररत्न के प्रभाव कर वश किये हैं भरतक्षेत्र के तीन खंड जाने। एक अक्षोहिणी दल का प्रमाण कितना कहा है सो सुनिये –

नव हस्ति सहस्राणि नव लक्षा रथा मताः।
नव कोटि तुरंगास्तु शत कोट्यो नरा भव।।

अथ – हाथी नव हजार अर रथ नव लक्ष अर तुरंग नव कोटि अर नव सौ कोड पयादे यह अक्षोहिणी दल का प्रमाण जानना।71।। यादवन के कटक में समुद्रविजय का कुमार श्रीनेमिनाथ का दुमात भाई रथनेमि अर बलभद्र नारायण ये तीन तो अतिरथि कहिये सब योधान में श्रेष्ठ सबन के शिरोभाग हैं। इनके तुल्य भरतक्षेत्र में अर सुभट नाहीं।।72।। अर राजा समुद्रविजय तथा वसुदेव अर युधिष्ठर अर भीम अर्जुन अर रुक्म कहिये रुक्मणी का भाई अर प्रद्युम्न कृष्ण का पुत्र अर सत्यक।।73।। अर धृष्टद्युम्न द्रौपदी का भाई अर अनावृष्टि कृष्ण के बड़े भाई अर राजा सल्य अर राजा भूरिश्रवा फिर राजा हिरण्यनाभि अर राजा सहदेव राजा सारण।।74।। ये राजा सर्व शस्त्र अर शास्त्र विषे निपुण अर परान्मुख कहिये जो कायर होय रण से पीछे मुडे अर लड न सके। तापर महा दयावान हो सन्मुख होय लडे अर आप समान होय अथवा आपते अधिक होय ताहि से लडें आपसे हीन बली होय तासे न लडें यह महादयावान महाबतवान महारथी है। महारथी कौन कहिये सो सुनिये, जो अकेला ग्यारह हजार माते हाथीन से लडे सो महारथी जानिये।।75।।

अर समुद्रविजयते छोटे अर वसुदेव ते बड़े अक्षोभि आदि आठ भाई अर जांबुवन्ती का पुत्र संबु अर भोज नामा राजा तथा बिदूरथ अर द्रोपदी का पिता द्रुपद अर सिंहराज अर शल्य अर व्रज सुयोधन।।76।। अर पौड्र, पद्मरथ, कपिल, अर भगदत्त मेघ धूर्त इत्यादि सब राजा रण विषे समान बली यह समरथी हैं।।77।। अर राजा महानेमिधर अर कृष्ण का भाई अक्रूर अर निषद। उल्मुख अर दुर्मुख कीर्तिवर्मा अर राजा विराट अर चारुकृष्ण अर सकुनिय, बनभानु, दुशासन, अर सिखंडी, वाल्हीक, सोमदत्त, देवशर्मा, वकवेणु, दारी विक्रांत इत्यादि सर्व राजा अर्ध रथी हैं। यह सब ही नाना प्रकार युद्ध के करणहारे महाधीर संग्रामते कदे ही न टरें।।80।। अर इन सिवाय अर सब राजा कुलवंत पृथ्वी विषे प्रसिद्ध दोनों ही सेना विषे रथी हैं।।81।। यह दोनों ही कटक समुद्र समान पडे सो राजा कर्ण कुन्ती का पुत्र जरासिंध की सेना विषे दुर्योधन के शामिल है। जब दोनों कटक निकट पडे अर कर्ण के डेरे कृष्ण से नीरे हैं। तब कुन्ती कृष्ण से मंत्रकर राजा कर्ण के समीप गई अति आकुलता की भरी स्नेह के भार कर पराधीन है शरीर जाका।।83।। कर्ण के कंठ से लाग रुदन करती थकी माता पुत्र को आदि मध्य अवसानते सब सम्बन्ध कहती भई।।84।।

तब कर्ण माता के वचन सुन अपना कुरुवंश विषे जन्म अर कुन्ती माता अर पांडु पिता यह सब निश्चय करता भया।।85।। अर अपने अन्तःपुर में निज वर्ग हैं तिनसे सब निश्चय किया अर कुन्ती की अति स्तुति करी बहुत सन्मान किया तब कुन्ती अपना बड़ा पुत्र जो कर्ण ताको आदर सहित कहती भई।।86।। हे पुत्र! उठ, हमारे कटक में आव तेरे सब भाई दर्शन के अभिलाषी हैं। कृष्ण आदि

सबही तेरे निज वर्ग तोहि बहुत चाहे हैं तेरे दर्शन की सब ही के अभिलाषा है।।87।। तू कुरुवंशीन का ईश्वर है अर बलदेव वासुदेव के प्राणहूंते प्यारा है।।88।। तू कुरुवंशी का राजा है युधिष्ठर तेरे शिर पर छत्र फिरावेगा अर भीम चमर ढारेगा अर अर्जुन तेरा मंत्री अर नकुल सहदेव ए दोनों तेरे द्वारपाल अर मैं तेरी माता सदा तेरा हित ही चाहती हूं।

यह माता के वचन सुन भाइयों से है परम स्नेह जिसका तथापि जरासिंध अपना स्वामी अर बाका आप पर उपकार अर दुर्योधन से साचा मिलाप सो स्वामी कार्य को शिर पर धार माता को कहता भया, माता पिता भाई बन्धु यह लोक विषे दुर्लभ हैं, यह सत्य बात है तथापि अबार अर ही प्रयोजन उपजा है। रण संग्राम आय वन्या है सो मैं युद्ध के समय स्वामी कार्य को तज कर भाइयों मैं आऊं तो यामें बड़ा अपयश है अर बड़ा हास्य है।।93।। इसलिये या समय मेरा आवना सर्वथा नहीं अर मैं एक करूंगा। इनके युद्ध विषे स्वामी कार्य के अर्थ भाइन टारि अर योधाओं से युद्ध करूंगा।।94।। अर युद्ध निर्वृति भये जो कदाचित् आयुकर्म के वशते जीवूंगा अर वैराग्य न उपजेगा तो भाइन से मिलाप होयगा।।95।। इसलिये तुम जाहु अर सब भाइयों से यह ही कहो। ऐसा कह माता कुन्ती की प्रतिष्ठा कर याहि सीख दी सो गई बलदेव वासुदेव आदि सबन से कर्ण के कहे समाचार कहे।।96।।

अथानन्तर – जरासिंध ने भला रण खेत देखा जहां पृथ्वी समभाग किसी ठौर ऊंची नीची नाहीं ऐसा स्थानक हेर वैरियों के जीतने के अर्थ प्रवीण राजा हैं तिनसे मंत्र कर चक्रव्यूह रचा। चक्रव्यूह कहिये चक्र समान वर्तुलाकार सेना का आकार रचा। चक्र के हजार आरे सो एक एक आरे के निकट एक एक राजा सो हजार आरे के हजार राजा अर एक एक राजा के ढिग सौ सौ हाथी अर दोय दोय हजार रथ अर पांच पांच हजार तुरंग, अर सोलह सोलह हजार पियादे, अर इससे चतुर्थ भाग विभूति सहित छः हजार राजा चक्र की धारा उसके समीप तिष्टे अर मध्य के स्थान विषे जरासिंध के ढिग कर्ण आदि पांच हजार राजा तिष्टे।।1।। अर तिन ही के मध्य धृतराष्ट्र के अर गांधारी माता के पुत्र दुर्योधनादि सौ भाई खड़े अर मध्य विषे अर भी बड़े बड़े राजा पूर्व भाग विषे तिष्टे।।3।। कुलवंत मान के धरणहारे महाधीर महाबलवान बड़े बड़े राजा पचास चक्र की धारा के संधि विषे तिष्टे अर या चक्रव्यूह के बाहर अपनी अपनी सेना सहित नाना प्रकार के व्यूह रच अनेक ठौर राजा खड़े। यह चक्रव्यूह प्रतिहरि की सेना विषे प्रवीण पुरुषों ने रचा। अर यादवन के कटक में गरुड व्यूह रचा सो अति सोहता भया। यह गरुड़ व्यूह उनके भेदवे के अर्थ प्रवीण पुरुषनि यथायोग्य रचा।।7।।

गरुड़ व्यूह कहिये गरुड़ के आकार सेना की रचना करी। पचास लाख कुमार महा शूरवीर शस्त्र

के धारक चूंचकी ठौर थापे।।8।। अर महाबली बलभद्र अर वासुदेव ये दोनों गरुड़ के मस्तक की ठौर ठाडे। ए दोनों अतिरथी हैं इनसे देवतादि मनुष्य लड न सके अपनी स्थिरता कर जीता है पर्वत जिनने।।9।। अर कृष्ण का भाई अक्रूर अथवा कुमद वीरसारण विजय, जय, पद्म, जरत्कुमार, सुमुख, दुर्मुख।।10।। अर कृष्ण की माता मदनवेगा ताका पुत्र दृढमुष्टि सो महारथी अर महारथ विदूरथ अनावृष्टि इत्यादि वसुदेव के पुत्र।।11।। अर बलदेव वासुदेव की पूठ के रखवारे कोटक रथोंकर युक्त भोजवंशी खड़े बलभद्र अर नारायण दोनों रथ पर आरूढ हैं।।12।।

अर भोजवंशी कृष्ण के पूठि रखवाले गरुड़ की पूंछ की जगह ठाडे हैं अर इनके पूठी रखे धारण सागर इत्यादि बड़े बड़े रणधीर ठाड़े हैं अर गरुड की दाहिनी पांख की ओर भ्रातृ पुत्रों सहित राजा समुद्रविजय बड़ी सेना सहित खड़े हैं अर इनके पूठि रख महाभट महा चतुर शत्रुओं के मारणहारे राजकुमार खड़े हैं उनके नाम- सत्यनेमि, महानेमि, दृढनेमि, सुनेमि, नमि, महारथ, महीजय, तेजसेन, जयसेन, जयमेघ, महाद्युति इत्यादि सब महारथी हैं।।16।। अर दशार्ह्न भाइयों की संतान अर राजा पच्चीस लाख रथों सहित खड़े अर गरुड की बाईं पांख की ओर बलभद्र के पुत्र अर पांडव बड़े धीर वीर युद्ध कार्य विषे महा प्रवीण ठाडे।।18।।

अर दशरथ, देवानन्द, बसन्तन, आनन्द, महानन्द, चंद्रानंद महावल, पृथूह, सतधन, विपृथु, यशोधन, दृढी बन्ध, अनुवीर्य्य इत्यादि अनेक राजा शस्त्रधारियों में श्रेष्ठ रथ सहित शस्त्र शास्त्र के अभ्यासी दुर्योधनादिक के जीतने को खड़े हैं।।22।। अर इनके पूठी रक्षे, चंद्रयश, स्यंघल, वरवर, कंबोज, केरल, कुशल, द्रमिल।।23।। इत्यादि साठ हजार राजा रथों सहित ठाडे। यह महा भट दोनों पक्षों के रक्षक भये इत्यादि सब ही महा पराक्रमी हैं।।24।। फिर राजा असित सहित भानु तोमर, समरप्रिय, संजय, कल्पित, अपिभानु, विष्णु, बृहध्वज।।25।। शत्रुंजय, महासेन, गम्भीर, महासेन, गौतम, वसुवर्मा, कृतवर्मा, प्रसेनजित।।26।। दृढवर्मा, विक्रांत, चंद्रवर्मा, इत्यादि बड़े बड़े राजा अपनी अपनी सेना सहित हरि के कुल की रक्षा करनेवाले हैं।।27।। यह गरुड़ व्यूह वसुदेव ने रचा। वसुदेव महा प्रवीण हैं अर महारथी हैं चक्रव्यूह के भेदने अर्थी उद्यमी भये।।28।। वह चक्रव्यूह अभेद्य है ऐसा रचा है जो किसी से गाहा न जाय अर गरुड़ व्यूह भी ऐसा ही रचा है अर इस युद्ध विषे जीत का नायक एक ही है। युद्ध विषे जीत धर्म्म के प्रसाद ही से होय है ऐसा जान जिनभाषित धर्म्म को अंगीकार करो।।29।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ चक्रव्यूह-गरुडव्यूहवर्णनो नाम पंचाशत् सर्गः।।50।।

सातवाँ अधिकार

नारायण–प्रतिनारायण का युद्ध

इक्यावनवाँ सर्ग

अथानन्तर – वसुदेव के हितू जे विद्याधर थे सो समस्त राजा समुद्रविजय के निकट आये।।1।। वसुदेव के श्वसुर असनीवेग हरिग्रीव राहसिंह दंष्ट्र विद्युद्वेग महोद्यम मानसवेग विद्युदंष्ट्र पिंगलगंधार नारसिंह नरेश्वर।।3।। इत्यादि विद्याधर अर मातंग जाति के विद्याधर वसुदेव के हितू वसुदेव को अग्रेश्वर कर समुद्रविजय के समीप आये।।4।। तब समुद्रविजय ने उनका बहुत सन्मान किया अर कही हमारे सर्व अर्थ सिद्ध भये जो आप सारखे बड़े राजा हम पर आये। प्रसन्न होय यह वचन उनसे कहे तब वह अति हर्षित भए अर वसुदेव के शत्रु विद्याधर सब ही जरासिंध पै आये सो सुनकर सब यादवन मसलतन कर प्रद्युम्न अर सम्बूकुमार सहित वसुदेव को फिर विजयार्द्ध भेजे जो अपने मित्रवर्ग विद्याधरों में हैं तिन सवों को ले आवो सो सब भाइयों की आज्ञा पाय दोनों पोताओं को साथ ले वसुदेव बलभद्र नारायण को छाती से लगा शीघ्र ही विजयार्द्ध गये।।8।।

फिर इन्द्र के भण्डारी कुवेर ने बलभद्र को सिंह विद्या का रथ दिया सो अनेक दिव्यास्त्रों कर भरा तिस पर हलधर आरूढ़ भये अर गरुडध्वज कहिये कृष्ण तिनको कुवेर ने गारू नामा रथ दिया सो अनेक आयुधों कर पूर्ण जीत का स्वरूप।।10।। अर सुभटों का नायक महा शूरवीर कृष्ण का बड़ा भाई अनावृष्टि अर अर्जुन इन दोनों को समुद्रविजयादिक सब राजा अगवानी करते भये।।12।। अर जरासिंध ने राजा हिरण्यनाभ है तिसको सेनापति किया। उसका अभिषेक भया वह भी महा बलवान्।।13।।

अथानन्तर – युद्ध के वादित्र दोनों सेना मैं बाजे। परस्पर दोनों कटक में चतुरंग सेना युद्ध को उद्यमी भई।।14।। वह उसे बुलावे अर वह उसे बुलावे। परस्पर राजा युद्ध करने लगे सो क्रोध के भार कर वक्र भई है भौंह जिन्हों की तिस कर क्रूर है बदन जिन्हों के।।15।। हाथियों के सवार तो हाथियों के सवारों से लड़ने लगे अर रथों के सवार रथवालों से अर घोड़ों के सवार घोड़ों के सवारों से, पयादे पयादों से लड़ने लगे।।16।। इस भांति योधा परस्पर युद्ध करने लगे। धनुषों की फिडचों का शब्द अर रथों का शब्द अर गजों की गर्जना अर तुरंगों की हीन्स अर योधाओं के सिंहनाद तिन कर दशों दिशा शब्दायमान भईं।।17।।

अथानन्तर – जरासिंध के कटक को प्रथम ही देख कर श्रीनेमिनाथ का दुमात भाई रथनेमि अर्जुन अर कृष्ण का भाई अनावृष्टि सो रथनेमि के तो वृषभ की ध्वजा अर अनावृष्टि के हाथी की ध्वजा अर अर्जुन के मर्कट की ध्वजा।।18।। अर कृष्ण के अभिप्राय के वेत्ता यह तीनों डील महा उद्धत बखतर पहरे शस्त्र बांधे जरासिंध की सेना के चक्रव्यूह को भेदने के उद्यमी भए।।19।। अर नेमिनाथ का दुमात भाई रथनेमि इन्द्र का दिया शंख पूरता भया। अर कुन्ती का पुत्र जो अर्जुन सो देवों का दिया शंख पूरता भया अर अनावृष्टि वासुदेव का बड़ा भाई वलाहक जाति का शंख बजावता भया। इन तीनों के शंखनाद कर दशों दिशा व्याप्त भई अर यादवों की सेना विषे अति हर्ष भया अर शत्रु की सेना विषे अति भय उपजा। जरासिंध की सेना चक्रव्यूह तिसका मध्य तो अनावृष्टि ने भेदा अर रथनेमि ने दाहनी ओर भेदी अर अर्जुन ने पश्चिम अर उत्तर दोनों दिशा की सेना भेदी।।22।।

अथानन्तर – यादवों का सेनापति अनावृष्टि सो पर सेना का सेनापति हिरण्यनाभ तिससे युद्ध करता भया अर रथनेमि रुक्मी से लडे अर अर्जुन दुर्योधन से भिडे। कैसा है अर्जुन, धैर्य्य है अग्रेश्वर जिनके।।23।। इनके परस्पर महा युद्ध भया अर यह समान बली अनेक आयुधों के धारक सो वाणों की वर्षा करते भए।।24।। अर नारद आकाश विषे तिष्टा दूर से देखे है अपसरान के समूह आकाश में देखे हैं महा योधाओं पर पुष्पों की वर्षा होय है अर कलह है प्रिय जिसका ऐसा नारद सो अति हर्षित भया हंसे हैं। कितनीक देर में रथनेमि ने बाण वर्षा कर रुक्मी का निपात किया रुक्मी बहुत लड़ा अर रथनेमि ने हजारों राजा युद्ध विषे जीते अर समुद्रविजयादिक दश भाई तिनमें वसुदेव विजयार्द्ध की ओर गये अर नवों भाई युद्ध विषे थे तिन जे पर सेना के राजा सन्मुख आये सो सब मारे अर इनके पुत्र तिन बहुत शत्रु मारे।।26।। अर बलभद्र नारायण के पुत्र तिन युद्ध विषें शंका रहित वाणों की वर्षा करी जैसे पर्वत विषे मेघ वृष्टि करे तैसे वैरियों विषे बलदेव वासुदेव के पुत्रों ने वाणों की वर्षा करी।।27।।

अर धृतराष्ट्र के दुर्योधनादि सौ पुत्र पांडु के पांच पुत्र तिनमें परस्पर महा युद्ध भया सो कहने को कौन समर्थ।।28।। राजा युधिष्ठर तो राजा शल्य से लड़े अर भीम दुशासन से लड़े अर सहदेव शकुनी से लड़े अर नकुल राजा उलूक से लड़े।।29।। अर दुर्योधन अर अर्जुन दोनों परस्पर युद्ध करते भये इनके महा युद्ध भया। दोनों खड्ग अर वाण विद्या विषे प्रवीण केतीक वेर में पांडुओं ने धृतराष्ट्र के पुत्र मारे अर कई मृतक समान किये अर राजा करण जरासिंध की सेना में है सो धनुष विषे वारण बांधकर कान पर्यंत खैंच अनेक बाण चलाये सो कृष्ण की पक्ष के योधा सन्मुख आये ते राजा कर्ण ने अनेक बींधे।।32।। यह बराबरकेन में महायुद्ध भया अनेक सामंत मारे गये। फिर अनावृष्टि अर

हिरण्यनाभ इन दोनों सेनापतियों के परस्पर महा रौद्र युद्ध भया। अर नाना प्रकार के आयुधों कर ये सुभट लड़े।।33।। सो हिरण्यनाभ ने अनावृष्टि को युद्ध विषे सात सौ नव्वे बाणों कर भेद्या अर बाण सताईस अर लगाये।।34।। सो अनावृष्टि इतने वाणों कर घायल होय अर हिरण्यनाभ को हजार बाणों कर भेद्या यह अनावृष्टि युद्ध क्रिया विषे अति कुशल है।।35।। फिर हिरण्यनाभ राजा रुधिर का पुत्र महा योधा प्रतिहरि का सेनापति तिसने अनावृष्टि की ऊंची ध्वजा छेदी अर अनावृष्टि ने हिरण्यनाभि की ध्वजा छेदी अर धनुष छेदा क्षत्र छेदा फिर हिरण्यनाभ अर धनुष लेकर बाण वृष्टि करता भया।

तब अनावृष्टि ने शत्रु पर परिघनाम शस्त्र चलाया। हिरण्यनाभ का रथ चूर्ण कर डाला तब हिरण्यनाभ अनावृष्टि पर एक हाथ में खड्ग अर एक हाथ में खेटक लिये आया सो शत्रु को सन्मुख आवता देख अनावृष्टि भी खड्ग अर खेटक हाथ में लिये रथ से उतर कर शत्रु के सन्मुख गया सो यह दोनों ही शस्त्र विद्या विषे अति प्रवीण सो वह उसका प्रहार टार जाय अर वह उसका प्रहार टार जाय अर दोनों ही महा वीराधिवीर सेनापति सो इनके खड्ग युद्ध भयंकर भया।।39।। अर कितनेक वेर में अनावृष्टि ने खडग घात कर हिरण्यनाभ के दोनों भुज छेदे सो भुजों से रुधिर का प्रबाह निकला सो जरासिंध का सेनापति पृथिवी विषे पडा।।40।।

जब प्रतिहरि का सेनापति हरि के सेनापति ने मारा तब प्रतिहरि की सेना की अगवानी पीछे होय प्रतिहरि के निकट गये अर अनावृष्टि जीत पाय हर्षित होय रथ चढ़ अपनी सेना सहित बलदेव पर वासुदेव के निकट आया सो सब सेना के लोग सेनापति की स्तुति करते भये। अर बलभद्र नारायण यह दोनों ही वृषभध्वज कहिये रथनेमि अर हस्तिध्वज कहिये अनावृष्टि अर कपिध्वज कहिये अर्जुन इन तीनों से अति स्नेहकर मिले अनावृष्टि ने तो हिरण्यनाभि मारा। रथनेमि अर अर्जुन ने चक्रव्यूह भेदा यह तीनों ही महा पराक्रमी हैं।।43।।

जब परसेना का सेनापति मारा गया तब उनकी सेना विषाद रूप विषकर दूषित भई तिस समय सूर्य भी अस्त भया। अर दोनों सेना के योधा अपने अपने डेरा गये अर यादवों का कटक अरि के भंग थकी अति हर्षकर पूर्ण घूमते समुद्र समान गरजता सोहता भया। जिनराज के धर्म्म के प्रभाव कर कर्मों की सेना को जीते तो औरों की कहा बात।।46।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे यादवजरासिंधसेनासमागम-हिरण्यनाभसेनापतिवधवर्णनो नाम एकपंचाशत् सर्गः।।51।।

बावनवाँ सर्ग

अथानन्तर – सूर्य्य के उद्योत होते मागध कहिये मगध देश का राजा जरासिंध अर माधव कहिये कृष्ण इन दोनों के योधा आयुध सजकर युद्ध के अर्थि निकसे। पूर्व रीति व्यूह रचकर दोनों कटक के सावंत आय ठाड़े भये। अर अनेक राजा परस्पर लड़ कर अनेक राजाओं को मारते भये तिस समय रथ विषे तिष्ठता जरासिंध सो अपना हंस नामा मंत्री निकट बैठा है उसे पूछता भया। यह यादव सब खड़े हैं तिनके प्रत्येक प्रत्येक नाम अर चिह्न मुझे कहो। मेरे इनसे द्वेष है औरों के मारने कर कहा तब हंस नामा मन्त्री कहता भया। हे देव! यह फेन के पुंज समान श्वेत अश्व चांदी की सांकल धरे जुपे हैं जिस रथ के अर गुरुड की ध्वजा है सो इस रथ में कृष्ण बैठा है।।44।। अर यह सूवा की पांख समान हरे घोड़ों के जुपे जिस रथ के अर घोड़ों स्वर्ण की सांकल अर रथ के वृषभ की ध्वजा इस रथ में श्री अरिष्ट नेमिनाथ तीर्थंकर का दुमात भाई रथनेमि समुद्रविजय का पुत्र है।।48।।

अर यह कृष्ण की दाहनी ओर राहू के वर्ण जुपे हुवे हैं तुरंग जिसके अर ताल की हैं ध्वजा जिसके तिस रथ के भीतर बलभद्र बैठा है अर केश समान श्याम वर्ण जिसके ऐसे घोड़े अर घोड़ों के स्वर्ग के आभूषण तिस रथ में यह राजा युधिष्ठर विराजा है अर चन्द्रमा समान निर्मल तुरंग पवन समान है वेग जिसका सो तुरंग इस रथ के जुपे अर रथ के जुपे अर रथ के गयंद की ध्वजा इस रथ के मध्य अनावृष्टि बैठा है। यह कृष्ण का बड़ा भाई अर इनके कटक का सेनापति है जिसने अपना सेनापति हिरण्यनाभि मारा।।50।। अर यह भीम का रथ है जिसके नील कमल समान रंग के धारक तुरंग जुपे हैं अर तुरंगों के रत्न स्वर्ण के आभूषण हैं।।51।। अर यह राजा समुद्रविजय का रथ है जिसके सिंह की ध्वजा अर चन्द्रमा समान शुक्ल वर्ण तुरंग मणि स्वर्णकर शोभित अश्व जुपे हैं सो सब यादवों की सेना के मध्य सबों का शिरोमणी रथ में विराजा है यह नेमि जिनेश्वर का पिता है अर कृष्ण के पिता का बड़ा भाई है।।52।।

अर यह अक्रूर रथ है यह जिसके केलि की ध्वजा अर मिश्रवर्ण घोड़े जुपे हैं सूर्य समान है ज्योति जिसके ऐसा यह अक्रूर कृष्ण का बड़ा भाई है। इसका रथ रत्न स्वर्णमई दैदीप्यमान है।।53।। अर तीतर के रंग जुपे है तुरंग जिसके ऐसा यह राजा सत्यक का रथ है अर यह कुमुद के पुष्प समान वर्ण के धारण हारे जुपे हैं अश्व जिसके सो महा नम्य कुमार का रथ है सुवर्ण मई लांबा दण्ड तिसके लगी है पताका तिन कर शोभित है अर सूवा की चोंच के रंग जुपे हैं अरुण तुरंग जिसके ऐसा यह भोज नामा राजा का रथ है अर यह कनक वर्ण तुरंगों कर युक्त मृग की ध्वजा जिसके जरत्कुमार कृष्ण का बड़ा भाई है।।56।।

अर यह राजा मरुराज का रथ है लाला अबलष जुपे हैं घोडे जिसके सो अश्व स्वर्ण के आभूषणों कर मण्डित है।।58।। अर यह पद्मरथ का रथ है जिसके कमल के रंग तुरंग जुपे हैं यह राजा पद्मरथ शूरवीरों में अग्रेश्वर शोभे है सो कटक के अग्रभाग खड़ा है अर यह राजा सारण जिसके रथ के परे वाके रंग घोड़े जुपे हैं सो घोड़े तीन वर्ष के नव यौवन हैं अर रथ के कमल की ध्वजा है।।60।। अर यह राजा अग्निजित तिसका पुत्र मेरुदत्त तिसका रथ सोहे है जिसके लाल अर सफेद रंग के घोड़े जुपे हैं सो घोड़े पांच वर्ष के हैं अर यह विदुरत कुमार का रथ जिसके कलश के आकार ध्वजा है अर पंच रंग घोड़े जुपे हैं अर सूर्य के रथ समान रथ है यह विदुरत कुमार महा यौवनवन्त है अति तेजस्वी है यह यादव रण विषे परम निपुण है घोड़ों के सर्व वर्ण अर रथों के वर्णन करने को कौन समर्थ है हजारों सैकड़ों यह यदुवंशी हैं।।63।। अब अपने राजा महायोधा अर राजाओं के कुमार तिनके अनेक जिन्हों के रथ देखो।।64।। तुम्हारे कटक में नाना देश के सुभट आये हैं अनेक राजाओं कर युक्त सोहे हैं अर नाना प्रकार के रचे हैं व्यूह जिस विषे सो शत्रुओं की सेना को भयकारी है। यह वचन मन्त्रियों के सुन कर जरासिंध अपने सारथी से कहता भया – जो तू यादवों की ओर रथ चलाय तब सारथी ने यादवों की ओर रथ चलाया अर जरासिंध अपने वाणों कर सब यादवों को आच्छादता भया।।67।।

अर जरासिंध के पुत्र कोप कर यादवों से रण क्रीडा करते भये। रथों पर तिष्टे बराबर वालों से बराबर वाले लड़ते भये।।68।। अर जरासिंध का बड़ा पुत्र कालयवन सो साक्षात् काल समान मलय नामा गज पर चढ़ा अधिक युद्ध करता भया। तिससे सहदेव लड़ा अर द्रुमसेन अर राजा द्रुम अर राजा जलकेतु अर चित्रकेतु अर धनुर्धर अर महीजय यह परस्पर भिडे।।70।। अर राजा भानु अर कांचनरथ अर राजा दुरद्ध अर गंधमादन अर राजा सिंहक अर चित्रमाला अर राजा महीपाल अर बृहध्वज अर राजा सुवीर अर आदित्यनाभि अर राजा सत्य अर राजा सत्व दोऊ ही मनोहर अर राजा धनपाल अर सतन्हीक अर महा शुक्र अर महा वसू।।71।। अर राजा वीर अर राजा गंगदति। अर राजा प्रवर अर पार्थिव, अर राजा चित्रांगद अर वसुगिर अर राजा श्रीमान् अर सिंहकटि यह राजा प्रगटपने परस्पर लड़े अर मेघनादि, अर महानादि अर राजा सिंहनादि अर वसुध्वज अर राजा वज्रनाभ अर महाबाहु अर राजा पतिशत्रु अर पुरन्दर अर राजा अजित अर अजितशत्रु अर राजा देवानन्द अर शतदृभुत अर राजा मन्दर अर हिमवान् अर राजा विष्वक अर केतुमाली।।74।।

अर राजा कर्क्वाट अर ऋषिकेश अर राजा देवदत्त अर धनंजय अर राजा सगर अर स्वर्णबाहु अर राजा मघवा अर अच्युत यह राजा परस्पर संग्राम करते भये। अर राजा दुर्जय अर दुर्मुख अर राजा वासुकीय अर कवल अर राजा त्रिशिर अर धारण अर माल्यवान अर सम्भव।।36।। अर महापद्म

महानाभ अर राजा अर महासेन अर महीजय अर राजा वासव अर वरुण अर सतान्हीक अर भास्कर।।37।। अर गरुत्मान अर वेणुहारी अर वासुदेव अर सुप्रभा अर वरुण अर आदित्यधर्मा अर विष्णुस्वामी अर सहस्रादिक अर केतुमाली अर महामाली अर चन्द्रवेणु अर बृहद्वलि अर सहस्ररस्मि अर अर्चिश्मान् इत्यादि परस्पर युद्ध करते भये जरासिंध के पुत्र बहुत लड़े।।38।। युद्ध विषे मनुष्य हस्थी तुरंग बहुत चूर्ण भये अर प्रलयकाल समान युद्ध भया। अर कालयवन बहुत लड़ा सो युद्ध विषे वसुदेव के पुत्रों ने उसे रोका। वसुदेव के पुत्रों के अर प्रतिहरि के पुत्र के परस्पर महायुद्ध भया। अर उसके विवाद भी बहुत भया।।41।।

कालयवन महायोद्धा सो वसुदेव के पुत्र उसने बहुत मारे तिनके सिर अरुण कमल समान सो सामान्य चक्र अर बाण खड्ग तिन कर कालयवन ने काटे सो पृथिवी विषे पड़े तिनकर पृथिवी सोहती भई। जब कालयवन ने वसुदेव के बहुत पुत्र मारे तब सारण नामा कुमार ने क्रोध कर खड्ग के प्रहार कर कालयवन को काल के मन्दिर पहुँचाया। सारण के अर कालयवन के चिरकाल अति युद्ध भया, सो वर्णन में न आवे। कालयवन काम आया सो मानो जरासिंध का सर्वस्व ही गया। अर जरासिंध के अर पुत्र तिन आय कर कृष्ण को घेरा सो प्रतिहरि के पुत्र सब ही महा शूरवीर हरि से बहुत लड़े सो हरि ने अर्द्ध चन्द्रबाण कर उनके सिर छेदे अर मृत्यु को प्राप्त किये।।45।।

तब राजा जरासिंध अपने पुत्रों को रणभूमि पर पड़े देख क्रोध कर कृष्ण पर आया धनुष को खैंचता बाण को लगावता फिडच को खैंच चढ़ावता रथ पर चढ़ा। प्रतिहरि हरि पर आया।।45।। तिन दोनों के परस्पर महा भयंकर युद्ध भया। दोनों ही उद्धत पराक्रम के धारक सो प्रथम तो सामान्य शस्त्र जे तीर तलवार सेल कटारी इत्यादि अनेक आयुध तिन कर अति भयंकर युद्ध भया। फिर दिव्यास्त्र जे देवोपुनीत शस्त्र तिनकर दोनों लड़ने लगे। प्रतिहरि ने हरि पर मारने अर्थी नाग बाण चलाया सो हजारों नाग माया मई आये। तब माधव ने मगध देश का राजा जो जरासिंध तिस पर गरुड़ बाण चलाया। तिस कर सब नाग नाश को प्राप्त भये।।48।। फिर जरासिंध ने जनार्दन जो कृष्ण तिस पर मेघ बाण चलाया सो कृष्ण ने पवन बाण कर उसका निराकरण किया अर जरासिंध ने वायु बाण चलाया सो कृष्ण ने नाग बाण कर उसको निवारा अर प्रतिनारायण ने नारायण पर अग्नि बाण चलाया सो अग्नि के समूह चले आवे तब केशव ने वरुण नामा बाण कर अग्नि बाण निवारा वरुण जल का स्वामी है अर मगध देश के इन्द्र ने उपेन्द्र कहिये कृष्ण तिस पर बैरोचन नामा बाण चलाया सो हरि ने माहेंद्रास्त्र कर वह बाण निवारा अर जरासिंध ने राक्षस बाण चलाया सो वासुदेव ने नारायणास्त्र कर निवारा।।53।। अर जरासिंध ने तामस नामा बाण चलाया सो माधव ने सूर्य्य बाण कर बाण भेद्या। प्रतिवासुदेव ने वासुदेव पर अश्वनामा बाण चलाया सो मुरारि ने ब्रह्मास्त्र कर शीघ्र ही निवारा।

यह कथा गौतम गणधर राजा श्रेणिक से कहे हैं – हे श्रेणिक! यह दोनों ही नरेन्द्र शस्त्र शास्त्र के वेत्ता जेते दिव्यास्त्र हैं ते ते सकल प्रतिहरि ने हरि पर चलाये सो हरि ने सब निराकरण किया।।55।। तब वह राजों का राजा वृथा भये हैं उद्यम जिसके सो पृथिवी विषे धनुष डार दिया, चक्र को चितारा सो चक्र की हजार यक्ष सेवा करे हैं।।56।। सो चक्र चिन्तवता प्रमाण सहस्र किरणों कर युक्त दशों दिशा विषे उद्योत करता प्रतिकेशव के कर विषे आया।।57।।

सो वृथा भये हैं अनेक शस्त्र जिसके इसलिये महा क्रोधरूप जो जरासिंध उसने चक्र को फिराय कर भौंह टेढ़ी कर कृष्ण पर चलाया ।।58।। सो चक्र आकाश में चलाया जिसके तेज कर सूर्य का तेज दब गया अर जरासिंध की पक्ष के राजा हैं, उन्होंने एकेलार समान चक्र चलाये सो चक्र को आवता देख उसके टारने अर्थी कृष्ण तो शक्ति अर गदा समाली अर बलभद्र ने हल मूसल समाले अर भीम ने गदा अर्जुन ने धनुष आदि अनेक शस्त्र अर अनावृष्टि ने परिघ सम्भाला अर युधिष्ठर ने शक्ति सम्भाली। यह सब कृष्ण के पक्षी चक्र से भिड़ने को उद्यमी भए।।61।।

समुद्रविजय आदि नौ भाई सावधान होय अत्यर्थपने चक्र की ओर अनेक शस्त्र चलावते भए अर कृष्ण चक्र के सन्मुख खड़े सो वह चक्र सावन्तों ने अनेक प्रकार निवारा परन्तु चक्र पीछे न भया मित्र की न्यांई शीघ्र ही आया सो आयकर प्रदक्षिणा देय हरि के दाहिने कर विषे तिष्ट्या। कैसा है हरि का दाहिना कर? शंख, चक्र, अर अंकुश का है चिह्न जिस विषे।।66।। जब चक्र कान्हा के कर में आया तब आकाश से पुष्प वृष्टि भई अर देवों की यह ध्वनि भई जो यह कृष्ण नवमां वासुदेव है।।67।। अर शीतल, मन्द, सुगन्ध, पवन अनुकूल बाजी जाकर यादव योद्धाओं के हृदय हर्ष को प्राप्त भये। जब चक्र कान्ह के कर विषे आया तब जरासिंध चित्त में चितवता भया – जो चक्र हू का चलावना वृथा गया, मैं विचारी कुछ अर भई कुछ अर।।68।। चक्र के पराक्रम कर वश करी थी मैं सब दिशा अर तीन खंड का अधिपति मैं प्रचण्ड पराक्रमी।।69।।

जिसके पूर्ण सेना देव विद्याधर जिसके आज्ञाकारी अर पुत्र पितामह भक्त अर मित्र निःकपट अर पुरुषार्थ भी मेरा प्रबल सो यह सब ही बात जब लग मेरे दैवबल था तब लग कार्यकारी थी। जब दैवबल विलाय जाय तब पुरुषार्थ सब ही वृथा यह बात ज्ञानवान कहें हैं सो सत्य है इसमें संदेह नाहीं मैं गर्भ में आया जब ही से सबों का स्वामी मुझे कोई बड़ा पुरुष भी उल्लंघ न सके अर कहां यह क्षुद्र गोप जिसके गर्भ विषे क्लेश जन्म विषे क्लेश अर ग्वालियों में पला नन्हा मनुष्य सतवांसा भया।।72।। सो दैवयोग से मेरा जीतनहारा भया। इसलिये धिक्कार धिक्कार पूर्वोपार्जित कर्म को अर जो यह मुझ सारखेन को जीतनहारी ही पूर्वोपार्जित कर्म ने किया था तो ऐसा क्लेशरूप क्यों किया जो गर्भ दुःखी अर जन्मदुःखी अर गोपों में पला, इसलिये दैव की मूढता समान अर मूढता कहा, दैव नाम पूर्वोपार्जित कर्म का है।

धिक्कार इस जगत् की माया को, यह माया सब लोक को अंध करने को प्रवीन है अर धीर पुरुषों के धैर्य की लोपनहारी है अर वेश्या समान अनेक पुरुषों की भोगनहारी है पर घर गमन करनहारी है इसलिये यह राजलक्ष्मी को धिक्। धन्य वे पुरुष जे जगत को तज जगदीश के मार्ग में लागे यह विचारकर आई है मृत्यु निकट जिसके सो ज्ञान को तो न प्राप्त भया। अर क्रोध कर कृष्ण को कुवचन कहता भया – अरे गोप! तू चक्र को क्यों न चलावे, कहा ढील कर रहा है? हे मुग्ध! तू कहा समय हेरे है जो कार्य करना सो शीघ्र करना विलंब कहा। अर जे दीर्घसूत्री हैं ते विनाश को प्राप्त होय हैं। ऐसे कुवचन जरासिंध कृष्ण से कहता भया। जरासिंध यद्यपि निश्चय जान चुका है जो मेरा मृत्युकाल आया इसमें संदेह नाहीं परन्तु जिसकी प्रकृति ही निर्भय है यह त्रिषष्टि श्लाका के पुरुष महा शूरवीर, इनके मरण का भय कहा होय।

जब कृष्ण को जरासिंध ने चक्र चलाने की प्रेरणा करी तब कृष्ण स्वभाव ही कर विनयवान स्नेहवान उससे कहते भये – मैं चक्रवर्ती उपजा हूं सो चक्र मेरे हाथ आया, इसलिये तुम मेरी आज्ञा में तिष्ठो अर सुख से राज करो। यद्यपि तुम हमारे द्वेष विषे प्रवर्ते हो तथापि हमारे द्वेष नाहीं प्रीति है। हम प्रणाम मात्र ही से प्रसन्न हैं, किसी के मारने की अभिलाषा नाहीं।।78।। यह वचन वासुदेव कहे, तब प्रतिवासुदेव गर्व का भरा बोला – जो यह चक्र मेरे अलात चक्र कहिये घेघली उस समान है। तू इसकर कहा गर्व को प्राप्त भया।।79।।

तैंने अब तक कभी भी कल्याण देखे नाहीं तू जन्म दरिद्री है जो नन्हा मनुष होय थोड़ी ही संपदा कर गर्व को धरे अर जे महत्पुरुष हैं तिनके महा कल्याण हु कर गर्व नाहीं जो लक्ष्मीनाथ हैं तिनके मद कहा।।80।। तू जाने है यह चक्र मेरे आया मैं चक्री होय चुका सो मैं तुझे इस चक्र सहित अर यह तेरे बाबा समुद्रविजयादिक दशार्हन तिनके चक्र कहिये समूह सहित अर यह दुष्ट राजा जे तुझसे आय मिले हैं, तिनके समूह सहित तुझे समुद्र विषें डुबोऊंगा। ऐसे कठोर वचन जरासिंध कृष्ण को कहे। तब चक्री चक्र को भ्रमायकर प्रतिचक्री पर डारा सो चक्र शीघ्र ही चला अर प्रतिहरि की वक्षस्थल रूप वज्र की भीति ताहि भेदता भया। प्रतिहरि को मारकर तत्काल हरि के हाथ विषे चक्र आया। सो यह उचित ही है काज सिद्ध भया, तब काल क्षेप काहे का।।83।।

जब हरि की विजय भई तब देवन के हर्ष भया। अर हरि ने पांचजन्य नामा शंख बजाया, सो समस्त यादवों के मन को हरता भया, अर रथनेमि अनावृष्टि अर्जुन यह सेना के अग्रेश्वर शंखध्वनि करते भये। अर कृष्ण के कटक में वादित्रों की ध्वनि होती भई जैसी समुद्र के गर्जने की ध्वनि होय तैसी वादित्रों की ध्वनि होती भई अर सर्वत्र अभय घोषणा फिरी जो कोई काहू को मार न सके अर सबों का भय मिट गया अर परसेना के सब ही बिना ही वासुदेव की आज्ञा में आये।।86।। अर राजा

दुर्योधन अर द्रोण अर दुःशासनादिक विरक्त होय विदुर मुनि के निकट जिनेश्वरी दीक्षा धारते भये।।87।। अर सुदर्शन नामा उद्यान विषे राजा कर्ण दमवर नामा दिगम्बर के निकट जिनेश्वरी दीक्षा धारते भये।

कैसी है वह जिनदीक्षा, निर्वाण के जे सुख तिनकी देनेहारी है। स्वर्ग के हैं अक्षर जिनमें ऐसे राजा कर्ण ने कुण्डल उस वन में तजे तब से वह स्थानक कर्ण स्वर्ण कहावे है।।89।। जब हरि प्रतिहरि का संग्राम होय चुका तब धनपति तो यदुपति को पूछ कर स्वर्ग लोक गया अर यादव राजा अपने अपने डेरों में आये अर मधुसूदन कहिये कृष्ण सो महाभारत विषे जरासिंध को पड़ा देख अति सोचकर व्याकुल भये। जरासिंध कैसा देखा, मानो समुद्र विषे सूर्य ही पडा है। उसकी मरण दशा देख मधुसूदन रुदन किया, सो रुदन कर नेत्र ऐसे अरुण होय गये मानो जपा के पुष्प ही हैं अर कृष्ण के आंसू पड़े सो मानो जरासिंध को जल ही दिया।।91।।

गौतम गणधर कहे हैं – हे श्रेणिक! यह प्राणी शुभ के उदय विषे सम्पदा को भोगवे है। वह संपदा प्रचंड पुरुषों के प्रताप को उल्लंघनहारी है, अर जब सुख का क्षय होय तब आपदा को भजे। इसलिये भव्यजन सम्पत्ति-विपत्ति दोनों समान जान मोक्ष का कारण जो जिनभाषित निर्मल तप उसे आदर से करो।।92।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ जरासिंधवधवर्णनो नाम द्वापंचाशः सर्गः समाप्तः।।52।।

सीताजी का रामचन्द्रजी को संदेश

अश्रुपातरूप जल की धारासूं मुखकमल प्रक्षालती हुई सीता कहती भई कि हे सेनापति! तू मेरे वचन रामसूं कहियो कि मेरे त्याग का विषाद आप न करणा, परम धीर्यकूं अवलम्बनकर सदा प्रजा की रक्षा करियो, जैसे पिता पुत्र की रक्षा करै। आप महान्यायवंत हो अर समस्त कला के पारगामी हो, राजाकूं प्रजा ही आनन्द का कारण है। राजा वही जाहि प्रजा शरद की पूनों के चन्द्रमा की न्याईं चाहे। अर यह संसार असार है, महा भयंकर दुखरूप है। जा सम्यग्दर्शनकर भव्यजीव संसारसूं मुक्त होवे हैं सो तिहारे आराधिवे योग्य है। तुम राजतैं सम्यग्दर्शनकूं विशेष भला जानियो। यह राज्य तो विनाशीक है अर सम्यग्दर्शन अविनाशी सुख का दाता है सो अभव्य जीव निंदा करैं तो उनकी निंदा के भय से हे पुरुषोत्तम! सम्यग्दर्शनकूं कदाचित् न तजना। यह अत्यन्त दुर्लभ है।

– पद्मपुराण भाषावचनिका, पृष्ठ 605

तिरेपनवाँ सर्ग (प्रथम)

अथानन्तर – प्रभात ही सूर्य के उदय पहली हरि जाग सबको दर्शन देते भये अर सूर्य्य भी उदय भया। कैसा है सूर्य्य, हरि की न्यांई औरों कर अलंघ है तेज जिसका अर उद्योत किया है सब दिशा विषे जाने। प्रभात ही कृष्ण जे घायल हैं दोनों सेना के तिनके यत्न कराये अर जे मृतक भये हैं जरासिंध आदि तिनकी दग्धक्रिया करी।।2।। अर सभा विषे समुद्रविजयादिक सब ही कृष्ण सहित तिष्टे संते वसुदेव का आगम देखे हैं।।3।। परस्पर सब ही भाई बतलावें वसुदेव समाचार भी न आये सो कहां हैं? कैयक पुत्र भी उनकी साथ गये हैं प्रद्युम्न कुमार अर संबुकुमार यह दोनों पोते भी गये हैं तिनकी खबर भी न आई। इस भांति सब ही यादव परस्पर बात करे हैं बाल अर वृद्ध सब ही वसुदेव की वाट देखे हैं अर जैसे गाय बछड़ों की ओर देखे तैसे समुद्रविजयादि बड़े वसुदेव की बाट देखे हैं अर जैसे बछड़े गाय की ओर देखे हैं तैसे बलदेव वासुदेव आदि वसुदेव की बाट देखे हैं उसी समय आकाश विषे उद्योत दृष्टि पड़ा अर बेगवती नामा विद्याधरी आई अर उसके साथ एक नागकुमारी देवी आई। यह नागकुमारी वेगवती की दादी का जीव है। वह ऋषदत्ता तपस्विनी जिनधर्म को आराध देवी भई सो सभा के मध्य आयकर समुद्रविजय से कहती भई – जो तुम कृतार्थ होवो।

वसुदेव ने तो सब विद्याधर जीते अर वसुदेव के पुत्र ने जरासिंध जीता। वसुदेव बहुत नीके हैं वह कुशलरूप हैं अर तुम्हारी कुशल चाहे हैं सब बड़ों को प्रणाम किया है अर छोटों से असीस कहा है। यह वचन देवी के सुनकर सब ही यादव हर्षित भये। अर रोमांच होय आये अर इसे पूछते भये। जो उन विद्याधर कैसे जीते? तब देवी कहती भई – वसुदेव संग्राम विषे सामर्थ्य के समाचार सुनो। यहां से वसुदेव विजयार्द्धगिर जाय कर सब साले सुसरे विद्याधर भेलेकर अर सब विद्याधर घेरे वह समस्त सेना सहित जरासिंध की मदत आवते थे सो उनको रोक अर दोनों सेनाओं में महा युद्ध भया। सो प्रजा को महा प्रलय काल की शंका भई।।15।। सो दोनों सेनाओं के युद्ध में रथ हाथी मनुष्य तुरंग इत्यादि अनेक विध्वंस भये। वसुदेव के पुत्र अर प्रद्युम्न अर संबुकुमार यह पौत्र तिन सहित विद्याधरों से युद्ध किया, उनके समूह रूप वन को भस्म करने अर्थ दावानल रूप आचरते भये वाण रूप है ज्वाला जिनके।।17।। सो युद्ध के समय आकाश विषे देव गम्भीर शब्द करते भये जो वसुदेव का पुत्र नवमा वासुदेव भया। अर रण विषे चक्र कर जरासिंध मारा ऐसी कहकर वसुदेव के रथ पर दोनों ने नाना प्रकार के रत्नों की वृष्टि करी यह देवों की बाणी सुन रत्नवृष्टि देख सब ही वैरी विद्याधर भय मान इधर उधर से वसुदेव के शरण में आये।।21।।

अर वसुदेव के पुत्रों को अर प्रद्युम्न शंबुकुमार को विद्याधर पुत्री परणावते भये। हम वसुदेव की पठाई तुम पै आई हैं कुशल क्षेम की वार्ता कहने अर्थि हमारा आबना भया है अर अनेक विद्याधरों के ईश्वर भांति भांति की भेंट लेय कर वसुदेव का लार नारायण की भक्ति को आवे हैं।।24।। इस भांति वह नागकुमारी हर्ष के समाचार कहे है उस ही समय आकाश के मार्ग विमानों के समूह कर विद्याधर वसुदेव के साथ आवते भये। सो विमानों से उतर वसुदेव के पीछे बलदेव वासुदेव को प्रणाम कर नाना प्रकार की वस्तु भेंट करते भये।।26।। बलदेव अर वासुदेव पिता को देख उठ कर प्रणाम करते भये अर बसुदेव ने दोनों छाती से लगाये अर बहुत आसीस दई अर बसुदेव सब बड़े भाइयों को प्रणाम करते भये। प्रद्युम्न अर संबुकुमार यथायोग्य सब बड़ों को प्रणाम करते भये। अर वह विद्याधर वसुदेव के साथ आये थे तिनका बलभद्र अर वासुदेव ने सन्मान किया अर वे बलभद्र वासुदेव का दर्शन कर अपना जन्म सफल मानते भये।।30।।

अथानन्तर – बलदेव वासुदेव दोनों भाई पश्चिम की दिशा प्रयाण करते भये। दोनों भाई आनन्द कर पूर्ण सिद्ध भये हैं सर्व मनोरथ जिनके। जिस क्षेत्र विषे जरासिंध हत्या उस क्षेत्र विषे सब यादवों के आनंद भया सो वह स्थानक आनंदपुर कहाया तहां हरि ने अनेक जिनमंदिर कराये।।32।। फिर चक्र की पूजा कर सर्व रत्न कर मण्डित मधुसूदन आय भरत क्षेत्र को जीतता भया। तीन खण्ड के देव अर दानव अर मानव सब जीते वर्ष आठ तक दिग्विजय करी निरन्तर इष्ट पदार्थों कर सेव्यमान जो कृष्ण सो जीतने योग्य है तिन सबों को जीत कर कोटि शिला की ओर आया। कैसी है वह कोटि शिला, मुक्त भये हैं कोटि मुनि जहां से इसलिये महा तीर्थ है।।35।। वह पवित्र शिला उसे प्रदक्षिणा देय प्रणाम कर सिद्धों का ध्यान धर कृष्ण दोनों भुजाओं से चार अंगुल उठावता भया वह शिला पर एक योजन ऊंची अर एक योजन चौड़ी अर एक योजन ही लम्बी अर तीन खंड के सब देव उस शिला की रक्षा करे हैं। वह शिला पहला वासुदेव त्रिपृष्ट उसने मस्तक ऊपर हाथ ऊंचे करिये इतनी उठाई अर दूजे द्विपृष्ट उसने मस्तक प्रमाण उठाई।।38।।

अर तीजा स्वयम्भु उसने कंठ पर्यन्त उठाई अर चौथा पुरुषोत्तम उसने कुच पर्यन्त उठाई अर पांचवां पुरुषसिंह उसने हृदय पर्यन्त उठाई।।39।। अर छठा पुण्डरीक उसने कटि पर्यंत उठाई अर सातवां दत्त उसने जांघों तक उठाई अर आठवां लक्ष्मण उसने गोड़ा पर्यन्त उठाई अर नवमां कृष्ण उसने चार अंगुल उठाई। इस भांति सब नारायण कोटि शिला को उठावते भये सो काल का योग पाय बड़े पुरुषों का बल घटे है शिला उठावने के बल कर सबों ने जानी यह महाबली है। इस समान देवबल औरों का नाहीं सो सम्पूर्ण दिग्विजय कर अर्द्ध चक्रवर्ती जो कृष्ण सो द्वारका की ओर चले सो कई

एक दिन में द्वारका जाय प्राप्त भये। कैसी है द्वारका, सुन्दर है द्वार जिसके अर कैसे हैं कृष्ण, पुरुषों की असीस कर बढ़ा है आनन्द जिनके जैसे स्वर्ग विषे इन्द्र प्रवेश करे तैसे महा शोभायमान जो द्वारावती उस विषे नरेंद्र प्रवेश करता भया। जब द्वारिका आये तब सब ही देव विद्याधर साथ आये सो द्वारका विषे यथाविधि अपने-अपने स्थान तिष्टे। दूसरे दिन सब भूचर खेचर देव भेले होय कर बलभद्र नारायण का अभिषेक किया अर सबों ने कही यह आधे भरतक्षेत्र के प्रभु हैं इसमें संदेह नहीं। यह बलभद्र नारायण प्रसिद्ध पुरुष हैं।।45।। दोनों भाई सिंहासन पर विराजकर प्रथम ही जरासिंध का पुत्र सिंहदेव उसका अभिषेक कराया। राजग्रही का राज्य दिया अर अति स्नेह किया अर अनेक देश दिये फिर राजा उग्रसेन का पुत्र द्वार उसे अभिषेक कराय मथुरापुरी का राज्य दिया अर समुद्रविजय के पुत्र रथनेमि श्रीनेमिनाथ का दुमात भाई उनको शौरीपुर का राज्य दिया। महानेमि सुनेमि इत्यादि नेमिनाथ के दुमात भाई हैं।।46।।

अर हस्तिनापुर का राज्य पांडवों को दिया इनसे हरि का अधिक स्नेह है अर हिरण्यनाभि जरासिंध का सेनापति सो तो युद्ध विषे अनावृष्टि से लड़ परभव गया। उसका छोटा भाई रुक्मनाभ राजा रुधिर का पुत्र उससे अति स्नेह कर कौशल देश दिया। अर जितने भूमिगोचरी तथा सब विद्याधर उन्हों को वसुदेव ने अपने अपने स्थानक दिये। अर सबों को विदा किये सो पाण्डवादिक अपने अपने स्थानक गये अर द्वारका विषे यादव ऐसे रमे जैसे देव स्वर्ग विषे रमे। कृष्ण के रत्न सात - प्रथम सुदर्शन नामा चक्र 1 जिस कर शत्रु वर्ग को सुख नहीं अर सारंग नामा धनुष 2 जिसकी ध्वनि सुन शत्रु कम्पायमान होवें अर सुनंदा नामा खड्ग 3 कौमुदी नामा गदा 4 अमोघ मूलनामा शक्ति 5 पंचजन्य नाम शंख 6 अर कौस्तुभ नाम मणि इत्यादि 7 रत्न वासुदेव के होते भये। उन कर अतुल प्रताप यह सात रत्न दिव्य मूर्ति हरि के हितकारी होते भये।।52।। अर बलभद्र के अपराजित नामा हल सो महा दिव्य आयुध है अर शक्ति नामा मूसल दिव्य गदा अर रत्न माला इत्यादि रत्न बलदेव के होते भये। कैसा बलभद्र जीता है, रिपु मण्डल का पराक्रम जिसने।।53।। अर्धचक्री कहिये कृष्ण वासुदेव उसके सोलह हजार रानी अर आठ हजार गणवद्ध देव शरीर के रक्षक।।54।। उनके सेवनीक सुख को भोगता भया हरि के सोलह हजार रानी सो देवांगनाओं के विभ्रम की हरणहारी अर बलभद्र के आठ हजार रानी सुरांगनाओं से भी अधिक उन सहित देवों के से सुख भोगता भया।।55।। सभी यादव जिनमत के अधिकारी हिम ऋतु शिशिर ऋतु वसंत ऋतु ग्रीष्म वर्षा ऋतु शरद ऋतु इन छहों ऋतुओं विषे द्वारका के मध्य मणियों के मंदिर तिन विषे सुन्दर स्त्रियों सहित रमते भये।।57।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ कृष्णविजयवर्णनो नाम त्रिपंचाशः सर्गः।।53।।

तिरेपनवाँ सर्ग (द्वितीय)

अथानन्तर – राजा श्रेणिक गौतम स्वामी को पूछता भया – हे प्रभो! पांडवों का विशेष चरित्र मुझे कहो। तब संदेह के समूह को निवारण हारे गौतम गणधर कहते भये – हे श्रेणिक! हस्तिनापुर विषे पांडव सुख से राज करें कृष्ण की प्रबलता कर बढ़ा है हर्ष जिनके।।2।। जब हस्तिनापुर विषे पांडवों का अखंड राज्य भया तब प्रजा को अति सुख उपजा सो सब ही प्रजा दुर्योधनादिक को भूल गई।।3।। एक समय पांडवों की सभा विषे नारद आया। अढाई द्वीप विषे अखंड है गति जिसकी अर प्रचंड है चित्त जिसका अर स्वभाव ही कर कलह प्रिय है सो सब ही भाइयों ने आदर सहित नारद का विनय किया फिर नारद राजलोक में गये सो सबों ने विनय किया। अर द्रोपदी किसी कार्यकर व्याकुल चित्त थी सो निकसवे पैसवै कर नारद को न देखा।।5।।

सो अग्नि जैसे जल के प्रसंग से प्रज्वलित होय तैसे नारद क्रोध कर प्रज्वलित भया। अनादर कर दुखित प्राणी सज्जन का अवसर न जानें।।6।। द्रोपदी को दुख देने का है अभिप्राय जिसके सो इसके हराने का निश्चय कर धातुकी खंड का पूर्वार्द्ध भरतक्षेत्र तहां अंग देश विषे अमरंका नामा नगरी उसमें प्रवेश किया तहाँ राजा पद्‌मनाभ सो अति कामी स्त्रियों का अति लोलुपी उससे मिला।।8।। उसने जानी यह नारद अढ़ाई द्वीप में फिरे है सो मेरी सी रानी भी किसी के है ऐसी विचार यह नारद के साथ अपने राजलोक में गया सब स्त्री नारद को प्रणाम करती भईं।

तब राजा नारद से पूछी – हे प्रभो! तुम मेरी सी राणी किसी अर ठौर भी देखी? तब नारद जानी इसके स्त्रियों का गर्व है अर यह विषयाभिलाषी है। जब इसके समीप द्रौपदी के रूप की लावण्यता लोकातीत वर्णन करी उसके द्रौपदी की अभिलाषा रूप पिशाच लगाकर द्वीप क्षेत्र नगरों की वार्ता कर तत्काल आप विहार कर गया।।11।। अर राजा पद्‌मनाभ द्रौपदी के अर्थि संग्रामक नामा पाताल वासी देवता उसे आराधता भया।।12।। सो वह देव उसका आराधा हुवा अर्जुन की स्त्री द्रौपदी उसको सोती को सेज सहित उठाय राजा पद्‌मनाभ की पुरी ले गया।।13।। अर देव ने पद्‌मनाभ से कही – उसे लाया हूं सो तेरे मन्दिर के उपवन विषे है। तब यह जाय कर द्रौपदी को देखता भया मानो साक्षात् देवांगना ही है।।14।। सो द्रौपदी सर्वतोभद्र नामा महल विषे सूती थी सो अर ही स्थानक देख कर जानी यह स्वप्न है सो स्वप्न की शंका कर सेज विषे सोय गई।।15।।

अर लग रही है आंख जिसकी तब उसका अभिप्राय जान यह राजा धीरे धीरे उसके निकट जाय प्रिय वचन कहता भया – हे विशालनेत्रे! हे घटस्तनी! कहिये घट समान है स्तन जिसका यह धातकी

खंड द्वीप है। मैं पद्मनाभ नामा राजा हूं सो नारद ने तेरा मनोहर रूप वर्णन किया उसके अर्थि मैं देव आराधा सो देव तुझे ले आया है। यह सुन कर महा सती चकित चित्त होय रही सो मन में चिंतवती भई – महा दुःख मेरे उदय आया सो अब यही प्रतिज्ञा है जौं लग मुझे अर्जुन का दर्शन न होय तौ लग मेरे आहार का त्याग है अर शरीर के संस्कार का त्याग है।।20।। कैसी है द्रौपदी, अभेद्य है शील जिसका सो शील रूप वज्र के कोट में बैठी राजा पद्मनाभ को कहती भई। कैसा है वह, काम कर पीड़ित है चित्त जिसका।

द्रौपदी कहे है मेरे भाई तो बलभद्र नारायण हैं अर अर्जुन मेरा पति है अर मेरे दोय जेष्ट एक युधिष्ठर दूजा भीम सो महायोधा अर दोय देवर नकुल अर सहदेव सो यमराज समान हैं सो उनके मनोरथ रूप रथ जल अर थल विषे विचरे हैं। कोई निवारने समर्थ नहीं इसलिये जो तू अपना कल्याण चाहे है अर कुटुम्ब का भला चाहे है तो मुझे शीघ्र ही मेरे स्थान को पहुंचा दे, मैं कालकूट विष समान हूँ।।24।। इस भांति द्रौपदी ने कही परन्तु यह आग्रह न तजे। इसका रूप देख अर नारियों से इच्छा घट गई। तब यह महा सती एक बुद्धि उपाय उससे कहती भई – मेरे पीहर सासरा के एक मास में न आवे तो तेरी इच्छा होय सो करना तब वह सुन कर चुप हो रहा अर अपने राजलोक की सर्व स्त्री इसके लुभावने के अर्थ रक्खीं अर यह महा सती निर्भय होय आहार का त्याग करती अश्रुपात डारती अपने पति की बाट देखे अर वहां हस्तिनापुर विषे प्रभात समय द्रौपदी को न देख कर पांडव व्याकुल भये।

कोई उपाय न जाना तब यह पांचों भाई हरि के निकट गये। कैसे हैं हरि, पराये दुःखकर दुःख है जिसके। सो सब भरतक्षेत्र विषे द्रौपदी हेरी सो किसी ठौर न पाई तब सब यादवों ने विचार किया जो इस क्षेत्र में अर क्षेत्र विषे कोई क्षुद्र ले गया। तब सब यादव भेले होय मंत्र करे हैं उसही समय नारद आया। समस्त यादवों कर भरी जो सभा उस विषे हरि से कही मैं धातुकी खंड विषे द्रौपदी अति दुर्बल अमरंकका नामा नगरी विषे पद्मनाभ राजा के मंदिर विषे देखी सो निरंतर आंसू डारे है अर पद्मनाभ के राजलोक की स्त्री उसे आदर से सेवे हैं अर शील मात्र ही आधार जिसके सो निस्वास डारे है। यह द्रौपदी की वार्ता नारद के मुख से सुनकर कृष्ण नारद की प्रशंसा करते भये अर प्रसन्न भये। कैसा है नारद, बुरा भी करे है अर भला भी करे।

तब कृष्ण बोले – वह दुष्ट द्रौपदी को हरि कर कहां जावेगा? वह मृत्यु को चाहे है सो उसे काल के मन्दिर पहुंचावेंगे। इस भांति कह कर कृष्ण वैरी से द्वेष रूप भये। अर द्रौपदी के लायवे को उद्यमी भये। वासुदेव दक्षिण के समुद्र के तट रथ चढ़ गये।।38।। तहां लवण समुद्र के अधिष्ठाता देव को

आराध कर पांचों पांडवों सहित धातुकी खंड के देखने की इच्छा कर चले देव ने देवोपुनीत छह रथ दिये तिनमें बैठ कर पांडवों सहित सो शीघ्र ही समुद्र को उल्लंघकर धातुकी खंड के भरतक्षेत्र में गये। अमरंकका नामा नगरी के उद्यान विषे विराजे सो पद्मनाभ को इनकी वार्ता हलकारों ने कही जो छह रथ हैं तिनमें कृष्ण पांडव हैं अर उनके संग सेना कुछ भी नाहीं। यह वार्ता सुन कर राजा पद्मनाभ चतुरंगसेना सहित इनसे युद्ध करने अर्थि नगर बाहर निकसा सो पांडवों ने युद्ध कर भगाया सो पीछे नगर में पैठा अर नगर के द्वार जुड़ गढ पकड़ बैठा सो गढ पांडवों कर अलंघ तब कृष्ण क्रोध कर गढ़ के लात की दई सो गढ़ का चूर हो गया कोट दरवाजे सब चकचूर भये। अर नगर के मंदिर ढहने लगे लोग व्याकुल होय भाजे भाजे फिरे पुर में कोलाहल बहुत भया।।44।।

तब वह पद्मनाभ नगर के लोक राजलोक अर लोक सहित कोई उपाय न जान भय कर व्याकुल द्रौपदी के शरण गया महा कंपायमान शीघ्र ही द्रौपदी पै जाय अर कहता भया हे देवी हे दयावती! हे सौम्ये! हे पतिव्रते! क्षमा करो क्षमा करो मुझे अभय दान देवो मैं अपराधी तुम्हारी शरण आया हूँ।।46।। तब इसे शरण आया जान यह महा सती शीलवती कृपावती कहती भई – हे राजा! तू स्त्री का भेष धर वासुदेव स्वामी के शरणे जावो वह नरोत्तम महा दयालु हैं जो अपराध भी करे अर उनके पांवों पड़े तो क्षमा करें। वह सब ही पर दयावान हैं अर स्त्री तथा बालक पर अति दयावंत हैं। जे शस्त्र से डरे अर युद्ध से डरे तिनको कान्ह कभी न मारें। द्रौपदी के यह वचन सुन वह राजा पद्मनाभ आप स्त्री का भेष धर अपनी स्त्रियों सहित कृष्ण के शरणे आया। वह शरणागत पालक पृथिवीपति उसको अभयदान देय विदा करते भये। कैसे हैं कृष्ण, जो शरणे आवे उसके भय के हर्ता हैं अर दुष्टों को दंड के दाता हैं।

अथानन्तर – द्रौपदी कृष्ण को प्रणाम कर कुशल क्षेम पूछती भई अर कृष्ण ने उसकी कुशल क्षेम पूछी अर अर्जुन द्रौपदी को उर विषे लगाय विरह विथा निवारी अर अपने प्रस्वेद सहित कर तिन कर इसकी चोटी खुल रही थी सो बांधी अर इसके प्रतिज्ञा थी जिस दिन पति को देखूं उसही दिन भोजन करूं अर पति न आवे जितने मेरे शरीर का संस्कार नहीं शिर के बिखरे बाल न संवारूं जब पति आवेगा तब ही बेणी बन्ध करेगा बेणी कहिये चोटी सो बांधेगा सो पति ही ने चोटी बांधी अर उस ही समय स्नान कर पांचों पांडवन सहित कृष्ण भोजन कर अर द्रौपदी को भोजन कराया अर द्रौपदी अपना दुःख निवेदन कर आंसुओं सहित नाष्या।

भावार्थ – आंखों के आंसूं न पड़े मानो दुःख ही गया।।53।। हरि जो है द्रौपदी को रथ में चढ़ाय ले चले समुद्र विषे आय अर शंख बजाया सो शंख के शब्द कर दशों दिशा पूरित भई। उस समय इस

भरतक्षेत्र का वासुदेव कपिल वहां के तीर्थेश्वर के दर्शन करने आया था वहां की चंपापुरी उसके उद्यान विषे भगवान का समोशरण था सो कपिल ने प्रभु को पूछी – हे नाथ! यह शंख कौन ने बजाया? मेरे समान शक्ति का स्वामी दूसरा वासुदेव मेरे इस भरतक्षेत्र में नहीं इस भांति कपिल ने पूछी। तब जिनेन्द्र ने कही – यह जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र का कृष्ण नामा नौवां नारायण है सो अमर कंकापुरी का राजा पद्मनाभ ने द्रौपदी हरी उस कारण इनका आगमन भया।

तब कपिल ने प्रभु से कही – हे नाथ! वहां का वासुदेव यहां आवे अर मैं न मिलूं अर उनकी पाहुण गति न करूं यह योग्य नहीं। उससे मिलने की इच्छा है तब भगवान ने कही – किसी काल में तीर्थेश्वर से तीर्थेश्वर का अर चक्रेश्वर से चक्रेश्वर का अर हरि का हरि से अर प्रतिहरि का प्रतिहरि से अर बलभद्र का बलभद्र से मिलाप न भया। अर न होयगा।।58।। सो तू जायगा तो तेरा अर उसका मिलाप ध्वजाओं कर होयगा तू उसकी ध्वजा देखेगा अर वह तेरी देखेगा तेरे शंख का नाद वह सुनेगा अर उसके शंख का नाद तू सुनेगा। मुख दर्शन कदाचित् न होय सो यह गया जो प्रभु ने कहा था सो भया। इसके रथ की ध्वजा उसने देखी अर उसके रथ की ध्वजा इसने देखी अर शंखध्वनि सुनी। फिर कपिल अपनी चम्पापुरी गया अर अन्याय मार्ग का कर्ता अमरकंकापुरी का राजा पद्मनाभ उसका बहुत तिरस्कार किया जिससे आगे को ऐसे काम न करे।।31।।

ज्यों कृष्ण समुद्र को तिर गये थे त्यों ही शीघ्र ही तिर पीछे जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में आये समुद्र के तट केशव तो विश्राम किया। अर पांडव नाव कर गंगा को तिर दक्षिण तट विषे आय तिष्टे। भीम का स्वभाव कौतुक उसने कृष्ण के निकट नाव पीछे न भेजी। अर नाव छिपा दी अर कृष्ण उसही समय समुद्र के तट से गंगा के दूसरी तट द्रौपदी सहित आये अर वहां ही से पांडवों को पूछी – तुम गंगा कैसे तिरे।।65।। तब भीम कृष्ण की शक्ति देखने को झूठ बोले जो हम भुजाओं से तिरे तब कृष्ण जानी यह सत्य कहे है तब आप महाबली तुरंग अर सारथी सहित रथ को एक हाथ पर उठाय कर एक भुज पर जंघों कर अथाह नदी को ऐसे उल्लंघी जैसे कोई गोडा प्रमाण जल को उल्लंघे।।66।।

तब पाण्डव आश्चर्य को प्राप्त भये अर शीघ्र ही सन्मुख जाय प्रणाम करते भये अर वासुदेव की अतुल्य शक्ति उसकी स्तुति करते वासुदेव को उर से लगावते भये।।67।। अर भीम का हास्य रूव स्वभाव तो हंस कर कृष्ण से क्रीड़ा की वार्ता कहता जो हमने तुम्हारी शक्ति देखने अर्थ पाछी नाव न पठाई सो तुम्हारी शक्ति का कहा कहना। तब कृष्ण इनसे विरक्त चित्त भये प्रथम तो बड़ों से हास्य न करना अर जो उनके प्रसन्न होने अर्थ हास्य करिये तो देश काल देख रीतिप्रमाण उनका भाव देख करिये सो इन बिना समय हास्य करी उस कर कृष्ण उदास होय पांडवों से कहते भये – हे कुपांडवों!

जो मनुष्य से न बने ऐसे अमानुषीक मेरे कर्म इस जगत विषे तुम अनेक बार देखे तौ भी तुम्हारे संदेह न गया। इस गंगा के उतरने विषे मेरी शक्ति तुमने क्या देखी।।69।। इस भांति इनसे उलाहना देते मनमोहन इन सहित हस्तिनापुर आये अर अपनी बहन सुभद्रा उनका पोता परिक्षत अर्जुन के पुत्र का पुत्र उसे हस्तिनापुर का राज देय पांडवों को यहां से काढ़े।।70।। अर आप समस्त सावन्तों सहित द्वारका गये अर सब यादव सन्मुख आये। कृष्ण पुरी में जाय सवों को आनंद उपजाया अर निज स्त्री हैं उनका बहुत सन्मान किया।।71।।

अर पांडव हस्तिनापुर से निकल दक्षिण मथुरा की ओर स्वामी की आज्ञा प्रमाण चले। स्वामी की आज्ञा इनको ऐसी भई जैसे बिना समय असणिपात पड़े सो यह जाय कर दक्षिण मथुरा विषे प्रवेश करते भये। सो दक्षिण मथुरा अनेक प्रवीण जन तिनकर भरी है अर पांडव भी महा निपुण हैं।।72।। यहां समुद्र की लहर महा मनोहर अर तट के वन विषे लौंग इलायची अगर चन्दन तिनकी सुगन्ध पवन कर सब दिशा सुगंध रूप होय रही है ऐसे मलयागिर के तट तिन विषे पांचों भाई विहार करते भये।।73।।

यह कथा गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहे हैं – हे श्रेणिक! कहां लवण समुद्र जम्बूद्वीप के परे सो जम्बूद्वीप जम्बूवृक्षों कर मंडित है अर कहां धातकी खंड की पृथिवी जहां यहां के मनुष्य की अगम्य तहां वासुदेव गये अर कार्य्य कर आये सो जिनधर्म के प्रभाव से क्या क्या सिद्धि न होय। जिन जीवों ने पूर्व भव विषे जिनधर्म का आराधन किया है तिनको कुछ दुर्लभ नहीं।।75।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ द्रौपदीहरणे पांडवदक्षिण-मथुरानिवेशवर्णनो नाम त्रिपंचाशः सर्गः।।53।।

यह मनुष्यभव भोग योग्य नाहीं, वैराग्य योग्य है। काहु एक प्रकारसूं दुर्लभ मनुष्य देह पाया, जैसे दरिद्री निधान पावै, सो विषयरस का लोभी होय वृथा खोय, मोहकूं प्राप्त भया। जैसे सूखे ईंधनसूं अग्निकूं कहां तृप्ति, अर नदीनि के जलकरि समुद्रकूं कहां तृप्ति? तैसै विषयसुखसूं जीवनकूं तृप्ति न होय। चतुर भी विषयरूप मदकरि मोहित भया मदताकूं प्राप्त होय है। अज्ञानरूप तिमिरसूं मंद भया है मन जाका सो, जलविषै डूबता खेदखिन्न होय त्यों खेदखिन्न हैं, परन्तु अविवेकी तो विषय ही कूं भला जानै है। – पद्मपुराण भाषावचनिका, पृष्ठ 662

चौवनवाँ सर्ग

अथानन्तर – श्री नेमिकुमार तरुण अवस्था संयुक्त तिनको इन्द्रलोक से कुवेर नित प्रति वस्त्र आभूषण लावे अर कल्प वृक्षों की माला अर सुगन्ध द्रव्य का लेप निरंतर लावे। आप बड़े बड़े राजपुत्रों कर वेष्टित सब यादवों कर शोभित जो सभा उस विषे विराजे हुते वह सभा बलभद्र वासुदेव आदि कोटिक यादवों कर पूरित जिस विषे अनेक राजा आवे हैं, नमस्कार करे हैं सभा का नाम कुसमचक्रा।।2।। तहाँ इंद्र का निर्मापा जो सिंहासन उस ऊपर श्री तीर्थेश्वर विराजे अर बलभद्र वासुदेव दोनों भाई सिंहासन के तल दोनों ओर बैठे। सभा अति सोहती भई मानो जिनराज के समीप सौधर्म ईसान इन्द्र बैठे हैं। सभा विषे कृष्ण वासुदेव अमृत रूप कथा करते थे।

कैसे हैं कृष्ण, अनेक राजाओं कर सेवनीक हैं वासुदेव पद जिनका अर कैसे हैं राजा, प्रगट है शूरवीरता अर शरीर की दीप्ति जिनकी अर महा विभूति कर मंडित हैं। उस समय सभा विषे बलवंतों के वल की वार्ता चली तब किसी ने अर्जुन की प्रशंसा करी अर किसी ने युधिष्ठर की प्रशंसा करी। किसी ने भीम की प्रशंसा करी अर किसी ने नकुल सहदेव की प्रशंसा करी किसी ने बलभद्र की प्रशंसा करी किसी ने हरि की प्रशंसा करी जो पर्वत उठाय लिया अर कोटिशिला उठाई सो सबों ने देखी। इस भांति सभा विषे अनेक राजाओं की प्रशंसा भई।

तब पद्‌मनाभ बलभद्र बोले – तुम सब औरों की वृथा स्तुति करो हो। श्रीभगवान नेमि जिनेंद्र का सा बल तीन लोक में नहीं यह चाहें तो अपने करतल कर पृथिवी को उठाय लेंय अर समुद्र को दिशाओं विषे बखेर देवें यह जगनायक हैं इनका सा बल सुर नर में नहीं। यह वचन बलभद्र के सुनकर वासुदेव मुलक कर जिनदेव से कहते भये। अद्‌भुत बल के धरणहारे आप हो तो मल्लयुद्ध में क्यों न परखिये तब भगवान जिनेश्वर देव कही हमसे मल्लयुद्ध तो तुम कहा करोगे देखें, हमारा चरण ही सिंहासन से चलाओ तुम बड़े भाई हो तुमसे मल्लयुद्ध कहा करिये।।10।।

तब कृष्ण जिनराज के बल के परखने अर्थ उठकर चरण चलाने को उद्यमी भये सो चरण की एक अंगुली भी चलाय न सके। कैसे हैं जिनके चरण, कोटिक चन्द्रमा की ज्योति को हरे ऐसे हैं नख जिनके सो कृष्ण खेद खिन्न होय पसेव से भर गये अर स्वांस भर आये तब हाथ जोड़ विनती करते भये – हे देव! तुम्हारा बल लोकोत्तर है तुम समान त्रैलोक्य में अर कोई बलवान नहीं तुम्हारा गर्भ अर जन्म देवोंकर पूजनीक है हम मंदबुद्धि धर कर अयुक्त कौतुक किया सो क्षमा करो अर चित्त में बड़ा पश्चात्ताप भया जो मैं विना विचारे अयुक्त किया उसका फल अपमान भया अर मन में विचारी

इनके बल का थाह नहीं अथाह वात है। वासुदेव के बल का गर्व था सो गया अर साथ में इन्द्र का आसन चलायमान भया सो इन्द्र देवों सहित आय प्रभु की पूजाकर स्तुति नमस्कार कर अपने धाम गये।।13।। भगवान जिनचंद्र अनेक देव अर राजकुमारों सहित अपने महल पधारे अर हरि भी निगर्व होय अपने धाम गये अर हरि के चित्त विषे कछु एक शंका उपजी जो राज का अर्थी होय सो जिनराज से भी संके। विद्यावान बलवान पुरुष के वश राज रहे ऐसा विचार कृष्ण के होता भया अर जिनराज तो सदा प्रतापरूप इनके कुछ वितर्क नहीं महा शांतरूप हैं।

अथानन्तर – निरंतर जिनचंद्र को अपने सैकड़ों बल्लभ तिन सहित केशव सेवै स्नेह का भरा दर्शन करे अर्चा करे।।15।।

यहाँ एक अर कथा चले है – विजयार्द्ध विषे एक श्रुत श्रोणित नामा नगर तहां बाण नामा राजा पृथिवी विषे प्रसिद्ध अर रणसंग्राम विषे महा शूरवीर उसके ऊषा नामा पुत्री सो गुण कला रूप आभरण तिन कर शोभित पृथिवी में प्रसिद्ध उसने प्रद्युम्न के पुत्र अनिरुद्ध के उदार गुण सुने सो उसके चित्त में अनिरुद्ध वसा उसका चित्त भी कोमल अर अनिरुद्ध भी कोमल तथापि अनिरुद्ध के गुणों का श्रवण उसके मन विषे अर तन विषे मदन रूप आताप उपजावता भया।

यहाँ कोई प्रश्न करे – कोमल को कोमल कैसे आताप उपजावे उसका समाधान। उसके भौंह वक्र अर इनकी वृत्ति वक्र सो उस वक्र वृत्ति ने उसका मन अपने आधीन किया।।18।। सो इसके चित्त की व्याकुलता कोई जाने नहीं तब उसे जे हितकारी स्त्री हैं तिनने पूछी सो उसने अनिरुद्ध का वृत्तांत कहा जो मैं उसके गुण सुने हैं सो वरूंगी तब उसकी सखी विद्याधरी अनिरुद्ध को रात्रि विषे विद्याधरियों के लोक ले गई।।19।। सो ले जायकर ऊषा के सेज पर शयन कराया प्रभात ही उठ कर अनिरुद्ध देखे तो कोई अर ही स्थानक अर रत्नमई मंदिर हैं तहां मृदुशय्या विषे आप पौढ़ा है अर उठ कर देखे तो एक सुन्दर कन्या बैठी है।।20।।

कैसी है कन्या, सुन्दर हैं नितम्ब जिसके अर कठिन हैं कुच जिसके अर मनोज्ञ है तन जिसका अर तन के मध्य मनोहर त्रिबलि जिसके सो उसे देखकर अनिरुद्ध चिंतवता भया – यह मन की हरणहारी कौन है शची है पद्मावती है या यह कोई मनुष्य वधू है। ऐसी अब तक देखने में न आई अर स्थानक भी कोई अपूर्व नजर आवे है नेत्रों का हरणहारा इन्द्रलोक समान यह स्थानक है यह सत्य है या असत्य है जाग्रत है स्वप्न है सोते मनुष्य का मन भ्रमे है सो यह मेरा मन ही न भ्रमे है ऐसी आशंका अनिरुद्ध के मन में उपजी तब चित्रलेखा नामा सखी सब वृत्तांत कहती भई। अर उस ही समय सखी इन दोनों का एकांत विषे गंधर्व विवाह करावती भई सो अनिरुद्धकुमार ऊषा के महल ही

में विराजे निरन्तर श्रुत रूप अमृत का पान करते ये दोनों देव देवांगना समान वींद बींदनी तिनका सुख से काल व्यतीत होय।

समाचार हरि ने सुने तब बलभद्र अर प्रद्युम्न संबुकुमार आदि कई एक यादवों सहित तत्काल अनिरुद्ध के लायवे अर्थ विमान के मार्ग राजा बाण के नगर गये।।2।। अर यह विवाह ऊषा ने सखी के समीप एकांत में किया उसे माता पिता न जाने अर कृष्ण पुत्र को पुत्र वधू को लेने वास्ते वहां गये सो वह राजा कृष्ण से युद्ध करने का उद्यमी भया। नर तुरंग रथ हाथी यह चतुरंग सेना सहित इन पर आया सो उसे जीत कर वासुदेव ऊषा सहित अनिरुद्ध को लेकर द्वारका आये।।27।। अनिरुद्ध के विरह का दुःख सब यादवों को था सो अनिरुद्ध के आने कर सबही आनंदरूप भये द्वारका विषे सब ही यादव देवों समान क्रीड़ा करें।

अथानन्तर – बसन्त ऋतु आई सो नगर के नर नारि सब ही वन विषे क्रीड़ा को गये। वन विषे सब ही वृक्ष फूले सो कृष्ण भी अपनी सकल रानियों सहित गिरनार के बन विषे क्रीड़ा को गये सो विनती कर श्रीनेमिनाथ को भी ले गये। यद्यपि भगवान के किसी क्रीड़ा का अनुराग नहीं तथापि भाई अर भोजाई तिनके आग्रह से गये। अनेक अश्व अनेक रथ हस्ती अर अनेक योधाओं कर युक्त महा सुन्दर वस्त्राभरण पहरे जगत के ईश्वर नेमीश्वर अर तीन खंड के ईश्वर बलदेव अर वासुदेव यह तीनों ही भाई वन में गये जिनेंद्र के वृषभ की ध्वजा अर बलदेव के ताड की ध्वजा अर वासुदेव के गरुड़ की ध्वजा अर समुद्रविजयादिक दशों भाइयों के पुत्र सब ही तरुण बय वाले इनके साथ गये अर कृष्ण का पुत्र प्रद्युम्न पुष्पों के हैं बाण अर धनुष जिसके अर मगर की ध्वजा जिसके सो दशों भाइयों के पुत्रों के संग नेमिकुमार के पीछे चाले।।31।।

अर नगर के लोक अपने अपने वाहनों पर चढ़े यथा योग्य वस्त्राभरण कर मंडित वनक्रीडा के वास्ते वन में गये अर हरि की रानी आदि अनेक रानी पालकी रथ इत्यादि अनेक वाहनों पर चढ़ी वन में गईं। वह गिरनार नामा गिर नर नारियों कर अति शोभता भया। गिर के वन ऐसे शोभते भये जैसे सुमेरु के वन देव देवांगनाओं कर सोहें अर गिर पर जाय कर सब नर नारी अपने अपने वाहन से उतर वन विहार करते भये। गिर के तट अर वन विषे स्त्री पुरुष जल केल आदि अनेक केल करते भये। सब जगह नर नारी फैल गये वह वसन्त का समय तामें सुगंध पुष्पों का मकरन्द बिस्तर गया अर शीतल मंद सुगन्ध पवन दक्षिण की बाजती भई उस कर प्राणी के खेद दूर होते भये।

यद्यपि यादवों के राज में किसी को किसी का प्रकार खेद नहीं तथापि जितनी जितनी विषय क्रीड़ा हैं उतनी सब खेद रूप ही हैं सो क्रीड़ा मात्र खेद दक्षिण की पवन कर निर्वृत भया। आमों के

मोर लगे हैं तिन पर कोयल मिष्ट शब्द करे हैं जिनके शब्द सुन कर काम का उद्दीपन होय है।।35।। अर भंवर पुष्पों का मकरन्द पीय मधुर शब्द करे हैं अर कुरवक जाति के वृक्ष अर बोलसरी आदि सुगन्ध वृक्ष ते भंवरों के समूह कर सुन्दर दीखे हैं अर द्विपद कहिये मनुष्य अथवा कोयल आदि मनोहर पक्षी अर षटपद कहिये भ्रमर तिनके शब्द कर गिर के वन मनोज्ञ भासे हैं, जैसे शरणागत कर शरणागति प्रतिपाल सोहे तैसे वह वन आश्रितों कर शोभता भया अर हस्तियों के कुम्भस्थल विषे अर कानों विषे भंवर गुंजार करते थे सो आमों की मंजरी पर गये सो यह बात उचित ही है। नई वस्तु विषे रुचि विशेष होय।।38।।

पुष्पों के भार कर नय गये जे वृक्ष सो पुष्पों के चूंटने वास्ते स्त्रियों ने हाथ कर हिलाये।।39।। अर कुछ एक ऊंची थी शाखा जिनकी सो स्त्री जनों के पुष्पों के वास्ते नीची करी सो उनके कर का स्पर्श पाय प्रफुल्लित होते भये, जैसे प्रीतम प्रिया के कर का स्पर्श पाय प्रसन्न होय।।40।। उस वन विषे तरुण जन अपनी तरुणियों सहित वन भ्रमण का सुख भोग कर पुष्पों की सेज पर रति क्रीड़ा करते भये।।41।। उस वसंतऋतु विषे वन वन में अर नाना प्रकार के गुलों के लतागृह में अर तरु तरु प्रति अर सरोवर प्रति अर वापिका प्रति यादवन अर समस्त नगर के लोक क्रीड़ा करते भये। माधव कहिये कृष्ण सोई भया चन्द्रमा उसने षोडश सहस्र स्त्रियों सहित चैत्र मास वन में व्यतीत किया।

कैसा है चैत्रमास, फैल रहा है फूलों का मकरंद जिस विषे ऐसे चैत्र मास में माधव चंद्र महा सौभाग्य को धरे वन विषे विहार करते भये। हरि की सब ही स्त्री मन की हरणहारी पति की आज्ञा से वृक्ष अर बेलों कर रमणीक जो वह वन उस विषे श्रीनेमि जिनेन्द्र को विहार करावती भई।।44।। वे केशव की कामिनी अपने मुख की सुगन्धता कर वाचाल जे मधुकर तिन कर वेष्टित हैं अर वन की लताओं के पुष्पों को चूंटने विषे तत्पर हैं अर मदन के मद कर आलस्य रूप है मन अर नेत्र जिनके।।45।। सो वह मुकुंद की मनमोहिनी अपना देवर जो देवाधिदेव उसे नानाविध पति की आज्ञा प्रमाण वनक्रीड़ा करावती भईं। अपनी इच्छा से नाहीं कोई एक भावज कर से कर ग्रह वन विषे विहार करावे अर कई एक चन्द्रवदनी प्रभु को वन की शोभा दिखावे कई एक ताल के तमाल के बीजना तिन कर वयार घाले अर कई एक अशोक वृक्ष के नवीन पल्लवकर सेहरा बनावे।।47।।

अर कईएक पुष्पमाला पहरावे अर कईएक सिर पर फूल टांके कइएक कंठ विषे पुष्पों के आभूषण पहराये।।48।। इस भांति वसन्त की ऋतु विषे भगवान् नव यौवन मधुसूदन की प्रियाओं कर लडाया थका हर्ष से क्रीड़ा करता भया। वह कृष्ण की कामिनी जिन समान संसार में अर कामिनी सुन्दर नहीं सो अति भक्तिसों जैसे सेवक प्रभु की सेवा करे तैसे यह नेमीश्वर की सेवा करती भईं दोय

मास वसंत के हरि ने वन क्रीड़ाकर पूर्ण किये फिर ग्रीष्म ऋतु आई सो सूर्य की किरण अति तीव्र भई तब हरि की प्रिया जिनेंद्र से जल क्रीड़ा का आग्रह करती भईं। गिरनार गिर शीतल नीझरनाओं कर महा मनोहर तहां जल के निवाण पवित्र जलकर पूरित तिन विषे तीर्थेश्वर भौजाइयों के आग्रह से जल क्रीड़ा करते भये। यद्यपि भगवान् स्वतः स्वभाव रागरूप रस से परांगमुख हैं तथापि उस समय।।51।। जलविषे तिरना चुभकी लेना अर दूर जायकर निकलना अर परस्पर पिचकारियों कर रमना इस भांति यदुपति जलक्रीड़ा करते भये। वह भाबज भगवान के मुख कमल पर जल डारती भईं। वह षोडश सहस्र अर प्रभु अकेले परन्तु अपने हाथों के छीटों कर अर पिचकारियों की धाराओं कर सबों को हराई सब पीछे होय गईं वह जगदीश की जलक्रीड़ा जगत के मन को हरती भई जगत् के जीवों ने ऐसी क्रीड़ा कबहूं न देखी अर भांति भांति की सुगंध कर जल भी अति सुगन्धरूप होय गया जिस पर भंवर गुंजार करें सो जल मनुष्यों के मन को हरता भया।।54।।

उस जलक्रीड़ा कर तरुणियों का ग्रीष्म का दाह मिटा जैसे एक मोटा गजराज हथनियों के समूह को जीते तैसे अकेला जिनराज जल केलि विषे भौजाइयों के समूह को जीतता भया। वह सम्पूर्ण स्त्री उस जलकेल विषे तृप्त होती भईं च्युत होय गये हैं करणाभरण जिनके अर तरल होय गई है दृष्टि जिनकी अर धूसरे होय गये हैं अधर जिनके अर शिथिल होय गई हैं कटिमेखला जिनकी बिखर रहे हैं केस जिनके हरि की प्रियाओं की सखी जन वस्त्राभूषण नवीन लाई सो स्नान कर उन पहरे अर भगवान नेमिजिनेंद्र भी स्नानकर नवीन वस्त्राभरण पहरे। जिन वस्त्रों से जलकेल करी थी सो वस्त्र पखालने के वास्ते नेत्रों की शैनकर जामवन्ती को जिनेंद्र ने आज्ञा करी।

तब वह भौंह टेढ़ी कर कहती भईं – मेरा पति नागशय्या पर शयन करे है जिस विषे कोटिक भुजंगों के फण तिन पर मणि तिनकी ज्योति के मंडलकर दुगुणित भई है मुकट के मणियों की प्रभा जिसकी अर मेघ की ध्वनि को जीते ऐसा जो शंख उसे बजावै है जिसकर धरती आकाश शब्दायमान होय है अर शारंग नामा धनुष जिसे कोई देख न सके उसे चढ़ावे है।।61।। ऐसा मेरा भरतार सो मुझे कभी ऐसी आज्ञा न करे अर तुम देवर होयकर मुझसे वस्त्र पखालने की आज्ञा करी सो उचित नहीं।।62।। मैं तो आपकी माता समान हूँ। यह वचन जामवन्ती के सुनकर कोई कन्हैया की कामिनी उसे कहती भई – हे निर्लज्ज! यह अनंत गुण के स्वामी त्रैलोक्य नाथ इनसे पीछा जबाब कहना योग्य नहीं। तैने यह वचन बिना समझ से कहे।।63।।

यह वार्ता उनके परस्पर भई तब भगवान जामवन्ती से कहते भये – तेरा पति का अद्‌भुत पौरुष कहा जो औरों से न बने सो शंख का बजावना अर धनुष का चढ़ावना अर नागशय्या पर सयन करना

बताया सो यह कहा कठिन कार्य है। ऐसा कह कर आप शीघ्र ही नगर में आये राजमंदिर विषे प्रवेश किया।।64।। अर नागशय्या पर आरोहण किया वह नागशय्या चलायमान जे सर्प तिनके फणों कर भयंकर है अर धनुष चढ़ाया अर शंख पूरा। वे भगवान ईश्वर तिनको कठिन कहा।।65।। वाचाल जो शंख का शब्द उस कर सब दिशा शब्दायमान भई, आकाश धरती अर समुद्र सब ही शब्दायमान भई।।66।। अर मदोन्मत्त हस्ती थे सो बन्धन तुड़ावते भये अर कोटिक तुरंगम बंधन तुड़ाय हीसते हीसते भ्रमन करते भये।।67।। अर महल के शिखर पड़ते भये। कृष्ण सभा में बैठे थे सब सभा क्षोभ को प्राप्त भई अर नगर के लोक प्रलयकाल के आगम की शंका कर व्याकुल भये।।68।।

तब हरि अपने शंख का शब्द सुनकर शीघ्र ही जाय नेमकुमार को नागशय्या पर आरूढ देखा समस्त राजाओं सहित वासुदेव जिनदेव का पराक्रम देख आश्चर्य को प्राप्त भया।।69।। जामवंती ने कठोर वचन कर प्रभु को रोस उपजाया इसलिये यह कार्य किये ऐसा जान जामवन्ती को उलाहना दिया अर सब भाइयों सहित नेमीश्वर की प्रशंसा करता भया। मोटे पुरुषों का विकार भी अति हर्षकारी होय है। कृष्ण बड़ा भाई प्रभु को उर से लगाय पूजाकर अपने घर गया अर अपनी स्त्रियों ने जलकेल बनकेल कर वीतराग को राग सहित किया इसलिये हरि अधिक प्रसन्न भये।।71।। उसी समय वासुदेव भौजवंशियों की राजमति नामा सुता जिनपति के वास्ते याची अर सब राजा कुटुंब सहित भेले किये सबों का बहुत सन्मान किया।।72।। सब स्त्री पुरुष परम रूप के धरणहारे अनेक आभूषणों कर मंडित नगर विषे भाइयों के घर भोजन के वास्ते पधारते भये।।73।।

अथानन्तर – ग्रीष्म ऋतु गई अर वर्षा ऋतु आई आकाश विषे मरुस्थल के पंथी तृषातुर मेघ माला देखते भये।।74।। प्रथम तो मेघ गर्जता भया अर फिर शीतल जल के कण के वर्षते भये जिनकर पपियाओं को सुख होय सो वह मेघ का वर्षना इस पृथिवी विषे जे नर नारी वियोगी हैं तिनको दूना दुःसह आताप उपजावता भया।

भावार्थ – मेघ के वर्षने कर औरों का आताप दूर होय अर वियोगियों के दूना आताप बढ़े।।75।। ग्रीष्म को दौंकर कर दिवाकर की किरण कर दग्ध जो वनस्थली तिन विषे प्रथम ही मेघ के वर्षने कर अंकुरे ऊगते भये सो मानो हर्ष के रोमांच ही भये हैं पृथ्वी रूप प्रिया ने मेघ रूप प्रीतम के दर्शन कर हर्ष के रोमांच ही धारे हैं।।76।। चलायमान विजुरी अर चलायमान बादले अर वर्षे हैं मेह ही बूंद अर इन्द्रधनुष चढ़ रहा है आकाश तो इनकर व्याप्त है अर पृथिवी सावण की डोकरियों कर भरी है सो पंथी चाले कैसे पंथयों का मन सर्वथा गमन से विमुख भया।।77।।

अर कुटिल जाति के वृक्ष अर कदंब जाति के वृक्ष अर बकुल जाति के वृक्ष फूल रहे हैं तिन कर

सब दिशा सुगंध मई होय रही है। वन के स्थान अर पहाड़ की तलहटी अर पहाड़ शिखर हरियाली कर सोहे हैं।।78।। लता मेघ की गर्जना कर भय को प्राप्त भई स्त्री जन ने चूडा अर कंकण तिनके शब्द अर वाचाल जो बाहुलता उस कर प्रीतम का कंठ दृढ ग्रहणकर भय रूप ग्रह का निग्रह करती भई।।79।। अर त्रिकाल योग के धारनहारे मुनि ग्रीष्म समय गिर के शिखर का शिला पर आतापन योग धार तिष्टे थे सो वर्षाकाल विषे शीतल पवन मेघ की बून्द तिन कर अति विषम जे वृक्षों के तल तहां ध्यान धारते भये।।80।।

उस समय श्रीनेमि जिनेश्वर चार घोड़ाओं कर युक्त जो रथ उस पर चढ़ कर विवाह को चले सो वह रथ सूर्य के रथ की प्रभा को जीते है। उस पर बिराजे श्री नेमिनाथ राजाओं के तरुण पुत्रों कर संयुक्त गमन करते भये।।81।। कैसे हैं प्रभु, राजमती के पीहर की स्त्री जनों ने तृषित नेत्रों कर पिया है सुन्दरता रूप जल जिनका ऐसे नेमकुमार विस्तीर्ण राजमार्ग होय कर गये। दया कर पूर्ण है चित्त जिनका अर मनोहर है दर्शन जिनका उस समय पवन के योग कर समुद्र ऊंचा उछला सो मानो नटवे की नाई समुद्र नृत्य ही करे है। नटवा नाचे है सोई मधुर ध्वनि करे है अर समुद्र भी गर्जता संता मधुर ध्वनि करे हैं अर नटवा हाथों कर भाव दिखावे है अर समुद्र तरंग रूप हाथों कर भाव दिखावे है अर उपवनों में होयकर वन की शोभा देखते ईश्वर जाय है सो नम्रीभूत है शाखा जिनकी ऐसे वनवृक्ष फूल डारे हैं सो मानो नम्रीभूत भये कुसुमांजलि ही चढ़ावे है।।84।। सो वन विषे भगवान नाना जाति के तृण आहारी मृगादि पशु भय कर कंपायमान तिनको नीच पुरुष घेरे बैठे सो देख कर आप रथ थांभा अर सारथी से पूछा – यह नाना प्रकार के मृगजाति को रोके हैं, यह नीच जन इनको घेर रहे हैं। सो कहा?

तब सारथी हाथ जोड़ नमस्कार कर कही – हे नाथ! यादव आदि अनेक राजा उत्तम वंश के उपजे सो तो सब जिनधर्मी है जिनके तो अन्न का ही आहार है अभक्ष का प्रयोजन नहीं अर कई एक भील आदि नीच कुल के आये हैं ते मांसाहारी हैं तिन पापियों ने मांस के अर्थ यह पशु रोके हैं।।87।। यह वचन सुनकर भगवान दयानिधान सब ही जीवन को छुड़ाय दिये अर राजपुत्रों को निरख कर कहते भये – विस्तरा है अवधिज्ञान जिनके अर मेघ को जीते ऐसी है ध्वनि जिनकी प्रभु कहे हैं।।88।।

अहो लोको! यह पशु नहीं हैं घर जिन्हों के अर वन के तृण जल का है भक्षण जिनके अर निरपराध ऐसे मृगों के समूह इनको कोई मारे उस समान निर्दयी कौन धिक्कार उन पापियों को जे दुर्बल जीवों को मारे। रण विषे रण के जीतने कर पाई है कीर्ति जिन ऐसे योधा जो उन पर चलाय कर आवें उस पर प्रहार करें अर पर न करें। हाथी का असवार तुरंग का सवार रथ का सवार जो लड़ने आवे उससे लड़े अर पर प्रहार न करे।।90।। यह सामन्तों की रीति है अर पापीजीवों के विचार नहीं। जे वन

के दुष्ट जीव अष्टापद सिंह अर वन गज पकड़ कर मारने को आवे उनसे दूरी भागें अर युद्ध से दूर भागें अर महादुर्बल मृग अर शुशा आदि उनको मारें अर उनका मांस भषें ते पापियों को लाज न आवे।।94।। अपने चरणों में कांटों के बेध के भय से पाहणी पहरें अपने शरीर के अनेक यत्न करें अर वापरे कोमल मृग उनको मृगया विषे तीक्ष्ण शस्त्रों कर मारें उनके करुणा कहां पर जीव में अर आप में भेदा कहा जे पर जीव को मारे हैं सो भव भव में मारे जाय हैं नरक निगोद के दुःख रूप फल उनके फूल रूप यह हिंसादि पाप जे नीच जन आचरे हैं उनके परभव विषे सुख कहां से होय। इन पापों के उदय विषे जीव दुःख ही भोगवे है अर षट्काय के जीवों का पीड़न सोई पाप है।।95।।

देखो यह बड़ा आश्चर्य्य है। यह प्राणी विस्तीर्ण राज्य को तो चाहे है अर जीवों की हिंसा विषे तत्पर होय है सो हिंसाकर पाप का बन्ध होय अर पाप के बंध का फल कडवा है। प्रकृति बंध प्रदेश बंध अनुभाग बंध स्थिति बंध यह चार प्रकार बन्ध तिनके वश पडे यह प्राणी दुर्गति विषे नाना प्रकार दुःख भोगवे है।।96।। यह जीव नर भव भी पायकर विषय सुख कर मोहित भया संसार के दुःख की निर्वृति का यत्न नाहीं करे। भव भव में दुःख की खान जो यह विषय रूप नीच सुख उस कर अति आसक्त है सो इसकी भूल कहां लग कहिये। यह बाह्य रूप विषयोत्पन्न सांसारिक सुख इन्द्रादिक पदों के भोगवे तो तृप्ति के कारण नाहीं जैसे सैकड़ों नदी समुद्र को तृप्ति का कारण नहीं।।97।। देखो देखो, मैं पूर्व भव विषे विद्याधरों का अधिपति भया फिर देवों के सुख भोगकर महाराजा भया फिर अच्युतेंद्र भया फिर राजा सुप्रतिष्ट भया फिर जयन्तनामा विमान विषे अहमिंद्र भया जहां इन्द्रों से असंख्य गुणा सुख है सो मैं भोगे। यह तेतीस सागर का है उत्कृष्ट आयु जहां अर जघन्य बत्तीस का सो मैं उत्कृष्ट आयु भोगी तो भी मैं तृप्त न भया।।98।। तो यह मनुष्य भव का सुख कै दिन का अत्यन्त तुच्छ आयु सो मुझे कैसे तृप्ति का कारण होय। यह सांसारिक सुख सर्वथा असार है।

यद्यपि तीर्थेश्वर पद सर्वोत्कृष्ट है तथापि विनश्वर है इसलिये आताप का करणहारा क्षणभंगुर यह विषय सुख उसे तजकर अविनश्वर निराबाध आताप रहित जो आत्मिक मोक्ष सुख उसे मैं तप कर उपार्जूं। इस भांति ईश्वर ने मन कर वचन कर वैराग चिंतवन किया। उसी समय पंचम स्वर्ग के निवासी महा उज्ज्वल अष्ट प्रकार के लोकांतिक देव आये। सारस्वत, अदित्य, अव्याबाध, तुषित, वन्ही, अरुण, अर्क, गर्दतोय ये अष्ट प्रकार हैं भेद जिनके।।1।। यह सब ही शीघ्र आय नमस्कार करते भये नम्रीभूत भये हैं मुकट जिनके अर जोडे हैं कर जिन वह देव ऋषि ब्रह्चर्य्य के धारक प्रभू से कहते भये – हे प्रभो! यह समय है अब तुम इस भरतक्षेत्र विषे धर्मतीर्थ प्रगट करो तुम धर्म के नायक हो।।2।।

इस भांति लोकांतिक देव स्तुति करते भये। भगवान स्वयम्भू स्वयमेव प्रतिबुद्ध हैं तिनको कोई

कहा समझावे स्वामी वचन कहे अर उस ही अनुसार सेवक बोले सो वचन पुनरुक्त अवसर विषे सफल हैं। लोकांतिक देवों का यही नियोग है तप कल्याणक विषे आय स्तुति करें अर वैराग्य की वृद्धि के वचन कहें। भगवान सब जीवों के बांधव मृगों के बांधव तत्काल मृगों को छुड़ाय द्वारावती पुरी में आये तहां सिंहासन पर विराजे इन्द्रादिक तपकल्याणक के अर्थ आये प्रभु ने स्नान किया अर इन्द्र ने वस्त्राभूषण पहराये अर कल्पवृक्षों के फूलों की माला पहराई अर सुगंध का लेप किया। भगवान सिंहासन विराजे उस समय सब राजाओं कर संयुक्त हरि अर हलधर बैठे अर सुर असुर अर बैठे सो सबों कर मंडित प्रभु कैसे सोहे, जैसे सुदर्शन मेरु कुलाचलों कर सोहे तब भगवान् तप के वास्ते उठने लगे तब हरि अर हलधर आदि सब ही यदुवंशी अर भोजवंशी अनेक राजा तिन विविध विध के वचन कर प्रभु को राखने का उद्यम किया परन्तु न राख सके। जैसे प्रबल सिंह पींजरा तोड निकसा चाहे, उसे कोई न राख सके तैसे भगवान माया रूप पिंजरा उसे तोड़ कर निकसे सो कोई राख न सका।।7।।

आप तीर्थेश्वर जगत की स्थिति के वेत्ता माता पिता आदि सकल बंधु जन तिनको संबोध कर कुवेर की रची जो उत्तर कुरु नामा पालकी उस पर आरूढ़ भये।।8।। वह पालकी ध्वजा अर श्वेत छत्र तिन कर मंडित है अर मणियमी है बाड जिसके अर नाना प्रकार के वर्ण को धरे है जैसे उदयाचल के शिखर विषे चन्द्र आरूढ़ होय तैसे जिनवर पालकी पर असवार भये।।9।। सो पालकी पहले तो बड़े बड़े राजाओं ने उठाई। पीछे इन्द्रादिक देव आकाश के मार्ग ले चाले।।10।। आकाश विषे उत्कृष्ट हर्ष कर देवों का किया सुन्दर शब्द होता भया। वह शब्द कानों को प्रिय सदा सुनने योग्य भाग्यहीनों को दुर्लभ अर पृथ्वी विषे भगवान के वन विषे जावने से सोच पृथ्वी के लोक विलाप करे हैं तिनके शब्द कर दिशा शब्दायमान होय रही हैं।।11।। प्रभु के तप कल्याणक विषे अप्सरा नव रस सहित नृत्य करती भई अर मयूर शब्द करते भये नृत्य करते भये जल के भरे अर सरोवरों विषे सारिस शब्द करते भये। नेमनाथ को विलोक कर वन विषे सबही जीव हर्ष रूप भये। कैसे हैं नेमिनाथ, दृढ़ता को प्राप्त भया है शांत रस जिनके जैसे वर्षा के व्यतीत भये शरद विषे मेघ अति उज्ज्वल भासे तैसे विषय रस के व्यतीत भये प्रभु अति उज्ज्वल निर्मल शांति रस भासते भये।।12।।

अथानन्तर – श्रीनेम जिनेश्वर देवों की सेना सहित गिरनार गिर जाय प्राप्त भये। कैसा है गिरनार, गिर सुमेरु है शोभा जिसकी, जिसका नाम ग्रन्थों में उर्जयंत कहे हैं गिर पापों की सेना को जीतता संता उर्जयंत नाम कहावे है अर कैसे हैं नेम जिनेश्वर, अविनश्वर जो गुणों की सेना उस कर संयुक्त हैं।।13।। सुमेरु के सब तरफ दिनकर अर निशाकर विचरे है तो भी तिमिर का अभाव नहीं होय है। अर इस गिरनार के आस पास जिनवर के प्रभाव से तिमिर के अभाव है सो गिरनार की ऊंचाई कर

सुमेरु का दृष्टांत दीजिये अर प्रकाश का समूह देखिये तो भगवान के विराजने कर यह गिर न्यून नहीं। वह गिरनार गिर पर ते जे वाचाल नीझरने तिन कर अर पंछियों के शब्द कर अर सुख के रस के देनहारे जे सुन्दर मिष्ट आम फल तिन कर अर सुगंध फूलों के भरे मनोहर वृक्ष तिन कर पूर्ण है अर खोटे फूलों कर रहित अति सोहे है।।15।। मणि अर स्वर्ण कर महा सुन्दर वह गिर नाना प्रकार की धातु अर रस औषध तिनकी शोभा को धरे अति सोहे है जिसके शिखर किन्नर देवों कर मंडित सोहे है और जिसके वन अति रमणीक राजाओं कर सोहे है।।16।।

ऐसे गिर का निःपाप जो उपवन उस विषे भगवान पालकी से उतरे। वह पालकी जिनेश्वर के विराजने कर अति सुन्दर भासे है अर महा पवित्र है, सकल विकार को हरे है। भगवान अपना मत जो आत्मज्ञान उसे पाय कर वन में गये सो वन सिंहादि दुष्ट जीवों कर रहित है तहां हरि कहिये इन्द्र अथवा हरि कहिये वासुदेव तिन पालकी से उतारे, वे भगवान महा तप को सन्मुख होय पालकी से उतर कर तप धारने की शिला पर आये। वहां शिला आस पास देवों के समूह कर विकाश रूप है जैसे इकबीस में जिनेश्वर नमिनाथ आये थे तैसे नेमिनाथ भी वैराग्य के वास्ते आये माया सहित जो पृथिवी उसके त्याग की है अभिलाषा जिनके सो शिला पर आय वस्त्र आभूषण अर पुष्प मालादि सब तजे।।18।। वह भगवान कृति कहिये कृतार्थ वस्त्राभरणादि तज कर पद्मासन विषे धीरता धर कर प्यारी स्त्री जो ज्ञानानन्द विभूति उसके वास्ते राजमती अर राजलक्ष्मी तिनके त्याग के विषे प्रवर्ती है इच्छा जिनकी। ऐसे जिनेंद्र कल्याण भाव विषे तत्पर जो बुद्धि उसमें रत्न सो अपने कोमल कर तिनकी अंगुलियों कर सिर केश उपाडे सो केश अति सघन अति श्याम अति सुन्दर अति सुगंध अति सचिक्कण कायर पुरुषों कर उपाडे न जाय सो तत्काल पंच मुष्टि कर उपाडे।।19।। सो मानो केश उपाडे सब परिग्रह ही उपाडे सो भगवान लौंच कर सकल परिग्रह तज कर हजार राजाओं सहित दिगम्बरी दीक्षा धारते भये।।20।। सिर के केश ऐसे उपाडे मानो तीनों शल्य ही उपाडी सो केश इन्द्र ने मणियों के पिटारे में मेल कर क्षीरसागर के जल विषे पधराये।।21।।

जहां भगवान तप लिया सो तीर्थ भया अर जिस समय जिनेश्वर तप आदरा उसी समय मनःपर्यय ज्ञान उपजा। भगवान कोटिक देव तिनकर संयुक्त चन्द्रमा समान सोहते भये जैसे चांद ग्रह ताराओं कर युक्त सोहे तैसे भगवान मुनियों की मंडली कर सोहते भये, चार ज्ञान कर विराजमान चार कषाय के त्यागी चतुर्विध संघ के नायक परिग्रह त्यागियों के तारक श्रावण सुदी चौथ के दिन दिगम्बर भये। बेले पारणा करना यह प्रतिज्ञा धारी जब भगवान तप कल्याणक के धारक भये तब नर अर सुर असुर शोभनीक अष्टद्रव्यों कर पूजा करते भये। अर नमस्कार कर इस भांति स्तुति करते भये – हे देव! तुम

www.vitragvani.com

मदन के भंग करनहारे प्रभु हो, अर संसारी जीवों को शरण हो अर जीवों के हित के वास्ते है चेष्टा जिनकी अर क्रोध का नाश करनहारे हो अर तृष्णा से रहित हो अर मुनियों के नाथ हो अर निश्चय व्यवहार दोनों नय के प्ररूपक हो। इस भांति स्तवन पूर्वक सुर असुर अर राजेश्वर परमेश्वर को नमस्कार कर इनके गुण अपने हृदय में धारते भये। तप विषे विराजमान भगवान कर्म रूप शत्रुओं के नाश को चक्र की धारा समान तिनको भाव सहित नमस्कार कर सुर नर अपने स्थानक गये।।29।।

अर बेला के पारणे प्रभु द्वारकापुरी में आहार को गये तहां वररत नामा श्रावक भगवान को विधिपूर्वक निर्दोष आहार देता भया। सो दान के प्रभाव कर पंचाश्चर्य्य भये – रत्नवृष्टि 1 पहुप वृष्टि 2 सुगन्ध जल वृष्टि 3 शीतल मन्द सुगन्ध पवन 4 अर जय जयकार शब्द 5। जब भगवान साधु के मार्ग में आय तप धारा तब राजसुता जो राजमती सो अपने मन विषे अति आताप को धारती भई पति के वियोग विषे उपजा है चित्त में खेद जिसके जैसे कुमुदनी दिन विषे मुरझाय तैसे मुरझाय गई। शिथिल हो गये हैं भूषण अर केशों के समूह जिसके अपने समस्त परिवार सहित।।31।। वर का हरणहारा जो पूर्वोपार्जित कर्म उसको उलाहना देती वह श्रेष्ठ महासती गिरनार गिर पर आई। शोक के समूह कर भरी गुरुजनों के वचन कर हर्‍या गया है सन्ताप जिसका सो तप विषे बुद्धिधर पर्वत पर आई। वह तप अविनश्वर पद का कारण है अर शान्तता रूप सुख का मूल है वह राजमती कर चरणों की कांति कर कमल की शोभा को उल्लंघती शरीर का अनुराग तज वैराग्य को उद्यमी भई।

राजमती ने स्त्रीपना महानिन्द्य जाना। कैसा है स्त्रीपना, प्रथम तो पराधीन है। फिर नाना प्रकार दुःख रूप है जो भर्त्तार का लाभ न होय तो दुःख अर भर्त्तार के अंग विषे दुःख होय तो स्त्री को महा दुःख फिर शोक का बड़ा भारी दुःख अर पुत्रयुक्त न होय तो दुःख अर बांझ होय तो बड़ा दुःख फिर विधवापने का दुःख कहने ही में न आवे। अर प्रसूति का रोग उसकी महा बाधा अर सौभाग्य न होय दुर्भाग्य होय तो महा दुःख अर पति भाग्यहीन होय तो महा दुःख अर गर्भ विषे बालक मर जाय तो महा दुःख अर गर्भ में बालक आवे अर पति का वियोग होय तो महा दुःख अर गर्भपात होय तो महा दुःख अर गर्भ के भार विषे महा दुःख अर जीवते ही धनी का वियोग होय अर मर्म की जगह रोग उपजे सो बड़ा दुःख। इस स्त्री पर्याय का कारण मिथ्यात है मिथ्या दृष्टि जीव ही स्त्री पर्याय पावे हैं सम्यक् दृष्टि जीवों के स्त्री पर्याय का बन्ध न होय। जैसे वस्त्र का मूल तार तैसे स्त्री पर्याय का कारण मिथ्यात्व जो कोई दुःख रूप स्त्री पर्याय का अन्त किया चाहे सो सम्यक्त्व का सेवन करे यह जिनभाषित सम्यक् दृष्टि पूज्य पुरुषों कर सेवने योग्य है अभव्य जीवों को सम्यग्दृष्टि की प्राप्ति नहीं।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ भगवन्निःक्रमणकल्याणवर्णनो नाम चतुःपंचाशः सर्गः।।54।।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

पचपनवाँ सर्ग

अथानन्तर – श्री नेमि जिनेन्द्र रत्नत्रय अर तप व्रत गुप्ति समितियों के समूह कर सोहते भए। जीती है सकल परिषह जिन्होंने अर अप्रशस्त कहिये महानिन्द्य जे आर्त्त रौद्र कुध्यान उनको तजकर धर्म्म ध्यान अर शुक्ल ध्यान को ध्यावते भए। इन समान अर प्रशंसा योग्य नहीं। चित्त का एकाग्र निरोध उसे ध्यान कहिये सो वज्र वृषभ संहनन वालों के चित्त का निरोध अंतर्मुहूर्त तक रहे है अर संहनन वालों के अल्प रहे। जिनका मन थिर न होय उनको ध्यान ही चिंतवन मात्र होय।।3।। अज्ञानी जीवों के आर्त रौद्र ही है अर सम्यग्दृष्टियों के धर्म ध्यान अर शुक्ल ध्यान है प्रथम ही आर्त्त ध्यान का स्वरूप कहे हैं। आर्त्त कहिये अर्दन कहिये बाधा कहिये पीडा उस विषे उपजा जो कलेश सो आर्त्त ध्यान कहिये। यह आर्त्तध्यान कृष्ण नील कापोत लेश्या के बल कर उपजे है।।4।।

सो आर्त्तध्यान के लक्षण दो एक बाह्य अभ्यन्तर सो रुदनादिक कर विलापादिक यह तो बाह्य लक्षण हैं अर पर स्त्री विषयादिक विषे जो अनुराग भाव सो अंतरंग लक्षण हैं अर देवों के तथा नृपों के विषय देख कर सुन कर अभिलाषा करना सो आर्त्तध्यान। उसके लक्षण चार सो अपने भाव तो आप जान पाइये हैं अर औरों के अनुमान कर जाने जाय हैं अनिष्ट के संयोग विषे उसके वियोग का चिन्तवन सो अनिष्ट संयोगार्त्त कहिये। ऐसी अभिलाषा करे जो मेरे अनिष्ट का संयोग कदे ही मति हो अर कदाचित् अनिष्ट का संयोग हुआ होय तो उसके वियोग के वास्ते विकल्प करवो करे सो पहला आर्त्तध्यान कहिये अर दूसरा इष्ट वियोगार्त्त ध्यान। उसका लक्षण कहे हैं – मनोग्य वस्तु का वियोग होय तब जीव को खेद उपजे अर ऐसी विचारे मेरे इष्ट का वियोग कभी भी मत होय।।8।।

अर कदाचित् हुआ होय तो अंतरंग की चिन्ताकर जलता ही रहे अर उसकी प्राप्ति का उपाय चिन्तवे। यह दोय भेद के चार भेद भये। अनिष्ट का संयोग अर इष्ट का वियोग इनके न होवने का अभिलाष अर हुआ होय तो अत्यन्त शोक मन को न भावे जे दुख तिनका कारण अन्तरंग तो विकार भाव है अर बहिरंग कारण विष शस्त्र अर दुष्ट जीव हैं अर वायु पित्त कफ आदि शरीर विषे उपजे अनेक प्रकार रोग कुक्ष रोग नेत्र रोग दंत पीडा वायु शूलादि पीडा इत्यादि अति दुःसह रोग तिनकर उपजी पीडा उस विषे अति कायर होय सो रोगार्त्तध्यान कहिये अर इस जन्म संबंधी तथा परभव सम्बंधी भोगों का अभिलाषी होय सो भोगार्त्त कहिये।।11।। शोक, अरति, भय, उद्वेग, विषाद, जुगुप्सा यह ही भये विष तिन कर दुखित मानसीक दुःख का कारण समस्त दोषों का मूल यह आर्त्तध्यान है। मेरे अनिष्ट की उत्पत्ति कभी मत होवे ऐसी चिन्ता करना सो पहले पाये का लक्षण है अर जो अनिष्ट उपजा उसके अभाव ही का निरंतर चिंतवन करे सदा विकल्परूप ही रहे।।13।।

www.vitragvani.com

अर बाह्यपदार्थ कैयक चेतन अर कैयक अचेतन तिनमें पशु पुत्रादि चेतन अर धन धान्यादि अचेतन तिनके संग्रह की अभिलाषी होय मनोज्ञ विषे प्रीति करें अर अमनोग्य विषे अप्रीति करे अर वायु पित्त कफ आदि अंग के रोग इनका सदा वियोग ही चाहे। यह लक्षण आर्त्तध्यान के हैं अर शोक भय आदि मन के दुःख कठिन कर सदा पीडित ही रहे। मेरे मनोज्ञ वस्तु का वियोग अर असुन्दर वस्तु का संयोग कभी भी न होय, इस लोक अर विषे अर परलोक विषे मेरे मन भावती वस्तु का संयोग सदा रहो अर अण भावती का मिलाप कभी न होय। मनोज्ञ के वियोग विषे अर अमनोज्ञ के संयोग विषे झुरे यह आर्त्तध्यान का लक्षण है अर रोग का नाश अर भोग का अभिलाष यह सब आर्त्त ध्यान के लक्षण जानो। इस आर्त्तध्यान का आधार प्रमाद है अर फल तिर्यंच गति है अर यह क्षयोपशम भाव है अर पहले गुणस्थान से लेय छठे गुणस्थान तक इसकी दौड है।।18।। यह आर्तध्यान का लक्षण कहा।

अब रौद्र ध्यान का लक्षण कहे हैं – जो प्राणी दुष्ट होय अर क्रूरचित होय उसका जो भाव सो रौद्रध्यान कहिये। उसके भेद चार हिंसानन्द 1 मृषानन्द 2 चौर्यानन्द 3 परिग्रहानन्द 4। हिंसा को आदि देय अपराध तिन विषे रुचि सो हिंसानन्दादिक चार भेद हैं। हिंसा विषे आनन्द माने, मृषावाद विषे आनन्द माने, चोरी विषे आनंद माने, परिग्रह की बढवारी विषे आनन्द माने। इस रौद्र ध्यान के लक्षण दोय प्रकार हैं। एक बाह्य एक अभ्यन्तर सो बाह्य लक्षण कठोरता कर क्रूर वचनादि कर जान पडे जो यह रौद्र ध्यानी है शरीर की चेष्टा कर भौंहों की वक्रता नेत्रों की अरुणता कर दुष्ट जान पडे सो यह बाह्य लक्षण हैं।।21।। अर माहिले लक्षण समरंभ कहिये जीव हिंसादि पापों विषे यत्न की प्रवर्ती अर समारंभ कहिये हिंसादिक के उपकरण तिनका अभ्यास करना अर आरंभ कहिये हिंसादिक पापों का प्रथमारंभ ये अभ्यंतर के लक्षण हैं। हिंसा विषे जो तीव्र अनुराग सो हिंसानन्द कहिये।।22।। अर अपनी बनाई युक्ति कर परलोक का साधन और से और कहना अर लोकों को ठगना सो महानिन्द्य मृषानन्द कहिये।।23।।

भावार्थ – स्वर्ग का कारण जीव दया है अर हिंसा को स्वर्ग का कारण कहना अर यह बात लोक माने तब आप आनन्द मानना सो मृषानन्द है अर अज्ञान के योग कर परधन हरने की अभिलाषा होय अर बलात्कारे पराया धन हर आनन्द माने अथवा किसी दुष्ट ने पराया धन हरा होय उसकी वार्त्ता सुन हर्षित होय सो चौर्य्यानन्द कहिये।।24।। अर आपके परिग्रह बढता देख आनन्द माने अर के परिग्रह घटता देख आनन्द माने सो परिग्रहानंद नामा रौद्र ध्यान कहिये। पशु पुत्र कलत्र यह चेतन परिग्रह हैं अर वस्त्र आभरणादि यह अचेतन परिग्रह हैं। इनकी आपके वृद्धि होय अर पराये हानि होय उसमें पापी प्रमोद माने अर आपके परिग्रही की वृद्धि कर आपको स्वामी माने।।1।। इत्यादि सर्व रौद्र ध्यान के लक्षण हैं।।25।।

यह रौद्र ध्यान चार प्रकार अशुभ लेश्यावों के बल कर जीवों को पहले गुणस्थान से लेय पांचवें गुणस्थान तक होय है। कृष्ण नील कापोत यह तीन लेश्या अशुभ हैं अर पीत पद्म शुक्ल यह तीन शुभ हैं।।27।। यह रौद्र ध्यान जीव के अनादि काल का है अर जब लग मिथ्यात्व है तब लग रहेगा परन्तु एक भांति का घणा रहे तो अंतर्मुहूर्त रहे पीछे अर भांति रौद्र ध्यान होय। एक हिंसा के अनेक भेद अर एक मृषा के अनेक भेद, एक चोरी के अनेक भेद, एक परिग्रह के अनेक भेद हैं सो उनमें परिणाम भ्रमण करता रहे। अन्तर्मुहूर्त पीछे एक भाव से अर रूप रौद्र ध्यान होय जाय इसलिये यद्यपि आर्त रौद्र अनादि काल के हैं अर अभव्यों के अनंतकाल रहेंगे तथापि अर अर रूप हुवा करें इसलिये अंतर्मुहूर्त काल कहे अर यह क्षयोपशम भाव अर लेश्या कषाओं की तीव्रता से उदैक भाव भी कहिये अर रौद्र ध्यान का फल नरक गति है।।28।। इसलिये आर्त रौद्र इन दोनों कुध्यानों को तज कर जे मोक्षाभिलाषी हैं सो धर्म ध्यान अर शुक्ल ध्यान विषे अपनी बुद्धि धारो। कैसे हैं मोक्षाभिलाषी, शुद्ध है आहार अर विहार जिनका।।29।।

अथानन्तर – धर्म ध्यान की सिद्धि के वास्ते योग्य द्रव्य योग्य क्षेत्र योग्य काल अर योग्य भाव कहे हैं।।30।। योग्य द्रव्य तो उत्तम शरीर अर उत्तम संहनन अर योग्य क्षेत्र आर्य क्षेत्र उस विषे एकांत अर प्रासुक कहिये निर्जन्तु भूमि जहां डांस मच्छर आदि क्षुद्र जीवों का उपद्रव नहीं अर योग्य काल जिस विषे अति उष्णता अति शीतता नहीं।।31।। अर योग्य भाव जहां अशुभ भाव नहीं। भावों की निर्मलता सो भाव शुचि यह चार शुद्धि होय तब वह धर्म ध्यान का आरम्भ करे जो सकल परीषह जीतने समर्थ होय सो धर्म ध्यान को ध्यावे जो मोक्षाभिलाषी ऐसा होय सो धर्म ध्यान को ध्यावे। वह पुरुष महा गंभीर है अर थंभ समान निश्चल है पद्मासन धरे है अर जिसके नेत्र निश्चल हैं न लगे हैं न उघड़े हैं अर निर्वृत्ति भया है इन्द्रियों के समूह का उद्यम जिसके अर शास्त्र पारगामी है अर मंद मंद प्रवर्त्ते है श्वासोश्वास जिसके।।33।। ऐसा वह विवेकी मोक्षाभिलाषी अपने मन की वृत्ति अर नेत्र निश्चल कर धर्म ध्यान अर शुक्ल ध्यान को ध्यावे। यह दो जीव के हितकारी हैं। ज्ञानी जीव अपने मन को इतनी जगह विषे चाहे जहां रोके। नाभि के ऊपर अथवा हृदय के विषे अथवा मस्तक विषे अथवा अलक विषे रोक कर ध्यान करे वा नासिका के अग्रभाग लग रही है दृष्टि जिसकी।।34।।

धर्म कहिये यह वस्तु का स्वभाव उस थकी च्युत न होना धर्म ध्यान कहिये तिसके लक्षण दो – एक बाह्य एक अभ्यन्तर। जो तत्त्वार्थ शास्त्र का अवलोकन अर व्रत शील तपादिक का आचरण अर गुणोंकर अनुराग अर छींक जंभाई डकार श्वासोश्वास इनकी मन्दता अर शरीर की निश्चलता अर शुभ क्रिया का धारण यह धर्म ध्यान के बाह्य लक्षण हैं अर अध्यात्म विषे लीन होय अर दश प्रकार धर्म ध्यान का विचार सो निश्चय लक्षण है। धर्म ध्यान के भेद 10 प्रथम अपाय विचय। अपाय कहिये

कर्मों का नाश उसका चिंतवन कर्म बन्ध के कारण रागादिकों में अरुचि निरंतर ऐसे भाव उपजें जो यह संसार के कारण मन, वचन, काय के योग तिनकी प्रवृत्ति का अभाव मेरे कैसे होय।।38।। ऐसी चिन्ता चित्त में रहे अर पीत पद्‌म शुक्ल यह तीन शुभलेश्या जिसके पाइये सो अपाय विचय नामा पहिला धर्म ध्यान कहा।।39।।

अर दूसरा उपाय विचय कहिये है – जितने मोक्ष के उपाय विचय पवित्र भाव हैं ज्ञान वैराग्यादि सो मेरे कैसे होवें शुद्धोपयोग का उपाय सदा कहा चिन्तवें सो उपाय विचय नामा धर्म ध्यान कहिये अर तीसरा जीवविचय उस विषे ऐसा चिंतवन करे जो यह जीव पदार्थ द्रव्यार्थिक नयकर अनादि निधन ध्रुव पदार्थ है। अर पर्यायार्थिक नयकर उत्पाद व्ययरूप है उपजे विनशे है अर उपयोग लक्षण है असंख्यात प्रदेशी है अर अचेतन के संबंध से अपने कर्म के फल भोगवे है इत्यादि जीव का स्वरूप चिंतवना सो जीव विचय धर्म ध्यान कहिये।।42।। अर चौथा अजीव विचय धर्म ध्यान जिस विषे पुद्‌गल धर्म अधर्म आकाश काल इनके स्वभाव का चिंतवन।।43।। अर आठ प्रकार कर्म्म का चार प्रकार बन्ध प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेश तिनके उदय का चिंतवन सो विपाक विचय नामा पांचवां धर्म ध्यान कहिये।

अर छठा वैराग्य विचय कहिये है। यह शरीर महा अशुचि अर संसार असार अर भोग इन्द्रायणी के फल समान प्राणों के हर्ता।।45।। ऐसी वैराग्य बुद्धि सो विराग विचय जानों अर सातवां भव विचय कहिये है। इन जीवों के इस भव से दूसरा भव धरना सो भव कहिये सो सब ही भव दुःख रूप हैं। देव पर्याय, मनुष्य पर्याय, नर्क पर्याय, तिर्यंच पर्याय, सब ही दुःख रूप हैं यह विचार करना सो भव विचय जानो। अर आठवां संस्थान विचय कहिये है। ज्ञानी जीव ऐसा चिंतवन करे जो अलोकाकाश अनंता है उस विषे तीन बात बलय कर वेष्टित लोकाकाश है सो अनादि सिद्ध है किसी का किया नहीं किसी के आधार नहीं अपने आधार है। उसके आकार का चिंतवन सो संस्थान विचय कहिये।।47।। अर नवमां आज्ञा विचय, जो जिनेश्वर की आज्ञा प्रमाण अलौकिक पदार्थों का निश्चय करना। अर बन्ध मोक्षादि विषे जिनभाषित श्रद्धा करनी सो आज्ञा विचय धर्म ध्यान कहिये। अर दशवां हेतु विचय उसका लक्षण कहिये है, स्याद्वाद कथन के आश्रय से युक्ति के अनुसार जो नित्यता अर अनित्यता अर अस्तिता अर नास्तिता इनका विचार सो हेतु विचय नामा दशमां धर्मध्यान कहिये।।49।। ये दश प्रकार धर्म ध्यान चतुर्थ गुणस्थान से लेकर सातवां अप्रमत्त गुणस्थान तहां लग होय है। यह धर्म ध्यान प्रमाद का नाशक है अर पीत पद्‌म लेश्या के बल कर उपजे है।।50।।

अर क्षयोपशम भाव है अर अन्तर्मुहूर्त काल है, अन्तमुहूर्त पीछे एक भेद से अर भेदरूप धर्म ध्यान होय है। यह धर्म्म ध्यान स्वर्ग मोक्ष का दायक है सो ध्यानी पुरुषों को ध्यायवे योग्य है।।51।। धर्म ध्यान के चार भेद तो सकल ग्रन्थों में हैं – आज्ञा विचय अपाय विचय विपाक विचय संस्थान

विचय अर बड़े ग्रन्थों में दश भेद भी कहे हैं अर शुक्ल ध्यान महा पवित्र है अर पवित्रता का कारण है समस्त दोषों से रहित है। उसके दोय भेद हैं – एक शुक्ल दूसरा परम शुक्ल। सो शुक्ल के भेद दोय अर परम शुक्ल के भेद दोय पृथक्त्व वितर्क विचार अर एकत्व वितर्क अविचार यह दोय भेद तो शुक्ल के हैं अर सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाति अर समुछिन्न क्रिया निवर्त्तक यह दोय भेद परम शुक्ल के हैं।।53।। सो शुक्ल ध्यान के लक्षण दोय। एक बाह्य एक अभ्यंतर। छींक जम्भाई खांसी डकार आदि शरीर की चेष्टा का अभाव अर श्वासोच्छवास अत्यंत मंदता सो यह लक्षण तो शुक्ल ध्यान के बाहरले हैं अर चित्त की निश्चलता यह अंतरंग के लक्षण हैं। यह लक्षण जिनके होय सो तो ध्यानारूढ ही है अर औरों के अनुमान कर विवेकी जानै बहिरंग लक्षण तो शरीर की चेष्टा का अभाव अर अंतरंग लक्षण मन का निरोध।

अथानन्तर – शुक्लध्यान के चार पायों का लक्षण कहे हैं।।55।। पहला पाया पृथक्त्व वितर्क विचार उसका भेद सुनो– पृथक्त्व नाम अनेकता का है अर वितर्क्क कहिये द्वादशांग निर्दोष सूत्र सो द्वादशांग के अनुसार तत्त्व की अनेकता का विचार सो कौन भांति विचार करे अर्थ से अर्थांतर अर शब्द से शब्दान्तर अर योग से योगान्तर परिणाम का संचार होय।।56।।

अर्थ कहिये ध्यायवे योग्य निज द्रव्य निज गुण निज स्वभाव निज पर्याय तिन विषे परिणाम विहार करे। कभी आत्म द्रव्य में लवलीन होय अर कब ही अपने निज गुण ज्ञान आनन्दादि अनन्त तिनमें मग्न होय कभी स्वभाव परिणतिरूप अर्थ पर्याय अथवा व्यंजन पर्याय उस विषे तल्लीन होय द्रव्य से गुण में गुण से द्रव्य में अथवा गुण से गुण में अथवा गुण से परिणति में इस भांति निज विहार करे सो अर्थ संक्रम कहिये अर शब्द कहिये जिन सूत्र के शब्द तिनका रहस्य विचारता शब्द से शब्दान्तर विहार करे सो व्यंजन संक्रम कहिये अर योग कहिये। मन वचन काय के योग से योगान्तर संचार सो योग संक्रम कहिये इस भांति जिनश्रुत के अनुसार निज वस्तु की अनन्तता का ध्यान करे सो पहिला पाया पृथक्त्व वितर्क्क वीचार कहिये यह पहिला पाया उपशम अर क्षपक दोनों श्रेणी वारे धारे सो उपशम श्रेणी वारे तो मोह का उपशम करे अर क्षपक वारे मोह का क्षय करे, क्षपक श्रेणीवारों के अत्यन्त निर्जरा है।।60।।

अर्थ से अर्थान्तर शब्द से शब्दान्तर योग से योगान्तर यह पहिले पाये का लक्षण कहा सो यह पाया आठ में से ले ग्यारहमें गुणठाणे लग है अर दूसरा पाया एकत्व वितर्क्क अविचार सो बारमें गुणठाणे ही होय अर क्षपक श्रेणी वाले ही धारें जहां एकीभाव का अवलम्बन जो तत्त्व विषे आरूढ भया तो वाही विषे लीन भया अर जो गुण विषे स्थिरभूत भया तो तहां ही भया एक वस्तु का है अवलम्बन जहां उपशम श्रेणी वालों के तो शुक्ल ध्यान रूप शस्त्र अति तीक्ष्ण नहीं इसलिये मोह का उपशम ही करे। अर क्षपक श्रेणीवालों के ध्यान रूप शस्त्र तीक्षण है सो मोह शत्रु का नाश ही करे

यह शुक्ल ध्यान शुक्ल लेश्या ही के योगकर होय है जिनके पहिले पाए विषे उपशम श्रेणी है उनके उपशम भाव हैं अर क्षपक श्रेणी उनके क्षायक भाव ही हैं पहिले पाए में दोनों श्रेणी अर दोनों भाव हैं अर स्वर्ग मोक्ष दोनों फल हैं।

अर अंतर्मुहूर्त स्थिति है यह सम्पूर्ण प्रथम पाए का लक्षण कहा अर दूसरा पाया एकत्व वितर्क अविचार ताका लक्षण कहिये हैं। एकत्व कहिए द्रव्य गुण की एकता का है चिंतवन जिस विषे द्रव्य कहिये आत्मद्रव्य अर गुण कहिये चेतनत्व अमूर्तित्व आदि अनंत गुण उनमें भेद नहीं सो एक ही वस्तु विषे चित्त लग गया जो गुण में लग गया तो गुण ही में लगा अर आत्मद्रव्य में लगा तो वहां ही लगा फिर परिणाम का पलटना नहीं सो एकत्व कहिये अर वितर्क कहिये द्वादशांग सूत्र की श्रद्धा दोनों पायों में है दूसरे पाये में पृथकता कहिये अनेकता नहीं अर विचार कहिये अर्थ व्यंजन योग का संक्रम नहीं। एक ही अर्थ विषे एक ही शब्द विषे एक ही योग विषे आरूढ है जिनवानी के अनुसार वस्तु की अभेदता विषे चित्त की आरूढता है।।64।।

एक ही द्रव्य तथा एक ही गुण तथा एक ही शुद्ध परिणति विषे गलतान भया है। मोह का नाश तो पहिले ही पाये कर किया अर इस दूसरे पाये कर ज्ञानावरण दर्शनावरण अर अन्तराय इन तीन घातियों का नाश करे।।65।। वह कृतार्थ बारहवें गुणठाणे के अंत घातियों का घात कर तेरहवें गुणठाणे केवलज्ञान को पावें तहां नव केवललब्धि प्रगट होय केवलज्ञान केवलदर्शन क्षायिक सम्यक्त्व क्षायिक चारित्र अनंत दान अनंत लाभ, अनंत भोग, अनंत उपभोग अनन्त वीर्य्य यह नव केवल लब्धि तीर्थंकर के तथा अर सामान्य केवली तिन सब ही के तेहरवें गुण ठाणे होय हैं।।66।। सो भगवान केवली पूजन योग्य, ध्यायवे योग्य तीन भुवन के परमेश्वर किंचित् ऊन कोडि पूर्व केवलज्ञान से युक्त विहार करे तहां विदेह क्षेत्र विषे तो कोडि पूर्व का आयु ही है अर भरतक्षेत्र विषे चौथे काल की आदि कोडि पूर्व का आयु है सो किसी जीव को नवमें वर्ष केवल उपजा सो नव वर्ष घाट कोडि पूर्व केवल अवस्था में विहार करे।।67।।

अर इस केवली के चारों अघातियों की थिति आयु समान होय तो समुद्घात न करे अर जिसके आयु तो अन्तर्मुहूर्त रहे अर नाम गोत्र वेदनीय की अधिक थिति होय सो केवल समुद्घात कर नाम गोत्र वेदनी की थिति आयु प्रमाण ही करे सो तेरहवें गुणस्थान के अन्त सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति नामा तीसरा शुक्ल ध्यान होय जो केवल समुद्घात न करे समस्त अघातियों की बराबर ही स्थिति होय तो सहज ही यह तीसरा शुक्ल ध्यान होय उसका लक्षण कहे हैं – मनोयोग वचन योग अर ये बादर तिनको सूक्ष्म काय योग में लावे अर मनोयोग वचन योग सूक्ष्म है तिनका अभाव करे है। यह सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति नामा तीसरा शुक्ल ध्यान का पाया परम शुक्ल का पहिला भेद है अर किसी केवली को केवल समुद्घात करना पडे अर आयु प्रमाण अर अघातियों की स्थिति करनी पड़े तो अंतर्मुहूर्त

आयु रहे, तब समुद्घात करे सो वह भगवान समस्त अघातियों के क्षय करने समर्थ पहिले समय दण्ड करे, दण्ड कहिये दण्ड के आकार आत्मा के प्रदेश चौदह राजू दीर्घ होय जांय फिर कपाट के आकार जीव के प्रदेश दूसरे समय होय अर तीसरे समय पटल के आकार प्रदेश होय अर चौथे समय लोकपूर्ण होय तीन सौ तेतालीस राजू घनाकार जीव के प्रदेश विस्तरे उस समय लोक प्रमाण व्यक्ति रूप होय ज्यों चार समय में प्रदेश विस्तरे त्यों ही चार समय में संकोचे।

पांचवें समय पूर्ण संकोचे छठे समय प्रतर संकोचे सातवें समय कपाट संकोचे अर आठवें समय दंड संकोचे।।74।। फिर शरीर प्रमाण होय कर इस परम शुक्ल ध्यान को ध्यावे फिर चौदहवें गुणठाणे के अंत शुक्ल ध्यान का चौथा पाया समुछिन्न क्रिया ताहि ध्यावे सो यह चौथे पाया परम शुक्ल का दूसरा भेद है जहां प्रदेशों की चंचलता मिटी देह प्रमाण प्रदेश रहे अर योगों का अभाव भया सकल प्रकृतियों का क्षय भया सो समुछिन्न क्रिया कहिये।।76।। इस चौथे शुक्ल विषे सर्व बन्ध का अभाव अर सब आस्रव का निरोध अर सयोग केवली के यथाख्यातचारित्र मोक्ष का कारण है सो भगवान अयोग केवली आठों कर्मों का नाशक भया। घातिया कर्म तो मुनि पद में खोये अर अघातिया जिन पद में खोये चौदहवें गुणठाणे के अन्त में सोलह वाणी के स्वर्ण समान चेतन शक्ति देदीप्यमान भई।।78।।

सिद्ध तो यहां ही होय चुके परन्तु ऊर्ध्वगमन स्वभाव से अर कर्मों के संयोग के वियोग से अर बन्ध के नाश से कुम्हार के चक्र की न्यांई पूर्व प्रयोग से अर अग्नि की शिखा की न्याई अर लेप रहित तूंबी की नांई अर एरंड के बीज की नांई एक समय में ऊर्द्धगमन करे अर धर्मास्तिकाय के अभाव से अलोक विषे गमन न करे अर लोक के शिखर ही तिष्टे अनन्त सुख का पुंज तिष्टे। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष यह चार पुरुषार्थ हैं तिनमें मोक्ष पदार्थ सर्वोत्कृष्ट है अर जीव का हित है सो कर्म के क्षय से होय अर कर्म का क्षय शुक्ल ध्यान से होय सकल कर्म प्रकृति का अभाव सो मोक्ष अनन्त सुख रूप सो यत्न साध्य भी है अर सहज साध्य भी है जे तीर्थंकर देव अर तद्भव मोक्षगामी चरम शरीरी हैं तिनके तो सहज साध्य ही है अर जे तद्भव मोक्षगामी नहीं जन्मान्तर में मोक्ष जावेंगे तिनके यत्न साध्य है प्रथम ही चौथा अव्रत गुणस्थान वहां से लेकर प्रकृतियों का क्षय होय है अनन्तानुबंधी की चौकड़ी अर तीन मिथ्यात्व इन सातों का क्षय तो चौथे गुणस्थान ही होय है जिसके सातों का क्षय होय सो क्षायिक सम्यक् दृष्टि कहिये, अर जो मुनि क्षपक श्रेणी चढ़े सो सातवें गुण ठाणे के अन्त नरकायु तिर्यगायु देवायु इन तीन प्रकृति का क्षय करें अर सातवें अप्रमत्त से आठवें अपूर्व करण गुणस्थाने जाय कर पाप प्रकृतियों की स्थिति क्षीण करें।

अर वह क्षायिक सम्यक् दृष्टि क्षपक श्रेणी का धारक नवमें भाग में गुणस्थान के प्रकृति नव भाग में छत्तीस खपावे वहां पहले भाग में शुक्ल ध्यान रूप अग्नि कर सोलह प्रकृति भस्म करे तिनके नाम

– निद्रा, निद्रा, प्रचला प्रचला, स्त्यानगृद्धि अर नरक गति, नरकगत्यानुपूर्वी तिर्यंचगति तिर्यंचगत्यानुपूर्वी एकेन्द्री जाति वे ते चतुइन्द्री जाति, स्थावर, आतप, उद्योत, सूक्ष्म, साधारण यह सोलह प्रकृति पहिले भाग कर खपाय कर दूसरे भाग विषे अप्रत्याख्यान की चौकड़ी अर प्रत्याख्यान की चौकड़ी खपावे, अर तीजे भाग विषे नपुंसक वेद खपावे अर चौथे भाग विषे स्त्री वेद खपावे अर पांचवें भाग विषे षट् हास्यादि खपावे अर छठे भाग विषे पुरुष वेद खपावे अर सातवें भाग विषे संज्वलन क्रोध खपावे अर आठवें भाग विषे संज्वलन मान खपावे अर नवमें भाग विषे संज्वलन माया को खपावे। इस भांति नवमां अनिवृति करण नामा गुणस्थान उसके नव भाग विषे प्रकृति छत्तीस को खपावे। अर दशवें गुणस्थान संज्वलन लोभ को खपावे अर दशवें गुणस्थान का नाम सूक्ष्म सांपराय तहां सूक्ष्म लोभ का अभाव कर दशवें के अन्त सर्वथा मोह रहित होय कर बारहवां क्षीण कषाय नामा गुणस्थान उसके अन्त के दो समय से पहिले समय तो निद्रा अर प्रचला का अन्त करे अर दूसरे समय ज्ञानावरर्णीय की प्रकृति पांच, दर्शनावर्णीय की प्रकृति चार अन्तराय की पांच चौदह प्रकृति खपावे, शुक्ल ध्यान के दूसरे पाये से यह सोलह प्रकृति खपाय कर केवली होय।।96।।

अर असाता वेदनीय 1 देवगति 2 औदारिक शरीर 3 वैक्रियिक 4 आहारक 5 तैजस 6 कार्माण 7 यह पांचों शरीर अर यही पांच बंधन अर यही पांचों संघात अर आंगोपांग तीन ही शरीरों के (तैजस कार्माण के नहीं) औदारिक आंगोपांग वैक्रियक आंगोपांग अर आहारक आंगोपांग अर संस्थान छह संहनन वर्ण छह पांच रस 5 स्पर्श आठ गन्ध दो देवगत्यानुपूर्वी एक अर देव गति एक।।100।। अगुरुलघु एक उश्वास एक परघात एक उपघात एक प्रशस्तविहाय एक अर अप्रशस्त विहाय एक अर प्रत्येक शरीर अपर्याप्त स्थिर, अथिर, शुभ, अशुभ, दुर्भग, सुस्वर, दुस्वर, अनादेय, अयश कीर्ति, निर्म्माण नीच गोत्र, सब इकठे किये बहत्तर होंय सो तेरहवें गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान में जायकर खपावें अर चौदहवां अयोग केवली उसके अन्त के समय तेरह प्रकृति खपावें।

उनके नाम – साता वेदनीय 1 मनुष्यायु मनुष्यगति 1 मनुष्यगत्यानुपूर्वी 1 पंचेंद्रिय जाति 1 त्रस 1 बादर 1 पर्याप्ति 1 सुभग 1 आदेय 1 उच्चगोत्र 1 यशस्कीर्ति 1 तीर्थंकर 1 यह तेरह प्रकृति अयोग केवली अंत के समय में खपावे अ, इ, ऊ, ऋ, लृ, यह पांच ह्रस्व अक्षर तिनका उच्चारण होय तेता काल चौदहवें गुणस्थान तिष्ठ कर सिद्धलोक को सिधारे सो सिद्ध पर्याय आदि को लिये अनन्ती है जिसकी आदि तो है अर अन्त नाहीं। अनन्त गुन रूप पर्याय सादि अनन्ती कहिये इस ही भांति अनन्ते सिद्ध भये अनन्त होवेंगे सो याही भांति गुणस्थानों में चढ़ कर्म प्रकृति खपाय सिद्ध भये अर याही भांति होवेंगे।।8।।

सिद्ध पद का कारण धर्म ध्यान अर शुक्ल ध्यान है सो भगवान नेमिनाथ छप्पन दिन तो धर्म

ध्यान ध्याया अर आसोज सुदी पडिवा के दिन प्रभात ही शुक्ल ध्यान रूप अग्नि कर चार घातिया कर्म रूप बन ताहि भस्म किया।।10।। अर अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख, अनन्त वीर्य्य रूप चतुष्टय को प्राप्त भये। जब नेमीश्वर को केवलज्ञान उपजा तब इन्द्रादिक देवों के आसन कंपायमान भए अर मुकट नय गए।।11।। कल्पवासी देवों के अकस्मात घंटा का शब्द भया। अर ज्योतिषी देवों के सिंहनाद बाजा। अर व्यन्तरों के ढोल बाजे। अर भवनवासी देवों के शंख का शब्द भया। इस भांति अकस्मात् शब्द भए तब चतुर्निकाय के देव भगवान को केवलज्ञान उपजा जान अपने अपने इन्द्रों के साथ केवलज्ञान कल्याणक की पूजा के उद्यमी भए। सबही इन्द्र मुकुटों के नयवेकर अर सिंहासन के कंपायमान होयवे कर प्रभु का केवल कल्याणक जान कर सब देवों सहित अपने वाहनों के समूह कर आकाश रूप समुद्र को पूर कर सप्त सेना सहित सुरपति गिरनार की प्रदक्षिणा कर समोशरण में आये।।13।।

भले प्रकार नमस्कार करते निगर्व भए दूसरी वेर गिरनार आए। पहिले तप कल्याणक विषे तो आये ही थे अर अब ज्ञान कल्याणक विषे आए। सुमेरगिर तो एक जन्म कल्याणक के स्नान मात्र ही से पवित्र भया था। अर यह गिरनार तप कल्याणक का स्थानक ज्ञान कल्याणक का स्थानक अर आप श्रीनेमिनाथ इस गिर ही से निर्वाण पधारेंगे इसलिये यह गिर सुमेर को भी जीतता भया।।14।। जहां अष्ट प्रातिहार्यों कर शोभित नेमिजिनेन्द्र विराजे हैं जहां मंदार जाति के कल्पवृक्ष आदि अनेक कल्पवृक्षों के पुष्प तिनकी वर्षा कर दशों दिशा सुगन्ध होय रही हैं अर देवांगनाओं के गीत कर गिर शब्दायमान होय रहा है अर दुन्दुभी बाजों का नाद तिन कर सब दिशा नादरूप होय रही हैं अर जहां शोक का हरणहारा जो अशोक वृक्ष फल फूलों कर मंडित सोहे है अर तीन छत्र तीन भुवन की प्रभुता के चिह्न को धरे प्रभु के सिर पर फिरे हैं।।16।।

अर हंसों की पंक्ति के परों के समान मनोहर उज्ज्वल अनेक चमर प्रभु पर ढुरे हैं अर सूर्य्य मण्डल की ज्योति को जीते ऐसा प्रभु की देह की कांति का मण्डल दिपे है अर हेममई सिंहासन नाना प्रकार रत्नों के समूह कर जड़्या इन्द्रधनुष की शोभा को जीते, उस पर जिनवर विराजे हैं अर नाना प्रकार भाषा के भेष को धरे सकल विकार रहित दिव्य ध्वनि जिन राज के मुख से खिरे है।।17।। यह अष्ट प्रातिहार्य और चौंतीस अतिशय तिन कर मण्डित नेमिजिनेश्वर हरिवंश के तिलक बाईसवें तीर्थंकर स्वभाव ही कर धैर्य्य के धारक गुण के समूह बोधरूप दिन के कर्त्ता जिन रवि त्रैलोक्य के उद्धार के अर्थी गिरनार के शिखर पर विराजे तहां सब देव आय सेवा करते भए।।18।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ भगवन्नेमिनाथ केवलज्ञानवर्णनो नाम पंचपंचाशत् सर्गः।।55।।

छप्पनवाँ सर्ग

अथानन्तर – इन्द्र की आज्ञा से देवों ने प्रभु का समवसरण रचा है। वह समवसरण तीन जगत के प्राणियों को शरण है।।1।। द्वारका के लोक सब यदुवंशी अर भोजवंशी आदि गिर पर बलभद्र नारायण की साथ चढ़े।।2।। सो जिनेन्द्र का समवसरण बाहर भीतर देखकर आश्चर्य को प्राप्त भए।।3।। जैसी समवसरण की भूमि की रचना तीर्थेश्वर के होय है तैसी श्रोताओं को संक्षेपता कर कहिये हैं।।4।। स्वभाव रूप जो यह भूमि उससे एक हाथ प्रमाण ऊंची दिव्यभूमि फिर उसके ऊपर एक हाथ ऊंची कल्प भूमि सो वह भूमि चौकूटी सुख की देनेहारी अपनी शोभा कर स्वर्ग की शोभा को जीते सो उत्कृष्ट समवसरण का विस्तार बारह योजन होय है अर नेमिनाथ बाईसवें जिन हैं इसलिये इनका डेढ योजन है।।6।।

समवसरण तो कमल समान है, अर गन्ध कुटी कर्णिका समान उच्च है। समवसरण की भूमि ऐसी सोहे है मानो लक्ष्मी की परंपराय ही है। समवशरण की भूमि इन्द्र नील मणि मई कांच समान निर्मल सोहे है अधिक से अधिक शोभा धरे है।।8।। दूर ही से इन्द्रादिक देव जाहि नमस्कार करे हैं वह मानस्थंभ के आंगण की भूमि तीन जगतकर मानने योग्य है। चारों महा दिशाओं विषे चारों दरवाजों की ओर दोय दोय कोस के विस्तार राजमार्ग है तिनके मध्य मानस्थंभों के पीठ हैं तिनके ऊपर स्वर्ण रत्नमई जिन प्रतिमा हैं। जिनको सुर असुर मनुष्य माने हैं देव विद्याधर भूमिगोचरी मानस्थंभों के समीप आय जिनप्रतिमा पूजे हैं वह मानस्थंभों की भूमि देदीप्यमान पद्मराग मणिमई अरुण वर्ण है।।12।। चारों दरवाजों के चारों ही राजमार्ग विषे तीन तीन सुवर्ण के पीठ तिन पर मानस्थंभ सोहे हैं वर्तुलाकार आध कोस चौड़े अर दोय कोस ऊंचे पीठ हैं।।13।। अर पीठों की चौड़ाई तैसे अर एक धनुष घाट मानस्थंभों की चौड़ाई है अर एक योजन कुछ यह अधिक मानस्थंभों की ऊंचाई है।।14।।

अर मानस्थंभ मूल विषे वज्रमणि कहिये हीरा तिनके हैं अर मध्यविषे फटिक मणि के हैं अर अग्रभाग विषे वैडूर्य मणिमई हैं अर जिनके चारों तरफ भगवान के बिंब बिराजे हैं अर इन मानस्थंभों के ऊपर ध्वजा है सो बारह योजन से दृष्टि पड़े हैं अर एक एक मानस्थंभ के आश्रय दोय दोय हजार स्थंभ हैं ते नाना प्रकार के रत्नों की किरणों कर देदीप्यमान हैं अर मानस्थंभों का ऊपरला भाग बीस योजन प्रमाण आकाश विषे उद्योत करे है श्रीदेवी के मस्तक विषे चूडामणि रत्नों से भी अधिक आभा जिनकी ते मानस्थंभ देवों का अर मनुष्यों का मान हरे हैं जिनके देखे महा मानियों का मान बिलाय जाय फिर मानस्थंभों के आगे चार सरोवर हैं जिनमें कमल फूल रहे हैं अर हंस सारस चकवा मनोहर शब्द करे हैं तिनकर सब दिशा शब्दायमान होय रही हैं।।19।। अर सरोवरों के आगे वज्रमणिमई पड

कोटा है सो मनुष्यों के वक्षस्थल पर्यंत ऊंचा है अधिक है कांति जिसकी अर ऊंचाई से द्विगुणी है चौड़ाई जिसकी सो समवसरण के चौगिर्द प्रदक्षिणा रूप तिष्टे है।।20।। इस पडकोटा के भीतर जल की भरी खाई है उसकी भूमि फटिक मणि समान उज्ज्वल है अर खाई में गोडों में प्रमाण ओंड़ा जल है मानो खाई भूमिरूप नारी की काली साडी है।।21।।

अर खाई में सुवर्ण मई कमलों के रज के पुंज कर जल पीत वर्ण होय रहा है मानो खाई का रूप धर समुद्र ही चहूँ ओर प्रदक्षिणा करे है।।22।। अर खाई के आगे बेलों का वन है सो समवसरण के चारों ओर प्रदक्षिणा रूप सोहे है जिस विषे नाना प्रकार के सुगंध फूल फूल रहे हैं तिनकी सुगंधता कर दशों दिशा सुगंधरूप हो रही है अर भंवर गुंजार करे हैं अर नाना प्रकार के शुभ पक्षी सुन्दर शब्द करे हैं।।23।। अर इस बल्ली वन के आगे पहला कनकमई कोट है सो अति दैदीप्यमान है अर जिसके रूपामई चार दरवाजे हैं सो मानो विजयार्द्ध गिरि ही हैं।।24।। इस पहिले कोट में द्वारपाल व्यंतर देव हैं ते कुण्डल कटकादि आभूषणों कर सोहे हैं। अर मुद्गर हैं जिन्हों के हाथ में ते दुष्ट जीवों को तिरस्कार करे हैं।।25।।

अर दरवाजों के पसवाडे मणिमई तोरण हैं अर दरवाजे दरवाजे छत्र, चमर, कलश, झारी, दर्पण, ताड़वीजना, स्वस्तिक, ध्वजायें आठ मंगल द्रव्य धरे हैं। एक एक मंगल द्रव्य एक सौ आठ आठ हैं अर दरवाजों के आगे नाट्यशाला है सो दरवाजों में धसतां माहिली ओर दोनों तरफ दो नाट्यशाला है अर एक एक नाट्यशाला के तीन तीन खण हैं तिन विषे देवांगना नृत्य करे हैं अर नाट्यशाला के आगे चार वन हैं। पूर्व दिशा विषे अशोकवन है अर दक्षिण दिशा विषे सप्तपर्ण नामा वन है। अर पश्चिम दिशा विषे चंपक नामा वन है अर उत्तर दिशा विषे आम्र वन है।।28।। यह चार वन तिनमें चार चैत्यवृक्ष हैं। अशोक वन विषे अशोक तरु अर सप्तच्छद वन विषे सप्तच्छद, चंपकवन विषे चंपक अर आम्र वन विषे आम्र यह चार चैत्यवृक्ष जिन प्रतिमा कर शोभित महामनोहर हैं।।29।।

अर इन वन विषे मनोहर वापिका है। कोई वापी त्रिकोण अर कोई वर्तुलाकार अर कोई चौकूंटी नाना प्रकार रत्नों के हैं तट जिनके अर फटिक मणि समान निर्मल है भूमि जिनकी।।30।। वे समस्त वापी तोरण सहित अधिक सोहे हैं। अति सुन्दर भासै हैं तीर्थ हैं जिनमें हंस आदि मनोहर पक्षी सुन्दर शब्द करे हैं। तिन वापियों के नाम नंदा, नंदोत्रा, आनंदा, नन्दवती, अभिनन्दनी, नन्दघोषा यह छै वापिका तो अशोक वन में हैं।।32।। फिर विजया, अभिजया, जयन्ती, वैजयन्ती, अपराजिता, जयोत्तरा यह छह वापिका सप्तपर्ण नामा वन विषे हैं।।33।। फिर कुमुदा नलनी, पद्मा, पुष्करा, विकचोत्पला, कमला यह छह वापिका चंपक वन विषे हैं।।34।। फिर प्रभासा, भास्वती भासा, सुप्रभा, भानुमालिनी, स्वयंप्रभा यह छह वापिका आम्र वन विषे हैं। इन वापियों में स्नान कर वन के पुष्प लेकर चैत्य वृक्षों के बिम्बों की पूजा कर भव्य जीव मांही प्रवेश करे हैं।।36।।

अर इन वनों के विषे नाट्यशाला है तिनमें ज्योतिषी देवों की स्त्री हाव-भाव विलास विभ्रम सहित नृत्य करे हैं। रस की पुष्टता सहित हर्ष की भरी देवी नाचे हैं अर इन वनों के चौगिर्द वनदेवी हैं सो महा मनोज्ञ वज्रमणि मई हैं अर वन वेदी के आगे ध्वजाओं की पंक्ति हैं। अर ध्वजाओं के पीठ तीन धनुष चौड़े हैं अर आधा योजन ऊंचे हैं तिन पर रत्नमई बांस तिन पर ध्वजा फरहरे है। ते ध्वजा दश दश प्रकार की हैं अर क्षुद्र घंटिका कर सोहे हैं विचित्र रूप हैं पट जिनके मयूर, हंस, गरुड, पुष्प, माला, सिंह, हस्ती, मगर, वृषभ, चक्र दश प्रकार चिह्न तिनकर मंडित हैं एक एक चिह्न की एक सौ आठ आठ ध्वजा हैं सो कमल, एक वन में एक हजार अस्सी। जब चारों वन की भेली करिये। तब तेतालीस सौ बीस होवें अर इन ध्वजाओं के आगे पचखणी नृत्यशाला हैं तिनमें भवनवासिनी देवी नृत्य करे हैं।।48।।

फिर आगे दूसरा हेममई कोट है जहां कोट की पंच भूमिका है अर रत्न मई चार दरवाजे हैं अर दरवाजों पर दैदीप्यमान स्वर्ण के पीठ हैं तिन पर कनक मई कलश हैं अर कमलों के कण्ठ विषे रत्नों की माला हैं अर वे कलश महा शुद्ध जल से भरे हैं अर तिनके मुख कमलों कर आच्छादित हैं अर मंगल रूप हैं दर्शन जिन्हों का ऐसे दो दो कलश सोहे हैं अर इस दूसरे कोट के द्वारों के द्वारपाल भवनवासी देवों के हाथ में बेंत के दण्ड हैं।।51।। अर इस दरवाजे के भीतर दोय नाट्यशाला है फिर आगे दोय धूप के घड़े सोहे हैं।।52।। फिर आगे कल्पवृक्षों का वन है उनके मध्य सिद्धार्थ वृक्ष है तिनके नीचे सिद्ध प्रतिमा विराजे हैं अर कल्पवृक्षों के वन के चौगिर्द वनदेवी है फिर आगे मार्ग विषे नव नव रत्नों के तूप हैं सो पद्मराग मणि मई महा सुन्दर हैं तिनके आगे देवों के क्रीड़ा करने के मंदिर हैं सो स्वर्ण रत्नमयी अनेक खण के हैं।

फिर आगे तीजा फटिक मणि मई कोट है उसकी नाना प्रकार महा रत्नमई सात भूमि हैं अर उसके चार दरवाजे तिनमें पूर्व के द्वार आठ द्वारपाल हैं तिनके नाम - विजयी 1 विश्रुत 2 कीर्ति 3 विमल 4 उदय 5 विश्वधृक् 6 वास 7 वीर्यवर 8 फिर दक्षिण के द्वारपाल आठ हैं। तिनके नाम - वैजयन्त 1 शिव 2 ज्येष्ठ 3 वरिष्ट 4 अनंग 5 धारण 6 यास 7 अप्रतिभ 8 यह दक्षिण दिशा के द्वारपाल जानों।।58।। अर पश्चिम के द्वार के द्वारपाल आठ तिनके नाम - जयन्त 1 अमित 2 सार 3 सुधामा 4 अक्षोभ्य 5 सुप्रभ 6 वरुण 7 बरद 8 यह आठ पश्चिम दिशा के द्वारपाल जानो।।59।। अर उत्तर दिशा के द्वारपाल आठ तिनके नाम - अपराजित 1 अर्च 2 अतुलार्थ 3 अमोघ 4 उदित 5 अक्षय 6 उदतकौवेर 7 पूर्णकाल 8 यह आठ उत्तर दिशा के द्वारपाल जानो।।60।।

यह चारों ही द्वारों के द्वारपाल रत्नों के आसन पर तिष्टे हैं अर द्वार के दोनों तरफ मंगल दर्पण धरे हैं तिनमें जीवों के भव दीखे हैं। सो यह द्वारपाल द्वारे द्वारे दर्शन के करणेवालों को पूर्व भव दिखावे

हैं जिन मंगल दर्पणों कर द्वार दैदीप्यमान भासे हैं यह चारों द्वार विषे विजयादिक बत्तीस द्वारपाल कल्पवासी देव हैं सो महा दैदीप्यमान वस्त्राभूषणों कर शोभित हैं अर जय जय शब्द करे हैं।।63।। अर इन तीनों कोठों में पहला कोट एक कोस ऊंचा दूजा कोट दोय कोस ऊंचा अर तीजा कोट तीन कोस ऊंचा अर कोटों की ऊंचाई से चौड़ाई आधी आधी जानो अर तीजे कोट के भीतर नाना प्रकार वृक्ष अर वेलों का भरा मनोहर वन तहां नाना प्रकार के मंदिर हैं।।66।। अर वन के चौगिर्द वेदी है अर वन में कदली आदि नाना प्रकार के वृक्ष हैं।।67।।

फिर वन के आगे नाट्यशाला है उसमें लोकपाल देवताओं की स्त्री निरन्तर नृत्य करे हैं अर आगे एक अर पाठ है सो देदीप्यमान रत्नों के समूह की किरणों कर तिमर को हरे है। उस पर सिद्धार्थ वृक्ष है उसके तले सिद्ध प्रतिमा है अर सिद्धार्थ वृक्ष के चौगिर्द अनेक वृक्ष हैं अर वापिका है अर रत्नों के द्वादश स्तूप हैं सो पृथिवी के आभूषण ही हैं रत्नमई है।।71।। अर चारों दरवाजों के भीतर वेदी कर मण्डित चारों दिशा विषे चार वापिका हैं – नन्दा 1, भद्रा 2, जया 3, पूर्णा 4, यह उनके नाम हैं।।72।। तिनमें स्नान किये प्राणी अपने पूर्व जन्म को जाने सो वापिका पवित्र जल कर भरी हैं अर सर्व पाप रोग की हरणहारी हैं तिन विषे प्राणी सात भव देखे हैं – तीन अगले तीन पिछले एक वर्तमान।।74।।

अथानन्तर – कोस एक ऊंचा अर एक योजन से कुछ एक अधिक चौड़ा कदली की है ध्वजा जिस पर अर ऊंचा है तोरण जिसके, जिसमें तीन लोक के प्राणी निकसे हैं अर कैसे हैं जिसका यह अतिशय है जिसमें त्रैलोक्य के जीव माय जायं ऐसा त्रैलोक्यविजय नामा जयांगण सोहे है अर जहां मोतियों की झालरी बन रही हैं अर मणि मोती मूंगाओं कर शोभित हैं रत्नों के पुष्प अर स्वर्ण के कमल तिन कर अर्चित है अर स्वर्ण के रस कर लिप्त है भूमि सो मानो भूमि से निकसे सूर्य ही सोहे हैं अर जहां सुख के निवास अनेक मंदिर सोहे हैं सुर असुर अर नरों कर पूर्ण है अर नाना प्रकार के हैं कहीं एक चित्राम से मनोहर महल हैं तिनमें अद्भुत चित्राम हैं कहीं एक पुण्य के फल की प्राप्ति कर जीवों को स्वर्गादि सुख होय है तिनके चित्राम मंढे हैं कहीं एक पाप के उदय कर नरकादिक दुःख होय हैं तिनके चित्राम मंढे हैं सो मानो वह चित्राम देखनहारों को साक्षात् धर्म अर अधर्म की गति ही दिखावे हैं।।81।।

अर कहीं एक यह मंदिर देखन देव अर मनुष्य देखनेहारों को धर्म की श्रद्धा ही उपजावे है दान शील तप अर पूजा का प्रारंभ अर इनके फल स्वर्ग मोक्ष अर जो इनसे रहित हैं तिनके विपति ऐसी प्रतीति प्रगट उपजावे है।।82।। अर स्फुरायमान हैं मोतियों की झालरी जिनके अर दैदीप्यमान मणि जड़ी हैं अर पताकाओं के क्षुद्र घंटिका लगी है तिनका पवन की प्रेरणा कर रमणीक शब्द होय है।।83।। अर दैदीप्यमान रत्नों की माला ऐसी भासे है मानों समुद्र विषे लहर ही है सो इस सभा मंडप

को मुनिंद्रादिक भक्ति कर निरखे हैं अर वह मुनि पाप से डरे हैं धर्म विषे है रुचि जिनकी ऐसा यह त्रैलोक्यविजय नामा जयांगण इन्द्र ध्वज सोहे है उसके मध्य सुवर्ण का पीठ है सो पीठ कैसा सोहे है मानो भगवान की विजयलक्ष्मी की मूर्तिवन्त देह है।।85।। उस ऊपर हजार थम्भ का बड़ा मंडप है उसका नाम माहोदय है जिस विषे जिनवानी मानो मूर्तिवन्ती विराजे है उस मंडप को दाहिना देकर महा धीर बहु श्रुति विराजे है अर श्रुतकेवली कहिये सकल श्रुत के पारगामी कल्याण रूप जो जिनश्रुत उसका व्याख्यान करे है।।87।।

अर उस मंडप के समीपी मंडप चार उससे आधा है प्रमाण जिनका तिन विषें मंडित अक्षेपणी आदि चार कथा करे हैं।।88।। अक्षेपणी कहिये जिनमार्ग की दृढ़ करनहारी अर विक्षेपणी कहिये मिथ्या मार्ग की खंडनहारी अर संवेगणी कहिये धर्म की रुचि बढ़ावनहारी अर निर्वेदनी कहिये संसार शरीर भोग से वैराग करणहारी यह चार कथा विवेकी करे हैं।।89।। अर इन मंडिपों के प्रकीर्णक वास नाना प्रकार के तिन विषे मुनिजन श्रोताओं के समीप केवल ऋद्धि आदि ऋद्धिओं का व्याख्यान करे हैं।।90।। फिर नाना प्रकार की लताओं करि मंडित तप्त सुवर्णमयी है पीठ है जहां यथा काल भव्य जीव सामग्री चढ़ावे हैं फिर मार्ग में एक इस तर्फ एक उस तर्फ यह दोय दोय मंडप हैं तिनमें नवनिधि के रक्षक देव तिष्ठे हैं सो मनवांछित दान के दायक हैं।।92।। अर एक अति विस्तीर्ण प्रमद नामा प्रेक्ष्याग्रेह है तहां कल्पवासनी देवी सदा नृत्य करे हैं।।93।।

अर वह विजयांगण उसकी कौण विषे लोक स्तूप है सो चार योजन ऊंचे हैं अर जिन पर ध्वजा फरहरे है वह स्तूप अधोभाग विषे वैत के आसन के आकार हैं अर मध्य भाग विषे झालरी समान हैं अर ऊर्द्ध भाग विषे मृदंग के आकार हैं अर शिखर विषें ताड़ वृक्ष के आकार हैं।।95।। सो स्तूप निर्मल फटिक मणि समान उज्ज्वल हैं जिनमें लोक की रचना प्रत्यक्ष दृष्टि पड़े है जैसे निर्मल आरसी विषे मुख दीखे मध्यलोक नामा स्तूप उस विषे सम्पूर्ण मध्य लोक का स्वरूप भासे है।।97।। फिर मंदिर नामा स्तूप मंदराचल के आकार दैदीप्यमान सोहे है उसकी चारों दिशा विषें प्रतिमा सोहे हैं।।98।। अर कल्पवास नामा स्तूप उसमें कल्पवासी देव सोहे हैं जिस विषे साक्षात् स्वर्गलोक की समस्त रचना देखनहारे को दृष्टि पड़े है फिर ग्रीवैयिक नामा स्तूप मनुष्यों को नव ग्रैवेयक रचना प्रत्यक्ष दिखावे है।।100।।

फिर नव अनुदिश नामा स्तूप तिन में प्राणी नव अनुत्तर की रचना देखे हैं फिर विजयादि चतुष्क नामा स्तूप है उस विषे विजयादिक विमाणों की रचना भाषे है अर सर्वार्थसिद्धि नामा स्तूप उसमें सर्वार्थसिद्धि की रचना प्रत्यक्ष भासे है।।1।। अर फटिकमणि समान निर्मल सिद्धि रूप स्तूप उसे भव्यकूट नामा स्तूप भी कहे है दैदीप्यमान है कूट जाके जिस विषे सिद्धों के प्रतिबिम्ब भासे है जैसे

दर्पण विषे मुख भासे अर स्पर्शा न जाय सो यह भव्यकूट नामा स्तूप जिसे अभव्य न देख सके अर प्रबोध नामा स्तूप जिनके देखने कर ज्ञान उपार्जे चिरकाल का अज्ञान मिटे सो यह स्तूप निकट भव्य ही देखे जिसे पाय कर साध संसार से छूटे। इस भांति यह दश स्तूप ऊंचे विराजे हैं।।6।।

यह तीसरा कोट नाना प्रकार रत्नमई चौगिर्द महा सुन्दर सोहे है। जैसे सूर्य की चौगिर्द पर वेष सोहे है तैसे यह तीजा कोट प्रभु के आस पास सोहे है जिसका प्रभाव चार ज्ञान के धारी गणधर देव भी न जान सके, वह भगवान का समोशरण देवों को प्रिय तीन लोक विषें सार शोभा सुन्दर कल्याण का मंदिर सोहता भया जिसे श्रीपुर कहिये अर क्षेमपुर कहिये अर श्रेयंपुर कहिये मंगलपुर कहिये उत्तमपुर कहिये शरनापुर कहिये जयपुर कहिये अपराजितपुर कहिये आदित्यपुर कहिये जयन्तपुर कहिये वह त्रैलोक्य सार अद्भुतपुर भगवान के प्रभाव कर आश्चर्यकारी होता भया जैसा समोसरण का निर्माण है तैसा इन्द्रादिक देव काहू ठौर न रच सके। यह प्रभु ही के प्रभावकर आश्चर्यकारी है किसी की शक्ति नाहीं जो ऐसा बनावे। तीन पीठों में पहले पीठ कर चारों तर्फ धर्म चक्र अर दूजे पीठ विषे मयूर हंस आदि अष्ट महाध्वजा चारों दिशा अर चार विदिशा की ओर है।।39।।

अर तीजे पीठ विषे श्रीमंडप महा मंगलरूप उस विषे गंध कुटी उसमें प्रभु का सिंहासन उस पर जिनेंद्र विराजमान जिसकी सुर असुर नर कोटिक हर्षित चित्त भये स्तुति करे हैं मुकुट विषे लगाये हैं कर कमल जिन। सुर नर इस भांति प्रभु की स्तुति करे हैं। हे महादेव! तुम विजय रूप हो। हे महेश्वर! तुम महा माह के जीतनहारे हो। हे महाबाहु! तुम समान जीत का स्वरूप अर नाहीं। हे महेक्षण कहिये विशाल हैं नेत्र जिनके सर्व के देखनहारे सबके जाननहारे तुम समान तुमही हो इत्यादि महा स्तुति करे हैं। उसही समय वरदत्त नामा राजा मुनि के व्रत धर मुख्य गणधर भया।।43।। अर छह हजार रानियों सहित राजमति दीक्षा धर आर्य्यकाओं के गण की गुरानी भई मुनियों को आदि दे द्वादश सभा प्रभु के समोसरण में होती भई सो नमस्कार कर अपने अपने स्थान तिष्ठे प्रभु को आराधे हैं गन्धकुटी की प्रदक्षिण रूप बारह सभा सोहे हैं। तहां प्रथम सभा विषें वरदत्त गणधर आदि योगीन्द्र विराजे हैं सो प्रत्यक्ष धर्म का स्वरूप मानो निर्मल धर्मेश्वर जो भगवान तिनके स्वरूप ही हैं।।46।।

फिर दूजी सभा में कल्पवासी देवों की देवी तिष्ठे हैं सो मानो भगवान की बाह्य विभूति ही हैं।।48।। अर तीजी सभा में राजमती आदि आर्य्यकाओं के अर श्राविकाओं के समूह तिष्ठे है सो लज्जा क्षमा, शांति आदि गुणों कर शोभित हैं मानो धर्म की प्ररूपणा ही है धर्म का स्वरूप धरे विराजी हैं अर चौथी सभा जोतिषी देवों की दिपै हैं मानो वह देवी सभा का स्वरूप ही है दैदीप्यमान है भगवान को परम ज्योति उसकी प्रशंसारूप भक्ति युक्त है।।50।। अर पांचमी सभा में व्यंतर देवों की देवांगना तिष्ठे हैं मानों वह मूर्तिवन्त वन लक्ष्मी ही हैं वन के पुष्पों के आभूषण करे बेल की न्याईं

नम्रीभूत होय रही हैं प्रभु के चरणों को नवे हैं।।51।। अर छठी सभा में भवनवासी देवों की देवी हैं। भगवान की महा भक्त भासे हैं मानो नागलोक की लक्ष्मी ही नेमनाथ की सेवा को आई हैं।।52।। अर सातवीं सभा में दश प्रकार भवनवासी देव भगवान की स्तुति करे हैं। भगवान समस्त पाप कर्म्म के नाशक हैं जिनकी भक्ति से पाप पलाय जाय। यह भवनवासी देव अपने फणों में हैं दैदीप्यमान रत्नों की प्रभा कर मनोहर दीखे हैं।।53।।

अर आठवीं सभा में अष्ट प्रकार के व्यंतर महा सुन्दराकार तिष्ठे हैं। प्रभु के गुण वर्णन करे हैं पुष्पों की माला पहरे हैं।।54।। अर नवमी सभा में चन्द्र सूर्य्यादि पंच प्रकार ज्योतिषी देव नम्रीभूत भये प्रभा की वृद्धि को चाहे हैं। प्रभु की प्रभा के प्रभाव कर मंद होय गई है कांति जिनकी।।55।। अर दशमी सभा विषें सौधर्म इन्द्र आदि सोलह स्वर्गों के बारह इन्द्र अर बारह प्रत्येन्द्र आदि सब ही स्वर्गवासी देव तिष्ठे हैं सो स्वर्गवासी सौंदर्य के स्वामी महासुखी भगवान के महा भक्त सोहे हैं जिन समान अर देव नहीं।।56।। अर ग्यारहमीं सभा विषें बलदेव वासुदेव आदि सब ही राजा तिष्ठे हैं समस्त सिद्धि के देनहारे जिनवर तिनको सेवे हैं अर बड़े बड़े श्रावक सब ही तिष्ठे हैं यह ग्यारहवीं सभा मनुष्यों कर मंडित है, वह सम्यक् दृष्टि श्रावक मानो दान पूजादि धर्म मूर्ति ही हैं भगवान का है ध्यान जिनके।।57।।

अर बारहवीं सभा में सिंह, गज, मृग, वृषभादि थलचर अर हंस गरुडादि नभचर अनेक जाति के तिर्यंच तिष्ठे। भगवान के अतिशय कर दूय होय गई है अविद्या जिनकी अर मिट गये हैं बैर जिनके अर विलाय गये मायाचार आदि दोष जिनके इन दोषों के अभाव से गुण रूप होय रहे हैं। कई एक तिर्यंच सम्यक्त्व धारते भये अर कई एक श्रावक के व्रत धारते भये अर कई एक मनुष्य मुनि भये कई एक श्रावक के व्रत धारते भये कई एक स्त्री अर आर्य्यका भई अर कई एक श्राविका भईं। अर कई एक देव सम्यक्त्व के धारक भये। इस भांति बारह सभा कर मण्डित जिनेश्वर समोशरण विषे विराजे मानो यह द्वादश सभा द्वादशांग रूप जो जैन शास्त्र उसके गुण ही हैं तिन कर प्रभु सेवने योग्य हैं।।59।।

वह भगवान नेमनाथ सिंहासन की शोभा कर जगत का ईश्वरपना प्रगट करे हैं। यह ईश्वरपना अर ठौर नहीं अर देवों कर ढारे चमर तिन कर सब लोक का राजेंद्रपना प्रगट दिखावे हैं।।60।। अर चंद्रमा समान उज्ज्वल तीन छत्र तिन कर त्रैलोकीनाथपना प्रकाशे अर भामंडल की ज्योति की प्रभा का आधिक्यपना दिखावे हैं भामंडल की प्रभा जीवों का जन्मान्तर का तिमिर दूर करे हैं।। 61।। अर अशोक नामा वृक्ष सर्व जीवों का शोक दूर करे हैं। वह अशोक वृक्ष ऋतु के पुष्पों कर शोभित है पुष्प वृष्टि कर देव जिनेश्वर को पूजे हैं।।62।। अर दुंदुभिवाजों के मंडल शब्द कर जीत की लक्ष्मी प्रगट करे हैं अर सर्व जीवों को अभयदान की देनहारी दिव्यध्वनि उस कर अपना सर्वज्ञपना प्रगट करे है। वे भगवान महेश्वर अष्ट प्रातिहारियों कर शोभित सर्वेश्वरपना भव्यों को प्रकाशे हैं। वह अष्ट

प्रातिहार्य किसी कर न हारे जायं अपने गुणों कर उपजे हैं।।64।। लोकों के आनंद के वास्ते अपनी सकल विभूति दिखावते नेमजिनेश्वर केवलज्ञान सहित समोसरण में विराजे सर्वलोक को उल्लंघे ऐसी विभूति जिनकी।।65।। देव परस्पर देवों को बुलावे हैं अर यह शब्द करे हैं यह भगवान पूर्ण ब्रह्म परमात्मा सकल गुणों कर पुंज सब जीवों को कल्याणकारी है जो आत्मकल्याण किया चाहे सो आय कर इसे भजो।।66।। अनेक देव अर मनुष्य समोसरण में बैठे हैं अर अनेक आवे हैं तहां समोसरण दृष्टि पडा तहां तत्काल अपने अपने वाहनों से उतर कर मानस्थंभों के समीप आय कर हाथ जोड़ सीस नवाय नमस्कार करे हैं।।68।।

वाहनादि परिग्रह तिनको बाहर तजकर पूजा की सामग्री कर युक्त मानस्थंभ के पीठ को प्रदक्षिणा कर नमस्कार करे हैं फिर मानस्थंभों के परे उत्तम जन प्रवेश करे हैं महा भक्तिकर मंडित भीतर पैठे हैं।।70।। अर जो कुकर्म्म करनहारे पापी हैं अर नीच है पाखंडी हैं अर अंग जिनके विकल हैं अर जिनकी इन्द्री भी विकल हैं सो बाहर ही से वन्दना करे हैं अर छत्र, चामर, झारी आदि सब उपकरण बाहर तजकर जयांगण विषे कितनेक निजवर्गों सहित हाथ जोड़ नमस्कार करते देवेंद्र, नागेंद्र, नरेन्द्र प्रवेश कर हैं विधि पूर्वक भीतर जाय कर अपने मणियों के मुकुट नवाय नेमीश्वर को नमस्कार करे हैं अर पहली पीठ पर धर्म चक्र है उसे पूजे हैं। अपनी शक्ति प्रमाण अर विभव प्रमाण सुर असुर नरेंद्रादिक प्रभु को बारंबार नवे हैं फिर हर्ष के भरे प्रगट हैं रोमांच जिनके सो हाथ जोड़ शीश नवाये अपने स्थानक तिष्टे हैं जैसे सूर्य्य को उदय को पायकर कमलों का समूह विकसे हैं तैसे जिन रवि को पायकर गुण रूप कमल विकसे है।।76।।।

सकल सुरों की सेना अर समोसरण विषें प्रवेश करती संती समोसरण को पूर्वे समर्थ न होती भई जैसे अनेक नदी प्रवेश करती संती समुद्र को पूर न सके कईएक निकसे हैं कई एक पैसे हैं कई प्रदक्षिणा करे हैं कई एक नमस्कार करे हैं कई एक स्तुति करे हैं कई ईश्वर का ध्यान धरे हैं। इस भांति संतों के समूह तहां तिष्ठे हैं जहां भगवन्त के प्रभाव कर मोह नहीं, भय नहीं, द्वेष नहीं, विषय की अभिलाषा नहीं, रति नहीं, अद्वेष का भाव नहीं, अर छींक, जम्भाई, खांसी, डकार इत्यादि विकार नहीं फिर निन्द्रा, तन्द्रा, क्लेश, भूख, प्यास इत्यादि नहीं। जीवों का अकल्याण नहीं सब ही विघ्न जिन के वचन हरे हैं।।80।। समोसरण की भूमि विषे त्रैलोक्य की अद्‌भुत है यह भगवान की बाह्य विभूति है सोई कथन में न आवे तो अंतरंग की विभूति कौन कह सके। सम्पूर्ण विभूति की एक भूमि ऐसा जिनेश्वर का स्थान विषे जिनवर विराजे अंतरंग की विभूति कर महा पवित्र सो बारह सभा के भव्य जीवों के समूह अभिलाषा रूप जो नेत्र तिन कर जिनेश्वर रूप अमृत रूप समुद्र उसे पीवते भये।।81।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ समोसरणवर्णनो नाम षट्पंचाशत् सर्गः।।56।।

सत्तावनवाँ सर्ग

अथानन्तर – कल्याण का एक निवास जो वह स्थानक सदा उत्सव रूप उस विषे भव्यलोक धर्म श्रवण की इच्छा कर हाथ जोड़ तिष्ठे तहां वरदत्त नामा मुख्य गणधर वक्ताओं में श्रेष्ठ जे भगवान नेमि जिनेन्द्र तिनको समस्त भव्य जीवों के हित की वार्ता पूछता भया।।2।।

तब गणधर के प्रश्न से स्वामी के मुख से दिव्यध्वनि खिरी। प्रभु का मुख कमल जिसका चहुं ओर से दर्शन होय है अर प्रभु की वाणी धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष यह चार पुरुषार्थ तिनको प्रगट करे है अर चार वर्ण अर चार संघ तिनों को मार्ग की दिखावनहारी है अर प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग। इन चारों की माता है चारों अनुयोग जिनवाणी से प्रगट होय हैं अर जिनेश्वर की वाणी आक्षेपणी विक्षेपणी संवेगणी निर्वेगनी चतुर्विधि कथा की वृत्ति को धरे हैं अर चतुर्गति की निवारणहारी है अर एक दोय तीन चार पांच छह सात आठ नव इत्यादि अनेक भेदों को धरे है द्रव्य की सत्ता स्वभाव पर्याय रूप है द्रव्य पर्यायवन्त है तैसे सत्ता पर्याय है एक है तथापि अनन्त भेदों की धरणहारी है तैसे जिनवाणी एक रूप है तथापि अनन्त नय रूप है।।5।।

एक आत्मस्वरूप की कथनहारी है इसलिये एक रूप कहिये अर यती श्रावक यह दोय प्रकार धर्म तिनको निरूपणहारी अथवा निश्चय व्यवहार दोय नय की प्रगट करणहारी इसलिये दोय रूप कहिये अर रत्नत्रय की अथवा द्रव्य गुण पर्याय की प्रकाशनहारी इसलिये त्रिधा कहिये अर चार अनुयोग की कथनहारी सव कषाय की नाशनहारी चतुर्गति की निवारणहारी इसलिये च रूप कहिये अर पंचास्तिकाय की प्ररूपणहारी पंचपरावर्तन के भेद दिखावनहारी पंचपरमेष्ठी की भक्ति प्रकाशनहारी इसलिये पंच रूप कहिये अर षट द्रव्यों की दिखावनहारी षटकाय के जीव की रक्षा करणहारी इसलिये षट रूप कहिये अर सप्तभय निवारणहारी सप्तव्यसन की निन्दनहारी सप्त भंग रूप इसलिये सप्तप्रकार कहिये अर अष्ट कर्म्म की नाशनहारी अष्टगुणों की भाषणहारी इसलिये अष्टरूप भी कहिये अर नव नय की बतावनहारी अर नवधा ब्रह्चर्य की उपदेशनहारी इसलिये नव रूप भी कहिये अर दश लक्षण धर्म की निरूपणहारी अर दशधा परिग्रह की छुड़ावनहारी इसलिये दश रूप भी कहिये इत्यादि कहां तक कहिये इस जिनवाणी की महिमा श्रीजिनेश्वर देव ही जाने ऐसी यह जिनवाणी जगत के उद्धार करने को जिनेश्वर के मुख से प्रगट भई।।6।।

वह जिनवाणी जीवों के अहित को निवारती संती अर हित को प्रगट करती संती अर प्राणियों को यथायोग्य धर्म विषे धरती सन्ती अर प्राणियों को यथायोग्य धर्म विषे धारती संती अर अशुभ का प्रहार करती संती अर अशुभ को थापती संती अर जीवों के उपार्जे कर्मों को स्थिल करती संती अर

जीवों को शिव स्थान का संग करावती संती एक योजन अधिक विस्तरी महा मधुर स्निध गम्भीर महा दिव्य अक्षरों की प्रगट करनहारी निरक्षरी महासाध्वी सरस्वती अनन्य वृति कहिये एक धर्म की प्ररूपणा टार नहीं है अर वृति जिसकी ऐसी भगवान की वाणी भाव अर अभाव दोनों की दिखावनहारी निर्विकल्प भाव की बढ़ावनहारी जगत की स्थिति जतावनहारी अनादि सिद्ध शारदा सर्वज्ञ के मुख से प्रगट भई। यह किसी की करी नहीं इसका कोई कर्त्ता नहीं। अनादि काल की प्रवर्ते है अर सदा प्रवर्तेगी केवलज्ञानियों कर इसका व्याख्यान होय है वह वक्ता हैं अर सर्व श्रोता हैं।।10।। सो प्रभु की ध्वनि में यह आज्ञा भई जो आत्मा है अर परलोक है धर्म अधर्म है तिनका कर्त्ता जीव है अर तिनके फल सुख दुःख तिनका भोक्ता जीव है जो नास्तिक यह चरिचा नहीं माने हैं सो नरक निगोद के अधिकारी हैं यह आत्मा आप कर्म के हैं तिनके फल आप ही भोगवे हैं, आप ही अज्ञान कर संसार विषे भ्रमे है अर आप ही अज्ञान कर मुक्त होय है।।11।।

अब तक यह मिथ्यादृष्टि है राग-द्वेषादि भाव कर कलेश रूप है तब तक भवसागर विषे भ्रमे है अर जब इसके सम्यक्ज्ञान होय यह संसार शरीर भोगों से वैराग्य उपजे तब सिद्ध होय संसार से छूटे। इस जीव की मूढ दशा जाती रहे अर ज्ञान दशा होय तब मोक्ष पावे यह अध्यात्म ज्ञान दीपिका समान मोक्ष का मार्ग दिखावनहारा है। वह श्रीभगवान वाणी अध्यात्मरूप यद्यपि एक स्वरूप है नाना रूप नहीं, तथापि नाना प्रकार पात्रों के योग से नाना प्रकार भासती भई सभा विषे जितने श्रोता थे सो सब अपनी अपनी भाषा में समझें जैसे स्वच्छ जल एक रूप है परन्तु पृथिवी विषें नाना वृक्षों के योग से नाना रूप होय है।।15।। सब सभा सावधान होय सुने है अर जिनेश्वर रूप सूर्य्य उनके अंतरंग का अज्ञान रूप तिमिर दिव्य ध्वनि रूप किरण कर हरते भये वे भगवान विश्वात्मा कहिये विश्व के हितु इत्यादि कथन कर जीवों को उपदेश देते भये।।16।।

इस संसार विषे जीवों की दोय राशि हैं एक तो भव्य राशि दूजी अभव्य राशि तिनमें अभव्य राशि तो मोक्ष के अधिकारी नहीं अर वे भव्य जीव हैं तिनमें निकट भव्य मोक्ष के पात्र हैं मोक्ष नामा पुरुषार्थ भव्य जीवों ही के होय है। जे भव वासी भव्यता के योग कर शुद्ध हैं तेई सिद्ध पद को पावे हैं।।17।। मोक्ष का उपाय आत्मध्यान अर सूत्र का अध्ययन है सम्यक् दर्शन ज्ञान चारित्र इनकी एकता सो ध्यान कहिये।।18।। सो सम्यक् दर्शन ज्ञान चारित्र का विशेष वर्णन करे हैं जो तत्त्व का निःसंदेह श्रद्धान सो सम्यक् दर्शन कहिये सो सम्यक् दर्शन संशय विमोह विभ्रम से रहित है समस्त मल का है अभाव जहां। जब तक संशय है तब तक ही मन मलीन है सो सम्यक् दर्शन तीन प्रकार है। एक उपशम दूजा क्षयोपशम तीजा क्षायिक जिसके मोह की सात प्रकृति उपशमें सो उपशम अर सातों का क्षयोपशम होय सो क्षयोपशम उसे वेदक भी कहिये अर सातों का क्षय होय सो क्षायिक। यह तीन भेद कहे अर

निःसर्ग तथा अधिगम इन दोय भेदों कर दोय प्रकार भी कहिये सो स्वतः स्वभाव होय सो निसर्ग अर गुरु के उपदेश से होय सो अधिगम कहिये।।20।। जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष यह सप्त तत्त्व तिनकी श्रद्धा करनी इनके लक्षण जाने जो तत्त्वों का श्रद्धान सो सम्यक् दर्शन कहिये।

अथानन्तर – सप्त तत्त्वों में जीव के लक्षण कहे हैं। जीव का लक्षण उपयोग उसके भेद दो एक ज्ञानोपयोग एक दर्शनोपयोग सो ज्ञानोपयोग के भेद आठ अर दर्शनोपयोग के भेद चार मति, श्रुति, अवधि, मनःपर्यय, केवल, कुमति, कुश्रुत, कुबुद्धि यह आठ ज्ञानोपयोग के भेद हैं अर चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल यह चार दर्शनोपयोग के भेद हैं।।24।। आत्मा का चिह्न चैतन्य है सो संसार अवस्था विषे इच्छा, द्वेष, प्रलय, सुख, दुःख इन चिन्हों कर चेतना जानी जाय है अचेतन में ये लक्षण नहीं। कई एक भूतवादी ऐसी कहे हैं जो पृथिवी अप तेज वायु इन चारों का मिलाप सो ही जीव अर इनका विछुडन सोइ मरण सो यह बात प्रमाण नहीं इन चारों का मिलाप सो शरीर का आकार है अर आत्मा निराकार है इनके मिलाप कर चेतना की उत्पत्ति नहीं इनके वियोग कर चेतना का मरण नहीं चेतन जन्म मरण से रहित है इनका संयोग सो शरीर की उत्पत्ति अर इनका वियोग सो शरीर का मरण भूतवादी कहे। पीसा अन्न अर जल इत्यादि वस्तुओं के मिलाप कर मद्य की उत्पत्ति होय है अथवा गुल अर बोरडड़ी का आदि वस्तुओं के मिलाप कर मद्य की उत्पत्ति होय है तैसे पृथिवी, जल, अग्नि, पवन इनके योग से जीव होय है सो यह बात मिथ्या है वह मद्य की सामग्री जुदी जुदी है तिनमें लेश मात्र मद शक्ति होय है इसलिये वह भेली होय मद्य की कर्ता होय है अर इन भूत चतुष्टय में जीवत्व शक्ति नहीं यह काया के कारण तिनको जो चैतन्यता के कारण मान्य हैं सो बालु रेत आदिक से तेल की उत्पत्ति चाहे हैं सो कैसे होय? यह जीव अनादि निधन है जिसकी आदि अन्त नहीं अनादि काल का गत्यन्तर से आवे है। अर गत्यन्तर को जाय है इस भव वन विषे अपने कर्मों के वश जीव भ्रमण करे है।।27।।

अर कई एक प्रत्यक्षवादी कहे हैं जो प्रत्यक्ष दीखे सो ही प्रमाण अर जो न दीखे सो प्रमाण नहीं। यह शरीर ही प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर है इसलिये इस सिवाय अर जीव नहीं इत्यादि मिथ्या वार्त्ता जो नास्तिक वादी प्ररूपै हैं सो अपना अर पर का अहित करे हैं। इस श्रद्धा से आप डूबे अर औरों को डुबोवे हैं।।28।। अर कई एक मिथ्यावादी ऐसा माने हैं जो आत्मा है परन्तु नित्य नहीं क्षणभंगुर है सो ऐसी श्रद्धा सत्य नहीं। आत्मा नित्य है अखंड है अविनश्वर है जो क्षणभंगुर होय तो पूर्व जन्म का स्मरण कैसे होय कई एक को पूर्व भव का जाति स्मरण ही होय है अर क्षणभंगुर होय तो इस जन्म की वार्त्ता का स्मरण कैसे होय। पिछले अनुसंधान की बुद्धि का लोप होय तो सकल व्यवहार ही का लोप होय देना लेना आदि सब व्यवहार मिट जाय।।29।। अर कई एक वादी आत्मा को ज्ञान मात्र

www.vitragvani.com

ही माने हैं सो आत्मा ज्ञान आदि अनन्त गुण मात्र है एक ज्ञान मात्र ही कहने में अनन्त गुण का अभाव होय है। यह जीव द्रव्य आप ज्ञाता है, दृष्टा है, कर्त्ता है, भोक्ता है, अरक्ता कहिये कर्मों का तजनेहारा अर उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य कर युक्त है अर गुणवान है।।30।। अर असंख्यात प्रदेशी लोक प्रमाण है अर प्रदेशों का संकोच विस्तार कर शरीर प्रमाण है अर वर्ण पांच, रस पांच, गंध दोय, स्पर्श आठ यह पुद्गल के बीस गुण तिनसे रहित है।।31।।

अर कई एक कहे हैं आत्मा सांवा के जीव मात्र है अर कई एक कहे है अणुमात्र है अर कई एक कहे हैं अंगुष्ट मात्र है अर कई एक कहे हैं पाँच सै योजन प्रमाण है सो यह सब ही असत्यवादी हैं। जैसा ये कहे हैं तैसा नहीं आत्मा अमूर्ति स्वरूप चिद्रूप है।।32।। देही देही के भिन्न भिन्न जीव पदार्थ सो सबही असंख्यात प्रदेशी हैं अर व्यवहार नय कर देह प्रमाण है जो देही प्रमाण न होय तो अर्थ की सिद्धि न होय जो देही प्रमाण से अधिक होय अर बहु योजन होय तो स्पर्शी भी जाय अर नेत्रों कर देखा भी जाय अर देह प्रमाण से न्यून आत्मा होय तो शरीर जितना अधिक होय उतना मृतक समान चेष्टा रहित होय इसलिये ऐसे नहीं आत्मा अदृश्य है अर अस्पर्श है जैसा देह धारे हैं उसही प्रमाण प्रदेश विस्तरे है।।35।। सो आत्मा, गति चार, इन्द्री पांच, षट्काय, वेद तीन, योग पंद्रह, कषाय पच्चीस, ज्ञान आठ, संयम सात, सम्यक् छह, लेश्या छह, दर्शन चार, सैन असैनी दोय, भव्य अभव्य दोय आहारक दोय मूल मार्गण चौदह तिन कर लखिये है अर चौदह गुणस्थान तिनकर विल किये है सो जीव पदार्थ चेतन है।।36।। अर प्रमाण दोय एक प्रत्यक्ष दूजा परोक्ष पर नय द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक नैगम संग्रह व्यवहार ऋजु सूत्र शब्द समभिरूढ एवंभूत अर निक्षेप चार – नाम स्थापना द्रव्य भाव अर सत संख्या क्षेत्र स्पर्श काल भाव अन्तर अल्प बहुत्व यह आठ इन कर जीव जाना जाय अर मुक्त जे सिद्ध ते निज गुणों कर जाने जाय हैं।।38।।

द्रव्य कहिये वस्तु का स्वरूप सो अनेक रूप है उसका एक रूप निरूपण सो नय कहिये जहां द्रव्य का नित्य स्वरूप वर्णन करिये सो द्रव्यार्थिक नय कहिये अर जहां अनित्य स्वरूप वर्णन करिये पर्याय की मुख्यता कर सो पर्यायार्थिक नय कहिये।।39।। यह मूल नय दोय हैं सो परस्पर सापेक्ष हैं द्रव्य विना पर्याय नहीं अर पर्याय बिना द्रव्य नहीं। इन दोनों नयों के भेद नैगमादिक नय हैं तिनमें नैगम, संग्रह, व्यवहार, यह तीन तो द्रव्यार्थिक के भेद हैं अर ऋजुसूत्र, शब्द अर समभिरूढ, एवंभूत यह चार पर्यायार्थिक नय के भेद हैं। जो वस्तु की एकता सो ही द्रव्य अर जो अनेकता सो ही पर्याय एकता का नाम सामान्य कहिये अर अनेकता का नाम विशेष कहिये पदार्थ संकल्प मात्र का ग्राहक सो नैगम नय कहिये उसके भेद तीन अतीत विषे वर्तमान का आरोपण सो भूत नैगम ऐसा कहना जो आज दीपमालिका के दिन वर्द्धमान स्वामी मोक्ष गये सो जिस दिन मोक्ष गये उस दिन को व्यतीत भए

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

अढ़ाई हजार वर्ष ऊपर गये अर आज का दिन कहना सो भूत नैगम जानो अर होनहार विषें वर्तमान समान कहना सो भाविष नैगम है जैसे अरिहंतों को सिद्ध कहना अर वस्तु कछु निपजी कछु न निपजी उसे निपजी समान कहिये सो वर्तमान नैगम जानो ऐसा कहना सो भात रांधिये है सो भात नाम तो रन्ध चुके अर रांधते को भात कहना सो वर्तमान नैगम है।

जब चावल चरवे में डाले अर अग्नि पर चढ़ाये तब भात ही कहिये तो दोष नहीं अर वस्तु का भेद न करना समस्त का ग्रहण करना सो संग्रह नय कहिये सब ही द्रव्य सत्तारूप हैं अस्तित्व गुण बिना कोई द्रव्य नहीं सब द्रव्यों को एक रूप जानना सो सामान्य संग्रह अर सब जीवों को एक जानना सो विशेष संग्रह कहिये यह संग्रह के दोय भेद हैं अर संग्रह नयकर किया जो द्रव्यों का संग्रह उस विषें ऐसा भेद करना जो द्रव्य के जीव अर अजीव द्रव्य दोय भेद हैं यह कथन करना ही सामान्य संग्रह भेद का व्यवहार है। अर जीव में भेद करना जो यह संसारी अर सिद्ध सो विशेष संग्रह भेदकर व्यवहार है यह व्यवहार के दोय भेद जानो।।45।।

अर ऋजु सूत्र का भेद सुनो भूत अर भविष्यत् यह दोनों वक्र सो इनको तज कर वर्तमान अर्थ पर्याय रूप द्रव्य का कथन करना सो ऋजु सूत्र कहिये जैसे सूत्र सुधा चला जाय सूत्र विषें वक्रता नहीं तैसे ऋजु सूत्र विषें वर्तमान परणति की ही प्रूपणा है उसके भेद दोय एक सूक्ष्म ऋजु सूत्र एक स्थूल ऋजु सूत्र जो एक समय अवस्था ही द्रव्य की अर्थ पर्याय सो सूक्ष्म ऋजुसूत्र कहिये अर मनुष्यादि पर्याय अपनी आयु प्रमाण तिष्ठे है ऐसा कहना सो स्थूल कहिये ऋजु सूत्र यह ऋजु सूत्र के दोय भेद कहे अर शब्द कहिये ध्वनि।।46।। सो त्रिलिंग कहिये स्त्रीलिंग पुलिंग नपुंसक लिंग इन तीन लिंग रूप शब्द का उच्चार है अर शब्द है सो साधने कर सिद्ध होय है अर एक वचन, द्विवचन, बहुवचन रूप नाना प्रकार हैं अर एक काल कहिये अतीत अनागत वर्तमान तिन कर शब्द का भेद होय है सो एक यथार्थ शब्द एक रूढिक जिसका अर्थ सो यथार्थ अर जिसका अर्थ नहीं सो रूढिक अर शब्द अनेक अर अर्थ एक जैसे दारा, भार्या, कलत्र ये सब स्त्री पर्याय के नाम हैं यह शब्द नय कहिये।।47।।

अर समभिरूढ नय का भेद सुनो। जो गो संसार में प्रसिद्ध शब्द पड़ गया सो कहना गौ ऐसा शब्द सुही को कहिये जहां अर्थ का विचार नाहीं गौ शब्द का अर्थ तो यह है गच्छति जो गमन करे उसको गौ कहिये सो गमन तो सबही करे हैं परन्तु गौ नाम गाय ही का प्रसिद्ध जानो अर कोई चक्षुहीन है अथवा प्रशंसा योग्य चक्षु नहीं अर नाम उसका कमलनयन है सब ही कमलनयन ही कहें यह समभिरूढ नय माननी अर जैसी चेष्टा होय तैसा ही कहिये इन्दतीति इन्द्र इसका अर्थ जो क्रीड़ा करे सो इन्द्र जिस समय क्रीड़ा करे उस समय इन्द्र कहिये यह एवं भूत नामा नयों का स्वरूप है जो कर्म शत्रु को जीते सो जिन जेते वचन के मार्ग उतने ही नय यह संख्या नहीं जो एती ही नय हैं नय असंख्य

हैं।।52।। यह जीव तत्त्व का व्याख्यान किया।

अर अजीव के भेद पांच – धर्म अधर्म आकाश काल अर पुद्‌गल इन तत्त्वों की श्रद्धा करे सो सम्यक् दर्शन का लक्षण है। धर्म का लक्षण गति, अधर्म का लक्षण स्थिति, आकाश का लक्षण अवकाश, दान अर काल का लक्षण वर्तना अर पुद्‌गल का लक्षण मूर्तित्व मिले अर बिछुड़े इसलिये पुद्‌गल कहिये सो गति अर स्थिति जीव अर पुद्‌गल ही के हैं अर द्रव्य के नहीं, पुद्‌गल अनेक रूप है उसके मूल भेद दोय हैं एक अणु अर एक स्कंध जो परमाणुओं का समूह एकत्र होना सो स्कंध अर अकेला परमाणु सो अणु कहिये अणु मिल स्कंध बिछुड़े तब अणु मात्र रह जाय अर काल की पर्याय समान आदि अनेक हैं कलन स्वभाव हिये वर्तमान लक्षण उसे धरे सो काल एक निश्चय काल एक व्यवहार काल जो कालाणु द्रव्यरूप सो निश्चयकाल अर जो समयादि पर्याय रूप सो व्यवहार काल यह व्यवहार काल समयादि है सो पुद्‌गल परमाणु की गतिकर जाना जाय है इसलिये परतंत्र कहिये अर निश्चय काल स्वतः सिद्ध अविनाशी पदार्थ है। इसलिये स्वतंत्र कहिये उस निश्चयकाल की यह व्यवहार काल पर्याय है।।56।। यह अजीव तत्त्व का व्याख्यान किया।

फिर आस्रव का व्याख्यान करे हैं मन वचन काय के द्वारा कर्म का आगम जो आस्रव कहिये उसके दोय भेद जो पुण्य कर्म का आस्रव सो शुभास्रव कहिये अर जो पाप का आस्रव सो अशुभभाव कहिये।।57।। सो कषाय संयुक्त जीव अर कषाय रहित जीव यह आस्रव के दोय स्वामी तिनमें पहला मिथ्यादृष्टि गुणस्थान उसे आदि देय दशमां सूक्ष्म सांपराय तहां लग सकषाय कहिये अर ग्यारहवां उपशांत मोह अर बारहवां क्षीणमोह तेरहवां संयोग जिन चौदहवां अयोग जिन यह चार गुणस्थान अकषाय हैं तिनमें ग्यारहवें बारहवें उपशांत मोह तो एक बेर पीछे आवे क्षीण मोह तथा संयोग जिन अयोग जिन यह कृतार्थ होय ही चुके सो सकषाय के तो कर्मों का आस्रव साम्पराय कहिये कछु एक काल रहाऊ है अर अकषाई के ईर्यापथ कहिये रहाऊ नहीं गमन रूप ही है।।59।।

सकषायी के जो आस्रव है सो इन्द्रियों के विषय अर कषाय अर हिंसादि पाप अर अव्रत असंयम प्रमाद इन कर होय है उसकी पच्चीस क्रिया है तिनमें प्रथम सम्यक्त्व परिवर्द्धनी सम्यक् क्रिया है उसके लक्षण अरहंत देव निर्ग्रन्थ गुरु जिन प्रतिमा जिन वचन इनकी पूजा।।61।। अर अशुभ के उदय से कुगुरु, कुदेव, कुधर्म इनका स्तवन सो मिथ्यात परिवर्द्धनी मिथ्यात क्रिया जानों। अर तीजी असंयम वर्द्धनी प्रयोग क्रिया उसके लक्षण जहां षट्काय की दया का यत्न नहीं बिना देखे गमनादिक की प्रवृत्ति।।63।। अर चौथी प्रमाद परिवर्द्धनी प्रमाद सहित क्रिया उसे समादान क्रिया भी कहिये उसके लक्षण संयम भी धार कर असंयम की ओर सन्मुख होना अर पांचमी ईर्यापथ क्रिया कही जो ईर्या समिति गमन करना सो संयम की बुद्धि का कारण है अर जो ईर्या समिति बिना गमन करना सो

असंयम वर्द्धनी पापास्रव का कारण है यह क्रिया सरागी ही के होय। यह पांच साम्पराय की क्रिया कहिये।।65।।

अर छठी प्रद्वेष की क्रिया सो क्रोध के आवेश के वश से उपजे अर सातमी काय की क्रिया उसका लक्षण दुष्ट जीव दुष्टता उद्यम का होय।।66।। आठमी अधिकारणी क्रिया जो हिंसा के उपकरण का ग्रहण अर नवमी परितपि क्रिया जो स्वइच्छाचार पने थकी पर जीव को दुःख की उत्पत्ति करना।।67।। अर दशमी प्राणातिपात की क्रिया उसका लक्षण जीवों के इन्द्री बल आयु श्वासोश्वास प्राणों को वियोग करे यह छठी से लेय दशमी तक व्यापिका क्रिया कही अर ग्यारहवी दर्शन क्रिया उसका लक्षण प्रमादि जीव के राग भाव के योग से मनोज्ञ रसरूप के अवलोकन का अभिप्राय होय।।69।। अर बारहवीं स्पर्शन क्रिया कर्म के बन्ध का कारण जानना। उसके लक्षण पल्लव पुष्प आदि सजीव वस्तु कोमल तिनके स्पर्श का अविवेकी के अभिलाष होय।।70।। अर तेरहवी पापास्रव की करणहारी प्रत्याय की नामा क्रिया उसके लक्षण पाप के उपकरण अपूर्व निपजावे।।71।। अर चौदहवीं समन्तानुपतिनी नामा क्रिया सो साधुजनों को अयोग्यता के लक्षण स्त्री पुरुष अर पशु तिनके स्थानक विषे मल मूत्रादि डारे।।72।। अर पंद्रहवी अनाभोग नामा क्रिया उसके लक्षण बिना देखी पूंजीं भूमि विषे अंगादिक का स्थापन यह ग्यारहवीं से लेय पंद्रहवी तक दुःक्रिया हैं।।73।।

अर सोलहवीं सुहस्त क्रिया आस्रव की बढ़ावनहारी जानना। उसके लक्षण जो अयोग काम किसी ने न बने सो अपने हाथों करे।।74।। अर सतरहवी निसर्ग नामा क्रिया स्वतः स्वभाव आस्रव का करणहारी उसके लक्षण पाप के अंगीकार की वृत्ति बिना सिखाई आप ही जान ले अर अठारहवीं विदारण नामा क्रिया उसके लक्षण पराये औगुण का लोकों के निकट प्रकाश करना यह क्रिया बुद्धि की नाश करणहारी है।।76।। अर उन्नीसवी जिन आज्ञा उल्लंघनी क्रिया उसके लक्षण अज्ञानी जीव जिन आज्ञा यथार्थ पालने को असमर्थ अर षट् आवश्यकादि विषें मिथ्यात्व के योग अरसे प्ररुपणा करें।।77।। अर बीसवीं अनादर नामा क्रिया उसके लक्षण शठता के योग से अर आलस के वश से शास्त्रोंक्त विधि के करने विषे आदर नहीं। यह सोलहवी से लेय बीसवीं पर्यंत अनाकांक्ष नामा क्रिया कही अर इक्कीसवी प्रारम्भ नामा क्रिया उसके लक्षण अर जीवन आरंभ किया सो आरम्भ जहां हिंसा उस विषे अज्ञानी हर्ष माने आपके आरम्भ की बांछा इसलिये पराये आरम्भ अच्छे लागे।।78।।

अर बाईसवी परिग्रहणी नामा क्रिया उसका लक्षण परिग्रह की अति तृष्णा जो हाथ पड़े सो ही उठाय लेय अर तेईसवी माया नामा क्रिया उसका लक्षण जो ज्ञानदर्शनादि विषे मूढता अर पर जीवों को ठगना।।79।। अर चौबीसवीं मिथ्या दर्शन नामा क्रिया उसके लक्षण मिथ्यादर्शन के आरम्भ का दृढ़ करना अर अन्य जीवों को मिथ्यात्व विषें अनुराग बढ़ावना अर पच्चीसवीं अप्रत्याख्यान नामा

क्रिया उसके लक्षण कर्म के उदय के वश से पाप थकी अनिवृति किसी ही अयोग्य क्रिया का त्याग नहीं सर्व पाप क्रिया की प्रवृत्ति। यह बीसवीं क्रिया से लेय पच्चीसवीं तक अनिवृत्ति क्रिया है। यह पच्चीस आस्रव की क्रिया कही।।81।।

जिस जीव के कषाय परिणाम मंद होवें उसके आस्रव मन्द होय अर जिसके कषाय मंद मध्य होय उसके आस्रव भी मध्यता रूप होय अर जिसके तीव्र कषाय होय उसके आस्रव की तीव्रता जानो। जैसा कारण तैसा कार्य कषाय तो कारण है अर आस्रव कार्य है।।82।। सो आस्रव के भेद दोय एक जीवाधिकरण एक अजीवाधिकरण तिनमें जीवाधिकरण के भेद सुनो – संरम्भ कहिये प्रमादी जीव के जीव हिंसादि पापों के विषय यत्न का आवेश सो संरंभ अर जीव हिंसादि पापों के उपकरण का अभ्यास करना सो समारंभ अर हिंसादिक का उद्यम सो आरंभ। यह तीन मन वचन काय के योग कर गुणिये तब नव भेद होवें अर नव को कृतकारित अनुमोदन कर गुणिये तब सत्ताईस भेद होवें अर सत्ताईस को चार कषायों कर गुणिये तब एक सौ आठ भेद होय। यह जीवाधिकरण के भेद कहे अर अजीवाधिकरण के भेद चार निर्वर्तना निक्षेप संयोग निसर्ग वर्तनाओं के भेद दोय अर निक्षेप के भेद चार अर संयोग के भेद दोय निसर्ग के भेद तीन।।85।।

इनका वर्णन करे हैं तिनमें निर्वर्तना के दोय भेद एक मूल निर्वर्तना दूजी उत्तर निर्वर्तना जो मूल से रचना सो मूल निर्वर्तना अर जो कछुयक रचना सो उत्तर निर्वर्तना सो यह दोनों रचना मन, वचन, काय कर होय हैं।।86।। अर निक्षेप के भेद चार प्रथम सहसा निक्षेप उसका अर्थ तत्काल बिना विचारे वस्तु डार देय यह न विचारे जो इसके डारे किसी को बाधा होयगी।।87।। अर दूजी दुःप्रमृष्ट नामा निक्षेप जो बिना पूजे अथवा यथाविधि न पूजे वस्तु मेल देय अर तीजा अनाभोग नामा निक्षेप जो अयोग्य स्थल विषे योग्य वस्तु मेल देय अर चौथा अप्रत्वेक्षित नामा निक्षेप जो बिना देखे वस्तु मेल दे, दया का विचार नाहीं यह चार निक्षेप के भेद कहे अर संयोग के भेद दोय एक भुक्त संयोग एक पाचन संयोग जो भोजन के उपकरण अथवा पीने के उपकरण तिनको बिना देखे ग्रहे अथवा अयोग उपकरण कर खान पान करे यह संयोग के दोय भेद कहे अर निसर्ग के भेद तीन मन, वचन, काय।।89।। यह संक्षेपता कर आस्रव का भेद कहा।

अथानन्तर– आस्रव का विशेष भेद कहे हैं ज्ञान अर दर्शन का दूषण कहना अर ढाकना ज्ञान दर्शन विषे विघ्न करना आसादना करनी यह दूषण ज्ञानावर्णीय अर दर्शनावर्णीय कर्म के आस्रव के कारण हैं।।91।। अर आप दुःखी होना औरों को दुःखी करना आप शोकवन्त रहना अर औरों को शोकवन्त करना आप क्लेश रूप रहना औरों को क्लेश करना अर आप संताप रूप रहना अर औरों को आताप करना अर आप रुदन करना अर औरों को रुदन करावना यह सब असाता वेदनीय के

आस्रव के कारण हैं।।92।। यह सकल प्राणियों विषे दया अर वृत्तियों विषे अति अनुराग अर सराग संयम अर दान क्षमा अर अंतर्बाह्य शौच अर अरहन्त देव की पूजा अर बाल वृद्ध तपस्वियों विषे वैयावृत्य, यह साता वेदनीय के कारण हैं।।94।। अर केवली श्रुतकेवली अर चतुर्विध संग धर्म देव प्रतिमा इनका रूप अन्यथा कहना यह दर्शन मोह के आस्रव के कारण हैं।।95।।

अर कषायों के उदय से अति तीव्र परिणाम होय सो चारित्र मोह के आस्रव का कारण हैं। उस चारित्र मोह के दोय भेद हैं एक कषाय वेदनीय एक नोकषाय वेदनीय आप कषाय करना औरों को कषाय उपजावना जो कषाय वेदनीय के आस्रव का कारण हैं।।97।। अर उपहास्यनादि कर धर्म की हास्य करना हास्यवेदनीय नामा नोकषाय के आस्रव का कारण अर नाना प्रकार क्रीडा विषे आसक्तता अर व्रत शीलादिक की अरुचि सो रति वेदनीय नामा नोकषाय के आस्रव का कारण है अर परजीव को अरति करना अर परकीर्ति का नाश करना सो अरति वेदनीय नामा नोकषाय के आस्रव का कारण है अर जो कुशील का सेवना सो अरति के आस्रव का कारण है।।100।। जो आपको शोक उपजावना अर ओरों के शोक की वृद्धि भये आनन्द मानना सो शोक वेदनीय नामा नोकषाय के आस्रव का कारण है अर आप सदा भय रूप रहना अर औरों को भय उपजावना सो भय नामा नोकषाय के आस्रव का कारण है अर भले आचरण के आचार विषे अपवाद करना अर घृणा करना सो जुगुप्सा नामा नोकषाय के आस्रव का कारण है अति ठगविद्या अति मिथ्या अर अति विषयानुराग यह स्त्री वेद नामा नोकषाय के आस्रव का कारण है अर निगर्वता अर अल्प क्रोध अर निज दारा विषें सन्तोष यह पुरुष वेद नामा नोकषाय के आस्रव का कारण है अर कषाय की प्रचुरता अर पराई गुह्य वार्त्ता का प्रकाशन अर स्त्री विषे आसक्तता यह नपुंसक वेद नामा नोकषाय के आस्रव के कारण हैं।।5।।

अर बहुत आरम्भ अर बहुत परिग्रह ये नर्कायु के आस्रव के कारण हैं अर मायाचार है सो तिर्यंचायु के आस्रव का कारण है अर अल्प आरंभ अर अल्प परिग्रह निगर्व शुभायु अर सन्तोषवृत्ति यह मनुष्यायु के आस्रव का कारण है।।7।। अर सम्यक्त्व तथा यती श्रावक के व्रत अर बाल तप कहिये अन्य तापस संबन्धी अज्ञान तप अर अकाम निर्जरा ये देवायु के आस्रव के कारण हैं।।8।। अर मन, वचन, काय की वक्रता अर पराया अपवाद यह अशुभ नाम कर्म के आस्रव के कारण हैं अर दर्शन विशुद्धि, विनय संपन्नता, निरतिचार शीलव्रत निरन्तर, ज्ञानोपयोग संवेग शक्तितस्त्याग, शक्तितस्तप साधु समाधि वैयाव्रत करण अरिहंत भक्ति, आचार्य भक्ति, बहुश्रुत भक्ति, प्रवचन भक्ति, आवश्यक प्रभावना मार्ग प्रभावना अर प्रवचन वात्सल्यता यह सोलह भावना तीर्थंकर प्रकृति नामा कर्म के आस्रव का कारण हैं अर पराये छते गुण का ढाकना अर अपने छते औगुण ढाकना अर

पराये अनहोते औगुन कहना अर अपने अनहोने गुन गावना। पराई निन्दा अर अपनी प्रशंसा यह नीच गौत्र के आस्रव के कारण हैं।।11।।

अर आप सब काल लहूरा (छोटा) भाई हुआ रहना आपको सबसे लघु जानना अर गर्व न करना अर पराये गुणों की प्रशंसा करनी अर अपनी न करनी अपना औगुन की निन्दा करनी यह उच्च गौत्र के आस्रव का कारण है अर पराये काम में विघ्न करना सो अन्तराय कर्म के आस्रव का कारण है उसके भेद पांच जो दान विषें विघ्न करना सो दानान्तराय का कारण है पराये लाभ विषे अन्तर करना सो अपने लाभान्तराय का कारण है अर पराये भोग विषे अंतराय करना सो भोगान्तराय के आस्रव का कारण है अर पराये उपभोग विषे अन्तर करना सो अपने उपभोगांतराय के आस्रव का कारण है अर पराये वीर्य्य विषें विघ्न करना सो अपने वीर्य्यांतराय के आस्रव का कारण है अर कहां तक कहिये जो जो अशुभ कार्य हैं वे सब अशुभास्रव के कारण हैं अर जितने शुभ कार्य्य हैं वे सब शुभास्रव के कारण हैं। हिंसा, मृषा, चोरी, कुशील, परिग्रह यह पांच पाप इन थकी निवृत्ति होना तो व्रत कहिये सो इन पापों का एकोदेश त्याग सो अणुव्रत अर सर्वथा त्याग सो महाव्रत कहिये।

इन व्रतों के स्थिति करण के कारण पांचों व्रतों की पच्चीस भावना कहे हैं प्रथम हम अहिंसा महाव्रत की पांच भावना कहे हैं वचन गुप्ति 1 मनोगुप्ति 2 अर दिवस विषे निरखि कर भोजन 3 अर ईर्या समिति 4 आदान निक्षेप समिति 5 यह पांच।।16।। अर सत्य महाव्रत की भावना पांच का त्याग 1 लोभ का त्याग 2 भय का त्याग 3 हास्य का त्याग 4 अर बिना विचारे वचन का त्याग 5 यह पांच अर अचौर्यव्रत की भावना पांच पराया सूना घर 1 अर तजा घर 2 अर जहां किसी का तालुक होय तहां साधु प्रवेश न करे 3 अर अशुद्ध भिक्षा न लेवे 4 अर किसी से संवाद न करे यह पांच अर चौथा ब्रह्मचर्य्य उसकी भावना पांच कहे हैं स्त्री के राग की कथा न करनी न सुननी 1 अर स्त्री का मनोहर अंग निरखना नहीं 2 अर गरिष्ट भोजन न करना 3 अर शरीर का अंजन मंजन न करना 4 अर पूर्वले भोगों का स्मरण न करना 5 यह पांच ब्रह्चर्य्य की भावना अर पांचमां परिग्रह का त्याग नामा महाव्रत उसकी भावना पांच जानो जो पांचों इन्द्रियों के इष्ट अनिष्ट विषय तिन विषे रागद्वेष न करना।।20।। यह पांच महाव्रत की पच्चीस भावना कही अर हिंसादिक पाप तिनमें सर्वथा दोष ही है इन पापों से इस भव विषें अथवा परभव विषें जीव का अकल्याण ही है। व्रतों के दृढ़ करने के अर्थ बुद्धिमानों को यह भावना निरन्तर भावनी।।21।।

फिर जे विवेकी हैं तिनको सदा यह विचारना जो यह हिंसादि पाप सदा असाता वेदनीय कर्म के कारण हैं इसलिये दुःख ही हैं। इन समान संसार में दुःख का कारण अर दोष नाहीं अर सब जीवों से मित्रता अर गुणवंतों विषें प्रमोद अर दुःखी जीव की दया अर दुष्टों में मध्यस्थता यह चार भावना धर्म

ध्यान का मूल हैं सो विवेकियों को सदा भावनी अर जे संसार के भ्रमण से सदा भयभीत हैं तिनको संवेग अर वैराग्य के अर्थ जगत का स्वभाव अर काय का स्वभाव भावने योग्य है काय का स्वभाव तो अशुचि अर जगत का स्वभाव अथिर अर यह भावना भव्य जीव निरन्तर करें पांच इन्द्री तीन बल आयु अर श्वासोश्वास यह प्राणियों के दश प्राण तिनका प्रमादी होय कर निपात करना सो हिंसा कहिये प्रमादी जीव के परप्राणियों का पीडन सो अधर्म है अनर्थ है अर जे सावधान हैं पंच समिति के पालक हैं तिनके हिंसा के अभाव से बन्ध का अभाव है।।26।। अर जो अविवेकी प्रमादी परप्राण को हरे हैं सो आप कर आपको हने हैं जो परप्राणियों का घात किया चाहे हैं सो पहली अशुद्ध भाव के योग से आपको आप हणे हैं पर का घात तो उसके आयु के अन्त से होय है अर अपने भाव इसने हणे इसलिये आत्मघाती तो निचय भया।।27।।

हिंसा समान पाप नहीं अर दया समान धर्म नहीं अर सत्य होहु अथवा असत्य होहु जिसमें पर प्राणी की पीड़ा है सो असत्य है जो वचन जीवों के हित का कर्त्ता है सोही सत्य है।।28।। अर पराई वस्तु बिना दई ग्रहण करना सो चोरी कहिये सो बिना संक्लेश परिणाम न होय इसलिये चोरी है सो हिंसा का मूल ही है।।29।। अर दया आदि गुणों की जिस विषें वृद्धि सो ब्रह्मचर्य कहिये जो ब्रह्मविषें चर्या ब्रह्मचर्य अर रति के वास्ते पुरुषों की विकार चेष्टा सो अब्रह्म।।30।। सो अब्रह्म नाम कुशील का है अर हाथी, घोड़े, गाय-बलध, यह चेतन परिग्रह हैं अर मणि मुक्ताफल सुवर्ण रजतादि यह अचेतन परिग्रह यह बाह्य परिग्रह हैं अर मिथ्यात्व रागादिक अंतरंग परिग्रह हैं तिन विषें ममत्व तजना सो परिग्रह त्याग नामा व्रत हैं। इन हिंसादिक पापों का त्याग सो व्रत कहिये उसके भेद दोय एक महाव्रत दूजा अणुव्रत सो महाव्रत तो यती का मार्ग है अर अणुव्रत श्रावक का मार्ग है सो दोनों ही व्रती तिनका मुख्य धर्म शल्य का त्याग है सो शल्यवन्त है सो व्रती नहीं निशल्यो व्रति जो निःशल्य है सोही व्रती हैं शल्य के भेद तीन माया कहिये कपट मिथ्या कहिये विपरीत श्रद्धान अर निदान कहिये भोगाभिलाष यह तीन शल्य हैं इनके गये व्रती नाम पावे है।।33।।

गृहस्थ तो घर संयुक्त है इसलिये अल्पव्रती है अर यति बनोवासी हैं सो महाव्रत का धारक है।।34।। गृहस्थ के कुछ राग भाव है अर वनोवासी के वीतरागता है अर जो यती होय कर राग भाव धारे है सो गृहस्थों से न्यून है अर जो श्रावक विरक्त चित्त है सो साधु समान है।।35।। जो श्रावक महा दयावान है जिसके त्रस हिंसा का त्याग है अर स्थावर की हिंसा प्रयोजन मात्र ही है सो पहला अणुव्रत कहिये अर जो राग से द्वेष से मोह से पर जीव को पीडा न उपजावे अर अयोग्य वचन न कहे सो सत्यव्रती नामा दूसरा सत्य अणुव्रत कहिये। अर पराया धन बढ मोला अथवा थुड मोला बिना दिया कदाचित् न ले किसी का धरा मेला विसरा गिरा पडा न ले थोड़े मोल कर भोले जीवों के पास से बढ

मोली वस्तु न ले सर्वथा प्रकार परधन का परिहार सो तीजा अचौर्य अणुव्रत कहिये अर जो सर्वथा प्रकार परदारा का त्याग अर निजदारा विषें सन्तोष सो चौथा ब्रह्मचर्य अणुव्रत कहिये।।39।।

अर सुवर्णादिक दासादिक अर ग्रह क्षेत्रादिक परिग्रह तिनका परिमाण सो पांचमा परिग्रह प्रमाण नामा अणुव्रत कहिये।।40।। अर इन पंच अणुव्रतों के धारियों के तीन गुणव्रत अर चार शिक्षाव्रत होंय हैं जो दिशा का प्रमाण प्रसिद्ध सो दिग्व्रत नामा पहला गुणव्रत कहिये जो मैं पूर्व दिशा विषे इतनी दूर जाऊंगा अर ग्रामादिक का प्रमाण जो इस गांव तक जाऊंगा सो देश विरत नामा दूजा गुणव्रत कहिये अर अनर्थ दंड का परिहार जो तीजा गुणव्रत कहिये अनर्थ दंड के भेद पांच पापोपदेश 1 अपध्यान 2 प्रमाद चर्या 3 हिंसा दान 4 अर पाप सूत्र का श्रवण 5 जो पाप कार्य का उपदेश, व्यापार का उपदेश खेती का उपदेश इत्यादि आरम्भ के उपदेश, सो पापोपदेश कहिये। जिन कार्यों में जीवों की हिंसा सोही पाप।।46।। अर दूजा अपध्यान सो कहिये जो पराई हार अर अपनी जीत विचारवो करे किसी को मारना किसी को बांधना किसी का धन हरना चाहे इसका अकाज कैसे होय ऐसा चिंतवन सो अपध्यान कहिये अर भूमि खोदना जल ढोलना अग्नि जलावना वृक्षादि छेदना इत्यादि अनर्थ कर्म करे सो प्रमादचर्या कहिये अर विष कंटिक शस्त्र अग्नि रस्सा दंड चावुक आदि बध बन्धन के उपकरण देने अथवा शस्त्रादिक का विक्रय करना हिंसक जीवों का आदर सो हिंसा प्रदान कहिये।।49।।

अर जिस कथा के श्रवण से हिंसादि पापों के अनुराग की वृद्धि होय सो कुकथा कहिये कुकथा का श्रवण अथवा कथन सो कुसूत्र श्रवण कहिये जिस कर पाप ही का बंध होय यह अनर्थ दंड के पांच भेद कहे तिनका त्याग सो तीजा गुणव्रत कहिये।।50।।

अब चार शिक्षाव्रत सुनो। सुख–दुःख शत्रु मित्रादि विषें समभाव अर सब जीवों विषें करुणा भाव अर पंच परमेष्ठियों विषें भक्ति भाव सो सामायिक कहिये अर यह चार शिक्षाव्रतों में पहला शिक्षाव्रत है प्रभात मध्याह्न सायंकाल विषे सामायिक कर्तव्य है।।51।। अर दोय अष्टमी अर दोय चतुर्दशी एक मास विषे यह चार पर्व इन विषें चारों आहार का त्याग करना अर निरारम्भी होय प्रोषधोपवास करना सो दूजा शिक्षाव्रत है। इन्द्रियों को वश कर एकान्त विषे सोलह पहर मुनि की न्याई तिष्टना सो पोसे की रीति है।।52।।

अर गंध पुष्प माला अन्न पानादि रूप भोग अर वस्त्र आभूषण स्त्री वाहनादि उपभोग तिनका अपनी शक्ति के अनुसार प्रमाण करना सो तीजा भोगोपभोग परिमाण नामा शिक्षाव्रत है।।53।। उसका यह विचार जो निषिद्ध भोग उपभोग हैं तिनका तो सर्वथा त्याग ही करना तिनका प्रमाण नहीं अर जो न्याय रूप भोगोपभोग शुद्ध अन्न पानादिक अथवा निज स्त्री सेवनादिक वस्त्राभूषणादिक इनका प्रमाण करे।।54।। इतनी वस्तु तो विवेकियों को सर्वथा तजनी – मद्य, मांस, मधु, माखन

अगालित जल बीधा अन्न रात्रि भोजन, उदंवर आदि अशुद्ध फल अर कंद मूल आदि अनन्त काय अर पेठा कोहला तरबूज वृन्ताक बेंगन बदरीफल इत्यादि जो शास्त्र वर्जित अभक्ष्य वस्तु हैं तिनका भक्षण कदापि न करना। अर द्यूतक्रीड़ा, चोरी, शिकार, वेश्यासेवन, परस्त्रीसेवन, यह महा निंद्य कर्म हैं सो कभी न करने।।55।। अर संयम की वृद्धि के वास्ते प्रवर्ते सो अतिथि कहिये उसे भक्ति कर भोजनादि देय सो अतिथि संविभाग नामा चौथा शिक्षाव्रत है।।56।।

साधु को इतनी वस्तु श्रावक देय शुद्ध भोजन देय अर भोजन ही विषें शुद्ध औषध देवे पुस्तकादि उपकरण देवे अर वन विषे साधुओं के विराजने के स्थानक बनावे जिनमें साधु आय विराजें। यह चार प्रकार संविभाग साधुओं को श्रावक करे अर आर्यकाओं को आहार, औषध, पुस्तक, वस्त्र कमंडल पीछी आदि देवे ग्राम के समीप आर्यकाओं के विराजने को स्थान करावे अर श्रावक श्राविकाओं को भक्ति कर आहार औषध उपकरण पुस्तक वस्त्राभरणादि देय रहने को स्थानक देय उनके भय निवारे धर्म स्नेह अधिक राखे। इस भांति चतुर्विध संघ की अर सम्यक् दृष्टि जीवों की सेवा करें अर जग के जीव मनुष्य पशु तिन सबही को अन्न जल तृण वस्त्र औषधादि देय जीवों के दुख निवारे सो जिनधर्म का धारी श्रावक कहिये। यह बारह व्रत श्रावक के कहे। पांच अणुव्रत तीन गुणव्रत चार शिक्षाव्रत अर अन्त समय सल्लेखणा करे कषायों का क्षीण करना सो अन्तरंग सल्लेखणा है अर काय का क्षीण करना सो बहिरंग सल्लेखणा कहिये।।57।।

जो रागादिकों की उत्पत्ति शास्त्र के मार्ग कर मेट सो सल्लेखणा कहिये रागादिक का परिहार अज्ञानी जीव न कर सके ज्ञानी ही करे।।58।। सम्यक्त्व के निःशंकितादि अष्ट अंग तिनके विरोधी शंकादि पंच अतिचार सो अज्ञानी जीवों को तजने का कहिये जिन वचन विषे संदेह अर कांक्षा कहिये भोगों की अभिलाषा अर विचिकत्सा कहिये व्रतियों के रोगादिक की बाधा देख यत्न करना सो सूग न करना, अन्य दृष्टि प्रशंसा कहिये मिथ्या परपूठ प्रशंसा करना अर संस्तव कहिये साक्षात् मिथ्यादृष्टि की स्तुति करना यह सम्यक्त्व के पांच अतिचार हैं।।59।। अर बारह व्रत अर अन्त सल्लेखना के अनुक्रम में पांच अतिचार कहे हैं सो व्रतियों को तजने। अतिचार तजे तब व्रत निर्मल होय प्रथम ही दया व्रत के अतीचार पांच, बन्ध कहिये रोकना उसे निज स्थानक न जाने देना अर बध कहिये लाठी मुक्की आदि कर ताडना अर छेदन कहिये कर्ण नासिकादिक छेदना अर अतिभारारोपण कहिये पशु अर मनुष्यों पर बहुत बोझ लादना अर अन्न पानादि निरोध कहिये किसी की आजीविका दूर करनी यह दयाव्रत के पांच अतिचार हैं।।62।।

अर झूठ का उपदेश देना अति ठग विद्या करनी धर्म का उपदेश अर से कहना स्वर्ग मोक्ष की क्रिया अर से अर कहनी सो मिथ्योपदेश नामा दूजे व्रत का पहला अतिचार है। अर दूजे व्रत का दूजा

अतिचार किसी की गुह्य वार्त्ता प्रकाशनी स्त्री पुरुषों की चेष्टा प्रकाशनी अर कूट लेख क्रिया कहिये कूटा लिखना किसी के बिना कहे उसके नाम का पत्र किसी को लिखना।।64।। अर न्यासापहार कहिये किसी ने धरोहर धनी धरी अर वह भूल गया अर लेती वेर वह थोड़ा लेने लगा उसे ज्यों का त्यों न कहना सो न्यासापहार कहिये।।65।। अर पांचमां साकार मन्त्र भेद उसका अर्थ कई एक ऐसे दुष्ट हैं जो भौंह नेत्र आदि पराई चेष्टा देख कर पराया रहस्य जान जाय अर ईर्षा कर उसका मन्त्र प्रकाश करें सो साकार मन्त्र भेद कहिये। यह दूजा सत्य नामा अणुव्रत के पांच अतिचार कहे सो विवेकियों को तजने।।67।। चोरी का प्रयोग तो पहला अतिचार अर चोरों की हारी वस्तु का ग्रहण सो दूजा अतिचार अर राजा की आज्ञा से विरुद्ध अयोग्य क्रिया का करना सो तीजा अतिचार अर बांट घाट कर दूसरे को देना अर बढ़ती बधते बांटों से पराई वस्तु लेना तोलने में घाट बाध करना सो चोरी का चौथा अतिचार है।।69।। अर रूपे में तथा सुवर्ण में और धात मिलावना तथा अर महंगी वस्तु मिलावनी सो प्रतिरूपक व्यवहार नामा पांचमां अतिचार कहिये। यह तीजे अचौर्य अणु व्रत के पांच अतिचार कहे।।70।।

अब कुशील के अतिचार कहे हैं। पराया विवाह करावना सो कुशील का प्रथम अतिचार अर कुशीली स्त्री को ग्रंथों में इत्वरिका कहिये तिनमें जिसके सिर पर स्वामी सो परग्रहीता अर जिसके स्वामी नहीं सो अपरिग्रहीता कहिये तिनके घर की ओर गमन तिनसे व्यापारादिक का सम्बन्ध रखना सो अतिचार है अर अनंग क्रीड़ा कहिये स्पर्शन मर्दन आलिंगन चुम्बनादि चेष्टा अर काम तीव्राभिनिवेस कहिये काम के तीव्र परिणाम यह परदारा का परित्याग स्वदारा का संतोष नामा चौथे अणुव्रत के पांच अतिचार कहे सो व्रतियों को तजने।।72।।

अर पांचमां परिग्रह प्रमाण नामा अणुव्रत उसके पांच अतिचार कहे है हिरण्य कहिये सुवर्ण रूप मुद्रा अर सुवर्ण कहिये सोना रूपादि आभरण अर वास्तु कहिये हबेली हाट नोहरा आदि अर क्षेत्र कहिये धरती अर धन कहिये चतुःपदादि अर धान्य कहिये अन्न अर दासी दास कहिये सेवकादि अर कुप्प कहिये वस्त्र सुगन्धादि अर भांड कहिये भाजन यह दशधा परिग्रह तिनमें दोय दोय का एक एक जोड़ा है हिरण्य अर सुवर्ण का जोड़ा वास्तु अर क्षेत्र का जोड़ा धन अर धान्य का जोड़ा दासी अर दास का जोड़ा कुप्प अर भांड का जोड़ा – यह दश जोड़े भये तिनके प्रमाण विषे व्यतिक्रम करना। यह पांच अतिचार परिग्रह प्रमाण के तजने।

अर दिग्व्रतनामा गुणव्रत के पांच अतिचार कहे हैं तिनमें ऊर्द्ध व्यतीत कहिये पर्वतादि ऊंचे क्षेत्र तिनके आरोहण विषें व्यतिक्रम कहिये उल्लंघन करना अर अध कहिये नीची भूमि उसके उतरने विषे

व्यतिक्रम करना अर तिर्यग् कहिये चार दिश चार विदिश तिनके प्रमाण विषें व्यतिक्रम करना लोभ के योग से जो प्रमाण किया है उसे भूल जाना अर क्षेत्र वृद्धि कहिये प्रमाण क्षेत्र से अधिक क्षेत्र विषे गमन करना यह पहिले दिग्व्रतनामा गुणव्रत के पांच अतिचार कहे। दूजा देशव्रत नामा गुण व्रत उसके पांच अतिचार कहे हैं। प्रेष्यप्रयोग कहिये जहां तक गमन रखा है वहां तक ही सेवक भेजे अर वस्तु पठावे आगे नहीं अर जो पठावे तो पहला अतिचार है अर दूजा आनयन कहिये प्रमाण के क्षेत्र से अगले क्षेत्र की वस्तु न मंगावे अर पुद्गल क्षेप कहिये प्रमाण के क्षेत्र सिवाय परक्षेत्र विषें कांकरी आदि बगाय कर अपना अर्थ न जनावे। अर शब्दानुपात कहिये प्रमाण के क्षेत्र से परे किसी को अपना शब्द न सुनावे परिक्षेत्र विषे हेला आवाज कर किसी को अपना रहस्य न जनावे अर रूपानुपात कहिये अपने प्रमाण के क्षेत्र विषे खड़ा रहे पर क्षेत्र विषे अपना रूप न दिखावे अपना रूप दिखाय किसी को अर्थ न जनावे जो अर्थ जतावे तो अतिचार है। यह पांच अतिचार देश व्रत के कहे।।75।।

अर अनर्थदंड के पांच अतिचार कहे हैं। कंदर्प कहिये जिस कर काम का विकार अति बढ़े सो सामग्री सेवे यह पहला अतिचार है अर कौतकुच्य कहिये मुख की वक्रता अर भौंहों की वक्रता अर नेत्रों की कटाक्ष इन कर अपना सविकार रूप दिखावे अर मौखर्य कहिये अधिक बके अर असमीक्षाधिकरण कहिये बिना देखे बिना पूजे उपकरणादिक उठावे मेले अर भोगानर्थक कहिये अनर्थक भोग तिनकी अभिलाष करे अर शक्ति नहीं अर भोग सेवे बहुत द्रव्य खर्च कर भोग सेवे यह सब भोगानर्थ के अर्थ हैं।।76।। यह पांच अतिचार तीजे गुणव्रत के तजने।

अब सामायिक के अतिचार कहे हैं। मन की दुष्टता वचन की दुष्टता काय की दुष्टता यह तीन अर सामायिक का निरादर अर पाठ विषें भूलना यह पांच अतिचार सामायिक नामा पहिले शिक्षाव्रत के तजने, अर प्रोषधोपवास के अतिचार पांच बिना देखे बिना पूजे क्षेत्र विषें शरीर का मल डारना अर बिना देखे विना पूजी वस्तु ग्रहण अर विना देखे बिना पूजे आसन विछावना अर पोसह का निरादर अर परवों का विस्मरण यह पांच अतिचार पोसह नामा दूजे शिक्षाव्रत के कहे अर सचित्त वस्तु का ग्रहण तथा अचित्त वस्तु को सचित्त का संबंध अर अचित्त विषें सचित्त का मिलावना उष्ण जल विषें शीतल का मिलावना अर अभिषव कहिये वर्ण कर रस कर गंध कर चलित वस्तु उसका भक्षण अर भोगोपभोग का अति अनुराग अति सेवना अर दुःपक्वाहार कहिये जो दुष्ट आहार दुःख सेती पचे उसका सेवन यह पांच भोगोपभोग प्रमाण नामा तीजे शिक्षाव्रत के अतिचार तजने अर जो अतिथि संविभाग नामा चौथे व्रत के पांच अतिचार कहे हैं। सचित्त कहिये पातल दौना आदि तिनमें अन्नादिक का धरना अर पातल दौना अन्न पान ढांकना अर परव्यपदेश कहिये दान का कार्य्य औरों को बताय

आप अर कार्य के वास्ते जाना अर मात्सर्य कहिये औरों का दान न देख सकना किसी दातार का यश न देख सकना अर कालातिक्रम कहिये काल उल्लंघ आहार देना यह पांच अतिचार चौथे शिक्षाव्रत के तजने। यह बारह व्रत के साठ अतिचार कहे अर पांच सम्यक्त्व के कहे।

अब सल्लेखना के पांच अतिचार कहे हैं जीवित आशंशा कहिये जीवने की अभिलाषा अर मरणाशंशा कहिये मरण की अभिलाषा अर मित्रानुराग कहिये किसी मित्र से अनुराग उस विषे मन अर सुखानुबंध कहिये इस शरीर में सुख भोगे तिनका चिंतवन अर निदान कहिये परभव के भोग की अभिलाषा यह पांच अतिचार अन्त सल्लेखना के तजने।।81।।

सम्यक्त्व आदि सल्लेखना पर्यंत सत्तर अतिचार कहे सो सब तजने योग्य हैं।।82।। अर सम्यग्ज्ञानादिक की वृद्धि कर अपना अर परजीवों का कल्याण होय है सो ज्ञानादिक की वृद्धि की अभिलाषी होय दान करे। अर स्वर्गादिक की अभिलाषा न करे अपने धन का खर्चना सो दान कहिये सो मुनिराज को तथा आर्यकाओं को अथवा श्राविका श्राविकाओं को अर अवृत सम्यक्त्व दृष्टियों को भक्ति कर विनय पूर्वक देना अर सब जीवों से दया भाव कर दान देना मुनिराज को अर आर्याओं को तथा निरारंभी श्रावकों को प्रासुक भोजन देना जो उत्कृष्ट पात्र हैं अर आर्या श्रावक श्राविका यह मध्यम पात्र हैं अर अव्रत सम्यक् दृष्टि जघन्य पात्र हैं सो त्रिविधि पात्रों को विधिपूर्वक उत्तम वस्तु आहारादिक देना उत्तम श्रावक दाता अर उत्कृष्ट पात्र मुनि अर उत्तम ही सामग्री अर उत्तम विधि से दान करे इन सबों की विशेषता होय तो उत्कृष्ट ही फल निपजे जैसे उत्तम ही भूमि होय अर उत्तम ही बीज होय अर उत्तम समय विषें विधि से समझदार मनुष्य चाहै तो उत्तम ही फल निपजे।।83।। मुनि को आहार दान देय सो प्रतिग्रहादि नवधा भक्ति कर दे प्रतिग्रह कहिये अत्र तिष्ठ तिष्ठ अन्न जल शुद्ध ऐसे शब्द कहे 1 फिर मुनि ऊँचे स्थानक खड़ा करे अर आप नीचा रहे 2 फिर पग धोवे 3 प्रणाम करे 4 अर्चा करे 5 मन शुद्धि 6 वचन शुद्धि 7 काय शुद्धि 8 आहार शुद्धि 9 यह नवधा भक्ति मुनिराज के दान समय श्रावक करे। सो उत्तम फल का कारण हैं। नवधा भक्ति ही मुनि दान की विधि है।।84।।

अर देय कहिये देवे योग्य निर्दोष पवित्र वस्तु देय। मुनि को कैसा आहार देना, जिस कर तप की वृद्धि होय अर स्वाध्याय की वृद्धि होय सो आहार देना समता का करणहारा देना अर विषमता का करणहारा न देना।।85।। अर दाता के गुण सात श्रद्धा कहिये श्रद्धा सहित देय अर शक्ति कहिये दान की शक्ति लोपे नहीं अर निर्लोभता कहिये दान के फल कर स्वर्गादिक की अभिलाषा नहीं अर दया कहिये दया भाव राखे चित्त की कोमलता सो दया अर क्षमा कहिये क्रोध का अभाव दान समय स्त्री पुत्रादिक से कषाय न करे अर अनुसूया कहिये पराई निंदा ईर्षा नहीं अर अविषाद कहिये शोक नहीं। यह सप्त गुण धारे सो उत्तम दाता मन की गती विचित्र है सो दान का करणहारा उज्ज्वल मन

होय।।86।। अर पात्र कहिये महा पुरुष मोक्ष के कारण भूत जो गुण तिनको धारे अर दाता को भव सागर से उधारे।।87।।

मुनि तो आहार ही ग्रहे अथवा आहार के समय विवेकी श्रावक मुनि को रोग जान निर्दूषण औषधि भी देय अर पुस्तकादि उपकरण देय अर वन विषें मुनियों के निवास योग्य स्थानक करावे अर किसी वस्तु का मुनियों के प्रयोजन नहीं अर आर्याओं को आहार औषध शास्त्रादि अर वस्त्रादि भी देय अर निरारंभी श्रावकों को भी यही वस्तु देय अर गृहवासी श्रावक अर श्राविकाओं को तथा अव्रत सम्यक् दृष्टियों को आहार औषध वस्त्राभूषणादि सब ही उत्तम वस्तु देय अर दुःखित भूखित जीवों को आहारादि वस्त्रादि सबही देवे। एक अभक्ष वस्तु अर बध बन्धन के उपाय शस्त्रादिक रस्सादिक चाबुकादिक किसी को कभी न देवे, अभयदान सब जीवों को देय।।87।। दान, शील, तप, व्रतादि, कर पुण्य का आस्रव होय है सो जीवों को सुख का कारण है अर हिंसादि पापों कर अशुभ का आस्रव है सो जीवों को दुःख का कारण है अर हिंसादि पापों कर नर्क का कारण भी होय है।।88।। यह आस्रव तत्त्व का व्याख्यान किया।

अब बंध का कथन करे हैं। मिथ्यादर्शन अर हिंसादि अविरत अर प्रमाद अर कषाय अर मन वचन काय के योग बन्ध के कारण हैं।।89।। सो मिथ्यादर्शन के भेद दोय – एक निसर्ग कहिये स्वतः स्वभाव अर एक अन्योपदेशतः कहिये पराये उपदेश से जो मिथ्यात कर्म के उदय जीव के तत्त्व की श्रद्धा न होय विपरीत श्रद्धा होय सो निसर्ग मिथ्या दर्शन कहिये।।90।। अर अज्ञानी जीवों के उपदेश से चार प्रकार मतभेद धारे सो अन्योपदेश नामा मिथ्यात्व कहिये। मतभेद चार – कई एक क्रिया वादी, कई एक अक्रियावादी, कई एक विनयवादी, कई एक अज्ञानवादी। यह चार वादी कहिये अर मिथ्यादर्शन पांच प्रकार कहिये है नित्य ही माने अथवा अनित्य ही माने नित्यानित्य न माने सो एकांत मिथ्याती कहिये अर विपरीत मिथ्याती अधर्म विषे धर्म माने अर विनय मिथ्याती कुगुरु, कुदेव सबों का विनय करे अर संशय मिथ्याती जिनवचन विषें संशय रखे अर अज्ञान मिथ्याती पशु समान कुछ ही न समझे। यह पांच प्रकार मिथ्या दर्शन तजे सो सम्यक् दर्शन कहिये।।92।।

अर पांच थावर छठा त्रस इनका घात अर पांच इन्द्री छठा मन इनकी चंचलता यह बारह अव्रत कहिये अर प्रमाद के अनेक भेद हैं प्रमाद नाम असावधानी का है अर कषाय के भेद पच्चीस सोलह कषाय नव ईषत् कषाय अर योग के भेद पंद्रह तिनमें मनोयोग के भेद चार अर वचन योग के भेद चार अर काय योग के भेद सात इनको विशेष जगह मिला है।।94।। मिथ्यादृष्टि के तो यह पांच बंध के कारण सब ही हैं। अर सम्यक्दृष्टि अव्रती के एक मिथ्यात नहीं अर चार हैं। श्रावक के पांच में गुण ठाणे चार ही हैं परन्तु बारह अव्रत में एक त्रस घात नहीं अर ग्यारह हैं अर छठे प्रमत्त गुणठाणे यती

के मिथ्यात अर अव्रत नहीं अर प्रमाद कषाय योग तीनों हैं।।96।। अर सातवें अप्रमत्त गुणस्थान से लेयकर दशमें सूक्ष्म सांपराय तक कषाय अर योग ही है।।97।। अर ग्यारहवां उपशांत कषाय अर बारहवां क्षीण कषाय अर तेरहवां सयोग केवली इन तीन गुण ठाणे विषे योग ही बंध का कारण है अर नहीं अर चौदहवां अयोग तहां बन्ध का अभाव है।।98।।

कषाय कर कलंकी जो आत्मा सो कर्म वर्गणा योग पुद्गल को समय समय ग्रहे है सो बंध कहिये सो बन्ध अनेक प्रकार है। उसके भेद चार - प्रकृति बंध 1 स्थिति बंध 2 अनुभाग बंध 3 प्रदेश बंध 4 यह चार प्रकार बन्ध जानो।।100।। अब इनके लक्षण कहे हैं प्रकृति कहिए स्वभाव जैसे नीम का स्वभाव कडवा है अर नींबू का खट्टा है तैसे सब कर्मों के स्वभाव न्यारे न्यारे हैं।।1।। ज्ञानावर्णी कर्म का स्वभाव अज्ञानरूप है अर दर्शनावर्णी का स्वभाव देखने योग्य पदार्थ को न देखने देय अर साता असाता वेदनीय का स्वभाव सुख दुःख का भोगना अर दर्शन मोह का स्वभाव तत्त्व की अश्रद्धा अर चारित्र मोह के स्वभाव महा असंयम।।4।। अर आयु कर्म का स्वभाव भव धारण अर नाम कर्म का स्वभाव देव-नारकादि नाना प्रकार का नाम निपजावना।।5।।

अर गोत्र कर्म का स्वभाव ऊंच नीच गोत्र में निपजावना अर अन्तराय का स्वभाव दानादिक विषें विघ्न करना जैसे इन कर्मों के स्वभाव दुर्निवार हैं तैसे इनकी स्थिति भी दुर्निवार है। बिना भोगे न छूटे जैसे अजा, गाय, भैंस आदि दूध का माधुर्यपना स्वभाव थकी अच्युत है। तैसे कर्मों की प्रकृति की स्थिति भी अच्युत है बिना भुगते न छूटे। ज्ञानावर्णी दर्शनावर्णी वेदनीय अन्तराय इन चार कर्मों की उत्कृष्ट स्थिति प्रत्येक 30 कोड़ा कोड़ी सागर अर नाम गोत्र की उत्कृष्ट बीस कोड़ा कोड़ी सागर अर आयु कर्म की उत्कृष्ट स्थिति तेतीस सागर है अर दर्शन मोह की उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोड़ा कोड़ी सागर है अर चारित्र मोह की स्थिति चालीस कोड़ा कोड़ी सागर है यह उत्कृष्ट स्थिति कही। अर जघन्य स्थिति वेदनीय कर्म की मुहूर्त बारह अर नाम गोत्र की जघन्य स्थिति मुहूर्त आठ अर अन्य सब कर्मों की जघन्य स्थिति मुहूर्त एक। यह जघन्य स्थिति की रूप कही अर जघन्य स्थिति से एक समय अधिक लेकर उत्कृष्ट स्थिति से एक समय न्यून पर्यंत मध्य स्थिति के नाना भेद जानने।।8।।

यह स्थिति बन्ध का स्वरूप कहा अर जैसे अजा के दुग्ध में मिष्टता अर सचिक्कणता मन्द है इसलिये अधिक मिष्टता अर सचिक्कणता गाय के दुग्ध विषें सो मध्य के भेद को धरे है। अर गाय के दूध से विशेष भैंस के दुग्ध विषें है सो भैंस का दूध मिष्टता अर सचिक्कणता की तीव्रता को धरे है यह दूध विषें रस का विशेष कहा तैसे पुद्गल कर्म की सामर्थ्यता के विशेष का विपाक सो अनुभाग बन्ध कहिये।।9।। तिनमें शुभ का अनुभाग चार प्रकार है। गुड खांड मिश्री अमृत इन चारों की मिष्टता

बढ़ती चढ़ती है जैसे शुभ का सुख भी चढ़ता चढ़ता अर उतरता उतरता है अर अशुभ का अनुभाग भी चार प्रकार है। जैसे नीम कांजी अर विष अर हलाहल इन चारों की कटुता चढ़ती चढ़ती है ऐसे अशुभ का दुःख चढ़ता चढ़ता अर उतरता उतरता है।।10।। यह अनुभाग बन्ध का स्वरूप कहा। अर जो यह अनुभाग बन्ध का स्वरूप कहा अर जो पुद्गल परमाणुओं के समूह कर्म वर्गणा रूप परणाये तिस सहित आत्माओं के प्रदेश का संस्लेश सो प्रदेश का बन्ध कहिये।।11।। प्रदेश सहित जो कर्म प्रकृति उसका जीव के प्रदेशों को मिलाये सो प्रदेश बन्ध अर प्रकृति बन्ध इन दोनों बन्धन के कारण तो मन वचन काय के योग हैं अर स्थिति बन्ध अर अनुभाग बन्ध यह दोय प्रकार बन्ध कषायों के निमित्त से होय है।।12।।

यह बन्ध का स्वरूप कहा। आगे आठों कर्मों के कार्य कहिए हैं जिस कर ज्ञान आवरा जाय अथवा जो ज्ञान को आवरे सो ज्ञानावर्णी का कार्य्य है अर जो दर्शन को आवरे अथवा जिस कर दर्शन आवरा जाय सो दर्शनावर्णी कहिये।।13।। अर जिस कर देह सम्बन्धी सुख दुःख भोगवे अथवा जो वेदनी कर्म कहिये अर जो जीवों को मोहे अथवा जिस कर जीव मोहे जाय सो मोहनीय कर्म कहिये।।14।। अर जिस कर नारकादि भावों को धरे सो आयु कर्म कहिये अर जिस कर यह जीव अनेक नाम धारे अथवा जो नाम धरावे सो नाम कर्म कहिये अर जो ऊंच नीच गोत्र में धरे अथवा जिसके उदय कर गोत्र धारिये सो गोत्र कर्म कहिये अर जो दानादिक के मध्य अन्तर पाडे जिसके उदय कर दान न देय सके अर लाभ होय न सके सो अन्तराय कर्म कहिये।।15।।

आत्मा का एक अशुद्ध परिणाम उस कर ग्रहे जो पुद्गल के स्कंध सो नाना प्रकार कर्म रूप होय परणमें हैं जैसे एक प्रकार भोगिये अन्न सात धातु रूप होय परणवे है मूल प्रकृति तो अष्ट प्रकार हैं अर उत्तर प्रकृतियों का भेद कहिये हैं ज्ञानावर्ण की प्रकृति पांच दर्शनावर्ण की प्रकृति नव, वेदनीय कर्म की प्रकृति दोय, मोहनी की अठाईस आयु की चार अर नाम की बयालीस तिनमें चौदह पिंड प्रकृति तिनके भेद पैंसठ अर अठाईस अपिंड प्रकृति यह अर सब मिल ब्यालीस तिनकी तिराणवें भई अर गोत्र कर्म की दोय अंतराय की पांच यह सब मिली एक से अड़तालीस भई।।19।।

अब इनके नाम निरूपण करे हैं – मतिज्ञानावर्णी 1, श्रुतज्ञानावर्णी 2 अवधिज्ञानावर्णी 3 मनःपर्ययज्ञानावर्णी 4 केवलज्ञानावर्णी 5 यह पांच प्रकृति ज्ञानावर्णी की हैं।।20।। द्रव्यार्थिक नय के कथन से मनपर्ययज्ञान अर केवलज्ञान शक्तिरूप अभव्य विषें भी हैं व्यक्त रूप नहीं ज्ञानावर्णी पांच प्रकृति का उदय अभव्य विषें भी है अर मनःपर्यय केवली की प्रगटता भव्य ही विषें हैं उस ही से भव्य कहिये है अर केवलज्ञान की व्यक्ति को योग्य नहीं सोही अभव्य।।22।।

अर चक्षु दर्शनावर्णी अचक्षु दर्शनावर्णी अवधि दर्शनावर्णी केवल दर्शनावर्णी चार तो यह अर निद्रानिद्रा निद्रा प्रचला प्रचलाप्रचला स्त्यानगृद्धि यह नव प्रकृति दर्शनावर्णी की हैं तिनमें पांच निद्रा का निर्णय करे हैं निद्रा कहिये अल्प निद्रा किंचित शयन अर ऊपरी ऊपरी निद्रा सो निद्रानिद्रा कहिये।।24।। अर खेद कर उपजी सो प्रचला आत्मा को अत्यर्थपने चलायमान करे अर पुनः पुनः निद्रा का आवरण सो प्रचला प्रचला कहिये।।25।। अर स्त्यानगृद्धि कहिये स्वप्न ता विषें जाकर अतिगृद्ध होय अर जिसके उदय से आत्मा अति रौद्र कर्म बहुत करे सो स्त्यान गृद्धि कहिये है। यह नव प्रकृति दर्शनावर्णी की कही अर वेदनी की प्रकृति दोय – एक साता एक असाता। जिसके उदय से तन का अर मन का सुख होय सो साता अर जिसके उदय से तन मन का दुःख होय सो असाता यह दोय वेदनी की प्रकृति कही।।27।। अर मोहनी की अठाईस तिनमें दर्शन मोहनी की तीन मिथ्यात, मिश्रमिथ्यात, अर सम्यक्त्वप्रकृतिमिथ्यात्व तिनके लक्षण सुनो।

जहां अतत्त्व की श्रद्धा महा मूढ़ता धर्म अधर्म की परख नहीं सो मिथ्यात्व कहिये अर जो आत्मा का सम्यक्त्व अर मिथ्यात्व मिश्र धारा रूप शुद्धाशुद्ध भाव अर तत्त्वातत्त्व की मिश्र श्रद्धा सो मिश्र मिथ्यात्व कहिये सो यह मिश्र मिथ्यात्व तीजे गुणठाणे ही होय पर पहिला मिथ्यात्व पहले गुणठाणे ही होय सो तो केवल अशुद्ध भाव ही है अर दूजा मिथ्यात्व की मिश्रधारा शिखरणी के रस समान खट्टा मीठा दोनों स्वाद लिये हैं। जैसे माचणे कोद्रव विषे मद शक्ति होय तैसे इस विषे मिथ्यात्व शक्ति है अर तीजा सम्यक्त्व प्रकृति मिथ्यात्व सो सम्यक्त्व ही है। सम्यक्त्व के तीन भेद तिनमें यह वेदक सम्यक्त्व का स्वरूप है मोह की छह प्रकृति तो इसमें उपशमी हैं अर सातमीं प्रकृति का उदय है आत्मा के शुद्ध परिणाम उस कर रोके हैं अशुद्ध भाव जाने अर आत्म रस विषे तिष्टा है परन्तु सातवीं प्रकृति के उदय कर कुछ चपलता है कुछ मलिनता है कुछ शिथिलता है यह तीजे मिथ्यात्व का लक्षण है तीर्थंकरों में तथा तीर्थों में तथा देव स्थल में तथा शास्त्र में कुछ एक न्यूनाधिक जाने यह इसका लक्षण है। यह तीन प्रकृति दर्शन मोह की, अर चारित्र मोह की प्रकृति पच्चीस, चारित्र मोह के भेद दोय एक नोकषाय वेदनीय एक कषाय वेदनीय तिनमें नोकषाय वेदनी की प्रकृति नव अर कषाय वेदनीय की प्रकृति सोलह।।31।।

जिसके उदय से हास्य की प्रगटता होय सो हास्य प्रकृति कहिये अर जिसके उदय रति उपजे सो रति अर जिसके उदय अरति उपजे सो अरति।।32।। अर जिसके उदय सोच उपजे सो शोक अर जिसके उदय उद्वेग उपजे सो भय जिसके उदय अपने दोष छिपावे अर पराये गुण छिपावे सो जुगुप्सा यह षट् हास्यादि नोकषाय निन्द्य हैं।।33।। अर जिसके उदय स्त्रियों के से कायर चंचल कुटिल भाव

होय तो स्त्रीवेद कहिये सो महा निंद्य है। अर जिसके उदय निष्कपटता निश्चलता शूरवीरता उदारता ऐसे भाव होय सो पुरुष वेद कहिये। अर जिसके उदय महा मलीन महा आतुर भाव होय सो नपुंसक वेद कहिये यह तीन वेद कहिये नोकषाय वेदनी की नव प्रकृति कही।

अब कषाय वेदनी कहे हैं।।34।। क्रोध, मान, माया, लोभ यह चार कषाय तिनमें जो सम्यक्त्व को अर व्रत को घाते सो अनंतानुबंधी की चौकड़ी कहिये जिसका क्रोध पाहण रेखा समान अर मान पाषाण के थंभ समान अर माया बांस की जड़ समान लोभ लाख के रंग समान यह पहली चौकड़ी कही।।36।। इसके उदय न सम्यक्त्व न व्रत। अर दूजी चौकड़ी अप्रत्याख्यान जिसके उदय व्रत न धर सके उसके लक्षण हल के लीक समान क्रोध अर अस्थि के स्थंभ समान मान अर मीढा के सींग समान माया अर मजीठ के रंग समान लोभ यह दूजी चौकड़ी अव्रत रूप उसके लक्षण कहे।।37।। अर तीजी चौकड़ी प्रत्याख्यान जिसके उदय जीव श्रावक के व्रत तो ग्रहे परन्तु यति के व्रत न धार सके। उसके लक्षण गाडी की लीक समान क्रोध अर काष्ट के थम्भ समान मान अर गो मूत्र समान वक्र माया अर कसूम्भे के रंग समान लोभ अर चौथी चौकड़ी संज्वलन जिसके उदय मुनि के व्रत तो धरे अर यथाख्यात चारित्र न होय।।39।।

उसके लक्षण जलरेखा समान क्रोध वैत की लता समान मान अर सुरह गाय के केसों की वक्रता समान माया अर हरिद्रा के रंग समान लोभ यह चार चौकड़ी का स्वरूप कहा। चार चौकड़ी की सोलह कषाय कहिये तिनमें अनंतानुबंधी का फल नर्क गति अर अप्रत्याख्यान का फल तिर्यंच गति अर प्रत्याख्यान का फल मनुष्य गति। अर संज्वलन फल देव गति। यह इनके फल हैं यह मोहनी कर्म की अठाईस प्रकृति कही अर आयु की प्रकृति चार नरकायु, तिर्यंचायु, मनुष्यायु, देवायु अर नाम कर्म की प्रकृति तिराणवें तिनके नाम कहे हैं जिसके उदय जीव भवान्तर को गमन करे सो गति उसके देव नारकादि चार भेद हैं जिसके उदय कर नरक तिर्यंच देव अर मनुष्य गति में जीव जाय सो चार गति कहिये अर सामान्यपने जाति नामा प्रकृति भेद पांच एकेंद्री जाति वेंद्री जाति तेंद्री जाति चौइन्द्रिय जाति पंचेंद्रिय जाति जिसके उदय एकेंद्रियादि जन्म होय सो जाति कहिये अर जिसके उदय औदारिक वैक्रियक आहारक तैजस कार्माण यह पांच शरीर नामा प्रकृति कहिये।।45।।

अर इन पांच शरीर में तैजस कार्माण के आंगोपांग नहीं तीन ही शरीर के आंगोपांग हैं औदारिक आंगोपांग वैक्रियक आंगोपांग, आहारक आंगोपांग प्रकृति के भेद कहे अर जिसके उदय नेत्र आदि इन्द्रियों के स्थानक होय सो निर्माण नामा नाम कर्म की प्रकृति कहिये।।47।। अर कर्म के उदय वेवस ते ग्रहे जे पुद्गल तिनका परस्पर शरीर विषें बन्धन सो बन्धन नामा प्रकृति कहिये उसके भेद पांच जे

शरीरों के नाम सो ही बंधन के नाम जानो अर जिसके उदय शरीरों विषें परमाणुओं का परस्पर छिद्र रहिते मिलाप होय सो संघात नामा प्रकृति कहिये उसके वही पांच भेद जानो जो शरीरों के कहे।।49।। अर जिस प्रकृति के उदय प्राणियों के शरीर के आकार की रचना होय सो संस्थान नामा प्रकृति कहिये उसके छह सम चतुरस्र संस्थान 1 न्यग्रोध परिमण्डल संस्थान 2 स्वाति संस्थान 3 कुब्जक संस्थान 4 वामन संस्थान 5 हुंडक संस्थान 6।।51।।

अर जिस प्रकृति के उदय हाड़ों के संधान सुश्लिष्ट होय सो संहनन नामा प्रकृति कहिये उसके भेद छह वज्र वृषभनाराच 1 वज्र नाराच 2, नाराच 3 अर्द्ध नाराच 4 कीलक 5 असंप्राप्ता स्फटिक छह संहनन कहे।।53।। अर जिस प्रकृति के उदय स्पर्श होय सो स्पर्श नाम प्रकृति उसके भेद आठ – कर्कश 1 कोमल 2, गुरु 3, लघु 4, स्निग्ध 5, रूक्ष 6, शीत 7, उष्ण 8।।55।। अर जिसके उदय रस होय सो रस नाम प्रकृति उसके भेद पांच कटु 1 तिक्त 2 कषाय 3 आम्ल 4 मधुर 5 अर जिसके उदय गंध होय सो गंध नामा प्रकृति उसके भेद दोय एक सुगंध, एक दुर्गन्ध।।57।। अर जिसके उदय वर्ण भेद होय सो वर्ण प्रकृति उसके भेद पांच – कृष्ण 1, श्वेत 2, हरित 3, रक्त 4, पीत 5।।58।।

अर जिसके उदय पहले शरीर का क्षय होय अर नवे शरीर में गमन करे सो आनुपूर्वी कहिये उसके भेद चार जो गतियों के भेद सो ही आनुपूर्वी के भेद जानो।।59।। अर जिसके उदय न तो गुरु उसके योग से नीचा डूबे न लघुता के योग से अर्क के तुल्य की न्याई ऊंचा उच्छले सो अगुरुलघु नामा प्रकृति कहिये।।60।। अर जिस प्रकृति के उदय आप थकी आपका घात होय सो उपघात होय सो उपघात प्रकृति कहिये अर जिसके उदय पर थकी आपका घात होय पर घात प्रकति कहिये।।61।। अर जिस प्रकृति के उदय सूर्य की न्याई आताप का उदय होय सो आताप नामा प्रकृति कहिये अर जिस प्रकृति के उदय चन्द्रमा अथवा आगिया की न्याई उद्योत होय सो उद्योत नामा प्रकृति कहिये अर जिसके उदय श्वासोश्वास निपजे सो उस्वास नामा प्रकृति कहिये।।64।। अर आकाश विषें गमन सो विहाय नामा प्रकृति कहिये उसके भेद दोय एक शुभ विहाय एक अशुभ विहाय।।65।।

अर जिस प्रकृति के उदय एक शरीर विषें एक ही जीव पावे सो प्रत्येक शरीर कहिये देवों का शरीर नारकियों का शरीर, अर पृथिवी, अप, तेज, वायु इन चार थावरों का शरीर अर केवली का शरीर अर मुनि का आहारक शरीर यह तो प्रत्येक शरीर हैं इनमें निगोद नहीं अर विकलत्रय अर पंचेन्द्रिय तिर्यन्च अर मनुष्य इनका शरीर निगोद सहित ही है अर वनस्पति काय में जे प्रत्येक हैं सो तो निगोद रहित हैं अर जो साधारण है सो निगोद सहित हैं अनंत काय निगोद सो साधारण कहिये जो प्रकृति के उदय साधारण शरीर धरे सो साधारण प्रकृति कहिये।।66।। अर जिस विषें प्रकृति के उदय जीव का वेइन्द्रियादि विषें जन्म होय सो त्रस प्रकृति कहिये अर जिसके उदय पंच थावर विषें

उपजे सो थावर नामा प्रकृति कहिये अर जो प्रकृति के प्राणी सबको प्यारा लगे सो शुभ नामा प्रकृति कहिये अर जिस प्रकृति के उदय प्राणी सबों को अभावना लगे सो दुर्भग नामा प्रकृति कहिये।।68।। अर जिस प्रकृति के उदय मनोज्ञ सुर की उत्पत्ति होय सो सुस्वर नामा प्रकृति कहिये। अर जिसके उदय अनिष्ट स्वर मुख से निकसे सो दुःस्वर नामा प्रकृति कहिये अर जिस थकी रमणीक होय सो शुभ नामा प्रकृति कहिये अर जिसके उदय अति विरूप है सो अशुभ नामा असुन्दर प्रकृति कहिये।।70।।

अर जिसके उदय सूक्ष्म शरीर धारे सो सूक्ष्म नामा प्रकृति कहिये अर जिसके उदय बादर शरीर धारे सो बादर नामा प्रकृति कहिये अर जिस प्रकृति के उदय आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोश्वास, भाषा, मन, यह छह पर्याप्ति होय सो पर्याप्त नामा शरीर कहिये अर जिसके उदय पर्याप्त पूरे न कर सके अर अपर्याप्त समय ही मरण होय सो अपर्याप्त नामा प्रकृति कहिये अर जिसके उदय स्थिर होय सो स्थिर नामा प्रकृति कहिये अर जिसके उदय अथिर भाव होय सो अथिर नामा प्रकृति कहिये। अर जिसके उदय आदर होय सो आदेय नामा प्रकृति कहिये अर जिसके उदय अनादर होय सो अनादेय नामा प्रकृति कहिये।।74।। अर जिसके उदर कर पवित्र गुण प्रसिद्ध होय सो यशस्कीर्ति नामा प्रकृति कहिये अर जिसके उदय निंदा होय सो अपयशस्कीर्ति नामा प्रकृति कहिये।।75।। अर जिसके उदय तीर्थंकर पद पावे सो तीर्थंकर नामा प्रकृति कहिये।।76।। यह नाम कर्म की तिराणवें प्रकृति कही।

अर गोत्र कर्म की प्रकृति दोय एक उच्च गोत्र एक नीच गोत्र जिसके उदय उत्तम कुल विषें जन्म होय सो उच्च गोत्र अर जिसके उदय नीच कुल विषें जन्म होय सो नीच गोत्र कहिये।।77।।

अर अन्तराय की प्रकृति पांच जिस प्रकृति के उदय दान की शक्ति होते दान न कर सके सो दानान्तराय। अर जिस प्रकृति के उदय अनेक यत्न किये भी लाभ न होय सो लाभांतराय।।78।। अर जिसके उदय धन होते भी भोग न कर सके सो भोगांतराय अर जिस प्रकृति के उदय उपभोग कहिये वस्त्राभरण स्त्री आदि तिनका अन्तराय विभूति के होते भी उपभोग न होय सके सो उपभोगांतराय नामा प्रकृति कहिये।।79।। अर जिस प्रकृति के उदय उछाह न कर सके संपति होते भी जिसके उछाह नहीं। अर खाते पीते भी शरीर के विषें वीर्य्य नहीं सो वीर्य्यान्तराय नामा प्रकृति कहिये। यह आठ कर्म की एक सौ अड़तालीस प्रकृति कही।।80।।

अर स्थिति बन्ध का भेद जघन्य मध्य उत्कृष्ट आठ ही कर्मों का ऊपर कह आये सो जान लेना कर्मों की उत्कृष्ट स्थिति का बंध पंच इन्द्रिय सैनी पर्याप्त ही के होय है।।83।। अर कषायों की तीव्रता मन्दता मध्यता के विशेष थकी कर्मों का भोग होय है। यह कषाय हैं सो भावास्रव अर भावबन्ध जानने जैसे कषाय भाव होय सो तैसे ही कर्मों की स्थिति बन्धे तैसा ही उदय विषें अनुभाग होय पुण्य प्रकृति का उदय शुभ का रूप आवे तब सब सामग्री शुभ ही मिले तिनके संयोग विषें हर्ष ही निपजे

अर अशुभ प्रकृति का उदय महा निकृष्ट है ताके अनुभव विषें विषाद ही होय अशुभ भावों कर अशुभकर्म बन्धे है तिनका फल क्लेश रूप ही है अर शुभ के उदय से शुभ ही सामग्री मिले शुभ क्षेत्र विषे ही जन्म होय अर शुभ समय ही रहे अर शुभ जन्म ही धरे अर शुभ ही भाव होय।।88।।

अर अशुभ के उदय सब खोटी सामग्री ही मिले अर नरकादि अशुभ क्षेत्र विषें ही उपजे अर सदा अशुभ समय में ही वर्ते अर अशुभ जन्म ही उपजे अर अशुभ भाव ही होय यह द्रव्यक्षेत्र काल, भव, भाव शुभ के अर अशुभ के सुन्दर अर असुन्दर जानने अर प्रदेश बंध का निर्णय ऊपर कर आये आत्मा के असंख्यात प्रदेश सो एक एक प्रदेश पर पुद्गल के अनन्त अनन्त प्रदेश एक क्षेत्रावगाही होय सो प्रदेश बन्ध कहिये।।95।। शुभ आयु, शुभ नाम, अर शुभ गोत्र, अर सातावेदनीय यह चार प्रकार शुभ का बन्ध है अर इससे उलटा सो पाप का बन्ध।।96।। यह बन्ध का कथन पूर्ण भया अर आस्रव का निरोध संवर जहां नये कर्म न आय सके सो संवर उसके भेद दोय एक द्रव्य संवर एक भाव संवर संसार के कारण जे रागादिक तिनकी निवृति सो भाव संवर कहिये। अर जो द्रव्य कर्म का निरोध सो द्रव्य संवर कहिये। तीन गुप्ति पांच समिति, दश लक्षण धर्म, बारह अनुप्रेक्षा, पंच चारित्र, बाईस परिषह का जीतना यह संवर के सतावन भेद कहे अर तप कर पूर्वोपार्जित कर्म की निवृत्ति करना सो निर्जरा उसके भेद दोय एक विपाक निर्जरा एक अविपाक निर्जरा सो कर्म अपना रस देकर खिर जाय फिर नया अर बांधे सो विपाक निर्जरा कहिये यह तो सब ही संसारी जीवों के हैं जो कर्म बन्धे हैं सो फल देकर खिरे ही हैं अर जो विवेकियों के तप कर संवर पूर्वक निर्जरा होय नवा न बन्धे अर पुराने झड़ें सो अविपाक निर्जरा मोक्ष का मूल कहिये।

भावार्थ – जो कर्म उदय आय झड़े जैसे आम्रफल पक कर डाल से गिरे इसमें कुछ उपाय नहीं अर जैसे आम्रफल कच्चा पाल में देकर पकावे। तैसे न उदय आया कर्म उदीर कर उदय में लाय तप कर खपाइये सो अविपाक निर्जरा कहिये। यह अविपाक निर्जरा सम्यग्दृष्टि ही के होय यह निर्जरा का व्याख्यान किया अर बन्ध के कारण मिथ्यात अव्रतादिक तिनके अभाव से अर निर्जरा के योग से समस्त कर्म का नाश होय सो मोक्ष कहिये वह मोक्ष निर्ग्रंथ रूप के धारक महा मुनि तिन ही के होय है अर के न होय है।।21।। इन जीवादि सप्त तत्त्वों का श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन अर इनका ज्ञान सो सम्यग्ज्ञान अर श्रद्धान ज्ञान को पायकर अशुभ की निर्वृत्ति सो चारित्र यह तीन रत्न मोक्ष के साधन हैं जिनके रत्नत्रय अभेदरूप है अर शुद्धोपयोग की मुख्यता है, वे तो वाही भव निर्वाण को प्राप्त होय हैं अर जिनके भेद रूप व्यवहार रत्नत्रय है अर शुभोपयोग की मुख्यता है वे सात भव देवों के अर आठ भव मनुष्यों के धर सुर नर के सुख भोग सिद्धपद को प्राप्त होय हैं।

भावार्थ – जिनके उत्कृष्ट आराधना है वे तो तद्भव ही मोक्ष होय हैं अर जिन मध्य आराधना

होय ते तीन भव में मोक्ष होय अर जिनके जघन्य आराधना होय ते पंद्रह भव में पार होवे हैं जे निकट भव्य हैं जिनके आत्मध्यान कर सिद्ध पद की सिद्धी होय है।।3।। ऐसी जिनेंद्र भगवान की भाषा निःसंदेह मोक्ष का मार्ग ताको सुनकर बारह सभा के भव्य जीव भगवान् को हाथ जोड़ नमस्कार करते भये।।4।। कई एक देव मनुष्य तिर्यंच सम्यक्त्व धारते भए अर कईएक नर तिर्यंच श्रावक के व्रत धारते भये। अर कई एक मनुष्य मुनिव्रत धारते भए जे संसार के भ्रमण से भयभीत हैं ते वीतराग का मार्ग आराधते भये।।5।। यह धर्मोपदेश सुन दो हजार राजा मुनि भए अर राजकन्या हजारों आर्य्यका भईं अर बलभद्र की माता रोहिणी अर कृष्ण की माता देवकी अर रुक्मणी आदि कृष्ण की अनेक राणी श्राविका के व्रत धारती भईं।।7।। अर अनेक यदुवंशी अर भोजवंशी राजा जिनमार्ग के वेत्ता श्रावक के बारह व्रत धारते भये।।8।।

भावार्थ – कईएक मुनि भये कईएक आर्य्यिका भईं। अर कईएक श्रावक भये कईएक श्राविका भईं।।9।। इस भांति धर्म श्रवण कर जिनेश्वर को प्रणाम कर देवों सहित इन्द्र अपने अपने स्थानक गये अर बलभद्र नारायण आदि सब यादव अपने अपने स्थानक गये अर जिनेश्वर के चरणारविंद की भक्ति सो शरद ऋतु की न्याईं लोक को उज्ज्वल करती भई जैसे शरद ऋतु सब दिशाओं को उज्ज्वल करे तैसे भगवंत की भक्ति सब लोक को उज्ज्वल करती भई। शरद ऋतु विषें नभोमंडल मनोज्ञ भासे है अर भक्ति विषें ध्यान रूप नभोमण्डल रमणीक भासे है अर वह शरद ऋतु विषें उज्ज्वल मेघ पटल कर नभोमंडल धोया जाय है अर भक्ति विषें भावरूप अम्बर उज्ज्वल भया है अर शरद ऋतु विषें ग्रह अर तारे आकाश में प्रगट भासे हैं अर भक्ति विषें जीवों में अनेक शुभ लक्षण प्रगट भासे हैं शरद ऋतु विषें ग्रह तारे ऐसे सोहे हैं मानो आकाश फूल रहा है अर भक्ति विषें भी शुभ भाव फूले हैं अर शरद ऋतु विषें बंधूक कहिये मिझन्या फूले हैं। सप्त वर्ण जाति के वृक्ष अर भक्ति विषे भगवान के भक्त फूले हैं अर शरद ऋतु विषें भी वृक्षों से फूल झड़े हैं अर भक्ति विषे भगवान के भक्त भी पुष्पांजली क्षेपे हैं। शरद ऋतु उज्ज्वल अर भक्ति भी उज्ज्वल इसलिये शरद का दृष्टांत दिया।

गणधर देव कहे हैं – हे श्रेणिक! भगवान नेमिनाथ के दर्शन जैसे तीन लोक के प्रकट भक्त पुष्पांजलि चढ़ावते आवें तैसे शरद ऋतु भी पुष्पांजली बखेरती सब दिशाओं को उज्ज्वल करती आई अर आकाश मंडल को उज्ज्वल मेघ पटल करती भई प्रगट भये हैं ग्रह अर ताराओं कर नभोमंडल फूला-सा दीखे है अर मिझन्या तथा सप्त पर्ण आदि वृक्षों के नवीन पुष्प निकसती आई ऐसी शरद ऋतु विषे जिनेश्वर का विहार का उद्यम भया।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ श्रीनेमिनाथधर्मोपदेशवर्णनो नाम सप्तपंचाशः सर्गः।।57।।

अट्ठावनवाँ सर्ग

अथानन्तर – भगवान विहार को सन्मुख गिरनार के शिखर से उतरेंगे जैसे अहमिन्द्र लोक से जगत् के उद्धार के अर्थ मध्य लोक में पधारे तैसे जगत् को भवोदधि से उधारने के अर्थ गिरनार के नीचे उतरेंगे जब भगवान विहार को सन्मुख भये तब कुवेर यह घोषणा करता भया जिसकी जो इच्छा होय सो लेवो अर भगवान के विहार विषें पृथिवी मणि रूप होती भई अर मनोवांछित दान ठौर ठौर बटे अर ठौर ठौर मंगलाचार होते भये। अर पृथिवी सब ऋतु के फल फूलों कर मंडित भई भगवान के विहार की महिमा कहा कहनी। जब भगवान जीवों के हित को उद्यमी भये तब पृथिवी आनन्द रूप हो गई।।4।। जैसे वर्षा विषें जल की धारा वर्षे तैसे आकाश से रत्न धारा वसुधा विषें बरसती भई।।5।। प्रभु के सन्मुख प्रणाम करते देव चले जाय हैं नम्रीभूत है मुकुट जिनके तिनकी कांति कर व्याप रही हैं दशों दिशा वे सब ही देव भगवान की प्रभा के अनुरागी हैं अर स्वर्णमई कमल हजार हजार पात्र के पावों के तले क्षेपे हैं सो मानो वे कमल पृथ्वी के आभूषण ही हैं।।7।।

अर नाना प्रकार के रत्नों की विचित्रता कर पृथ्वी रत्न मई होय रही है इन्द्र अर इन्द्राणी तेई भये तिन कर सेवित प्रभु के चरण कमल तिन पर सुर असुर अर नर भंवर भये गुंजार करे हैं अर भक्ति रूप मकरन्द का पान करे हैं जब भगवान विहार करे हैं तब पृथ्वी विषें वसु जाति के देव आगे आगे इन्द्र की आज्ञा कर चले जाय हैं।।11।। अर ऐसे वचन उच्चारते जाय हैं – हे प्रभु! तुम जयवंत होवो, हम पर कृपा करो, लोक के हित करने का यह समय है तुम लोक के हित विषें उद्यमी हो। हे ईश! तुमको सुर असुर नर आय कर प्रणाम करे हैं तुम समस्त विधि के वेत्ता हो।।12।। भगवान विश्व के कल्याण के अर्थि विहार करें धर्म चक्र आगे चला जाय पृथ्वी विषे संपदा विस्तरे तीन लोक के जीव हर्षित होवें।।14।। अर विहार के वादित्रों की ध्वनि ऐसी होय है जैसी मेह की ध्वनि होय। ध्वनि में यह शब्द होय है भव्यों को आनन्द बढ़ो।।15।। बीन, बांसुरी, मृदंग, झालर, शंख, कोहल इत्यादि अनेक वादित्र वाजे हैं मंगल शब्द होय रहे हैं जैसे समुद्र गाजे तैसे शब्द होय है भव्यों के प्रयाण के महा शब्द तिनकर धरती आकाश शब्दायमान होय रहे हैं कई एक गीत गावे हैं। कई एक भगवत कथा करे हैं कई एक आनंद रूप हास्य करे हैं कई एक गरजे हैं कई एक नाना प्रकार राग करे हैं अर किन्नरी देवी नृत्य करे हैं अर स्वर्ग लोक की अप्सरा नृत्य करे हैं अर गंधर्व जाति के देव वादित्र बजावे हैं।।18।।

अर कई एक मंगल स्तोत्रों कर स्तुति करे हैं अर कई एक जय जय शब्द करे हैं जहां जहां प्रभु पांव धरे हैं तहां तहां अति मंगलाचार हो रहे हैं। इस भूतल विषें गीत नृत्य वादित्र नाना प्रकार के मन

के हरणहारे देवों अर मनुष्यों ने किये।।20।। अर सब दिशाओं को सब लोकपाल सावधानी सहित सेवा करते चले जाय हैं। आगे प्रभु की सेवा ही सेवकों को कल्याण के अर्थी है। अर जिनका जो अधिकार है ताही रीति सेवा करे है।।21।। अर दैदीप्यमान है रत्नमई करे जिनके ऐसे कर तिन कर आंजुली जोड़ते प्रभु को नमस्कार करे हैं देवों के मुकुट भूमि को स्पर्शे हैं तिनके रत्नों की ज्योति कर पृथ्वी ऐसी है मानो कोट कमलों कर पृथ्वी प्रभु की पूजा ही करती सोहे है।।25।। लोकपाल आगे आगे चले जाय हैं वे लोकपाल लोकेश्वर के नायक हैं मानो भगवान की कांति ही मूर्ति धर आगे आगे चली जाय है।।26।।

अर पद्‌म नामा देवी तथा सरस्वती नामा देवी अपने मंडल सहित मंगल द्रव्य हाथ में धरे आगे आगे जाय हैं। भगवान को प्रदक्षिणा देय नमस्कार कर मंगल द्रव्य लिये चली जाय हैं अर इन्द्र नमस्कार करता हाथ जोड़े चला जाय है अर यह शब्द – हे देव! कृपा करो जगत को भव वन से निकासो अर देश देश के राजा प्रणाम करते चले जाय हैं।।28।। इस भांति वह ईश्वर तीन लोक का परमेश्वर सुर नर असुर अर तिर्यंचों कर सेवित लोकों के उद्धारने अर्थ आर्यक्षेत्र विषें जहां जहां भगवान चरण कमल धारे हैं तहां पद पद विषें देव रत्न स्वर्ण मई कमल रचे हैं अर यह शब्द बारम्बार कहे है।।30।। हे नाथ! हे जगज्जेष्ठी! हे लोक के पितामह! तुम जयवंत होवो। हे स्वयंप्रभू! हे अविनाशी! हे देव! हे अनंत गुण के स्वामी! जीवों के दयालु! तुम जयवंत होवो। हे सर्व जगत के बांधव! हे धर्म के नायक! तुम जयवंत होवो। हे सबको शरण के देनेहारे शरणागति प्रतिपाल तुम जयवंत होवो। हे पवित्र! हे उत्तम! हे श्रीधर! तुम जयवंत हो ऐसी घोषणा करते पृथ्वी अर आकाश को शब्दायमान करते प्रभु के साथ विहार करते भये जैसा मेघ का गंभीर शब्द होय तैसा जय जयकार का शब्द होता भया।।33।।

यह वीतराग देव सर्व इंद्रों कर पूज्य मंगल रूप है दर्शन जिसका इन्द्रों के मुकुट विषे नील रत्न सोइ भई भंवरों की पंक्ति ताका है भ्रमण जाके चरण कमलों पर।।34।। चरण कमल की निवासनी जो लक्ष्मी ताकर जगत को आनन्द उपजावे सन्ते जिनवर जीवों की दयाकर अद्‌भुत विभूति से विहार करें देव मार्ग जो आकाश उस विषें विहार करता रत्न कमलों पर चरणकमल धरता धर्म का स्वामी विहार करे है।।36।। लोक के कल्याण के अर्थ विहार करता विश्वेसुर ताके आगे देश देश के राजा चले जाय हैं।।37।। जैसे पतिव्रता स्त्री पति की अनुगामिनी होय सो प्रशंसा योग्य है तैसे महा विभूति रूप स्त्री सर्वज्ञ की अनुगामिनी सोहे है स्त्री भी स्वर्ण वर्ण है। अर मणियों के आभूषणों कर मंडित है।।38।। तैसे समोसरण की विभूति भी मणि स्वर्णमई है अर प्रभु की अनुगामिनी है इसलिये प्रशंसा

योग्य है अर चौगिर्द पवनकुमार देव भूमि शुद्ध करते जाय हैं। अपनी सेवा में सावधान है जैसे साधु अपनी वृत्ति में सावधान होय देवों कर बुहारी भूमि दर्पण समान दिपे है।।39।। अर मेघकुमार देव गंधोदिक की वृष्टि करते जाय हैं अर दैदीप्यमान विजुरी चमकती जाय हैं।।40।। अर मन्दार जाति के कल्पवृक्षों के पुष्प तिनकी वर्षा होती जाय है तिन पर भंवर गुंजार करे हैं जिन मार्ग के ईश्वर तिनका ऐसा विहार उसकी देवों के समूह प्रशंसा करते भये।।41।।

स्वर्ण की रज का मण्डल अर रत्नों का चूरण उस कर पृथिवीतल कैसा सोहता भया, जैसे ज्योतिषी देवों के मण्डल आकाश सोहे है। देव नाना प्रकार के पत्रों को कुंकुम के रस कर युक्त करे हैं। सो मानो अपना चित्रकारपना ही पृथिवी विषे प्रसिद्ध करे हैं।।43।। अर कदली, नारियल, ईख, अमरख, नारंगी आदि सब ही फल अर सब ही फल छहों ऋतुओं के जगह जगह फल रहे हैं फूल रहे हैं। मार्ग के समीप दोनों ओर बाग लग रहे हैं अर खेतों में सब धान फल रहे हैं अर मार्ग विषें जगह जगह सुन्दर मन्दिर हैं उनमें देव, देवी, नर, नारी, गीत नृत्य करे हैं।।45।। प्रभु के विहार कर मार्ग ऐसा मनोज्ञ भया है मानो यह कर्मभूमि मनवांछित सामग्री कर भोगभूमि को जीते हैं सब सामग्री पृथ्वी विषें पैंड पैंड विषें परिपूर्ण है मार्ग के अन्त दोनों ओर दो दो कोस के विस्तार सींव हैं।।46।। वह मार्ग तोरणों कर शोभित है मानो वे शोभा के कारण कल्पवासी देवों ने कल्पे हैं अर जगह जगह मार्ग मनवांछित दान की देनहारी दानशाला हैं। तहां मनवांछित दान बँटे है मानो वे दानशाला साक्षात् दान शक्ति ही है।।48।। अर तोरणों के भीतर उतंग कदली की ध्वजाकर मंडित महा सघन है छाया जिसकी सूर्य्य की कांति को रोके ऐसा वनदेवों ने वन के पुष्पों कर पुष्पमंडल रचा है। पुष्पों की मंजरी तिनके पुंज कर महा सुगंध महा सुन्दर मानो पुण्य के समूह का आकार ही है।।50।।

वह पुष्प मंडप रत्नों की बेल अर चित्राम रूप भीति तिनकर मनोहर भासे है चंद्रमा अर सूर्य की प्रभा को जीते ऐसी कांति के मण्डलकर मण्डित है घण्टा के मनोहर शब्द अर ध्वजाओं की क्षुद्र घंटिकाओं के मनोज्ञ शब्द तिनकर सब दिशाओं को शब्द रूप करे है। वह पुष्प मण्डप समीचीन सुगंधकर खैंची है भंवरों की पंक्ति जिसने। सो महा सुगन्ध महा उज्ज्वल मानो प्रभु का यश ही मूर्तिवंत दीखे है।।53।। ऊंचे हैं थंभ जिसके स्थूल है मोतियों की झालरी जिसके अर चार द्वारों कर सोहे हैं। उस मण्डप के मध्य दया की मूर्ति रागादिक बैरियों के दमनहारे संयम के स्वामी स्वयंभू सब लोक के हित अर्थि गमन करे है।।55।।

अर प्रभु के पीछे भामण्डल सोहे है अर तीन छत्र अति निर्मल ऊपरांऊपर सोहे हैं मानो प्रभु का त्रैलोक्यनाथपना प्रगट प्रकाशे है अर हजार चंवर जिनेश्वर पर स्वयमेव ढुरे हैं जैसे गिरेन्द्र पर हंसनी की

पंक्ति पड़े अर हजारों मुनि प्रभु के साथ विहार करे हैं अर सब ओर देवों की सेना विस्तर रही है अर इन्द्र द्वारपाल हुआ देवों सहित आगे आगे जाय है। शची सहित इन्द्र सर्वज्ञ देव को सेबे है अर भगवान की केवल लक्ष्मी प्रगट भासे है अर मंगलों का मंगल भगवान उसके साथ मंगल द्रव्य लिये देव जाय हैं अर शंख अर पद्म नामा दो निधि तिनकर मनवांछित दान देते जाय हैं। स्वर्ण अर रत्नों की वर्षा होय है। अर नागकुमार देव दैदीप्यमान हैं मणि जिनके फल विषें ते द्वीप समान उद्योत करते जाय हैं मानो वे ज्ञान रूप दीप की दीप्ति ही हैं।।63।।

अर अग्निकुमार जाति के देव धूप के घट लिये जाय हैं तिनकी सुगंध ऊर्द्ध को जाय है मानो भगवान के अंग ही सुगंध फैल रहा है। अर भगवान के भक्त चांद सूर्य प्रभा के मण्डल को धरे दर्पण जाति के मंगल द्रव्य लिये जाय हैं। अर आताप के निरोध करणहारे उज्ज्वल रत्नमई छत्र देव प्रभु के सिर पर फिरावे हैं। अर देवों के हाथ में ध्वजा फरहरे हैं वे सो मानो मिथ्यावादियों का तिरस्कार कर वे जीतने का स्वरूप नृत्य ही करे हैं। मानो वे ध्वजा जिनेश्वर की दया मूर्ति ही सोहे हैं। अर विभवी नामा देवी फिर विजया वैजयन्ती इत्यादि आगे आगे जाय हैं मानो तीन जगत के नेत्र रूप कुमुद तिनको प्रफुल्लित करनहारी भगवान की कांति रूप चन्द्रिका देवियों का रूप धारे सोहे हैं। अर स्वर्गलोक के निवासी कल्पवासी देव अर मध्य लोक के ज्योतिषी भवनवासी व्यंतर देव अर पाताल के भवनवासी अर व्यंतरदेव यह सब ही चार प्रकार के देव देवी अनुराग के भरे आनन्द नाटक करे हैं जिस विषें सब रस प्रगट शोभे है अर गम्भीर है मधुर है ध्वनि जिनकी ऐसे दुंदुभी मेघ की ध्वनि को जीतनहारे वादित्र बाजे हैं। तिनके नाद कर दशों दिशा शब्दायमान होय रही हैं।।71।।

अर धर्मचक्र जीता है सूर्य जिसने। हजार हैं धारा जिसकी। जिसकी कांति के समूह कर आकाश विषें उद्योत होय उसे देव लिये चले जाय हैं। अर देव यह घोषणा करते जाय हैं यह तीन लोक का एक प्रभु पृथिवी विषें विहार करे है सो आओ इनको नमस्कार करो, यह घोषणा होय रही है।।73।। अर बड़े बड़े देव ध्यावते सन्ते सब दिशा में जय जयकार शब्द करे हैं मानो वे देव प्रभु के प्रभाव के अंश ही हैं। यह परम अद्भुत भगवन्त देव का विहार तिसे पाय कर पृथ्वी विषें अद्भुत शोभा होती भई, जीवों के अद्भुत मंगल होते भये।।75।। जिस देश विषें प्रभु विहार करें उस देश विषें जीवों के मन की चिन्ता न होय अर रोग की बाधा न होय अर अति वृष्टि अनावृष्टि आदि सप्त प्रकार ईति भीति न होय।।76।। अर आंधों के आंख होय रूप को निरखे अर वधिरों के कर्ण होय सब बात अच्छे सुने। अर गूंगा पुरुष प्रकट वचनालाप करे अर पंगुलों के पग होवें सो पर्वत को उलंघे।।77।। अर जहां प्रभु विहार करें तहां अति उष्ण अर शीत न होय अर रात दिन का भेद न होय। अर जेते अशुभ कर्म ते सब विलाय जायँ शुभ की वृद्धि होय।।78।।

अर वसुधा रूप वधू सर्व धान्य कर निष्पन्न भई सो धान्य के अंकुरे रूप रोमांच सो ही हैं कंचु जिसके सो कमल रूप हस्त कर प्रभु के चरण ग्रहे हैं अर जिन सूर्य के चरण रूप किरणों के संयोग कर प्रफुल्लित भई है भूतल के कमलों की पंक्ति सो आकाश विषें सरवर की शोभा को विस्तारे है अर छहों ऋतु एक लार जगपति को सेवे हैं मानो प्रभु की सम्यक्दृष्टि के प्रभाव से यह उपशम रूप होय गई हैं। भगवान के विहार कर भूमि रत्नों की उपजावनहारी है इसलिये रत्नजननी नाम पाया है प्रभु के प्रसाद कर शीतकाल उष्ण काल भी अपनी विषमता को तज कर समरूप बरते है अर किसी प्राणी को कोई प्राणी न हते है।।84।। त्रस अर थावर सब ही जीव सुख से समय पूर्ण करे हैं। यह पृथ्वी विषें प्रभु की प्रभुता बरते है।।85।। अर सर्प नकुलादिक तथा सिंह मृगादिक सबही जाति विरोधी जीव निर्वैर होय गये हैं। भगवंत के प्रभाव कर जीवों की दुर्बुद्धि दूर भई है।।86।। अर शीतल मन्द सुगन्ध पवन प्रचण्डता रहित भई प्रभु को सेवे है। मानो सेवकों को सेवा की विधि सिखावे है सेवक का यही धर्म है जो स्वामी के अनुकूल होय प्रतिकूल न होय सो पीछे पीछे साथ लगी आवे है।।88।।

अर दिक्कुमारी निर्मल आभरण कर मण्डित कल्पवृक्षों के पुष्पों कर जिनपति को पूजे है वे दिक्कुमारी प्रभा रूप हैं तिमिर की हरणहारी हैं। अर आकाश निर्मल होय गया है जिस विषें तारा प्रगट दीखे है। सो कैसे सोहे है, मानो शरद ऋतु विषें सरवर में कुमुद ही फल रहे हैं अहो! त्रैलोक्यनाथ का अद्‌भुत माहात्म्य है जो मन्दबुद्धि तिर्यंच भी दूर से नमस्कार करे हैं। वह कहे है मैं पहिले जाऊं वह कहे मैं पहिले जाऊं इस भांति दर्शन की अभिलाषा के भरे सुर नर चले आवे हैं जिस दिशा विषे त्रैलोक्य का ईश्वर पांव धरे है। तहाँ तहाँ सुरेश्वर आगे दौड़ा जाय है अर दिशा दिशा के राजा पूजा के उपकरण लिये पूजने को आवे हैं। सब ही दिशा के नरेश्वर जगदीश्वर के साथ हैं अर कई एक चले आवे हैं। भगवान सारिखा सर्वेश्वर अर नाहीं सुरेश्वर, नरेश्वर, असुरेश्वर, खगेश्वर, सबही जिनेश्वर के दास हैं भगवान के विहार समय देवों की सेना तो आकाश विषें चली जाय है। अर मनुष्यों की सेना भूमि विषें सब ओर चली जाय है। जहाँ भगवान विहार करे वहाँ पृथ्वी पवित्र होय है।

अथानन्तर – प्रभु के शरीर की जोति का प्रतिबिम्ब मंडल रूप होय रहा है उसे भामण्डल कहिये है उसका निरूपण करे हैं। वह ज्योति का मण्डल है उसके एक ऊंचा दण्डक है आकार सो प्रभा का दंड भासे है। तिसके ऊपर महा अपूर्व कांति को धरे अपनी कांति कर सूर्य आदि सब तेजस्वियों का तेज मन्द करता भामंडल सोहे है। वह भामंडल अधिक से अधिक तेज को धरे है। यह महास्थूल है तेज जिसका सो रूपी है अरूपी नहीं। भगवान का आत्म सम्बन्धी अरूप तेज तो अनन्त अपार है। अर यह शरीर के तेज का मंडल है सोही कथन में न आवे। भामण्डल का तेज किसी कर निवारा न

जाय अप्रतिघात है अर दूर किया है समस्त तिमिर जाने। अर ज्योति के मण्डल के मध्य एक पुरुषाकार तेजोमय सहस्ररश्मि रूप प्रभु के सब ओर सोहे है। अद्भुत है उदय जिसका उस भामण्डल का विस्तार तो एक कोस है अर ऊंचाई तीर्थंकर शरीर की ऊंचाई के अनुसार है ऋषभ देव का शरीर पांच सौ धनुष का था अर नेमीश्वर का शरीर धनुष दश ऊंचा है सो शरीर के अनुसार भामण्डल की ऊंचाई है।।99।। वह भामंडल महा मनोहर दीखे है जिसके देखने कर नेत्रों का सुख होय। वह भगवान के शरीर का भामंडल पुरुषाकार है अर जगत् पूज्य है।।100।।

जे हीन पुण्यी हैं पापी जीव हैं तिनको दर्शन नाहीं। जैसे घूघू सूर्य को न विलोके। वे प्रभु के समस्त लोक को धर्म का प्रकाश करते लोकों को कल्याण के अर्थ जगत् के ईश्वर विहार करते भये। सब देवों की कांति को उलंघे ऐसी कांति जिनकी सो कैयक वर्ष विहार कर आर्य खण्ड के जीव प्रतिबोधे अनेक मन्दबुद्धि प्रवीण भये। हिंसक जीव हिंसा से रहित भये। वीतराग देव के विहार समय जीवों को आर्त चिन्ता आदि खेद न होते भये।।8।। प्रभु ने जगत् कल्याण निमित्त महा विभूति से विहार किया। अनेक देश संबोधे - देशों के नाम - सोरठ, मत्स, लाटउरु, सूरसेन, पटचर, कुरुजांगल, पांचाल, कुशेग्र, मगध, अंजन, अंग वंग आदि अनेक देशों में विहार कर लोकों को जिनधर्मी किये। राजा प्रजा सब संबोधे। कैयक राजा मुनि भये कैयक श्रावक भये कैयक रानी आर्यका भईं। कैयक ब्राह्मण अर वणिक मुनि भए। कैयक श्रावक भए। अर इन उच्च कुल की स्त्री कैयक आर्यका भईं कैयक श्राविका भईं। अर कैयक शूद्र लोक भी श्रावक भये अर उनकी स्त्री श्राविका भईं। श्रावक श्राविका के व्रत सबही कुलों को होय हैं अर यति आर्यका से व्रत उच्च कुलों बिना नहीं। इस भांति सकल जीव संबोधे अर श्रावक के व्रत सिंह, गज, मृगादि पशुओं ने धारे। अर हंस गरुड़ादि पक्षियों ने धारे।

अर अनेक देव सम्यक्त्व के धारक भये।।12।। नेमीश्वर विहार करते मलय नामा देश विषें आये उस विषें भद्रलपुर नामा नगर उसके सहस्राम्र नामा वन विषें प्रभु पधारे अर समोसरण की रचना भई। चतुरनिकाय के देव आदि बारह सभा के प्रभु के प्रदक्षिणा रूप बैठे। वहां भद्रलपुर का राजा पुंड्र अपनी प्रजा सहित परमेश्वर के दर्शन को आया। सो हाथ जोड़ शीस नवाय नमस्कार कर मनुष्यों की सभा में बैठा। तहाँ देवकी के पुत्र छह सुवृष्टि नामा सेठ। अर उसकी अल्का नामा सेठानी के पले थे सो सकल माता पिता सहित दर्शन को आये। इन छहों भाइयों के प्रत्येक प्रत्येक के बत्तीस बत्तीस स्त्री सो अपने रूप कर शची नामा इन्द्राणी ही का रूप जीतें।।17।। ते छहों भाई छहों रथों से उतर कर समोसरण में आये। जिनराज को नमस्कार कर राजा पुंड्र के समीप आय बैठे अद्भुत है तेज जिनका।।18।। तहाँ भगवान सम्यक्दर्शन सहित यति अर श्रावक का धर्म दिव्य ध्वनि कर कहते भये।

यति का धर्म साक्षात् निर्वाण का कारण है। अर श्रावक का धर्म परंपराय मोक्ष का कारण है। यह व्याख्यान सुन यह छहों भाई तत्त्व के वेत्ता धर्म रूप अमृत के पानकर तृप्ति भये। जाना है संसार का स्वरूप असार जिन सो राजा से अर माता पिता से अर सकल कुटुम्ब से क्षमा कर जिनेश्वर के चरणारविंद को नमस्कार कर यह छहों भाई जिनेश्वरी दीक्षा धारते भये। छहों भाई छह काय जीव के दयालु षट् द्रव्य के वेत्ता एके साथ सर्व संग के त्यागी भये। सो छहों द्वादशांग के पाठी श्रुतकेवली भये अर जिन्हों को बीज बुद्धादि अनेक ऋद्धि उपजी अर महा दुर्द्धर तप करते भये।।21।। इन छहों मुनियों के बेला आदि तप समान धारणा पारणा सबों की साथ अर शीत उष्ण वर्षा के तीनों योग साथ अर शय्या, आसन, स्थान सबों का साथ।।22।। यह छहों भाई तद्भव मोक्षगामी चरम शरीरी महा तप के करणहारे तिनकी देह की कांति गृहस्थ अवस्था से अधिक होती भई। इनकी उपमा देने को यही छहों मुनि। अर इन समान नहीं यह बाह्याभ्यन्तर तप के करणहारे जिनेश्वर के परम भक्त होते भये।।24।।

इस भांति महा विभूति सहित विहार कर तीन लोक का नायक अनेक मुनियों सहित फिर गिरनार पधारे।।25।। तहाँ समोसरण विषें देवों सहित सकल इन्द्र आये। अर उपेंद्र कहिये वासुदेव बलदेव समस्त यादवों सहित आये। भगवान्, सुनकर मुनियों कर सेवनीक तिनके संघ का वर्णन करे हैं। बरदत्त स्वामी को आदि दे ग्यारह गणधर ते श्रुतज्ञान रूप समुद्र के पारगामी सोहते भये।।27।। अर चार सौ मुनि चौदह पूर्व के धारक अर ग्यारह हजार आठ सौ मुनि शिष्य अर पन्द्रह सौ अवधिज्ञान अर पन्द्रह सौ केवली।।29।। अर विपुलमति मनःपर्यय ज्ञानी नौ सौ अर वादित्य ऋद्धि के धारक ग्यारह सौ अर ग्यारह सौ विक्रिया ऋद्धि के धारक – इस भांति अठारह हजार अर ग्यारह गणधर ते मुनि जानो अर राजमति आदि चालीस हजार आर्यका अर एक लाख उनहत्तर हजार श्रावक अर तीन लाख छत्तीस हजार श्राविका यह सब ही चतुर्विध संघ सम्यग्दर्शन कर शुद्ध भगवत् उपदेश सुनते भये। गिरनारी गिर विषे पूर्वली भांति धर्मोपदेश भया। धर्म रूप अमृत की वर्षा भई उस कर भव्य रूप पपीहा त्रषित थे सो तृप्त भये। भगवान की दिव्यध्वनि सब जीवों को तृप्त करती भई। यह भांति अपार है उदय जिसका ऐसा गिरनार सोई भया उदयाचल उस पर जिन सूर्य विराजे। तब सकल सभा के लोकों के हृदय तेई भये कमल सो विकाश को प्राप्त भये।।34।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ भगवत् विहारवर्णनो नाम अष्टपंचाशः सर्गः।।58।।

उनसठवाँ सर्ग

अथानन्तर – धर्मोपदेश के भये पीछे देवकी कृष्ण की माता महा विनयवान जिनेश्वर से हाथ जोड़ नमस्कार कर पूछती भई – हे भगवन्! आज मेरे मन्दिर में दो मुनि दिगम्बर महा मनोहर आहार को आये फिर वे ही आये, इस भांति दोय मुनि तीन वेर आये सो एक दिन विषें मुनि तीन वेर कैसे आये अर उनको देख कर मेरे ऐसा मोह उपजा मानो मेरे पुत्र ही हैं। यह प्रश्न देवकी ने किया, तब श्रीभगवान कहते भये – वे छह तेरे पुत्र हैं तीन युगल तेरे भये सो देव होते ही कंस के भय से उनको ले गये सो भद्रलपुर विषे अलका नामा सेठानी के घर पले अर उसके मृतक पुत्र भए सो देवों ने तेरे निकट आय डारे ते तीनों ही मृतक युगल कंस ने शिला पर पटके। अर तेरे तीनों युगल छहों पुत्र मेरे निकट मुनि भए ते छहों तेरे घर आहार को आये।

पहिले प्रथम युगल आया फिर दूसरा युगल आया, फिर तीसरा युगल आया। इस भांति तीन वेर छहों साधु आये। वे छहों समान रूप हैं इसलिये तैं जाने वे ही आये। साधु दूसरी वेर भोजन नहीं करें अर आवें नहीं, वे कृष्ण के बड़े भाई छहों धर्म श्रवण कर मेरे शिष्य भये हैं सो इस भव में कर्म काट कर सिद्धलोक को जावेंगे नहीं। वे महापुरुष हैं अर तेरे उनसे पुत्र का स्नेह उपजा सो सत्य है परन्तु जगत् का सकल स्नेह वृथा है तू जिनधर्म विषे स्नेह कर जिस कर भवसागर को तिरे। यह कथा जिनेश्वर के मुख से सुनकर देवकी मुनियों को नमस्कार करती भई सकल यादव नमस्कार करते भये अर बलदेव वासुदेव नमस्कार कर मुनियों की अति स्तुति करते भये।

अथानन्तर – कृष्ण की पटरानी सत्यभामा प्रभु को प्रणाम कर अपने पूर्व भव पूछती भई। तब भगवान कहते भये। सत्यभामा सुने है अर सर्व सभा सुने है। इस भरतक्षेत्र विषें भद्रलपुर में कपिल नामा ब्राह्मण उसके मरीची नामा स्त्री उसके मुण्डशालायन नामा पुत्र भया। सो विद्यामद कर गर्वित आपको पण्डित माने। जिस समय में भगवान पुष्पदन्त तो परमधाम पधारे थे अर शीतलनाथ स्वामी प्रगटे थे सो शीतलनाथ के उपजने से पाव पल्य पहिले ही धर्म का विच्छेद भया। उस समय जिनमार्ग के ज्ञाता भव्य जीव भरतक्षेत्र में न रहे अर अज्ञान की प्रवृत्ति भई। उस समय मुण्डशालायन नामा विप्र ने राजा मूढ जन तिनको भ्रम उपजाय कर पाप की प्रवृत्ति करी अनछना जल कर स्नान अर गौ कन्या गज, तुरंगादि दश प्रकार दान यह प्ररूपणा करी। अर लोभ कर लोगों को ठगे उस पाप कर सप्तम नरक विषें नारकी भया। फिर दुष्ट तिर्यंच होय कर नरक ही गया, कुयोनि विषें बहुत भ्रमण करके कभी मनुष्य देह पाई परन्तु नीच कुल विषे उपजा।।15।। गन्धवती नामा नदी उसके तीर गन्धनादन नामा पर्वत तहाँ यह एक पर्वतक नामा भील भया उसके बल्लरी नामा स्त्री।।16।।

एक दिन उस पर्वत पर श्रीधर अर धर्म यह दोय चारण मुनि आये तिनका भील को पुण्य के उदय दर्शन भया। भील मुनि को नमस्कार कर श्रावक के व्रत धारे।।17।। काल पाय मरण कर विजयार्द्धगिरि विषें अल्कापुरी तहाँ राजा महाबल विद्याधर उसके रानी ज्योतिर्माला अर बड़ा पुत्र सतबली उससे छोटा यह हरिवाहन नामा राजकुमार होता भया। कैयक दिन में इनका पिता महाबल श्रीधर मुनि के निकट मुनि भया अर इन दोनों भाइयों के ताईं राज्य दिया आप मुनि होय मुक्ति पधारे।।19।।

अथानन्तर – बड़े भाई सतबल ने छोटे भाई हरिवाहन को देश से निकाल दिया सो हरिवाहन भगवाहन भगली नामा देश विषें अंवुदावत नामा पर्वत पर श्रीधर्म अर अनन्तवीर्य्य नामा चारण मुनियों का दर्शन कर मुनि भया वीतराग का धर्म आराध कर दूसरे स्वर्ग देव भया तहाँ स्वर्गलोक के सुख भोग मरण समय संक्लेश भाव थकी शरीर छोड़ा स्त्री पद उपार्जा सो तू विजयार्द्ध गिर विषें राजा सुकेतु के स्वयंप्रभा रानी के गर्भ विषे सत्यभामा पुत्री भई सो वासुदेव परने। अब इस जन्म विषें आर्यका के व्रत धार स्त्री लिंग छेद स्वर्ग विषें देव होय तहाँ से चय मनुष्य भव पाय सिद्ध पद पावेगी।।24।।

यह कथा सुन सत्यभामा अति हर्षित भई। संसार का क्षय सुन कर कौन हर्षित न होय फिर रुक्मणि देवाधिदेव को प्रणाम कर अपने पूर्वभव पूछती भई। तब प्रभु आज्ञा भई – इस ही भरतक्षेत्र विषें मगध नामा देश उस विषे लक्ष्मीग्राम तहाँ सोमदेव नामा ब्राह्मण उसके तू लक्ष्मीमति नामा ब्राह्मणी थी सो रूप के अभिमान कर महा मूढ पूज्य पुरुषों का अपमान करे। एक दिन शृंगार करती थी नाना प्रकार के वस्त्राभरण पहरे चन्द्रमा समान मणियों के दर्पण विषे अपना मनोहर मुख निरखती थी। उस समय उसके घर समाधिगुप्त नामा मुनि तप कर महा क्षीण शरीर आहार को आये सो इसने निन्दा करी।।30।। सो मुनि की निंदा के पाप कर सात दिन के भीतर उदंबर कोढ उपजा तब यह अग्नि में प्रवेश कर मूई सो आर्त्तध्यान कर गधी भई गधी होय कर लूण के लदने में आई सो लूण के लदवे कर मरी फिर पाप के योग कर राजगृह नामा नगरी विषें सूकरी भई सो सूकरी पापियों की मारी मरी सो मर कर गाओं के बाड़े विषें कुकरी भई सो दौं में जल मरी। मर कर मंडप नामा ग्राम तहाँ त्रिपद नामा धीवर उसके मंडूकी नामा भार्या उसके पूतिगन्धा नामा पुत्री भई।।34।।

इसके ऐसा पाप का उदय जो माता ने भी न पाली अर दादी ने वृद्धि को प्राप्त करी। इसका दुर्गंध शरीर जो याही याके घर में न राखे सो कुटी बांध नदी के तीर रहे। एक दिन नदी के तीर समाधिगुप्ति नामा मुनि आय विराजे यह महा दयावान तिन इसे संबोधी अर इसके पूर्व भव कहे। अर धर्म का श्रवण कराय श्राविका के व्रत दिये।।36।। तब यह कीर की कन्या उपारक नामा नगर गई तहां आर्यकाओं की संगति भई तिनकी साथ राजगृही नामा नगरी गई अर इसने आचाम्ल वर्द्धन नामा तप किया अर वहाँ मुनियों के निर्वाण क्षेत्र हैं तहाँ सिद्ध शिला को वन्द कर नील गुफा विषें संन्यास धार

यह महासती प्राण त्याग अच्युतेंद्र के गगन बल्लभा नामा महा देवी भई तहाँ पचपन पल्य की आयु भई तहाँ से चय कर कुण्डनपुर विषें राजा भीष्म उसके रानी श्रीमती उसके रुक्मणी नामा पुत्री भई। वासुदेव की पटरानी अब इस भव विषें आर्यका के व्रत धर स्त्रीलिंग छेद उत्कृष्ट देव होयगी तहाँ से चय कर मनुष्य होय मुनिव्रत धर मोक्ष पावेगी।।41।।

यह कथा भीष्म की पुत्री सुनकर आपको शीघ्र ही मुक्ति की प्राप्ति जान प्रभु को प्रणाम करती भई। कैसी है भीष्म की पुत्री, भीष्म कहिये महा भयंकर जो संसार वन उसके भ्रमण से भयभीत है फिर जांववंती वासुदेव की तीसरी पटराणी जिनराज से अपने भव पूछती भई सो भगवान कहे हैं अर जांववंती सुने है। अर सकल भव्य सुने हैं, वे भव्य संसार से विरक्त हैं। इस जम्बूद्वीप विषें पूर्व विदेह यहाँ पुष्कलावती नामा देश विषे वीतशोका नामा नगरी। उस विषें देवल नामा एक बड़ा गृहस्थ उसके देवमती नामा स्त्री उसके यशस्वनी नामा पुत्री।।44।। सो सुमति नामा गृहस्थ को परनाई सो वह मूवा तब यह अति दुःख रूप भई तब एक जिनदास नामा जिनधर्मी उसने संबोधी परन्तु अज्ञान के उदय सम्यक्त्व न पाया दान अर उपवास की विधि कर मरी सो नन्दन वन विषें अन्तर नामा देव के मेरुनंदन नामा देवी भई उसका तीस हजार वर्ष का आयु भया देव पर्याय के सुख भोग तहाँ से चय कर संसार वन में बहुत भ्रमी।।48।।

फिर जम्बूद्वीप के ऐरावत क्षेत्र विषें विजयपुर नामा नगर उस विषें राजा वन्धुषेण उसके रानी बुद्धिमती तिनके बन्धुयशा नामा पुत्री भई सो कुमारी ही श्रीमती नामा आर्यका के समीप जिनदेव का धर्म आराध प्रोषध व्रत कर देह तज कुवेर के स्वयंप्रभा नामा स्त्री भई सो वहाँ से चयकर पुण्डरीकणी नामा पुरी विषें जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह में वज्रमुष्टि के सुभद्रा नामा स्त्री उसके सुमति नामा पुत्री भई सो सुन्दरी नामा आर्यिका के निकट रतनावली नामा तप किया।।52।। अर समाधि मरणकर पाँचवें स्वर्ग ब्रह्मेंद्र के इन्द्राणी भई। जिसकी तेरह पल्य की आयु भई वहाँ से चयकर भरतक्षेत्र के विजयार्द्ध की दक्षिण श्रेणी विषें जांवव नामा नगर उस विषें जांबव नामा विद्याधर उसके रानी जान्हवती तिनके तू जांववंती नामा पुत्री भई। नारायण की पटरानी अब आर्यका के व्रत धर कल्पवासी देव होय कर फिर मध्य लोक विषें राजपुत्र होय कर तप कर लोक शिखर जायगी।।55।।

यह कथा सुन कर वह शील रूप आभूषण धरणहारी परमेश्वर को प्रणाम कर बैठी आपका संसार से निस्तार जान अति हर्षित भई।।56।। फिर वासुदेव की चौथी पटराणी सुसीमा विनय कर सर्वज्ञ देव को अपने पूर्व भव पूछती भई सो प्रभु सकल प्राणियों के मन को आह्लाद की उपजावनहारी जो दिव्यध्वनि उस कर कहते भये। धातुकी खण्ड की नामा द्वीप उस विषें दोय मेरु संबंधी पूर्व विदेह तहाँ मंगलावती नामा देश उस विषें रत्नसंचय नामा नगर।।58।। वहाँ राजा विश्वसेन उसके अनुद्धरा नामा

रानी अर राजा का मंत्री सुमति सो प्रसिद्ध परम श्रावक।।59।। एक समय यह राजा विश्वसेन अनुद्धरी का धनी युद्ध विषें अयोध्या के राजा पद्मसेन ने मारा सो रानी अनुद्धरि अति दुखित भई सो सुमति नामा मंत्री ने संबोधि।।60।। परन्तु मिथ्यात्व के उदय सम्यक्त्व धार न सकी बाह्य सुभक्ति कर जम्बूद्वीप का विजय नामा द्वार उसका अधिष्ठाता विजय नामा देव उसके ज्वलनवेगा नामा देवी भई।।61।। उसकी दश हजार वर्ष की आयु भई फिर चिरकाल संसार भ्रमण कर जम्बूद्वीप के विदेह विषे सीता नदी के दक्षिण तट विषें एक शालिग्राम नामा रमणीक गांव जहाँ महा धनवान एक यक्षल नामा गृहस्थ उसके देवसेना नामा स्त्री इसके यक्षदेवी नामा पुत्री भई यक्षों के आराधन से यक्षदेवी नाम धरा सो यह यक्षों की पूजा के अर्थ वन विषें गई थी सो धर्मसेन नामा मुनि के निकट धर्म का श्रवण किया।।65।।

अर जिनधर्म की क्रिया आदरी अर मुनियों की भक्ति कर दान दिये। अर यह व्रत लिया जो मुनि आर्यिकाओं को भोजन देय कर मैं भोजन करूं।।66।। सो दान के प्रभाव कर इसने पुण्य बंध किया एक दिन यह अपनी सखियों सहित विपुलाचल नामा पर्वत वहाँ क्रीडा को गई थी सो अकाल वृष्टि भई उस कर पीड़ित होय उसने यहाँ गुफा में प्रवेश किया सो सिंह ने भषी सो मर कर हरि नामा वर्ष क्षेत्र मध्य भोगभूमि तहाँ उपजी अर दोय पल्य का आयु भया। वहाँ से ज्योतिषी देवों के देवी भई वहाँ एक पल्य का आयु भया वहाँ से चयकर जम्बूद्वीप के विदेह विषें पुष्कलावती नामा देश वहां वीतशोक नामा नगरी का अशोक नाम राजा उसके श्रीमती नामा रानी उसके श्रीकांता नामा पुत्री भई सो जिनदत्ता नामा आर्यिका के समीप कुवारी आर्यिका भई अर रत्नावली नामा तप कर चौथे स्वर्ग माहेंद्र के नामा इन्द्र इन्द्राणी भई उसकी ग्यारह पल्य आयु भई वहाँ स्वर्ग सुख भोगे वहाँ से चई सो सुराष्ट्र नामा देश विषे राजा राष्ट्रवर्द्धन उसके रानी सुचेष्टा उसके तू सुसीमा नामा पुत्री भई अब तू आर्यिका के व्रत धार स्त्रीलिंग छेद देव होयगी वहाँ से चयकर।।73।। गिरनार विषें मनुष्य होय मोक्ष जायगी। यह अपने भव जिन स्वामी के मुख सुसीमा सुन कर आपको कृतार्थ मानती भई प्रभु को प्रणाम कर स्त्रियों की सभा में बैठी फिर कृष्ण की पांचवीं पटराणी सुलक्षणा तीर्थेश्वर को नमस्कार कर अपने भव पूछती भई तब भगवान सब जीवों के हितू कहते भये।

इस जम्बूद्वीप विषें विदेह क्षेत्र तहाँ कछकावती देश में सीता नदी के उत्तर तट विषें अरिष्टपुर नामा नगर वहाँ राजा वासव सो वासव कहिये इन्द्र समान विभूति का धारक उसके सुमित्रा नामा रानी सो पति के साथ सहस्राम्र नामा वन विषें सागर सेन नामा मुनि के दर्शन को गई।।77।। वहाँ राजा वासव गुरु पर धर्म श्रवण कर अपने वसुसेन नामा पुत्र को राज्य देय मुनि भया। अर रानी सुमित्रा पुत्र के मोह से आर्यका न भई घर में रही।।78।। फिर पुत्र का भी वियोग भया सो यह महा दुःख शोककर

मूई सो भीलनी भई तहाँ भीलनी की पर्याय में नन्दिभद्र नामा चारण मुनि अवधिज्ञानी तिनका दर्शन भया अपने पूर्व भव मुनि के मुख सुन कर उसे जाति स्मरण भया अर तीन दिन का अनसन धार देह तज व्यन्तर देवों में गंधर्व जाति में नारद तुम्बर इत्यादि भेद हैं तिनमें नारद जाति के देवों विषों यह मेघ मालनि नामा देवी भई वहाँ से चयकर इस भरतक्षेत्र विषें विजयार्द्ध की दक्षिण श्रेणी में चन्दनपुर नामा नगर वहां महेन्द्र नामा राजा उसके रानी अनुद्धरि उसके यह कनकमाला नामा पुत्रि भई सो महेन्द्र नगर का हरिवाहन विद्याधर इसने स्वयंवर विषें बरा उसके यह अति बल्लभा भई एक दिन जिन पूजा के अर्थ यह सिद्धकूट चैत्यालय गई तहां चारण मुनि के मुख धर्म श्रवण कर मुक्तावलि नामा तप आदरा अर समाधि मरण कर तीजे स्वर्ग सनत्कुमार इन्द्र के इन्द्राणी भई। उसकी नव पल्य की आयु भई स्वर्ग के सुख भोग वहां से चई।।85।। सो तू राजा श्लक्षण रोम के रानी कुरमति उसके उदर से सुलक्षणा नामा पुत्री भई अर कृष्ण वासुदेव के पटरानी भई अब आर्यका के व्रत धार स्त्रीलिंग छेद स्वर्ग विषें देव होयगी वहां से चय मनुष्य होय मुक्ति जायेगी।।86।।

यह अपने भव सुलक्षणा सुन कर प्रभु को प्रणाम करती भई फिर गांधारी नामा कृष्ण की छठी पटरानी अपने पूर्व भव जिनेन्द्र को पूछती भई सो प्रभु दिव्यध्वनि कर कहते भये कौशल देश विषें अयोध्या नगरी वहां राजा रुद्रदत्त उसके पटरानी विनयश्री सो पति सहित सिद्धार्थ वन विषे श्रीधर मुनि को दान दिया सो दान के प्रभाव कर उत्तर कुरु भोगभूमि विषे उपजी वहां से मरकर चन्द्रमा के देवी भई उसका आयु पल्य के आठवें भाग भया।।89।। वहां से चयकर विजयार्द्ध की उत्तर श्रेणी विषे गगनबल्लभ नामा नगर वहां राजा विद्युद्वेग के रानी विद्युनमति उसके महा कांति की धारक विनयश्री नामा पुत्री भई सो नित्यालोक पुर का राजा महेन्द्र विक्रम उसको परणाई।।91।। कैयक दिन में राजा महेन्द्र विक्रम चारण मुनियों के मुख धर्म श्रवण कर मन्द्राचल पर मुनिव्रत धारे अर अपने हरिवाहन पुत्र को राज्य दिया।।92।। अर रानी विनयश्री आर्यका होय सर्वतोभद्र नामा तप किया समाधिमरण कर पहिले स्वर्ग सौधर्म इन्द्र के बल्लभा भई उसकी आयु पांच पल्य की भई।।93।। वहां से चय कर गांधार नामा देश विषे पुष्कलावती नामा पुरी वहां राजा इन्द्रगिर उसके रानी मेरुमती उसके गांधारी नामा पुत्री भई।।94।। सो कृष्ण की पटरानी पद पाया अब आर्यका व्रत धार स्त्रीलिंग छेद स्वर्ग विषे देव होय फिर नर भव पाय निरंजन पद पावेगी यह कथा सुनकर गांधारी आनन्द को प्राप्त भई फिर हरि की सातवीं पटरानी गौरी भगवान से अपने भव पूछती भई सो प्रभु कहे हैं।।95।।

एक इम्यपुर नामा नगर वहां धनदेव नामा सेठ उसके यशस्वनी नामा कामिनी सो एक दिन अपने मंदिर में तिष्ठती थी सो आकाश विषें दोय चारण मुनियों को देखकर अपने पूर्व भव स्मरण करती भई जो मैं धातकी नामा द्वीप विषें पूर्व मेरू के पश्चिम विदेह विषें नंदशोक पुर में आनन्द श्रेष्ठी के स्त्री थी सो अमिति सागर नामा मुनि को पति सहित मैं दान दिया था सो हमारे घर में देवों ने पंचाश्चर्य

किये फिर मैं भरतार सहित वर्षा का जल पिया सो विष सहित था उस कर प्राण तज दान के प्रभाव कर देवकुरु भोगभूमि विषे उपजी तहां से दूजे स्वर्ग ईशान इन्द्र के देवी भई तहां से चयकर मैं धनदेव सेठ की स्त्री यशस्वनी भई इस भांति अपने पूर्व भव यशस्वनी जान कर संसार से विरक्त भई।।100।। सुभद्र नामा मुनि को नमस्कार कर प्रोषधव्रत ग्रहे कई एक दिन में समाधि मरण कर सौधर्म के इन्द्राणी भई पांच पल्य की आयु भई।।1।। तहां से चयकर कौसांबी नामा नगरी विषें सुभद्र नामा सेठ के सुमित्रा नामा स्त्री उसके धर्ममति नामा पुत्री भई धर्म विषें है बुद्धि जिसकी।।2।। सो जिनमति आर्यका के निकट तप धर जिनेन्द्रगुणसम्पत्ति नामा व्रत कर दशवें स्वर्ग महा शुक्र नामा इन्द्र के बल्लभा भई तहां इक्कीस पल्य की आयु भोग चई सो राजा मेरुचन्द्र के रानी चन्द्रमती उसके तू गौरी नामा पुत्री भई सो नारायण के पटरानी पद पाया।।4।।

अब आर्यका के व्रत धार स्त्रीलिंग छेद स्वर्ग विषें देव होय फिर नव भव पाय सिद्ध पद पावेगी यह कथा सुनकर गौरी हर्षित भई फिर आठवीं पटरानी पद्मावती अपने भव परमेश्वर को पूछती भई सो कहे हैं।।5।। इस ही भरतक्षेत्र विषें उज्जेणी नगरी में राजा अपराजित उसके रानी विजया उसके पुत्री विमलश्री सो हस्तिशीर्ष नगर के राजा हरषेण को परणाई सो अपने पति सहित वरदत्त नामा मुनि को आहार दान दिया एक समय यह पति सहित भीतर के घर में पौढी थी सो कृष्णागर धूप की धूवां कर मूई सो दान के प्रभाव से जघन्य भोगभूमि जो हिमवंत क्षेत्र में है उस विषें उपजी एक पल्य का आयु भया तहां से चन्द्रमा के चन्द्रप्रभा देवी भई उसका पल्य के आठवें भाग आयु भया।।9।। तहां से चय कर मगधदेश विषें एक शाल्यमली खंड नामा ग्राम तहां जयदेव नामा गृहस्थ उसके देवलानामा स्त्री उसके पद्मदेवी नामा पुत्री भई सो धर्मनामा आचार्य के मुख धर्म श्रवणकर इसके यह व्रत लिया जो मैं यावज्जीव अनजाना फल न भखूं।।11।। एक समय चन्द्रवाण नामा भील उसने अकस्मात् गांव घेरे अर गांव के नर नारी सब बंदी में पकड़े यह पद्मदेवी अति रूपवान सो पापी भील इसे भार्या करना विचारा परन्तु यह महा शीलवंती उसके वश न भई अपने व्रत में दृढ़ रही।।13।।

किसी समय इस भील को राजगृह नगर के राजा सिंहरथ ने मारा सो इसकी प्रजा वन विषें भ्रमती भई अर ये बंदी के नर नारी भी भ्रमते भये मार्ग भूल गये हैं सो क्षुधा तृषा कर पीड़ित मूढ जन बिना जाने विष फल खाय कर मूवे अर यह पद्मदेवी व्रतवान इससे अनजाणे फल न भखे अर अनशन कर शरीर तजा सो हेमवत क्षेत्र जघन्य भोगभूमि तहां उपजी अर एक पल्य का आयु भया सो आयु पूर्ण कर स्वयंभूरमण नामा अन्त का द्वीप उसमें सूर्य्यप्रभ नामा गिर उसका अधिपति स्वयंप्रभ नामा देव उसके स्वयंप्रभा नामा देवी भई सो वहां से चयकर इस भरतक्षेत्र विषें जयंत नामा नगर उसका राजा श्रीधर उसके राणी श्रीमती तिनके विमलश्री नामा पुत्री भई। सो भद्रलपुर के राजा मेघनाद को परणाई

उसके मेघाघोष नामा पुत्र भया। सो पृथिवी विषें प्रसिद्ध कई एक दिन में राजा मेघनाद स्वर्ग को प्राप्त भया। तब यह रानी विमलश्री पद्मावती नामा आर्यका के निकट व्रत धार आचम्ल वर्द्धन नामा तप कर बारहवें स्वर्ग सहस्रार नामा इन्द्र के इन्द्राणी भई जिसकी आयु सत्ताईस पल्य भई।।21।। सो स्वर्ग के सुख भोग तहां से चयी सो अरिष्टपुर नगर का राजा स्वर्णनाभ उसके श्रीमती नामा राणी तिनके तू पद्मावती नामा पुत्री भई सो कृष्ण को परणी तुझे पटराणी का पद दिया अब आर्यिका के व्रत धार महातप कर स्त्रीलिंग छेद स्वर्ग विषें देव होय फिर नर भव पाय मुनि व्रत धर निराकार पद पावेगी। यह कथा पद्मावती सुनकर अति प्रसन्न भई मानो मुक्ति ही पाई।।23।। इस भांति भूधर की आठों पटरानी के भव भगवान कहे फिर बलभद्र की माता रोहणी अर केशव की माता देवकी यह दोनों अर अन्य यादव अपने भव भगवान को पूछ कर धर्म विषे आरूढ भये संसार भ्रमण का उपजा है भय जिनके।।24।।

सुर असुर नर अर यादव राजेश्वर सब ही जिनेन्द्र को नमस्कार कर स्तुति कर अपने स्थान को जाय हैं अर पूजा के वास्ते बारंबार आवे हैं।।25।। फिर भगवान नेमीश्वर भव्य जीवों के कल्याण के वास्ते गिरनार से देशान्तर को विहार किया। सूर्य का विहार जगत के कल्याण के वास्ते है तैसे जिनराज का विहार जगत जीवों के कल्याण के वास्ते है।।26।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ वासुदेव-अष्टपटराणीभवान्तर-वर्णनो नाम नवपंचाशत् सर्गः।।59।।

जे मिथ्यादृष्टि तप करैं हैं, ग्रामविषै एक रात्रिविषै बसै हैं, नगरविषै पांच रात्रि, अर सदा ऊर्ध्वबाहु राखै हैं, मास मासोपवास करै हैं, अर वनविषै विचरैं हैं, मौनी हैं, निपरिग्रह ही हैं, तथापि दयावान नाहीं, दुष्ट है हृदय जिनका, सम्यक्त बीज बिना धर्मरूप वृक्षकूं न उपाय सकै। अनेक कष्ट करैं तौ भी शिवालय कहिए मुक्ति उसे न लहें। जे धर्म की बुद्धिकर पर्वतसूं पड़े, अग्निविषै जरैं, जल विषै डूबैं, धरतीविषै गढ़े, वे कुमरणकर कुगतिकूं जावैं हैं। जे पापकर्मी कामना परायण आर्त रौद्र ध्यानी, विपरीत उपाय करैं वे नरक निगोद लहैं। मिथ्यादृष्टि जो कदाचित् दान दे, तप करै, सो पुण्य के उदयकरि मनुष्य अर देव गति के सुख भोगै हैं, परन्तु श्रेष्ठ मनुष्य न होय, सम्यग्दृष्टियों के फल के असंख्यातवें भाग भी फल नाहीं। सम्यग्दृष्टि चौथे गुणठाणे अव्रती है-तौ हूं नियमविषै है प्रेम जिनके सो सम्यकदर्शन के प्रसादसूं देवलोकविषै उत्तम देव होवैं, अर मिथ्यादृष्टि कुलिंगी महातप भी करैं तो देवनि के किंकर हीन देव होंय, बहुरि संसारभ्रमण करैं। – पद्मपुराण भाषावचनिका, पृष्ठ 656

साठवाँ सर्ग

अथानन्तर – कृष्ण की माता देवकी के गजकुमार नामा पुत्र भये सो गजकुमार वसुदेव समान रूपवान अर वासुदेव के मन के प्रिय।।27।। सो बाल्य अवस्था से यौवन अवस्था को प्राप्त भये सो स्त्रीजनों के मन को हरणहारी है कांति जिनकी जब गजकुमार तरुण भये तब वासुदेव इस भाई के परणायवे वास्ते अनेक राजाओं की पुत्री याचीं अर एक सोमशर्मा नामा विप्र उसके क्षत्रिया नामा स्त्री उसके सोमा नामा पुत्री सो अति रूपवान सो उससे गिरधारी ने गजकुमार का विवाह आरंभा सो सब ही यादव हर्षित भये। उस ही समय जगत् के स्वामी जिनराज फिर गिरनार पर पधारे तब सब ही यादव महा मंगल सहित जिनेश्वर के दर्शन को चले।।31।।

तब गजकुमार इनको जाते देखकर किसी खोजे को पूछी – यह उत्साह किसका है? तब खोजे से आदि से लेकर नेमि जिनेश्वर की सब वार्ता कही खोजा महा जिनधर्मी विवेकी उसके कहे से गजकुमार जानी जो श्री नेमिकुमार बाईसवें तीर्थंकर जगत् के तारक हमारे वंशरूप आकाश विषें सूर्य समान प्रगटे हैं तिनके दर्शनों को सब जाय हैं वे मेरे बाबा के पुत्र हैं अर जगत् के नाथ हैं ऐसा जान गजकुमार भी जिनवर की वंदना को गया सूर्य के रथ के समान रथ उस पर चढ़ा हर्ष के रोमांच धरे समोसरण में गया तहां भगवान अरहंतदेव महा लक्ष्मी कर मंडित बारह सभा सहित विराजते थे तिनको प्रणाम कर गजकुमार चक्रपाणि के समीप मनुष्यों की सभा में बैठा तहां भगवान सुर नर असुर तिनको संसार के तिरने का उपाय रत्नत्रय रूप धर्म उसका निरुपण करते थे।।35।।

उस समय जिनेन्द्र को प्रणाम कर कृष्ण अति विनय संयुक्त अपने अर भव्य जीवों के कल्याण के वास्ते पूछे हैं – हे ईश! हे नाथ! हे कृपानिधे! इस भरतक्षेत्र के वर्तमान काल के सब ही तीर्थेश्वर अर चक्रेश्वर अर अर्द्ध चक्रेश्वर अर बलभद्र अर प्रतिनारायण तिन सबों की कथा विशेषता कर मुझे कहो।

यह प्रश्न केशव ने सवों की उत्पत्ति कृष्ण को कहते भये – हे भव्योत्तम! त्रिषष्टी शलाका के पुण्य पुरुषों की उत्पत्ति मैं तोहे कहूँ हूं सो तू सुन पहले तीर्थंकर ऋषभनाथ 1, अजित 2, सम्भव 3, अभिनन्दन 4, सुमति 5, पद्मप्रभ 6, सुपार्श्व 7, चन्द्रप्रभ 8, पुष्पदन्त 9, शीतल 10, श्रेयांस 11, वासुपूज्य 12, विमलनाथ 13, अनन्त 14, धर्म्म 15, शांति 16, कुन्थु 17, अर 18, मल्लि 19, तीन शल्य के नाश करनहारे अर मुनियों के इन्द्र मुनिसुव्रत 20, अर नमिनाथ 21, यह इक्कीस तीर्थंकर मुक्त होय चुके अर बाईसवाँ मैं नेमनाथ 22, अर तेईसवां पार्श्वनाथ 23, अर चौबीसवाँ

महावीर यह दोय होनहार हैं। यह चौबीस तीर्थंकरों के नाम कहे सो इन चौबीसों में आठ तो पूर्व भव विषें जम्बूद्वीप के विदेह के अर पांच पूर्व भव विषें भरतक्षेत्र के अर सात धातकी खण्ड द्वीप के अर चार पुष्करार्द्ध के द्वीप के।।43।।

अर पूर्व भव की इनकी नगरी के नाम कहे हैं ऋषभनाथ अर शान्तिनाथ इनकी पूर्व जन्म की पुण्डरीकणी नामा पुरी अर अजितनाथ की पूर्व जन्म की सुसीमा नामा पुरी फिर अरनाथ की पूर्व जन्म की क्षेमपुरी अर कुन्थुनाथ, सम्भवनाथ, अभिनन्दन इनकी पूर्व जन्म की रत्नसंचय नामा पुरी अर मल्लिनाथ की पूर्व जन्म की बीतशोका नामा पुरी आठ तीर्थंकरों की पूर्व भव की पुरी जम्बूद्वीप के विदेह की जानों अर मुनिसुव्रत नाथ की पूर्व भव की यह भरतक्षेत्र की चंपा नामा नगरी अर नमिनाथ की पूर्व भव की कौशाम्बी नामा पुरी अर नेमिनाथ का पूर्व भव का पुर हस्तनापुर अर पार्श्वनाथ की पूर्व जन्म की अयोध्या नामा पुरी अर महावीर का पूर्व जन्म का छत्राकार नामा पुर यह पांच भरतक्षेत्र के पुर जानों।।46।।

अर सुमतिनाथ की पूर्व भव की धातकी खण्ड द्वीप की पुण्डरीकणी नामा पुरी अर पद्मप्रभ की पूर्व भव की धातकी खण्ड नामा द्वीप की सुसीमा नगरी अखण्ड है लक्ष्मी जिस विषें अर सुपार्श्वनाथ की पूर्व भव की क्षेमपुरी धातकी खण्ड द्वीप विषें प्रसिद्ध अर चन्द्रप्रभ का पूर्व भव का रत्नसंचय नामा पुर सो भी धातकी खण्ड विषें है यह तो धातकी खंड के प्रथम मेरु की विदेह सम्बन्धी जानो अर पुष्पदंत की तथा शीतलनाथ की अर श्रेयांसनाथ की अर वासुपूज्य इन चारों की नगरियों के वही नाम पुण्डरीकणी सुसीमा क्षेमपुरी अर रत्नसंचय।।48।। परन्तु वह चार धातकी खंड द्वीप की अर यह चार पुष्करार्द्ध द्वीप की फिर धातकी खंड द्वीप विषें दोय मेरु तिनमें दूजे मेरु सम्बन्धी दूजा ऐरावतक्षेत्र उस विषें अरिष्टपुर नामा नगर सो अनंतनाथ के पूर्व भव का पुर जानो।।50।। अर धातकी खंड विषें पहला मेरु उस सम्बन्धी तहां का भरतक्षेत्र तहां महापुर नामा नगर सो विमलनाथ के पूर्व भव का पुर है अर उस ही द्वीप में अर उस ही क्षेत्र में भद्रलपुर नामा नगर सो धर्मनाथ का पूर्व भव का पुर जानो।।51।। यह चौबीसों तीर्थंकर के पूर्व भव जन्म के पुर जानों।

अर चौबीसों जिनराजों के पूर्व भव के नाम कहे हैं। वज्रनाभि 1, विमल 2, विपुलवाहन 3, महावल 4, अतिबल 5, अपराजित 6, नंदिषेण 7, पद्म 8, महापद्म 9, अर पद्मगुल्म 10, नलिन गुल्म 11, पद्मोत्तर 12, पद्मासन 13, पदम 14, दशरथ 15, मेघरथ 16, सिंहरथ 17, धनपति 18, वैश्रवण 19, श्रीधर्मा 20, सिद्धार्थ 21, सुप्रतिष्ट 22, आनंद 23, नन्दन 24, यह चौबीस पूर्व जन्म के नाम कहे तिनमें सुप्रतिष्ट मेरा नाम था मैं सुप्रतिष्ट के भव से जयंत नामा विमाण विषें गया तहां से चयकर नेमनाथ भया।।56।। अर पहला जिनवर वृषभ सो तो पूर्व भव विषें वज्रनाभि चक्रवर्ती थे

अर मुनि होय चौदह पूर्व के पाठी भये अर सब पूर्व भव विषें महा मंडलेश्वर राजा थे अर ग्यारह अंग के पाठी थे अर पूर्वो विषें भी प्रबोध था अर कनक समान प्रभा के धारक थे अर सब ही पूर्व भव विषें सिंहनिक्रीडतादि तपों के करणहारे अर एक मास मात्र प्रायोपगमन संन्यास के धरणहारे अर सब ही यथायोग्य स्वर्गलोक गये तहां से चयकर तीर्थेश्वर भये।।58।।

अर इनके पूर्व भवों के दीक्षा दायक गुरु तिनके नाम सुनो। वज्रसेन 1, अरीदम 2, स्वयंप्रभ 3, विमलवाहन 4, सीमंधर 5, पिहताश्र 6, अरिंदव 7, युगंधर 8, सर्वजनानन्द 9, उभयानन्द 10, वज्रदत्त 11, वज्रनाभि 12, सर्वगुप्त 13, त्रिगुप्त 14, चित्तारक्ष 15, विमलवाहन 16, धनरथ 17, सम्बर 18, वरधर्म 19, सुनंद 21, वीतशोक 22, दामर 23, प्रोष्टल 24, यह चौबीस पूर्व भव के इनके दीक्षा गुरु यह सब ही वन्दन योग्य स्तुति करने योग्य निर्मल आचार के धारक संवर कर शोभित मोक्ष के मूल जानो।।64।।

अथानन्तर – चौबीसों तीर्थंकर जिस जिस धाम से आये सो सुनो आदिनाथ धर्मनाथ शांतिनाथ कुन्थुनाथ यह चार जिनराज तो सर्वार्थसिद्धि से आये अर अभिनन्दन अजित स्वामी विजय नामा विमाण से आये।।65।। अर चन्द्रप्रभ अर सुमतिनाथ यह दोनों वैजयन्त विमाण से आये नेमिनाथ अर मल्लिनाथ यह दोनों अपराजित नामा विमान से आये यह पंचानुत्तर के आये कहे। अर पुष्पदंत पंद्रहवें आरण नामा स्वर्ग तहां से आये अर शीतलनाथ अच्युत नामा सोलहवां स्वर्ग तहां के पुष्पोत्तर नामा विमान से आये अर श्रेयांसनाथ अर अनन्तनाथ अर महावीर यह बारहवां सहस्रार नामा स्वर्ग तहां से आये।।67।।

अर विमलनाथ अर पार्श्वनाथ अर मुनिसुव्रत अर सम्भवनाथ सुपार्श्वनाथ पद्मप्रभ यह ग्रैवेयक के आये हैं तिनमें अधोग्रीव मध्य ग्रीव उपरिम जाननी अर वासुपूज्य स्वामी महाशुक्र नामा दसवां देवलोक तहां से आये।।69।। यह तीर्थंकरों के आवने के स्वर्ग बताये। अब चौबीस तीर्थंकरों के जन्म के दिवस कहे हैं ऋषभदेव का जन्म चैत्र बदी नवमी अर अजित का माघ सुदी दशमी अर सम्भवनाथ का मार्गशिर सुदी पूर्णमासी अर अभिनन्दन का माघ सुदी वारस अर सुमतिनाथ का श्रावण सुदी ग्यारस अर पद्मप्रभ का कार्तिक वदी तेरस अर सुपार्श्वनाथ का जेठ सुदी बारस अर चन्द्रप्रभ का पोष बदी ग्यारस अर पुष्पदन्त का मार्गशिर सुदी पडवा अर शीतलनाथ का माह बदी बारस।।74।।

अर श्रेयांसनाथ का फागुण बदी ग्यारस अर वासुपूज्य का फाल्गुण बदी चौदश अर विमल नाथ का माह सुदी चौदश अर अनन्तनाथ का जेठ बदी बारस अर धर्मनाथ का माह सुदी तेरस अर शान्तिनाथ का जेठ बदी चौदश अर कुन्थुनाथ का बैसाख सुदी पडवा अर अरनाथ का मार्गशिर सुदी चौदश अर मल्लिनाथ का मार्गशिर सुदी ग्यारस अर मुनिसुव्रत का आसोज सुदी वारस अर नमिनाथ

का आषाढ़ वदी दशमी अर नेमनाथ का वैसाख सुदी तेरस अर पार्श्वनाथ का पोष बदी ग्यारस महावीर का चैत्र सुदी तेरस यह सब ही तीर्थेश्वर नायक अर अनन्तवीर्य के धारक हैं महानिर्मल स्वरूप हैं शान्ति के कर्त्ता हैं आताप के हर्त्ता हैं इनकी महिमा केवलज्ञान ही गम्य है यह सब समान हैं काल के योग्यकर आयु की अर काय की लघुता अर दीर्घता है अर किसी प्रकार लघुता दीर्घता नहीं है यह तीर्थंकरों के जन्म के दिन कहे अर आगे इनके माता पिताओं के नाम जन्मक्षेत्र अर जन्मभूमि अर जिन वृक्षों के नीचे दीक्षा धारी सो वृक्ष अर निर्वाण भूमि ये कहूं सूं सो तू सुन। इस भांति केशव को नेमि जिनेन्द्र कहते भये अर राजा श्रेणिक से गौतम स्वामी कहते भये ऋषभ देव का पिता नाभि माता मरुदेवी अर जन्म नक्षत्र उत्तराषाढ अर जन्मभूमि अयोध्या अर दीक्षा धरने का वृक्ष बड अर निर्वाणभूमि कैलाश अर अजित का पिता राजा जितशत्रु माता विजया जन्म नक्षत्र रोहणी जन्मभूमि अयोध्या अर दीक्षावृक्ष सप्तच्छद अर निर्वाणभूमि सम्मेद शिखर।।84।।

अर सम्भवनाथ का पिता राजा जितार अर माता सेनाराणी अर ज्येष्ठा नक्षत्र अर जन्मपुरी श्रावस्ती अर दीक्षा का वृक्ष अर निर्वाणभूमि सम्मेद शिखर यह तीर्थंकरों के माता पितादिक तुम्हारी रक्षा करो अर तुमको आनन्द के वास्ते होहू अर अभिनन्दन का पिता राजा सम्बर अर माता सिद्धार्था पुरी अयोध्या अर जन्म का पुनर्वसु नक्षत्र अर सरल जाति का दीक्षा वृक्ष अर निर्वाणभूमि सम्मेद शिखर अर सुमतिनाथ का पिता राजा मेघप्रभ अर सुमंगला नामा जननी अर जन्मनक्षत्र मघा अर जन्मपुरी अयोध्या अर दीक्षा वृक्ष प्रियंगु अर निर्वाण क्षेत्र सम्मेद शिखर। यह भगवान सुमतिनाथ तुझे सुमति देवौ अर पद्मप्रभ का पिता राजा धरण माता राणी सुसीमा अर जन्मनक्षत्र चित्रा अर जन्मपुरी कौशांबी अर दीक्षावृक्ष प्रियंगु अर मुक्तिक्षेत्र सम्मेद शिखर।।88।। भगवान पद्मप्रभु तुझे मंगल के दाता होवो अर सुपार्श्वनाथ का पिता राजा सुप्रतिष्ट माता राणी पृथिवी अर जन्म नक्षत्र विशाखा अर जन्मपुरी काशी अर दीक्षावृक्ष सिरीष अर निर्वाणभूमि सम्मेद शिखर।।89।।

अर चन्द्रप्रभ का पिता राजा महासेन अर माता लक्ष्मणा जन्मभूमि चन्द्रपुर जन्मनक्षत्र अनुराधा अर दीक्षा तरु नागवृक्ष निर्वाण क्षेत्र सम्मेद शिखर।।90।। अर पुष्पदन्त का पिता राजा सुग्रीव अर माता रानी रामा अर जन्मनक्षत्र मूल जन्मपुरी काकंदी अर दीक्षातरु शालिवृक्ष अर मुक्तिक्षेत्र सम्मेद शिखर ऐसे पुष्पदंत तुझे परमपद के दाता होहू।।91।। अर शीतलनाथ का पिता राजा दृढरथ अर माता रानी सुनन्दा अर जन्मपुरी भद्रला जन्मनक्षत्र पूर्वाषाढा अर दीक्षा का पलास वृक्ष अर मुक्तिक्षेत्र सम्मेद शिखर।।92।। अर श्रेयांसनाथ का पिता राजा विष्णु अर माता विष्णुश्री अर जन्मनक्षत्र श्रवण अर जन्मभूमि सिंहनादपुर अर दीक्षावृक्ष तिन्दुक अर निर्वाणक्षेत्र सम्मेद शिखर यह श्रेयांसनाथ तुझे

कल्याण के कर्ता होवो।।93।। अर वासुपूज्य का पिता राजा वसुपूज्य अर माता राणी पटला अर जन्मनक्षत्र सतभिषा अर जन्मपुरी चम्पापुर अर दीक्षावृक्ष जयांघ्रीप अर निर्वाणभूमी चंपापुरी ही जानो।।94।।

अर विमलनाथ का पिता राजा कृतवर्मा अर माता रानी शर्म्मा अर जन्म नक्षत्र उत्तराभाद्रपदा अर जन्मपुरी कांपिल्य अर दीक्षा का जम्बूवृक्ष अर निर्वाणक्षेत्र सम्मेद शिखर यह भगवान विमल तुझे निर्मल करो अर तेरी शल्य हरो।।95।। अर अनन्तनाथ का जन्म राजा सिंहसेन अर जननी सर्वंयशा अर जन्मपुरी अयोध्या अर जन्मनक्षत्र रेवती अर दीक्षावृक्ष पीपल अर मुक्तिक्षेत्र सम्मेद शिखर यह भगवान अनन्त तुम भव्य जीवों को अन्तरहित करो।।96।। धर्मनाथ का पिता राजा भानु अर माता रानी सुव्रता अर जन्मनक्षत्र पुष्य अर जन्मभूमि रत्नपुर अर दीक्षावृक्ष दधिपर्ण अर मुक्तिक्षेत्र सम्मेद शिखर ऐसे धर्म्मनाथ तुम भव्य जीवों को धर्म के दाता होवो।।97।। अर शान्तिनाथ का पिता राजा विश्वसेन अर माता रानी ऐरा अर जन्मनक्षत्र भरणी अर जन्मभूमि हस्तिनागपुर अर दीक्षावृक्ष नन्दी अर निर्वाणक्षेत्र सम्मेद शिखर वे शान्ति जिनेश्वर तुमको परम शांति के कर्ता होवो।।98।। अर कुन्थुनाथ का पिता राजा सूर्य अर मामा श्रीमती अर जन्मनक्षत्र कृतिका अर जन्मभूमि हस्तिनागपुर अर दीक्षावृक्ष तिलकतरु अर निर्वाणक्षेत्र सम्मेद शिखर वे कुन्थु जिनेश्वर तुम्हारे दोष निवारो फिर अरनाथ का पिता सुदर्शन अर माता सुमित्रा अर जन्मनक्षत्र रोहणी जन्मभूमि हस्तिनागपुर अर दीक्षावृक्ष आम्र अर निर्वाण सम्मेद शिखर वह अरनाथ स्वामी तुम्हारे अशुभ कर्म निवारो।।100।।

अर मल्लिनाथ का पिता राजा कुम्भ अर माता रानी रक्षिता अर जन्मनक्षत्र अश्वनी और अर जन्मभूमि मिथिलापुर दीक्षावृक्ष अशोक अर निर्वाणक्षेत्र सम्मेद शिखर वह भगवान मल्लि तुम्हारे रागादिक मल हरो अर मुनिसुव्रतनाथ का पिता सुमित्र अर माता राणी पद्मावती अर जन्मनक्षत्र श्रवण अर जन्मभूमि कुशाग्रपुर अर दीक्षावृक्ष चंपक अर मुक्तिक्षेत्र सम्मेद शिखर वह भगवान मुनिसुव्रत तुमको परम आनन्द के दायक होवो अर नमिनाथ का पिता राजा दिजय अर माता राणी वप्रा अर जन्मनक्षत्र अश्वनी अर जन्मपुरी मिथिला अर दीक्षावृक्ष वौलसरी अर निर्वाणक्षेत्र सम्मेद शिखर वह भगवान नमिनाथ तिहारे अशुद्ध भाव हरो क्रोध, मान, माया, लोभ की निर्वृत्ति करो।।3।। अर नेमिनाथ का पिता समुद्रविजय माता शिवादेवी जन्मनक्षत्र चित्रा जन्मभूमि सौर्यपुर अर दीक्षावृक्ष मेषश्रणी अर निर्वाणभूमि गिरनार गिर।।4।। अर पार्श्वनाथ का पिता राजा अश्वसेन अर माता रानी वामा अर जन्मनक्षत्र विशाखा अर जन्मपुरी वाणारसी जिसका नाम काशी भी कहे हैं अर दीक्षावृक्ष भव अर निर्वाणक्षेत्र सम्मेद शिखर अर महावीर का पिता राजा सिद्धार्थ माता रानी प्रियंकारिणी अर

जन्मनक्षत्र उत्तरफाल्गुणी अर जन्मभूमि कुण्डलपुर अर दीक्षा का साल वृक्ष अर निर्वाण पावापुर वह भगवान अंतिम तीर्थंकर तिहारे कर्म निवारो अर आनंद के कर्ता होवो।।6।।

दीक्षा धरने के वृक्ष हैं तिनको चैत्य वृक्ष भी कहे हैं सो महावीर के तो यह बत्तीस धनुष ऊंचा है अर अन्य सबों के देह की उच्चता से द्वादश गुण है अर निर्वाण गमन के नक्षत्र कहे है सुपार्श्वनाथ का निर्वाणनक्षत्र अनुराधा अर चंद्रप्रभु का निर्वाणनक्षत्र ज्येष्ठा अर श्रेयांस का धनिष्टा नक्षत्र अर वासुपूज्य का नक्षत्र अश्विनी विमलनाथ का भरणी अर महावीर का स्वाती नक्षत्र अर अन्य सबों के जन्मनक्षत्र ही निर्वाण नक्षत्र जानो यह निर्वाण कल्याण के नक्षत्र कहे अर शांति, कुन्थु, अर, यह तीन तीर्थंकर तो चक्रेश्वर ही भये अर अन्य सब तीर्थेश्वर महा मंडलेश्वर भये।।10।।

अर चंद्रप्रभ पुष्पदंत यह दोय शुक्ल वर्ण भये अर मुनिसुव्रत अर नेमनाथ यह दोनों अंजन गिर समान स्याम सुन्दर भये। अर पद्मप्रभु कमल के रंग समान अरुण भये। अर वासुपूज्य केसूला के पुष्प समान अरुण वर्ण भये अर सुपार्श्वनाथ प्रियंगुमणि समान हरित वर्ण भये अर पार्श्वनाथ मेघ घटा समान सुन्दर वर्ण भये अर अन्य सोलह सोलहवानी के ताये वर्ण स्वर्ण समान जानो अर मुनिसुव्रत अर नेम यह दोनों पहले कृष्ण वर्ण कहे तिनमें मुनिसुव्रत तो अंजन गिर समान श्याम जानो अर नेमनाथ नीलकंठ जो मयूर उसके कंठ समान वर्ण जानो।।14।।

अर वासुपूज्य मल्लिनाथ नेमनाथ पार्श्वनाथ महावीर यह पांच तो कुमार काल विषें मुनि भये इन्होंने विवाह न किया अर राज भी न किया अर अन्य सब राजा भये अर विवाह किये अर राज तज वैराग्य भये।।15।। अर ऋभष का तप कल्याणक विनतापुरी विषें अर नेमि का तप कल्याणक द्वारिका विषें अर अन्य सबों का जन्मभूमि विषें तप कल्याणक जानों।।16।। अर मल्लिनाथ पार्श्वनाथ यह तो दीक्षा लिये पीछे तेले पारने का नेम करते भये अर वासुपूज्य स्वामी इकन्तरा उपवास धारते भये अर सब बेले पारणी करते भये अर ऋषभ देव प्रथम छै महीने उपवास धारतै भये फिर छै महीने का अन्तराय भया। अर उस पीछे बेले पारणा ही किया अर श्रेयांसनाथ सुमतिनाथ अर मल्लिनाथ यह तीनों पूर्वाह्न समय दीक्षा धारते भये अर सब अपराह्न काल विषें तप धारते भये ऋषभ देव तो सिद्धार्थ वन विषें मुनि भये अर महावीर ज्ञातृ वन विषें जिनदीक्षा धारी अर वासुपूज्य क्रीडोद्यान नामा वन विषें वैराग्य धारा अर धर्मनाथ वप्रका नामा वन विषें विरक्त भये पार्श्वनाथ मनोरमा नामा उद्यान विषें यति भये अर मुनिसुव्रतनाथ नील गुफा के निकट निर्ग्रंथ भये अर सब तीर्थंकर नगर के निकट सहस्राम्र नामा वन विषें वीतरागता धारते भये।।21।।

अब चौबीसों जिनराजों की तप कल्याणक पालकियों के नाम कहे हैं – सुदर्शना 1, सुप्रभा 2,

सिद्धार्था 3, अर्थसिद्धा 4, अभयकरी 5, निर्वृतिकरी 6, मनोरमा 7, मनोहरा 8, सूर्यप्रभा 9, शुक्रप्रभा 10, विमलप्रभा 11, पुष्पप्रभा 12, देवदत्ता 13, सगरदत्ता 14, नागदत्ता 15, सिद्धार्थ सिद्धिका 16, विजया 17, वैजयन्ती 18, जयन्ती 19, अपराजिता 20, उत्तर 21, देवकुरु 22, विमलाभा 23, चंद्राभा 24, यह चौबीस जिनवरों की अनुक्रम में चौबीस पालकी जाननी।।26।।

अब चौबीसों की दीक्षातिथि कहे हैं ऋषभदेव की चैत्र वदी 1, अर मुनिसुव्रत की वैशाख बदी नवमी अर कुंथुनाथ की वैशाख सुदी पड़वा अर सुमतिनाथ की वैशाख सुदी नवमी अर अनन्तनाथ की ज्येष्ठ बदी बारस अर शांतिनाथ की जेठ वदी तेरस अर सुपार्श्वनाथ की ज्येष्ठ सुदी बारस अर नमिनाथ की आषाढ़ बदी दशमी अर नेमनाथ की सावण सुदी चौथ अर पद्मप्रभ की कार्तिक बदी तेरस अर महावीर की मार्गशिर बदी दशमी अर पुष्पदंत की मार्गशिर सुदी पड़वा।।32।। अर अरनाथ की मार्गशिर सुदी दशमी अर सम्भवनाथ की मार्गशिर सुदी पूर्णमासी अर मल्लिनाथ की मार्गशिर सुदी एकादशी अर चन्द्रप्रभ अर पार्श्वनाथ इन दोनों की पौष बदी एकादशी।।34।। अर शीतलनाथ की माहबदी द्वादशी अर विमलनाथ की महा सुदी चतुर्थी अर अजितनाथ की माह सुदी नवमी अर अभिनन्दन की माह सुदी द्वादशी अर धर्मनाथ की माह सुदी त्रयोदशी।।36।। अर श्रेयांसनाथ की फागुण बदी तेरस अर वासुपूज्य की फागुण बदी चौदश।।37।। यह सबों की दीक्षा तिथि जानों अर आदिनाथ स्वामी तो दीक्षा धरे पीछे बारवें दिन पारणा किया।।38।। अर औरों ने तीजे दिन पारणा किया अर मल्लिनाथ पार्श्वनाथ इन दोनों ने तेला पारणा किया अर वासुपूज्य एकान्तरे पारणा किया ऋषभ देव तो पारणा विषें पवित्र इक्षुरस लिया औरों ने गाय के दूध की खीर का पारणा किया।

अथानन्तर – चौबीसों तीर्थंकरों के प्रथम पारणे के पुरों के अनुक्रम में नाम कहे हैं – हस्तिनापुर 1, अयोध्यापुरी 2, श्रावस्ती 3, विनता 4, विजयपुर 5, मंगलपुर 6 पाटलीखंड 7 पद्मखंड 8 श्वेतपुर 9 अरिष्टपुर 10 इष्टपुर 11 सिद्धार्थपुर 12, महापुर 13, धान्यपुर 14, वर्द्धमानपुर 15, सौमनसपुर 16, मन्दरपुर 17, हस्तिनापुर 18, चक्रपुर 19, मिथिलापुर 20, राजगृहपुर 21, द्वारावतीपुर 22, कामांकृतपुर 23, कुण्डपुर 24 यह चौबीसों जिनराज के प्रथम पारणा के पुर कहे। अब प्रथम पारणा देनहारों के अनुक्रम से नाम कहे हैं सो तुम सुनो। राजा श्रेयांस 1 ब्रह्मदत्त 2, सुरेंद्रदत्त 3, इन्द्रदत्त 4, पद्माक 5, सोमदत्त 6, महादत्त 7, सोमदेव 8, पुहुपक 9, पुनर्वसु 10, सुनंद 11, जय 12, विशाख 13, धर्म सिंह 14, सुमित्र 15, धर्म मित्र 16, अपराजित 17, नंदिषेण 18, वृषभदत्त 19, दत्त 20, सन्नय 21, बरदत्त 22, धन्य 23, वकुल 24, यह चौबीसों प्रथम पारणा देनहारों के नाम कहे हैं सो महा भव्य हैं इन सबों के पंचाश्चर्य भये।।51।। सो साढ़े बारह कोड़ि अर इतने ही हजार रत्न वर्षे।।52।।

अर इन चौबीसों प्रथम पारणा देनहारों के आदि के दोय तो श्यामसुन्दर अर सब ताये हुए सुवर्ण समान।।53।। इनमें कईएक तो तद्भव मुक्ति गये कईएक तीजे भव मुक्ति गये ऋषभ मल्लि पार्श्वनाथ उनको तो तेला व्यतीत भये केवल उपजा अर वासुपूज्य को एक उपवास के दूजे दिन केवल उपजा अर सबों को बेला व्यतीत भये केवल उपजा।।55।। अब चौबीसों जिनराजों के केवल कल्याणक के क्षेत्र कहे हैं। ऋषभदेव का केवल कल्याणक तो पुरमिताल नामा नगर उसके निकट सकटामुख नामा वन विषें अर नेमनाथ का गिरनार गिर अर पार्श्वनाथ का काशी के निकट।।56।। अर महावीर का ऋजुकूला नामा नदी के तट अर तीर्थंकरों का केवल कल्याणक महा मनोहर वनों विषें होता भया।।।57।।

अर ऋषभदेव श्रेयांसनाथ मल्लिनाथ अर नेमनाथ पार्श्वनाथ इनको तो केवलज्ञान की उत्पत्ति प्रभात समय भई अर औरों को केवलोत्पत्ति दिन के पिछले पहर भई।।58।। अर ऋषभदेव के केवल उपजने की तिथि तो फागुण बदी एकादशी अर मल्लिनाथ की फागुण बदी द्वादशी अर मुनिसुव्रत की फागुण बदी छठ अर सुपार्श्वनाथ चंद्रप्रभ इन दोनों की फागुण बदी सप्तमी अर पार्श्वनाथ की चैत बदी चतुर्थी।।60।। अनन्तनाथ की चैत बदी अमावस्या अर नमिनाथ की चैत सुदी तृतीया कुंथुनाथ की चैत सुदी दशमी अर सुमतिनाथ अर पद्मप्रभ की भी चैत सुदी दशमी अर महावीर की वैशाख सुदी दशमी अर नेमिनाथ की आसोज सुदी एकम अर सम्भवनाथ की कार्तिक बदी पंचमी अर पुष्पदंत की कार्तिक सुदी तृतीया फिर अरनाथ की कार्तिक सुदी द्वादशी।।63।। अर शीतलनाथ की पौष वदी चौदश अर विमलनाथ की पौष सुदी दशमी अर शांतिनाथ की पौष सुदी ग्यारस अर अजितनाथ की पौष सुदी ग्यारस अर अभिनन्दन अर धर्मनाथ की पौष सुदी पूर्णमासी।।65।। अर श्रेयांसनाथ की माह बदी अमावस्या अर वासुपूज्य की माह सुदी दोयज।।66।। यह चौबीसों तीर्थंकरों की केवल उपजने की तिथि कही।

अथानन्तर – चौबीसों तीर्थंकरों की निर्वाणतिथि कहे हैं। ऋषभदेव की निर्वाणतिथि माह बदी चतुर्दशी अर पद्मप्रभ की फागुण बदी चौथ अर सुपार्श्वनाथ की फागुण बदी छठ अर मुनिसुव्रत की फागुण बदी बारस मल्लिनाथ अर वासुपूज्य इनकी फागुण सुदी पंचमी।।68।। अर अनन्तनाथ फिर अरनाथ इन दोनों की चैत बदी बारस अर अजितनाथ की चैत सुदी पंचमी अर सम्भवनाथ की सुद चैती छठ अर सुमतिनाथ का चैत सुदी एकादशी अर नमिनाथ की वैशाख बदी चतुर्दशी अर कुन्थुनाथ की वैशाख सुदी एकादशी अर अभिनन्दन की वैशाख सुदी सप्तमी अर शांतिनाथ की जेठ बदी चतुर्दशी अर धर्मनाथ की जेठ सुदी चतुर्थी अर विमलनाथ की आसाढ़ बदी अष्टमी अर नेमिनाथ की आसाढ़ सुदी अष्टमी अर पार्श्वनाथ की श्रावण सुदी सप्तमी अर श्रेयांसनाथ की श्रावण सुदी पूर्णमासी

अर चन्द्रप्रभ की भादवा सुदी सप्तमी पुष्पदंत की भादवा सुदी अष्टमी अर शीतलनाथ की आसोज सुदी पंचमी अर महावीर की कार्तिक बदी चतुर्दशी। यह चौबीसों तीर्थेश्वरों की निर्वाण तिथि कही।।76।।

अर ऋषभ अजित श्रेयांस शीतल अभिनन्दन सुमति सुपार्श्व चन्द्रप्रभ, यह प्रभु तो पूर्वाह्न कहिये दिन के पहिले पहर मुक्त भये अर सम्भव पद्मप्रभ पुष्पदंत, यह दिन के पिछले पहर मुक्त भये अर वासुपूज्य विमल अनन्तनाथ शांतिनाथ कुंथुनाथ मल्लिनाथ मुनिसुव्रत नेमिनाथ पार्श्वनाथ, इनकी मुक्ति रात्रि समय भई अर धर्मनाथ अरनाथ नमिनाथ अर महावीर इनकी मुक्ति अरुणोदय बेला भई। यह तीर्थंकरों का मुक्ति होने का समय कहा। यह सब तीर्थंकर धर्म के कर्ता अर कर्म के हर्ता हैं।।80।। अर ऋषभ वासुपूज्य अर नमिनाथ तो पद्मासन से मुक्त भये अर सब कायोत्सर्ग आसन से मुक्त भये अर आदि तीर्थंकर अंतिम तीर्थंकर इनके दोय के तो चौदह दिन पहली समोसरन विघटा अर दिव्य ध्वनि खिरनेते रही अर सबों के समोसरण एक महीने पहले विघटे अर दिव्यध्वनि खिरने से रही।।82।।

अथानन्तर – चौबीसों जिनेंद्रों के साथ जितने मुक्त गये तिनकी संख्या कहे हैं। महावीर के साथ छत्तीस मुनि मुक्त भये अर पार्श्वनाथ के साथ पांच सौ छत्तीस अर इतने ही नेमनाथ अर मल्लिनाथ के साथ पांच सौ मुनि अर शांतिनाथ के साथ नव सौ मुनि अर धर्मनाथ के साथ आठ सौ एक मुनि अर विमलनाथ के साथ छै हजार छै सो बारां।।84।। अर अनंतनाथ के साथ सात हजार पांच सौ सात अर पद्मप्रभ के साथ तीन हजार आठ सौ अर ऋषभदेव के साथ दश हजार अर बाकी तीर्थंकरों के साथ एक एक हजार जानों। यह चौबीसों के साथ मुनि मुक्त भये तिनका कथन किया।।86।।

अब बारह चक्रवर्ती के नाम सुनो – भरत सगर मघवा सनत्कुमार शांति कुंथु अर।।87।। सुभूमि, महापद्म, हरिषेण, जयसेन, ब्रह्मदत्त यह बारह चक्रवर्ती षट् खंडों के नायक हैं। अब नव नारायण तिनके नाम कहे हैं – त्रिपृष्ठ 1 द्विपृष्ठ 2 स्वयंभू 3 पुरुषोत्तम 4 पुरुषसिंह 5 पुण्डरीक 6 दत्त 7 लक्ष्मण 8 कृष्ण 9 यह नव वासुदेव तीन खण्ड के स्वामी अर्द्ध चक्री शत्रुओं के प्रताप को खण्डित करणहारे हैं।।90।। अर इनके बड़े भाई बलभद्र तिनके नाम सुनो। विजय, अचल, सुधर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नंदी, नंदीमित्र, राम, पद्म, यह नव बलभद्र कहे।।91।।

अर नारायण के शत्रु प्रतिनारायण नव तिनके नाम सुनो अश्वग्रीव, तारक, मेरुक, निशंभु, मधुकैटभ, बली प्रहरण, रावण, जरासिंध यह नव प्रतिनारायण कहे तिनमें आठ तो विद्याधर अर एक जरासिंध भूमिगोचरी।।93।। यह नारायण प्रतिनारायण बलभद्र नव नव कहे तिनमें बलदेव तो

ऊर्द्धगामी हैं। इन पूर्व भव विषें भोगाभिलाष रहित तप किया अर अर्द्धचक्री हरि प्रतिहरि इन निदान सहित महा तप किया है, इसलिये वैराग्य के अधिकारी नहीं।।95।।

अब यह चक्रवर्त्यादिक जिस समय भये सो समय कहे हैं। पहला भरत चक्रवर्ती तो ऋषभ देव के समय भया अर दूजा सगर अजितनाथ के समय भया अर तीजा मघवा अर चौथा सनत्कुमार यह धर्मनाथ को मुक्त भये पीछे शांतिनाथ के पहले भये अर शांति, कुंथु, अरनाथ यह तीन चक्रवर्ती तीर्थंकर ही भये सो इनका वही समय अर आठवां सुभौम अरनाथ स्वामी को मुक्ति भये पीछे मल्लिनाथ से पहले भये।।96।। अर मल्लिनाथ को मुक्ति भये पीछे मुनिसुव्रतनाथ से पहली नव में महापद्म चक्रवर्ती भये अर मुनिसुव्रत पीछे अर नमिनाथ पहले दशमें चक्रवर्ती हरिषेण भये अर नमिनाथ पीछे नेमिनाथ पहिले ग्यारहवें चक्रवर्ती जयसेन भये अर नेमनाथ पीछे अर पार्श्वनाथ पहले बारहवें चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त। यह बारह चक्रवर्ती तिनमें आठवां सुभौम सप्तमी धरा गये अर बारहवां ब्रह्मदत्त भी उसी जगह अर तीजा मघवा अर चौथा सनत्कुमार यह दोनों तीजे स्वर्गदेव भये। बाकी आठों आठ कर्म हण निर्वाण गये अर जो स्वर्गादि विषें गये हैं सो भी थोड़े ही भव में सिद्धपद पावेंगे। यह महापुरुष मुक्ति ही के अधिकारी हैं।।99।।

अब नव नारायण कौन समय भये सो सुनो। पहला नारायण तो श्रेयांसनाथ के समय भया अर दूजा वासुपूज्य के समय भया अर तीजा विमलनाथ के समय भया अर चौथा अनंतनाथ के समय भया अर पांचवां धर्मनाथ के समय भया। यह पांच तो श्रेयांसनाथ से लेकर धर्मनाथ के समय पर्यंत भये। पहले नारायण त्रिपृष्ट उसे आदि देव पुरुषसिंह पर्यंत यह पांच नारायण तो पांच तीर्थंकरों के समय भये अर छठा पुण्डरीक नामा नारायण अरनाथ पीछे अर मल्लिनाथ पहले भया अर मल्लिनाथ पीछे अर मुनिसुव्रत पहले सातवां दत्त नामा नारायण भया।।100।। अर मुनिसुव्रत के पीछे अर नमिनाथ के पहिले आठवां नारायण लक्ष्मण भया। अर नवां नारायण कृष्ण नेमनाथ के समय है सो प्रत्यक्ष नेमनाथ को पद्म नामा बलभद्र सहित धर्म के प्रश्न करे है।।1।। इनमें पहला त्रिपृष्ट तो माघवी पधारे अर दूजा द्विपृष्ठ तीजा स्वयंभू चौथा पुरुषोत्तम पांचवां पुरुषसिंह अर छठा पुण्डरीक यह पांच मधवी पधारे अर सातवां दत्त अरिष्टा पधारे आठवां और नवमां मेघा यह सब निर्वाण के अधिकारी हैं।।2।। और बलिभद्र नव तिनमें विजय, अचल, स्वधर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नंदी, नंदीमित्र, रामचन्द्र, यह आठ तो आठों कर्म खपाय परम धाम पधारे और नवमां पद्मनामा बलदेव कृष्ण का ज्येष्ठ भ्राता मुनिव्रत धर पांचवां ब्रह्म स्वर्ग तहां देव होवेंगे और कृष्ण तीर्थेश्वर पद धारेंगे तिनके समय बलभद्र सिद्ध पद पावेंगे। यह सब शलाका पुरुष सिद्ध क्षेत्र के पात्र हैं।

अथानन्तर – चौबीसों तीर्थंकरों के शरीर की उच्चता कहे हैं। ऋषभदेव का शरीर ऊंचा धनुष

पांच सौ और अजितनाथ का साढ़े चार सौ और सम्भवनाथ का चार सौ अभिनंदन का साढ़े तीन सौ अर सुमतिनाथ का तीन सौ, पद्मनाथ का अढ़ाई सौ अर सुपार्श्वनाथ का दोय सौ चंद्रप्रभ का डेढ़ सौ पुष्पदंत का सौ धनुष। यहाँ तक पचास पचास धनुष घटे शीतलनाथ का शरीर धनुष नव्वे श्रेयांस का धनुष अस्सी वासुपूज्य सत्तर, विमल का साठ अनन्तनाथ का पचास यहां तक दश दश धनुष घटे धर्मनाथ का शरीर धनुष पैतालीस शान्तिनाथ का चालीस कुन्थुनाथ का पैंतीस, अरनाथ का तीस मल्लिनाथ का पच्चीस मुनिसुव्रत का बीस, नमिनाथ का पन्द्रह, नेमनाथ का दश धनुष यहां तक पांच पांच धनुष घटे अर पार्श्वनाथ का शरीर नव हाथ और वर्द्धमान का सात हाथ यह तीर्थंकरों की देह की ऊंचाई कही अर चक्रवर्तियों के देह की उच्चता कहे हैं पहले चक्रवर्ति का देह धनुष पांच सौ ऊंचा दूसरे का साढ़े चार सौ तीसरे का धनुष साड़े वियालीस चौथे का साढ़े इकतालीस पांचवें का चालीस छठे का पैंतीस सातवें का आठवें का अठाईस नवमें का बाईस दशवें का बीस ग्यारहवें का चौदह बारहवें का धनुष सात। यह चक्रवर्तियों के शरीर ऊंचाई कही।।9।।

अब नव नारायण और नव प्रतिनारायण अर नव बलभद्र इनके शरीर की ऊंचाई कहे हैं। धनुष अस्सी, सत्तर, साठ, पचपन, चालीस, छब्बीस, बाईस, सोलह अर दश धनुष यह ऊंचाई नारायण प्रतिनारायण अर बलभद्रों के शरीर की कहा नारायण प्रतिनारायण बलभद्र यह तीन पदवीं के धारक एक समय में होवें इसलिये काय की ऊंचाई तो तीनों का समान है अर आयु में किंचित् भेद है सो आगे कहियेगा।

अब चौबीसों तीर्थंकरों की आयु कहे हैं। ऋषभदेव की आयु चौरासी लाख पूर्व और अजितनाथ की बहत्तर लाख पूर्व सम्भवनाथ की साठ लाख पूर्व अभिनन्दन की पचास लाख पूर्व सुमतिनाथ चालीस लाख पूर्व पद्मप्रभ की तीस लाख पूर्व सुपार्श्वनाथ की बीस लाख पूर्व चन्द्रप्रभ की दश लाख पूर्व पुष्पदंत की दोय लाख पूर्व और शीतलनाथ की एक लाख पूर्व। यहाँ तक पूर्व की आयु भई और श्रेयांस की चौरासी लाख वर्ष वासुपूज्य की बहत्तर लाख वर्ष विमलनाथ की साठ लाख वर्ष अनन्त नाथ की तीस लाख वर्ष धर्मनाथ की दस लाख वर्ष शांतिनाथ की एक लाख वर्ष।।31।। अर कुन्थुनाथ की पिचाणवें हजार वर्ष अरनाथ की चौरासी हजार वर्ष और मल्लिनाथ की पचपन हजार वर्ष मुनिसुव्रत की तीस हजार वर्ष नमिनाथ की दस हजार वर्ष नेमिनाथ की एक हजार वर्ष, पार्श्वनाथ की सौ वर्ष महावीर की बहत्तर वर्ष। यह तीर्थंकरों की आयु कही। वह तीर्थंकर तुझे मंगल के कर्ता होओ।।15।।

और बारह चक्रवर्तियों की आयु कहे हैं। पहला भरत उसकी आयु चौरासी लाख पूर्व और दूसरे की बहत्तर लाख पूर्व तीसरे की पांच लाख पूर्व, चौथे की तीन लाख वर्ष पांचवें की एक लाख वर्ष

www.vitragvani.com

छठे की पिचानवें हजार वर्ष सातवें की चौरासी हजार वर्ष, आठवें की साठ हजार वर्ष, नवमें की तीस हजार वर्ष, दशवें की छब्बीस हजार वर्ष, ग्यारहवें की तीन हजार वर्ष, बारहवें की सात सौ वर्ष, यह चक्रवर्ती की आयु कही। अब नारायणों की आयु सुनो। पहले की चौरासी लाख वर्ष, दूसरे की बहत्तर लाख वर्ष तीसरे की साठ लाख वर्ष, चौथे की तीस लाख वर्ष, पांचवें की दश लाख वर्ष, सातवें की तीस हजार वर्ष, आठवें की बारह हजार वर्ष, नवमें की एक हजार वर्ष, यह नारायण की आयु कही।

अर प्रतिनारायणों की भी इस ही प्रकार जाननी अर बलभद्रों की आयु कछु अधिक है।।21।। सो कहे हैं – पहले बलभद्र की आयु सत्तासी लाख वर्ष, अर दूसरे की सत्तर लाख वर्ष, तीसरे बलभद्र की पैंसठ लाख वर्ष, चौथे की बत्तीस लाख वर्ष, पांचवें की कुछ एक अधिक दश लाख वर्ष, छठे की पैंसठ हजार वर्ष, सातवें की बत्तीस हजार वर्ष, आठवें की सतरह हजार वर्ष, नवमें की बारह सौ वर्ष।।22।। अर भगवान आदिनाथ से लेय अर धर्मनाथ पर्यन्त पंद्रह तीर्थंकरों में ऋषभ अर अजित के समय पहला अर दूसरा चक्रवर्ती भया अर अंतराल विषें कोई पदवी धर न भया अर श्रेयांसनाथ अंतराल विषें कोई पदवी धर न भया अर श्रेयांसनाथ से लेय अर धर्मनाथ पर्यंत पांच तीर्थंकरों के समय पांच नारायण भये सो तीर्थंकरों के समय ही भये अन्तराल विषें न भये अर धर्मनाथ पीछे तीजा चक्रवर्ती अर चौथा चक्रवर्ती भया उस पीछे शांति, कुन्थु, अरनाथ यह तीर्थंकर चक्रवर्ती भी भये फिर उस पीछे छठा नारायण भया उस पीछे आठवां चक्रवर्ती भया।।32।। उस पीछे मल्लिनाथ भये अर मल्लिनाथ पीछे नवमा चक्रवर्ती महापद्म भया। उस पीछे सातवां नारायण भया फिर मुनिसुव्रतनाथ भये अर उस पीछे दशवां हरिषेण चक्रवर्ती भया उस पीछे आठवां नारायण भया अर नमिनाथ पीछे ग्यारवां चक्रवर्ती भया उस पीछे नेमनाथ भये तिनके समय नवमें बलभद्र अर नारायण भये अर नेमनाथ पीछे बारहवां चक्रवर्ती उस पीछे पार्श्वनाथ अर महावीर होवेंगे। इस भांति शलाका पुरुष भये।

अथानन्तर – तीर्थंकरों की आयु की विगति करे हैं। ऋषभदेव का कुमार काल बीस लाख पूर्व अर राज त्रेसठ लाख पूर्व अर तप हजार वर्ष अर केवल कल्याणक विषे हजार वर्ष घाट एक लाख पूर्व यह चौरासी लाख पूर्व का विस्तार कहा। अर अजितनाथ का कुमार काल अठारह लाख पूर्व अर राज्यावस्था त्रेपन अर एक पूर्वांग अधिक चौरासी लाख वर्ष का एक पूर्वांग कहिये है अर संयम काल बारह वर्ष अर एक पूर्वांग अर बारह वर्ष घाट लाख पूर्व केवल कल्याणक विषें समोसरण में विराजे। यह बहत्तर लाख पूर्व का विस्तार कहा। अर सम्भवनाथ की आयु साठ लाख पूर्व उसमें कुमार काल पन्द्रह लाख पूर्व अर राज्य अवस्था चवालीस लाख पूर्व अर चार पूर्वांग अर संयम काल चौदह वर्ष अर केवल कल्याणक विषें चार पूर्वांग अर चौदह वर्ष घाट लाख पूर्व। इस भांति साठ लाख पूर्व का विस्तार कहा।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

अर अभिनन्दन का आयु पचास लाख पूर्व तिनमें कुमार काल साढ़े बारह लाख पूर्व अर राज्य अवस्था साढ़े छत्तीस लाख पूर्व अर आठ पूर्वांग अर संयमकाल वर्ष अठारह अर केवल कल्याणक विषें लाख उसमें आठ पूर्वांग अर वर्ष अठारह घटावने यह पचास लाख पूर्व का विस्तार कहा। अर सुमतिनाथ का आयु चालीस लाख पूर्व उसमें कुमार काल दश लाख पूर्व अर राज्य समय उणतीस लाख पूर्व अर बारह पूर्वांग अर संयम काल वर्ष बीस अर केवल कल्याणक विषें लाख पूर्व उसमें बारह पूर्वांग अर वर्ष बीस घटावने यह चालीस लाख पूर्व का विगत विस्तार कहा। अर पद्मप्रभ का आयु तीस लाख पूर्व उसमें कुमार काल साढ़े सात लाख पूर्व अर राज्य अवस्था साढ़े इक्कीस लाख अर सोलह पूर्वांग अर संयम काल छह महीना अर केवल कल्याणक विषें लाख पूर्व उसमें सोलह पूर्वांग अर मास छह घटावना। यह तीस लाख पूर्व का विस्तार कहा।

अर सुपार्श्वनाथ का आयु बीस लाख पूर्व उसमें कुमार काल पांच लाख पूर्व अर राज्य अवस्था चौदह लाख पूर्व अर बीस पूर्वांग अर संयम काल वर्ष नव अर केवलकल्याणक विषें बीस पूर्वांग अर नव वर्ष घाट लाख पूर्व यह बीस लाख पूर्व का विस्तार कहा। अर चंद्रप्रभ का आयु दश लाख पूर्व उसमें कुमार काल अढ़ाई लाख पूर्व अर राज्य अवस्था साढे छै लाख पूर्व अर चौबीस पूर्वांग अर संयम काल महीना तीन अर केवल कल्याण विषें चौबीस पूर्वांग अर तीन मास घाट लाख पूर्व। अर पुष्पदंत का आयु दोय लाख पूर्व उसमें कुमार काल पचास हजार पूर्व अर राज्य अवस्था भी पचास हजार पूर्व अर अठाईस पूर्वांग अर संयम काल मास चार अर केवल कल्याणक विषें लाख पूर्व उसमें अठाईस पूर्वांग अर मास चार घटावने यह दोय लाख पूर्व का विस्तार कहा। अर शीतलनाथ का आयु लाख पूर्व उसमें कुमार काल पच्चीस हजार पूर्व अर राज्य अवस्था पचास हजार पूर्व अर संयम काल तीन महीना अर केवल कल्याणक पच्चीस हजार पूर्व तीन मास घाट। अर श्रेयांसनाथ का आयु वर्ष चौरासी लाख उसमें कुमार काल इक्कीस लाख वर्ष अर राज्य अवस्था व्यालीस लाख वर्ष अर संयम काल दोय मास अर केवल कल्याणक विषें इक्कीस लाख वर्ष दोय महीने घाट।

अर वासुपूज्य स्वामी का आयु बहत्तर लाख वर्ष उसमें कुमार काल अठारह लाख वर्ष अर इन विवाह न किया वर्ष अठारह लाख के भये तब ही वैराग्य धारा। अर संयम काल मास एक अर केवल कल्याणक में एक मास घाट चौवन लाख वर्ष विराजे अर विमलनाथ का आयु वर्ष साठ लाख उसमें कुमार काल वर्ष पन्द्रह लाख अर राज्य अवस्था वर्ष लाख तीस अर संयम काल मास तीन अर केवल कल्याणक तीन मास घाट पंद्रह लाख वर्ष। अर अनंतनाथ का आयु वर्ष लाख तीस उसमें कुमार काल साढ़े सात लाख वर्ष अर राज्य अवस्था पन्द्रह लाख वर्ष अर संयम काल मास दोय अर केवल कल्याणक विषें दोय मास घाट साढ़े सात लाख वर्ष अर धर्मनाथ का आयु दश लाख उसमें

कुमार काल वर्ष लाख अढ़ाई अर राज्य अवस्था पांच लाख वर्ष अर संयम काल मास एक अर केवल कल्याणक में एक मास घाट अढ़ाई लाख वर्ष अर शांतिनाथ का आयु एक लाख वर्ष उसमें कुमार काल पच्चीस हजार वर्ष अर राज्य अवस्था पचास हजार वर्ष अर संयम काल सोलह वर्ष अर केवल कल्याणक में सोलह वर्ष घाट वर्ष हजार पच्चीस अर कुन्थुनाथ का आयु पच्चाणवें हजार वर्ष उसमें कुमार काल पौणा चौबीस हजार वर्ष अर राज्य अवस्था वर्ष हजार साढ़े सैंतालीस अर संयम काल वर्ष सोलह अर केवल कल्याणक में सोलह वर्ष घाट हजार पौणा चौबीस अर अरनाथ का आयु वर्ष हजार चौरासी उसमें कुमार काल इक्कीस हजार वर्ष अर राज्य अवस्था वर्ष हजार बियालीस अर संयम काल सोलह वर्ष अर केवल कल्याणक में सोलह वर्ष घाट इक्कीस हजार वर्ष।

अर मल्लिनाथ की आयु वर्ष पचावन हजार उसमें कुमार काल वर्ष सौ अर इन राज्य न किया विवाह न किया। सौ वर्ष के होय मुनि व्रत धारे अर संयम काल दिन छह बाकी वर्ष चौवन हजार नौ सौ छह दिन घाट केवल कल्याणक में रहे अर मुनिसुव्रत का आयु तीस हजार वर्ष उसमें कुमार काल साढ़े सात हजार वर्ष अर राज्य अवस्था पन्द्रह हजार वर्ष अर संयमकाल मास ग्यारह अर ग्यारह महीना घाट साढ़े सात हजार वर्ष केवल कल्याणक में तिष्टे अर नमिनाथ का आयु दश हजार वर्ष उसमें कुमार काल अढाई हजार वर्ष अर राज्य अवस्था पांच हजार वर्ष अर संयम काल नव वर्ष अर नव वर्ष घाट अढ़ाई हजार वर्ष केवल कल्याणक में विराजे अर नेमिनाथ का आयु एक हजार वर्ष उसमें कुमार काल वर्ष तीन सौ अर इन विवाह न किया अर न राज्य किया तीन सौ वर्ष के होय मुनि भये सो संयम काल दिन छप्पन अर छप्पन दिन घाट सात सौ वर्ष केवल कल्याणक विषें विराजे अर पार्श्वनाथ का आयु वर्ष सौ उसमें कुमार काल वर्ष तीस अर इन राज न किया न विवाह भी न किया। तीस वर्ष के होय मुनिव्रत धारे सो संयम काल मास चार अर वर्ष सत्तर चार मास घाट केवल कल्याणक में विराजे अर महावीर का आयु वर्ष बहत्तर उसमें कुमार का वर्ष तीस अर इन विवाह न किया अर राज्य न किया अर तीस वर्ष के यती भये सो वर्ष बारह संयम काल बाकी तीस वर्ष केवल कल्याणक में विराजे। यह सबों की आयु का विस्तार कहा।

अब चौबीसों तीर्थंकरों के संघ का निरूपण करे हैं। ऋषभ के गणधर चौरासी अर अजित के नब्बे सम्भव के एक सौ पांच अभिनंदन के एक सौ तीन अर सुमति के एक सौ सोलह पद्म प्रभ के एक सौ ग्यारह सुपार्श्व के पिच्चाणवें चन्द्रप्रभ के तिराणवें अर पुष्पदंत के अठासी अर शीतल के इक्यासी श्रेयांस के सत्तर अर वासुपूज्य के छासठ विमल के पचावन अनन्त के पचास धर्म्म के तेतालीस अर शांति के छत्तीस अर कुन्थु के पैंतीस अर अरनाथ के तीस अर मल्लिनाथ के अठाईस अर मुनिसुव्रत के अठारह अर नमि के सत्तरह अर नेमि के ग्यारह अर पार्श्वनाथ के दश अर महावीर

के ग्यारह। यह सबों के गणधर कहे। इनमें एक एक मुख्य तिनके नाम कहे हैं।

ऋषभ के वृषभसेन अर अजित के सिंहसेन अर सम्भव के चारुदत्त अभिनन्दन के वज्र सुमति के चमर पद्मप्रभ के वज्रबलि अर सुपार्श्व के चमर बलि अर चंद्रप्रभ के दडित पुष्पदंत के वैदर्भ अर शीतल के अनागार श्रेयांस के कुंथु वासुपूज्य के सुधर्म अर विमल के नन्दिराय अनन्त के जय, धर्म के अरिष्ट, शांति के चक्रायुद्ध, कुंथु के स्वयंभू अरनाथ के कुंथु नामा, मल्लिनाथ के विशाखाचार्य अर मुनिसुव्रत के मल्लि अर नमि के साम नेमि के वरदत्त अर पार्श्वनाथ के स्वयंभू महावीर के इन्द्रभूति जिसे गौतम भी कहे हैं। ये गणधर सप्त ऋद्धि कर युक्त अर सर्व श्रुत के पारगामी हैं।

अथानन्तर – तीर्थंकरों के साथ जितने राजा वैरागी भये तिनका निरूपण कहे हैं। महावीर के साथ तीन सौ अर पार्श्वनाथ के साथ छै सौ छै अर इतने मल्लिनाथ के साथ सुपू अर वाज्य के साथ छै सौ।।49।। अर ऋषभदेव के साथ राजा चार हजार सबों के साथ एक हजार राजा जानों।।50।। ऋषभदेव के सकल यति चौरासी हजार अर अजित के एक लाख अर सम्भवनाथ के दोय लाख अर अभिनन्दन के तीन लाख अर सुमति के तीन लाख बीस हजार अर पद्म के तीन लाख तीस हजार अर सुपार्श्वनाथ के तीन लाख, चंद्रप्रभ के अढाई लाख, पुष्पदंत के तीन लाख, शीतलनाथ के एक लाख, श्रेयांस के चौरासी हजार वासुपूज्य के बहत्तर हजार विमलनाथ के अड़सठ हजार अरनाथ के छयासठ हजार धर्मनाथ के चौसठ हजार शांतिनाथ के बासठ हजार कुंथुनाथ के साठ हजार अरनाथ के पचास हजार मल्लिनाथ के चालीस हजार मुनिसुव्रत के तीस हजार नमिनाथ के बीस हजार नेमनाथ के अठारह हजार अर पार्श्वनाथ के सोलह हजार अर महावीर के चौदह हजार यह चौबीसों के मुनि कहे।

सो मुनियों का संघ सात प्रकार है, उसका वर्णन सुनो। ऋषभदेव के चौदह पूर्व के पाठी मुनि सैंतालीस सौ पचास अर सूत्र अभ्यासी शिक्ष्य इकतालीस सो पचास अर अवधिज्ञानी नव हजार केवली बीस हजार अर विक्रिया ऋद्धि के धारी बीस हजार छै सौ अर विपुलमति मनःपर्यय के धारी बारह हजार साढ़े सात सौ अर वादित्व ऋद्धि के धारी बारह हजार साढे सात सौ। यह सब चौरासी हजार भये अर अजितनाथ के चौदह पूर्व के पाठी सैंतीस सौ पचास अर आचारांग के सूत्र के अभ्यासी शिष्य इक्कीस हजार छै सौ अर अवधि ज्ञानी चौराणवें सौ अर केवली बीस हजार अर विक्रिया ऋद्धि के धारक बीस हजार चार सौ पचास अर विपुलमति मनपर्यय वाले बारह हजार चार सौ वादित्व ऋद्धि के धारक बारह हजार चार सौ यह सब मुनि लाख भये अर सम्भवनाथ के चौदह पूर्व के पाठी इक्कीस सौ पचास अर शिष्य एक लाख गुणतीस हजार तीन सौ सब सूत्राभ्यास करे हैं

अर नव हजार छै सौ अवधिज्ञानी अर पन्द्रह हजार केवली अर उन्नीस हजार साढे आठ सौ विक्रिया ऋद्धि के धारक अर बारह हजार विपुलमति मनपर्यय ज्ञान के धारक अर बारह हजार अर एक सौ वादित्व ऋद्धि के धारक यह दोय लाख का विस्तार कहा।

अर अभिनन्दन के मुनि तीन लाख तिनमें चौदह पूर्व के पाठी पच्चीस सौ अर सूत्र के अभ्यासी शिष्य दोय लाख तीस हजार पचास अर अवधिज्ञानी नव हजार आठ सौ केवली सोलह हजार अर विक्रिया ऋद्धि के धारक उन्नीस हजार अर विपुलमति मनपर्यय ज्ञानी ग्यारह हजार छै सौ पचास अर वादित्त ऋद्धि के धारक ग्यारह हजार यह अभिनन्दन के तीन लाख साधु कहे अर सुमतिनाथ के चौदह पूर्व के पाठी चौबीस सौ अर आगम के अभ्यासी शिष्य दोय लाख चौवन हजार तीन सौ पचास अर निर्मल अवधिज्ञान के धारक ग्यारह हजार अर केवल ज्ञान के धारक तेरह हजार विक्रिया ऋद्धि के धारक अठारह हजार चार सौ अर विपुल मनपर्यय के धारक दश हजार चार सौ और वादित्व ऋद्धि के दश हजार चार सौ पचास यह सब तीन लाख बीस हजार भये।।76।।

और पद्मप्रभ के चौदह पूर्व के पाठी तेईस सौ अर शिष्य दोय लाख उणहत्तर हजार और अवधिज्ञानी दश हजार और केवली बारह हजार आठ सौ और विक्रिया ऋद्धि के धारक सोलह हजार तीन सो अर वादित्व ऋद्धि के धारी नव हजार और विपुलमति मनपर्यय ज्ञान के धारक दश हजार छै सौ यह सब तीन लाख तीस हजार भये। अर सुपार्श्वनाथ के चौदह पूर्व के पाठी बीस सौ तीस शिष्य दोय लाख चवालीस हजारा नव सौ बीस अर अवधिज्ञानी नव हजार अर केवली ग्यारह हजार तीन सौ अर विक्रिया ऋद्धि के धारक पंद्रह हजार डेढ़ सौ अर विपुल मति मनपर्यय ज्ञान के धारक नव हजार छै सौ अर वादित्त ऋद्धि के धारक आठ हजार यह सब मुनि तीन लाख भये अर चन्द्रप्रभ के चौदह पूर्व के पाठी दोय हजार अर शिष्य दोय लाख दश हजार चार सौ अवधि ज्ञान के धारक आठ हजार अर विपुलमति मनपर्यय के धारक भी आठ हजार अर केवलज्ञानी दश हजार अर विक्रिया ऋद्धि के धारक चार हजार वादित्त ऋद्धि के धारी सात हजार छै सौ यह सब अढाईस लाख भये। अर पुष्पदंत के चौदह पूर्व के पाठी पंद्रह सौ अर शिष्य एक लाख पचपन हजार पांच सौ अर अवधिज्ञान के धारक आठ हजार चार सौ अर केवली साढे सात हजार और विक्रिया ऋद्धि के धारक तेरह हजार अर विपुलमति मनपर्यय ज्ञान के धारक पैंसठ सौ और वादित्त ऋद्धि के धारक छिहत्तर सौ।

अर शीतलनाथ के चौदह पूर्व के पाठी चौदह सौ अर शिष्य गुणसठ हजार दोय सौ अर अवधिज्ञानी बहत्तर सौ अर केवली सात हजार अर विक्रिया ऋद्धि के धारक बारह हजार विपुलमति मनपर्यय के धारक साढे सात और वादित्त ऋद्धि के धारक सतावन सौ।।94।। अर श्रेयांसनाथ के

चौदह पूर्व के पाठी तेरह सौ अर अडतालीस हजार दोय सौ शिक्षक अर अवधिज्ञान के धारक छह हजार अर केवलज्ञानी पैंसठ सौ अर विक्रिया ऋद्धि के धारक ग्यारह हजार और विपुलमति मनपर्यय ज्ञान के धारक छह हजार अर वादित्व ऋद्धि के धारी पांच हजार अर वासुपूज्य के चौदह पूर्व के पाठी बारह सौ अर शिष्य उन्तालीस हजार दोय सौ अर अवधिज्ञान के धारक चौवन सौ अर केवलज्ञान के धारक छह हजार और विक्रिया ऋद्धि के धारक दश हजार विपुलमति मनपर्यय ज्ञान के धारक छह हजार और वादित्त ऋद्धि के धारक बियालीस सौ अर विमलनाथ के चौदह पूर्व के पाठी ग्यारह सौ अर शिष्य अडतीस हजार पांच सौ अर अवधिज्ञान के धारक अडतालीस सौ और केवलज्ञान के धारक पचपन सौ अर विक्रिया ऋद्धि के धारक नव हजार अर मनपर्यय ज्ञान के धारक पचपन सौ अर वादित्त ऋद्धि के धारक छत्तीस सौ अनन्त के चौदह पूर्व के पाठी 1000 और शिष्य उनतालीस हजार पांच सौ और अवधिज्ञानी तेतालीस सौ अर केवलज्ञान के धारक पांच हजार अर विक्रिया ऋद्धि के धारक आठ हजार मनपर्यय ज्ञानी पांच हजार अर वादित्त ऋद्धि के धारक बत्तीस सौ।

अर धर्मनाथ के चौदह पूर्व के पाठी नव सौ अर शिष्य चालीस हजार सात सौ अर अवधिज्ञानी छत्तीस सौ अर केवलज्ञानी पैंतालीस सौ अर विक्रिया ऋद्धि के धारी सात हजार अर विपुल मति मनपर्यय ज्ञानी पैंतालीस सौ अर वादित्त ऋद्धि के धारक अठाईस सौ अर शांतिनाथ के चौदह पूर्व के पाठी आठ सौ अर शिष्य इकतालीस हजार आठ सौ अर अवधि ज्ञानी तीन हजार अर केवलज्ञानी चार हजार अर विक्रिया ऋद्धि के धारी छह हजार अर मनपर्ययज्ञानी चार हजार अर वादित्त ऋद्धि के धारी चौबीस सौ अर कुंथुनाथ के चौदह पूर्व के पाठी सात सौ अर शिष्य तेतालीस हजार डेढ सौ अर अवधिज्ञान के धारी पच्चीस सौ अर केवलज्ञानी बत्तीस सौ अर विक्रिया ऋद्धि वाले इक्यावन सौ अर विपुलमति मनपर्यय ज्ञान वाले तेतीस सौ पचास अर वादित्त ऋद्धि वाले दोय हजार फिर अरनाथ के चौदह पूर्व के पाठी छह सौ दश अर शिष्य पैंतीस हजार आठ सौ पैंतीस अर अवधिज्ञानी अठाईस सौ अर केवली भी अठाईस सौ अर विक्रिया ऋद्धि के धारी तेतालीस सौ अर मनपर्यय ज्ञानी बीस सौ पचावन वादित्त ऋद्धि के धारी सोलह सौ।

अर मल्लिनाथ के चौदह पूर्व के पाठी सात सौ पचास अर शिष्य गुणतीस हजार अवधि ज्ञानी बाईस सौ अर चौदह सौ विक्रिया ऋद्धि वाले अर विपुलमति मनपर्यय वाले बाईस सौ अर वादित्त ऋद्धिवाले भी बाईस सौ अर मुनिसुव्रतनाथ के चौदह पूर्व के पाठी पांच सौ अर शिष्य इक्कीस हजार अर अवधिज्ञानी अठारह सौ अर केवली अठारह सौ अर विक्रिया ऋद्धि के धारी बाईस सौ अर विपुलमति मनपर्यय ज्ञानी पंद्रह सौ अर वादित्त ऋद्धि के धारी बारह सौ अर नमिनाथ के चौदह पूर्व के पाठी साढे चार सौ अर शिष्य बारह हजार छह सौ अर अवधिज्ञानी सोलह सौ अर केवली भी

www.vitragvani.com

सोलह सौ अर विक्रिया ऋद्धि वाले पंद्रह सौ अर मनपर्यय ज्ञानी साढे बारह सौ अर वादित्त ऋद्धि के धारी हजार अर नेमनाथ के चौदह पूर्व के धारी चार सौ अर शिष्य ग्यारह हजार आठ सौ अर केवली पंद्रह सौ अवधिज्ञानी भी पंद्रह सौ अर विक्रिया ऋद्धि के धारी ग्यारह सौ अर मनपर्यय ज्ञानी नव सौ अर वादित्त ऋद्धि के धारी आठ सौ।।26।। अर पार्श्वनाथ के चौदह पूर्व के पाठी साढे तीन सौ अर शिष्य दश हजार नव सौ अर अवधिज्ञानी चौदह सौ अर केवलज्ञानी हजार अर विक्रिया ऋद्धि के धारी हजार अर मनपर्यय ज्ञानी साढे सात सौ अर वादित्त ऋद्धि के धारी छै सो।।29।। अर वर्द्धमान जिनेन्द्र के चौदह पूर्व के पाठी तीन सौ अर शिष्य नव हजार नव सौ अवधि ज्ञानी तेरह सौ अर केवली सात सौ अर विक्रिया ऋद्धि के धारी नव सौ अर मनपर्ययज्ञानी पांच सौ अर वादित्त ऋद्धि के धारी चार सौ।।31।। यह चौबीस तीर्थंकरों के सात प्रकार के मुनि प्रत्येक के कहे।

अथानन्तर – चौबीसों जिनराजों के आर्यकाओं का व्याख्यान करे हैं। ऋषभदेव के आर्यका तीन लाख पचास हजार अजितनाथ के तीन लाख बीस हजार।।2।। अर संभवनाथ के अर अभिनन्दन के अर सुमतिनाथ के प्रत्येक प्रत्येक तीन तीन लाख अर तीस तीस हजार।।32।। पद्मप्रभ के चार लाख अर बीस हजार अर सुपार्श्व के तीन लाख तीस हजार अर चंद्रप्रभ अर पुष्पदंत अर शीतलनाथ इन तीनों के प्रत्येक प्रत्येक तीन लाख अर अस्सी अस्सी हजार अर श्रेयांसनाथ के एक लाख बीस हजार अर वासुपूज्य के एक लाख छै हजार अर विमलनाथ के एक लाख तीन हजार अर अनन्तनाथ के एक लाख साठ हजार अर धर्मनाथ के बासठ हजार चार सौ अर शांतिनाथ के साठ हजार तीन सौ।।37।।

अर कुन्थुनाथ के साठ हजार तीन सौ पचास अरनाथ के साठ हजार अर मल्लिनाथ के पचपन हजार मुनिसुव्रत के पचास हजार अर नमिनाथ के पैंतालीस हजार अर नेमनाथ के चालीस हजार अर पार्श्वनाथ के अड़तीस हजार अर वर्द्धमान के पैंतीस हजार। यह चौबीस तीर्थंकरों की आर्यका कही।

अथानन्तर – श्रावक अर श्राविकाओं की गिनती कहे हैं। ऋषभदेव को आदि लेय अर चंद्रप्रभ पर्यंत प्रत्येक के तीन तीन लाख श्रावक अर पुष्पदंत से लेय अर शान्तिनाथ पर्यंत के दोय लाख श्रावक अर कुन्थुनाथ से लेय अर वर्द्धमान पर्यंत प्रत्येक प्रत्येक के लाख लाख श्रावक जानों। यह श्रावकों की गिनती कही। अर श्राविका ऋषभ से लेय चंद्रप्रभ तक के पांच पांच लाख अर पुष्पदन्त से लेय शान्तिनाथ पर्यंत के चार चार लाख अर कुन्थु से वर्द्धमान पर्यंत के तीन तीन लाख जानना – यह चतुर्विध संघ का व्याख्यान किया।

अथानन्तर – चौबीसों तीर्थंकरों के शिष्य जितने सिद्ध भये तिनका कथन कहे हैं।।43।। ऋषभ देव के शिष्य साठ हजार नव सौ सिद्ध भये अर अजित के सत्तर हजार एक सौ अर संभवनाथ के एक

लाख सत्तर हजार एक सौ अर अभिनन्दन के दोय लाख अस्सी हजार एक सौ अर सुमतिनाथ के शिष्य तीन लाख पिचासी हजार छै सौ अर पद्मप्रभ के तीन लाख तेरह हजार छै सौ अर सुपार्श्वनाथ के दोय लाख पिचासी हजार छै सौ अर चन्द्रप्रभ के दोय लाख चौंतीस हजार अर पुष्पदन्त के एक लाख गुणासी हजार छै सौ अर शीतलनाथ के अस्सी हजार छै सौ अर श्रेयांसनाथ के पैंसठ हजार छै सौ अर वासुपूज्य के चब्बन हजार छै सौ अर विमलनाथ के इक्यावन हजार तीन सौ अर अनन्तनाथ के इक्यावन हजार।

अर धर्मनाथ के गुणचास हजार सात सौ अर शांतिनाथ के अडतालीस हजार चार सौ अर कुन्थुनाथ के छियालीस हजार आठ सौ फिर अरनाथ के सैंतीस हजार दोय सौ अर मल्लिनाथ अठाईस हजार आठ सौ मुनिसुव्रत के उगणीस हजार दोय सौ अर नमिनाथ के नव हजार छै सौ अर नेमनाथ के आठ हजार अर पार्श्वनाथ के बासठ सौ अर महावीर के बहत्तर सौ। यह चौबीसों तीर्थंकरों के शिष्य सिद्ध भये अर पहले तीर्थंकर से लेय सोलहवें तीर्थंकर तक तो जिस समय तीर्थंकरों को केवल उपजा उस ही समय कई एक शिष्यों की सिद्धि भई अर कई एकों की पीछे भई अर सोलह सिवाय औरों के शिष्यों की मुक्ति कई एक की तीर्थंकरों को केवल उपजा उस पीछे एक महीने कई एक की दोय महीने पीछे कई एक की तीन महीने पीछे कई एक की छह महीने पीछे सिद्धि भई। इस भांति सिद्धि भई अर कई एक तीर्थंकरों के शिष्य तीर्थंकरों को केवल उपजे पीछे वर्ष, दोय वर्ष तथा तीन चार वर्ष पीछे इस भांति सिद्धपद को प्राप्त भये।।65।।

अथानन्तर – चौबीसों तीर्थंकरों का अन्तराल कहे हैं। ऋषभ पीछे अजितनाथ पचास लाख कोडि सागर बीते भये अर अजितनाथ पीछे सम्भवनाथ तीस लाख कोडि सागर अर सम्भव से अभिनन्दन का दश कोडि सागर अभिनन्दन से सुमति का नव लाख कोडि सागर अर सुमति नाथ से पद्मप्रभ का नब्बे हजार कोडि सागर अर पद्म से सुपार्श्व का नव कोडि हजार सागर अर सुपार्श्व से चन्द्रप्रभ का नव सौ कोडि सागर अर चन्द्रप्रभ से पुष्पदन्त का नव्वे कोडि सागर अर पुष्पदंत से शीतलनाथ का नव कोडि सागर अर शीतलनाथ से श्रेयांसनाथ का अन्तर कोडि सागर उसमें सागर सौ अर वर्ष छियासठ लाख छबीस हजार घटावने अर श्रेयांसनाथ पीछे वासुपूज्य का अन्तर चव्वन हजार सागर अर वासुपूज्य पीछे विमलनाथ का अन्तर तीस सागर अर विमल पीछे अनन्तनाथ का अन्तर नव सागर।

अर अनन्तनाथ पीछे धर्मनाथ का अन्तर चार सागर अर धर्मनाथ पीछे शान्तिनाथ का अन्तर सागर तीन उसमें पौण पल्य घाट अर शांतिनाथ पीछे कुंथुनाथ का अन्तर आधा पल्य अर कुन्थुनाथ पीछे अरनाथ का अन्तर हजार कोडि वर्ष घाट पाव पल्य फिर अरनाथ पीछे मल्लिनाथ का अन्तर

हजार कोडि वर्ष अर मल्लि पीछे मुनिसुव्रत का अन्तर चौवन लाख वर्ष अर मुनिसुव्रत पीछे नमि का अन्तराल छह लाख वर्ष अर नमि पीछे नेमनाथ का अन्तराल पांच लाख वर्ष अर नेमिनाथ पीछे पार्श्वनाथ का अन्तर पौणा चौरासी हजार वर्ष अर पार्श्वनाथ पीछे महावीर का अन्तराल वर्ष अढाई सौ। जब महावीर स्वामी निर्वाण पधारे तब चौथा काल के वर्ष तीन अर साढे आठ मास थे अर चौथा काल बियालीस हजार वर्ष घाट कोडाकोडि सागर का है अर छियालीस हजार वर्ष में इक्कीस हजार वर्ष का पांचवां काल है अर इक्कीस हजार वर्ष ही का छठा काल है।

यह बियालीस हजार वर्ष भये तिनमें पंचम काल के अन्त महावीर स्वामी का धर्म है अर छठे काल में धर्म का अभाव है अर छठे के अन्त पांच भरत पांच ऐरावत इन दश क्षेत्रों में प्रलय होय है। छठे के अन्त तक अवसर्पिणी काल है। आगे उत्सर्पिणी काल लगेगा अर ऋषभदेव से लेकर पुष्पदन्त तक तो धर्म अखंड चला अर पुष्पदन्त पीछे धर्म का पाव पल्य विच्छेद भया। फिर शीतलनाथ पीछे आध पल्य अर श्रेयांस के पीछे पौण पल्य अर वासुपूज्य के अन्तर विषें एक पल्य अर विमलनाथ के अन्तर विषें पौण पल्य अर अनन्तनाथ के अन्तर विषें आध पल्य अर धर्मनाथ के अन्तर विषें पाव पल्य इस भांति सात तीर्थंकरों के अन्तर विषें चार पल्य धर्म का विच्छेद भया। फिर अन्त के आठ तिनके अंतर विषें धर्म निरंतर रहा अर पहले तीर्थंकर से ले अर सात तीर्थंकरों के तीर्थ विषे तो केवल लक्ष्मी निरंतर रही अर चंद्रप्रभ अर पुष्पदंत के तीर्थ विषें उन पीछे केवली निन्नाणवें भये अर शीतल के तीर्थ विषें चौरासी अर श्रेयांसनाथ के तीर्थ विषें बहत्तर अर वासुपूज्य के तीर्थ विषें उन पीछे चवालीस केवली अर विमलनाथ के तीर्थ विषें उन पीछे केवली चालीस अर अनन्तनाथ के पीछे छत्तीस अर धर्मनाथ के पीछे केवली बत्तीस शान्तिनाथ के पीछे अठाईस अर कुन्थुनाथ के पीछे चौबीस अर अरनाथ के पीछे बीस अर मल्लिनाथ के पीछे सोलह अर मुनिसुव्रत के पीछे बारह अर नमिनाथ पीछे आठ अर नेमिनाथ पीछे चार अर पार्श्वनाथ पीछे तीन अर वर्द्धमान पीछे तीन भये।

यह चौबीसों तीर्थंकरों के तीर्थ विषें उनकी मुक्ति गये पीछे केवली भये तिनका कथन किया तहां तक दूसरा तीर्थंकर न उपजे तहां तक पहले का तीर्थ कहिये। इस ही भांति सर्वत्र जानो। महावीर पीछे बासठ वर्ष में तीन केवली भये – गौतम, सुधर्मा अर जम्बू स्वामी अर इन तीन केवलियों पीछे सौ वर्ष में पांच ग्यारह अंग अर चौदह पूर्व के पाठी भये।।79।। अर तिन पीछे एक सौ तेतालीस वर्ष पर्यन्त ग्यारह मुनि ग्यारह अंग और दश पूर्व के पाठी भये अर तिन पीछे दोय सै बीस वर्ष पर्यन्त पांच मुनि ग्यारह अंग के पाठी भये अर तिन पीछै एक सो अठारह वर्ष पर्यंत चार मुनि एक आचारांग के पाठी भये अर महावीर के गणधर ग्यारह तिनकी आयु सुनो। प्रथम गणधर की आयु वर्ष बाणवें दूसरे की चौबीस तीसरे की वर्ष सत्तर चौथे की वर्ष अस्सी पांचवें की वर्ष सौ छठे की वर्ष त्रियासी सातवें

की पिचाणवें वर्ष की आठवें की अठहत्तर वर्ष नवें की बहत्तर वर्ष दशवें की साठ वर्ष ग्यारहवें की चालीस वर्ष।।83।।

यह ग्यारह गणधरों की आयु कही अर तीसरे काल में पल्य का आठवां भाग बाकी रहा तब कुलकर उपजे सो पल्य के आठवें भाग में चौदह भये अर जब तीजे में तीन वर्ष अर साढे आठ महीना बाकी थे तब ऋषभदेव मुक्ति पधारे अर चौथे काल के तीन वर्ष अर साढे आठ महीने बाकी रहे तब वर्द्धमान स्वामी मुक्ति पधारे अर भगवान को मुक्ति गये पीछे इक्कीस हजार वर्ष के पंचम काल में इक्कीस कलंकी अर इक्कीस अर्द्ध कलंकी होयेंगे सो पापी धर्म का विघ्न करेंगे अर कुगति जावेंगे।

अथानन्तर – बारह चक्रवर्तियों के आयु का विगत वार वर्णन करे हैं। प्रथम भरत चक्रवर्ती की आयु पूर्व चौरासी लाख उसमें कुमार काल सतहत्तर लाख पूर्व अर महा मंडलीक पन्द्रह हजार वर्ष अर दिग्विजय साठ हजार वर्ष अर राज्य एक पूर्व घाट छै लाख पूर्व अर संयम काल अन्तर्मुहूर्त अर केवल अवस्था में एक लाख पूर्व अर त्रियासी लाख निन्नानवें हजार नव सौ निन्नानवें पूर्वांग अर त्रियासी लाख नव हजार तीस इतने वर्ष विराजे फिर जगत के शिखर पधारे। चौरासी लाख वर्ष का एक पूर्वांग अर चौरासी लाख पूर्वांग का एक पूर्व।।97।। अर दूसरा सगर चक्रवर्ती का आयु बहत्तर लाख पूर्व उसमें कुमार काल अर मंडलेश्वरपना पचास हजार पूर्व अर दिग्विजय का काल तीस हजार वर्ष अर राज्य समय उणहत्तर लाख सत्तर हजार पूर्व अर वर्ष निन्नानवें पूर्वांग अर वर्ष त्रियासी लाख अर लाख पूर्व संयम काल उसमें जितने वर्ष तप किया, उतने घाट लाख पूर्व केवल अवस्था के जानो।।100।।

अर तीजा चक्रवर्ति मघवा उसका आयु पांच लाख वर्ष उसमें कुमार काल पच्चीस हजार वर्ष अर मंडलेश्वरपना पच्चीस हजार वर्ष अर दिग्विजय दश हजार वर्ष अर राज्य तीन लाख नब्बे हजार वर्ष अर संयम काल पचास हजार वर्ष यह स्वर्ग लोक गये।।2।। अर चौथा चक्रवर्ती सनत्कुमार आयु तीन लाख वर्ष उसमें कुमार काल पचास हजार वर्ष अर मण्डलेश्वरपना भी पचास हजार वर्ष अर दिग्विजय दश हजार वर्ष अर राज्य अवस्था नव्वे हजार वर्ष अर संयम लाख वर्ष यह स्वर्गलोक गये। पांचवां चक्रवर्ती शांतिनाथ उसका आयु एक लाख वर्ष उसमें कुमार काल पच्चीस हजार वर्ष अर मंडलेश्वर पद पच्चीस हजार वर्ष अर दिग्विजय आठ सौ वर्ष अर चक्रवर्ति पद चौबीस हजार दोय सै वर्ष अर संयम काल सोलह वर्ष अर समोसरण में विराजे सोलह वर्ष घाट पच्चीस हजार वर्ष फिर निर्वाण पधारे छठे चक्रवर्ति कुन्थुनाथ तिनका आयु पचाणवें हजार वर्ष उसमें कुमार काल पौणा चौबीस हजार वर्ष अर मंडलीकपना भी वर्ष पौणा चौबीस हजार वर्ष अर दिग्विजय छै सौ वर्ष अर चक्रवर्तिपद तेईस हजार डेढ़ सौ अर संयमकाल सोलह वर्ष अर केवल अवस्था में सोलह वर्ष घाटि पौणा चौबीस हजार वर्ष।।6।।

www.vitragvani.com

अरनाथ सातवें चक्रवर्ती तिनका आयु वर्ष हजार चौरासी उसमें कुमार काल हजार इक्कीस अर मंडलीकपना भी इक्कीस हजार वर्ष अर दिग्विजय चार सौ वर्ष अर चक्रवर्ती पद बीस हजार छै सौ वर्ष अर संयम काल सोलह वर्ष अर केवल अवस्था में सोलह वर्ष घाट इक्कीस हजार वर्ष अर आठवां चक्रवर्ती सुभूम उसका आयु अडसठ हजार वर्ष उसमें कुमार काल वर्ष हजार पांच अर दिग्विजय वर्ष पांच सौ अर चक्रवर्ती पद बासठ हजार पांच सौ अर यह बाल्यावस्था में परशराम के भय से संन्यासियों के आश्रम में गोप्य रहे। इन्होंने वैराग्य न धारा इसलिये महातम नामा पृथिवी विषें गये।।9।।

अर नवमां चक्रवर्ती महापद्म उसका आयु वर्ष हजार तीस उसमें कुमार काल वर्ष पांच सौ अर मंडलीकपना वर्ष पांच सौ अर दिग्विजय वर्ष तीन सौ अर चक्रवर्ती पद अठारह हजार सात सौ वर्ष अर संयम वर्ष हजार दश उसमें मुनि पद अर केवल पद आय गया। मुनिव्रत धर मोक्ष गये अर दशवें चक्रवर्ती हरिषेण उसका आयु छब्बीस हजार वर्ष उसमें कुमार काल वर्ष सवा तीन सौ अर दिग्विजय डेढ़ सौ वर्ष अर चक्रवर्ती पदवी पच्चीस हजार एक सौ पिचहत्तर वर्ष अर संयम काल वर्ष साढे तीन सौ इसमें मुनिपद अर केवल पद आय गया। यह मुनि होय मोक्ष पधारे।।13।। अर ग्यारहवां चक्रवर्ती जयसेन उसका आयु वर्ष हजार तीन उसमें कुमार काल अर मंडलेश्वरपना तीन सौ वर्ष का जानो अर दिग्विजय वर्ष सौ अर चक्रवर्ती उन्नीस सौ वर्ष अर संयम काल वर्ष चार सौ यह भी मुनि होय मोक्ष गये अर बारहवां चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त उसका आयु वर्ष सात सौ यह श्रीनेमिनाथ के पीछे अर पार्श्वनाथ के पहले भये इसलिये कुमार काल वर्ष अठाईस अर मंडलीकपना वर्ष छप्पन अर दिग्विजय वर्ष सोलह अर चक्रवर्ति पद छह सौ यह सात सौ वर्ष भये। इन जिनदीक्षा न धारी अर राज ही में मर कर सुभूम की तरह सातमी धरा पधारे।।15।। यह बारह चक्रवर्तियों का वर्णन किया। इनमें आठ मोक्ष गये सिद्ध भये, अर दोय स्वर्ग गये अर दोय अधोलोक गये सो भी कई एक भवधर शिवपुर पधारेंगे।

अथानन्तर – अर्द्धचक्रियों का कथन करे हैं – पहला वासुदेव त्रिपृष्ट अर पहला बलभद्र विजय यह दोनों परम स्नेही वासुदेव का आयु वर्ष लाख चौरासी उसमें कुमार काल वर्ष हजार पच्चीस अर दिग्विजय वर्ष हजार अर राज्य त्रियासी लाख चोहत्तर हजार वर्ष।।18।। अर दूसरा वासुदेव द्विपृष्ट उसका आयु बहत्तर लाख वर्ष सो अचल नामा बलभद्र का भाई परम स्नेही उसमें पच्चीस हजार वर्ष कुमार काल अर इतने ही मंडलीक पद के अर दिग्विजय के वर्ष सौ अर वासुदेव पद इकहत्तर लाख उणचास हजार नव सौ वर्ष अर तीजा वासुदेव स्वयंभू उसका आयु वर्ष लाख साठ कछु घाट सौ वर्ष, धर्म नामा बलभद्र का छोटा भाई परम स्नेही उसका कुमार काल पच्चीस सौ वर्ष अर इतने ही वर्ष मंडलीक पना अर दिग्विजय वर्ष नव्वे अर राज्य पद उणसठ लाख बहत्तर हजार नव सौ दश वर्ष।।22।।

अर चौथा वासुदेव पुरुषोत्तम सुप्रभ नामा बलदेव का छोटा भाई उसका आयु तीस लाख वर्ष

उसमें कुमार काल वर्ष सात सौ अर मण्डलीक पद तेरह सौ वर्ष अर दिग्विजय वर्ष अस्सी अर राज्य पद उणतीस लाख सत्याणवें हजार नव सौ बीस वर्ष पांचवां वासुदेव पुरुषसिंह सुदर्शन नामा बलदेव का छोटा भाई उसका आयु वर्ष लाख दश उसमें कुमार काल वर्ष तीन सौ अर मंडलीक पद वर्ष एक सौ पच्चीस अर दिग्विजय वर्ष सत्तर अर राज्य अवस्था नव लाख निन्नाणवें हजार पांच सौ पांच वर्ष।।26।। अर छठा पुण्डरीक नामा वासुदेव नन्दी नामा बलदेव का लघु वीर महा धीर उसका आयु वर्ष हजार पैंसठ उसमें कुमार काल वर्ष अढाई सौ अर मंडलीक पद अढाई सौ वर्ष अर दिग्विजय वर्ष साठ अर तीन खंड का राज चौंसठ हजार चार सौ चालीस वर्ष अर दत्त नामा सातवां वासुदेव छोटा भाई नन्दिषेण बलदेव का, उसकी आयु बत्तीस हजार वर्ष उसमें कुमार काल वर्ष दोय सौ अर मण्डलीक पद वर्ष पचास अर दिग्विजय भी वर्ष पचास अर उसका राज्य पद इकतीस हजार सात सौ वर्ष अर आठवां वासुदेव लक्ष्मण सो राम बलदेव का छोटा भाई उसका आयु वर्ष हजार बारह उसमें कुमार काल वर्ष सौ अर दिग्विजय वर्ष चालीस अर राज्य पद ग्यारह हजार आठ सौ साठ वर्ष।।31।। अर नवमां कृष्ण नामा वासुदेव पद्म नामा बलदेव का छोटा भाई उसका आयु वर्ष हजार एक उसमें कुमार काल वर्ष सोलह अर मण्डलीक पद वर्ष छप्पन अर दिग्विजय वर्ष आठ अर वासुदेव पद का राज्य वर्ष नव सौ बीस।।32।। यह वासुदेवों का वर्णन किया।

अथानन्तर – एकादश रुद्र तिनकी आयु काय और समय कहे हैं– पहला भीमावली नाम रुद्र श्री ऋषभदेव के समय भया उसका आयु त्रियासी लाख पूर्व और शरीर पांच सौ धनुष ऊंचा भया।।1।। और दूसरा यतिशत्रु नामा रुद्र दूसरे तीर्थंकर अजितनाथ के समय भया उसकी आयु इकहत्तर लाख पूर्व अर शरीर साढे चार सौ धनुष ऊंचा था। और तीसरा रुद्र नामा रुद्र नवमें तीर्थंकर पुष्पदन्त के समय भया उसका आयु दोय लाख वर्ष और शरीर सौ धनुष ऊंचा है।।3।। अर चौथा विश्वानल नामा रुद्र श्री शीतलनाथ के समय भया उसका आयु लाख पूर्व अर शरीर नव्वे धनुष ऊंचा और पांचवां सुप्रतिष्ठित नामा रुद्र श्रेयांस के समय भया उसकी आयु चौरासी लाख वर्ष अर शरीर अस्सी धनुष ऊंचा अर छठा अचल नामा रुद्र श्री वासुपूज्य के समय भया उसका आयु चौरासी लाख वर्ष अर शरीर अस्सी धनुष ऊंचा अर सातवां पुण्डरीक नामा रुद्र श्री विमलनाथ स्वामी के समय भया उसका आयु पचास लाख वर्ष अर शरीर साठ धनुष ऊंचा।।25।।

अर आठवां अजितधर नामा रुद्र श्री अनन्तनाथ स्वामी के समय भया उसका आयु वर्ष लाख चालीस और शरीर पचास धनुष ऊंचा और नवमां अजितनाथ नामा रुद्र श्री धर्मनाथ के समय भया उसका आयु वर्ष लाख पच्चीस अर शरीर तेतालीस धनुष ऊंचा अर दशवां पीठ नामा रुद्र श्री शांतिनाथ के समय भया। उसका आयु वर्ष लाख एक अर शरीर चौबीस धनुष ऊंचा और ग्यारहवां

सात्विकीतनय नामा रुद्र श्री महावीर स्वामी के समय भया उनहत्तर वर्ष अर शरीर सात हाथ ऊंचा। सब ही एकादश रुद्र ग्यारह अंग और दश पूर्व के पाठी हैं अर क्रोध रूप है स्वभाव जिनका इन ग्यारहों के तीन समय एक कुमार काल दूजा संयम काल अर एक संयम छूटे पीछे असंयम काल।।42।। उसमें चार रुद्रों का संयमकाल अधिक अर दोय का संयम काल अर कुमार काल समान अर सातवें आठवें नवमें रुद्र का कुमारकाल अधिक अर संयम काल न्यून अर दशवें का संयम काल अधिक ग्यारहवें के वर्ष उणहत्तर उसमें कुमारकाल बरस सात अर संयमकाल बरस अठाईस अर संयम से च्युत हुवे पीछे असंयम काल वर्ष चौंतीस।।45।।

अथानन्तर – नव नारद ते ब्रह्मचर्य के धारक बलभद्र नारायण के परम मित्र वासुदेव के समान हैं आयु अर काय जिनकी तिनके नाम कहे हैं – पहला नारद भीम, दूसरा महाभीम, तीसरा रुद्र, चौथा महारुद्र, पांचवां काल, छठा महाकाल, सातवां चतुर्मुख, आठवां नरवक्र, नवमां उन्मुख। यह नव नारदों के नाम कहे सो बलभद्र वासुदेव के समय ही होय हैं अर भगवान महावीर स्वामी को मुक्ति गये छै सौ पांच वर्ष भये तब राजा वीर विक्रमादित्य भया।।50।। अर भगवान पीछे हजार वर्ष गये कलंकी भया। इस भांति पंचम काल में कलंकी अर अर्द्धकलंकी व्यालीस होवेंगे। यह सब अवसर्पिणी काल का कथन किया।

अथानन्तर – उत्सर्पिणी काल के तीर्थंकरों का व्याख्यान करे हैं। इस पंचम काल पीछे छठा दुखमा दुखमा काल होयगा उसके अन्त प्रलय काल होयगा सो छठा काल के अन्त अवसर्पिणी सो पूर्ण होयगा अर आगे उत्सर्पिणी लगेगी सो प्रथम ही फिर छठा काल तो उत्सर्पिणी का पहला काल है। उसकी रीति छठे काल–सी, परन्तु इस छठे काल में आयु की घटती अर उसमें बढ़ती इक्कीस हजार का यह फिर छठा काल भी व्यतीत होयगा। उस पीछे उत्सर्पिणी का दूसरा काल सो फिर पंचमा कहिये सो भी इक्कीस हजार वर्ष का होयगा। उसके बीस हजार वर्ष तक तो महा पुरुष न उपजेंगे अर जब उस पंचम काल के एक हजार वर्ष रहेंगे, तब उत्सर्पिणी काल के कुलकर चौदह (14) होवेंगे।

तिनके नाम – पहला कनक, दूजा कनकप्रभ, तीजा कनकराज, चौथा कनकध्वज, पांचवां कनकपुंगव, यह पांच तो सोलह वाणी के स्वर्ण के समानवर्ण के धारक होवेंगे अर नलिन अर नलिनप्रभ, नलिनराज, नलिध्वज, फिर नलिनपुंगव यह पांच कमल समान वर्ण के धारक होवेंगे अर ग्यारहवां पद्मप्रभ बारहवां पद्मराज, तेरहवां पद्मध्वज, अर चौदहवां पद्मपुंगव। यह चौदह कुलकर पुनः पांचवें के अंत ही होवेंगे फिर चौथा काल लगेगा तो कोडाकोडि सागर का उसमें चौबीस तीर्थंकर होवेंगे। तिनके नाम– महापद्म 1, सुरदेव 2, सुपार्श्व 3, स्वयंप्रभ 4, सर्वात्मभूत 5, देवदेव 6, प्रभोदय 7, उदंक 8, प्रष्ण कीर्ति 9, जयकीर्ति 10, सुव्रत 11, अरनाथ 12, पुण्यमूर्ति 13, निःकषाय

14, विपुल 15, निर्मल 16, चित्रगुप्त 17, समाधिगुप्त 18, स्वयंभू 19, अनिवर्तक 20, जय 21, विमल 22, दिव्यपाद 23, अनन्तवीर्य 24। यह चौबीस तीर्थंकर महा धैर्यादि गुण के धारक होवेंगे।

अथानन्तर – आगामी बारह चक्रवर्तियों के नाम सुनो– भरत 1, दीर्घदत्त 2, जयदत्त 3, गूढ़दत्त 4, श्रीषेण 5, श्रीभूत 6, श्रीकांत 7, पद्म 8, महापद्म 9, चित्रवाहन 10, विमलवाहन 11, अरिष्टसेन 12, यह बारह चक्रवर्ती कहे।

अथानन्तर – आगामी नव नारायण होवेंगे तिनके नाम सुनो – नन्दी 1, नन्दीमित्र 2, नंदिन 3, नंदिभूति 4, महाभूत 5, अतिबल 6, भद्रबल 7, द्विपृष्ट 8, त्रिपृष्ट यह नव नारायण होवेंगे अर नव बलभद्र होवेंगे तिनके नाम कहे हैं।।66।। चन्द्र 1, महाचन्द्र 2, चन्द्रधर 3, सिंहचंद्र 4, हरिचन्द्र 5, श्रीचन्द्र 6, पूर्णचन्द्र 7, सुचन्द्र 8, बालचन्द्र 9 । यह नवों बलभद्र चन्द्रमा समान कान्ति के धारक होवेंगे।

अथानन्तर – आगामी नव प्रतिनारायण होवेंगे तिनके नाम कहे हैं– श्रीकंठ 1, हरिकंठ 2, नीलकंठ 3, अश्वकंठ 4, सुकंठ 5, सिषिकंठ 6, अश्वग्रीव 7, हयग्रीव 8, मयूरग्रीव 9, यह नव प्रतिहरि होवेंगे।

अथानन्तर – आगामी ग्यारह रुद्र होवेंगे तिनके नाम कहे हैं – प्रमद 1, समंद 2, हर्ष 3, प्राक्रम 4, कामद 5, भव 6, हर 7, मनोभव 8, मार 9, काम 10, अंजन 11, यह आगामी ग्यारह रुद्र कहे। यह सब ही पुरुष निर्वाण के पात्र हैं। तीर्थंकर कामदेवादि सो तद्भव मोक्षगामी ही हैं अर बलभद्र मोक्षगामी होवे हैं अर कई एक देव लोक के सुख भोग शीघ्र ही शिवपुर पावेंगे और अन्य सब ही भव्य कई एक भव का पार पावे हैं। यह सब ही जिन भाषित तपधर सिद्ध पद पावेंगे। यह शलाका पुरुषों में उत्तम हैं अर रत्नत्रय कर पवित्र हैं अंग जिनके।।71।। एक अन्तर्मुहूर्त भी सम्यक्त्व को पाय जो सम्यक्त्व से च्युत होय है सो भी शीघ्र मुक्ति का कारण है और जिनका जन्म ही रत्नत्रय की प्राप्ति कर पवित्र भया है तिनको क्या कहना। वह तो मुक्ति के पात्र हैं, रत्नत्रय मोक्ष का कारण है।।72।। इस भांति तीन काल का है निरूपण जिनमें अर सकल महा पुरुषों की है कथा जिनमें ऐसे नेमनाथ प्रभु के वचन कानों को सुखदायी तिनकी एकाग्र चित्त सुनि कर बलदेव अर वासुदेव आदि समस्त यादव नरेंद्र और इन्द्र, चंद्र, सूर्यादि सकल देव भगवान को नमस्कार कर तत्त्व बोध हृदय में धार अपने अपने स्थानक गये।।73।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ त्रिषष्टिपुरुषजिनान्तरवर्णनो नाम षष्टितमः सर्गः।।60।।

इकसठवाँ सर्ग

अथानन्तर – राजा श्रेणिक का अभिप्राय जानकर गौतम गणधर गज कुमार का चरित्र जगत कर नमस्कार करने योग्य कहते भये। हे राजा श्रेणिक! गजकुमार श्री नेमिनाथ के मुख सकल जिनेश्वर चक्रेश्वर अर बलदेव वासुदेव आदि सब महा पुरुषों का चारित्र सुनकर तत्काल सकल मातृ पितृ भ्रातृ वर्गों को तजकर जिनेंद्र के चरण का शरण धारते भये। कैसे हैं वह गजकुमार, संसार से भयभीत हैं भाव जिनके और प्रभु के महाभक्त हैं। प्रभु की आज्ञा पाय दिगम्बरी दीक्षा धार महातप करते भये और राजाओं की पुत्री जिनसे इनकी सगाई भई थी सो सब पति का वैराग्य सुन आर्यका के व्रत धारती भई और एक सोमशर्म नामा ब्राह्मण उसकी पुत्री गज कुमार परणे थे सो विप्र क्रोध रूप अग्नि कर प्रज्वलित भया। आधी रात जहाँ गजकुमार स्वामी अकेले प्रतिमा योग धर तिष्टे थे सकल परीषह के सहनहारे तहाँ वह ब्राह्मण गया और स्वामी के शिर अग्नि प्रजाली। उस ही समय स्वामी ने क्षपक श्रेणी का प्रारम्भ किया सो शुक्ल ध्यान धर कर्मों का अन्त कर तत्काल केवल पाय मोक्ष गये। श्री नेमिनाथ के तीर्थ विषें अन्त केवली भये।।7।।

इनकी निर्वाण पूजा और केवल यह दोनों कल्याणक एक ही साथ देव करते भये। सुर असुर यक्ष किन्नर गंधर्व महोरग आदि सब जाति के देव गज कुमार का कल्याणक करते भये।।8।। अर सब यादव गजकुमार का मरण सुन अत्यंत दुःख को प्राप्त भये। उस ही समय समुद्रविजय को आदि देय दश भाई तिनमें वसुदेव बिना नवों भाई मोक्ष के अभिलाषी जिन दीक्षा धारते भये अर नवों भाइयों की सब ही रानी माता शिवादेवी को आदि देय आर्यका भईं अर देवकी अर रोहणी के सिवाय बाकी वसुदेव की सब राणी आर्यका भईं अर कृष्ण की पुत्री भी आर्यका भई।।10।। फिर सुर नर सबों कर पूजने योग्य भगवान नेमजिनेंद्र अनेक देशों विषें विहार करते भये। अर उत्तर दिश के अर दक्षिण दिश के अर पूर्व पश्चिम दिश के अनेक नृप शार्दूल संबोधे अर मध्य देश के अनेक राजा संबोधे फिर विहार कर गिरनार गिर आये अर समोसरण विषें विराजे। उस समय जिनेन्द्र के दर्शन को सकल देवों के इन्द्र आये अर स्तुति कर नमस्कार कर अपने अपने स्थानक बैठे अर वसुदेव बलदेव वासुदेव अर प्रद्युम्न आदिक कृष्ण के पुत्र अर देवकी रोहणी आदि वसुदेव की राणी अर बलदेव वासुदेव की राणी सब यादवों की राणी सब ही दर्शन को आईं अर द्वारका की वस्ती के लोक आये।।15।।

इत्यादि सब ही भाव सहित शिवदेवी के नन्दन की वन्दना को आये सो अपने अपने स्थानक बैठे तहां भगवान धर्म का निरूपण करते भये। उस समय अवसर पाय भगवान को नमस्कार कर पद्म नामा बलभद्र का हल का है आयुध जिनके सो हाथ जोड़ सीस नवाय नमस्कार पूछते भये – हे नाथ!

www.vitragvani.com

यह द्वारकापुरी कुवेर ने निर्मापी है सो अब उसकी कितनी वर्ष स्थिति है? जो वस्तु कृत्रिम होय सो विनसे। यह पुरी काल पाय सहज ही विलय होवेगी या किसी के निमित्त से विनशेगी अर वासुदेव का परलोक कौन कारण कर होयगा? महापुरुष हैं तिन्हों के यह शरीर रहे नहीं। हे प्रभो! मेरे संयम की प्राप्ति कब होयगी? मेरे अर जगत् का ममत्व तो अल्प है। एक भाई के स्नेह कर बंधा है। इस भांति हलधर ने जिनवर को पूछा, तब भगवान् सर्वज्ञ हलधर को कहते भये – हे महा भव्य, हे राम! यह पुरी बारहवें वर्ष द्वीपायन नामा मुनि कर भस्म होयगी, उन्मत्तता के योग कर यादवों के कुमार द्वीपायन को क्रोध उपजावेंगे।।33।।

अर महा भाग जो कृष्ण तिनका कोसांबी नामा वन विषें सूते का जरत्कुमार के बाण कर परलोक होयगा। जन्म मरण के निश्चय कारण तो जगत विषें रागद्वेषादि भाव हैं अर जब प्रताप का क्षय होय है तब बाह्य कारण भी अनेक मिले हैं।।25।। इसलिये जो ज्ञानी वस्तु का स्वभाव जाने हैं सो प्रताप विषें हर्ष न करें अर नाश विषें विषाद न करें। यह विवेकियों की रीति है अर तुमको वासुदेव के वियोग का अति संताप होयगा फिर प्रतिबुद्ध होय भगवती दीक्षा धारोगे सो महा तप कर पांचवें ब्रह्म स्वर्ग देव होवोगे। फिर नर भव पाय निरंजन पद पावोगे यह वार्त्ता सुन द्वीपायन रोहिणी का भाई बलभद्र का मामा तत्काल जिन दीक्षा धारता भया अर विहार कर गया बारह वर्ष पूर्व की दिश रहा तप कर शरीर क्षीण किया अर कषाय भी मंद पड़ी।।29।। जरत्कुमार अपने बाण कर हरि का परलोक जान अति दुखी भया। अर सब कुटुम्ब को तजकर ऐसा दूर गया जहां हरि का दर्शन न हो। जरत्कुमार हरि के स्नेह कर अति व्याकुल होय अकेला दूर वन में गया सो वन के जीवों की न्याईं वन विषें विचरे। हरि ही है प्राण जिसके सो यह दोनों तो दिशांतर गये अर सब यादव भगवान को नमस्कार कर द्वारावती में गये। होनहार जो दुःख उसकी चिन्ता कर संतप्त हैं मन जिनके।।33।।

अर द्वारावती जिनधर्मियों की पुरी महा दया धर्म की भरी तहाँ मद्य मांस का प्रयोजन कहाँ? जहाँ बलदेव वासुदेव का राज वहाँ कुवस्तु की चर्चा कहाँ, परन्तु कर्म भूमि है कोई एक पापी गोप्य करता होय यह विचार बलदेव वासुदेव ने पुरी विषें घोषणा करी जो मद्य अर मांस की सामग्री कोई न राख सके। जिसके यह सामग्री होय सो शीघ्र ही नगर बाहर जाय डाल आवो जो राखेगा सो दंड योग्य होयगा। यह आज्ञा सुन जिनके घर में छुपा मद्य था अथवा मद्य की सामग्री थी सो नगर बाहर कदम्ब नामा वन विषें डारी सो सूक कर पाषाण समान होय गई।।36।। फिर वासुदेव द्वारका विषें नर नारियों को सब ही को वैराग्य की आज्ञा कही, यह घोषणा पुरी में फिरी जो कृष्ण की यह आज्ञा है मेरा पिता अर माता अर भ्रात बंधु पुत्र स्त्री पुत्री जो वैराग्य धरे सो शीघ्र धरो। मेरे राज लोक अथवा भाइयों के राज लोक अर नगर के लोक नर नारी जो जिन दीक्षा लेय अर तप आचारे सो शीघ्र आचरो। मैं किसी

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

को मने न करूं यह आज्ञा हरि की सुन कर हरि के पुत्र प्रद्युम्न भानुकुमार आदि चरम शरीरी अर अन्य भी बहुत परिग्रह तज मुनि होते भये।

अर हरि रुक्मणी सत्यभामा जामवंती आदि आठों ही पटराणी अर राजों की राणी सहित अर सोलह हजार हरि की राणी इनकी सौक तिनमें कई एक सहित हरि की आज्ञा से जिन दीक्षा धारती भईं। द्वारका के पुरुष तो मुनि भये अर स्त्री बहुत आर्यका भईं। माधव ने सबों को यही कही जो संसार समान अर समुद्र नहीं अति गंभीर है अर वीतराग के मार्ग समान अर कोई जहाज नहीं अर श्री नेमिनाथ समान अर कोई सार्थबाह नहीं इसलिये संसार को असार जान श्री नेमिनाथ का शरण लेवो अर मेरे वैराग्य का उदय नहीं है अर बलदेव के भी मेरे मोह कर मुनिव्रत नहीं। यह मेरे मरे पीछे मुनिव्रत धारेंगे इसलिये मेरे सब ही भाई यादव अर अन्य वंश के राजा हमारे सगों अर सब ही प्रजा जगत का संबंध छोड़ जिनराज का धर्म आदरो अर श्रावक के व्रत धारो। इस भांति वासुदेव ने आज्ञा करी सो बहुत वैराग्य धारते भये अर कई श्रावक भये अर सिद्धार्थ नामा सारथि उसने बलदेव से वैराग्य की आज्ञा मांगी। तब बलदेव ने उससे यह प्रार्थना करी जो तुम वैराग्य धारो परन्तु जब मुझे कृष्ण के वियोग का सन्ताप उपजे तब तुम देवलोक से आयकर मुझे संबोधियो। सो वचन उसने प्रमाण किया अर अनेक नर नारी नेमिनाथ के निकट व्रत धारते भये।

अथानन्तर – महा संघ सहित भगवान पल्लव नामा देश की ओर विहार किया। भव्य रूप कमलों को प्रफुल्लित करणहारे जिन रवि धर्म का उद्योत करते भये।।42।। अर द्वारिका के लोक नगर की वस्ती छोड़ वन विषें जाय वसे थे अर व्रत उपवास पूजा दान विषें तत्पर थे। बारह वर्ष की गणना भूल गये अर बारह वर्ष बीते जान पहले ही नगर भीतर आय बसे अर द्वीपायन रोहणी का भाई मुनि होय विदेश विषें विहार कर गया था सो भ्रांति से बारह वर्ष बीते जान पहले ही द्वारिका आया सो मिथ्यादृष्टि द्रव्यलिंगी मन में ऐसी जानता भया। जो भगवान भवितव्य कहा था सो निर्वृत भया। यह विचार द्वारका के बाहर गिर निकट आतापन योग धर कायोत्सर्ग खड़ा।।47।। अर कृष्ण का पुत्र संबुकुमार उसे आदि देय कईएक यदुकुमार वन क्रीड़ा को गये थे सो खेद खिन्न भये अर जल की तृषा अधिक उपजी सो उस वन विषें कदंब नामा कुंड विषें जो मदिरा पहले गिरी थी सो सूक गई उसमें जल वर्षा अर कुंड के तट महुवा के वृक्ष थे तिनके फल उस कुंड के जल में पड़े अर ग्रीष्म की धूप कर जल में उष्ण भये। सो वह जल सब मदिरा समान होय गया सो तृषा कर पीड़ित यादव कुमार तिन्होंने छाण कर पीया वह कदंव वन का जल सो ही कादंबरी कहिये मदिरा उसे पीय कर यदुकुमार विकार को प्राप्त भये।।49।। वह मदिरा जो पूर्वे कुंड में डारी सो यद्यपि पुराणी थी तथापि परिपाक के वश से नवीन नारी की न्याईं इनको उन्मत्त करती भई। इनके नेत्र अरुण होय गये अर यह बावरे भये।

कुछ का कुछ बक भंडगीत गावें अर नाचें जिनके चरण डिगे, सिर के केस बिखर रहे अर कंठ विषें वनमाला थी सो विखर गई।।51।।

इस भांति बेडे भये नगरी में आवते थे सो मार्ग में द्वीपायन को देख कर घूर्णमान हैं नेत्र जिनके ऐसे यह यदुकुमार परस्पर बतलाये। यह द्वीपायन जिनकर द्वारका का अंत होनहार था सो अब यह देखें हमसे बचकर कहाँ जाय। ऐसा कहकर सब ही निर्दयी पाषाणों कर तपस्वी को मारते भये। सो बहुत मारा ऐसा किया जो तपस्वी पृथिवी में पड़ा अर तपसी को अधिक क्रोध उपजा, भौंह चढ़ाई अर होंठ डसे अर यादवों के प्रलय के वास्ते उद्यम किया। तब यह यदुकुमार भाग कर द्वारावती में आये चलाचल हैं चित्त जिनके सो यह समाचार किसी ने बलदेव अर वासुदेव को कहे जो कुमारों ने यह विपरीत करी। तब दोनों भाई सुन कर मुनि से क्षमा करावने को शीघ्र ही मुनि पै गये। छत्र, चंवर, सिंहासन सर्व सेना तज कर उस पर गये। वह क्रोध रूप अग्नि कर प्रज्वलित था क्लेश रूप है बुद्धि जिसकी वक्र है भ्रुकुटी जिसकी विषम है मुख जिसका अर निर्खे न जाय हैं नेत्र जिसके अर कंठगत हैं प्राण जिसके महा भयंकर द्वीपायण दोनों भाइयों ने देखा।

अर हाथ जोड़ नमस्कार कर नगरी का अभयदान मांगा। हे साधु! रक्षा करो, रक्षा करो इस तप का मूल क्षमा है अर क्रोध रूप अग्नि कर तप का नाश होय है। यह क्रोध धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों पदार्थों का शत्रु है अर आपका अर पर का नाशक है मोक्ष का साधन जो तप उसे क्षणमात्र में भस्म करे है। इसलिये इन मूढ प्राणियों की मूढ चेष्टा क्षमा करो अर हम पर प्रसन्न होवो। इस भांति प्रिय वचनों कर दोनों भाइयों ने प्रार्थना करी परंतु उसने न मानी सब संयुत जो द्वारिका उसके दाह विषें निश्चय किया।।64।। अर उसने दोय आंगुली ऊंची करी जो तुम दोय भाई बचोगे अर नहीं।।65।।

तब दोनों भाइयों ने जानी सबका नाश आय लगा यह खेद खिन्न होय द्वारकापुरी में आये अर अब क्या करिये। इस चिंता विषें तत्पर भये।।66।। उस ही समय संबुकुमार आदि अनेक यादव कुमार चरम शरीर अर स्वर्ग के जानेहारे नगरी से निकस गिरों की गुफा विषें गये अर द्वीपायन मिथ्यादृष्टि क्रोध रूप अग्नि कर मरा अग्निकुमार भवनवासी देव होय पुरी को भस्म करता भया। रौद्र ध्यान कर उसने विचारी मैं तपसी निरपराध मुझे इन्होंने मारा सो इन हिंसकों को पुरी सहित भस्म करूं ऐसा विचार उसने किया तब द्वारका विषें क्षय का कारण उत्पात होते भये घर घर सबों को रोमांच होय आये अर पहली रात्रि अति भयंकर स्वप्न लोकों ने देखे अर वह पापी क्रोधी तिर्यंच मनुष्यों कर भरी जो द्वारिकापुरी उसको दग्ध करना आरम्भता भया सो प्राणियों के समूह अग्नि विषें जले सो जलते प्राणी विलाप करते भये। तिनका विपरीत शब्द ऐसा भया जैसा कभी न भया।।74।। अग्नि की ज्वाला विषें बाल वृद्ध स्त्री पशु पक्षी सब भस्म होने लगे।

यहाँ कोई प्रश्न करे यह महा पुरी देवों ने रची अर जिसके अनेक देव परे गये सो देवन जाय अर उसकी रक्षा होय तो पुरी कैसे जले सो जलने का समय आया तब देव उठ गये। सब लोक वैरी के भय कर बलभद्र नारायण पर आये अति व्याकुल भये यह कहते भये जो हमारी रक्षा करो। तब बलभद्र नारायण कोट को भेद कर समुद्र का जल बुझाने को लाने लगे सो जल तेल के भाव को प्राप्त भया उस कर अग्नि अधिक प्रज्वलित भई बलभद्र महा बलवान समुद्र का जल हल की अणी से खैचा अर पुर में लाये सो उलटा अग्नि को प्रज्वलित करता भया।

तब दोनों भाई असाध्य जान माता पिता को काढने के उद्यमी भये सो रथ में बैठाये अर रथ के घोड़े जोये सो न चले अर हाथी भी न चले पृथिवी विषें रथ के पाये ऐसे फंसे जैसे कीच में फंसे तब आप दोनों भाई हाथी घोड़ों से रथ न चला देख दोनों जूपे अर लेकर चले तो भी रथ चल न सका मानों वज्र कर कीला है। जब बलदेव जोर करने लगे तब द्वार के कपाट स्वयमेव जुड़ गये तब दोनों भाइयों ने लातों की घात कर कपाट तोड़े उस समय आकाश में देव वाणी भई – जो द्वारिका से दोनों ही निकसेंगे अर नहीं।।84।। अर माता पिताओं ने कही – तुम जावो हमारा मरण निश्चय है। पुत्र हो, तुम वंश के तिलक हो। तुम जीवोगे तो सब होवेगा अर हमारा गमन यहाँ से एक पैंड न होय सके।।86।।

तब यह दोनों भाई माता पिताओं के पायन पड़ उनको प्रणाम कर उनकी आज्ञा पाय चले पुरी से निकस कर बाहर गये सो क्या देखे रत्नमयी नगरी जले है घर घर आग लग रही है। तब दोनों भाई कंठ से कंठ लगाय रुदन करते भये अर दक्षिण दिशा को निकले अर वहाँ वसुदेव आदि अनेक यादव अर उनकी राणी प्रायोपगमन संन्यास धर देवलोक को गये अर कई एक बलदेव के पुत्रादिक तद्भव मोक्षगामी थे अर संयम धरने के जिनके भाव भये तिनको देव नेमिनाथ के निकट ले गये अर अनेक यादव अर उनकी राणी जो धर्म ध्यान के धारक थे अर सम्यग्दृष्टि थे जिनका अंतरंग शुद्ध था तिन्होंने प्रायोपगमन संन्यास धारे सो उनको अग्नि का उपसर्ग आर्त्त रौद्र का कारण न भया और वह धर्म ध्यान से देह तज देवलोक गये।

चार प्रकार का उपसर्ग है – देवकृत, मनुष्यकृत, तिर्यंच कृत, अर स्वयमेव उपजा यह चार प्रकार के उपसर्ग मिथ्यादृष्टि जीवों को आर्तध्यान अर रौद्रध्यान के कारण हैं। अर सम्यग्दृष्टि जीवों को कदापि भी कुभाव के कारण नहीं। जो सांचे जिनधर्मी हैं तिनका मन मरण आये कायर न होय। किसी भान्ति मरण होवे अर किसी समय होय उनके दृढ़ता ही है अर अज्ञानी जीवों के मरण समय क्लेश सबों के होय है इसलिये कुमरण कर कुगति जाय हैं अर जो सम्यक् दर्शन कर शुद्ध हैं महा पवित्र हैं

मन जिनके सो समाधि मरण कर स्वर्ग पावें फिर परंपराय मोक्ष पावें जो जिनधर्मी हैं तिनके यही भावना है जो संसार विषे उपजा है सो अवश्य मरेगा। यह निश्चय है इसलिये हमारे समाधि मरण हूजियो। जो उपसर्ग भी आय बने तो भी हमारे कायरता न हूजियो यह भावना सम्यक् दृष्टियों के सदा रहे है।।94।।

धन्य हैं वह पुरुष जो अग्नि की शिखा के समूह कर भस्म होते हुए भी समाधि को नहीं तजे हैं अर कलेवर को तजे हैं जो तप करना तो निज पर के सुख के वास्ते अर सत्पुरुषों का जीवना है सोई निज पर के कल्याण के वास्ते है, मरण समय भी किसी पर द्वेष न चिंतवें क्षमा भाव से देह तजें यह सन्तों की रीति है अर द्वीपायन ने तप भी बिगाड़ा अर मरण भी बिगाड़ा अपना नाश किया अर अनेक जीवों का प्रलय किया सो दुष्ट निज पर को दुःखदायी भया। जो पापी पराया बध करे है सो जन्म विषें अपना घात करे है।।97।। कषायों के वश भया तब आत्मघाती होय चुका पराया घात कर सके अथवा न कर सके उनका घात तो उनके प्रारब्ध के अनुसार है अर इसने उनका घात विचारा तब आत्मघाती होय चुका अर जीव हिंसा का पाप इसे लग चुका। दूसरे को हतूं ऐसे भाव करना सो जलते लोहे के गोले को उठाय दूसरे को मारना है सो वह तो मरे अथवा न मरे यह तो जल ही चुका सो जो कषायों के वश भया सो आत्मघाती है। किसी को तो तप निर्वाण का कारण होय है अर द्वीपायन को तप दीर्घ संसार का कारण भया। यह जीव अनादि काल का कर्मों के वश है सो इसके अपराध कहां तक कहिये। संसारी जीव तो अपराधी ही हैं परन्तु जो विवेकी हैं तिन्हों को भी मोह वैरी मोहित करै है।।1।।

कोई क्रोध का भरा अपना बुरा भी करे उसका भी सत्पुरुष भला ही करे। वह यह लोक परलोक दोनों सुधारे जो कोई पर जीव को दुःख करे है सो आप दुःख की परम्पराय भोगवे है जो पर जीव को दुखी करे है उसके दुख अवश्य उपजे है इसलिये क्षमा ही करनी।।3।। क्रोधकर अंध जो द्वीपायन तापस उसने भवितव्य के वश कर द्वारावती भस्म करी जहां बाल वृद्ध स्त्री अर पशु बहुत भस्म भये। वह पुरी जीवों से भरी थी सो छै महीने तक जलती रही इसलिये धिक्कार इस क्रोध को। यह क्रोध आपका पर का नाश करनहारा है अर संसार का बढ़ावनहारा है। द्वीपायन ने जिनवाणी की श्रद्धा उल्लंघी ऐसा तीव्र क्रोध किया सो धिक्कार इस क्रोध को, अर अज्ञानी जीवों को, जो क्रोध, मान, माया, लोभ, मद, मनोज इनके वश पड़ नरक निगोद विषें महा दुःख भोगे है।।105।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ द्वारावतीविनाशवर्णनो नाम एकषष्टितमः सर्गः।।61।।

बासठवाँ सर्ग

अथानन्तर – गौतम स्वामी राजा श्रेणिक से कहे हैं – हे श्रेणिक! यह बलदेव वासुदेव बड़े पुरुष मनुष्यों के वचन से अगोचर है महिमा जिनकी सो पुण्य के योग से परम उच्चता को प्राप्त भये थे अर सुदर्शन चक्र आदि अनेक महा रत्न इनके थे। भरतक्षेत्र के भूपति पुण्य के क्षय से रत्नों से रहित भये बन्धुवर्ग से वर्जित भये। प्राण मात्र ही है परिवार जिनके सो दोनों वीर महाधीर शोक के भार कर पीड़ित जीने की आशा धर दक्षिण की ओर चले। पांडवों को दक्षिण मथुरा जान उन्हीं के पास दोनों भाई चले।।3।। मार्ग में एक हस्तवप्र नामा नगर तहां आये सो हरि तो नगर के वन में विराजे और हलधर भोजन के वास्ते सामग्री लेने को नगर में गये, वस्त्र से लपेटा है सर्व अंग जिसने तहां राजा अछदन्त धृतराष्ट्र के वंश में है सो पृथिवी विषे प्रसिद्ध महा धनुषधारी है और दुर्जन पराया छिद्र हेरे अर इनका महा शत्रु।।6।।

बलदेव ने अपना रूप घणा ही छिपाया परन्तु चान्द सूर्य्य कैसे छिपे, बलभद्र के रूप की पास कर खेंचे हुए नगर के लोगों के समूह इनके आसपास भेले होय गये, बलदेव नगर में प्रवेश किया। लोग इनका रूप देख आश्चर्य को प्राप्त भये। सबों ने जानी यह बलदेव स्वामी है आप एक वणिक की हाट पर खड़े और कुण्डल धर कर अन्नादिक लिये अर नगर से निकसे बाहर जाते थे, द्वारपाल ने देख कर राजा से कही, बलदेव जाय हैं तब राजा मूर्ख इनके मारने वास्ते सब सेना पठाई, सो इनको दरवाजे रोके तव बलभद्र अन्न पान सामग्री तो सब डाल दी अर आप हाथी बांधने का थंभ उपाड अर कृष्ण को आवाज दी सो कृष्ण भी शीघ्र ही आये सो कृष्ण ने परिघ कहिये दरवाजे की आगल हाथ ली अर बलदेव ने गज स्थम्भ लिया दोनों वीर महाधीर शत्रुओं से लडे।

राजा अछदन्त सकल सेना सहित इन पर आया था सो सकल सेना भी भागी अर राजा भी भागा। मनुष्य की क्या शक्ति जो इन पुरुषों से लड़े। दोनों वीर महा धीर अन्न पानादि सामग्री लेय कर नगर से निकस विजय नामा वन में गये। तहां एक मनोहर सरोवर देखा।।31।। तहां दोनों भाइयों ने जल छान स्नान कर अपने घट विषें जो श्री भगवान नेमिनाथ विराज रहे हैं तिनको नमस्कार कर तिनका ध्यान किया शीतल जल पीया पवित्र भोजन किया।।14।। उस वन में क्षण एक विश्राम कर दक्षिण की दिश चले सो कोशाम्बी नामा महा भीम वन अति दुर्गम उस विषें पैठे।।15।।

कैसा है वह वन, खग कहिये महा दुष्ट पक्षी तिनके हैं अशुभ शब्द जहां अर सिंहादिक के हैं भयंकर शब्द जहां अर सुनिये हैं शृगालों (गीदड़ों) के खोटे शब्द जहां अर तृषा के मारे मृगों के समूह

तहां दौड़े दौड़े फिरे हैं। तहां मृगतृष्णा बहुत दीखे हैं अर जल दुर्लभ है।।16।। ग्रीष्म का उग्र ताप उस कर बाजे है ग्रीष्म पवन जहां सो सही न जाय है अर दावानल कर जल रहे हैं वृक्ष अर बेलों के समूह जहां तिन कर महा भयानक वन भासे है जहां नीर अति दूर सो वन के जीव तृषा कर आतुर महा व्याकुल भये भ्रमै हैं अर वनचर कहिये भील तिन्होंने हाथियों के कुंभस्थल विषें बाण लगाये हैं सो गजमोती बिखर रहे हैं ऐसे भयंकर वन विषें दोनों भाई जाय प्राप्त भये। ग्रीष्म की ऋतु है मध्याह्न का समय है अर सूर्य्य मध्य भाग विषें है उस समय कृष्ण बलदेव से कहते भये उपजा है तृषा का अति खेद जिनको, हे आर्य कहिये हे निष्कपट! मैं प्यास कर अति पीड़ित हूँ मेरे होंठ अर तालबा सूके हैं। अब एक पग भी धरने को मैं समर्थ नहीं इसलिये मुझे शीतल जल शीघ्र पिलावौ जिसकर मेरी तृषा मिटे जैसे अनादि साररहित संसार विषें सम्यग्दर्शन की प्राप्ति भये भव आताप मिटे।।21।।

इस भांति कृष्ण ने बलदेव से कही। कैसे हैं कृष्ण, स्नेह के भार कर कोमल है मन जिनका अर तृषा के दाह कर उष्ण निकसे है स्वास जिनके ऐसे हरि तिनको हलधर कहते भये – हे भ्राता! हे तीन खंड के तात! मैं शीतल जल तुझे ल्याय कर प्याऊंगा। इतने तुम जिन स्मरण रूप जलकर तृषा को बुझाओ तुम तो जिनवाणी रूप अमृत के पान कर सदा तृप्त ही हो अर यह जल तो तृषा को अल्प काल ही मिटावे है फिर तृषा उपजे है अर श्री जिनराज का स्मरण रूप जल तृषा को मूल से मिटावे है इसलिये जिन स्मरण करो। हे हरि! तुम जिन शासन के वेत्ता यह शीतल वृक्ष की छाया तहां तू शयन कर तिष्ठ, मैं तेरे वास्ते शीतल जल लाऊं हूँ। हे हरि! शीतल चित्त तू अपने शांत भाव रूप भवन विषें भगवान जिनेश्वर को थाप।।25।। ऐसा छोटे भाई को बड़ा भाई उपदेश देय कर जल के लायवे वास्ते बहुत दूर गया, कृष्ण के दुःख कर दुखी है चित्त जिसका सो अपना खेद न विचारा, हरि का खेद हरने को हलधर गया। कैसा है हलधर, जिसके हृदय विषें हरि ही बस रहे हैं।।26।। सो भाई तो जल को गया अर जगत् को सुखदाई वासुदेव जगदीश का ध्यान करे। सघन वृक्ष की छाया कोमल पृथिवी विषें पीतांबर ओढे पौढा (लेट गया) बायें गोडे पर दाहिना चरण धर हरि ने खेद दूर करने के वास्ते क्षण एक विश्राम किया।।28।।

उस ही समय दैवयोग से जरत्कुमार तहां आय निकसा वह पापी मृगया के अर्थ वन विषें अकेला भ्रमता था। हरि ही के प्राण की रक्षा वास्ते स्नेह के भार कर भरा द्वारका से निकस दूर वन विषें आया था अर वनचरों की न्यांई वन में बसता था सो भवितव्य के योग कर तहां आया, धनुष है जिसके हाथ में, सो दूर ही से देखता भया वह न जाने वासुदेव है केशव लेटे हुए थे सो इनका पीताम्बर पवन कर हालता था सो उसने जानी यह सूते मृग का काण हले है। यह विचार पापी पारधी ने धनुष के बाण

लगाकर चलाया सो हरि के चरण विषें आय लगा, पगथली भेदी गई। तब आप शीघ्र ही उठे अर सब दिशा निरखी सो वृक्ष के आसरे नजर न पड़ा तब केशव कहते भये – इस वन विषें हमारा शत्रु कौन है जिसने हमारा पांव बीधा सो अपना नाम कहो अर कुल कहो। मेरे यह विरद है जो बिना कुल अर नाम जाने घात न करूं, इसलिये कहो तू कौन है? तेरे कुल क्या अर नाम क्या अर इस वन विषें मेरा अंत करता भया सो बैर कहा?

इस भांति केशव कही, तब जरत्कुमार बोला – इस पृथिवी विषें हरिवंश उपजा राजा वसुदेव अति प्रसिद्ध बलदेव वासुदेव का पिता उनका मैं जरत्कुमार नामा पुत्र हूं। पिता के अति बल्लभ सो कायरों कर अगम्य जो यह वन उस विषें अकेला भ्रमूं हूँ।।39।। मैं श्री नेमिनाथ की आज्ञा सुनी जो जरत्कुमार के बाण कर वासुदेव का वियोग है। इसलिये वस्ती छोड़ वन विषें बसूं हूँ। मुझे वन में बसते बारह वर्ष भये सो मैंने उत्तम पुरुषों का वचन अब तक यहां न सुना, तुम कौन हो सो कहो? यह वचन जरत्कुमार के सुन कर मन में जानी, यह भाई जरत्कुमार है। इसने पूर्व कर्म के उदय से जिनधर्म न जाना इसलिये पारधी की न्यांई भ्रमे है।

तब केशव बोले – हे भाई! यहां आवो। इसे अति आदर से बुलाया सो जरत्कुमार भी वासुदेव को जान कर हाय हाय करता धनुष बाण डार हरि के पांवों पड़ा।।43।। तब हरि ने इसको उठाय कर उर से लगाया वह महा शोक रूप, सो उसे कही – हे ज्येष्ठ भ्राता! तू शोक मत करे भवितव्यता दुर्लंघ्य है तुम मेरे प्रांण के अर्थ सुख सम्पदा तजी अर प्रमाद तजा अर चिरकाल वन का निवास किया। भवितव्य के निवारने का प्रयत्न बहुत ही किया परन्तु भवितव्य न टरे, जब दैव परान्मुख होय तब कोई कहा यत्न कर सके इसलिये तुम अब शोक तजो अर पाप का त्याग करो। अब श्रावक के व्रत धरो।।46।।

तब उसने हरि से वन के आगमन का वृत्तान्त पूछा। तब हरि सब कथा आद्योपांत कहते भये जो द्वारका का दाह भया जे वैराग्य भये ते ही बचे अर सब भस्म भये। तब यह गोत्र का नाश सुनकर अति विलाप करने लगा अर कही – सब गोत्र की यह भई अर तुमसे मैं यह करी। अब मैं कहा करूं अर कहां जाऊं। कैसे चित्त समाधान होय मेरा अपयश भी बहुत भया। अर मैंने मोटा पाप उपार्ज्या अर महा दुखी भया।।49।। इत्यादि विलाप का कर्त्ता जो जरत्कुमार उसे वासुदेव स्वामी कही – हे राजेंद्र! प्रलाप तजहु, यह जगत् के सकल जीव अपने उपार्जे कर्म का फल भोगवे हैं।

इस संसार विषें सुख अर दुख का दाता कोई शत्रु अर मित्र नहीं, निश्चय थकी विचारिये तो कर्म ही सुख दुख का दाता है। मुझे जल प्यावने के अर्थ बलदेव जल ल्यावने गये हैं सो वे न आवें तो

पहले तुम शीघ्र जावो। कदाचित् तुम पर उनका क्रोध होय अर वे तुमको मारें तो अपना वंश ही न रहे। अर वंश में तुम ही रहे हो तातें तुम श्रावक के व्रत धरो अर पांडुवन पर जावो। उनको सब वार्ता कहो वह अपने परम हितू हैं। हमारे कुल की रक्षा के अर्थ तुमको राज देवेंगे। ऐसा कह केशव ने जरत्कुमार को कौस्तुभमणि दी अर कही या सहनानी (चिह्न) तें पांडव तिहारा आदर करेंगे। अर या मणि को तुम मार्ग में छिपाय कर ले जाइयो। ऐसा कह इसको मणि देय विदा किया अर क्षमा कराई।

वाने कही – हे देव! मेरी क्षमा है आप क्षमा करियो अर कौस्तुभ मणि लेय वह चला अर बहुत यतन से इनके पांव का बाण काढ वह तो गया। अर हरि के बाण के घाव की अति वेदना भई। तब आप उत्तर की ओर मुख कर पल्लव देश विषें श्री नेमिनाथ विराजे हैं तिनको नमस्कार किया अर पंच नमोकार मंत्र का स्मरण किया भगवान नेमि जिनेंद्र यादवन के ईश्वर वर्तमान तीर्थेश्वर तिनके अनन्त गुण स्मरणकर हाथ जोड़ बारंबार नमस्कार किया। अर भूत भविष्यत् वर्तमान तीनों काल के सर्व तीर्थेश्वर तिनको अर सकल सिद्धन को साधुन को जिनधर्म को प्रणामकर चौसरण लेय पृथ्वी के नाथ पृथ्वी पर पौढ़े उत्तर की ओर शिर किया। अर दक्षिण की ओर पांव किये।।56।। अर वस्त्र से ढका है सर्व अंग जिनका।

अर संसार की माया से निवृत्त है बुद्धि जिनकी सब जीवन विषें मैत्री भाव के धारक मन में ऐसा शुभ विचार करते भये। मेरे पुत्र पौत्र स्त्री भ्रातृ गुरुजन अर बांधव जे अग्नि के उपद्रव पहले ही संसार का त्यागकर सर्वज्ञ वीतराग का मार्ग आराधते भये अर तप विषें प्रवर्ते ते धन्य हैं। अर जे अग्नि के उपद्रव भये मेरी हजारों रानी अर बंधुवर्ग परम समाधि योगकर देवलोक गये अग्नि के उपद्रव कर भी जिनके कायर भाव न भया, ते धन्य हैं। अर मेरे अप्रत्याख्यान कषाय का उदय ताकर महाव्रत न पले। अर श्रावक के व्रत हू न पले, केवल सम्यक्त्व ही का धारण भया सो ही मेरे हस्तावलंब है।

देव वीतराग गुरु निरग्रन्थ साधु धर्म जीवदया मेरे यह श्रद्धा दृढ़ है।।60।। इत्यादि शुभ चिंतवन करते हौणहार तीर्थेश्वर वासुदेव परलोक पधारे। वे महा प्रवीण तीन खंड के स्वामी नारायण अर्द्ध भरत का राज कर प्रजा को भी आनन्द उपजाया बहुत दिन सुख किया। यादव वंशरूप समुद्र के बढ़ावने को चन्द्रमा एक हजार वर्ष का आयु पूर्ण कर कौसांबी नामा वन से पर भव पधारे उन पुरुषों ही का शरीर स्थिर नहीं तो अरन की कहा बात।।62।।

इति श्री अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ हरिपरलोकगमनवर्णनो नाम द्विषष्टितमः सर्गः।।62।।

तिरेसठवाँ सर्ग

अथानन्तर – बलदेव स्वामी वासुदेव के अर्थ जल लेने को दूर गये थे जिनके चित्त में कृष्ण ही बसे हैं। अर मार्ग में इनको अनेक अपशगुन भये अर पीछे नहीं आये। वन में जल दुर्लभ अर ठौर ठौर मृगतृष्णा सो ए जाने जल ही भरा है। सो वन के मध्य मृग दौड़े तैसे यह भी दौड़े-दौड़े फिरें बहुत दूर दौड़े तब हलधर ने एक सरोवरी देखी जहां चकवी अर कलहंस सारस सुन्दर शब्द करे हैं। कमल फूल रहे हैं अर भंवर गुँजार करे हैं। ताहि देख हलधर प्रसन्न भये। अर इनको स्वांस आया अर शीतल मन्द सुगंध पवन सन्मुख आई जिस कर खेद निवृत्त भया।।4।। वा सरोवरी में अनेक जीव जल पीवने को आवे हैं सो इनको देखकर डरे सो इधर-उधर हो गये। ए महादयाल! इन कर किसी जीव को भय नहीं, यह जल भरने वा सरोवरी में गये जो जल वन के गंध हस्तीन को सुगन्ध ताकर सुगन्धित होय रहा है। सरोवरी में जाय जल छाण कर आप पीया तृषा बुझाई अर भाई अर्थ कमल पत्रों का भाजन कर शीतल जल से भर वस्त्र से लपेट ले चले।।5।।

सौ दौड़े चले आवें चित्त में भाई का सोच जो मैं भाई को अकेला ही छोड़ आया हूं अर वन में विघ्न बहुत हैं अर भाई भोला है, सदा आनंद रूप है, वह दुःख सुख की कहा जाने। या शंका कर कंपायमान है हृदय जिसका सो दौड़ा चला आवे। पगन कर उठा रज ताकर धूसरे होय गये हैं सुन्दर सिर के केस जिसके।।7।। आय कर दूरते देखे तो हरि पीताम्बर ओढे पड़े हैं। वस्त्र कर आच्छादित है सर्व अंग जिसका सो दूर से बलदेव ने देख कर विचारी जो वृक्ष तले मैं छोड़ गया तहां ही तिष्टे हैं। ये राजा सूर के वंश का सूर्य।।8।। पृथिवी का नाथ सुख निद्रा सोवे है सो आप ही सुख से जागेगा। मैं जगाऊं तो खेद होय यह विचार बलदेव बैठा वासुदेव का मुख जौवे। वह जाने आप ही जागेंगे जब बहुत देर भई अर गिरधर न जागे, तब हलधर ऐसे वचन कह जगायवे का उद्यम करते भये। बलदेव कहे हैं – हे वीर! बहुत कहा सोवो, अब शयन तज कर उठो जल पीवो। ऐसे मधुर शब्द कर बलदेव जगावे सो सुख निद्रा सोते होंय तो जागें हरि तो दीर्घ निद्रा सोते थे दो चार बार जगाये।

जब न जागे तब बलभद्र मौन गह विराजे फिर बलदेव ने हरि के चरण के घाव की गंधते चींटी वस्त्र के भीतर पैठती देखीं सो पैठ तो गईं अर वस्त्र के आवरणते निकल न सकीं, सो चींटी आकुलता रूप बड़े भाई ने देखी तब हर के मुख का वस्त्र उघाड़ा सो देख कर जाना। याकी तो कुछ अर ही दशा है। यह जगत् का प्यारा क्या परलोक को गया। मेरा सर्वस्व गया यह कृष्ण तो तृषा कर परभव पधारा। यह विचार बलदेव वासुदेव के उर से लग गया अर याह मूर्च्छा आई सो मूर्च्छित होय गया सो मूर्च्छा न आई इसे जिवाया यद्यपि यह मूर्छा अनिष्ट है तथापि उनको उपकार की कर्त्ता भई जो

मूर्छा न आवती तो तत्काल बलभद्र प्राण तजते हरि के स्नेह की पासि कर हलधर दृढ़ बन्धे हैं, इन जैसा स्नेह जगत् में नहीं। क्षणेक में बलभद्र सचेत हो वासुदेव का अंग अपने हाथ कर स्पर्शते भये, अर चरण के घाव लगा है सो बलभद्र ने देखा हरि की पगथली तो सदा अरुण ही है अर रुधिर के जोग कर अति अरुण देखी अर कछुयक रुधिर की गंध भी असुन्दर जानी।

तब मन में विचारी मेरा भाई तो सूता था सो किसी शत्रु ने हणा। विषम बाण कर याका चरण बींधा सो वह हरि का मारणहारा कौन है ऐसा कह कर महाबली बलभद्र सिंहनाद करता भया। सिंहनाद कर वन शब्दायमान होय गया, अर मातै हाथियों के मद उतर गये, अर सिंह भी गुफा में घुस गये। बलदेव वन में शब्द करे हैं – जाने निःकारण वैरी ने मेरा छोटा भाई सूता अविधि से मारा है सो शीघ्र मोहि दिखाई देय, जो क्षत्री शूरवीर हैं ते सूते को अथवा शस्त्र रहित को अर असावधान को अर नम्रीभूत को अर जो मान तजे उसको अर जो भागे उसको अर स्त्री को बालक को वृद्ध को अर रोगी न मारें। कैसे हैं क्षत्री, यश ही धन जिनके।।18।।

इस भांति ऊंचे स्वर शब्द करता महावली कितनी दूर वन में दौड़ा जब कोई न देखा तब पाछा कृष्ण को उर से लगाय रुदन करने लगा। बलभद्र विलाप करे है – हा! जगत् सुभग हा! जगत् पति हा! शरणागत प्रतिपाल हा! जनार्दन हा! लोक मित्र हा! जगत् के आश्रय तू मोहि छोड़ गया। हे लघुवीर! तू शीघ्र ही आय मोहि दर्शन देहु। इस भांति विलाप करे है।।20।। अर मनोहर शीतल जल ताप का हरणहारा हरि को प्यावे। सो हरि के गले कैसे उतरे जैसे अभव्य के अर दूरभव्य के उर विषें सम्यग्दर्शन न आवे।।21।। तैसे जल कंठ विषें न उतरा बलदेव अपने हाथन कर वासुदेव का अंग पूंछ पपोले। अर साम्हने बैठा मुख निरखे अर मुख चूमे, सूंघे, स्पर्शे मूढ़ हो गई है बुद्धि जिसकी सो हरि के मुख के वचन सुना चाहे है।।22।।

कान्ह को ऐसे वचन कहे हैं – हे धीर! वैरीन कर चौरन कर सब समस्त पृथिवी ऊजड़ होय है। द्वारका तो भस्म भई अर पृथिवी को क्यों न सम्भालहु पृथिवी तो अब तक सुबस बसे है। तुम संभालहु अब तू ऐसा सोच क्यों करे है। जो यदुवंश अर भोजवंश सब ही क्षय भया मेरे कोई भाई न रहा, ऐसा सोच मत करहु जो हम अर तू है तो सब ही हैं अर तू मेरे अनेक जन्म का भाई है सो मैं तुझे देखता–देखता अब तक तृप्त न भया तो अब तृप्त कैसे होय।।25।। अर मेरी भी भूल जो तेरे ताईं या गहन वन विषें अकेला छोड़ मैं जल को गया, हे रत्नों में रत्न! हे गुण भूषण! जो लोक विषें सार वस्तु थी सो मेरी हरी गई, जो मैं तेरे पास होता तो मेरे होते ऐसा कौन है जो तेरी घात करे, कंस का मद सोई भया पर्वत ताके चूरवे को वज्र समान तू अर भूमिगोचरी अर विद्याधर तिनका नायक अर गरुड विमान है वाहन जिसका अर देवन को जीतनहारा यश का सागर जल थल विषें है आज्ञा जिसकी, अर समुद्र

तरणहारा सो तू कहा गौ के खुर विषें डूब गया।

मागध आदि समुद्र के देव तिनका स्वामी साक्षात् सूर्य अब क्यों अस्त होय है, जैसे सूर्य तिमिर को हर कर जगत् विषें उद्योत करे तैसे तें अन्याय रूप तिमिर को हर कर जगत् विषें धर्म का प्रकाश किया कोऊ तेरे सन्मुख न आया तू जगत् को जीत कर जगत् विषें यश उपारजता भया। हे विष्टरश्रव! हे माधव! अब तिहारे सोचकर सूर्य अस्त होय है सो देखहु, अर सायंकाल की संध्या करहु तेरे सोयवे कर सबन को सोच उपजा है तेरी दीर्घ निद्रा देख सूर्य हू अपने किरण रूप कर तिनकर अस्ताचल को स्पर्शता संता नीचा उतरे है। तेरे सोवने को सोच कौन को न होय। जैसे तू अपने तेज कर सकल शत्रुन को जीत पृथिवी विषें प्रकाश करता भया। तैसे तेरी तरह दिनकर तिमिर को निवार सर्व दिशा विषें उद्योत कर अब छिपे हैं सो तू याकी ओर तो देख यह तेरे सोच कर व्याकुल भया अस्त होय है।।29।।

यह सूर्य्य वारुणी कहिये पश्चिम दिशा उस ओर आय कर अस्त होय है अर नीचा पडे है जैसे कोई वारुणी कहिये मदिरा का प्रसंग करे सो नीचा पड़े है अधोलोक जाय तैसे सूर्य वारुणी कहिये पश्चिम दिशा ताका संग किया। तातैं मानो नीचा ही पडे है चकवा चकई के समूह विलाप करे हैं। अर सूर्य्य चकवा चकई कर बाह्य थका हू जैसे कोई समुद्र में डूबे तैसे अस्ताचल के आश्रय आया है सो सूर्य आकाश रूप उदधि विषे चुभकी लेयता थका मानो जल ही दे है। जो कोई समय का वेत्ता होय सो समय विचार कर कार्य करे।।31।। अर संध्या की आरक्ता की पटल कर दिशा लाल होय गई है। सो मानो सकल तिर्यंच अर नर तेरी दीर्घ निद्रा कर रुदन करे हैं तिनके नेत्रन की मानो अरुणता की विस्तरी है। हे देवभक्त! वीतराग देव विषे है भक्ति जिसकी सो तू संध्या वंदना कर यह सामायिक षडकूर्णे का वेला है। हे देव! अब बहुत निद्रा मत करो। पहली सूर्य्य गया हुता अब यह सांझ भी गई रात्रि का समय भया। जैसे खोटे काल विषें महा दुष्ट काल की वृत्ति सबन को एक वर्ण करे यह तिमिर रूप दिशा जगत् को श्याम वर्ण करे है। सम्यग्दर्शन बिना मिथ्यात्वरूप तिमिर फैले तैसे सूर्य्य बिना तिमिर जगत् विषें विस्तरा है।

हे भ्रात! वन तिहारे विराजने लायक नहीं। यहां अनेक पापी जीव बिचरे हैं अर कुशब्द होय रहे हैं तातें यहां ते उठो। कोऊ नीका गढ़ होय तहां चलकर निशा व्यतीत करें। तुम मणिमई महलों के सोयवे बारे या वन विषें कहा सूते? कैसे हैं वह महल, नाना प्रकार के पुष्पन के हैं मंडप जहां अर महा कोमल सेज महा मनोहर विछे हैं वस्त्र जहाँ महा लक्ष्मीकर मंडित परम शोभा कर संयुक्त ऐसे मंडप विषें सुन्दर स्त्रियों सहित पोढते अर हजारों राजा दर्शन के अभिलाषी रहते जो ओसर पावें तो हरि के दर्शन करें तो तुम अब या कुभूमि विषें पौढ़े हो। हे पृथिवीपति! यह ठौर तिहारे रहने की नहीं, यहाँ वन के दुष्ट जीव गृद्ध, काक, जम्बुक, कहिये स्याल इत्यादि मांसभक्षी जीव विचरे हैं। तुम महा

चतुर जे तिहारी स्त्री मानवती होती तिनको प्रसन्न कर आप प्रसन्न होते। अर सम्पूर्ण निशा विलास में व्यतीत करते सो अब कहा दशा भई।।38।। सुन्दर स्त्री गान करती अर वंदीजन मनोहर पाठ करते तब तुम जागते सो अब कहा स्यालनीन के शब्द सुनो हो। तुम को पौढे देख पहले तो सूर्य अस्त भया फिर सांझ हो गई अर तुम सोयेई हो अब तो शयन तजो। इस भांति चार पहर निशा गई। बलदेव विलाप करवो करे। बहुरि प्रभात भया कमल फूले सूर्य उदय को सन्मुख भया तब बलदेव वासुदेव से कहा विनती करे है – हे प्रधान पुरुष! अब सूर्य उदयाचल पर उदय भया है मानो तुमको अर्घ ही दिया चाहे है।

यह कथा गौतम गणधर राजा श्रेणिक से कहे हैं – हे श्रेणिक! बलदेव ने वासुदेव से अधिक मोह किया। यह दोनों भाई प्राण बल्लभ हैं सो जेती बात बलदेव ने कही तेती सब विफल गई। जैसे अति बालक भर्तार विषें अवला की विकार चेष्टा विफल जाय तैसे सब चेष्टा विफल गई। आप भाई को निज पंजर में लिये फिरे जैसे कंस की शंका कर जन्मते ही कान्ह को उर से लगाय ले गये थे तैसे वन में लिये फिरें। इस भांति अनेक दिन अर अनेक रात्रि बलदेव को विलाप करते भये। न खान न पान न निद्रा मन वचन काय तीनों कृष्ण रूप निरन्तर हरि के शरीर को लिये भ्रमते हलधर वन विषें विश्राम न पावते भये।

अथानन्तर – ग्रीष्म ऋतु गई अर वर्षा ऋतु आई मेघ गर्जने लगे अर वर्षने लगे अर कारी घटाओं विजुरी चमकने लगी। तिस समय वासुदेव की आज्ञा प्रमाण जरत्कुमार पांडवन के समीप भील का भेष धरे दक्षिण मथुरा गया सो राजद्वार जाय पहुंचा। युधिष्ठरादिक से द्वारपाल कही जो हरि का दूत आया है तब राजा ने अति आदर से उसको बुलाया अर अति आदर से निकट बैठाया अर स्वामी की कुशल पूछी। तब जरत्कुमार शोक का भरा गद्‌गद् वाणी कर द्वारका का दाह अर अपने प्रमाद के योग से हरि का परलोक गमन कहता भया अर प्रतीति के अर्थ हरि की दी कौस्तुभ मणि राजा युधिष्ठर को देता भया सो कौस्तुभ मणि देख हरि वियोग जान युधिष्ठिर आदि पांचों भाई अति विलाप करते भये। हरि से है अधिक स्नेह जिनका सो वे परम स्नेही उच्च स्वर का रुदन करते भये। अर ताही समय पांडवन के राजलोक में कुन्ती माता अर पांचों भाइयों की स्त्री महा प्रलाप करती भईं। जैसे समुद्र की ध्वनि होय तैसी उनके रुदन की ध्वनि भई। पांडवन के घर के नर-नारी सब ही विलाप करे हैं – हा प्रधान पुरुष! महाधीर! हा संसार के कष्ट दूर करनहारे! तुम सरीखे पुरुष की यह क्या दशा भई।

इस भांति सब रुदन करने लगे कितनीक वेर रुदन कर बहुरि यह पांडव समस्त रीति के वेत्ता श्रीकृष्ण को जल देते भये अर जरत्कुमार भील का वेष धरे था सो भेष दूर कराया अर उसको बहुत उलाहना दिया। जो तुम बड़े वंश के पुत्र अर पारधियों के कर्म करो यह उचित नहीं तातैं श्रावक के

व्रत धारहु। इस भांति इसको उपदेश देय अग्रेसुर कर पांडव महा आरत के भरे हलधर को देखने चले। सो कइएक दिन में माता अर पुत्र अर द्रोपदी आदि राजलोक अर अपनी सेना सहित बलदेव के देखने को वन में आये सो बलदेव को कैसा देखा – भाई के मृतक शरीर को उबटना लगावे है अर स्नान करावे है अर आभूषण पहरावे है। तब यह पांचों भाई बलभद्र को उर से लगाय बहुत रुदन करते भये। फिर कुन्ती अति आधीन होय हलधर से हरि के दाह के अर्थ वीनती करती भई तब मुँह फेर लिया अर कही तू मर, तेरे पांचों पुत्र मरें। मेरा भाई क्यों मरे। यह बात कह परान्मुख होय गये जैसे बालक विषफल को गाढ़ा-गाढ़ा पकड़े अर मांगते किसी को न देय तैसे बलदेव वासुदेव को गाढ़ा-गाढ़ा छाती से लगावे अर काहू को न सौंपे।।56।।

पांडवों को देख कर बलदेव कहते भये – हे पांडवो! प्रभु बहुत देर के तिसाये हैं। सो उठकर पानी पीवेंगे। अर कुछ भोजन करेंगे ताते शीघ्र ही सब तैय्यारी करो, स्वामी को स्नान करावो फिर अन्नपान करावो। तब पांडवों ने कही – जो प्रभु आज्ञा करोगे सो ही होवेगा। तब तत्काल इन्होंने भोजन की तैयारी कराई। अर स्नान की सामग्री ले आये। सो बलदेव वासुदेव को स्नान करावे है। अर पानी का कटोरा भर प्यावे अर भोजन करावे सो वह भोजन कहा करें, जब वे अन्नपान न करें, तब ये भी न करें। यह दशा बलदेव की पांडवों ने देखी तब इनकी कृतार्थता वृथा मानते भये। परन्तु कहा करें, बडेन से कुछ कहा न जाय। तब बलदेव भोजन न करते तो पांडव भी भोजन न करें। पांडव इनके आज्ञाकारी हैं। बलदेव के लार-लार फिरें। इस भांति चतुर्मास पूर्ण करते भये।

अथानन्तर – शरद ऋतु आई मानो यह शरद ऋतु बलभद्र का मोह रूप मेघ पटल दूर करने को आई। सप्तपर्ण जाति के वृक्षन के पुष्पों की सुगंध फैली अर महा सुगंध गिरधारी का शरीर सो भी विगंध भया। तिसकी विगंधता दूर तक फैली सुगंध अर दुर्गंध ये दोनों ही एकत्र नाहीं। जहां सुगंध तहां दुर्गंध नाहीं अर जहां दुर्गंध तहां सुगंध नाहीं। इन दोनों की एक ठौर स्थिति न हो।।60।। अर बलभद्र का प्रतिबुद्ध होयवे का समय आया सो सिद्धार्थ नामा सारथी भाई जो देव हुआ था। अर जिससे वचन हुवा था, सो बलदेव के निकट आया, अर उसने बलभद्र को यह दृष्टान्त दिखाया। वह मनुष्य का रूप धर मायामई रथ में चढ़ा आया था। सो पर्वत के विषम तट पर रथ को नीके लिए आया, सूधे मार्ग में रथ नाख दिया सो संधि संधि जुदी हो गई। फिर बलभद्र को दिखाय संधि संवारने लगा।

तब बलभद्र पूछी – तेरा रथ विषम मार्ग में चला आया अर सूधे मार्ग में क्यों पड़ा? अर अब तू इसको संवारे है सो यह तो भिखर गया। संधि संधि जुदी होय गई तू कैसे करेगा? तब वह बोला – जो कृष्ण महाराज महा भारत रूप समुद्र को उलंघनहारे जरत्कुमार के बाण कर कैसे मूये। अर अब कैसे जीवेंगे? यह उत्तर दिया, तब बलदेव चुपके होय रहे। फिर वह जलरहित पर्वत की सिला पर

कमल रोपने लगा, तब बलदेव कही – कभी सिला पर भी कमल ऊगे हैं?

तब उसने कही – कभी मृतक भी अन्न–पानी ग्रहे हैं। तब हलधर मौन गहि रहे। फिर वह सूखे वृक्ष को सींचता भया। तब बलभद्र पूछी – कहीं सूखा वृक्ष भी हरा होय है? तब उसने कही – कभी परलोक गया हुआ भी पाछे आवे है। तब बलदेव नीचे होय रहे। फिर मृतक गाय के कलेवर के पास तृण डारता भया। अर उसका मुंह फाड कर जल पिवाबे सो वह कैसे पीवे। तब बलदेव कही – तू कहा करे है। तब उसने कही – तुम कहा करो हो।

बड़े पुरुष अपनी भूल न विचारें अर औरन की विचारें यह वचन सिद्धार्थ नाम सारथी जो देव है तिसके ऐसे वचन सुन बलदेव प्रतिबुद्ध भये – जानी, वासुदेव परलोक गये। जो यह कहे है सो सत्य है जो वीतराग देव ने भाख्या था सो भया।।67।। देखो मेरी भूल, मैं भवस्थिति का वेत्ता, जिनवाणी का श्रद्धानी, छः महीने केशव के कलेवर को वृथा लिये फिरा यह सब मोह का कारण है। अर मैं ऐसा भ्रम धारा जो मैं न हुवा तो इसके बाण लागा। सो यह विचार वृथा है इस प्राणी का न कोई रक्षक है, न कोई नाशक है आयु कर्म ही सबों का रक्षक है अर आयु के क्षीण भये सर्वथा शरीर का क्षय है।।69।।

अर यह राज्य संपदा हाथी के कान समान चंचल है। अर सुजन का संयोग है तहां वियोग है संयोग होय तिसका वियोग होय अर यह जीवना है सो मरण के दुःख कर नीरस है ताते ज्ञानवन्त मोक्ष ही का यत्न करे हैं। मैं मन मोहन के मोह कर इतने दिन गृहस्थ अवस्था में रहा। अब वीतराग का मार्ग धार मुनि होय संसार रूप समुद्र को तिरूंगा। इस भांति बलदेव स्वामी जगत की झूठी माया जान कर निर्मोह होय जगदीश के मार्ग को उद्यमी भये। मोह के पटल विषें आय गये थे। सो मोह पटल को दूर कर चंद्रमा से अधिक दीप्तिमान भये, पाया है आत्मज्ञान जिनने, जैसा बलदेव का आगे रूप था। तिससे भी अधिक रूप भासता भया।।71।।

अर पांडव अर जरत्कुमार इन सहित तुंगीगिरि के शिखर पर हरि के देह का दाह किया अर जरत्कुमार को राज्य दिया।।72।। अर तुंगीगिरि के शिखर ही पर से पांडवों से अर जरत्कुमार से अनुराग तजि क्षमा भाव कर बलदेव ने जैनेश्वरी दीक्षा का निश्चय किया, यह संसार का सम्बन्ध क्षणभंगुर जाना। जिस समय बलदेव को वैराग्य उपजा उस समय गिरि पर महा मुनि नहीं थे जिनसे दीक्षा लेते सो पल्लव नामा देश विषें श्रीनेमिनाथ विराजे हुए थे सो बलदेव पल्लव देश की तरफ मुख कर ठाड़े रहे। अर यह शब्द मुख से कहा – जो मैं श्रीनेमिनाथ का शिष्य हूं अर उन ही का मेरे स्मरण है अर वही मेरे घट में विराजे हैं। श्री नेमिनाथाय नमः – यह शब्द उच्चार कर अपने शिर के केश अपने हाथों उपारे। अर अठाइस मूल गुण का धारण कर महाव्रती भये।।74।।

फिर कई एक दिन में बलदेव स्वामी पारणा के अर्थ नगर में आये सो नगर के नर नारी इनका अद्भुत रूप देख मोहित होय गये। अर स्त्री ऐसी विह्वल भईं जो घड़े की ठौर पुत्रन को कूप में उरासने लगीं तब आप यह विपरीत देख आहारते पाछे फिरे, वनचर्य्या ही की प्रतिज्ञा करी। जो कोई श्रावक दैवयोग वन में आवे तो उनके आहार करना अर नगर में न आवना। कैसे हैं बलदेव, जिनराज समान है मुनिराज अवस्था जिनकी यह एका विहारी जिनकल्पी मुनि हैं। बलदेव के वैराग्य भये पीछे पांडवों ने जरत्कुमार को बहुत राजकन्या परनाईं। अर पांचों भाई पल्लव नामा देश जहां श्री नेमिनाथ हैं तहां गये। अर माता कुन्ती भी द्रोपदी सहित प्रभु के दर्शन को गई। संयम धारने की है इच्छा जिनके सो यह तो सब प्रभु के दर्शन को गये।

अर बलदेव मुनि होय महा तप करते भये। अर बारह भावना का विचार करे हैं। इन बारह भावना के विचार कर वैराग्य विषें अति निश्चल होते भये। बलभद्र मन में विचारे हैं – तन, धन, कुटुंब, संसार के सुख अर घर यह सब क्षणभंगुर हैं। इनको जो नित्य माने है सो अज्ञान है। यह आत्मस्वरूप चिद्रूप नित्य है अर सब राज्य संपदा विनश्वर है। संयोग सम्बन्ध में कोई नित्य नहीं अनित्य भावना का चिंतवन किया। फिर विचारे है जैसे वन में मृग के बालक को व्याघ्र ने पकड़ा ताहि कौन का शरण तैसे काल रूप केसरी ने पकड़ा यह जीव रूप मृग ताहि शरण कौन का। यह धन अर बांधवादिक जीव को शरण नाहीं दुखते कोई बचाय न सके एक धर्म ही का शरण है। इस भांति अशरणानुप्रेक्षा का चिंतवन किया।

बहुरि विचारे है – यह संसार रूप चक्र अनादि काल का भ्रमण करे है तिसके योग कर यह जीव अनेक योनि अर कुल कोड़ि में भ्रमण करे है। कर्मरूप यंत्री का प्रेरा स्वामी से सेवक होय है अर सेवक से स्वामी होय है। पिता से पुत्र होय है अर पुत्र से पिता होय है। यह संसार भावना का चिंतवन किया। फिर बलदेव विचारे हैं यह प्राणी अकेला ही जन्मे है अर अकेला ही मरे है। अर चतुर्गति में भ्रमे तो अकेला अर निर्वाण जाय तो अकेला। इसका सहाई अर कोई नहीं यह एकत्व भावना का चिंतवन किया।।82।। फिर विचारे है – मैं जीव पदार्थ नित्य अर यह शरीर अनित्य अर मैं चेतन अर यह अचेतन तातें मेरे अर शरीर के कहा संबंध, सर्वथा यह शरीर ही मोते भिन्न है तो अर पुत्र कलत्र धन धान्यादि की कहा बात? यह अनित्य भावना का चिंतन किया।।83।। फिर विचारे है – यह देह वीर्य अर रक्त कर उपजा है मलीन है मूल जिसका अर सप्त धातु मई है। अर त्रिदोष को लिये है सो इस शरीर विषें शुचि कहां से होय, यह महा अपवित्र है। अर आत्मा पवित्र है तिससे अपने शरीर विषें अर स्त्री पुत्रादिक के शरीर विषें राग करना वृथा है।।84।।

यह अशुच्यनुभावना का चिंतवन किया। फिर बलदेव विचारे है यह मन वचन काय के योग

पुण्य पाप के आस्रव के कारण हैं। अर यह जीव कर्म बन्ध रूप दृढ़ सांकल से बन्धा चिर काल संसार रूप वन विषे भ्रमण करे है। यह आस्रवानुप्रेक्षा का चिंतवन किया फिर बलदेव विचारे हैं – मिथ्यात्व रागादि यह भावास्रव अर ज्ञानावरणादि कर्म का आगम सो द्रव्यास्रव यह दो प्रकार का आस्रव तिनका निरोध सो संवर, समिति–गुप्ति, धर्म, अनुप्रेक्षा, परीषह का जीतना सो चारित्र तिनकर होय है सो निर्जरा का कारण है। यह संवरानुप्रेक्षा चिंतवन किया।

फिर बलदेव विचारे है – अपने उपार्जे पूर्व कर्म तिनका क्षय सो निर्जरा दोय प्रकार है। एक सविपाक दूजी अविपाक सो सविपाक तो सब ही जीवों के होय है, पूर्व कर्म बंधे हुए सो अपना फल देय खिर जाय हैं सो यह निर्जरा तो कल्याणकारिणी नहीं अर अविपाक निर्जरा संवर पूर्वक होय है। जहां नवीन कर्म रुके हैं अर प्राचीन कर्म तपकर खिरे हैं सो यह निर्जरा कल्याणकारिणी मुक्ति का मूल ज्ञानी जनों ही के होय है। यह निर्जरानुप्रेक्षा का चिन्तवन किया। फिर बलदेव विचारे है – यह लोक अनादि निधन है किसी का किया नहीं, अर इसका कभी अंत नहीं अर यह लोक महा दुःख का भरा है। अर इस लोक के शिखर सिद्ध विराजें है, सो अनन्त सुख भोगवे हैं। अर इस लोक विषें यह षट् काय के जीव सब ही दुखित हैं कोई सुखी नहीं। इस भांति दशमी लोकानुभावना का चिंतवन किया।।86।।

फिर बलदेव विचारे है यह जीव अनादि काल का भ्रमण करे है सो अनंत काल थावर योनि में व्यतीत किये सो थावर से निकल विकलत्रय होना दुर्लभ अर विकलत्रय से असैनी पंचेन्द्रिय होना दुर्लभ अर असैनी से सैनी पंचेन्द्रिय तिर्यंच होना दुर्लभ अर पशु से मनुष्य होना दुर्लभ तिसमें आर्य क्षेत्र उत्तम कुल दीर्घायु सत् बुद्धि सत् संगति शास्त्र श्रवण धर्म की प्राप्ति अर आत्मज्ञान अति दुर्लभ है। अर समाधिमरण दुर्लभ है। यह ग्यारहवीं दुर्लभानुप्रेक्षा का चिंतवन किया। फिर बारहवीं धर्मानुप्रेक्षा का चिन्तवन करे है जिन भाषित धर्म शिव कहिये कल्याण ताकी प्राप्ति का कारण है सो जिनधर्म के लक्षण जीव दया सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य परिग्रह त्याग, क्षमा, निगर्वता, निष्कपटता, पवित्रता, तप, संयम, ज्ञान, वैराग्य आदि अपार हैं। इस रूप जिनधर्म है तिसका अंगीकार सो निर्वाण का कारण है। अर धर्म का त्याग या जीव को अनन्त दुःख का कारण है ऐसा चिन्तवन करना सो धर्मानुप्रेक्षा कहिये। यह बारह अनुप्रेक्षाओं का चिंतबन बलदेव ने बारम्बार सूत्र के अनुसार किया। भाई का मोह था सो अनुप्रेक्षानि के चिंतवन कर निवारा अर बाईस परिषह जीती।।91।।

वे महा पुरुष जिनसूत्र की आज्ञा के अनुसार तप के करणहारे जठराग्नि जो क्षुदादि ताहि जीत कर संयम विषे आरूढ भये अनेक प्रकार वृत्ति परिसंख्यान तप के भेद धारे ग्राम नग्रादिक में तो आहार को आवना तजा ही हुआ था। अर वन चर्य्या है तिसमें भी यह विचार करें वन विषें श्रावक आये हैं

सो उनके इस भांति मिलेगा तो लेंगे अन्न का अवग्रह करे जो अन्न मिलेगा तो लेंगे। अर दिश का अवग्रह करे जो दिश में मिलेगा तो लेंगे अर कुल का अवग्रह करें तीन कुल के श्रावक ही के यती का आहार है, शूद्रन के नहीं सो इन तीन कुलों में ऐसा अवग्रह करें, आज विप्र कुल ही के श्रावकों के अमुक अन्न मिलेगा तो लेंगे अथवा आज क्षत्री कुल ही के श्रावकों के अन्न मिलेगा तो लेंगे तथा वैश्य कुल के श्रावकों के अमुक अन्न मिलेगा तो लेंगे – ऐसे अवग्रह करे अथवा आज पुरुष ही के हाथ का भोजन करेंगे नारी के हाथ का नहीं इत्यादि अनेक विषम अवग्रह धारें।

अर जेती भूख है तिससे आधा आहार करे मोक्ष के साधन के अर्थ प्रथम क्षुधा परिषह जीती फिर दावानल समान जो तृषा तिस कर देह के सब अंग जरे हैं। अर स्वामी के कुछ वाधा ही नहीं। शीत क्रिया का उपचार नहीं शान्त भाव रूप मेघ की घटाकर सींचा है हृदय रूप क्षेत्र जिनका।।93।। तिस कर तृषा का ताप न होता भया यह दूजी परीषह जीते फिर शीत काल विषे विषम भूमि में नदी सरोवर के तट निशा पूर्ण करा महा तीव्र पवन महा शीत तिसमें जल की वृद्धि सो तरु के तले व्यतीत करी। रात अर दिन वे योगेंद्र योग ही में निश्चल भये, नगन शरीर निराधार निराश्रय निराद्वन्द्व निर्ग्रन्थ निरंजन के उपासक – इस भांति तीसरी शीत परिषह सहते भये।

अर ग्रीष्म में पर्वत के शिखर पर तिष्ठते संते उष्ण परीषह सहते भये। पर्वत की शिला तपे है अर सब ओर से दावानल की धूम संयुक्त लूह चली आवे है। सो ध्यान रूप छत्र की छाया कर ग्रीष्म का आताप निवारते भये। चौथी परीषह जीती अर पांचवीं दंशमंसकादि परीषह सहते भये। डांस आदि नन्हें जीव दृष्टि थोडे पडें। अर गूढवृत्ति कर शरीर का रुधिर पीवें तिस कर बलदेव स्वामी कंपायमान न भये। दंशमंसकादि परिषह दृढ़ता से सहिते भये।।96।। अर छठी नग्न परिषह अपने वस सहते भये। नगन शरीर को शीत की घाम की दंशमंसकादिक की सब बाधा होय सो रंचमात्र भी वाधा न गिनी जैसे उत्तम स्त्री लज्जा लिये तिष्ठे तैसे नग्न मुद्रा धरे विराजते भये अर सातवीं अरति परिषह सही अर अरति खेद न माना। ध्यान योग जे विषम गिर तिनके शिखर पर विराजे एका बिहारी जिनकल्पी मन का है निग्रह जिनके।

अर धर्म साधन विषे है रुचि जिनकी। जैसे गृहस्थाश्रम विषे रणभूमि में रिपुओं से पीछे नहीं, फिरते तैसे परीषह से पाछे न भये। जो शरीर को अरति उपजी सो सही अर आठवीं स्त्री परीषह जीती, कामरूप योधा स्त्रियों के भौंह रूप धनुष चढ़ाय अर तिनके कटाक्ष रूप वाणों की वर्षा करता भया। सो बलदेव के काम का एक बाण न लगा विवेक रूप मित्र के बल कर काम रूप शत्रु को जीता अर नवमीं चर्या परीषह सहते भये। साधू को चौमासा टार एक स्थानक रहना नाहीं। तीर्थभूमि में विहार करना यह साधु के आवश्यक है सो विहार करते कंटक कंकर आदि चुभे अर फांस चुभे तथा शीत

में अर ऊष्ण में मार्ग की धूरि आदि अति शीत होय अर उष्ण होय सो बाधक हैं, राजपद में गज तुरंग रथ पालकी आदि अनेक वाहन थे तिनको चितारे नहीं अर चर्या परीषह का खेद न माने अर दशवी निषिद्या परिषह सहते भये।

जे बलदेव स्वामी ध्यान कर धोई है बुद्धि जिन्होंने सो पवित्र प्रासुक भूमि विषे जहां स्त्री नपुंसक बालक मूढ जन का संसर्ग नाहीं, तहां स्थान करते भये सो विषम भूमि की बाधा अर कंकर पत्थरादि की बाधा कर खेदखिन्न न होते भये। अति दृढ़ता से निषद्या परिषह सहते भये। फिर ग्यारहवीं शय्या परीषह सहते भये। ध्यान थकी अथवा सूत्र के अध्ययन थकी रात्रि व्यतीत करते भये। अल्प काल अल्प है निद्रा जिनके सो भूमि शय्या विषे एक करवट रहे दूजी करवट न लई। अर गृहस्थ अवस्था के सेज विछोना विस्मरण होय गये सो कवहुँ न चितारें जिस भूमि विषे कंकर पत्थर तहां शयन करें। इस भांति ग्यारवीं शय्या परीषह सहते भये, अर बारहवीं कुवचन परीषह क्षमा भाव कर सही, धीर है बुद्धि जिनकी अर शान्त है स्वभाव जिनका दुर्जनों के कठोर वचन शास्त्र हूते तीक्षण ह्रदय के भेदनहारे अति दुःसह सो स्वामी सहते भये, नहीं है काहु से कषाय जिनके अर तेरहवीं बधबन्ध परीषह सहते भये।

मन में यह विचारे – जो अग्निवाणादि दिव्यास्त्र अर खड़गादि सामान्य शस्त्र इन कर शरीर हत्या जाय है, परन्तु आत्मा नहीं हत्या जाय है। अर नाग पासि आदि देवोपुनीत बन्धन इन कर सांकल आदि सामान्य बन्धन इन कर शरीर बान्धा जाय है, आत्मा नहीं बंधे है आत्मा अमूरतीक है ऐसा विचार वध बन्धन परीषह मुनिवर सहे। मुनियों के शत्रु मित्र सब समान हैं तिसकर परीषह जीते।।4।। फिर चौदहवीं अयाचना परीषह बलदेव स्वामी सहते भये, मुनि को काहू से कुछ ही याचना न करनी बाह्य अर अभ्यन्तर बारह तप के करणहारे स्वामी अस्थि मात्र रहा है शरीर जिनका अर जिन सूत्र के अनुसार है आचरण जिनका अर अजाची है वृत्ति जिनकी सो कदेहु काहू पै कोई वस्तु नहीं जांचे। जे जिनेश्वर सारिखे दाता पर मोक्ष सारिखा पदार्थ न जांचे ते औरन पै अर वस्तु कहा जांचे।

यह चौदहवीं याचना परीषह कही अर पंद्रहवीं अलाभ परीषह कहे हैं वे भगवान आत्माराम मौन व्रत के धारक शरीर विषें भी नाहीं ममत्व जिनका निर्मल व्रत के आचरण हारे जैसे चन्द्रमा बड़े मन्दिर में भी प्रकाश करे अर छोटे घर में भी प्रकाश करे तैसे मुनिराज तीन कुल में धनवान अर निर्धन सबन के आहार को जाय जैसा आहार मिले तैसा ही लेवें अर अन्तराय होय तो पाछा आवें अलाभ विषें खेद न मानें। यह पंद्रही अलाभ परीषह हलधर मुनिवर सहते भये।।6।। अर सोलहवीं रोग परीषह बलभद्र जीती वे मनुष्यों के इन्द्र राजाओं के स्वामी राज्य अवस्था में महा मनोहर भोजन करते सो मुनेंद्र पद में जैसा मिले तैसा कबहू खारा कवहू अलूणा कबहूं रूखा कबहूं चिकना कबहूं उष्ण कबहू पहर डेढ पहर का शीत। इस भांति प्रकृति विरुद्ध आहार के लेवे कर वात, पित्त, कफ आदि अनेक

www.vitragvani.com

रोग उपजे सो स्वामी के रोग का जतन नहीं। एक निर्वाण ही का यतन है। या भान्ति रोग परीषह सही फिर सतरहवीं तृणस्पर्श परीषह सहते भये।

दावानल कर जले तृण तिनकी सूई समान अणी अर लाख के टूक अर कंकर पत्थर तिन कर करकस जो स्थान ता विषें शयन अर आसन करते उपजी है अंग विषे पीडा तो खेद न मानते भये या भांति सत्रहवीं परीषह जीत अर अठारहवीं मल परीषह सहते भये। वे राजेंद्र गृहस्थपने में नित्य स्नान और सुगंधादिक का लेप करते सो अब मुनि पद में स्नान अर विलेपन का त्याग भया तो शरीर विषें पसेव अर रज के योग कर मलीनता भासे और कर के नखहू कर नाहीं हैं तन का स्पर्श जिनके सो महा धवल कैसे सोहे हैं, जैसे धवलाचल के ऊंचे शिखर पर मेघ की कारी घटा कर वेढ्या चंद्रमा सोहे है। शरीर का नाही है संस्कार जिनके या भांति अठारहवीं मल परीषह जीती।

अर उन्नीसवीं सत्कार पुरस्कार परीषह सहते भये। जो कोई आदर करे स्तुति करे, सत्कार करे तो वासूं राग नाहीं। अर जो कोई निरादर करे तिरस्कार करे तो वासूं अरुचि नाहीं विकार रहित शुद्ध है बुद्धि जिनकी शत्रु मित्र विषे समान भाव हैं जिनके सो उन्नीसवीं परीषह सहते भये। अर बीसवीं प्रज्ञा परीषह जीती। आप महा बुद्धिमान सकल शास्त्र के वेत्ता वादित्व ऋद्धि के धारक जिनसे वाद कर कोई न जीत सके अर वाग्मी कहिये महा वक्ता। अर गमक कहिये ग्रंथों की टीका के कर्त्ता और महा कवि कहिये ग्रन्थों के कर्ता परन्तु जिनके बुद्धि का गर्व नहीं। जो मैं ऐसा हूं मो समान अन्य नहीं अर जो कोई मूढ़ जन कहे जो बुद्धिहीन है, ऐसे वचन सुन मन में खेद न आने या भांति प्रज्ञा परीषह सही। अर इक्कीसवीं अज्ञान परीषह जीतते भये, जो कोई अविवेकी मिथ्यादृष्टि ऐसे वचन अवज्ञा कहे जो यह अज्ञानी है। मनुष्य नहीं पशु है। कुछ समझै नहीं वृथा मौन गह राखा है। ऐसे निन्दा के वचन सहते भये, इक्कीसवीं परीषह जीती अर बाइसवीं अदर्शन परीषह सहते भये।

महापुरुष ऐसा भ्रम मन में न आने। जो उग्र तप का फल महा ऋद्धि है आगे यह बात सुनते सो अब तो नहीं ताते यह वचन सत्य है अक असत्य है शुद्ध सम्यक्त्व के धारक या भांति संदेह न करें। तप का फल अष्ट सिद्धि का है यह निःसंदेह है। अर हमारे काहूं वस्तु की कामना नाहीं। ऋद्धि सिद्धि होहु अथवा मति होहु हम आत्म स्वरूप चिद्रूप हैं ऐसा विचार कर बलदेव स्वामी ने अदर्शन परीषह जीती।।13।। यह बाईस परीषह तिनके जीतनहारे हलधर स्वामी विषय कषाय दोषन के हरणहारे अति दुर्द्धर तप करते भये। महा जिनधर्म के आराधक तीर्थ विषें है विहार जिनका है सो तीर्थेश्वर का मार्ग मन वचन काय कर सेवते भये।।14।।

इति अरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ बलदेवतपोवर्णनो नाम त्रिषष्टितमः सर्गः।।63।।

चौसठवाँ सर्ग

अथानन्तर – ते पांडव महा पराक्रमी संसार से भयभीत पल्लव देश विषें जहां श्री भगवान नेमिनाथ विहार करे हैं तहां गये। चतुर्निकाय के देवन कर मण्डित समोसरण विषें परमेश्वर विराजे हैं तहां जाय जिनेन्द्र को प्रदक्षिणा देय भाव सहित नमस्कार करते भये। भगवान रूप मेघ तिन ज्ञान रूप अमृत की वृष्टि करी सो पीय कर जिनेश्वर को अपने पूर्व जन्म पूछते भये। सो प्रभु दिव्य ध्वनि कर कहे हैं – या भरतक्षेत्र विषें चम्पापुरी में राजा मेघवाहन कुरुवंश का आभूषण ताके समय नगरी में विप्र सोमदेव जाके ब्राह्मणी सोमिला ताके पुत्र तीन तिनके नाम – सोमदत्त, सोमिल, सोमभूति तिनका मामा अग्निभूति ताकी स्त्री अग्निला ताके पुत्री तीन – धनश्री, मित्रश्री, नागश्री, सो यह तीनों भाई परणे, यह ब्राह्मण माता–पिता अर तीनों भाई अर बहू दोय इतने जीव तो महा जिनधर्मी संसार शरीरते उदास शास्त्र के वेत्ता अर तीजे भाई की स्त्री नागश्री सो अविवेकनी। कई एक दिन में माता सोमिला तो आर्यका भई अर पिता सोमदेव दिगम्बर मुनि भये अर तीनों भाई श्रावक अणुव्रती अर दोनों बहू श्राविका होय धर्म का साधन करते भये अर नागश्री धर्म से विमुख।

एक दिन धर्मरुचि नामा मुनि आहार के समय इनके घर आये, मानो वे मुनि अखण्ड धर्म के पिण्ड ही हैं चान्द्री चर्या के धारक महाव्रती, अणुव्रती श्रावक का घर जान आये चन्द्रमा घर घर उद्योत करे तैसे यह भी धनी अर निर्धन सबके आवें उत्तम कुल का आचारी श्रावक होय ताके घर आहार करें। जब साधु आये तब सोमदत्त बड़े भाई पर गये अर कोई कार्य की व्याकुलता भई तब सोमदत्त तीजे भाई की स्त्री नागश्री ताहि दान की आज्ञा कर गया था। सो पापिनी निःकारण वैरणी मुनि को विष संयुक्त आहार दिया। सो महामुनि समाधिमरण कर सर्वार्थसिद्धि गये। अर वे तीनों ही भाई नागश्री का यह कर्तव्य जान वरण नामा मुनि के निकट मुनि भये।

अर धनश्री अर मित्रश्री यह दोनों भाइन की बहू गुणवती आर्या के समीप आर्यका भईं। संसार के बासते विरक्त भईं सो वे तीनों मुनि अर दोनों आर्यका रत्नत्रय की शुद्धता के अर्थ तपश्चरण विषे उद्यमी भये सो सब जीवन विषें समभाव सो सामायिक चारित्र कहिये। तहां सकल पाप क्रिया का त्याग अर अखंडित संयम। अर जहां प्रमाद के योग से संयम का लोप होय अर पाछा संयम थापे सो छेदोपस्थापना चारित्र कहिये जहां असंयम के परिहार कर अर संयम के धारण कर उत्कृष्ट शुद्धता होय तो परिहार विशुद्धी चारित्र कहिये।।17।। अर जहां सांपराय कहिये कषाय तिनमें क्रोध मान, माया यह तीन तो नवमें गुणस्थान के अन्त जाते रहे। अर दशवें गुणस्थान सूक्ष्म लोभ रहे सो सूक्ष्म सांपराय नामा चारित्र कहिये समस्त पाप का है अभाव जहां।।18।।

अर यथाख्यात कहिये जैसा सिद्धांत विषें कहा है तैसा होय चुका सो उपशांत मोह तथा क्षीण मोह मुनि के होय है सो चारित्र साक्षात् मोक्ष का मूल है।।19।। अर तप बारह जिनमें छह अभ्यन्तर अर छह बाह्य सो अभ्यन्तर तप प्रायश्चित्तादि ध्यान पर्यन्त छः अर बाह्य तप अनशन आदि काय क्लेश पर्यंत छह तिनमें प्रथम बाह्य तप कहे हैं। संयमादिक की वृद्धि के अर्थ अर ध्यान की सिद्धि के अर्थ राग भाव की हानि के अर्थ अनेक उपवास करते सो अनशन नामा तप कहिये।।21।। अर दोषन की शान्तता अर संतोष की वृद्धि अर ध्यान तथा अध्ययन की सिद्धि के अर्थ अर संयम की दृढ़ता के अर्थ जागरण का कारण जो अल्प आहार सो करना ताका नाम अवमौदर्य तप कहिये।।23।।

अर महामुनि आहार के अर्थ ऐसा विचार करें जो आज हमको एक घर आहार मिलेगा तो लेंगे दूजे घर नहीं जावेंगे अथवा ऐसा आहार मिलेगा तो लेंगे नातर न लेंगे इत्यादि आशा की निवृत्ति के अर्थ अवग्रह करना सो वृत्तिपरसंख्या नामा तप कहिये। अर घृत दधि दुग्ध खीर मिष्टान्नादि गरिष्ट आहार का त्याग सो इन्द्रियों के जीतने अर्थ रस परित्याग नामा तप कहिये।।24।। अर बालक तथा स्त्री अथवा नपुंसक अथवा मूढ़ मिथ्यादृष्टि इनसे रहित प्रासुक स्थान विषें आसन सो विविक्त शय्यासन नामा तप कहिये। अर शीत काल नदी सरोवर के तीर अर ऊष्ण काल गिर के शिखर अर वर्षा काल वृक्ष के तले यह त्रिकाल योग। अर कायोत्सर्ग अर मासोपवास पक्षोपवास चतुर्मासोपवास इत्यादि तप का धारण शरीर के सुख का त्याग सो काय क्लेश नामा तप कहिये। अर छै प्रकार बाह्य तप कहे सो मोक्ष के मार्ग हैं।।26।।

यह शरीरादि पर द्रव्य की अपेक्षा लिये अर पर वस्तु के निमित्त तैं होय हैं तातें यह बाह्य तप कहिये। अर मन के निश्चल करने अर्थ माहिले तप छै अभ्यन्तर विषें अशुभ की निवृत्ति अर शुभ की प्रवृत्ति। सो प्रायश्चित्त नामा तप कहिये।

सो प्रायश्चित्त नव प्रकार है - आलोचना 1, प्रतिक्रमण 2, आलोचन प्रतिक्रमण दोऊ इकट्ठे 3, विवेक 4, कायोत्सर्ग 5, तप 6, छेद 7, परिहार 8, उपस्थापना 9, अर दूजा विनय नामा तप ताके भेद चार - दर्शन विनय, चारित्र विनय, ज्ञान विनय, उपचार विनय।

अर वैयावृत्य के भेद दस - आचार्य 1, उपाध्याय 2, तपस्वी 3, शैक्ष्य 4, ग्लान 5, गण 6, कुल 7, संघ 8, साधु 9, मनोज्ञ 10 । यह दस प्रकार मुनि तिन के वैयावृत्य करने अर स्वाध्याय के भेद पांच - पढ़ना 1, प्रच्छना 2, अनुप्रेक्षा 3, आम्नाय 4, अर धर्मोपदेश 5, अर संकल्प विकल्प का त्याग सो कायोत्सर्ग ताके भेद दोय ममता का त्याग सो निश्चय अर कायोत्सर्ग आसन सो व्यवहार अर चित्त की निश्चलता सो ध्यान ताके भेद चार सो कहे हैं। तिनमें आर्त रौद्र दोय खोटे सो

दुर्ध्यान कहिये अर धर्म शुकल यह दोऊ नीके सो उत्तम ध्यान कहिये।।31।। यह बारह प्रकार तप कहे।

अब इनका विशेष व्याख्यान करे हैं। प्रायश्चित के भेद नव तिनमें प्रथम आलोचना। आलोचना कहिये प्रमाद कर जो आपके दोष उपजा होय सो गुरु के निकट प्रगट करना अर प्रतिक्रमण कहिये मिथ्या हूजियो मेरे दुराचार इत्यादि शुभ भावों कर दोषों का निराकरण अर तीजा भेद आलोचना प्रतिक्रमण यह दोऊ केतेक दोष आलोचना कर दूर करने अर केतेक प्रतिक्रमण कर मिटावने सो आलोचना प्रतिक्रमण शुद्धता का कारण है। अर चौथा विवेक कहिये आपको दोषों से न्यारा करना। दोष के मार्ग न चालना अर पांचवां व्युत्सर्ग कहिये शरीर का राग तज कायोत्सर्गादि करना।।35।।

अर छठा भेद तप सो अनशनादिक जानों अर सातवां भेद कहिये – कई एक दिन कई एक मास दीक्षा का छेद होय। अर आठवां भेद परिहार कहिये कई एक दिन कई एक मास मुनियों के मंडल से दूर रहे, मुनियों की पंक्ति में न रहे वाहि कोई प्रणाम न करे। अर नवमां भेद उपस्थापन जो पाछी दीक्षा ले यह नव भेद कहे।

अब विनय के भेद कहे हैं – शब्द शुद्धि अर्थशुद्धि शब्दार्थ उभय शुद्धि समय पाठ अर उपधान स्मृद्धि कहिये बार बार चिन्तवन अर बहुमान कहिये जिनधर्म अर जिनधर्मियों का बहुत सन्मान अर विनयोन्मुद्रित कहिये विनयवान होय सम्यक् ज्ञान का आराधन अर गुरुवादि अनिन्हव कहिये गुरु का नाम न छिपावना। यह आठ प्रकार ज्ञानाचार तिनका विनय सो ज्ञानविनय कहिये अर अष्ट प्रकार दर्शनाचार निःशंकित निःकांक्षित निर्विचिकित्सा अमूढदृष्टि उपगूहण स्थितिकरण वात्सल्य प्रभावना अंग यह आठ तिनका विनय दर्शन विनय कहिये।।39।। अर तेरह प्रकार चारित्र पंच महाव्रत पंच समिति, तीन गुप्ति तिनका जो विनय सो चारित्र विनय कहिये।।40।। अर रत्नत्रय के धारक महामुनि श्रीगुरु तिनका प्रत्यक्ष अर परोक्ष विनय करना सन्मुख जाना।।5।। उठना पहुंचावने जाना उनका नाम सुन प्रणाम करना स्तुति करनी यथायोग्य सो उपचार विनय कहिये।।41।। यह चार प्रकार विनय तप कहे।

आगे दश प्रकार वैयावृत्य का वर्णन करे हैं। आचार्य कहिये शिक्षा के दायक 1, अर उपाध्याय कहिये जिन सूत्र के पाठी पाठक 2, अर तपस्वी कहिये महातप के धारक 3, अर शैक्ष्य कहिये नवदीक्षित आचारांग सूत्र के अभ्यासी 4, अर ग्लान कहिये रोग कर पीड़ित 5, अर गण कहिये वृद्ध 6, अर कुल कहिये एक गुरु के शिष्य 7, अर संघ कहिये ऋषि मुनि यती अनगार 8, अर साधु कहिये घने वर्षन के मुनिराज 9, अर मनोज्ञ कहिये जगत् के प्यारे जिनके वचन सबों को रुचें 10,

यह दस प्रकार के दिगम्बर तिनको रोग व्याधि अर दुर्जन कृत संताप अथवा परीषह के उदय अथवा मिथ्यात्व का संसर्ग जान कर वैयावृत करें अर विचिकित्सा कहिये घृणा न करें जाकर महापुरुषों को स्थिरता होय सो करें। यह वैयावृत का व्याख्यान किया।

अर स्वाध्याय के भेद पांच – वांचना कहिये ग्रन्थन के अर्थ करने 1, अर प्रच्छना कहिये प्रश्न करने जो संदेह होय सो गुरु को पूछ कर निवृत्त करना 2, अर ज्ञान का निरन्तर मनन कर अभ्यास सो अनुप्रेक्षा 3, अर शास्त्र की आज्ञा प्रमाण चलना सो आम्नाय 4, अर औरन को उपदेश देय कर धर्म में चलावना सो धर्मोपदेश 5, यह स्वाध्याय के भेद कहे। अर रागादिक क्रोधादिक मांहिले परिग्रह अर वस्त्राभरणादि बाहरले परिग्रह तिनका त्याग अर काय को असार जानि ममत्व तजना सो कायोत्सर्ग कहिये।।49।। निःसंगता और निर्भयता के अर्थ अर धन जीवन की आशा की निवृत्ति के अर्थ जो बाहिर के अर भीतर के संग का त्याग सो कायोत्सर्ग।।50।। अर मन की एकाग्रता सो ध्यान। यह बारह प्रकार तप निर्जरा के कारण हैं।।51।।

जे संवर के धारक संयमी हैं तिनके तप कर निर्जरा होय है सो परिणामन के भेद कर सम्यग्दृष्टि के चतुर्थ गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान पर्यन्त बढ़ती निर्जरा है प्रथम तो मिथ्यादृष्टि से अव्रती सम्यक्त्वी के असंख्य गुणी निर्जरा है भव्य जीव पंचेंद्री मन संयुक्त पर्याप्त जो सम्यक्त्व योग्य होय ताके अंतरंग शुद्धता की वृद्धि कर निर्जरा की वृद्धि होय है अर अव्रती सम्यक्त्वी से श्रावक के पंचम गुणस्थान के असंख्य गुणी अधिक निर्जरा है अर श्रावक से छठे गुणस्थान मुनि के असंख्य गुणी अधिक है। अर मुनि से असंख्य गुणी अधिक अनन्तानुबंधी के क्षयवारे के है।

अर वाते असंख्यात गुणी अधिक मिथ्यात्व के क्षयवारे के है अर उससे असंख्यात गुणी अधिक उपशम श्रेणी का धारक जो क्षायक सम्यक्त्वी मुनि ताके है तिनमें आठवें गुणस्थान से नवमें नवमें ते दसवें असंख्यात गुणी बढ़ती बढ़ती है। अर दसवें गुणस्थान से ग्यारहवें गुणठाने असंख्यात गुणी अधिक है अर अष्टम से नवमें अर नवमें दसवें क्षपक श्रेणीवारे के असंख्य गुणी है अर दसवें से बारहवें असंख्यात गुणी निर्जरा अधिक जानहु अर बारहवें से अनंत गुणी केवली के है जिनके अनंत ज्ञान दर्शन है।।57।। यह सब सूत्र की चरचा तीनूं विप्र मुनि अर दोऊ ब्राह्मणी आर्यका तिनि निःसंदेह धारी अर मुनियों के भेद पाँच पुलाक 1, बकुश 2, कुशील 3, निर्ग्रन्थ 4, स्नातक 5, वह पांचों ही प्रकार के साधु निर्ग्रंथ हैं अर व्रतशील के धारक हैं। तिनके लक्षण कहे हैं जिनके चौरासी लाख उत्तर गुण का तो अभाव है। अर काहू काल काहू क्षेत्र विषे मूल गुण अठाईस तिनहू की न्यूनता नजर आवे। जैसे अन्न का पुला तुष अर कण संयुक्त हैं तैसे ताका आचरण गुण दोष संयुक्त है। यह पुलाक का लक्षण कहा।।59।।

अब वकुस का लक्षण कहे हैं। मूलगुण विषे तो अखंडित है अर शरीर का तथा पुस्तकादि उपकरणादि का किंचित् अनुराग है। अर जाके शिक्षमन चलचित्त है अति निश्चल नाहीं अर आप तेजस्वी प्रकृति हैं यह बकुस के लक्षण जानो। अब कुशील के लक्षण कहे हैं। जाके मूलगुण अर उत्तर गुण परिपूर्ण है परंतु कदाचित उत्तर गुणों में भंग होय सो कुशील हैं ताके भेद दोय एक प्रतिसेवना कुशील दूजा कषाय कुशील तो दशवें गुणठाणे हैं जहां सूक्ष्म लोभ का उदय है अर सब कषाय गये।।61।। कषाय ही अभ्यन्तर के परिग्रह हैं अर प्रतिसेवना कुशील के कुछयक शरीर का वैयावृत्य करावना है अर शिष्यादिक से अनुराग है। इनमें पुलाक बकुस अर प्रतिसेवना कुशील ये तो छठे अर सातवें गुणठाणें ही होय है अर कषाय कुशील दसवें गुणठाणे ही होय है अर निर्ग्रन्थ यह चौथा भेद बारहवें गुणठाणें ही होय है, जहां केवलज्ञान उपजने में एक मुहूर्त्त ही रहा है क्षीण कषाय गुणठाणे ही निर्ग्रन्थ कहिये जैसे जल विषे दण्ड की लीक प्रगट नहीं दीसे तैसे क्षीण कषाय संयमी के कर्म का उदय प्रगट न भासे।।63।। अर जिनके चार घातिया कर्म का क्षय भया। केवली भये ते स्नातक कहिये यह पांचों ही मुनि भावलिंगी हैं। नैगम नय की अपेक्षा सब ही निर्ग्रन्थ हैं परिग्रह धारी नाहीं।

अथानन्तर – इनके संयम का व्याख्यान करे हैं – निर्ग्रन्थ अर स्नातक इनके तो यथाख्यात संयम ही है, अर कषाय कुशील के सूक्ष्म साम्पराय संयम ही है अर पुलाक बकुस अर प्रतिसेवना कुशील के सामायिक अर छेदोपस्थापना दोय संयम हैं अर पुलाक बकुस अर प्रतिसेवना कुशील यह उत्कृष्टपने ग्यारह अंग अर दस पूर्व लग भणे, अर कषाय कुशील अर निर्ग्रन्थ यह ग्यारह अंग चौदह पूर्व सकल श्रुत के पाठी होवे हैं अर स्नातक केवली है सर्वज्ञ हैं सो श्रुतज्ञान के पार है अर पुलाक जघन्यपने आचारांग सूत्र भने अर जघन्यपने निर्ग्रंथ पर्यंत सब ही यतीन के पांच समिति तीन गुप्ति अष्ट प्रवचन माता तिनही का ज्ञान है अर पराये आग्रहते कबहुक कोई काहु देश काल विषे प्रमाद के योगते मूल गुणविषे अतीचार लगावे।

सो पुलाक का लक्षण है अर बकुस के भेद दोय एक शरीर बकुस दूजा उपकरण बकुस जिसके शरीर का संस्कार सो शरीर बकुस अर जाके उपकरणों का बहु अनुराग सो उपकरण बकुस अर प्रतिसेवना कुशील के कदाचित् उत्तर गुण में विराधना होय परन्तु मूल गुण में न होय अर कषाय कुशील के अर निर्ग्रंथ के मूल गुण पूर्ण हैं। अर स्नातक परमात्मा ही हैं। यह पांच प्रकार ऋषि तीर्थंकरादि के समय भी होवे अर अंतराल विषें भी होवे अर यह पांच प्रकार साधु सब ही भाव चारित्री अर द्रव्य चारित्री हैं। बाहरले परिग्रह दस सो तो काहू मुनि के नाहीं भीतर के चौदह ते निर्ग्रन्थ अर स्नातक के तो सर्वथा नाहीं अर कषाय कुशील के एक सूक्ष्म लोभ है अर नाहीं अर पुलाक बकुस

अर प्रतिसेवना कुशील के नव नो कषाय अर संज्वलन की चौकरी है अर निर्ग्रंथ हैं अर स्नातक के एक शुक्ल लेश्या ही है। चौदहवें गुणस्थान लेश्या नहीं अर कषाय कुशील हू के शुक्ल ही है अर पुलाक बकुस अर प्रतिसेवना कुशील के पीत पद्म शुक्ल यह तीन लेश्या हैं।।79।।

अर पुलाक का उत्पाद बारहमें सहस्रार स्वर्ग लग है तहां उत्कृष्ट आयु सागर अठारह है अर बकुस अर प्रतिसेवना का उत्पाद आरण अच्युत स्वर्ग जो पन्द्रहमां सोलहमें तहां तक है अर कषाय कुशील अर निर्ग्रंथ यह दोनों उपशम श्रेणी वारे क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिनका उत्पाद सर्वार्थ सिद्ध लग है। अर स्नातक मोक्ष ही पावे अर जघन्यपने पुलाकादिक उत्पाद पहिले सौधर्म स्वर्ग है तहां उत्कृष्ट आयु दोय सागर का है।।81।। अर स्नातक का एक निर्वाण ही स्थानक है सो ऊर्ध्व गमन कर लोक के शिखर जाय है अनन्त गुण ऋद्धि मई विराजे हैं किया है कर्म का अन्त जाने ऐसा स्नातक सो सिद्ध होय है। इन पांच प्रकार मुनियों के कषायन के अभावन के निमित्तते संयम स्थान के भेद असंख्य होय हैं। अर अनन्त गुण संयम लब्धि स्थानिक होय है। तिनमें पुलाक के अर कषाय के सर्व जघन्य लब्धि स्थानक होय है।

पुलाक अर कषाय कुशील यह दोनों एक समय विषें असंख्य लब्धि थानक विषें गमन करें। तिनमें पुलाक तो पाछा आवे अर कषाय कुशील पाछा न आवे असंख्य स्थान से लब्धि विषें गमन करे तिनमें बकुस तो पाछा आवे अर प्रतिसेवना कुशील पाछा न आवे असंख्यात तक गमन करें अर निर्ग्रंथ अर स्नातक की महिमा कहने में न आवे। वे ईश्वर ही हैं।

अथानन्तर – क्षेत्र कालादिक बारह भेदन कर सिद्धन का कथन करे हैं।।88।। सिद्ध क्षेत्र ही विषय निर्मल सिद्ध हैं आकाश के प्रदेशन विषें लोक के शिखर सिद्ध अलिप्त विराजे हैं।।89।। अपने स्वरूप में तिष्ठे हैं अर जन्म की अपेक्षा तो कर्म भूमि ही ते मुक्ति है अर कोई देव विद्याधर पूर्व का भव विरोधी ले आवे ताकी अपेक्षा सकल मनुष्य क्षेत्र से मुक्ति है।।90।। अर काल की अपेक्षा वर्तमान नय कर एक समय विषें मुक्ति है। अर उत्सर्पिणी काल की अपेक्षा चौथे काल ही में मुक्ति है अर अवसर्पिणी काल की अपेक्षा अवसर्पिणी के तीसरे के अन्त में अर चौथे काल में मुक्ति है अर चौथे काल का उपजा पाँचवें काल में मुक्ति जाय अर पांचवें का उपजा न जाय। यह तो जन्म की अपेक्षा कही अर कोई हर ल्यावे, उडाय ल्यावे, ताकी अपेक्षा सर्व काल में सर्व मनुष्य क्षेत्र से मुक्ति जानो।।93।।

अर सिद्ध गति ही विषें सिद्ध हैं तथा मनुष्य गति से सिद्ध हैं अर गति ते नाहीं। अर तीनों वेद वारेन को नवमें गुणस्थान स्त्री नपुंसक पुरुष वेद का नाश भये मुक्ति होय है। वेद भावन कर है सो

अशुद्ध भाव मिटे मुक्ति होय है। अर लिंग शरीर का है सो पुरुष का लिंग होते ही मुक्ति है स्त्री लिंग अर नपुंसक लिंग ते नाहीं। अर निर्ग्रंथ लिंग ही कर मुक्ति है। सग्रन्थ लिंग कर नाहीं अर तीर्थ कहिये तीर्थंकरों के समयहू मुक्ति अर अन्तराल विषें हूं मुक्ति अर चारित्र कहिये सामान्य नयकर एक यथाख्यात चारित्र कर मुक्ति अर विशेषता कर सामायिक छेदोपस्थापना सूक्ष्म साम्पराय यथाख्यात इन चारों कर मुक्ति है अथवा परिहार विशुद्धि चारित्र वालों की अपेक्षा पांचों ही चारित्र मोक्ष के कारण हैं।।97।।

अर प्रत्येक बुद्ध कहिये स्वयंबुद्ध अर बोधित बुद्ध कहिये गुरु के उपदेश ते प्रतिबुद्ध इन दोनों ही को मुक्ति होय है अर ज्ञान कहिये सम्यग्ज्ञान सो मुक्ति का कारण है। ज्ञान के भेद पांच तिनमें केवलज्ञान तो मुक्ति स्वरूप ही है अर किसी के मति श्रुति ही होय केवल उपजे। अर किसी के मति श्रुति अवधि होय केवल उपजे। अर किसी के मति, श्रुति, अवधि, मनःपर्यय होय केवल उपजे। तातें सब ही ज्ञान मुक्ति के कारण हैं दोय तीन चार अंत केवल अकेला एक ही है केवल उपजे औरों का अभाव है।।98।।

अर अवगाह कहिये शरीर की अवगाहना उत्कृष्ट धनुष पांच सौ पच्चीस अर जघन्य हाथ साढ़ा तीन अर मध्य के भेद अनेक हैं हाथ साढ़ा तीन से अधिक पांच से पच्चीस धनुष से न्यून। यह सब मध्य अवगाहना के भेद जानहु।।100।। इन अवगाहनान में सिद्ध होय है कोई साढ़ा तीन हाथ से कोई पांच से पच्चीस धनुष से अर कोई मध्य अवगाहनान में मुक्त होय है।।1।। अर अन्तर कहिये अन्तराल जघन्य एक समय उत्कृष्ट विरह काल की अपेक्षा मास छह अर मध्य के भेद अनेक दोय समय से लेकर एक समय घाट छह मास पर्यन्त जानहु अर संख्या कहिये गणना जघन्य एक समय एक अर उत्कृष्ट एक समय में एक सौ आठ।।3।। अर अल्प बहुत्व कहिये क्षेत्रादि कर अल्प बहुत्व का भेद कहे हैं, अर सिद्ध क्षेत्र विषें कोई सिद्ध तो न्यूनाधिक्य नाहीं अतीत काल के सिद्धनते अनागत काल के सिद्ध बहुत्व जानहु अर क्षेत्र कहिये नर क्षेत्र अर नरक्षेत्र से ही मुक्ति का कारण तामें दोय प्रकार आर्यक्षेत्रों में जन्मे सिद्ध भये ते बहुत अर पर क्षेत्र से पर क्षेत्र विषें देव विद्याधरों के हरे आये अर मुक्त भये ते अल्प यह सर्वज्ञ के मार्ग विषें कहा है।।6।।

पर क्षेत्र के हरे आयेन ते स्वक्षेत्र के जन्मे संख्यात गुने जानहु अर कईक मुनि दुष्टन के हरे उन आकाश से डारे सो भूमि में न पड़े आकाश ही से मुक्त भये ते अल्प अर कैयकन को डारे अर वैरानी भूमि में जाय पड़े ते उनते संख्यात गुणे अधिक अर सम भूमि ते सिद्ध भये ते उनसे असंख्यात गुणे अधिक।।8।। अर पर क्षेत्रों के हरे समुद्रों से सिद्ध होय हैं सो सब में लवण समुद्र के अल्प अर उनसे

संख्यात गुने कालोदधि के जानों अर उतने जम्बूद्वीप के संख्यात गुणे अधिक जानहु। यह सब भेद सर्वज्ञ देव ने दिखाया है। अर जम्बूद्वीप से संख्यात गुणे धातकी खण्डद्वीप के अर उनसे संख्यात गुणे पुष्करार्द्ध द्वीप के।।10।। यह क्षेत्र के विभाग कर अल्प बहुत्व कहा अर कालादिक के विभाग कर सूत्र के अनुसार अल्प बहुत्व जान लेना।।11।।

इत्यादि श्रीगुरु के मुख दर्शन ज्ञान चारित्र के भेद धार कर सोमदत्तादि तीनों मुनी अर वे दोनों आर्यका आराधना आराधि आरण अच्युत स्वर्ग विषें पांचों जीव बाईस सागर आयु के धारक देव भये। ते महा सम्यग्दृष्टि स्वर्ग में अद्भुत सुख भोगते भये।।13।। अर तीजे भाई की स्त्री नागश्री जाने जती को आहार में विष दिया सो मर कर पांचवें नरक गई तहां सत्रह सागर महा दुःख भोगे।।14।। तहां से निकस कर अन्त के स्वयम्प्रभ नामा द्वीप विषें दृष्टि विष जाति का सर्प होय कर तीजे नरक गया तहां तीन सागर दुःख भोगे।।15।। तहां से निकस तिर्यंच भया फिर सागर दोय त्रस अर थावर योनि में पूर्ण किये।।16।।

फिर चम्पापुरी विषे चांडाल की पुत्री भई। तहां समाधि गुप्त नामा मुनि के निकट मद्य मांस मधु का त्याग किया फिर मर कर वाही चम्पापुरी विषें सुबन्ध नामा सेठ ताके धनवती नामा स्त्री के सुकुमारिका नामा पुत्री भई।।17।। सो पूर्वले पाप के उदय कर महा दुर्गन्ध शरीर भई। यद्यपि रूपवती है तथापि दुर्गन्ध के योग कर कोई न परणे।।19।। अर ताही नगर में एक धनदेव वणिक ताके अशोकदत्ता स्त्री के दोय पुत्र एक का नाम जिनदेव अर दूजा जिनदत्त सो बड़े की सगाई दुर्गन्धा से भई सो सुव्रत स्वामी के समीप मुनि होय गया। अर कुटुम्ब के आग्रहते छोटे जिनदत्त ने परनी सो भी याहि तज कर देशान्तर उठ गया।।22।।

तब यह दुर्गन्धा आपको निन्दती सन्ती उपवासादि तप करे एक दिन या दुर्गंधा ने क्षांता नामा आर्यका को आहार दिया ताके साथ दोय नव यौवन आर्यका उनको देख दुर्गन्धा गुराणी को पूछती भई – हे मात! यह दोनों आर्यका अति रूपवान नव यौवन में कौन कारणते वैराग भईं। तब गुरानी महा दयावान इनके वैराग्य का कारण याके प्रतिबोधवे अर्थ कहती भई।।25।। हे सुकुमारी! जिस कारण कर यह वैराग्य भईं सो तू सुन – यह पूर्व भव विषे सौधर्म इंद्र के देवी थी एक का नाम विमला दूजी सुप्रभा सो यह प्रसिद्ध थी।।26।।

एक दिन यह नंदीश्वर द्वीप विषे जिन पूजा के अर्थ गई थी सो इनको वैराग्य उपजा तब इनने यह प्रतिज्ञा करी जो या देवगति विषें तो तप नाहीं हम मनुष्य भव पाय महा तप करेंगी जाकर स्त्री पर्याय मिटे फिर भव भ्रमण न होय।।29।। यह प्रतिज्ञा कर यह तिष्टी सो तहां से चय कर साकेतपुरी विषे

www.vitragvani.com

राजा श्रीषेण के रानी श्रीकान्ता तिनके यह पुत्री भई। एक हरिषेणा दूजी श्रीषेणा जब यह यौवनवन्त भई तब पिता ने इनका स्वयम्बर रचा सो पूर्व जन्म की प्रतिज्ञा चितार कुटुम्ब को तज आर्यका भई। यह वचन गुराणी के सुनकर दुर्गन्धा हू आर्यका भई। तत्काल संसार का त्याग किया।।33।। यह संसार असार है तामें उत्तम जीव न रमें। यह महा तपस्विनी आर्यकान के साथ तप करती काल व्यतीत करती भई तप कर सोष्या है सर्व गात्र जाने।।34।।

एक दिन वन विषें वसन्तसेना वेश्या क्रीड़ा विषें तत्पर सो पंच पुरुषन सहित आई ताहि देख याके ऐसे भाव भये, जो यह सौभाग्यवती है। इन परिणामनकर याके अजस प्रकृति बन्ध भया तातें अबुधलोक पंच भरतारी द्रोपदी को कहते भये।।36।। कैयक दिन में वह तपस्विनी समाधि मरण कर नागश्री के भव का भरतार जो सोमभूति का जीव देव ताके देवी भई। पचावन पल्य का आयु भया तहां ते चयकर सोमदत्त सोमदेव सोमभूति यह तीनों भाई तो राजा पाण्डव के रानी कुन्ती ताके तीन पुत्र भये तिनके नाम युधिष्ठर भीम अर्जुन अर धनश्री मित्रश्री इन दोऊ ताके जीव राजा पाण्डव के दूजी रानी माद्री ताके नकुल अर सहदेव नामा पुत्र भये।।39।। अर नागश्री का जीव राजा द्रुपद के रानी दृढ़रथा तिनके द्रोपदी नामा पुत्री भई।।40।। सो पूर्व भव के योग कर अर्जुन से स्नेह बढ़ा राधा बंध कर अर्जुन ने परनी।।41।।

यह पूर्व भव का वृत्तांत श्री नेमि जिनेन्द्र ने पाण्डवन से कहा अर आज्ञा करी युधिष्ठर भीम अर्जुन तीन भाई तो इसी जन्मते सिद्ध होवेंगे अर नकुल सहदेव सर्वार्थसिद्धि जावेंगे सो एक भव धर सिद्ध होवेंगे।।42।। अर द्रोपदी सम्यग्दर्शन कर शुद्ध सो तप के प्रभाव कर अच्युत स्वर्ग विषें देव होय नर भव पाय निरंजन के धाम जायगी। या भांति पांडव प्रभु के भूत पूर्व भव सुन कर संसार से विरक्त भये अर तत्काल तीर्थेश्वर के निकट संयम अंगीकार किया।।43।। अर माता कुन्ती तथा द्रोपदी सुभद्रा अनेक रानी राजमती के समीप आर्यका भईं।।44।। ते पांचों भाई पाण्डव रत्नत्रय के धारक पंच महाव्रत पंच समिति तीन गुप्ति के पालनहारे आत्मा स्वरूप का ध्यान करते विहार करते भये। महा उग्र तप किये।।45।। इनके से तप इन ही से बनें। भीम ने वृत्तिपरसंख्या तप विषें अति दुर्द्धर अवग्रह किये सो छः महीने तक आहार का योग न भया। शरीर अति क्षीण हो गया अर युधिष्ठरादिक बेला तेला पक्षोपवास मासोपवासादि महातप कर युक्त जिन आगमरूप समुद्र के पारगामी संयमी तीर्थ विहार करते भये।।46।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनेसनाचार्यस्य कृतौ युधिष्ठरादि पंचपांडवप्रवज्या वर्णनो नाम चतुःषष्टितमः सर्गः।।64।।

Shree Kundkund-Kahan Parmarthik Trust, Mumbai.

आठवाँ अधिकार

श्री नेमिनाथ का निर्वाण गमन

पैंसठवाँ सर्ग

अथानन्तर – सर्व देवन के देव तीर्थ के कर्त्ता धर्मोपदेश कर भव्यन को कृतार्थ कर उत्तर दिशातैं सोरठ की ओर गमन किया।।1।। जब जिन रवि उत्तरायणते दक्षिणायन आये तब या तरफ पूर्वते उद्योत भयो।।2।। अरहंत पद की विभूति कर मंडित महेश्वर जब दक्षिण को विहार किया तब वे दक्षिण के सर्व देश स्वर्ग की शोभा को धारते भये।।3।। भगवान भूतेश्वर निर्वाण कल्याणक आया है निकट जिनके सुर असुर नरक कर अर्चित गिरनार आय विराजे।।4।। पूर्ववत् समवसरण की रचना तहां भई, देव दानव मानव तथा तिरजंच सब ही प्रभु की दिव्यध्वनि सुनते भये।।5।।

श्री भगवान सम्यग्दर्शन चारित्र रूप जो महा पवित्र जिनेश्वर धर्म ताका व्याख्यान करते भये, सो धर्म स्वर्ग मोक्ष के सुख का साधन है अर साधुन को प्रिय है।।6।। जैसा केवलज्ञान के उदय विषें पहले धर्म का उपदेश दिया हुता तैसा ही विस्तार सहित निर्वाण कल्याणक का एक मास रहा तब लग दिया।।7।। जैसे अग्नि का गुण उष्ण अर ऊर्ध जलन अर जल का गुण शीत अर पवन का गुण शीघ्र गमन और तिरछा गमन अर सूर्य का गुण प्रकाशपना अर आकाश का गुण अमूर्तत्व अर पृथिवी का गुण अनेक वस्तुन का धारण अर सहन शीलपना तैसे कृतार्थ जे जिनेन्द्र तिनका गुण धर्मोपदेश है।।9।।

जैसे ज्ञानावरणी दर्शनावरणी मोहनीय अंतराय यह चार घातिया कर्म क्षय किये हुते तैसे योग का निरोध कर नाम गोत्र आयु अर वेदनीय इन चार घातियान का हू अन्त कर अनेक मुनिवरों सहित जिनवर सिद्ध लोक को सिधारे।।10।। तब इन्द्र को आदि देय चतुर्निकायन के देव निर्वाण कल्याणक की पूजा करते भये।।11।। जब भगवान मुक्त होय तब देह बंध रूपस्कंध परमाणु होय जायं अनादि काल की यह रीति है जैसे विजुरी विलाय तैसे जिनेश्वर का देह बिलाय गया। अर मायामयी शरीर रच कर इन्द्रादिक दाह क्रिया करते भये।।12।। अग्निकुमार भवनवासी देव तिनके इन्द्र के मुकुटते प्रगट भई अग्नि ताकर जिनेन्द्र की देह का दाह भया।।13।। गंध पुष्पादि मनोहर द्रव्यन कर प्रभु की पूजा कर देव अपने अपने स्थान गये। इन्द्र वज्रकर गिरनार गिर विषें सिद्ध सिला उकीर गया। वरदत्तादि मुनि को वंदना कर इन्द्रादिक अर नरेंद्रादिक अपने अपने स्थान गये।।15।। अर समुद्रविजयादि नव भाई अर देवकी के छै पुत्र अर प्रद्युम्न शंबु श्रीकृष्ण के पुत्र अर अनिरुद्ध प्रद्युम्न का पुत्र यह

गिरनार गिरते जगत् के शिखर गये सो भव्य कर वंदनीक है। गिरनार बड़ा तीर्थ है जहां अनेक भव्य जीव यात्रा को आवे हैं।।17।।

अथानन्तर – पांडव महाधीर प्रभु का सिद्ध लोक गमन सुन कर शत्रुंजय गिर विषें कायोत्सर्ग धर तिष्ठे।।18।। तहां दुर्योधन के वंश का यवरोधन पापी आय कर बैर के जोगते महा दुष्सह उपसर्ग करता भया।।19।। लोके के मुकुट अति प्रज्वलित इनके सिर पर धरे अर लोहे के कड़े अर कटि सूत्रादि लोहे के आभरण अग्नि मई इनको पहराये।।20।। तिन कर दाह का उपसर्ग अति रौद्र होता भया। परन्तु वे महावीर मुनि धीर कर्म के विपाक के जाननहारे कर्म के क्षय करने को समर्थ दाह का उपसर्ग हिम समान शीतल मानते भये।।21।। तिनमें युधिष्ठर भीम अर्जुन यह तीनों साधु क्षपक श्रेणी विषें आरूढ़ होय शुक्ल ध्यान कर अष्ट कर्म का क्षय कर अष्टम भूमि जो निर्वाण ताकों पधारे अन्तकृत केवली अविनाशी भये।।22।।

अर नकुल सहदेव ने उपशम श्रेणी मांडी हुती सो ग्यारहवां गुणठाणा से फिर गिर चौथे गुणठाणे आय देह तज सर्वार्थसिद्धि पधारे। तहां ते चय मनुष्य होय जगत् के मुकुट मणि होहिंगे।।23।। बड़े भाइन के आताप देख इनका चित्त कुछ यह अथिर भया। अर अन्य हू भव्य जीव कैइक तद्भव मोक्षगामी शुद्ध रत्नत्रय के धारक मोक्ष प्राप्त भये अर कईयक स्वर्गवासी देव भये सो भव धर अभय पद पावेंगे।।24।। अर नारद भी आयु कर परभव पधारे। भवान्तर में भवरहित होहिंगे।।25।।

अथानन्तर – बलदेव स्वामी तुंगीगिर शिखर पर नाना प्रकार के दुर्द्धर तप किये। एक उपवास दोय उपवास तीन उपवास, पक्ष उपवास छः मासोपवास कर शरीर बहुत सोख्या अर कषाय सोखे अर धैर्य पोख्या।।27।। नगर ग्रामादि विषें तो गमन निवारा ही हुता आहार के अर्थ कांतार चर्या धारी हुती सो वन विषें विहार करते लोकों ने देखे, मानो साक्षात् चंद्रमा ही है।।28।। उनकी वार्ता पुर ग्रामादि विषें प्रसिद्ध भई सो दुर्जन भूपति बलदेव के समाचार सुन कर शंका मान नाना प्रकार के आयुध धर उपसर्ग करने को आये तब सिद्धार्थ देव उनको ऐसी माया दिखाई वे जहां देखें तहां दीखें।।30।।

मुनि के चरणन के समीप सिंहन को देख दुष्ट राजा मुनि की सामर्थ्य जान प्रणाम कर शांत रूप होय गये।।31।। तब से बलदेव को लोग नरसिंह मानते भये दुष्टन को नरसिंह रूप भासे वे महा मुनि सौ वर्ष तप कर चार प्रकार आराधना आराध पांचमां ब्रह्म नामा स्वर्ग तहां पदमोत्तर विमान विषें ब्रह्मेन्द्र भये।।33।। वह विमान रतनमयी दैदीप्यमान महामनोहर देव देवियों के समूह कर मंडित सुन्दर हैं मन्दिर अर उपवन जा विषें।।34।। ऐसे रमणीक विमान विषे महा कोमल उत्पादक सज्या ता विषे

हलधर मुनिवर का जीव ब्रह्मेंद्र भया। जैसे समुद्र विषे महा मणि उपजे तैसे स्वामी स्वर्ग विषे उपजे।।35।।

आहार कहिये कर्म वर्गणा का आकर्षण अर वैक्रियक शरीर अर पांच इन्द्री अर श्वासोश्वास अर भाषा अर मन इन षट् पर्याप्ति तत्काल पूरे कर वस्त्राभरण मंडित सेज पर विराजे नव यौवन महा सुन्दर देवन के राजा वह स्वर्ग संपदा देख अर देवांगनान के गीत सुन अर सब देवन को नम्रीभूत देख मन में विचारी। यह सब लोग मेरा मुख विलोके हैं मो विषे अनुरागी हैं अर या लोक के सकल ही चन्द्र सूर्य हूतैं अधिक ज्योतिवन्त हैं।।38।। यह कौन मनोहर देश है यहां के सब लोक हर्षित हैं। अर मैं कौन हूं जो यहां का अधिपति भया हूं अर मैं कौन धर्म उपार्ज्या जो ऐसा उत्तम भव पाया है।।39।। तब वहां के जो मुख्य देव हैं तिन विनती करी जो यह पांचवां ब्रह्म नामा स्वर्ग है। अर आप ब्रह्मेंद्र होय तहां सबन के स्वामी भये हो, महा तप कर यहां आय उपजे हो तब आप अवधि कर सब वृत्तान्त जाना।।41।। पूर्व भव का सब चरित्र प्रत्यक्ष जाना अर देव इनका अभिषेक करावते भये अर इन्द्रपद की विभूति दृष्टिगोचर करी।।42।।

अर वासुदेव से अधिक है प्रेम जिनका सो जाय कर भाई से मिले, परस्पर अवलोकन कर दोऊ के हर्ष उपज्या। वासुदेव कही – आपां दोऊ मनुष्य भव पाय वीतराग का धर्म आराध केवल प्रगट कर मोक्ष पावेंगे। अर द्वारिका के दाह कर अर यदुवंश के क्षय कर लोकापवाद भया। सो तुम ऐसा करहु जो भरतक्षेत्र विषें मेरी मूर्ति शंख चक्र गदा पद्मादि कर शोभित लोग पूजें। यह वचन वासुदेव के उर में धार बलदेव याही भांति करते भये। देवन का किया कहा न होय।।46।। ठौर ठौर पुर ग्रामादि विषें वासुदेव के मन्दिर कराय तिनकी सेवा की विधि बताय बलदेव स्वर्ग विषें जाय जिनेश्वर की सेवा करते भये।।47।। अनेक देव अर देवी तिन कर मंडित स्वर्ग के अधिपति सुख भोगते भये।

यह कथा गौतम स्वामी ने राजा श्रेणिक से कही। फिर कहे हैं – हे श्रेणिक! यह स्नेही जगत् के जीवन को जगत विषे भ्रमण करावे है स्नेह के योग कर जहां मित्र होय तहां जाय कर स्नेह की अधिकता से आप को सुख प्राप्त भये हैं ते न भोगवे अर दुख का उद्यमी होय तातें यह संसार का स्नेह ही मोक्ष के सुख का विघ्न करनहारा है।।49।। श्री नेमिनाथ जिनेंद्र का तीर्थ महा मोह का विच्छेद करनहारा ता विषें वरदत्त नामा मुनि केवली भये। हरिवंश विषें जरत्कुमार राजा राज की धुरा धोरी भये।।50।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ भगवन्निर्वाणवर्णनो नाम पंचषष्टितमः सर्गः।।65।।

छियासठवाँ सर्ग

अथानन्तर – राजा जरत्कुमार राज्य करे ताके राज्य में प्रजा आनन्द को प्राप्त होती भई। राजा महा प्रतापी जिनधर्मी ताके राज को लोग अति चाहें।।1।। सो जरत्कुमार ने राजा कलिंग की पुत्री परनी ताके राजवंश की ध्वजा समान वसुध्वज नामा पुत्र भया।।2।। ताहि राज का भार सौंप जरत्कुमार मुनि भये सत पुरुषन के कुल की यही रीति है पुत्र को राज देय आप चारित्र धारें।।3।। फिर वसुध्वज के सुवसु नामा पुत्र भया सो चन्द्रमा समान प्रजा को प्रिय राजा वसु सारिखा प्रतापी होता भया। अर वसु के भीम वर्मा भया, कलिंग देश का पालक अर ताके वंश में अनेक राजा भये।।5।।

फिर ताही वंश में हरिवंश का आभूषण राजा कपिष्ट भया अर ताके अजातशत्रु भया ताके शत्रुकेन भया। अर ताके जितार नामा पुत्र भया।।6।। ताके जितशत्रु भया सो हे श्रेणिक! ताहि तू कहा न जाने है। जो राजा सिद्धार्थ महावीर स्वामी के पिता की छोटी बहन परना महा प्रतापवान शत्रु मंडल का जीतनहारा जगत् विषें प्रसिद्ध भया। श्री भगवान महावीर का फूफा सो प्रभु का जन्म भया, तब कुण्डलपुर आया। सो राजा सिद्धार्थ ने बहुत सन्मान किया।।8।।

राजा जितशत्रु महा जिनधर्मी इन्द्र समान पराक्रमी ताके यशोदा नाम रानी ताके अशोकवती नामा पुत्री सो यश अर दया कर महा पवित्र ताका अनेक राजकन्या सहित श्री महावीर से विवाह मंगल वांछता भया। यह हर्ष देखने के मनोरथ रूप विषें आरूढ था सो भगवान वीतराग कहा विवाह करें। जे स्वात्मानुभूति रूप सिद्धि के करनहारे तिनके स्त्री का कहा प्रयोजन? जब तीर्थेश्वर तप कल्याणक को प्राप्त भये, तब वे राजकन्या आर्यका होय गईं अर भगवान स्वयंभू जब केवल कल्याणक विषें जगत् के तारवे अर्थ बिहार किया तब राजा जितशत्रु राज तज मुनिराज भया महातप विषे प्रवर्ता।।10।। सो तप के प्रभावकर जितशत्रु के केवलज्ञान प्रगट भया मनुष्य भव का यही फल है जो केवल पाय मुक्ति जाय।।11।।

हे श्रेणिक! यह कथा हरिवंश कथा तोहि संक्षेप से कही। यह कथा लोक विषे प्रसिद्ध है अर चौबीस तीर्थेश्वर अर बारह चक्रेश्वर अर नव बलदेव नव वासुदेव नव प्रति वासुदेव। ये त्रिषष्टि शलाका के महापुरुष तिनका चारित्र तोहि कहा सो यह पुराण पद्धति तोहि कल्याण के अर्थ होहु।।13।। यह परमेश्वरी कथा गौतम स्वामी के मुख अनेक राजाओं सहित राजा श्रेणिक सुनकर नगर में गया। बारंबार नमस्कार करता भक्ति रूप है बुद्धि जाकी सो चित्त विषे धर्म ही को धारता भया। अर चतुर्निकाय के देव अर विद्याधर प्रभु को प्रणाम कर अपने अपने स्थानक गये। धर्मकथा

के अनुरागी धर्म ही को सार जानते भये।।14।। निर्वाण की है इच्छा जिनके अर जितशत्रु केवली जगत पूज्य आर्य क्षेत्र विषें विहार कर अघातिया कर्म हू क्षपाय अक्षय धाम को प्राप्त भये, अनंत सुख का है अनुभव जहां जाके अर्थ यती यतन करे हैं सो पद पाया।।15।।

अर वीर जिनेन्द्र हू भव्य जीवन के समूह को संबोध कर पावापुरी के मनोहर नामा उद्यान ते कार्तिक वदी अमाबस प्रभात समय स्वाति नक्षत्र विषे योगन का निरोध कर अघातिया कर्म हू खपाये जैसे घातिया कर्मन का घात किया था तैसे अघातियान हू का घात कर बन्ध तै रहित जो अपवर्ग स्थानक सिद्ध क्षेत्र तहां सिधारे। निरन्तर है अनन्त सुख का संबंध जहां।।17।। वे जिनेश्वर शंकर सुगत सदा शिव परम विष्णु शुद्ध बुद्ध महेश्वर पंच कल्याणक के नायक चतुर्निकाय के देवन के देव निर्वाण प्राप्त भये, तब इन्द्रादिक देवों ने निर्वाण कल्याणक किया। प्रभु के मायामई शरीर की पूजा कर दाह क्रिया करी।।18।। प्रभु परम धाम पधारे ता दिन चतुर्थ काल के वर्ष तीन और मास साढा आठ वाकी हुते। दीपोत्सव के दिन जिनवर जगत के शिखर पधारे तिस दिन देवन दीपन के समूह कर वह पुरी प्रकाश रूप करी आकाश और धरती विषे दीपन की माला प्रज्वलित भई।।19।।

इंद्रादिक सब देव और श्रेणिकादि सकल भूप श्रीमहावीर स्वामी का निर्वाण कल्याणक देख प्रभु से ज्ञान की प्राप्ति की प्रार्थना कर अपने अपने स्थान गये।।20।। उस दिन से भरत क्षेत्र विषें दीप मालिका प्रसिद्ध भई। प्रति वर्ष भव्य जीव निर्वाण की पूजा करें अर लोक दीपोत्सव करें।।21।। अर भगवान को मुक्ति गये पीछे बासठ वर्ष में केवली भये गौतम, सुधर्म और जंबू स्वामी सो यह तीनों चतुर्थ काल के उपजे पंचम काल में पंचम गति जो निर्वाण तहां पधारे और इन पीछे सौ वर्ष में पांच श्रुतकेवली भये।।22।। और उन पीछे वर्ष एक सौ तीरासी में ग्यारह अंग अर दस पूर्व के पाठी मुनि दस भये और तिन पीछे बरस दो सौ बीस में पांच मुनि ग्यारह अंग के पाठी भये और तिन पीछे वर्ष एक सौ अठारह में चार मुनि एक आचारांग के पाठी भये। तिनके नाम सुभद्र जयभद्र यशोबाहु लोहाचार्य यहां तक अंग रहे।।23।।

फिर इन पीछे अंगन के पाठी तो न भये परन्तु महा विद्यावान व्रतन के धारक भये तिनमें कई एकन के नाम कहे हैं – महा तप की है वृद्धि जिनके ऐसे नयंधर ऋषि, श्रुति ऋषि, गुप्ति, शिवगुप्त, अर्हद्वलि, मंदराचार्य, मित्रवीर, बलमित्र, सिंहबल, वीरवित।।25।। पद्मसेन, गुणपद्म, गुणागुणी, जितदण्ड, नन्दीखेण, दीपसेन, तप ही है धन जिनके ऐसे श्री धरसेन, धर्मसेन, सिंहसेन, सुनन्दिसेन, सूरसेन, अभयसेन।।27।। सुसिधसेन, अभयसेन, भीमसेन, जिनसेन, शांतिसेन, समस्त सिद्धान्त के वेत्ता षट भाषान में गुणवान षटखंड के अखंड नाथ ही हैं जिनके शब्द अर्थ अगोचर नाहीं।।28।।

फिर जयसेन नामा सद्गुरु होते भये। कर्म प्रकृति नामा श्रुति ताके पारगामी इन्द्रीन के जेता प्रसिद्ध वैयाकरणी महा पण्डित प्रभाववान समस्त शास्त्र समुद्र के पारगामी।।29।। तिनके शिष्य अमित तेज नामा सद्गुरु पवित्र पुन्नाटगण के अग्रणी जिनशासन की वात्सल्यता जिनके महा तपस्वी सौ वर्ष ऊपर है अवस्था जिनकी शास्त्रदान के बड़े दाता पण्डितों में मुख्य जिनके गुण पृथिवी में प्रसिद्ध तिनका बड़ा भाई, धर्म का सहोदर महा शांत संपूर्ण बुद्धि धर्ममूर्ति जिनकी तपोमई कीर्ति जगत में विस्तार रही। ऐसे कीर्तिसेन तिनका मुख्य शिष्य श्रीनेमिनाथ का परम भक्त जिनसेन ताने अपनी शक्ति के अनुसार अल्प बुद्धि से प्राचीन ग्रन्थ के अनुक्रम हरिवंश की पद्धति कही सो यामें प्रमाद के दोष से शब्द में तथा अर्थ में कहीं भूल हो तो पुराण के पाठी पण्डित सुधार लीजो। एक केवली भगवान ही कथन में न चूकें और समस्त चूकें ताका अचरज नाहीं। कहां यह प्रशंसा योग्य हरिवंश पुराण रूप पर्वत और कहां मेरी अल्प से अल्प बुद्धि का शक्ति।।34।।

जो काहू ठौर आखडे तो कहा अचरज है। या पुराण विषें जिनेन्द्र के वंश के स्तवन कर पुण्य की उत्पत्ति है। यही वांछा कर मैंने वर्णन किया और काव्य बन्ध से प्रबन्ध कर कीर्ति की कामना राख कथन न किया।।35।। काव्य रचना के गर्व कर तथा अन्य पण्डितों से ईर्षा कर मैंने यह आरम्भ न किया। केवल जिनराज की भक्ति ही कर यह कथन किया। चौबीस तीर्थंकर और द्वादश चक्रधर और नव हलधर नव हरि और नव प्रतिहरि इनका वर्णन किया और अन्य अनेक राजान के चारित्र कहे। भूमिगोचरी और विद्याधर सबन के वंश का वर्णन या विषैं है।।37।। जो धर्म अर्थ काम मोक्ष के साधन हारे पुरुषार्थ के धारक धीर पुरुष कीर्ति के पुंज तिनकी स्तुति कर मैं पुण्य उपार्ज्या, गुण संचय किया ताका यही फल हूजियो जो या मनुष्य लोक के भव्य जीव जिन शासन विषे श्रद्धा करें अर अशुभ कर्म को हरें।।38।। यह नेमि जिनेश्वर का चरित्र सकल जीवादि पदार्थ का प्रकाशक है यामें षट् द्रव्य सप्त तत्त्व नव पदार्थ पंचास्तिकाय की प्ररूपणा है।।39।।

जो महा पण्डित हैं सो याकी सभा विषैं व्याख्यान अपने अर पराये हितार्थ करियो अर सभा विषें आवें जे भव्य जीव ते कानरूप हस्तांजली कर हरिवंश कथा रूप अमृत का पान करियो जिनेन्द्र नाम ग्रहणकर नव ग्रह की पीडा दूर होय है। यह समस्त पुराण आद्योपान्त वांचे अथवा सुने तो पाप का नाश होय इसलिये एकाग्र चित्त कर पण्डित जन याका व्याख्यान अपने अर पराये कृतार्थ के अर्थ करहु। व्याख्यान निज पर का तारक है।।42।। यह पुराण मंगल के अर्थियों को महा मंगल का कारण है अर जो धन के अर्थी हैं तिनको धन की प्राप्ति का कारण है।

अर निमित्तज्ञानियों को निमित्तज्ञान का कारण है अर महा उपसर्ग विषें शरण है शान्ति का कर्त्ता है अर जैन का बड़ा शकुन शास्त्र है शुभ सूचक है ज्ञानार्थीन को ज्ञान, ध्यानार्थीन को ध्यान,

योगार्थीन को योग, भोगार्थीन को भोग, राज्यार्थीन को राज्य, पुत्रार्थीन को पुत्र, विजयार्थीन को विजय सर्व वस्तु का यह दाता सर्वज्ञ वीतराग का पुराण है। जो चौबीसों तीर्थेश्वर का महा भक्त चौबीसों शासन देवता चक्रेश्वरी पद्मावती अम्बिका ज्वालामालिनी आदि सम्यग्दृष्टिनी सो सब इस पुराण के आश्रित हैं। कैसे हैं यह शासन देवता, सदा जिनधर्म अर जिनधर्मीन के समीप ही हैं।।44।। अर गिरनार गिरि विषें श्री नेमिनाथ का मन्दिर ताकी उपासक सिंहवाहिनी चक्र की धरनहारी जाके आगे क्षुद्र देवता न टिकें ऐसी अम्बिका कल्याण के अर्थ जिनशासन की सेवक है तहां परचक्र का विघ्न कैसे होय।।45।।

नवग्रह अर असुर नाग भूत पिशाच राक्षस यह लोगों को हित की प्रवृत्ति विषें विघ्न करे हैं। तातें बुधजन जिन शासन के देवतान के जे गुण तिन कर क्षुद्र देवन को शांत करे हैं।।46।। जे भक्ति कर यह हरिवंश पुराण पढ़ें तिनके बिना खेद मनवांछित काम की सिद्धि होय अर धर्म अर्थ मोक्ष की प्राप्ति होय।।47।। तातें जे निष्कपट आर्य पुरुष हैं ते पूजा सहित या पुराण को पृथिवी विषे विस्तारहु। कहा कर यांकूं विस्तारहु मात्सर्य कहिये पराई उच्चता का न सहना ऐसा अदेख सका भाव तोहि धैर्य के बल कर प्रबलता रूप जो बुद्धि ताके प्रभाव के निवार कर अर जेते मायाचार के आचरण हैं तिन सबन को तज कर याका रहस्य विचारहु।।48।।

अथवा भव्य जीवन से यह प्रार्थना है कौन अर्थ, वे स्वतः स्वभाव ही याहि पढ़ेंगे वांचेंगे विस्तारेंगे, जैसे पर्वत मेह की धारा को सिर पर धारे अर पृथिवी विषे विस्तारे।।49।। यह श्रेष्ठ पुराण प्राचीन पुराण के गम्भीर शब्द तेई भये जल तिन कर पूर्ण सो मुनि मण्डली रूप नदी दोय नयन रूप ढायेन की धरनहारी तिन कर पूर्ण चारों दिश समुद्रान्त विस्तरेगा।।50।। वे जिनेश्वर देव तत्त्व के द्रष्टा देवन के समूह कर सेवने योग्य जयवन्त होहू, प्रजा को अति शांति के देनहारे शांत है मार्ग जिनका अर निर्मल हैं निद्रारहित केवल नेत्र जिनके।।51।। अर जिनधर्म की परम्पराय जयवन्त होहू जो अनादि काल से काहू कर जीति न जाय। अर प्रजा विषें कुशल होहू। कवहु दुर्भिक्ष मति होहू मरी मति होहू पापी मति होहू, पापी राजा मति होहू। अर सुख के अर्थ प्रति वर्ष भली वर्षा होहू अर अति वृष्टि अनावृष्टि मति होहू। पृथिवी अन्न जल तृण कर सदा शोभित रहो। प्राणीन को काहू प्रकार की पीडा मति होहू।।52।।

विक्रमादित्य को सात सौ पांच वर्ष व्यतीत भये, तब यह ग्रन्थ भया। ता समय उत्तर दिशा का राजा इन्द्रायुध कृष्णराज का पुत्र था। अर दक्षिण दिशा का राजा श्रीवल्लभ हुता अर पूर्व दिशा का राजा अवन्ति हुता अर पश्चिम का राजा वत्सराज हुता। यह चारों दिशा के चारों राजा महा सूरवीर जीत के स्वरूप पृथिवी मण्डल के रक्षक हुते।।53।। कल्याण कर बड़ी है विस्तीर्ण लक्ष्मी जहां ऐसा

श्री वर्धमानपुर तहां श्री पार्श्वनाथ के चैत्यालय विषें राजा रत्न के राज विषे यह ग्रन्थ आरम्भ अर पूर्ण भया। फिर शान्तिनाथ के मन्दिर विषे ग्रन्थ समाप्त किया। पूजा भई अति उत्सव भया।

जीती है अर संघ की शोभा जाने ऐसा श्रेष्ठ पुन्नाट नामा संघ ताकी परिपाटी विषे उत्पन्न भये श्री जिनसेन नामा आचार्य तिन सम्यग्ज्ञान के लाभ के अर्थ रचा यह हरिवंश चरित्र लक्ष्मी का पर्वत सो या पृथिवी विषें बहुत काल अति निश्चल तिष्ठो। सब दिशि विषें सब जीवन का हरा है शोक जाने।।54।।

इति श्रीअरिष्टनेमिपुराणसंग्रहे हरिवंशे जिनसेनाचार्यस्य कृतौ गुरुपर्वकमलवर्णनो नाम षट्षष्टितमः सर्गः।।66।।

भयो कौन विधि ग्रन्थ यह, भाषा रूप विशाल।
सो तुम सुनहु महामती, जिन आज्ञा प्रतिपाल।।1।।
जम्बूद्वीप मँझार यह, भरतक्षेत्र शुभ थान।
ताके आरिज खंड में, मध्य देश परवान।।2।।
नगर सवाई जयपुरा, जहाँ बसे बहु न्यात।
राजा पृथिवी सिंह है, सो कछुवाहा जात।।3।।
शिरोभाग राजान में, ढूँढाहड पति सोय।
ताके मंत्री श्रावका, और न्यातहु होय।।4।।
बहुत बसैं जैनी जहाँ, जीव दया व्रत पाल।
पूजा करें जिनेन्द्र को, आगम सुनें रसाल।।5।।
बहुत जीव श्रद्धावती, चरचा माहिं सुजान।
ग्रन्थ अध्यातम आगमा, सुने बहुत धर कान।।6।।
संस्कृत भाषामयी, भये जु आदिपुराण।
पद्मपुराणादिक बहुरि, भाषा भये निधान।।7।।
रायमल्ल के रुचि बहुत, व्रत किया परवीन।
गये देश मालव विषे, जिनशासन लवलीन।।8।।
तहाँ सुनाये ग्रन्थ उन, भाषा आदिपुराण।
पद्मपुराणादिक तथा तिनको किया बखान।।9।।
सब भाई राजी भये, सुन कर भाषा रूप।
तिनके रुचि अति ही बढ़ी, धारी कथा अनूप।।10।।
रायमल्ल से सबन ने, करी प्रार्थना येह।
करवाओ हरिवंश की, भाषा बहु गुण गेह।।11।।
आगे दौलतराम ने, टीका भाषा माहिं।
करी सो ही अब यह करे, यामें संशय नाहिं।।12।।
तब भेजी पत्री यहाँ, रायमल्ल धर भाव।
लिखो जु साधर्मीन को, करणे धर्म प्रभाव।।13।।

तथा जु दौलतराम को, मल्ल लिखी यह बात।
करहु भाषा हरिवंश की, सबके चित्त सुहात।।14।।
सब साधर्मी मिले जब, श्री चैत्यालय माहिं।
भाषी दौलतराम से, जिन श्रुत से अघ जाहिं।।15।।
जिनवाणी रस अमृता, जा सम सुधा न और।
जाकर भव भरमण मिटे, पावे निश्चय ठौर।।16।।
यामें विलम्ब न कीजिए, करो शीघ्र ही येह।
सफल होहि जाकर सही, उत्तम मिनखा देह।।17।।
रतनचंद दीवान इक, भूपत के परधान।
तिनके भाई शुभमती, विधीचंद परवान।।18।।
सो दौलत के मित्र अति, भये जु उद्यम रूप।
तिनके आग्रहते यह, टीका भई अनूप।।19।।
दौलत ने अति भाव धर, भाषा कीनों ग्रंथ।
महा शान्त रस को भरो, सुगम मुक्ति को पंथ।।20।।
सीताराम जो लेख का, और सवाई राम।
तिन पर लिखवायो जु यह, बहुत कथा को धाम।।21।।
ताकर सुधरे भव यह, अरु पावे शुभ लोक।
होवे अति आनन्द अरु, कबहु न उपजे शोक।।22।।
सुखी होहु राजा प्रजा, होहु सकल दुख दूर।
पड़ो धर्म जिनदेव को, जाहि बखाने सूर।।23।।
न्याति खंडेल जु वाल है, गोत्र कासलीवाल।
सुत है आनंद राम को, बसवे वास विशाल।।24।।
सेवक नर पति को सही, नाम सु दौलतराम।
ताने यह भाषा करी, जप कर जिनवर नाम।।25।।
अट्ठारह सौ संयता, तापर धर गुण तीस।
वार शुक्र पून्यो तिथी, चैत्र मास रति ईस।।26।।
ता दिन यह पूरण भया, श्री हरिवंश पुराण।
पढ़ो सुनो अरु सरदहो, पंडित करो बखान।।27।।
श्री हरिवंश पुराण की, भाषा सुनहु सुजान।
सकल ग्रन्थ संख्या भई, उन्नीस सहस प्रमाण।।28।।
दो हजार अरु चार सौ ता ऊपर पंचास।
संवत वीर जिनेश का, किया ग्रन्थ परकास।।29।।

।। इति श्री हरिवंशपुराण भाषावचनिका सम्पूर्ण ।।

।।समाप्त।।